KADMBINI FEB-DEC 1976 G.K.U

भाषाओं की विशिष्ट पत्रि
प्रकाशन
कादम्बिनी
फरवरी १९७
हिन्दुस्तान टाइम्स प्रकाशन
एक विकसित देश का व्यतीत
की कला के सौ वर्ष
वे अपने साथियों को खाकर जीवित रहे
तलाक अधिकार है अपराध नहीं

तुरंत
दही बनाने की
मशीन
कर्ड-ओ-मेटिक
डीलक्स
'दोहरे नियंत्रण-स्विच' के साथ
एक आदर्श उपहार
अब अपनी उंगलियों के इशारे पर दही जमाइए। सर्दी चाहे कितनी भी कड़ाके की क्यों न हो, केवल दो घण्टों में बढ़िया, स्वादिष्ट और अत्यन्त पौष्टिक दही तैयार!
कर्ड-ओ-मेटिक डीलक्स का दोहरे नियंत्रण वाला स्विच इसे पल भर में दूध गर्म करने का अनोखा यंत्र बना देता है। कर्ड-ओ-मेटिक डीलक्स के द्वारा केवल दो घण्टे में आप एकदम गाढ़ा और मलाइदार दही पा सकते हैं, स्वाद अपनी पसंद का चुनिए—मीठा या खट्टा'
कर्ड-ओ-मेटिक डीलक्स, विशेष अंदरुनी बर्तन में सधे हुए निश्चित तापमान पर कार्य करता है ताकि बिलकुल स्वास्थ्य-सम्मत दही मिले और दही के प्राकृतिक प्रोटीन, कैलशियम और विटामिन बी के गुणों को बिगाड़ने वाले गंदे कीड़ों, रोगाणुओं और वातावरण के प्रदूषण से पूरी सुरक्षा प्राप्त हो।
कर्ड-ओ-मेटिक डीलक्स आज़माइए आप इसे बहुत पसंद करेंगे।
दो साल की बिना शर्त गारंटी कर्ड-ओ-मेटिक डीलक्स १० दिन की घरेलू आज़माइश योजना के अंतर्गत लीजिए।
मुफ़्त घरेलू आज़माइश कूपन
बेटर लिविंग प्रोडक्टस मेल ऑडर सेल्स प्रा. लि. का एक विभाग, १५ मैथ्यू रोड. बम्बई-४०० ००४
CMD-S-H
कृपया कर्ड-ओ-मेटिक डीलक्स १० दिन की मुफ्त घरेलू आजमाइश योजना के अंतर्गत तुरंत भेजिए. अगर मैं संतुष्ट न हुआ तो वापस भेज दूंगा. आप मेरे पूरे पैसे बिना किसी सवाल के तुरंत लौटा देंगे.
(कृपया मनचाहे चौकोर में ☑ निशान लगाइए) KD
☐ मैं रु. १२८ भेज रहा हूं. (डाकखर्च व पैकिंग के रु. ८ अलग)
☐ रु. १३६ का मनीऑर्डर भेजा है (रसीद नं. .... दिनांक............) ☐ वी.पी.पी. द्वारा प्राप्त होने पर मैं डाकिए को रु. १३६ दे दूंगा.
नाम...
पता...
कूपन भेजिए या स्थानीय विक्रेता से मिलिए

चलते चलिये
फ़्लेक्स में चलिये

मुलायम और लचीले चमड़े से बने जूते.
विभिन्न आकर्षक डिज़ाइनों में उपलब्ध.

फ़्लेक्स जूतों का क्या कहना जबतक चाहा तबतक पहना

टैनरी एण्ड फुटवियर कॉर्पोरेशन ऑफ इण्डिया लिमिटेड
(भारत सरकार का एक प्रतिष्ठान)
१३/४००, सिविल लाइन्स. पोस्ट बाक्स नं० ३२६, कानपुर.

FDS:TAFCO/10-75 HIN

कर्क
मिथुन

वर-वधु को हार्दिक बधाई
यही समय है जब आप
परिवार नियोजन सहित सभी
प्रिय वस्तुओं की योजना बनाएं
परिवार नियोजन कीजिए
छोटा परिवार रखिए
और सुखी जीवन बिताइए
davd 75/442 Hin.

महाभारत - युद्ध ऐतिहासिक या . . . ?

आपके पत्र

जनवरी अंक में 'महाभारत-युद्ध' की ऐतिहासिकता पर प्रकाशित दोनों लेख ज्ञानवर्धक थे। मेरी राय में पुराणों के अंत:साक्ष्य के विश्लेषण के आधार पर महाभारत का काल-निर्धारण किया जा सकता है, जैसे पुराण में वर्णित महाप्रलय का वर्णन संसार के अन्य दूसरे प्राचीन ग्रंथों में भी प्राप्त है। प्रो. ए. डी. पुसालकर के अनुसार पुराणों के अंत:साक्ष्य के आधार पर महाप्रलय ईसा से ३१०० वर्ष पूर्व हुआ होगा । अतः महाप्रलय के बाद हुए प्रथम भारतीय नरेश वैवस्वत मनु का काल भी यही समय माना जाना चाहिए।

पुराण यह कहते हैं कि वैवस्वत मनु एवं महाभारत-युद्ध के मध्य ९५ पीढ़ियां हुईं। आम तौर पर एक पीढ़ी के लिए २० वर्ष की अवधि मानी जाती है। इस तरह ९५ पीढ़ियों के लिए १९०० वर्ष लगेंगे। यदि ३१०० वर्ष में से १९०० वर्ष घटा दें तो १२०० वर्ष शेष रहते हैं। अतः महाभारत-युद्ध ईसा से १२०० वर्ष पूर्व हुआ होगा।

—डॉ. सूर्यप्रकाश शर्मा, रायपुर

महाभारत-युद्ध की तिथि के संबंध में इंडियन इंस्टीट्यूट ऑव क्रानोलॉजी के निदेशक एस. बी. राय का मत है कि यह युद्ध ईसा पूर्व १४२४ में हुआ होगा। अपने एक लेख 'लॉस्ट सिविलाइज़ेशन' में श्री राय ने लिखा है कि महाभारत-युद्ध के समय पश्चिमी नागवंशीय लोग भारत के उत्तर-पश्चिम में रहते थे और तक्षशिला उनकी राजधानी थी। महाभारत का प्रारंभ ही तक्षक नाग एवं अर्जुन के मध्य युद्ध से शुरू होता है। यह युद्ध पश्चिमी नागवंशीय राजाओं की पूर्वी चौकी-खांडवप्रस्थ में हुआ था। पूर्वी नागवंशीय पांडवों के मित्र थे। यों भी पांडवों के मातृपक्ष में नाग-रक्त था।

—पूर्णेन्दु मिश्र, लखनऊ

'कादम्बिनी' का मुखपृष्ठ स्वतः ही आकर्षित कर लेता है । जनवरी अंक में डॉ. धनवंतकिशोर गुप्त का लेख 'आराम करने से थकान बढ़ती है' उपयोगी लगा। 'पचीस वर्ष बाद' कहानी अच्छी लगी।

'महफिल' स्तंभ सचमुच बड़ा ही आनंदप्रद है ।

—अरविंद कुमार, अलीगढ़

नव-वर्ष में 'कादम्बिनी' जिस नयी साज-सज्जा के साथ प्रकाशित हुई, उसके लिए पूरे 'कादम्बिनी' परिवार को बधाई ।

—उषा द्विवेदी, नागपुर

'कादम्बिनी' का जनवरी अंक अच्छा लगा। इस अंक में प्रकाशित सभी रचनाएं रोचक हैं। मनोरंजनार्थ 'महफिल' तथा प्रेरणास्रोत के रूप में 'सफलता के प्रतीक' पसंद आया।

—विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी, सिरोही

पुरस्कारों की राजनीति

'कादम्बिनी' के जनवरी अंक में 'समय के हस्ताक्षर' के अंतर्गत फ्रांस के सन १९७५ के 'गानगार्ट पुरस्कार' के संदर्भ में ललितकला एवं साहित्य अकादमियों तथा उनमें 'पुरस्कार' के प्रसंग को लेकर चल रही निम्न स्तर की गंदी राजनीति पर आपकी टिप्पणी बिलकुल उचित है।

कोरे सम्मान को ही लक्ष्य बना लेना किसी भी दृष्टि से ठीक नहीं है। महत्त्व कार्यों व उपलब्धियों का है, 'सम्मान' का नहीं।

यदि 'सम्मान' ही किसी का लक्ष्य हो और इस हेतु चक्कर चलाने पर उसे किसी बड़ी संस्था से 'पुरस्कार' मिल भी जाए तो भी, इस झूठे आदर को पाकर उसे मिलता क्या है? आज के इस बुद्धिवादी युग में यह सोचना नितांत भ्रामक है कि संस्थाओं द्वारा स-समारोह 'पुरस्कार' हथियाकर अपने प्रति लोगों के दृष्टिकोण में अनुकूल परिवर्तन किया जा सकता है।

—ब्रजकिशोर पटेल, इटारसी

अविश्वसनीय वार्तालाप

'स्वतंत्रता का सूर्य' लेख में 'अविश्वसनीय वार्त्तालाप' शीर्षक के अंतर्गत प्रकाशित 'फ्रीडम ऐट मिडनाइट' का नेहरू-पटेल-माउंटबेटन वार्तावाला अंश अविश्वसनीय ही प्रतीत होता है। ब्रिटिश दमन और अत्याचार से लोहा लेनेवाली भारतीय जनता के कर्णधार मात्र दंगों से घबरा गये होंगे, यह संभव नहीं। एक और प्रश्न उठता है—ऐसे प्रसंगों की चर्चा संबद्ध व्यक्तियों के जीवित रहते क्यों नहीं की जाती, ताकि उनकी सत्यता की पुष्टि की जा सके।

इसी तरह वर्षों पूर्व मौलाना आजाद की कृति 'इंडिया विंस फ्रीडम' के कुछ अंशों की सत्यता को लेकर भी विवाद उठ खड़ा हुआ था। उस समय भी संबंधित प्रश्नों का उत्तर देनेवाले व्यक्ति जीवित नहीं रहे थे। क्या इस संबंध में कोई आचार-संहिता नहीं तैयार की जा सकती?

—सुषमा पाल, पटना

'नाद ब्रह्म का साक्षात्कार करानेवाले' लेख बहुत प्रिय लगा। हिंदी की पत्र-पत्रिकाओं में स्वर्गीय पं. विनायकराव पटवर्धन पर कम ही निकला है। 'कादम्बिनी' ने एक संपूर्ण लेख देकर उस कमी को पूरा किया है, इसलिए आप साधुवाद के पात्र हैं।

—रामप्रसाद कौशिक, नयी दिल्ली

श्रद्धांजलि

दुष्यंतकुमार नहीं रहे

कैसे मंजर सामने आने लगे हैं
गाते-गाते लोग चिल्लाने लगे हैं

हिंदी में उर्दू की गजलों का मजा देनेवाले उक्त पंक्तियों के फक्कड़ और बेफिक्र युवा कवि दुष्यंतकुमार का मात्र ४२ वर्ष की आयु में चले जाना एक बड़ा सदमा दे गया है। मित्रों के लिए दुष्यंत एक जिंदादिल और ईमानदार आदमी रहे हैं वहीं साहित्य की दुनिया में हिंदी में गजलों की सृष्टि कर उन्होंने नये प्रतिमान भी बनाये हैं। दुष्यंतकुमार की कविताएं वैसे भी हिंदी के पाठकों के लिए अपरिचित नहीं हैं। उन्होंने एक उपन्यास भी लिखा था। उनका इस तरह चले जाना हिंदी साहित्य की एक नयी विधा के लिए महान क्षति है।

मनस्वी पत्रकार का निधन

हिंदी के प्रतिष्ठित और ख्यातिप्राप्त पत्रकार सीताचरण दीक्षित का ७० वर्ष की आयु में देहावसान हो गया। दीक्षितजी अनेक पत्रों और संस्थाओं से संबद्ध रहे। उन्होंने कुछ दिन पूर्व एक उपन्यास भी पूरा किया था। दीक्षितजी बेहद मिलनसार और विद्वान व्यक्ति थे। उनके निधन से हिंदी के पत्रकारिता-जगत को एक बड़ी क्षति पहुंची है। 'कादम्बिनी'-परिवार की ओर से उनकी मृत्यु पर हार्दिक संवेदनाएं। यह इसलिए भी क्योंकि पिछले कई वर्षों से दीक्षितजी 'कादम्बिनी' में 'शब्द-सामर्थ्य बढ़ाइये' स्तंभ लिखते रहे थे, और यह स्तंभ हमेशा पाठकों के लिए आकर्षक और रुचिकर रहा है।

जनवरी अंक की चारों कहानियां—'पचीस वर्ष बाद,' 'अविश्वास,' 'ईफीसस की नारी,' और 'आत्म-निवेदन' बेहद बेहद पसंद आयीं। आशा है, भविष्य में भी मर्मस्पर्शी, रागात्मक एवं संवेदनात्मक कहानियां प्रकाशित करते रहेंगे।

—आर. एस. केसरी 'परमेश्वरम', अकलतरा

जनवरी अंक में अप्पा साहब पंत की पुस्तक 'ए मूमेंट इन टाइम' का सार-संक्षेप मर्मस्पर्शी और प्रेरक रहा। यों कहीं कहीं, अप्पा साहब के अनुभव अविश्वसनीय से लगते हैं—जैसे लामा आजो रिम्पोशे द्वारा मौसम आदि का नियंत्रण या बापू की मालिश करते-करते उनकी शक्तिशाली तरंगों से अप्पा साहब को चक्कर आ जाना। पर ये प्रसंग मिथ्या हों, यह भी नहीं कहा जा सकता। जहां तक तरंगों का प्रश्न है, हमने भी अपने जीवन में उनका अनुभव किया है।

—इंदिरा शर्मा, रायपुर

शब्द-सामर्थ्य बढ़ाइये

सही अर्थों पर चिह्न लगाइये और साथ दिये उत्तरों से मिलाइये

● विशालाक्ष

१. **उकेरना**—क. उधेड़ना, ख. अंकित करना, ग. खुदाव करना, घ. उकेलना।

२. **गर्भगृह**—क. घर के बीच की मुख्य कोठरी, ख. मुख्यालय, ग. गर्भाशय, घ. आंगन।

३. **मक्कार**—क. बदमाश, ख. पतित, ग. बनावटी, घ. छली।

४. **अनिर्बंध**—क. स्वच्छंद, ख. बंधनयुक्त, ग. सरल, घ. अनियंत्रित।

५. **निगूढ़**—क. गहरा, ख. अत्यंत गुप्त, ग. छलमय, घ. भेदमय।

६. **करवत**—क. करवट पर लेटना, ख. कुल्हाड़ा, ग. तीर्थस्थान में मरण, घ. आरा-विशेष।

७. **प्रतीति**—क. बोध, ख. आभास, ग. अनुभूति, घ. ज्ञान।

८. **अनुमित**—क. परिमित, ख. अमित, ग. अनुमानित, घ. विचारित।

९. **समावर्तन**—क. स्नातक बनकर लौटना, ख. पदवी-दान, ग. दीक्षांत-समारोह, घ. अध्ययन की समाप्ति।

१०. **समाश्वस्त**—क. विश्वासपात्र, ख. जिसे तसल्ली दे दी गयी हो, ग. प्रोत्साहित, घ. शांतिप्राप्त।

११. **शीलवृद्ध**—क. सम्मान्य, ख. विनीत, ग. सदाचार में परिपक्व, घ. उदात्त।

१२. **मुखप्रसाद**—क. मीठी बोली, ख. सुंदरता, ग. आश्वासन, घ. प्रसन्नता।

१३. **प्रादुर्भाव**—क. छिपे हुए तत्त्व का प्रकट होना, ख. आविर्भाव, ग. अवतार, घ. उत्पत्ति।

१४. **अतिमर्त्य**—क. बहुत कमजोर, ख. अतिमानवीय, ग. छुईमुई, घ. देवता।

१५. **इंगितकोविद**—क. इशारों की कला में पारंगत, ख. नामांकित पंडित, ग. मूक-बधिर, घ. नेत्रों से भाव व्यक्त करनेवाला।

१६. **ओतप्रोत**—क. मिला हुआ, ख. गुंथा हुआ, ग. सटा हुआ, घ. एक-दूसरे में व्याप्त।

१७. **कृतनिंदक**—क. निंदा करनेवाला, ख. निंदक का भी उपकारी, ग. कृतघ्न, घ. निंदा के प्रति उदासीन।

उत्तर

१. ग. खुदाव करना, लकड़ी आदि कड़ी वस्तु पर छेनी आदि से खोदकर बेल-बूटे आदि बनाना। फूलदान पर **उकेरी** नक्काशी। तद्० (उत्+कृ), क्रि० स०।

२. क. घर के बीच की मुख्य कोठरी, मंदिर का मूर्तिकक्ष। **गर्भगृह** की सजावट। तत्० (गर्भ—मध्यभाग), सं०, पुं०।

३. ख. छली। धन का लोभ दिखाकर स्वार्थ साध लिया, फिर बोला, "चोरी हो गयी।" कैसा **मक्कार**! अरबी (मक्र =

दगा, फरेब), वि०, पुं०।

४. क. स्वच्छंद, बंधन या रुकावट रहित। **अनिर्बंध** पवन, भाषण, संचार, स्तुति, निंदा। तत्०, वि०, उ० लि०। **मुक्त, उन्मुक्त**।

५. ख. अत्यंत गुप्त। ज्ञान-विज्ञान के **निगूढ़** तत्त्व, आत्मा-परमात्मा का **निगूढ़** रहस्य। इसका **निगूढ़** अर्थ बताइये। तत्०, वि०, उ० लि०।

६. आरा-विशेष। काशी-प्रयाग में लोग **करवत** से सिर कटा लेते थे, जिससे उन्हें दूसरे जन्म में इच्छित फल मिले, 'लैहौं **करवत**-कासी।' तद्०, सं०, पुं०।

७. क. बोध। **प्रतीति** हो गयी कि अब दिन अच्छे आयेंगे। तत्०, सं०, स्त्री०। **प्रत्यय, दृढ़ विश्वास, निश्चय**।

८. ग. अनुमानित। **अनुमित** बजट, व्यय, लागत, स्थिति, परिमाण। तत्०, वि०, उ० लिं०। कूता या अटकल लगाया हुआ।

९. क. स्नातक बनकर लौटना, विद्या-मंदिर से स्वगृह आना। प्राचीन काल में गुरुकुल में शिक्षा समाप्त होने पर **समावर्तन**-संस्कार होता था। तत्०, सं०, पुं०। आजकल का **दीक्षांत-संस्कार**।

१० ख. जिसे तसल्ली दे दी गयी हो। जनता **समाश्वस्त** हो गयी कि व्यवस्था भंग न होगी। उसे **समाश्वस्त** कर दिया। तत्०, वि०, उ० लिं०। **आश्वस्त**।

११. ग. सदाचार में परिपक्व। वह जितना छोटा है उतना ही **शीलवृद्ध** है। तत्०, वि०, पुं०। **सदाचारी, उदात्त, आचरण में दृढ़, सौजन्य में पगा हुआ।**

१२. घ. चेहरे की प्रसन्नता। घोर कष्ट में भी उनका **मुखप्रसाद** कायम रहता है। तत्० (मुख + प्रसाद = प्रसन्नता) सं०, पुं०।

१३. क. छिपे हुए तत्त्व का प्रकट होना, जो वस्तु है तो किंतु दिखलायी नहीं पड़ती या महसूस नहीं होती उसका प्रकट होना। रुष्ट समाज में सद्भावना का, देश में नेता का **प्रादुर्भाव** हुआ। तत्०, सं०, पुं०।

१४. ख. अतिमानवीय। **अतिमर्त्य** शक्ति, पराक्रम, जीवट। तत्० वि०, उ० लिं०। **अलौकिक**। सं० **अतिमानव**— उनका-जैसा **अतिमर्त्य**।

१५. क. इशारों की कला में पारंगत। इस मूक-बधिरशाला के छात्र **इंगित-कोविद** बन गये हैं। तत्० (इंगित-इशारा + कोविद– पंडित), सं० पुं०।

१६. घ. एक-दूसरे में व्याप्त। पिरोये हुए। सराबोर। हृदय प्रेम से, वाणी करुणा से, व्यवहार सौजन्य से **ओतप्रोत**। तत्०, वि०, उ० लिं०।

१७. ग. कृतघ्न। किये हुए उपकार की निंदा करनेवाला। जिसने नौकरी दिलायी उसके ही विरुद्ध अपवाद फैलाता है, कैसा **कृतनिंदक** ! तत्० वि०, पुं०। **नाशुक्रा, नमकहराम, एहसानफरामोश।**

अखिल भारतीय गीत एवं काव्य प्रतियोगिता

हिंदी में लिखे जा रहे आधुनिक गीतों एवं कविताओं के प्रोत्साहन के लिए 'कादम्बिनी' द्वारा एक 'अखिल भारतीय गीत एवं काव्य प्रतियोगिता' का आयोजन किया जा रहा है। इस प्रतियोगिता में १००–१०० रु. के चार पुरस्कार रखे गये हैं—दो पुरस्कार आधुनिक गीतों के लिए एवं दो पुरस्कार आधुनिक कविताओं के लिए। इनके अतिरिक्त ४०–४० रु. के चार प्रोत्साहन-पुरस्कार भी होंगे।

नियम

१. रचनाएं कागज पर एक ओर स्पष्ट लिपि में लिखी अथवा टाइप की हुई हों। प्रत्येक रचना की तीन प्रतिलिपियां आना आवश्यक है।
२. पूर्व-प्रकाशित, प्रसारित एवं पूर्व-पुरस्कृत रचनाओं पर विचार नहीं किया जाएगा।
३. निर्णायक-मंडल का निर्णय अंतिम और सर्वमान्य होगा।
४. **हिंदुस्तान टाइम्स के कर्मचारी अथवा उनके संबंधी प्रतियोगिता में भाग नहीं ले सकेंगे।**

रचनाएं भेजने की अंतिम तिथि १५ मार्च, '७६

प्रतियोगिता के लिए रचनाएं भेजने का पता :

प्रतियोगिता-संपादक
'कादम्बिनी'
हिंदुस्तान टाइम्स लि., १८–२० कस्तूरबा गांधी मार्ग
नयी दिल्ली-१

वर्ष १६ : अंक ४
फरवरी, १९७६

आकल्पं कविनूतनाम्बुदमयी कादम्बिनी वर्षतु

निबंध एवं लेख

संपादक

राजेन्द्र अवस्थी

कथा-साहित्य

कविताएं

सार-संक्षेप

रंगीन चित्र : अमरीकी सूचना-विभाग के सौजन्य से

स्थायी स्तंभ

संयुक्त संपादक : शीला झुनझुनवाला, उप-संपादक : कृष्णचंद्र शर्मा, दुर्गाप्रसाद शुक्ल, विजयसुन्दर पाठक, सुनीता बुद्धिराजा
चित्रकार : सुकुमार चटर्जी

काल-चिंतन

——एक प्रश्न पूछा गया है, "मनुष्य-जीवन का सर्वोत्तम सुखद क्षण कौन-सा है ?"

●●

——सुख का भान स्मृति से उठता है।

——बिजली की कौंध की तरह स्मृति उभरती है और वह एक हलकी मुसकान छोड़कर चली जाती है।

——एक कथा हमें याद आ रही है। एक व्यक्ति अपनी अंतिम अभिलाषा लिये गंगा को पाने चल पड़ा। निरंतर संघर्ष के बाद वह गंगा के किनारे तक तो पहुंच गया, लेकिन गंगा को पाने के पूर्व ही उसने दम तोड़ दिया।

——कहा जा सकता है, यदि वह गंगा को पा लेता तो संभवतः वह उसके जीवन का सर्वोत्तम सुखद क्षण होता।

——लेकिन संभवतः नहीं भी। गंगा को पाते ही उसकी थकान से भरी शरीर-चेतना इतना कुछ दर्द दे जाती कि वह अपनी व्यर्थता पर पछताता होता।

——गंगा को पाकर उसे जो मिलता, वास्तव में, वह संतोष होता।

——संतोष या तृप्ति सुख नहीं है।

——सुख कभी प्रयत्न करने से नहीं आता। सुखी रहने के लिए ही तो समूचा जीवन संघर्षरत है, किंतु सुख कहां है?

——उत्तर तक पहुंचने के पहले सुख के केंद्र-बिंदुओं की खोज आवश्यक है।

●●

——सुख वास्तव में एक सत्य नहीं है, वह मात्र एक अनुभव है।

——भूख के बाद का भोजन, प्यास के बाद का पानी, थकान के बाद की नींद, रेगिस्तान के बाद की हरित भूमि, आकाश में घंटों तैरने के बाद की धरती अथवा महासागर की कालजयी यात्रा के बाद पत्थर की मात्र एक चट्टान—सभी को सुख का अंतिम क्षण कहा जा सकता है।

——शांति भी सुख है और प्रेम को तो सुख का चरम-बिंदु माना गया है।

——कहा जाता है, भोग से बड़ा दूसरा सुख नहीं है, लेकिन वास्तविकता उसके परे है। भोग का अंत ग्लानि, घृणा और क्षोभ है।

——भोग का अंतिम क्षण भी परछाईं की तरह हमारी पहुंच से घिसक जाता है।

——वह भविष्य के आतंक से ग्रस्त होकर

देते-देते हमारा सब कुछ छिन गया है।

—भोग की मूलचेतना ही संघर्ष है और कुछ भी पाने का संघर्ष, वास्तव में, एक प्रकार का कलह है।

—कलह एक पद्धति है।

—किसी पद्धति को खोजने का अर्थ है, हम किसी परिणाम को उपलब्ध करना चाहते हैं।

—परिणाम तक पहुंचने की आकांक्षा फिर एक संघर्ष है और संघर्ष में आनंद नहीं होता।

—इसलिए आनंद भोग से नहीं मिलता।

●●

—सच पूछिए तो आनंद की प्राप्ति या समूचे सुख की अभिलाषा एक संपूर्ण शरीर है और संपूर्ण शरीर पर नियंत्रण पाना ही कठिन है। इसलिए इस तरह सुख की तलाश अपने साथ छल है और हवा के साथ खेलना है।

—शब्द में संगीत नहीं होता, संगीत कंठ के मर्म में छिपे आघातों में होता है, वैसे ही सुख भी एक समूचे तत्त्व में नहीं पाया जा सकता।

—सुख एक सापेक्ष तत्त्व है। एक का सुख दूसरे का दुःख बन सकता है।

●●

—तब ?

—निष्कर्ष मिला, सुख का वास्तविक केंद्र संघर्ष, संतोष, शांति और एक पद्धति—इनमें से कहीं नहीं है।

—उसकी मूलचेतना मस्तिष्क के ज्ञान में छिपी है।

—ज्ञान की तलाश मानवता का चरम-लक्ष्य है, वही मानव-संस्कृति का विकास है।

—ज्ञान की ज्योति ही सृजन के क्षण को जन्म देती है।

—इसलिए सृजन में प्रयत्न नहीं होता, सृजन में संघर्ष नहीं होता, सृजन में आत्म-विस्मृति का बोध होता है, नये जन्म की परिकल्पना होती है।

—पेड़ों पर फूटती पहली कोंपल और धरती से फूटा पहला अंकुर सृजन के आयाम हैं। ये दोनों धरती के गर्भ और पेड़ के तने को फूटने के पहले हिला देते हैं। वह उनके दर्द का अंतिम क्षण है।

—इसलिए दर्द की चरम-सीमा और उसका अंतिम [illegible] चिह्न ही वास्तव में सबसे बड़ा सुख है।

—यानी सृजन का क्षण ही मनुष्य-जीवन का सर्वोत्तम सुखद क्षण माना जा सकता है।

साहित्य के लिए देश की वर्तमान स्थितियां अत्यंत संगत हैं। अब तक साहित्य के स्वर 'प्रोटेस्ट' के स्वर रहे हैं। यह 'प्रोटेस्ट' किसी विशेष वर्ग, दल अथवा राजनीति के विरुद्ध नहीं रहा, वह सत्ता के विरुद्ध रहा है। सत्ता चाहे जो भी हो, उसके मानदंड अलग होते हैं। न्याय और वृहत्तर लक्ष्य की प्राप्ति तथा अधिकाधिक जातियों और वर्गों को संतुष्ट करना उसका लक्ष्य होता है। होना भी चाहिए। साहित्य की दुनिया वृहत्तर आयामों की चेतना के बावजूद एक व्यक्ति की निजी पीड़ा है। यह अलग बात है कि कई बार वही पीड़ा सर्वजनीन बनकर वाल्मीकि के क्रौंच-वध की तरह सबको प्रभावित कर जाती है। लेकिन मूलतः लेखन व्यक्ति की अपनी निजी सीमा के साथ केंद्रित होता है। इसीलिए उसका स्वर आक्रोश और विरोध से ओतप्रोत रहता है।

विकसित देशों और विकासशील देशों की समस्याएं अलग हैं। विकसित देशों में आर्थिक संपन्नता और स्थिरता ने उन्हें राजनीति के प्रति उदासीन बना दिया है। यूरोप-यात्रा में हमें अनुभव हुआ कि वहां का समूचा वर्ग राजनीति के प्रति नितांत तटस्थ है। उनका कहना है, "राजनीति की चर्चा

आज का भारतीय साहित्य किस ओर ?

करने के लिए हमारे यहां 'प्रोफेशनल्स' हैं।" यानी, जो राजनीति में हैं, वही उसकी चर्चा करें। इसका कारण यह है कि वहां की सरकारों ने अपनी जनता को जीवन-यापन के एक निश्चित मानदंड की गारंटी दी है। तब उनके लिए अंतर नहीं पड़ता कि सत्ता किसके हाथ में है। आर्थिक स्वतंत्रता ने उन्हें अनेक अनैतिक कार्यों और अपराधों से बचाया है।

विकासशील देश संघर्षरत हैं—वे अपने आपसे लड़ रहे हैं। गरीबी, भूख, बेबसी, अशिक्षा और जनसंख्या के प्रसार ने उन्हें मजबूर बना दिया है। आदमी का घर जैसे एक कुआं है, जितना भी कमाकर लाओ सब उसमें समा जाता है, उसी तरह आबादी से लबलबाता देश भी एक बड़ा तालाब है, जिसे यदि साफ नहीं किया गया तो

सड़ांध पैदा हुए बिना नहीं रहेगी । उपज और आय के सारे संघर्ष जन-संख्या की वृद्धि के सामने परास्त होते जाएंगे और इनसे आर्थिक स्वतंत्रता नहीं मिल पायेगी । इसलिए विकासशील देशों की पहली जरूरत है, जनता को आर्थिक स्वतंत्रता देना । यह बाहर से कर्ज लेकर अथवा मात्र नारे देकर पूरा नहीं किया जा सकता । इसके लिए हमारी दृष्टि में पहला लक्ष्य होना चाहिए जनसंख्या-प्रसार को रोकने के लिए कठोरतम कानून ।

इस समय मानवता, दया और ममता से अधिक कठोर न्याय-व्यवस्था की जरूरत है । जब तक यह नहीं होगा, आबादी बढ़ती जाएगी । यह व्यवस्था प्रत्येक वर्ग और जाति के लिए होना चाहिए । आश्चर्य यह है कि एक विशेष वर्ग को धर्म की आड़ में अभी भी मुक्त रखा गया है । विकास के लिए इस तरह का भेद गलत है ।

एक बार यदि जनसंख्या-वृद्धि का दौर रुक गया तो दूसरे लक्ष्य शिक्षा के प्रसार को आगे बढ़ाया जा सकता है और क्रमिक गति से विकास की दिशा में आगे बढ़ा जा सकता है ।

देश की समृद्धि जनता की समृद्धि में है और यदि सत्ता के कार्यों से जनहित होता है तो उसे प्रोत्साहित करना चाहिए ।

विरोध करना आसान है, प्रशंसा करना कठिन है । साहित्य के स्वर का मूल स्रोत यदि विरोध ही मान लिया जाए तो पश्चिम के पूरे साहित्य को क्या कहा जाएगा ? और मजे की बात यह है कि विकासशील देशों में और प्रभावों की तरह, साहित्य के प्रभाव भी विकसित देशों से 'इंपोर्ट' होकर आये हैं । आज का भारतीय साहित्य पाश्चात्य सभ्यता, वहां के विकास और वहां के विकसित लेखन से कितना प्रभावित है, कहने की जरूरत नहीं है । यदि इन प्रभावों ने हमें आतंकित किया है, तो साहित्य के साथ-साथ यहां के जन-जीवन को भी विकास की ओर ले जाना आज के साहित्य का लक्ष्य होना चाहिए । 'विरोध के लिए विरोध'—सार्त्र-जैसे दार्शनिक ने भी इसे घातक माना है । उनका कहना है, 'विरोध की दिशाएं खुली होनी चाहिए । उनका ठोस आधार होना आवश्यक है और आधार की गति लक्ष्य की प्राप्ति हो, भटकाव नहीं ।' घने जंगलों के बीच से गुजरती हुई पगडंडी टेढ़ी-मेढ़ी भले हो, उसका गंतव्य अज्ञात नहीं है । उसके भीतर एक चेतना है और लक्ष्य की सीमा है ।

लक्ष्य की ओर बढ़ने का अर्थ यह नहीं है कि 'स्लोगन' या नारेबाजी

का साहित्य लिखा जाए । ऐसा साहित्य [illegible] की सीमा में आता है और उसकी कालावधि निश्चित है । हम उसे साहित्य नहीं मानते और इसलिए उसकी चर्चा भी नहीं करना चाहेंगे । 'नारेबाजी' से काम भी नहीं चलता । साहित्य का लक्ष्य कहीं गहरे भीतर बैठना है । जीवन को विकसित कर एक खुले आकाश की ओर ले जाना है । जीवन के शाश्वत मूल्य किसी राजनैतिक परिधि में नहीं आते । नैतिक मानदंडों की रक्षा यदि साहित्य का धर्म है तो सत्ता की भी वह अनिवार्य चेतना है । इनको लेकर साहित्य और सत्ता में टकराहट की गुंजाइश नहीं है ।

साहित्य अंततोगत्वा संप्रेषण के लिए है—संप्रेषण की समस्या वहां खड़ी होती है, जहां विचारक और श्रोता या लेखक और पाठक के बीच एक बड़ी खाई है । इसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि आज का भारतीय साहित्य लेखक और पाठक के बीच की दूरी से आक्रांत है । समाज की मान्यताएं गतिशील लेखन को पीछे खींचती हैं और लेखक उन्हें धकेलकर आगे निकल जाना चाहता है । ऐसा संघर्ष प्रत्येक विकासशील देश में मौजूद है । पाठक को लेखकीय चेतना तक उठाना आसान नहीं है ।

रूस में ऐसे प्रयत्न करनेवाले दो लेखक थे—मायकोव्स्की और येतसेनिन । मायकोव्स्की चाहते थे, सारा साहित्य मशीन और फौलाद का साहित्य हो । येतसेनिन प्रकृति के नैसर्गिक उपादानों को छोड़ने के लिए तैयार नहीं थे । दोनों समकालीन थे और दोनों का संघर्ष अंत में आत्मग्लानि और आत्महत्या में परिणत हुआ । शायद कहीं दोनों गलत थे । फौलादी मजबूती के साथ-साथ जीवन को विकसित करनेवाले नैसर्गिक तत्त्वों का भी अपना महत्त्व है । हमारी दृष्टि में विकास के लिए दोनों के संघर्ष गलत थे । पाठकीय चेतना की समझ दोनों के पास नहीं थी ।

आज के भारतीय लेखक को इनसे सबक लेना चाहिए । आज की स्थितियों और नियंत्रक शक्तियों को देखते हुए चिंतन का केंद्र-बिंदु यह होना चाहिए कि क्या उनका लक्ष्य जन-कल्याण है ? यदि मानवीय चेतना और बृहत्तर जन-जागृति के लिए प्रयत्न हो रहे हैं तो सृजनकार को उनका साथ देना चाहिए, क्योंकि उसका लक्ष्य भी तो वही है ।

आज का अधिकांश भारतीय साहित्य भारतीय जन-जीवन का अंग नहीं है, क्या समय रहते इस सचाई को हमें स्वीकार नहीं कर लेना चाहिए ?

नव-स्वतंत्र देशों की यातनाएं

• दुर्गाप्रसाद शुक्ल

अफ्रीका में इतिहास फिर स्वयं को दोहरा रहा है—उपनिवेशवादियों के शिकंजों से मुक्ति के लिए एक लंबा संघर्ष और फिर स्वाधीनता की बेला में व्यक्तिगत, जातिगत ईर्ष्या-द्वेष तथा सत्ता हथियाने की होड़ के कारण पारस्परिक मार-काट और भीषण रक्तपात। डेढ़ दशक-पूर्व कांगो में यही सब हुआ था और अब अंगोला में भी गृहयुद्ध की लपटें भड़क उठी हैं। कांगो की भांति अंगोला में भी महाशक्तियां अपने-अपने हित-साधन के लिए इस गृहयुद्ध को भड़का रही हैं।

अंगोला—अफ्रीका का एक समृद्ध नव-स्वतंत्र देश। अंगोला में सब कुछ-है—खनिज और तेल, कृषि-योग्य उर्वरा भूमि, घने वन तथा यातायात के लिए सुविधाजनक जल एवं थल-मार्ग।

एकपक्षीय वापसी

पुर्तगाल में तानाशाह सालाजार के शासन की समाप्ति के बाद जब सैनिक आंदोलनकारियों ने सत्ता संभाली तब उन्होंने सर्वप्रथम अफ्रीका-स्थित अपने उपनिवेशों को स्वतंत्र करने की घोषणा की। इस घोषणा के अनुसार सबसे पहले मुक्त हुआ गिनी-बिसाऊ, फिर फ्रीलिमो और अंत में अंगोला। अफ्रीका में अपने उपनिवेशों को स्वतंत्र करने में ब्रिटेन ने स्वशासन का संवैधानिक मार्ग अपनाया था और फ्रांस ने 'रिफ्रेंडम' (जनमत-संग्रह) का। बेलजियम ने भी कांगो में आम-चुनावों में विजयी लुमुंबा के दल की राष्ट्रीय सरकार को मान्यता दी थी,

गृहयुद्ध में लिपटा अंगोला—जहां दक्षिण अफ्रीकी तथा गुप्त शक्तियों के सैन्य हस्तक्षेप की भारत तथा तंजानिया ने तीव्र भर्त्सना की है। ताजी सूचनाओं के अनुसार अंगोला में एम. पी. एल. ए. की स्थिति उत्तरोत्तर दृढ़ होती जा रही है।

लेकिन अपने उपनिवेशों की सत्ता सौंपने में पुर्तगाल के सैनिक आंदोलनकारी एकमत नहीं हो पाये। उनमें एक गुट--परिवर्तनवादी--तत्काल सत्ता-हस्तांतरण का आग्रह कर रहा था तो दूसरा--अनुदारवादी—इस उपनिवेश की मुक्ति के लिए संघर्षरत सैनिक-गुरिल्ला नेताओं को सत्ता सौंपने में हिचकिचा रहा था। अंगोला के संकट में पुर्तगालियों द्वारा एकपक्षीय वापसी ने भी योग दिया है। गत वर्ष नवंबर में जब पुर्तगाली अंगोला से लौटे तब अपने पीछे तीन पक्षों को परस्पर युद्ध के लिए सन्नद्ध छोड़ आये। ये तीन पक्ष हैं—एम. पी. एल. ए., एफ. एन. एल. ए. और यू. एन. आई. टी. ए.।

एम. पी. एल. ए.

एम. पी. एल. ए. को, जिसके नेता कवि डॉक्टर अगोस्तीन नेटो हैं, सोवियत संघ एवं उसके समर्थक देशों, यथा क्यूबा, से सहायता मिल रही है। १९५६ में स्थापित एम. पी. एल. ए. अंगोला की एक सशक्त एवं सुगठित मार्क्सवादी पार्टी है। पुर्तगाली उपनिवेशवादियों के विरुद्ध शुरू-शुरू में इसी पार्टी ने संघर्ष छेड़ा था। सोवियत संघ प्रारंभ से ही इस पार्टी की शस्त्रादि से सहायता करता आ रहा है। इस पार्टी को लुआंडा के पूर्वी भागों में रहने वाली मुबुंडू जाति का व्यापक समर्थन प्राप्त है। एम. पी. एल. ए. के समर्थकों में मुलुट्टो जाति के लोग भी हैं। पुर्तगाली एवं अफ्रीकी रक्तमिश्रित मुलुट्टो या 'मेस्टिको' मार्क्सवादी और लड़ाकू हैं। अंगोला की स्वाधीनता के समय इस पार्टी को पुर्तगाली वामपंथी सैनिक गुटों का समर्थन प्राप्त था। अंगोला के तीन पक्षों में एम. पी. एल. ए. की स्थिति काफी अच्छी है। उसका राजधानी लुआंडा तथा अतलांतक महासागर के तटवर्ती क्षेत्रों पर अधिकार है। सोवियत सहायता के अतिरिक्त क्यूबा के कोई तीन हजार प्रशिक्षित सैनिक और अधिकारी एम. पी. एल. ए. की ओर से लड़ रहे हैं।

शेष दो पक्ष

शेष दो पक्ष हैं—एफ. एन. एल. ए. और यू. एन. आई. टी. ए.। इनमें अंतिम पक्ष अपेक्षाकृत नया है तथा उसके नेता डॉ. जोनास साविम्बी, एफ. एन. एल. ए. के नेता राबर्टो होल्डन के विदेशमंत्री थे। राबर्टो के 'भीषण जातिवाद' से 'त्रस्त' होकर डॉ. साविम्बी ने अपना पृथक दल यू. एन. आई. टी. ए. बना लिया। डॉ. साविम्बी ने राजनीति विज्ञान में डॉक्टरेट प्राप्त की है। इसके अतिरिक्त वे चीन में भी प्रशिक्षण पा चुके हैं। डॉ. साविम्बी महात्मा गांधी के भी बड़े प्रशंसक हैं। गत वर्ष एक सभा में उन्होंने स्वयं कहा था—'यह सच है कि मैं शांति चाहता हूं और महात्मा गांधी का बहुत बड़ा प्रशंसक भी हूं, लेकिन यदि एक बार थप्पड़ मारने पर गांधी दूसरा गाल भी सामने कर देते तो मैं थप्पड़ लगानेवाले व्यक्ति को उलटकर दो बार थप्पड़ लगाता।' डॉ. साविम्बी

को 'शांति का मसीहा' भी कहा जाता है।

डॉ. साविम्बी के दल का प्रभाव अंगोला के दक्षिण में है। उन्हें इस क्षेत्र में स्थित ओविम्बुंडू जाति के अतिरिक्त ३,४ लाख श्वेत लोगों का भी समर्थन प्राप्त है। दक्षिण अफ्रीका की श्वेत सरकार का भी डॉ. साविम्बी को समर्थन है। कहा जाता है कि चीन, अमरीकी सरकारों के अतिरिक्त अमरीका और यूरोप के बड़े व्यापारी भी डॉ. साविम्बी की मदद कर रहे हैं।

शाही परिवार से संबंधित हैं तथा उन्हें जैरे के राष्ट्रपति मोबुतू की बहन ब्याही हैं। 'न्यूयार्क टाइम्स' के अनुसार वे १९६२ से सी. आई. ए. के संपर्क में हैं।

अमरीका के अतिरिक्त चीन भी राबर्टो की मदद कर रहा है। स्वयं राबर्टो के अनुसार उनके 'सारे सैनिकों ने चीनियों से प्रशिक्षण प्राप्त किया है'।

स्पष्ट है कि अंगोला-विवाद से संबंधित तीनों पक्षों को महाशक्तियों का सक्रिय
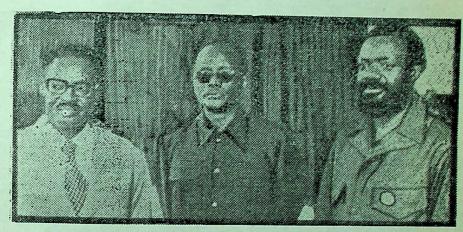
अंगोला-नाटक के तीन सूत्रधार—डॉ. नेटो, राबर्टो होल्डन एवं डॉ. साविम्बी

अन्य दल एफ. एन. एल. ए. है। वास्तव में असली टक्कर एम. पी. एल. ए. और एफ. एन. एल. ए. के बीच है। एफ. एन. एल. ए. का प्रभाव उत्तर में, जहां अंगोला की सीमा जैरे (कांगो) से मिलती है, अधिक है। इस दल के नेता राबर्टो होल्डन हैं। राबर्टो जैरे तथा अंगोला की सीमा पर रहनेवाली बोकांगो जाति

समर्थन प्राप्त है। वियतनाम-संघर्ष में जहां रूस और चीन अमरीका-समर्थित दक्षिण वियतनाम के विरुद्ध उत्तरी वियतनाम को सहायता दे रहे थे, वहां अंगोला में अब चीन और अमरीका रूस के खिलाफ हैं।

अपने-अपने हित

अंगोला में प्रतिपक्षी महाशक्तियों के इस तरह उलझ जाने के अनेक कारण हैं।

दक्षिण और पूर्वी एशिया में अमरीकी प्रतिष्ठा को धूल-धूसरित करने तथा उत्तर वियतनाम की हनोई सरकार पर से चीनी प्रभाव हटाने के बाद अफ्रीकी महाद्वीप में रूस अमरीका-चीन युक्ति को परास्त करना चाहता है। अंगोला में मार्क्सवादी शासन की स्थापना के बाद जहां एक ओर रूस को अतलांतक महासागर में प्रवेश की सुविधा मिलती है वहां अफ्रीका की रंगभेदवादी सरकारों—दक्षिण अफ्रीका तथा रोडेशिया—के लिए खतरा पैदा से लगा अंगोला का तेल-समृद्ध काबिंदा-क्षेत्र स्वयं जैरे और पश्चिमी तेल-कंपनियों के लिए आकर्षण बना हुआ है।

लेकिन दक्षिण अफ्रीका द्वारा एफ. एन. एल. ए. और यू. एन. आई. टी. ए. की ओर से खुली लड़ाई के बाद अंगोला-विवाद का नक्शा बदल गया। एक ओर जहां अफ्रीकी राष्ट्रों ने एम. पी. एल. ए. का समर्थन शुरू कर दिया है, वहां चीन भी अब खुले आम रंगभेद-समर्थकों का साथी बनने से कतरा रहा है।

अफ्रीका के पश्चिमी तट पर भूमध्य रेखा के नीचे स्थित अंगोला का क्षेत्रफल ४,८१,३५१ वर्गमील है। पूरे देश को दो भागों में बांटा जा सकता है—तटवर्ती क्षेत्र और पठारी भाग। सिंह, चीता, तेंदुआ, हाथी, जेबरा, जिराफ, गैंडा तथा दरियाई घोड़ा (हिप्पोपोटेमस)-जैसे पशुओं से भरे अंगोला में पाषाण-युग से लोग रहते आये हैं। वहां पाषाणयुगीन औजार भी प्राप्त हुए हैं। बाद में ईसा से १ हजार वर्ष बाद बांटू लोगों के आगमन से इस क्षेत्र में कृषि-कार्य शुरू हुआ।

होता है। अमरीकी आरोप है कि तटस्थ किंतु वामपंथी अंगोला दक्षिण-अफ्रीका के साथ 'दितेंते' (तनाव-शैथिल्य) को खत्म करेगा तथा जातीय दंगों को भड़कायेगा। रूस-समर्थक अंगोला यों भी अफ्रीका में अमरीकी-चीनी महत्त्वाकांक्षाओं के आड़े आयेगा।

पर अंगोला-संकट के मूल में यही कारण नहीं हैं। इस विवाद के अन्य प्रमुख कारणों में है अंगोला की खनिज संपदा और जातीय द्वेष। जैरे की सीमा

दक्षिण अफ्रीका को विश्वास है कि उत्तर से राबर्टो की तथा दक्षिण से डॉ. साविम्बी की बढ़ती सेनाएं मध्य में फंसी एम. पी. एल. ए. की सेनाओं को हथियार डालने के लिए विवश कर देंगी। दूसरी ओर प्रेक्षकों की राय में यदि विदेशी हस्तक्षेप न हो तो एम. पी. एल. ए. अपने प्रतिद्वंद्वी पक्षों से निबटने में समर्थ है।

अंगोला-विवाद का अंत क्या होगा? क्या कोई एक पक्ष पूर्णतः विजयी होगा अथवा अंगोला का भी विभाजन होगा?

जहां तक पश्चिमी राष्ट्रों का संबंध है, वे ऐसे विभाजन के पक्ष में होंगे, क्योंकि एक तो तीन टुकड़ों में बंटा अंगोला हमेशा कमजोर रहेगा, दूसरे काबिंदा का तेल-समृद्ध क्षेत्र उनके समर्थक राबर्टो होलडन के हाथों में होगा। उधर दक्षिण में डॉ. साविम्बी का आधिपत्य भी बना रहेगा। पश्चिमी शक्तियां शायद इसी तरह के समाधान के लिए व्यग्र और व्यस्त हैं। जहां तक अफ्रीकी देशों का संबंध है, अंगोला के प्रश्न पर उनमें भी मतैक्य नहीं नव-स्वतंत्र एवं नव-विकसित देशों की ही नहीं, वरन स्वावलंबन एवं आर्थिक स्वतंत्रता के लिए प्रयत्नरत भारत-जैसे तटस्थ देशों की जनता के लिए भी एक गंभीर चेतावनी है। चिली के बाद अंगोला की घटनाओं ने एक बार फिर स्पष्ट कर दिया है कि अपने देश के हितों की पूर्ति के लिए विदेशी गुप्तचर एजेंसियां किस तरह नव-विकसित देशों के सत्तालोलुप नेतृत्व को भ्रष्ट करती हैं।

अंगोला में जारी गृहयुद्ध ने इस

सन १४८३ में सोना और अन्य कीमती धातुओं की खोज में आये पुर्तगालियों ने अंगोला में दास-व्यापार शुरू किया। यह व्यापार चार शती तक जारी रहा। १९ वीं शती में उपनिवेशवादी शक्तियों ने अफ्रीका का कागजी विभाजन किया तो पुर्तगालियों की अंगोला पर अधिकार करने की कोशिश ने एक लंबे संघर्ष का सूत्रपात किया। अंततः अंगोला पुर्तगाली उपनिवेश बन गया, किंतु वहां के मूलनिवासी श्वेत-प्रवासियों से लड़ते ही रहे।

हो सका है। अफ्रीकी एकता के राष्ट्रीय संगठन के अदिस अबाबा शिखर-सम्मेलन में जहां २२ सदस्य-राष्ट्र एम. पी. एल. एफ. की सरकार को मान्यता देने के पक्ष में थे वहां उतने ही सदस्यों ने युद्ध-विराम एवं राष्ट्रीय सरकार की स्थापना पर जोर दिया। यह विडंबना ही है कि ये अफ्रीकी राष्ट्र अंगोला में हस्तक्षेप के लिए दक्षिण अफ्रीका की भर्त्सना पर भी एकमत न हो सके।

अंगोला का गृहयुद्ध समूचे विश्व के ऐतिहासिक सत्य को पुनः दोहराया है कि उपनिवेशवादी शक्तियां जब भी अपने उपनिवेशों को छोड़ने के लिए विवश होती हैं तब उसे विभाजित करने की कोशिशों से बाज नहीं आतीं। आज इन उपनिवेशवादी शक्तियों का स्थान महाशक्तियां ले रही हैं और उपनिवेशवाद का रूप भी बदल रहा है। ऐसी स्थिति में छोटे और तटस्थ देशों की जनता को विशेष सावधान रहने की जरूरत है। अंगोला गृहयुद्ध का सबसे बड़ा सबक यही है। ●

• शिवशंकर अवस्थी

क्या आप कल्पना कर सकते हैं कि जिन दिनों भारत मुगलों के गौरवशाली काल में प्रत्येक क्षेत्र में प्रगति कर रहा था, उन्हीं दिनों संसार में एक ऐसा क्षेत्र भी था जहां के मूल निवासी कबीली अवस्था से आगे नहीं बढ़े थे । वहां यूरोप के प्रवासियों का तांता लगा था और वे आरंभ में ब्रिटेन की प्रभुसत्ता के अधीन थे । एक दिन वे लोग ब्रिटेन की अधीनता के विरुद्ध उठ खड़े हुए । उन्होंने एक महान नेता के नेतृत्व में बहादुरी से लड़कर दासता के बंधनों को तोड़ डाला । फिर उन सबने मिलकर एक महान राज्य की नींव रखी । कालांतर में वह नींव इतनी पक्की हो गयी कि आज तक उसे कोई हिला नहीं सका । वह देश प्रगति करता गया और अन्य बहुत सारे देशों को उसने काफी पीछे छोड़ दिया ।

आप समझ गये कि हम किस महान देश की बात कर रहे हैं ? यह देश है संयुक्त राज्य अमरीका, जिसे कभी न्यू इंगलैंड के नाम से पुकारा जाता था और आज उसे 'नयी दुनिया' के नाम से भी पुकारते हैं । अमरीकियों ने लगभग २०० साल पहले ४ जुलाई

१७७६ को ग्रेट ब्रिटेन की दासता से मुक्त होने की घोषणा की थी। किंतु घोषणा करना ही काफी नहीं था, क्योंकि इंगलैंड ने इसका सशस्त्र प्रतिरोध किया। परिणामस्वरूप एक युद्ध प्रारंभ हो गया, जिसे हम अमरीकी स्वतंत्रता-संग्राम कहते हैं। अंत में अमरीका की विजय हुई। जिस महान नेता के नेतृत्व में अमरीकियों ने यह युद्ध लड़ा उसका नाम था जार्ज वाशिंगटन।

इस स्वतंत्रता-युद्ध में भाग लेनेवाली केवल १३ बस्तियां थीं। स्वतंत्रता के पश्चात बना संयुक्त राज्य अमरीका का क्षेत्रफल इन्हीं तेरह बस्तियों तक सीमित था। बाद में अन्य बस्तियां भी शामिल हो गयीं। आज अमरीका का कुल क्षेत्रफल ९३९९.३१७ वर्ग-किलोमीटर है।

तब का निर्धन अमरीका

स्वतंत्रता के बाद अमरीकी नागरिक देश-निर्माण के महान कार्य में लग गये। उन्होंने शीघ्र ही अपने देश को विश्व के मानचित्र में महत्त्वपूर्ण स्थान पर पहुंचा दिया। १७७६ का अमरीका एक निर्धन अमरीका था।

राजनीतिक दृष्टि से १७७६ से पहले का अमरीका छोटी-छोटी बस्तियों में विभाजित था, अर्थात राजनीतिक एकता तथा स्थिरता नहीं थी। गिरगिट के बदलते रंगों की तरह वहां शासक बदलते रहे थे। इन शासकों के विरुद्ध विद्रोह होना एक साधारण बात थी। देश में अच्छी सेना भी
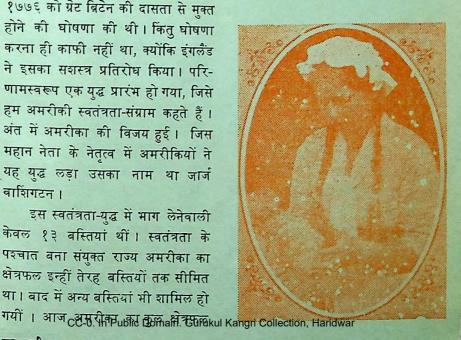
नहीं थी। अमरीका के पास अच्छी नौसेना थी, किंतु कभी-कभी यह समुद्री डाकुओं का एक गिरोह बन जाती थी और लूटमार करती थी।

शुरू में अमरीकी लोगों का मुख्य धंधा कृषि था। प्रत्येक दस में से आठ व्यक्ति अपनी जीविका कृषि से चलाते थे। अन्य

व्यवसाय से गुजर-बसर करनेवाले लोग भी किसी न किसी रूप से कृषि से संबंधित थे। ज्यादातर लोग गांवों में रहते थे। केवल पांच नगरों की आबादी ८ हजार से ज्यादा थी। इस तरह केवल पांच प्रतिशत लोग शहरों में रहते थे।

इसके बावजूद कृषि-उत्पादन अधिक नहीं था। जार्ज वाशिंगटन ने अपने मित्र को एक पत्र में लिखा था—'यदि किसी अंगरेज कृषक को यह बताया जाए कि अमरीका में एक एकड़ में आठ-दस बुशल (एक बुशल में ३२ सेर होते हैं) से अधिक गेहूं नहीं होता तो वह हमारे बारे में बड़ी हास्यास्पद धारणा बनायेगा।' खेती कमजोर पशुओं के द्वारा की जाती थी और ये पशु कभी-कभी जंगली जानवरों का शिकार हो जाते थे। इन जंगली जानवरों से बचाव का कोई उपाय नहीं था, क्योंकि ये किसान इंगलैंड से आये थे, जहां शिकार उच्च वर्ग का ही शौक था। किसानों को कृषि-कार्य का विशेष अनुभव नहीं था। इसके अतिरिक्त कुछ किसान कर्ज के भार से बहुत दबे रहते थे। मेरीलैंड और वर्जीनिया में बहुत ही शोचनीय स्थिति थी। खेती करने के लिए इन दो प्रदेशों के किसान ब्रिटिश व्यापारियों से कर्ज लेते थे। फसल की बिक्री के लिए भी उन्हें ब्रिटिश व्यापारियों पर ही निर्भर रहना पड़ता था और वे मनमाने दाम में उनसे फसल खरीदते थे।

देश में कोई विशेष उद्योग नहीं था। लोग अपने लिए कपड़ा स्वयं बुनते थे। बढ़िया कपड़ा विदेश से आता था। अमरीका तंबाकू, कपास और चाय बाहर भेजता था, किंतु व्यापारिक दृष्टि से यह देश महत्त्वपूर्ण नहीं था। चेचक–जैसे रोगों का प्रकोप होता ही रहता था। स्वतंत्रता-युद्ध के दौरान यह रोग सेना में बुरी तरह फैल गया था। इसलिए जार्ज वाशिंगटन ने सभी सैनिकों को चेचक का टीका लगवाने का आदेश दिया था।

जिक
और
हो
समुद्र
में अ
और
थी।
था।
फ्रांसी
इन
—'अ
चाह
लिय
रिक्त
लिफ
देश
हुआ
था।
स्वतं
को अ
लिख
अच्छी
लिफा
का अ
जूद
अनेक
भविष
मलीभ
फरव

ऐसी शोचनीय राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों में कला और साहित्य की कोई विशेष उन्नति नहीं हो सकती। पुस्तक-व्यवसाय केवल कुछ समुद्रतटीय शहरों में ही सीमित था। देश में अखबार अवश्य निकलते थे, किंतु स्याही और टाइप की कमी हमेशा बनी रहती थी। इन चीजों का आयात ब्रिटेन से होता था। वहां के अखबारों के बारे में एक फ्रांसीसी द्वारा एक अमरीकी से कहे गये इन शब्दों से अनुमान लगाया जा सकता है—'आप कोई बात बहुत ही गोपनीय रखना चाहते हों तो उसे अपने अखबारों में छपवा लिया करें।' टाइप और स्याही के अतिरिक्त कागज की भी बहुत कमी थी।

लिफाफे तक नहीं थे

देश में कागज उद्योग अभी विकसित नहीं हुआ था। कागज भी इंगलैंड से आता था। अमरीकी राष्ट्रपति जार्ज वाशिंगटन स्वतंत्रता-युद्ध के दिनों में अपने जनरलों को आदेश कागज के छोटे-छोटे टुकड़ों पर लिखकर भेजा करते थे। इन आदेशों को अच्छी तरह से भेजने के लिए उनके पास लिफाफे तक नहीं थे।

इस तरह हम देखते हैं कि १७७६ का अमरीका एक टूटा हुआ जर्जर देश था।

किंतु इन सब कठिनाइयों के बावजूद अमरीकी घबराये नहीं। उनके सामने अनेक समस्याएं थीं, पर वे अपने देश के भविष्य के प्रति आशान्वित थे। वे यह भलीभांति समझ गये थे कि यदि मिलजुलकर कार्य न किया गया तो उनका अस्तित्व ही समाप्त हो जाएगा।

अमरीकी स्वतंत्रता-संग्राम में भाग लेनेवाले अधिकतर अंगरेज थे। उनकी भाषा, विधि और परंपराएं तत्कालीन इंगलैंड से अलग नहीं थीं, किंतु इस विरासत ने एक नयी राष्ट्रीयता के निर्माण में कोई रुकावट पैदा नहीं की। जॉन ऐडम्स उन प्रथम अमरीकियों में से थे जिन्होंने इस तथ्य को महसूस किया। ऐडम्स ने कहा कि क्रांति स्वतंत्रता-युद्ध के पहले ही अमरीकी लोगों के मस्तिष्कों में संपन्न हो गयी थी, जिसने उनके सिद्धांतों, मतों और भावनाओं में एक महान परिवर्तन कर दिया।

प्रजातंत्र का नया तरीका

अस्तित्व के संकट के साथ-साथ एक और उत्साह था जिसने अमरीकियों को कभी निराश नहीं होने दिया। उन्होंने प्रजातंत्र को लागू करने का एक नया तरीका निकाला। इससे पहले प्रजातंत्र की संसदीय प्रणाली प्रचलित थी, जिसमें संसद सर्वोच्च संस्था होती है और कार्यपालिका व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी होती है। अमरीका ने प्रजातंत्र की दूसरी प्रणाली—राष्ट्रपतीय शासन-प्रणाली—अपनायी, जिसमें प्रशासन के तीनों अंग—कार्यपालिका, व्यवस्थापिका और न्यायपालिका—एक-दूसरे से स्वतंत्र अपने-अपने अधिकार-क्षेत्र में सर्वोच्च होते हैं; किंतु अमरीकी यह भी जानते थे कि प्रशासन के तीनों अंगों का पूर्ण संतुलन असंभव है और यह

भी कि 'सत्ता भ्रष्ट करती है और पूर्ण सत्ता पूर्ण रूप से भ्रष्ट करती है।' इसलिए उन्होंने सत्ता के पृथक्करण के सिद्धांत को 'अवरोध और संतुलन' के सिद्धांत को ध्यान में रखकर लागू किया।

भविष्य के प्रति आस्था और विश्वास ने अमरीका को संसार का एक महान देश बना दिया। वही देश, जिसमें कभी राजनीतिक एकता और स्थिरता का अभाव था, आज एक सुसंगठित देश है। २०० सालों में अमरीकी शासन-व्यवस्था को केवल एक बार चुनौती मिली, जब कि वहां गृहयुद्ध हुआ। आज अमरीका की तीनों सेनाएं शक्तिशाली हैं। अमरीका सभी प्रकार के शस्त्र बनाता और दूसरे देशों को बेचता है।

विज्ञान के क्षेत्र में भी अमरीका ने आश्चर्यजनक प्रगति की। अनेक उच्चकोटि के वैज्ञानिक अमरीका में पैदा हुए। चांद पर आज तक अमरीकी ही उतर पाये हैं। अमरीका ने अनेक देशों से आकर बसनेवालों को नागरिकता प्रदान करने में संकोच नहीं किया।

कृषि-क्षेत्र में भी अमरीका ने एक नयी दिशा प्रदान की। कृषि के नये-नये यंत्रों का निर्माण हुआ। इन आविष्कारों के फलस्वरूप आदमी का कार्य मशीनें करने लगीं और किसानों की संख्या घटने लगी। १८५० में हर १०० में से ८५ किसान थे। १९०० में यह संख्या गिरकर ६० रह गयी और आजकल हर १०० में से केवल ३० अमरीकी किसान हैं। इसके बावजूद अमरीका में अनाज-संबंधी कोई समस्या नहीं है।

उद्योग-धंधों में भी अमरीका ने काफी प्रगति की। वह दुनिया के बहुत से देशों को तैयार माल भेजता है। अखबारी कागज, स्याही और टाइप की समस्या कभी की हल हो चुकी है।

शिक्षा में प्रगति के साथ-साथ देश में सांस्कृतिक प्रगति भी हुई। अमरीकी साहित्य ने दुनिया के साहित्य को प्रभावित किया है। हमारे 'नयी कविता आंदोलन' में अमरीकी प्रभाव स्पष्ट है।

अमरीका में सभी क्षेत्रों में हो रही प्रगति का मुख्य कारण यह भी रहा कि अमरीका ने हमेशा बाहर के लोगों का खुले दिल से स्वागत किया है। प्रायः यूरोप के प्रोटेस्टेंट आंदोलन के सिलसिले में विरोधियों के उत्पीड़न से बचकर भागे हुए लोगों ने अमरीका के निर्माण में सहयोग दिया था। आनेवालों में ब्रिटिश लोगों की संख्या सबसे ज्यादा थी। कुछ अंगरेज तो अपनी जान बचाने के लिए 'मे-फ्लावर' नामक जहाज में अमरीका आये थे। कुछ लोग सोने-चांदी की खोज में और कुछ साहसिक कार्यों के लिए यहां आये। इस प्रकार विभिन्न उद्देश्यों से यहां आये लोगों ने संघर्ष करके तथा मिलजुलकर एक महान राष्ट्र का निर्माण किया।

—एफ-१२, जंगपुरा विस्तार,
नयी दिल्ली-११००१४

कहानी

• चंद्रकांत बक्षी

समित का पत्र आया—मां का देहावसान हो गया था। दुःख हुआ थोड़ा-सा। समित अपनी मां का इकलौता बेटा था। जन्म के कुछ ही समय बाद उसके पिता की मृत्यु हो गयी थी। हम लोग सहपाठी थे। इंटर में वह फेल हो गया और अपना स्वतंत्र व्यवसाय करने लगा। कभी-कभी मैं उसके घर भी जाता। समित का घनिष्ठ मित्र होने के कारण उसकी मां मुझे भी प्यार करती थी। समित की तरह मैं भी उसे 'मां' कहकर ही पुकारता

था। एक बार मैंने समित से पूछा था, "तू अपनी मां को 'मम्मी' क्यों नहीं कहता?"

"मां शब्द मुझे पसंद है। वर्षों से मैं 'मां' ही कहता आया हूं।"

"मां शब्द मुझे भी पसंद है, लेकिन बहुत पुराना लगता है," मैंने कहा।

"मां तो आखिर एक ही होती है दुनिया में, और मेरे लिए तो वह पिता, भाई, बहन सभी कुछ है। 'मम्मी' बहुत छोटा शब्द है उसके लिए... खाली-खाली-सा लगता है।"

मैं छोटा ही था, तब मेरी मम्मी की मृत्यु हो गयी थी। मित्रों की माताओं को मैं कई बार 'मम्मी' कह देता था। सभी को प्यारा भी लगता था। समित की मां औरों की मां से कुछ ज्यादा आत्मीय लगती थी—शायद वही गंभीरता से समझती थीं कि मेरी मां की मृत्यु हो चुकी है।

समित का पत्र पढ़ते ही तमाम विचार उमड़ आये। समित की मां की आकृति आंखों के सामने उभर आयी—विभिन्न भंगिमाओं में।

कॉलेज के दिनों में मैं अकसर समित के घर जाता था। मां चाय बनाती थीं और कभी-कभी रसोईघर में बैठकर ही हम दोनों दोस्त चाय पी लेते थे। जो भी नाश्ता देती, हम साथ-साथ खा लेते थे। हम कभी रात का शो देखकर लौटते तो मैं समित के घर ही सो जाता था। समित के मना करने के बावजूद मां उसके लिए ढंककर रखी थाली फिर से गरम करती। खाना खाकर हम दोनों बिछौनों में लेटे रात देर तक बातें करते रहते।

मैंने समित को सांत्वना-भरा पत्र लिखा।

पिछले दो-एक वर्षों से मां की तबीयत ज्यादा खराब हो गयी थी...

बीच में एक बार दिल्ली गया था, तब समित से मिलना हुआ था। समित घर ले गया, मां से मिला—

"कैसी है मां आपकी तबीयत?" मैंने पूछा।

"तू भी आप कहने लगा? बड़ा

हो गया न अब तो! मां हंस दी। वह पहले की तरह ही लग रही थी। सिर्फ आंखों के नीचे बुढ़ापा जम रहा था। केश पतले हो गये थे, लेकिन थे काले, अभी भी।

तभी पूछ लिया मां ने—क्या करता है, क्या पढ़ता है? कब खत्म होगी तेरी पढ़ाई? मैंने मां से समित के विषय में पूछा। उससे मां को शायद संतोष न था। वह समित की शिकायत करने लगी। मैंने समित की तरफदारी की—"अभी उसकी उम्र ही क्या है?"

"मां, वह तेरी आशा जरूर पूरी करेगा। तेरी खुशी के लिए ही तो वह सब कुछ कर रहा है। सभी पढ़ नहीं सकते। और पढ़ाई के बाद भी हम क्या कर लेंगे? चार सौ-पांच सौ की नौकरी... और वह भी मिलने पर। समित कम से कम अपना धंधा तो कर रहा है।"

हां, करता है, मेहनत भी करता है। खराब आदत भी नहीं है कोई। यह सब तो ठीक है, लेकिन जिंदगी में ऊपर आना चाहिए, बेटे! मैं तो चाहती हूं कि वह सुखी रहे।

"प्रत्येक मां अपने बच्चे का सुख ही चाहती है।"

कुछ विचित्र संवाद चल रहे थे। मां मुझे घूरती रही। मां 'प्रत्येक मां' नहीं थी, मैं गलत समझ गया। समित की मां भिन्न थी, उसकी आशा-अपेक्षा और थी। गंभीर होती जा रही बात को रोकने के लिए मैंने विषय बदला—

"मां, अब समित की शादी हो जानी चाहिए।"

और वही बातें जो हर मां अपने पुत्र के लिये करती है—"समित 'ना' कह रहा है, नहीं समझता। मैं कितने साल रहूंगी अब? उसकी भी अपनी गृहस्थी बसनी चाहिए। हूं, तब तक सब कुछ हो जाए तो मैं शांति से मरूं...।"

"अब तू चिंता छोड़ दे। मैं आ गया हूं। कान पकड़कर उसे बैठा देंगे। देखता हूं, कहां जाता है?" मैंने समित की ओर देखा, वह अभी तक कुछ शांत, विचार-मग्न बैठा था। उसे और मां को साथ-साथ

इतना गंभीर मैंने कभी नहीं देखा था। बीच के वर्षों में जरूर कुछ घट चुका था।

...और शाम को समित ने मुझे टी-हाउस में बताया––

"आकाश! मां का स्वभाव कुछ विचित्र-सा हो गया है।"

"क्यों? मुझे तो कुछ लगा नहीं।"

समित खामोश हो गया, फिर दबे स्वर में बोला, "आई विश... न लगे तुझे...कम से कम जब तक तू है तब तक। और यही तकलीफ है। वह बहुत नॉर्मल लग रही है... मगर मां सोती ही नहीं।"

"लेकिन यह कैसे हो सकता है? बिना नींद तो आदमी पागल हो जाए।"

"वही हो रहा है।" समित शांत हो गया। फिर स्वस्थ होकर बोला, "सबको तो यह कह भी नहीं सकता। दिन को वह नॉर्मल दिखायी पड़ती है लेकिन रात को अगर तू देखे तो तू खुद पागल हो जाए।"

"क्या करती है रात को?"

"कई बार रात-रात भर वह रोती रहती है।"

"क्यों?"

"रोते समय वह बोल नहीं सकती। हांफ जाती है, फिर थक जाती है। सवेरा हो जाता है रोते-रोते ही।"

मैं विचारों में डूब गया, "किसी डॉक्टर को नहीं बताया?"

"बताया है, लेकिन वे कुछ समझ नहीं पा रहे हैं। 'ट्रेंक्वीलाईजर्स' और 'सेडेटिव्ज' देते हैं। पर जब तक निदान नहीं होता है तब तक उन सब चीजों का कुछ अर्थ नहीं है।"

मैं चुप रहा। ये बातें नयी थीं मेरे लिए।

मैंने समित के चेहरे की ओर देखा, वह बिलकुल असहाय नजर आ रहा था। मैंने मुंह फेर लिया।

"आकाश! इस स्थिति में मैं शादी करूं? आनेवाली भी पागल हो जाएगी!"

"यह सब तो मुझे बिलकुल पता नहीं था। तूने मुझे लिखा क्यों नहीं?"

"दो-तीन बार सोचा कि लिखूं, लेकिन लिख ही नहीं पाया।"

"आई अंडरस्टैंड...(मैं समझता हूं)।"
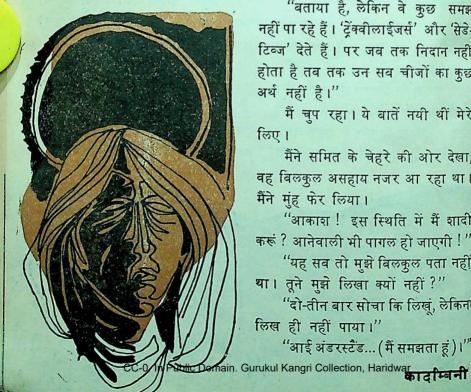
और उसी रात, रात भर, समित के साथ जागकर मैंने मां को घबराये हुए प्राणी की तरह फफक-फफककर रोते हुए देखा . . .

यह घटना गत वर्ष घटी थी।

उसके बाद एक वर्ष गुजर चुका। मां की बिगड़ी हुई तबीयत के समाचार समित देता रहा। पंद्रह दिन पूर्व दिल्ली में मैं समित से मिला था। मैं होटल में ठहरा हुआ था। समित स्टेशन पर आ नहीं पाया था।

इस बार मैं पूरी तरह वाकिफ था। समित के पत्रों ने सब कुछ बता दिया था। मां का रात-रात भर रोना अब नियमित-सा हो चुका था। थकान की वजह से नींद भी नहीं आती थी। डॉक्टर कह रहे थे, 'उम्र हो गयी है। शरीर में क्षीणता आ गयी है।'

मां जब होश में होती थी, तब भी चिड़चिड़ी-सी रहती थी। यों यह उसकी प्रकृति के विरुद्ध था। शरीर के कारण मां थक चुकी थी। टूटे हुए शरीर से वह इस कदर तंग आ चुकी थी कि अब उसे जीने की इच्छा नहीं थी । समित का घर ग्राउंड-फ्लोर पर था। एक पत्र में समित ने लिखा था कि मां बड़बड़ाती है, कूदकर आत्महत्या भी नहीं कर पाती। एक डॉक्टर ने कहा था, कैंसर भी हो सकता है पेट का । मैं समझ रहा था समित की मानसिक व्यथा, मां की दुर्दशा देखकर—और सिवा पैसे खर्च करने के वह कुछ

कर नहीं पाता था । मैंने लिखा था, "पैसे भेजूंगा, निश्चित होकर लिखना, अगर जरूरत हो . . .।" उसने उत्तर दिया था, "आकाश ! पूरी कमाई मां के पीछे खर्च रहा हूं। मेरा अपना तो कुछ खर्च ही नहीं है। और मां ने मेरे लिए जो कुछ किया है, उसके सामने यह तो कुछ भी नहीं है। अभी पैसे की जरूरत नहीं है। जरूरत पड़ने पर मैं निस्संकोच लिखूंगा।"

लेकिन उसने कभी लिखा नहीं। उसके पत्र आते रहे। मैं उद्विग्न होता गया।

मैंने लिखा, "मां को किसी हिल-स्टेशन पर ले जा।"

जवाब में लिखा उसने कि 'मां बाथ-

रूम तक भी नहीं जा सकती, अब सिर्फ हड्डियां ही रह गयी हैं। वहां बैठे-बैठे मां की कमजोरी का अंदाज तू नहीं कर सकेगा।' उसी पत्र में उसने बहुत कुछ लिखा था— मुझे जबरदस्त धक्का लगा। मन हुआ, मां को देखने के लिए एक बार दिल्ली हो आना चाहिए . . .।

दरवाजा समित ने खोला। मुझे देखकर चौंक उठा, "आकाश !" कुछ क्षणों की खामोशी के बाद उसने पूछा, "किस ट्रेन से आया ? सामान कहां है ?"

"मैं होटल में ठहरा हूं। 'होटल स्टार-डस्ट' दरियागंज में।"

"अच्छा किया। मैं पत्र लिखनेवाला था, लेकिन पत्र तुझे मिलता नहीं। मैं लिखनेवाला ही था कि तू होटल में ठहरना।"

भारी मन से भीतरी कमरे में प्रवेश किया। मां, जो हमेशा दरी पर सोती थी, इस समय खाट पर लेटी थी। पास रखा टेबुल दवाई की छोटी-बड़ी शीशियों से लदा हुआ था। एक क्षण . . . समित का सूखा चेहरा, दवाइयां, हवा का तनाव, मां की खुली आंखें, कृश शरीर . . . मैं सब कुछ समझ गया।

"मां !" समित ने कहा, "आकाश आया है।" फिर मुंह पास ले जाकर, ऊंची आवाज में कहा, "बंबई से आकाश आया है, मां !"

मां की आंखें स्थिर थीं। कुछ फिरीं मेरी आंखों के सामने . . .

"मां, मैं आकाश हूं, कैसी है तेरी तबीयत ?"

व्यथा से बोझिल समय हम तीनों के बीच, बर्फ की तरह जम गया। मां की पलकें सिर्फ हिलती रहीं।

समित बोला, 'नहीं पहचाना तुझे। अब उसकी याददाश्त भी काम नहीं करती।"

रसोईघर में एक नौकरानी थी। वह बाहर आयी, चाय का कप और नपना लेकर, मां को चाय पिलाने।

हम दोनों बाहर आ गये।

"कैंसर है, समित ?"

"यह कोई रोग ही नहीं है . . . या फिर बहुत सारे रोग इकट्ठे हो गये हैं !"

"मां ज्यादा दिन नहीं निकाल पायेगी।"

"आकाश ! डॉक्टर कहते हैं कि इसी तरह कई वर्ष निकल सकते हैं। मां ने जवानी में बहुत काम किया है। उसका दिल मजबूत है . . . उसे बिछौने में ही दस्त-पेशाब हो जाते हैं। पेट में भी खास कुछ टिकता नहीं है। कै हो जाती है।' नौकरानी बेचारी अच्छी मिली है।"

"कौन करता है यह सब ? . . ."

"दिन को नौकरानी, रात को मैं।"

फिर से खामोशी। समित का शरीर बहुत सूख गया था। दो वर्षों से मां की व्याधि के बारे में सुनता आ रहा था। गत वर्ष आया था, तब मां को रात भर फफक-फफककर रोते हुए देखकर गया था। इस वर्ष तो बहुत कुछ बिगड़ चुका था।

एकाएक, मैंने देखा, समित रो पड़ा। —"समित, समित!" मैं उससे लिपट गया। सांत्वना के कुछ शब्द मैंने कह डाले। याद नहीं। झूठे शब्द होंगे, शायद . . .।

"मां को जो दुख हो रहा है, तूने नहीं देखा। बुढ़ापे में इतना सारा दुख अगर आ सकता है आकाश, तो ... मैं बूढ़ा नहीं होना चाहता। इसका एक चौथाई दुख भी पड़ जाए तो मैं आत्महत्या कर डालूं। और मेरी स्थिति सोच तू, मैं कुछ नहीं कर पाता। मां की वेदना देखता हूं। दुखी हो जाता हूं। पागल हो जाऊंगा . . .।"

मैंने उसे पानी पिलाया। समित को मैंने कभी भी, इतने वर्षों की मैत्री में कभी भी, रोते हुए नहीं देखा था।

और उसी रात मैं उसे अपने होटल पर ले गया।

नीचे हाल में ही बैठ गये। कॉफी का ऑर्डर दिया, कॉफी आयी, हम लोगों ने पीनी शुरू की।

"आज न जाने कितने महीनों बाद मैं बाहर निकला हूं।" समित ने कहा। उसकी उदासी दूर करने के लिए मैंने इधर-उधर की बातें कीं। फिर मां की बीमारी पर आ गये।

"समित! जब शरीर की वेदना सहन-शक्ति की सीमा के पार चली जाती है तब . . . मनुष्य को उस वेदना का अंत लाने का अधिकार होना चाहिए।"

समित मुझे देखता रहा।

"तू दर्दनाशक दवाओं की बात करता है?"

"समित, सोच तू इस स्थिति में होता . . . आई मीन, तेरा शरीर इतना वृद्ध, इतना कृश हो जाता तो मैं तेरे लिए 'हिरोईन' ले आता। 'हिरोईन' की भयानकता के बारे में तू बहुत कुछ सुन चुका होगा। वह कम से कम वेदना नहीं देता . . . आनंद मिलता है . . . और यातना भुगतकर मरने के बजाय खुशी से, झूठी खुशी में भी मरना मैं बेहतर समझता हूं।"

समित शांत रहा।

मैं बोलता गया, "जहां मृत्यु ही निश्चित है, सुधरने की कोई आशा नहीं है वहां यंत्रणा को जिंदा रखते रहना . . . मैं नहीं समझता यह कोई समझदारी है।"

"तू क्या कहना चाहता है, आकाश?"

"मां को 'हिरोईन' देने के लिए मैं नहीं कहता। मगर . . .मां अब खड़ी नहीं होगी, समझ रहा है तू?"

"हां . . . मां अब खटिया नहीं छोड़ेगी। मैं जानता हूं।"

"एक सवाल करूं, समित?"

"बोल!"

"तुझे . . . तू प्रेम करता है मां को?"

"क्या बक रहा है?"

"प्रेम है? मां के लिए?"

"हां!"

"एक सलाह देता हूं। मानेगा?"

"क्या?"

"मां को इस यातना से मुक्त कर दे . . . मरसी किलिंग, आई मीन ! . . . किल हर पेनलेसली ! दवा का इंजेक्शन देकर मां को रात को सुला दे। मां को इस जिंदा नरक से हमेशा के लिए मुक्ति मिल जाएगी । समित ! मैं तेरी जगह होता समित, तो मां की इतनी असह्य वेदना सहन नहीं कर पाता। मैं उसे शांति देता . . .।"

मैं बोल गया । समित शून्य-सा बैठा था। धीरे-से उसने मेरी ओर देखा।

"कुछ समझ नहीं रहा हूं, आकाश . . . कुछ—"

और उस पूरी रात मैं समित के घर रहा, उसे समझाता रहा। प्रातः की लक्ष से मैं बंबई लौट रहा था . . .

यह हुआ पंद्रह रोज पहले ।

और समित का पत्र आ गया—'आज मां का देहांत हुआ है। रात को नींद में ही उसका देहांत हो गया था। सवेरे उठकर मैंने देखा तब मां मृत्यु की शांतिमय गोद में थी । मेरी अशांति तू समझ पायेगा . . ."

'तेरी अशांति मैं समझ सकता हूं, समित ।'

मैंने सांत्वना-पत्र लिखकर पोस्ट कर दिया, और . . .

और ? . . .

——२५, संगम, दूसरा माला, निकट बंगाल केमिकल, बंबई-२५

टेलीफोन पर शादी

आपका प्रेमी या आपकी प्रेमिका अगर दूर है और आपका मूड है कि आज ही और अभी शादी कर लें, क्योंकि भरोसा नहीं कि अगले क्षण कौन किसका रहता है या नहीं, तो वाशिंगटन का ताजा समाचार बहुत राहत देनेवाला साबित हो सकता है। बेथ डूफी अचानक उतावली हो उठी और उसकी इच्छा हुई कि वह अपने प्रेमी स्टेव स्पीस से उसी क्षण शादी कर ले। मुश्किल यह कि बेथ डूफी अमरीका में थी और प्रेमी मनामा (बहरीन) में। क्रिसमस की शाम को चर्च के पादरी ने डूफी की शादी होने की घोषणा कर दी।

पूरी शादी टेलीफोन के जरिये हुई और डूफी ने केक काटते हुए फोन पर कहा, "चाहती हूं, तुरंत यहां चले आओ।" मजे की बात यह कि टेलीफोन रखते ही डूफी स्वयं बहरीन के लिए उड़ गयी।

विवाह के लिए कोई आयु नहीं

पिकासो और सार्त्र ने यह सिद्ध कर दिया है कि विवाह के लिए कोई आयु नहीं होती। दोनों की पत्नियां (या प्रेमिकाएं) उनकी उम्र से आधे से भी कम उम्र की हैं। हाल ही एक समाचार और मिला है जिसके अनुसार ७१ वर्ष की एक वृद्ध महिला ने २२ वर्ष के नवयुवक से विवाह किया है। यह प्रेमी महिला है ब्राजील की रोजेना बारोसो लीमा। २२ वर्ष के उसके बालक 'प्रेमी' का नाम है कासमो बाइदल द सिल्वा। रोजेना का यह तीसरा विवाह है और सिल्वा का पहला। सिल्वा साहब फरमाते हैं, "उससे अच्छा प्रेम करनेवाली महिला मुझे दूसरी नहीं मिली। मैं चाहूंगा वह मेरे बच्चों की मां बने।"

पाठकों की सूचना के लिए—७१ वर्षीय रोजेना के नौ बच्चे हैं, सबसे छोटा लड़का ३२ वर्ष का है। उसके ४७ नाती-पोते हैं और इन नाती-पोतों के ६ बच्चे हैं। सबसे बड़ा बच्चा ३५ वर्ष का है।

नहाना शराब में

गोरी चमड़ी को सांवला बनाने के लिए पेरिस की एक महिला ने एक जबर-

दस्त प्रयोग किया है। वह बहुत गाढ़ी कॉफी में नहाती है। उसके बाद वह शैंपेन और दूसरी शराबों में तैरती है। उसका कहना है, "त्वचा के लिए शैंपेन बहुत लाभप्रद है।" याद रहे कि तिब्बत की अमीर महिलाएं मक्खन से स्नान करती हैं। मिस्र में नहाने के लिए गधी के दूध का प्रयोग किया जाता है। लंदन के विशेषज्ञों का कहना है—"रोज-रोज नहाना सेहत के लिए अच्छा नहीं है।"

कुंवारों पर दुगुना टैक्स

प्रसिद्ध लेखक ऑस्कर वाइल्ड की इस सलाह को स्वीकारने में किसी सरकार को आपत्ति नहीं होनी चाहिए—

"कुंवारों पर दुगुना कर लगाया जाना चाहिए। यह उचित नहीं कि कुछ लोग दूसरों से ज्यादा सुखी रहें।"

सर्द हवाओं के नजारे

सर्द हवाओं ने कुछ को परेशान और कुछ को खुशमिजाज बना दिया है। तो लीजिए, मिर्जा मुहम्मद रफी 'सौदा' के शब्दों में सर्द हवाओं के कुछ नजारे—

रात की कटती है धूप में औकात
काले कंबल में रात काटे है रात
आगे जाता नहीं है अब बोला
हो गयी है जबान भी ओला

प्रशस्ति-पत्र

भारतीय साहित्य सम्मेलन, प्रयाग द्वारा दिये गये प्रशस्ति-पत्रों की हिंदी का नमूना— आज, १४ सितम्बर १९७५ को

हिन्दी-दिवस पर प्रज्ञा की आभा से स्नात, मन-मानव जीवन की उद्गायिका, स्वानुभूत भावों की मुक्ताएं काव्य-माला में गूंथकर हिंदी काव्य की श्रीवृद्धि करनेवाली सरस्वती-समाराधिका को भारतीय साहित्य, प्रयाग उत्तरप्रदेश की प्रतिनिधि हिन्दी कवयित्री के रूप में सारस्वती-सुषमा सम्पन्न "प्रशस्ति-पत्र" सादर समर्पित करता है।

संपादक की डाक

संपादक के नाम एक और प्रेम-पत्र :

आंखों से अश्क बहते हैं
लब खामोश रहते हैं
आरजूएं दम तोड़ती हैं
अब भी नहीं आओगे तुम ?
जिंदगी नाम है दर्द का
जिसे अब तक सहा है
मगर इस आखिरी वक्त में
ये दिल अब टूटता है
आ भी जा। ●

तलाक अपराध नहीं अधिकार है

● डॉ. वन्दना पाराशर

शहनाइयों की आवाज करीब आती जा रही है, बरात का शोर मन में देखे-अनदेखे सपने जगा रहा है, मन सपनों में खोया रहना चाहता है, तभी हथौड़े की चोट-सी लगती है और मैं जमीन पर आ जाती हूं। शहनाई की आवाज फुसफुसाहट में बदल गयी है, पीठ-पीछे लोग बतियाते—देखो वह जा रही है, तलाक लेना चाहती है, पति से अलग रह रही है। तलाक. . . तलाक. . .तलाक। जैसे पुलिस चोर का पीछा करती हो, यह शब्द पीछा करता ही रहता है। अभी तो अदालतों के कितने ही चक्कर और काटने हैं, और भटकना है। जैसे कोई बदनुमा धब्बा आंचल में लग जाए और फैलता ही जाए।

तलाक के लिए जूझती एक महिला के विचार हैं ये। हिंदुस्तानी समाज में विधवा को जितने तिरस्कार और हिकारत से देखा जाता है, तलाकशुदा स्त्री को भी वही सब सहना पड़ता है, गोया पति के अत्याचार या अन्याय के खिलाफ खड़ा होना अधिकार न होकर अपराध हो।

जैसे-जैसे स्त्रियों में शिक्षा, चेतना और आत्मनिर्भरता या आर्थिक स्वतंत्रता बढ़ रही है, तलाक के आंकड़े भी बढ़ते जा रहे हैं। अकेले दिल्ली में ही १९७४ में तलाक के ४७० और 'जूडीशियल सेपरेशन' (कानूनी अलगाव) के ४४९ मामले अदालत में दाखिल हुए। पिछले साल, यानी १९७५ में ५ नवंबर तक कुल ७३९ केस अदालत तक पहुंचे और अक्तूबर के महीने तक ३५४ मामले निबटाये जा चुके थे। इनमें तलाक और 'जूडीशियल सेपरेशन' दोनों के आंकड़े शामिल हैं। बंबई में औसतन १,००० तलाक के मामले अदालत का मुंह देखते हैं।

तलाक : क्या नयी बुराई है ?

क्यों 'जन्म-जन्म के संबंध' एक ही जन्म के सगे नहीं वन पाते। यह सही है कि आधुनिकीकरण की तीव्र गति और स्त्री-चेतना की वृद्धि तलाक के आंकड़ों के साथ जड़ी है, मगर किस रूप में ? क्या तलाक कोई नयी बुराई है जो हमारे समाज में बाहर से आ गयी है ?

तलाक सदियों से हमारे समाज के साथ जुड़ा रहा है। एक ओर जहां हम विवाह को 'सात जन्मों का बंधन' मानते आये हैं, वहीं पति द्वारा पत्नी को छोड़ देने या पत्नी के किसी दूसरे पुरुष के साथ भाग जाने की घटनाएं अनहोनी नहीं हैं। हालांकि ये बातें निम्नवर्ग और कुछ मध्यवर्ग के संबंध में ही ज्यादातर सुनने को मिलती हैं, लेकिन उच्च वर्ग अपवाद ही रहता हो ऐसी बात भी नहीं है। अदालत के बिना, परस्पर सहमति से या किसी एक पक्ष की मर्जी से, पति-पत्नी के अलग रहने की घटनाएं होती रहती हैं। इसके बाद दोनों ही पक्ष प्रायः विवाह भी कर लेते हैं और एक नयी जिंदगी शुरू कर देते हैं। मई १९७५ में किताब के रूप में छपी 'नेशनल कमेटी ऑन द स्टेटस ऑव वीमेन' की रिपोर्ट के मुताबिक 'इस तरह के मामले निम्नवर्ग में ही ज्यादा होते हैं, हालांकि उन्हें कानूनी मान्यता नहीं मिलती। १९७१ की गणना के अनुसार उस समय तक देश में ८ लाख ७० हजार तलाकशुदा या छोड़ी हुई महिलाएं थीं। इस तरह के मामले मोहल्ले की कानाफूसी या जाति-बिरादरी की छीछालेदर तक ही सीमित रह जाते हैं, लेकिन पति-पत्नी में से किसी का भी अदालत जाना बदनामी मान लिया जाता है।

स्त्रियों की हालत तो और भी खराब है, क्योंकि पुरुष समाज यह मान लेता है कि स्त्री में तथाकथित कौमार्य नहीं रहा, जैसे कि सेक्स या शरीर के मामले में अनुछुए रहना स्त्री की मजबूरी हो और मनमानी करना पुरुष की बपौती।

मूलकारण : समझदारी का अभाव

तलाक के कारणों में से सबसे पहला है पति और पत्नी दोनों में ही एक-दूसरे को

समझने और अनुकूल बनाने की क्षमता का अभाव। मान लीजिए पत्नी पति से ज्यादा पढ़ी-लिखी है और उसमें समझदारी की भी कमी है तो बाद में जाकर नौबत तलाक तक पहुंच सकती है। ऊपर से देखनेवाले कहते हैं कि पत्नी की पढ़ाई ही उसके आड़े आयी जबकि उसका कारण होता है स्वभाव, शिक्षा नहीं। एक दूसरा उदाहरण है ऐसे पति का जिसने शुरू में ही समझ लिया कि पत्नी का व्यक्तित्व उनसे कहीं ज्यादा प्रखर और स्वतंत्र है, अपनी खुशी के लिए उन्होंने रातों-रात खुद को बदलकर एक नये सांचे में ढाल लिया। बरस बीतते चले गये, लेकिन ऊपरी मुखौटे के नीचे पति की असली आत्मा बाहर आने के लिए छटपटाती रही। एक दिन उनकी जिंदगी में दूसरी औरत आ जाती है, जिसके सामने उन्हें अभिनय नहीं करना पड़ता, उसी पल उनके और पत्नी के बीच खाई खुद जाती है।

पत्नी का नौकरी करना या न करना भी तलाक का कारण नहीं, बहाना ही होता है। प्रसिद्ध समाजशास्त्री डॉ. प्रमिला कपूर भी इसी निष्कर्ष पर पहुंची हैं कि जो दंपति सुखी हैं वे पत्नी के नौकरीपेशा होने या न होने के बावजूद सुखी हैं।

ज्यादातर विवाह माता-पिता तय करते हैं, जिनमें एक-दूसरे को जानने-समझने की गुंजाइश बहुत कम होती है। लड़का और लड़की दोनों ही भावी पति या पत्नी की एक सुनहरी तसवीर दिमाग में बना लेते हैं और जब शादी हो जाती है तब दूसरे आदमी को उस चौखट में फिट करने की कोशिश करते हैं। जब ऐसा नहीं होता तो तनाव और घुटन बढ़ती है। प्रेम-विवाह में भी विवाह के पहले दोनों ही पक्ष अपना साफ, धुला हुआ, आदर्श रूप पेश करते हैं।

पति की दोहरी मानसिकता

इनके अलावा तलाक की नौबत आने के कुछ ठोस कारण भी हैं, जैसे पति की दोहरी मानसिकता। एक तरफ वह चाहता है कि पत्नी नौकरी करती हो, पढ़ी-लिखी हो, सुंदर हो—दूसरी तरफ यह भी उम्मीद करता है कि सदियों से चली आ रही भारतीय लज्जाशील नारी के चौखटे में फिट भी होती हो।

जहां पति इस तरह से नहीं सोचते या उदार होते हैं, वहां उसके माता-पिता बीच में आ जाते हैं और तनाव पैदा करते हैं। कभी उन्हें लड़की के दहेज कम लाने की शिकायत होती है, तो कभी उन्हें लगता है कि लड़की उन्हें कुछ समझती ही नहीं। दिल्ली के तीसहजारी कोर्ट के वकील श्री कपूर के अनुसार 'इस तरह के मामलों में जिम्मेदारी लड़की की ज्यादा होती है। वह थोड़ी समझदार हो तो मामला आसानी से सुलझ सकता है। वह कुछ समय तक सास-ससुर की बात मानती रहे तो एक-दो साल बाद वे उसके वश में हो जाएंगे।' श्री कपूर अब तक लगभग १०० तलाक के मुकदमे लड़ चुके हैं, जिनमें से ज्यादातर में उन्होंने सुलह ही करवायी है।

वे '
कर
कानू
विन
अल
आध
के
वर्त
किस
छोड़
पत्नी
हैं।
रह
गिक
है त
मजी
है।
वश
यह
दूस
ले
सुवि
सह
ऐक्
कर
का
पात
वोसं
होने
फर

वे 'लॉ कमीशन' के इस सुझाव का विरोध करते हैं कि परस्पर सहमति से तलाक को कानूनी स्वीकृति मिलनी चाहिए।

विभिन्न धर्मों में विभिन्न आधार

अलग-अलग धर्मों में तलाक के अलग-अलग आधार हैं, जैसे 'हिंदू मैरिज ऐक्ट १९५५' के अनुसार निरंतर व्यभिचार, धर्म-परिवर्तन, कोढ़, पागलपन, पति या पत्नी किसी का ७ वर्ष तक गायब रहना अथवा छोड़ देना तलाक के आधार हो सकते हैं। पत्नी को दो अतिरिक्त अधिकार प्राप्त हैं। अगर पति अन्यत्र किसी स्त्री के साथ रह रहा है अथवा वह बलात्कार, समलैंगिक संभोग या जंगलीपन का दोषी है तो भी पत्नी तलाक ले सकती है।

मुसलिम कानून में पति को अपनी मर्जी से विवाह भंग करने का अधिकार है। पत्नी तलाक की मांग कर सकती है, बशर्ते पति ने विवाह के समझौते में ही यह स्वीकार किया हो कि उसके द्वारा दूसरा विवाह कर लेने पर वह तलाक ले सकती है अथवा वह पति को कुछ सुविधाएं दे अथवा पति-पत्नी दोनों की सहमति हो। १९३९ के मुसलिम मैरिज ऐक्ट में अगर पति उसका निर्वाह नहीं करता है तो भी पत्नी का तलाक का अधिकार स्वीकार किया गया है।

ईसाई कानून भी पति के प्रति पक्षपात करता है। १८६९ के 'इंडियन डाइवोर्स ऐक्ट' में पत्नी के दूसरे पुरुष से संबंध होने पर पति उसे तलाक दे सकता है,

जबकि पत्नी को पति के इस अपराध के अलावा भी एक अपराध साबित करना पड़ता है चाहे वह बलात्कार का हो या व्यभिचार का।

१९३६ के पारसी मैरिज तथा डाइवोर्स ऐक्ट के अनुसार यदि पति पत्नी को वेश्यावृत्ति के लिए मजबूर करे तो पत्नी तलाक की मांग कर सकती है।

इन कानूनों के अलावा 'स्पेशल मैरिज ऐक्ट १९५४' इस मामले में उल्लेखनीय है कि यह अकेला कानून है जो पति-पत्नी में भेदभाव नहीं करता और परस्पर सहमति को तलाक के लिए आधार के रूप में
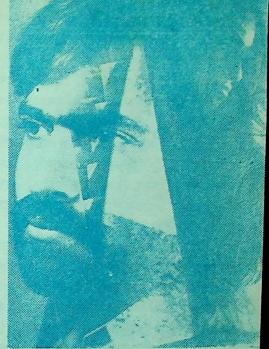
स्वीकृति देता है। यह भी एक दिलचस्प बात है कि हिंदुस्तान में सिविल-मैरिज, अर्थात इस ऐक्ट के अंतर्गत किये गये विवाह लोकप्रिय हो रहे हैं।

'लॉ कमीशन' के सुझाव

तलाक के इन कानूनी आधारों में सुधार करने और तलाक की जटिल प्रक्रिया को सरल बनाने के लिए 'लॉ कमीशन' ने कुछ सुझाव दिये हैं, जैसे कि तलाक के मामले को ६ महीने में निबटा दिया जाना चाहिए और परस्पर सहमति को तलाक का आधार मान लिया जाना चाहिए, ताकि अगर दोनों साथ नहीं रहना चाहें तो वे सद्भाव रखते हुए अलग हो सकें।

लेकिन, इस सिफारिश को अभी तक स्वीकार नहीं किया गया है। कई बार सुनने में आता है कि सरकार इस दिशा में, कदम उठाने के विषय में सोच रही है। अभी तक तो अदालतों, जजों और ज्यादातर वकीलों का रवैया यही है कि जहां तक हो सके पति-पत्नी की आपसी गलतफहमियों को दूर करके उनके बीच समझौता करवा दिया जाए। केवल हिंदुस्तान नहीं, इंगलैंड में भी 'डाइवोर्स रिफार्म ऐक्ट १९६९' की धारा ३ में एक विधान जोड़ा गया है कि वकील इस प्रकार का एक सर्टिफिकेट दे कि उसने दोनों पक्षों से समझौते की संभावना पर बात की है और उन्हें संबंधित विशेषज्ञों के नाम पते भी सुझाये हैं।

तलाक की अर्जी भी अधिकांशतः महिलाओं की ओर से ही दी जाती है जिसका कारण समाज में पुरुष की अपेक्षाकृत ऊंची स्थिति है, क्योंकि पुरुष पत्नी के रहते भी अन्यत्र संबंध बनाये रख सकता है (छिपकर) अथवा पत्नी से असंतुष्ट होने पर अलग जिंदगी जी सकता है, जबकि पत्नी के लिए यह सुविधा नहीं होती।

तलाक! तलाक!!

केवल आध घंटे में यह सब कुछ हो सकता है—एक व्यक्ति अपना धर्म-परिवर्तन कर सकता है, अपनी पत्नी को तलाक दे सकता है, चाहे उसके कितने ही बच्चे क्यों न हों, फिर लगे हाथ दूसरी शादी भी कर सकता है। इसके लिए उसे किसी प्रयास की भी आवश्यकता नहीं होगी। बस उसे काजी के सामने पहले इसलाम-धर्म स्वीकार करना पड़ेगा, फिर तीन बार 'तलाक, तलाक, तलाक' कहना पड़ेगा। ऐसा कहनेवाले पुरुष या स्त्री को तलाक मिलने के बाद वह अपने मनचाहे व्यक्ति से दूसरा विवाह भी कर सकता है। अनेक गैर-मुसलमानों ने तलाक की इस कथित 'सुविधा' का उपभोग करने के लिए अपना धर्म-परिवर्तन किया है। बंबई की जुम्मा मसजिद

आर्थिक रूप से स्वतंत्र पत्नी

पत्नी का नौकरी करना या न करना तलाक का कारण भले ही न हो, आर्थिक रूप से स्वतंत्र पत्नी की जिंदगी ऐसे मामलों में अपेक्षाकृत सरल हो जाती है। वह कानूनी लड़ाई लड़ सकती है, अपना निर्वाह खुद कर सकती है, अपनी शारीरिक, मानसिक जरूरतें पूरी कर सकती है, लेकिन अगर वह पूरी तरह पति पर निर्भर है तो एक सीमा तक असहनीय स्थिति को भी अपनी नियति मानकर सहन करती है।

तलाक के विषय में 'नेशनल कमेटी ऑन द स्टेटस ऑव वीमेंस' ने दो सुझाव दिये हैं—पत्नी और पति दोनों को समान आधारों पर तलाक लेने का अधिकार हो और दूसरा यह कि धर्म-परिवर्तन को तलाक का आधार न माना जाए। इसके अलावा तलाक के बाद निर्वाह के मामले में भी इस कमेटी का कहना है कि अगर पत्नी आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर है और पति बेकार है, तो ऐसी स्थिति में पत्नी पति का निर्वाह करे।

'नयी जिंदगी जीने में मदद दें'

विवाह के बाद तलाक लेने में कम-से-कम ५ साल का समय लगता है। इसके बाद भी वर्षों मामला खिंच जाता है। इसमें भी मुकदमे का जो फैसला होता है, वह जरूरी नहीं है कि तलाक के पक्ष में ही हो। ज्यादातर अदालतें अपील में दिये कारणों को नाकाफी मानकर अपील खारिज कर देती हैं। इसलिए आवश्यकता है कि उसे जल्दी से जल्दी नयी जिंदगी जीने में मदद की जाए, तलाक को सरल बनाया जाए और तलाक के बाद स्त्री या पुरुष को रोगमुक्त की तरह देखा जाए, न कि अपराधी की तरह।

—४ ई/७३ अमर कालोनी, लाजपतनगर, नयी दिल्ली—११००२४

तलाक !!!

में—एक सत्ताइस वर्षीय यहूदी ने, जिसकी चार संतानें थीं—सबसे बड़ी लड़की एम. ए. पास तथा सबसे छोटा बच्चा प्राइमरी स्कूल में—एकाएक मसजिद में जाकर धर्म-परिवर्तन कराया और तलाक ले लिया। एक गुजराती युवक ने, जो १२ वर्ष तक गार्हस्थ्य जीवन बिता चुका था और जिसके तीन बच्चे थे, इसलाम-धर्म ग्रहण करने के बाद तुरंत पत्नी को तलाक देकर दूसरी लड़की से शादी कर ली। क्या धर्म-परिवर्तन के बाद तलाक इतना आसान है? अनेक विचारशील मुसलमान भी इससे चिंतित हैं। कुछ का यह भी कहना है कि इसलाम-धर्म में तलाक इतना आसान नहीं है और इस व्यवस्था का दुरुपयोग किया गया है।

एक महाशय का टेलीफोन बार - बार गड़बड़ हो जाता था। कई बार शिकायत कर चुके थे। आखिरकार झुंझला गये और भड़ककर आपरेटर से बोले, "या तो मेरा ही दिमाग खराब हो गया है, या तुम मुझसे किसी जन्म की दुश्मनी का बदला ले रही हो।"

"मुझे बड़ा अफसोस है जनाब कि हमारे पास इसकी कोई इत्तला नहीं है," आपरेटर बड़े मधुर स्वर में बोली।

★

एक नवयुवक बहुत ही चिंतित था कि वह अपनी प्रेमिका की सोलहवीं सालगिरह पर उसे क्या उपहार दे। अंत में जब उसकी समझ में कुछ नहीं आया तब उसने अपनी मां से पूछा, "मां, अगर आप सोलह वर्ष की हो जाएं तो आप किस चीज की इच्छा करेंगी?"

मां ने ठंडी सांस भरकर कहा, "बेटा, फिर मुझे और किसी भी चीज की इच्छा नहीं रहेगी!"

★

एक व्यक्ति ने एक धनी विधवा से विवाह कर लिया। उसके एक मित्र ने उसके कान में कहा, "मैं तुम्हें समझ नहीं सका। माना कि वह धनी है, पर एक वृद्ध, कुरूप स्त्री से विवाह करना कोई बुद्धिमानी नहीं। उसके मुंह में तो दांत भी नहीं..."

"निस्संकोच खुलकर बात करो," पति ने कहा, "वह ऊंचा सुनती है।"

—नंदकिशोर झाझरिया

★

गांव से आये आदमी ने पूछा, "यह बस कहां जाएगी?" कंडक्टर तमतमाया हुआ था। बोला, "कहीं भी जाए, तुम अपना मतलब कहो!" आदमी फिर कहने लगा, "बता दे भाई।" कंडक्टर ने चिढ़कर कहा, "तुम्हें करना क्या है?"

आदमी बोला, "जाना है।"

★

तीन गप्पियों में सर्दी का जिक्र चल पड़ा। पहला बोला, "मेरे सामने एक बार इतनी सर्दी पड़ी कि जब मैं गाय दुहने बैठा तब दूध के बजाय आइसक्रीम निकली।"

दूसरा बोला, "यह तो कुछ भी नहीं! मैंने एक दफा ऐसी सर्दी देखी कि आवाज जम जाने के कारण कुछ भी सुनायी नहीं पड़ता था। तब बीच में आग जलाने से आवाज पिघलने पर ही कुछ सुनायी देता था।"

अब तीसरे की बारी थी। वह बोला, "भई ! मेरे सामने एक बार इतनी सर्दी पड़ी कि जब मैंने टाइपराइटर पर 'पानी' टाइप किया तो 'बर्फ' टाइप हो गया।"

★

एक आदमी बड़े मैदान में से पत्थर उठा-उठाकर दूर ले जाकर फेंक आता। एक राहगीर ने उस आदमी के पास जाकर पूछा, "क्यों भाई ! तुम यह क्या कर रहे हो ?"

वह बोला, "दरअसल कल यहां एक कवि - सम्मेलन होनेवाला है। मुझे उसमें अपनी कविता सुनाना है।" ——यज्ञेश्वर

हंसिकाएं काव्य में

मांग

महिला वर्ष की मांगें सुनकर
उन्हें कहना पड़ा——
अधिकारों की यह मांग कैसी ?
मांग का अपना ही
अधिकार (है) बड़ा

भ्रांत

न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण से
वे उद्भ्रांत थे
सोचने लगे——
तो प्रेमिका का आकर्षण
मेरा खिचे चले जाना (भी)
प्रेम नहीं था, केवल सिद्धांत थे

धूल

तुम्हारे कथन से
जड़ हो जानेवाली शिला हूं
यह तो सही है
लेकिन गैर की चरण-रज से
अहल्या बन जाऊं यह संभव नहीं है

अभिधा

नशाबंदी के बारे में सुनकर
उन्होंने अंततः
प्रेमिका को समझाया——
तुम जो 'पिया ! पिया !'
कहकर चिढ़ाती थीं मुझे
सरकार ने उस पर
प्रतिबंध लगा दिया

पिया

हंसकर बोली वह
'पिया' शब्द के पीछे भी
कोई गूढ़ार्थ रहा होगा
वस्तुतः
पहला प्रेमी तुम्हारी तरह
कोई बड़ा पियक्कड़ रहा होगा

——डॉ. सरोजनी प्रीतम
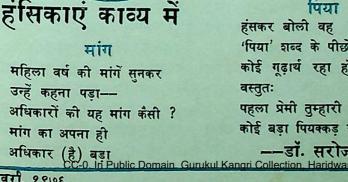
मृत्यु के उस पार से भी लौट आऊंगी!

• कीर्तिस्वरूप राव

"कहते हैं कि जब कोई मरता है तब वह इसकी जानकारी उसे दे सकता है जिसे वह प्यार करता हो। यदि आप प्रसन्न मरें तो क्या मुझे सूचित करेंगी?" प्रश्न किया एक पौत्र (श्री फ्रास्ट) ने अपनी दादी से एक दिन, जब वह पूर्ण स्वस्थ थीं। दादी ने 'हां' कह दिया।

दो वर्ष और चार माह बाद अप्रैल की एक शाम, करीब पांच बजे मिस्टर फ्रास्ट अपनी पत्नी के साथ चाय पी रहे थे। उनकी पीठ के पीछे एक खिड़की थी। अचानक उन्हें वहां किसी के थपथपाने की आवाज सुनायी दी। "कौन है?" उन्होंने पूछा और पीछे मुड़कर देखा। उनकी दादी खड़ी थीं। मिस्टर फ्रास्ट का यह निवास-स्थान दादी के निवास-स्थान से दो-तीन सौ मील दूर था। फ्रास्ट तुरंत दरवाजे पर पहुंचे, लेकिन दादी वहां नहीं थीं। सब ओर ढूंढ़कर जब वे अपने कमरे में लौट आये तब अचानक उन्हें खयाल आया कि कहीं उनकी दादी का देहावसान तो नहीं हो गया! वास्तव में ऐसा

हुआ था।

ऐसे अनेक दृष्टांत हमारे पास संकलित हैं जिनमें व्यक्तियों ने मृत्यु से पूर्व वायदा किया कि वे एक बार अवश्य मृत्यु के उस पार से लौटकर आयेंगे और फिर वे लौटे भी।

उपर्युक्त घटना से ही मिलता-जुलता श्री हिमोथी कूपर का अनुभव है। हिमोथी कूपर एक समृद्ध परिवार के सदस्य थे। जिस समय उनकी मां गंभीर रूप से बीमार पड़ीं, श्री कूपर लंदन में नौकरी कर रहे थे। सूचना पाते ही वे छुट्टी लेकर मां को देखने आये। देखकर जब वे लौटने लगे, उन्होंने मां से पूछा, "मां, यदि संभव हो सके तो क्या तुम चोला छोड़ने के बाद मेरे पास आओगी और इस संबंध में बताओगी?"

मां ने कहा, "हां, यदि ऐसा करना संभव हो सका तो!"

कुछ समय बाद एक दिन श्री कूपर काफी रात गये एकदम जाग पड़े, उन्हें महसूस हुआ कि जैसे किसी मुलायम हाथ ने उन्हें छुआ है। उन्हें अपनी मां की परिचित आवाज सुनायी दी, "मैं शांत हो गयी।" . . . और उन्हें लगा कि उनके निकट से कोई चला गया है। श्री कूपर ने अपने निकट सो रहे मित्र को जगाया और कहा कि उनकी माता का देहांत हो गया है और वे अभी-अभी उनके पास आयी थीं। यह कहते-कहते उन्होंने सुना, घड़ी ने तीन टंकारे लगाये। बाद में खबर आयी कि उनकी मां का देहांत तीन बजने में पांच मिनट पूर्व हुआ था।

कुछ मित्रों में भी इसी तरह के वायदे हुए हैं। सुविख्यात वकील और राजनीतिज्ञ लार्ड ब्राउघम ने आत्मकथा में मित्र के साथ हुए एक वायदे और बाद में उसकी पूर्ति का विवरण भी प्रस्तुत किया है।

उन्होंने लिखा है—"युवावस्था में एक बार अपने एक मित्र से 'आत्मा की अमरता और अतिजीवन' विषय पर मेरी बहस हो गयी। आखिर यह तय किया गया कि इस प्रश्न का कोई निश्चित उत्तर खोजना चाहिए। इसके लिए हमने आपस में यह वायदा किया कि हम दोनों में से जिसकी भी पहले मृत्यु हो वह दूसरे को अपने अस्तित्व का प्रमाण देने के लिए दिखायी दे।

"स्कूली जीवन की अनेक घटनाओं की भांति, यह बात भी विस्मृत-सी हो गयी थी। हम दोनों की अनेक वर्षों तक

मुलाकात भी नहीं हुई। एक दिन मैं स्नान करने जा रहा था, मैंने एक कुरसी पर अपने वस्त्र रखे। स्नान के बाद जब मैं उन्हें उठाने के लिए बढ़ा तब वहां अपने उसी पुराने मित्र को बठे देखकर भौचक्का रह गया।" लार्ड ब्राउघम पर इस अनुभव का इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि वे कुछ समय के लिए अचेत हो गये। कुछ ही देर बाद, उन्हें एक पत्र मिला जिसमें उस मित्र के देहांत की सूचना थी।

इसी तरह का वायदा १८५० में दो अन्य व्यक्तियों के बीच भी हुआ। श्री बर्कले और उनके मित्र मेकेंजी के बीच अमरत्व और अतिजीवन के विभिन्न सिद्धांतों के बारे में चर्चा चल रही थी। श्री बर्कले किसी तरह भी यह मानने को तैयार नहीं थे कि मृत्यु के बाद व्यक्ति पूरी तरह नष्ट हो जाता है। दोनों मित्रों ने आपस में तय किया कि दोनों में से जो पहले मरे वह दूसरे को इस तरह दिखलायी दे कि उसके अस्तित्व के बारे में कोई शंका न की जा सके।

तीस वर्ष की आयु में ही बर्कले की अकाल मृत्यु ३० जनवरी, १८५६ को हो गयी। उस रात मेकेंजी कुछ देर पहले ही सोने के लिए लेटे थे। अचानक उन्हें अपनी एक पलक पर कोई ठंडा और गीला-सा स्पर्श अनुभव हुआ। आंखें खोलने पर उन्होंने अपने मित्र बर्कले को अपने विस्तर के निकट खड़ा पाया। भय और जिज्ञासा की लहरों में डूबते-उतराते वे एकटक अपने मित्र की मृतात्मा को देखते रहे और उन्हें वह पुराना वायदा याद हो आया। बर्कले की कुछ समय पूर्व ही मृत्यु हुई थी।

ऐसा ही एक विवरण डॉक्टर कैल्टोगिरोन के संदर्भ में है—

"सुनो, डॉक्टर! यदि मैं तुमसे पहले मरा और इसकी संभावना अधिक है क्योंकि तुम अभी जवान हो और मैं

बूढ़ा हो चला हूं, तो मैं तुम्हें वचन देता हूं कि मरने के बाद यदि मेरा अस्तित्व रहा तो उसका प्रमाण देने के लिए मैं तुम्हारे पास फिर आऊंगा।" एक दिन परामनोवैज्ञानिक घटनाओं पर बातचीत करते हुए ये शब्द डॉक्टर कैल्टोगिरोन के एक मित्र बेंजामिन सिर्चिया ने मजाक में हंसते हुए कहे थे। इस पर डॉक्टर कैल्टोगिरोन ने भी विनोद में मुसकराते हुए उत्तर दिया, "अच्छा जब आप आयें तब उसका आभास हमें इस कमरे में किसी वस्तु को तोड़कर करा दें।"

दोनों मित्रों में यह वार्त्तालाप मई के महीने में हुआ था। उसी वर्ष दिसंबर की पहली या दूसरी तारीख को शाम के करीब ५ बजे जब डॉक्टर कैल्टोगिरोन उसी कमरे में अपनी बहन के साथ बैठे थे, तब अचानक ही उनका ध्यान छत से लटकते हुए गैस-लैंप की ओर गया। उन्हें लगा कि जैसे कोई धीरे-धीरे गैस-लैंप के शेड और उसके ऊपर की घिर्री पर हलका प्रहार कर रहा है। धीरे-धीरे ये ध्वनियां और तेज हो गयीं।

पांचवें या छठे दिन शाम को जब डॉक्टर कैल्टोगिरोन अपने अध्ययन-कक्ष में बैठे थे और उनकी बहन किसी काम से बालकनी में खड़ी थी, दोनों ने भोजन के कमरे से आनेवाली एक बहुत जोर के धमाके की आवाज सुनी। दोनों ही तुरंत वहां पहुंचे। वहां उन्हें ग़ैस-लैंप की घिर्री का आधा टूटा हुआ टुकड़ा बीच मेज पर पड़ा मिला।

दो दिन बाद डॉक्टर कैल्टोगिरोन को अकस्मात ही उनके एक साथी ने बतलाया कि बेंजामिन सिर्चिया का देहावसान हो गया था।

हमारे पास ऐसे भी अनेक वृत्तांत हैं जिनमें दो प्रेमियों ने आपस में इस तरह के वायदे किये। ऐसे ही दो विवरण प्रस्तुत हैं।

इला और उर्वशी नामक दो राजकुमारियां थीं। एक बार जब वे गरमियों में कश्मीर गयी हुई थीं तब वहां उनकी मुलाकात प्रेम नामक एक नवयुवक से हुई। यद्यपि यह मुलाकात छोटी-सी थी, लेकिन प्रेम और इला ने आपस में एक अजीब-सा आकर्षण महसूस किया, यहां तक कि जब वे बिछुड़ने लगे तब उन्होंने परस्पर यह वायदा किया कि उनमें से जिसकी भी पहले मृत्यु हो वह दूसरे को किसी भी साधन से (डरावने रूप में नहीं) पुनः दिखायी देने का प्रयत्न करेगा। दोनों युवतियां अपने शहर लौट आयीं। प्रेम कश्मीर में ही रहा। बाद में उनमें कोई पत्र-व्यवहार नहीं हुआ और वे शायद प्रेम को भूल गयीं। करीब एक वर्ष पश्चात दोनों बहनें किसी नाट्य-गृह से बाहर आयी थीं। उस समय जो कुछ घटित हुआ उसका वर्णन उर्वशी के शब्दों में इस प्रकार है—

"मेरी बहन कार में पहले बैठी। मैं अपेक्षाकृत धीमी गति से सीढ़ियां उतरी थी, इसलिए बाद में बैठनेवाली थी। नौकर गाड़ी का दरवाजा खोले खड़ा था। मैंने कार में एक पांव ही रखा था कि एकाएक उसी स्थिति में खड़ी रह गयी। मैं कुछ भी नहीं समझ पा रही थी कि आखिर मुझ हो क्या रहा है! गाड़ी के अंदर अंधेरा था, फिर भी अपनी बहन के सामनेवाली सीट पर मैंने भूरे रंग का

हलका प्रकाश देखा जो धीरे-धीरे उस स्थल पर तेज होता गया जहां मुझे धुंधला-सा एक चेहरा नजर आने लगा। वह चेहरा मेरी बहन की ओर एकटक देख रहा था। यह दृश्य केवल एक पल रहा होगा, यद्यपि इतने समय में ही मेरे नेत्रों ने दृश्य के छोटे-से-छोटे विवरण को भी अंकित कर लिया था। मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि वह परिचित-सी आकृति थी— सिर के बाल एक ओर अधिक तराशे हुए, लंबी नाक, पतली ठुड्डी और मामूली-सी दाढ़ी। अब मैं सोचती हूं तो मुझे आश्चर्यजनक बात यह लगती है कि उस धुंधले-से भूरे प्रकाश में भी मैं यह सब कुछ स्पष्ट देख सकी थी जबकि साधारणतः ऐसा होना संभव नहीं है।"

स्वाभाविक है कि उर्वशी यह सब देखकर बड़ी विचलित हुई, उसने तुरंत सारी बात बहन को सुनायी और आश्चर्य तो इस बात का है कि इला को ऐसा कुछ भी नहीं दिखायी दिया। वे यह नहीं सोच पायीं कि यह चेहरा किस व्यक्ति का है। कुछ दिन बाद उन्होंने सुना कि श्रीनगर में प्रेम की मृत्यु हो चुकी है। तुरंत ही उन्हें याद आ गया कि कार में दिखनेवाला वह व्यक्ति कौन था। प्रेम ने पुनः प्रस्तुत होने का वायदा इला से किया था, वह उसकी ओर एकटक निहारता भी रहा, लेकिन वह उसकी बहन को ही दिखायी दिया, स्वयं इला को नहीं।

यह घटना १२ मार्च को हुई थी और प्रेम की मृत्यु १४ मार्च को हुई थी। मृत्यु से कई दिन पूर्व प्रेम काफी कमजोर हो गया था और उस १२ मार्च वाली शाम को वह या तो बहोश था या बहुत गहरी निद्रा में पड़ा था। इस दृष्टांत से ऐसा प्रतीत होता है कि प्रेम अपने वायदे को निभाने के प्रयास में वास्तविक मृत्यु से भी दो दिन पूर्व देहातीत अस्तित्व को इला के सामने प्रस्तुत करने में सफल हुआ।

कुमारी रीता का भी ऐसा ही अनुभव है। इस अनुभव के समय कुमारी रीता इंगलैंड में थीं और उनके मित्र कैप्टन विलियम न्यूजीलैंड में। कुमारी रीता ने लिखा है—"मैंने और मेरे मित्र ने परस्पर ऐसा समझौता किया था कि हममें से जिसकी भी पहले मृत्यु होगी वह दूसरे से मिलने के लिए आने का प्रयत्न करेगा। एक रात मैं अचानक जाग पड़ी, मुझे ऐसा लगा कि जैसे कमरे में मेरे अलावा और भी कोई है। मेरे बिस्तर से कुछ दूर मेज पर हमेशा एक तेज रोशनी जलती रहती थी। मैंने अपने इधर-उधर देखा तो मुझे मेज के पीछे कुछ दिखायी दिया। मुझे लगा कि मैं एकदम ठंडी पड़ गयी हूं, यद्यपि मैं डरी बिलकुल भी नहीं थी। मैंने उस ओर गौर से देखा, धीरे-धीरे एक आदमी का सिर और कंधे का आकार बना। पहले मैंने देखा और सोचा कि यह कौन है, कोई यहां है तो अवश्य, लेकिन कौन? तभी माथे की बनावट के कारण (जो मेरे मित्र से बहुत मिलती

थी) मैं एकदम बोल पड़ी—'कैप्टन विलियम !' और वह आकृति विलुप्त हो गयी।"

कुमारी रीता को इस बात का **बिलकुल** पता नहीं था कि कैप्टन विलियम **की** मृत्यु हो गयी थी। उसने उसके बारे **में वैसे** ही पूछताछ की तो मालूम हुआ **कि वे** एक गाड़ी से गिर गये थे और कुछ **समय** तक बिलकुल अचेत पड़े थे। कुमारी **रीता** लिखती हैं—"मुझे इस बात में बिलकुल **संदेह** नहीं है कि अचेत अवस्था में कैप्टन **विलियम** की आत्मा मेरे पास आयी थी।"

"और यह मेरी लंबी सेवाओं के लिए लंबा पदक . . ."

दो सहेलियों के बीच हुए इसी तरह के एक वायदे का विवरण भी प्रस्तुत है। मर जाने के बाद सूचना देने के लिए लौटने का यह वृत्तांत श्रीमती शील ओबेराय एवं उनकी सहेली से संबंधित है। श्रीमती ओबेराय जब स्कूल में पढ़ती थीं, तब एक दिन उन्होंने अपनी एक सहेली के साथ तय किया कि उन दोनों में से जिसकी मृत्यु पहले हो जाए वह दूसरी को दिखायी दे। यह सहमति हो गयी।

बाद में जब एक दिन अपनी सहेली की मृत्यु का समाचार श्रीमती ओबेराय को मिला तब उन्होंने अपनी सहेली के वायदे की बात श्री ओबेराय को बतलायी।

दो-तीन दिन बाद, एक रात को श्री ओबेराय सहसा नींद से जाग पड़े। कमरे को गरम करने के लिए जल रही आग और मोमबत्ती के बीच उन्होंने देखा कि एक अपरिचित महिला बिस्तर के पास बैठी हुई है। कुछ देर तक वे लगातार उसे देखते रहे, फिर वह लुप्त हो गयी। उनकी पत्नी गहरी नींद में ही सोती रही। बाद में जब श्री ओबेराय ने पत्नी को अपना अनुभव सुनाया और उस महिला का हुलिया बतलाया तब पत्नी ने तुरंत कहा कि वह उनकी वही सहेली थी, जिसने कई साल पहले कहा था—'यह वायदा है मेरा—मृत्यु के उस पार से भी लौट आऊंगी।'

—निदेशक, परामनोविज्ञान शोध-विभाग
राम भवन, पाली बाजार, ब्यावर-

आत्महत्या की मीमांसा
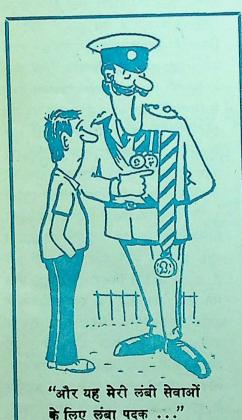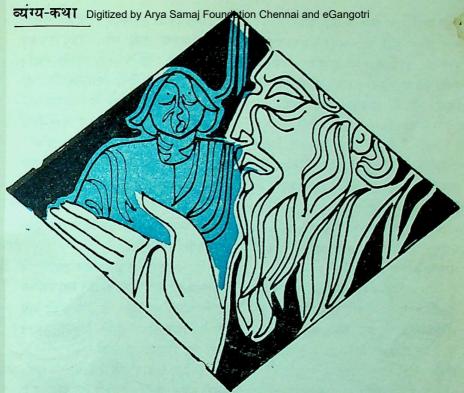
• विनोद भट्ट

और क्रोधिसत्व जब बैठा-बैठा अपनी दाढ़ी के सफेद बाल तोड़ रहा था, तब मंदबुद्धि नाम के एक शिष्य द्वारा आत्म-हत्या शब्द की व्याख्या पूछने पर, क्रोधिसत्व ने यह कहानी कही—

"भंते ! (यानी कि हे बुद्धि के लट्ठ) किसी एक नगर में एक तालाब था। नगर के इस तालाब का वहां के निवासी विविध अवसरों पर विविध उपयोग करते थे। नगर के भेलपूरीवाले, स्वादिष्ट भेलपूरी बनाने में इसी तालाब का पानी उपयोग में लाते थे।

तमाल छोटे-छोटे बच्चे कागज की नाव बनाकर इसी तालाब में तैराते थे।

प्रेमी युगल इस तालाब की साक्षी में झूठे वादे करते और उन वादों का पालन न होने पर इसी तालाब में कूदकर आत्महत्या भी कर लेते थे। कंजूस नगर-निवासियों को आत्महत्या करने का एक उत्तम स्थल मिल गया था!

और यही नहीं, अपनी मोटी बेडौल पत्नी को 'स्लिमिंग' कराने नगरपति, यानी कि नगर के पति, इस तालाब के किनारे सुबह दौड़ाते और शाम को वही नगरपति एक हाथ में कुत्ते की चेन और दूसरे हाथ में प्रेमिका का हाथ थामे इसी तालाब की पाल पर बैठते।

एक दिन ऐसे रम्य और विविध हेतुवाले इस तालाब के निकट से परदु:खभंजन नामक एक युवक गुजर रहा था। उसने वहां तालाब के निकट कुछ लोगों का झुंड देखा।

भीड़ में खड़े कुछ लोग 'बचाओ, बचाओ' की आवाज लगा रहे थे। परदु:खभंजन उस भीड़ में पहुंच गया। उसने देखा कि एक युवा लड़की तालाब में डूब रही थी।

बिना एक क्षण का भी विलंब किये युवा परदु:खभंजन ने पहने हुए कपड़ों सहित पानी में छलांग लगा दी और डूब रही लड़की के पास पहुंच गया।

कुछ देर में ही युवती को अपने कंधे पर डाले तैरता-तरता वह तालाब के किनारे आ पहुंचा। युवती बेहोश थी। कुछ घरेलू प्रयोग कर उसे होश में लाने का प्रयत्न किया। होश में आने पर युवती एकदम घबरा गयी थी। परदु:खभंजन उस युवती को उसके घर छोड़ने गया। लड़की के माता-पिता भाव-विभोर हो गये। आभारवश उन्होंने उस युवक परदु:खभंजन की तरफ देखा। परदु:खभंजन ने उनसे विदा ली और चला गया।

दो दिन बाद अचानक ही वह उस युवती का समाचार लेने उसके घर गया। युवती की तरफ आज उसने पहली बार गौर से देखा। युवती उसकी तरफ देखकर मुसकरायी।

बस, फिर तो परदु:खभंजन उस युवती से मिलने हर रोज आने लगा। स्वाभाविक था कि दोनों एक दूसरे से प्रेम करने लग गये थे। फिर तो जो होना था वही हुआ। दोनों का विवाह हो गया।

विवाह के बाद पति ने पत्नी की तरफ दूसरी दृष्टि डाली। लेकिन तब तक बहुत देर हो चुकी थी। बहुत विलंब से उसे पता चला कि उसने एक कर्कशा से विवाह कर लिया था। फिर तो रोज के झगड़े चले। वह 'त्राहि माम्' पुकार उठा।

और एक दिन उस परदु:खभंजन ने उसी तालाब में कूदकर आत्महत्या कर ली। उसे किसी ने नहीं बचाया..."

और कथा के अंत में क्रोधिसत्व ने यह कहा, "उपरोक्त कथा में वह कर्कशा कौन थी, यह तुम्हें नहीं बताऊंगा, किंतु वह परदु:खभंजन तो मैं ही था। समझे?"

—अनु. गोपालदास नागर

● नेमिशरण मित्तल

लिनेट एलिस फ्राम उर्फ स्क्वीकी नामक युवती १२ सितंबर, १९७५ को सवेरे ठीक ९ बजकर ५० मिनट पर अमरीकी राष्ट्रपति जेराल्ड फोर्ड की ओर एक स्वचालित पिस्तौल तानकर संसार भर में चर्चित हो गयी। उसकी सहेलियां उसे लिन कहकर पुकारती हैं। किसी अमरीकी राष्ट्रपति की हत्या की चेष्टा करनेवाली प्रथम महिला लिन ही है। उसके द्वारा राष्ट्रपति फोर्ड की हत्या का प्रयास एक सीधा-सादा अपराध यानी महज एक
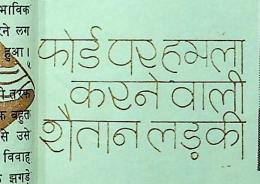
हत्या का प्रयास नहीं है, वह एक संस्कृति के आंतरिक तनावों और उन तनावों से उत्पन्न एक उपसंस्कृति की अभिव्यक्ति है। इसलिए यह आवश्यक है कि लिन और उसके साथी चार्ल्स मेनसन की संपूर्ण मनःस्थिति को समझा जाए और इसी संदर्भ में उस नाटक की भीषणता को पहचाना जाए जिसके दो प्रमुख पात्र हैं—

लिनेट एलिस फ्राम उर्फ स्क्वीकी

व्यवस्था का प्रतिनिधि एक राष्ट्रपति और उस व्यवस्था से जन्मी अव्यवस्था तथा भगोड़ी संस्कृति की प्रतिनिधि और प्रतीक एक लड़की।

कई विषयों पर गंभीर मतभेद होने के कारण लिन के पिता ने उसे हमेशा के लिए घर से निकाल दिया था। ऐसी परिस्थिति में लिन को एक संरक्षक की आवश्यकता थी, लेकिन इस विकट स्थिति के कारण

वह एक शैतान के हाथों में पड़ने के लिए विवश हो गयी, जिसका नाम है चार्ल्स मेनसन ! ....और जब उसने यह पहचाना कि वह पुरुष शैतान है तब बहुत देरी हो चुकी थी और तब तक वह लड़की स्वयं भी एक शैतान का रूप ले चुकी थी। मेनसन माली है। उसने लिन के भीतर शैतानियत के बीज बोये, जो अब एक वृक्ष के रूप में विकसित हो गये हैं। उसने लिन-जैसी लगभग सौ लड़कियां इकट्ठी कर ली हैं। लिन ने अपनी डायरी में लिखा है—"चार्ली (चार्ल्स मेनसन) ने हमें धोखा दिया। उसने हम सब लड़कियों को धोखा दिया और उसके बाद कुछ लड़कों को भी पटा लिया। लोग कहते हैं कि वह एक बदमाश आदमी है, एक शैतान ! सचमुच वह ऐसा ही है।"

शैतान को मसीहा बना डाला

मेनसन के धोखे में फंसी हुई लड़कियां समाज से पूरी तरह कट गयी हैं, इसलिए उन्होंने इस शैतान को ही मसीहा बना डाला है और कुलटाओं–जैसा जीवन जीते हुए भी स्वयं को उस मसीहा की साध्वियां कहना शुरू कर दिया है। मेनसन अब चालीस बरस का हो गया है। पिछले वर्षों में उसने अमरीका के भग्न परिवारों की सौ से अधिक बेसहारा युवतियों को और इन युवतियों तथा एल. एस. डी., चरस-गांजा, मुक्ताचार, चोरी-डाका और हत्या की संस्कृति से आकर्षित होकर आनेवाले युवकों को लेकर मेनसन-परिवार बना लिया है।

इस परिवार के सदस्य मेनसन को ईश्वर और पिता मानकर उसके प्रति निष्ठा की शपथ लेते हैं। मेनसन आजकल प्रख्यात अभिनेत्री शेरों टेट और प्रसिद्ध व्यापारी लेनो ला-वियांका की हत्याओं के अपराध में आजीवन कारावास भोग रहा

अंगरक्षकों ने लिन को दबोच लिया

है। लिन कहती है कि चार्ली ने हमें बताया है कि वह कुछ समय के लिए भूमिगत हो जाएगा और फिर ईसा की तरह पुनः प्रकट होगा। उसकी यह कैद ही उसका भूमिगत जीवन है, वह किसी भी क्षण पुनः प्रकट हो सकता है।

आदर्शों की आड़

लंबे समय तक गांजा-चरस, जुआ, चोरी, यौन-भ्रष्टाचार, हत्या और बर्बरता का जीवन जीने के बाद मेनसन का यह परिवार अपने अपराधों को सही सिद्ध करने के लिए नये आदर्शों की खोज कर रहा है, जिन्हें उसके सदस्यों ने मसीहाई मुखौटों के रूप में ऊपर से ओढ़ रखा है।
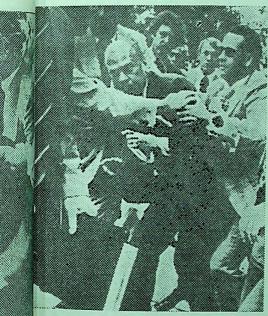
नेताओं पर लगातार हमले क्यों ?

राष्ट्रपति की हत्या के विफल प्रयास में जब पुलिस ने लिन के घर की तलाशी ली तब वहां उसे दो लड़कियां सांद्रा गुड और सूसन मर्फी मिलीं। ये दोनों ही मेनसन के हरम की लड़कियां हैं। सांद्रा गुड ने बताया कि लिन कुछ दिनों से परेशान थी और कहती थी कि देश के लिए कोई कुछ नहीं कर रहा है। उसने यह कार्य (हत्या का प्रयास) अनेक समस्याओं के दबाव के कारण किया। वह हवा और पानी के प्रदूषण से उत्पन्न होनेवाले खतरे के बारे में बहुत चिंतित थी—'निक्सन ने लोगों से झूठ बोला, फोर्ड भी झूठ बोल रहा है, वह कुछ नहीं कर रहा है।'

गुड ने आगे बताया, "मैं और लिन 'अंतर्राष्ट्रीय जन-न्यायालय' की सदस्या हैं। संसार भर में उसके कई हजार सदस्य हैं जो हवा और पानी को दूषित करनेवालों की हत्या करने के लिए तैयार बैठे हैं। हम लोग राष्ट्रपतियों, उप-राष्ट्रपतियों तथा कंपनियों के उच्च पदाधिकारियों की हत्या करनेवाले हैं। मैं उन लोगों को चेतावनी देती हूं कि वे प्रदूषण फैलाना बंद कर दें अन्यथा उन्हें मरना होगा।"

इसी वर्ष जुलाई के अंत में गुड की हाजिरी में लिन ने एक संवाददाता से कहा था, "फोर्ड की नियुक्ति निक्सन ने की है। उसे अपने कामों का फल भोगना ही पड़ेगा। फोर्ड निक्सन के चरण-चिह्नों पर चलने की कोशिश कर रहा है और वह निक्सन के समान ही दुष्ट है।"

लिन बातचीत के लिए इस संवाददाता को कब्रिस्तान में ले गयी। उसने कहा कि हमें मृतकों की संगति अच्छी लगती है। अंत में जब संवाददाता ने कहा कि चर्चा के लिए कुछ और समय दीजिए तब लिन
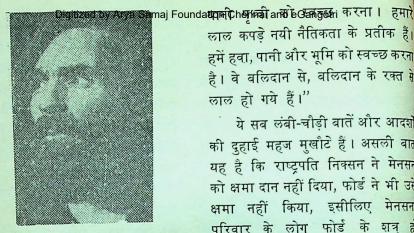
शैतान मसीहा चार्ल्स मेनसन

ने उससे कहा कि यह भेंट तो कुछ भी नहीं है, उससे भी बहुत बड़ी घटना होनेवाली है। उसके बाद लिन ने एक प्रेस-वक्तव्य जारी किया जिसमें कहा गया था कि फोर्ड और निक्सन में कोई भेद नहीं है, वह निक्सन का ही नया रूप है, और यदि वह भी इस देश का संचालन निक्सन की तरह गैर-कानूनी ढंग से करता रहा तो लोगों के घर टेट और ला-बियांका के घरों तथा माई-लाई की अपेक्षा अधिक रक्त-रंजित हो जाएंगे।

पिछले कुछ महीनों से लिन और उसकी सहेलियों ने लाल रंग के लंबे चोगे और लाल टोपे पहनने शुरू किये हैं। वह कहती है, "अब हम साध्वियां बन गयी हैं। हम लाल रंग के कपड़े पहनती हैं। हम अपने प्रभु (मेनसन) की प्रतीक्षा कर रही हैं और उसके क्रास पर से उत-रने से पहले हमें एक ही काम करना है, यानी पृथ्वी को स्वच्छ करना। हमारे लाल कपड़े नयी नैतिकता के प्रतीक हैं। हमें हवा, पानी और भूमि को स्वच्छ करना है। वे बलिदान से, बलिदान के रक्त से लाल हो गये हैं।"

ये सब लंबी-चौड़ी बातें और आदर्शों की दुहाई महज मुखौटे हैं। असली बात यह है कि राष्ट्रपति निक्सन ने मेनसन को क्षमा दान नहीं दिया, फोर्ड ने भी उसे क्षमा नहीं किया, इसीलिए मेनसन-परिवार के लोग फोर्ड के शत्रु हो गये हैं।

फोर्ड पर हमला किये जाने से उन्हें किसी की सहानुभूति नहीं मिली। इसके विपरीत न्यायालय ने लिन को आजी-वन कारावास का दंड दिया है।

—डी-६४९, मंदिर मार्ग,
नयी दिल्ली-१

अमरीका के प्रसिद्ध कला-संग्रहालय 'म्यूजि-यम ऑव माडर्न आर्ट' में भारतीय कला के अनेक दुर्लभ और उत्कृष्ट चित्र सुर-क्षित हैं। इनमें सभी कालों और सभी शैलियों के चित्र शामिल हैं। प्रस्तुत चित्र सम्राट जहांगीर के समय की मुगलकालीन चित्रकला का है और संग्रहालय के दुर्लभ चित्रों में इसकी गणना होती है। चित्र के चारों ओर फारसी के 'शेर' हैं जो सम्राट जहांगीर के वैभव का बखान करते हैं।

शेक्सपियर थियेटर

शेक्सपियर का जन्मस्थल

शेक्सपियर का जन्मस्थल

शेक्सपियर की नीलामी तीन हजार पौंड

• राजेन्द्र अवस्थी
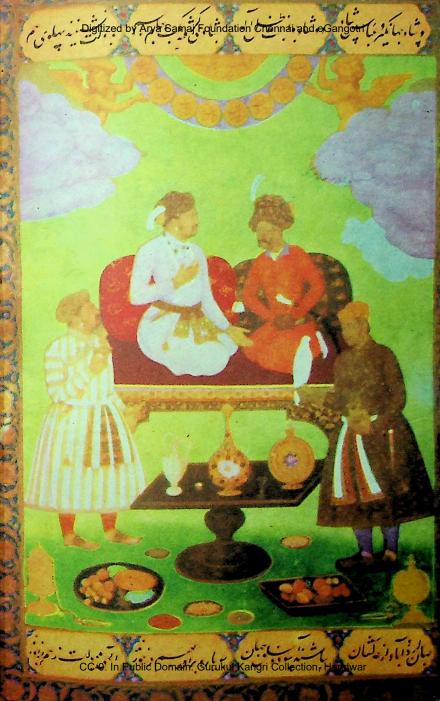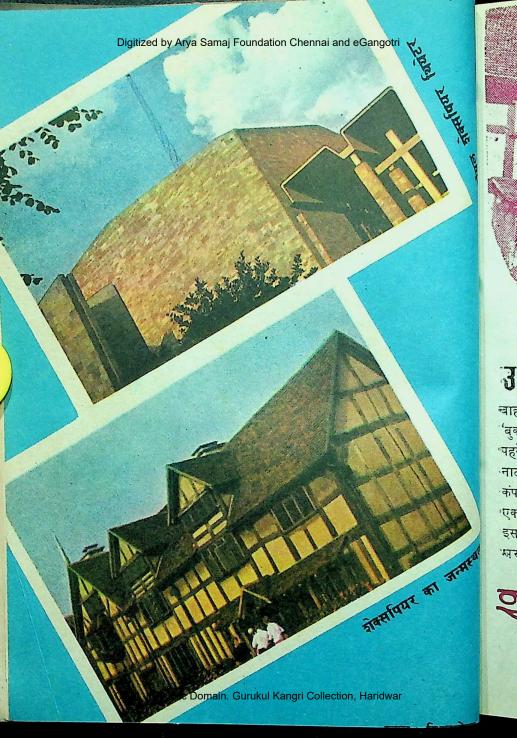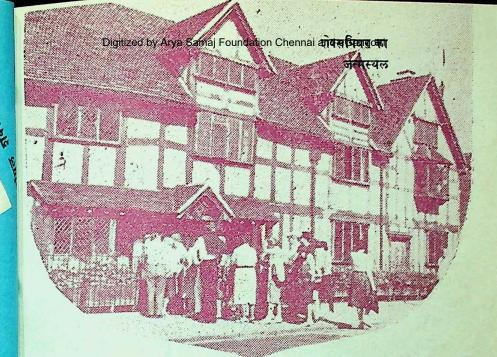
उस दिन 'हैमलेट' दिखाया जा रहा था। कारों का एक लंबा काफिला बाहर खड़ा था और थियेटर पूरी तरह 'बुक्ड' था। ऐसा रोज ही होता है, यदि पहले से टिकट रिजर्व न कराया जाए तो नाटक नहीं देखा जा सकता। विभिन्न कंपनियां हैं और अलग-अलग तरह से एक ही नाटक को वे प्रस्तुत करती हैं। इस तरह शेक्सपियर के सारे नाटक वर्ष भर होते रहते हैं। इस थियेटर का नाम है 'शेक्सपियर मेमोरियल थियेटर'। लाल पत्थरों से बना यह नाट्यगृह अपने ढंग का अलग है। एवन नदी किनारे से बहती है। सामने सीधा पुल है और नदी के शांत पानी पर तैरती हुई ढीठ बत्तखें हैं।

"अरे, आप क्या कर रहे हैं?"—मैं चौंक उठा था। मेरी गाइड ऐन ने मुझे सावधान किया। मैंने किया ही क्या

था ! बत्तखों को खिलाना चाहता था और इसलिए मैंने हाथ बढ़ाया था। सारी बत्तखें मेरी ओर आ रही थीं। ऐन ने बताया, इन्हें मूंगफली आदि कुछ खाने के लिए न दो तो ये आदमियों को काट लेती हैं।

"सचमुच", ऐन ने पकड़कर खींच लिया और मैं ढलती हुई शाम के साथ अपनी ओर भागकर आती हुई श्वेत बत्तखों के सौंदर्य को देखते हुए नाट्यगृह के ऊंचे बरामदे में चढ़ गया। यह नाट्यगृह पहली बार सन १८७७ में बना था। फिर उसमें आग लग गयी और सन १९३२ में वह फिर दूसरी बार बनाया गया । स्ट्राटफोर्ड-अपॉन-एवन में तब भी भीड़ थी। लंदन में ऐन के साथ हेमपसरेड में जॉन कीट्स का मकान देखा था। जॉन कीट्स (सन १७९५ –१८२०) इसी मकान में अपनी प्रेमिका फेनी ब्राउन के साथ रहता था। सोने के कमरे में अब भी वह पुरानी दीवार-घड़ी लगी है, जो कभी ६ बजने में जब डेढ़ मिनट बाकी थे तब अचानक ठहर गयी थी और तब से अब तक ठहरी हुई है। इसी कमरे के बाहर चार्ल्स ब्रूम का एक नोट मैंने पढ़ा—

३ फरवरी, सन १८२० को ११ बजे रात को थका और टूटा कीट्स घर वापस आया। मैंने पूछा, "तुम बीमार लगते हो। तुम्हारे मुंह से खून आ रहा है।"

उसने कहा, "नहीं। बीमार नहीं हूं, परंतु मैं अपना खून स्वयं देखना चाहता हूं। लैंप जलाओ।"

मैंने लैंप जलाया। फिर डॉक्टर को खबर की। कीट्स ने अपना खून अपने मुंह से गिरते हुए स्वयं देखा और फिर वह खूब जोर से हंसा। ५ बजे सुबह वह मर गया।

चार्ल्स ब्रूम के इस नोट को पढ़कर मन भर उठा। उसकी वेदना देखी जा सकती है। कीट्स के घर में शेक्सपियर का पूरा साहित्य सुरक्षित है। वे सारी पुस्तकें सन १६२३ में छपी थीं। उस समय की छपाई का पता उनसे लग जाता है। दीवार पर शेक्सपियर का चित्र है। कीट्स के अपने प्रेम-पत्र हैं, मंगनी की अंगूठी (एनगेजमेंट रिंग) है और फेनी के खूबसूरत फोटो हैं, जिसे कीट्स अंत तक प्रेम करता रहा।

यहीं से हम स्ट्राटफोर्ड-अपॉन-एवन के लिए रवाना हुए थे। रास्ते में थोड़ी देर हम

आक्सफोर्ड और फिर ब्लेहिम पैलेस में ठहरे थे। ब्लेहिम पैलेस यानी चर्चिल का जन्म-स्थान।

लंदन से स्ट्राटफोर्ड तक पहुंचने में कार से लगभग तीन घंटे लगे थे। स्ट्राट-फोर्ड-अपॉन-एवन एक तीर्थ-स्थान बन गया है। यहीं विश्वविख्यात महाकवि विलियम शेक्सपियर का जन्म सन १५६४ में हुआ था। शेक्सपियर ५२ वर्ष जीवित रहे। उनके पिता जॉन शेक्सपियर हेनले स्ट्रीट में रहते थे। आज भी हेनले स्ट्रीट है। इसी स्ट्रीट में बनी इमारत के पश्चिमी हिस्से में विलियम ने जन्म लिया था। दूसरे हिस्से में विलियम के पिता की दूकानें थीं। वे चमड़े के दस्ताने बनाते थे और लकड़ी बेचने का व्यवसाय करते थे। विलियम की बहन सूसन के जीवन-काल तक यह मकान एक पैतृक संपत्ति की तरह चलता रहा, परंतु उसके बाद एक दुखी अध्याय का आरंभ हुआ।

काल और परिधि की सीमा को तोड़कर जीनेवाले महान कवि विलियम का अवसान सन १६१६ में हो चुका था। १८ वीं सदी के मध्य तक उनकी रचनाएं विश्व के कोने-कोने में पहुंच गयी थीं और स्ट्राटफोर्ड साहित्यिक तीर्थ बन गया था। एक ओर दूर-दूर से दर्शक अपने प्यारे कवि विलियम के जन्म-स्थान को देखने आ रहे थे, दूसरी ओर उनके घर का उपयोग उत्तराधिकारी मनमाने ढंग से कर रहे थे। यहां तक कि जिस कमरे में शेक्सपियर रहते थे, १८वीं सदी के अंत में वह गोश्त की दूकान में बदल गया था।

महाकवि के मकान की नीलामी

१६ सितंबर, १८४७ को इतिहास के पृष्ठों पर एक प्रश्नचिह्न उभरा : महा-कवि के मकान की नीलामी! हां, शेक्स-पियर के जन्म-स्थान को नीलाम करने की घोषणा की गयी। एक इश्तहार छाप-कर लगाया गया और उसमें लिखा गया कि इस मकान में कहां-कहां क्या है?

पढ़े-लिखे लोगों में अवश्य हलचल हुई होगी। 'द टाइम्स' का एक हिस्सा वहां सुरक्षित है। उसमें एक संपादकीय है— **'कानों को काटनेवाली आवाजें।' यदि शेक्सपियर का मकान नीलाम हुआ तो अमरीका के जंगली जानवर ढेर-से डॉलर लेकर आयेंगे और इस मकान को खरीद लेंगे। फिर उसे वहां से उठाकर एक ठेले में रखेंगे और गली-गली शेक्सपियर को**

बेचते फिरेंगे।

अमरीका के लोग सचमुच उसे खरीद-कर अपने देश ले जाना चाहते थे।

हलचलें खूब हुईं, लेकिन शेक्सपियर के मकान की नीलामी को कोई नहीं रोक सका। दरिद्र ठेकेदार और भेड़िये व्यापारियों ने डेढ़ हजार गिन्नियों से बोली शुरू की और अंत में ३ हजार पौंड में मकान बिक गया। शेक्सपियर के उत्तराधिकारी विवश होकर अपने काफिले को लुटता हुआ देखते रहे। अच्छी बात यह हुई कि खरीदार इंगलैंड के ही निवासी थे और उन्हें महाकवि से प्रेम था। उन्होंने 'स्ट्राटफोर्ड बर्थप्लेस कमेटी' बनाकर यह मकान उसे सौंप दिया। फिर सन १८९१ में लंदन की संसद ने एक विशेष कानून पास कर ट्रस्ट को अपनी स्वीकृति दी और उसे शेक्सपियर की जन्मभूमि की सुरक्षा के सारे अधिकार दिये। उस ट्रस्ट में जो पहले छह व्यक्ति थे उनके नाम हैं—(१) सर वाल्टर स्कॉट (२) टामस कार्लाइल (३) आइजक वाट्स (४) जॉन वूले (५) हेनरी इरविंग, और (६) एलेन टेरी।

आत्मा का तीर्थ

१५,००० की आबादीवाला आज का स्ट्राटफोर्ड-अपॉन-एवन छोटा-सा खूबसूरत शहर है, लेकिन उसका पुरानापन अब भी शेष है। सागौन की लकड़ी और लाल रंग की दीवारों के मकान हैं, साफ-सुथरी सड़कें हैं, पब हैं, डांस-क्लब हैं, स्ट्रिपटीज (नग्न-नृत्य) के स्थान हैं, अच्छे होटल हैं और शानदार दूकानें हैं। चारों ओर फूलों से भरे बाग हैं। शांत ठहर-सी गयी नदी का पानी शेक्सपियर की देह की गंध को आज भी दूर नहीं कर पाया। उसके किनारे बना नाट्यगृह एकदम नया है, लेकिन उसके भीतर रोज दिन और रात शेक्सपियर की आत्मा उभरती है।

इन वृक्षों के साथ भी शेक्सपियर की स्मृतियां जुड़ी हैं

इंगलैंड की जनता और सरकार ने जिस खूबसूरती से शेक्सपियर को जीवित रखा है, प्रशंसनीय है। लंदन में मैंने अपने प्रिय साहित्यकारों के मकान देखे थे—कीट्स, बायरन, डिकेंस, जॉनसन आदि। सभी के मकान अब राष्ट्रीय निधि हैं।

स्ट्राटफोर्ड तो रोज यात्रियों की भीड़ से भरा होता है। कहते हैं प्रतिवर्ष ५ लाख लोग यहां आते हैं।
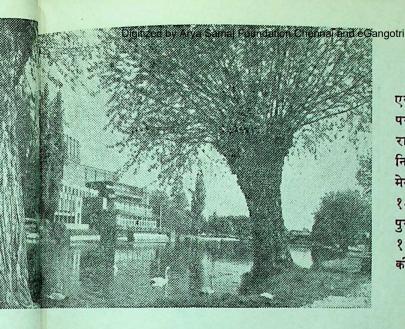
एवन नदी के तट पर, सार्वजनिक धन-राशि से १९३२ में निर्मित, शेक्सपियर मेमोरियल थियेटर। १८७७–७९ में बना पुराना थियेटर १९२६ में अग्निकांड की भेंट हो गया था

पुराना, पर नया रूप

शेक्सपियर स्मारक ट्रस्ट ने जन्म-स्थान में कई सुधार किये हैं। भीड़ भरे बाजार के बीच पुरानी लकड़ी और लकड़ी की लाल टाइल के छप्पर से बना चर्चनुमा यह मकान लगभग वैसा ही रखा गया है जैसा था। दुमंजिला मकान बहुत सामान्य है। पश्चिमी पार्श्व में विलियम का जन्म हुआ था। वह कमरा अब भी दर्शक देख सकते हैं। उसी से लगे उस कमरे में अब संग्रहालय है, जहां कभी विलियम के पिता जॉन व्यापार किया करते थे। कमरों में पुराने समय का लकड़ी का फरनीचर, रसोईघर के बरतन, हाथ से की हुई कशीदाकारी और पुराने ढंग के परदे आसानी से देखे जा सकते हैं।

अब हेनले स्ट्रीट से शेक्सपियर के मकान में प्रवेश किया जा सकता है। अपनी गाइड ऐन के साथ जब मैंने यहां से प्रवेश किया तब अचानक सारा शरीर स्फूर्ति से भर उठा। सामने ही 'स्वागत-कक्ष' था। यहां शेक्सपियर का साहित्य और चित्र तथा उपहार की चीजें बिकती हैं। इसी कक्ष से सीधे मुख्य मकान के भीतर प्रवेश है। सागौन लकड़ी की दीवारों को देखकर पता चलता है कि उस समय लकड़ी का प्रयोग खूब होता रहा है। कमरे में ईंटों से बनी अंगीठी है, जिससे कमरा गरम रखा जाता रहा होगा। एलीजाबेथ के जमाने की एक कुरसी है, एक स्टूल है और सत्रहवीं सदी की ड्रेसिंग टेबल है। यह निवास का मुख्य कमरा रहा है। इसी से लगा रसोईघर है। कमरे को देखकर उस समय के बरतनों, अंगी-

सौंदर्यवती,

ठियों और [illegible] के सामानों का अंदाज आसानी से लगाया जा सकता है। पुराने समय के बरतन अब भी रखे हुए हैं। इसी कमरे से ऊपर जाने के लिए लकड़ी की प्राचीन सीढ़ियां आज भी सुरक्षित रखी गयी हैं। रसोईघर के नीचे एक तहखाना है, जहां खाने-पीने की वस्तुएं सुरक्षित रखी जाती थीं।

मख्य निवास के कमरे में एक दूसरा दरवाजा और है, जहां अब संग्रहालय है। इसमें पुराने स्ट्राटफोर्ड शहर का नक्शा, कई महत्त्वपूर्ण पुराने रिकार्ड और शेक्सपियर के मकान को सन १८४७ में नीलाम किये जानेवाले सारे दस्तावेज सुरक्षित रखे गये हैं।

रंग-बिरंगे फूल

दूसरे कमरे में शेक्सपियर का मूलचित्र है। उनके लिखने की टेबल है। एक पलंग है और उसके पास रखी हुई लकड़ी की दो आराम-कुरसियां। शेक्सपियर का समूचा साहित्य, उनके हाथ के लिखे पत्र, एनी का चित्र और कई और ऐसे चित्र यहां देखे जा सकते हैं जिनके साथ शेक्सपियर की स्मृतियां जुड़ी हुई हैं।

मकान के पीछे खूबसूरत बाग है। रंग-बिरंगे मौसमी फूलों से वह भरा हुआ है। शहतूत, श्रीफल, कीलफल-जैसे वृक्षों को करीने के साथ यहां लगाया गया है। अगूरों की बेलें हैं और तरह-तरह के गलाब हैं। गुलाब के फलों की सुगंध से सारा वातावरण महक उठा है। बाग के बीच [illegible] मिट्टी की सड़कें मिला-जुला सौंदर्य प्रदान करती हैं।

नाम से जीवित शहर

समूचा स्ट्राटफोर्ड आज भी विलियम शेक्सपियर के नाम पर जीवित है। यहां की दूकानों की यह रौनक कब की खत्म हो गयी होती। अब वे दिन-प्रतिदिन बढ़ रही हैं। कारों के काफिले रोज आते हैं और चले जाते हैं, परंतु रात आज भी रंगीन बनी रहती है। पबों और नृत्यशालाओं में अमरीकी संगीत के साथ शेक्सपियर के रिकार्ड भी सुनने को मिलते हैं। यदि शेक्सपियर न हुए होते तो स्ट्राटफोर्ड क्या होता, समझ में नहीं आता। आज भी पैरिश चर्च में सनातन, शांत मुद्रा में विश्राम करते शेक्सपियर की आत्मा समूचे शहर में धूप की तरह घूमती है।

एक दर्द : एक कसक

अंगरेजी काव्य की अपनी विशेषताएं रही हैं। सदियों से वह विश्व-साहित्य को प्रभावित करता रहा है। अंगरेजी साहित्य के महारथी अब मात्र इंगलैंड-निवासियों की निधि नहीं हैं, इसीलिए लंदन पहुंचकर मैंने अपने कार्यक्रम में सबसे पहले जो परिवर्तन कराया वह यही था कि मुझे उन विख्यात महाकवियों और प्रेरणास्रोतों के सुरक्षित अवशेष अवश्य देखने हैं। किसी भी देश की अमरता वहां के साहित्य, वहां की संस्कृति और कला में निहित होती है, राजनीति में नहीं, जो हर पल मरती और जीती है! वह गंदी

नाली में डूबने और तैरनेवाले कीड़ों की तरह है, इसलिए दर्जनों देशों की यात्रा करते हुए भी वहां राजसत्ता को देखने और परखने की महत्त्वाकांक्षा मुझमें कभी नहीं रही।

इन सारे स्मारकों को देखने के बाद एक दर्द मुझे अवश्य महसूस हुआ—वह दर्द मेरे भीतर का था, मेरे देश का था। रह-रहकर मुझे वाल्मीकि से लेकर तुलसी-दास, सूरदास और फिर निराला तथा जयशंकरप्रसाद की यादें कचोटती रहीं। एक हांक जैसे कोई हवा में छोड़ गया है :

कबिरा खड़ा बजार में
लिये लुकाठी हाथ
जो घर फूंके आपना
चलै हमारे साथ

वह कबीर कहां है? वह बनजारा सूरदास! बेचारे प्रेमचंद! तुलसीदास को देवता बनाकर मंदिर में कैद करनेवाले नहीं जानते कि वह जीवन भर किन दुख-दर्दों से गुजरता रहा है!

हम कहां हैं?

हमारी साहित्यिक विरासत का एक नक्शा यदि बनाया जाए तो दुनिया में अलग होगा, लेकिन किसी का सम्मान करना हमने नहीं सीखा। एक भी स्ट्राटफोर्ड-अपॉन-एवन हमारे देश में नहीं है, जबकि शेक्सपियर की तुलना में वाल्मीकि का मार कहीं कम नहीं है। हमारे तीर्थ या तो अंध-मान्यताओं के धर्मस्थल हैं जो आदमी को आदमी से बांटते हैं अथवा राजनीति की वे दंतकथाएं हैं, जिनकी चर्चा करते हुए हमारी सांस हरदम टूटती और क्षीण होती है।

इंगलैंड की अपनी परंपरा है, अपनी संस्कृति है। आधुनिक सौंदर्य और कला के प्रसार के बावजूद उन्होंने अपनी प्राचीनता नहीं छोड़ी। यह बात या तो मैंने इंगलैंड में देखी है अथवा पेरिस में। यूरोप का बाकी हिस्सा नयी दुनिया की करवट में मशीनी मिट्टी के साथ उलट गया है।

वाटरलू और लंदन के लेखक

मुझे याद है, एक शाम लंदन में पिकाडली से वाटरलू की ओर आते हुए मेरी मित्र लिन ने नेपोलियन के युद्ध का जिक्र किया था। सन १८५३ में वाटरलू की लड़ाई में नेपोलियन की हार हुई थी। यही वाटरलू अब एक स्टेशन है और बाहर चौक है तथा बाजार है। इसी से लगी हुई आगे पुस्तकों की दूकानें हैं। उन दूकानों से गुजरते हुए दूसरी रात जब मैं इतालवी रेस्तरां 'विनाची' जा रहा था तब मेरे मन में वाटरलू की याद नहीं थी, मेरे साथ या तो तब भी लिन थी अथवा मेरे दोस्त एगन्यूस विलसन थे! हां, उन्हीं के साथ तो हमें रात्रि का भोजन करना था और उन्होंने ही यह इतालवी रेस्तरां चुना था।

ऐन उस रेस्तरां तक मुझे पहुंचाकर चली गयी थी, क्योंकि उसके पास रात्रि-भोज का आमंत्रण नहीं था। यह वही ऐन थी जिसके साथ जॉन कीट्स की
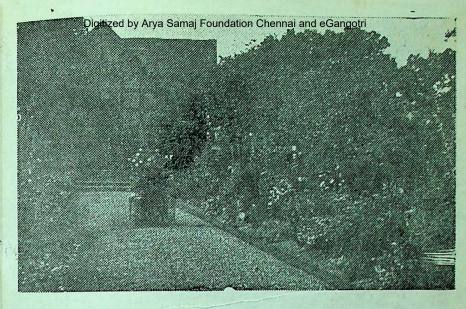
शेक्सपियर के जन्म-स्थल के पृष्ठभाग में स्थित बाग

प्रेमिकाओं के चित्र देखते हुए मैंने पूछा था, "तुम्हें कैसा लग रहा है?"

वह मुसकरा दी थी और मैंने ही तब उत्तर दिया था, "तुम्हें भी कोई कीट्स मिले तब न . . .।" कीट्स ने कुछ भी छिपाकर नहीं रखा था। उसकी जिंदगी एक खुली किताब थी और उसने अपनी हर प्रेमिका को सम्मान दिया था।

एगन्यूस के बारे में कम जानता हूं—एक बात जानी थी, इंगलैंड के सबसे बड़े 'लिटरेरी अवार्ड' के वे अध्यक्ष चुने गये थे और भारत की किसी कृति को वे पुरस्कृत करना चाहते थे। (उन्होंने ऐसा किया भी, इस वर्ष का पुरस्कार एक भारतीय को ही मिला है।) आधी रात तक हम साहित्य की ही चर्चा करते रहे थे, राजनीति की दुनिया हमसे दूर थी। मुझे विश्वास है, एक दिन इंगलैंड के लोग एगन्यूस विलसन के घर को भी राष्ट्रीय स्मारक बनाकर उनका सम्मान करेंगे, लेकिन मैं और मेरी पीढ़ी के दूसरे लोग अपने कुछ दोस्तों और साथियों की यादों में ही जीकर बनते-बिगड़ते रहेंगे। काश, एक अंगरेज कवि की जगह कोई भारतीय कवि लिखता :

> **रहने दो मुझे अनजाना**
> **अनचीन्हा और अनपहचाना**
> **वैसा ही मुझे मर जाने दो**
> **एक पत्थर भी न बता सके**
> **कहां मुझे दफन किया गया था !**

कम से कम हमारी आत्माएं संतोष तो पा सकतीं कि हमने ही ऐसा चाहा था। ●

अमरीकी कविता

संसार महीनों सर्दी से सोया रहा

झील के पार, जहां से अब
आवाजें लौट आती हैं
एक जानवर आवाज खोजने लगा
यहां-वहां ताका
झील और जमीन की
सारी ध्वनियों से दूर
वह गूंगा हो गया
चाकू की तरह मछली पीछे को उछली
और पानी मर गया
वीरान सुनसान जगहों में
पत्तियों की सरसराहट वह पी गया
पहाड़ी के किनारे
चट्टानों को रजाई-सा उढ़ा
उस जगह की सारी
जानकारियां समेटने को तैयार
हजारों पतझड़ी आवाजें दफना
वह यहां-वहां जाता रहा
सारी की सारी वादियां
ध्वनियों को पीने लगा—
चापलूसों की अपशकुनी ध्वनियों को
चमकीली घास के सारे स्वर
वह पीता रहा, पीता रहा

फिर सर्दी आ गयी
और एक रात उसने झांका—
जमी चोटियों से सपाट जगहों पर
सितारों की धुंधली छांहों के पास
वह रुका
सचमुच वह लंबा और शांत था
सबसे ऊंची ढलान पर रुका
दूर वहां ठंडा आसमान गिरता था
एक शाश्वत घुमाव की तरह
तब वह चलने लगा, चलने लगा
चलता रहा और भूखा हो गया
उस रात जब चांद उतरा
सारा संसार सोया था चांद ही की तरह
जो तब भी उतना ही चमकीला था
चांद ने
अपने जानवर को मरा पाया
ठंडी बर्फ पर उसके गहरे पंजे
चौड़े और नीले
और शांत था थ्यन्त
आवाजें पी जाने के बाद
वह जानवर जब मर गया
संसार महीनों सर्दी से सोया रहा

• विलियम स्टेफोर्ड

और चांद उत्कंठित
और निरीक्षण-रत
मरी हुई रोशनी को
बिखर जाने देता रहा
संकरी घाटी की पश्चिमी दीवारों पर
और मूक-प्रसन्न
पूर्वी दीवारों पर कूद गया
चांद ने जमीन को अपना लिया
जिसका निरीक्षण
उसके जानवर ने किया था
आज्ञाकारी हो
सूरज ने
जीवन की अवज्ञा कर दी
जिसे वह गरमाता था
पर पहाड़ी की उत्तरी दीवार पर
कुछ चट्टानों के भीतर
एक पतंगा सोया था
छिपा था पहले
वह वसंत के इंतजार में
उस भारी मरणासन्न वातावरण में
रेंगने से भी भयभीत
छोटे पतंगे की गहरी सोच
उस चुप्पी में घास, पत्तियां
और पानी सब सोये रहे
निस्पंद जानवरों की निर्भरता
छोटे पतंगे पर
धीरे से उसने कोशिश की—
नदी की तरह वापस
एक धारा से संसार बहा
पहली फुसफुसाहट
घास और पत्तियों में जाती रही
पानी में छींटे
और रात का पक्षी चीखा
सब लौट आया
संसार के महत् जीवन और स्वर
जहां कभी-कभी पहाड़ी पर
चांद दीखता है फिर से उन्मत्त
अपने जानवर को
घूमता देखने को लालायित
चुपचाप कभी भी पहाड़ियों के पीछे
पर कहीं एक छोटा पतंगा
इंतजार करता है
अब वह सुनता है
और रात भर अभ्यास करता है
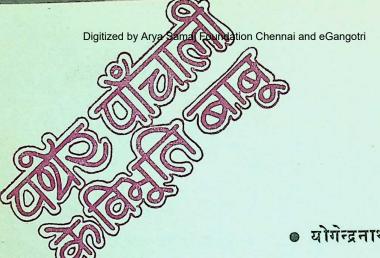
● योगेन्द्रनाथ सिनहा

एक दिन सुबह विभूति बाबू मेरे बंगले पर आये। सन १९४० था, महीना मैं भूल रहा हूं, शायद वसंत रहा होगा।

विभूति बाबू को देखते ही बर्दवान जिले के उस खेतिहर की आकृति मानस-नेत्रों के सामने आ गयी जिसका वर्णन लालबिहारी डे की एक पुस्तक में पढ़ा था। सांवला चेहरा, कुछ फूले-फूले चिकनाहट लिये गाल, किसानों की तरह ही

सुप्रसिद्ध बंगला लेखक विभूतिभूषण बंद्योपाध्याय के बारे में इन रोचक संस्मरणों के लेखक हैं योगेन्द्रनाथ सिनहा। ये बिहार के चीफ कंजरवेटर ऑव फारेस्ट रह चुके हैं। विभूति बाबू के ये अनन्य मित्र और मेजबान रहे हैं। प्रस्तुत संस्मरण उस महान कथा-शिल्पी के बारे में इनकी एक पुस्तक के अंश हैं

साधारण धोती, कमीज और जूता। कमी थी सिर्फ हाथ में हुक्के की। मुझे लगा जैसे मैं उसे भी देख रहा होऊं।

नाश्ता-चाय के बाद विभूति बाबू ने वात्सल्य-भरी दृष्टि से मुझे देखा और पूछा—"आप कहानी क्यों नहीं लिखते ?"

मुझे हंसी आ गयी। फिर मैं सोचने लगा—आखिर यह प्रश्न इन्होंने क्यों पूछा ! मैंने बंगला-साहित्य में टैगोर, शरत और बंकिम के अतिरिक्त चौथे किसी का नाम भी नहीं सुना था। मैंने उत्तर दिया, "मैं कहानी लिखना नहीं जानता। लिखना चाहता भी नहीं, क्योंकि कहानी लिखने के मानी झूठ बोलना। मैं ईमानदार आदमी हूं। अगर वन-विभाग की सड़क पर बीस मजदूर काम कर रहे हैं तो कैसे कह दूं कि तीस काम कर रहे हैं ? अगर कहानी लिखना होगा तो यही न कहना होगा !"

विभूति बाबू मुसकराये। उनकी

मुसकराहट में [illegible] था !

विभूति बाबू का मकान घाटशिला के दाहीगोड़ा महल्ले में था। नाम था 'गौरीकुंज'— उनकी स्वर्गीय पहली पत्नी के नाम पर।

घाटशिला में रहते हुए विभूति बाबू अधिक समय आस-पास के पहाड़ों-जंगलों में बिताया करते—अगर कोई साथी मिल गया तो उसके साथ, वरना अकेले ही। एक दिन वे सुबह-सुबह निकल गये कि खाने के समय तक लौट आयेंगे। लेकिन खाने का समय बीत गया, संध्या बीती, रात भी काफी चढ़ गयी, लेकिन विभूति बाबू का कहीं पता नहीं। सभी बड़े चिंतित, खोज-पड़ताल शुरू हुई। अंत में रात के करीब ग्यारह बजे वे बड़े शांत भाव से घर में दाखिल हुए, धोती में जंगली हाथी की लीद का एक बड़ा गोला बांधे हुए। वे बहु-कष्ट से अर्जित संपत्ति की तरह जमीन पर उसे रखकर चकित समु- [illegible] को दिखाते हुए बोले, "की अद्भूत !"

जून १९४० में मेरा मुख्यालय चाइबासा स्थानांतरित हो गया, अधिकारक्षेत्र पहले-जैसा ही रहा। एक बार सुबोध मेरी मोटर से ही चाईबासा से घाटशिला आये कि लौटते समय एक साहित्यिक-गोष्ठी के लिए विभूति बाबू और उनकी स्त्री को साथ लाया जाए। जहां घूमने की बात आती विभूति बाबू झट तैयार हो जाते।

मोटर चलाते-चलाते मैंने विभूति बाबू से कहा, "आपने कहा था न कि कहानी

पथेर पांचाली : एक दृश्य
रेखांकन : सत्यजित राय

की 'टेकनीक' बतायेंगे, जो इस समय बताइये न ।"

विभूति बाबू ने झट उत्तर दिया—"हां, बोलबो, किंतु एखाने नाय। जायगा चाई।"

मैं चुप रह गया। पता नहीं जगह कैसी होती है! खैर, नाश्ते के बाद हम तीनों टहलने निकले।

चाइबासा में हमारा घर टुंगरी की ढलान पर था। सामने एक बड़ी झील थी। इसी के किनारे हम लोग टहलते चले गये। अंत में गोशाला पहुंचे। गोशाला के पीछे एक शांत नीरव वन-खंड है। इसमें अधिकतर मझोले कद के वृक्ष हैं, जिन पर रेशम के कीड़े पलते हैं। जमीन इतनी साफ थी जैसे मंदिर का लिपा-पुता प्रांगण। वृक्षों के बीच ग्रेनाइट के विविध आकार-प्रकार के ढोक बिखरे थे। झुकी डालियों पर सुहावने हरे पत्ते। उनके बीच से छन रहा नीला आकाश नीचे लाल मुरम का कालीन-नुमा फर्श। विभूति बाबू चलते-चलते रुक गये। चारों ओर दृष्टि घुमाकर देखा, फिर

मानवता के चितेरे विभूतिभूषण बंद्योपाध्याय
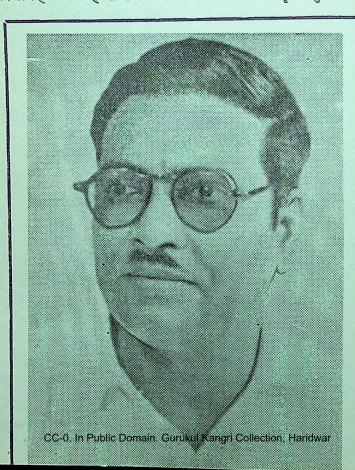
बोले, 'एइ होल्दो जायगा। एखाने बोसुन।'

सुबोध और मैं उसी पत्थर के नीचे बैठ गये, जैसे प्राचीन युग में वृक्ष के नीचे गुरु-शिष्य बैठा करते थे। कुछ देर तक सिगरेट के साथ प्रकृति की सुधा पीकर विभूति बाबू ने कहा, "यहां मैं आप लोगों को कहानी की टेकनीक बताऊंगा।"

कहानी-कला की चर्चा के पश्चात उन्होंने कहा, "अब मैं आपको अपनी दो-एक कहानियां बताता हूं। साथ-साथ यह भी बतलाऊंगा कि इन कहानियों को लिखने के लिए मैं क्योंकर प्रेरित हुआ।

"बंगाल के निरेटपाड़ा गांव में एक विधवा युवती रहती है। उसके एक छोटा भाई है और अति दरिद्र मां-बाप। युवती का नाम, मान लीजिए, मालिनी है। मालिनी अपना गांव छोड़कर कहीं नहीं गयी है, ससुराल भी ऐसा ही देहात है और वहां तो वह नाममात्र को रही थी। वह रोज घर के पीछे एक पोखरे में बरतन धोने तथा नहाने जाती है। एक दिन उसने देखा कि पोखरे के उस पार एक सुंदरी खूब साफ कपड़े पहने हाथ-मुंह धो रही है। दोनों में परिचय होता है और क्रमशः मैत्री हो जाती है। यह सुशिक्षित धनी महिला कलकत्ता में रहती है और इस गांव में संबंधियों के यहां आयी है। वह मालिनी को रोज कलकत्ता के विषय में बातें बतलाती है—वहां कैसी रौनक है। मालिनी कल्पना में कलकत्ते को मूर्त करना चाहती है, लेकिन सफल नहीं होती।
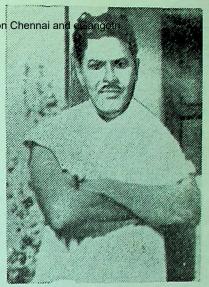
सामान्य वेशभूषा म

कलकत्ता कैसा होगा, यह जिज्ञासा उसे सतत सताया करती है।

"कलकत्ते की युवती कलकत्ता लौट गयी। मालिनी बरतनों का पुराना बोझ और विफल कल्पनाओं का नया भार लिये रोज पोखरे पर जाती है। इस बीच खर्च की तंगी बढ़ गयी है। अकसर उपवास की नौबत आ जाती है। एक दिन मालिनी ने मां से कहा—'मां, मैं सोचती हूं ससुराल जाकर सास से कुछ गहने मांग लाऊं। अगर दे दें तो बेचकर कुछ दिन खर्चा चले।'

"किसी तरह राह-खर्च जुटाकर छोटे भाई को साथ ले मालिनी ससुराल जाती है। सास गहना देने से इनकार करती है। मालिनी खाली हाथ लौटती है। राना-

घाट स्टेशन के प्लेटफार्म पर भाई-बहन बैठे हैं।

"खोंचेवाले तरह-तरह की चीजें बेच रहे हैं। इनमें गरम चाय छोटे भाई को लुभाती है और वह कहता है—'दीदी चा खाबो।' मालिनी जोड़कर देखती है सिर्फ टिकट भर का पैसा बचा है। भाई-बहन को बिना खाये ही घर पहुंचना होगा। उसने डांटकर कहा—'ना, चा खाबार दरकार नेई।' कुछ देर भाई चुपचाप बैठा रहता है, फिर गरम चाय की ललकार और आमंत्रण-मिश्रित पुकार आती है। फिर भाई बहन का आंचल खींचकर कहता है—'दीदी, चा खाबो।' मालिनी उस बच्चे के चाय पर लगे भोले-भाले चेहरे को देखकर करुणा से विचलित हो जाती है, पर अपनी आर्थिक विवशता पर विजय पाने का उसके पास कोई उपाय नहीं।

"इतने में दार्जिलिंग-मेल धड़-धड़ करती हुई प्लेटफार्म पर आकर खड़ी होती है। रेस्तरां-कार मालिनी के ठीक सामने पड़ता है। उसकी चकाचौंध करनेवाली जगमगाहट देखकर मालिनी के नेत्र आबद्ध हो जाते हैं। फिर टेबल पर सजे हीरे की तरह ग्लास, फूल की तरह ग्लासों में खोंसे हुए नैपकिन, बेयरों के लिबास, रेस्तरां-कार की दीवारों पर अनदेखी चीजों की रंगीन तसवीरें, सजे-धजे साहब मेमों का उतरना-चढ़ना। इस सब में मालिनी अपने को खो देती है। वह जैसे कल्पना में मंडराने लगी। एकाएक उसे चरम अनुभूति हुई। उसे लगा, जो कल्पना अब तक हार माने हुई थी वह आज विजयिनी हुई। मालिनी ने सोचा बस कलकत्ता इसी तरह का होगा। परम आनंद के स्रोत में बहते-बहते उसने भाई को बुलाया, उसे पैसे दिये और अपने को लुटाती हुई बोली—'जा दू कप चा आन। आमियो खाबो।"

कहानी समाप्त कर विभूति बाबू ने कहा, "यह तो हुई लिखी हुई कहानी। अब आप लोगों को बता दूं कि इसे मैंने क्यों और कैसे लिखा। तब आप लोगों को टेकनीक समझने में आसानी होगी।

"इसी तरह के एक गांव में मैंने एक सुंदर युवती को पोखरे में बरतन धोते देखा था। सोचा यह बेचारी तो गांव के बाहर कुछ जानती ही न होगी। अगर कलकत्ते का विवरण इसे दिया जाए तो उसे मूर्त करने में इसकी कल्पना कहां तक कारगर होगी और उसके साकार होने पर इसके मनोभाव कैसे होंगे। बस इतनी भर वास्तविकता है, शेष कल्पना है।"

अनोखा ऐतिहासिक मजाक

विभूति बाबू के लेखक बनने की घटना भी खासी दिलचस्प है। एक दिन उन्होंने बताया, "मैं बी. ए. करने के बाद सोनारपुर में मास्टरी करता था। लेखक बनने की कल्पना ही न थी। सोनारपुर लाइन पर एक स्टेशन है। एक दिन एक छोकरा आया और बिना किसी भूमिका

के व
कित
चारि
अप्र
गया
पर
हुआ
शीघ
चंच
छपा
फर
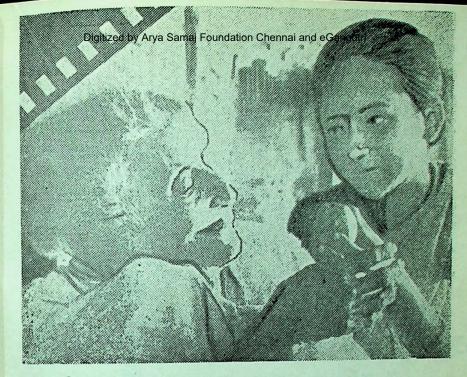
'पथेर पांचाली' फिल्म का एक दृश्य

के बोला—'आइये, हम लोग मिलकर एक किताब लिखें। साहित्य-सेवा तो करनी ही चाहिए।' एक अनजान छोकरे से ऐसी अप्रत्याशित बात सुनकर मैं अवाक हो गया। लेकिन दूसरे ही दिन स्कूल पहुंचने पर देखता क्या हूं कि जहां-तहां छपा हुआ विज्ञापन चिपका हुआ है—

शीघ्र प्रकाशित हइतेछे उपन्यास—चंचला, लेखक—विभूतिभूषण वंद्योपाध्याय

मैंने आंख मलकर देखा, ठीक वही छपा हुआ था।

मेरे आश्चर्य की सीमा न रही।

जाने-पहचाने लोग मिलते तो कहते, 'वाह साहब! आप तो छिपे रुस्तम हैं। हम लोगों को पता भी न था कि आप लेखक हैं। बधाई! कब तक उपन्यास प्रकाशित होगा?'

अब मेरी दशा सांप-छछूंदर की-सी हो गयी। उपन्यास की तो कोई बात थी ही नहीं। लेकिन यह कहते भी न बनता कि मैं लेखक नहीं हूं, विज्ञापन झूठा है।

इधर मेरी बनावटी ख्याति बढ़ने लगी। लोग मुझे बधाई देने आने लगे। रास्ते में, स्कूल में—हर कहीं उस प्रश्न से कतराते मैं थक गया। अंत में सोचा कि कुछ लिखना ही पड़ेगा।
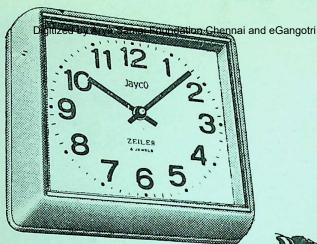
जयको का अद्भुत नया मॉडल ज़ीलर ३ स्टार दीवार घड़ी

उचित मूल्य पर। हर सजावट के अनुकूल। आकर्षक रंगों में।

* जर्मन तकनीक द्वारा निर्मित
* ६ ज्वेल की लीवर मशीन
* किसी भी प्रकार से लगाने पर सही समय

जयको

दीवार घड़ियां व टाइमपीस

सभी प्रमुख घड़ी विक्रेताओं के पास उपलब्ध

जैना टाइम इण्डस्ट्रीज़ (प्रा०) लि०
७/३२, दरियागंज, दिल्ली ११०००६

मैंने किसी तरह एक कहानी तैयार की और उसे एक मासिक पत्रिका में भेज दिया। साथ में टिकट लगा और पता लिखा लिफाफा भी भेजा। मैं इसके लिए तो तैयार था कि कहानी लौटकर आयेगी ही, लेकिन चिंता इस बात की थी कि उसका लौटना कोई देख न ले। तब तो मेरी मद्द हो जाती। मैं रोज समय से पहले ही स्कूल जाने लगा कि अगर वह लिफाफा लौटे तो किसी के देखने के पहले ही उसे छिपा लूं। अचानक एक दिन वह अभागा लिफाफा लौटा। मैंने उस पर झपटकर छापा मारा।

घर लौटकर थरथराते हाथ से मैंने लिफाफा खोला। लेकिन उसमें रचना नहीं थी, केवल स्वीकृति-पत्र था। मैंने अविश्वास के नेत्रों से पत्र को फिर एक बार पढ़ा और अपूर्व आनंद की सांस ली। चलो, इज्जत तो बची!

काल-क्रम से मेरी कहानी उस पत्रिका में प्रकाशित हुई। उस साल उस पत्रिका में प्रकाशित कहानियों में मेरी कहानी श्रेष्ठ निर्णीत हुई और मुझे पुरस्कार भी मिला। इससे मेरा आत्म-विश्वास बढ़ा और मैं थोड़ा-थोड़ा लिखता गया।

आज सोचता हूं कि वह लड़का जिसे उसके बाद कभी नहीं देखा, एक फरिश्ता ही बनकर आया था। यदि मेरे बारे में ऐसी बात न उड़ायी होती तो शायद लेखक बनने का स्वप्न भी मैं न देखता।"

पथेर पांचाली की रचना

एक अन्य प्रसंग में उन्होंने 'पथेर पाँचाली' की रचना के बारे में बताया। विभूति बाबू बी. ए. करने के बाद कुछ दिन मास्टरी करके एक बड़े जमींदार के यहां नौकरी करने लगे थे। जमींदारी का एक हिस्सा भागलपुर जिले के वनांचल में पड़ता था। यहीं जमींदार ने विभूति बाबू को मैनेजर बनाकर भेज दिया। यहां आते ही उनकी दशा उस बालक की हो गयी जो पहले दिन मां-बाप से जुदा होकर स्कूल गया हो। रात-दिन घर की याद आती और वे रोया करते। कहां जेशोर जिले की समतल शस्य-श्यामला भूमि, कहां यह ऊबड़-खाबड़ पथरीला जंगल! बंगला भाषा सुनने को तरसा करते। 'आरण्यक' में इन्होंने लिखा है कि किस तरह हफ्ते में एक बार आनेवाले डाकिये के लिए सुबह से ही चौखट पर खड़े बाट देखा करते थे कि शायद घर से कोई चिट्ठी आती हो। अहर्निश मथ रही इन भावनाओं से राहत पाने के लिए ही इन्होंने उस वनवास में 'पथेर पांचाली' आरंभ की।

विभूति बाबू कहते गये—इस तरह मैंने प्रायः पांच सौ पृष्ठ लिख डाले। 'पथेर पाँचाली' तैयार हो गयी। छपवाने के पहले मैं पांडुलिपि लेकर रवि ठाकुर से आशीर्वाद लेने जा रहा था। रास्ते में भागलपुर में एक दिन रुकना पड़ा। शाम को एक सुनसान सड़क पर मैं अकेले टहल

रहा था। देखा रास्ते में एक किनारे आठ-दस वर्ष की एक लड़की चुपचाप खड़ी है। उसके बाल बिखरे हुए थे, सूरत पर कुछ उदासी थी, कुछ शरारत थी। लगता था जैसे स्कूल से भागी हो या घर से मार-कर भगायी गयी हो और नये षड्यंत्र सोच रही हो। उसकी आंखों में मीठे-मीठे दर्द की एक अनदेखी दुनिया थी। मैं देखता रह गया। मन में आया, जब तक यह लड़की मेरी किताब में नहीं आती तब तक मेरी रचना व्यर्थ है, निर्जीव है। मैं रवि ठाकुर के यहां न जाकर अपने जंगल के डेरे ही लौट आया। लौटकर पूरी पांडुलिपि फाड़ डाली और उसी लड़की को आधार बनाकर फिर से लिखने लगा। यही लड़की 'पथेर पांचाली' की दुर्गा है।

तब तक मनुष्य अमर रहेगा

एक दिन हम लोग थोलकोबाद से तिरि-लपोसी होते हुए दीघा गये, लेकिन लौटने का प्रोग्राम किया देकुली के रास्ते। यह रास्ता उन दिनों इस्तेमाल में नहीं था। बाघ और हाथियों ने तो यहां अपनी किलेबंदी-सी कर ली थी। हमने सोचा, विभूति बाबू को यहां जीप से बाघ या हाथी दिखा सकेंगे।

लेकिन उस सुनसान सड़क पर जैसे-जैसे हम बढ़ते गये वैसे-वैसे वाता-वरण भयावह होता गया। घना, वन-खोह, पतली घुमावदार सड़क, एक ओर खड़ा पहाड़, दूसरी ओर पाताल की तरह खाई। अगर बीच सड़क पर हाथी खड़ा मिल जाए तो क्या हो? फिर तो न आगे जीप जा सकेगी, न पीछे लौट सकेगी, न उतरकर ही हम कहीं भाग सकेंगे। रास्ते में हाथी की ताजा लीद भी मिलने लगी। अब मैं अपने निर्णय पर पछताने लगा—निरी नादानी में अपने साथ बेचारे विभूति बाबू की जान भी जोखिम

परिवार में बच्चे के साथ विभूति बाबू

में डाली। जीप धीरे-धीरे बढ़ रही थी। सभी सांस रोके हुए थे। जब एक मोड़ बिना हाथी के पार हो जाता तो ऐसा लगता जैसे एक विराट ग्रह कटा। इसी तरह किसी तरह हम लोग हेंदेकुली पहुंचे।

हेंदेकुली में सड़क पर बाघ के पंजों

की ताजा छाप नजर आयी। अभी-अभी बूंदा-बांदी हो चुकी थी, इसलिए निशान बहुत साफ थे। कुतूहलवश हम उतर गये और पंजे के निशान की जांच होने लगी—बाघ नर है या मादा, कितना बड़ा, किधर से आया और किधर गया आदि। थोड़ी ही दूर पर पंजे के निशान सड़क से हटकर झाड़ी में खो गये। इसका अर्थ यह था कि बाघ अभी-अभी जा रहा था और हमारी आहट पा उसी झाड़ी में छिप गया था। डर से लोग दौड़कर फिर जीप में चढ़ गये।

काफी दूर पहुंचने पर सड़क के किनारे शाल-वृक्षों के बीच पत्तों की कुछ झोपड़ियां नजर आयीं। वे सभी खाली थीं, फिर भी लगा जैसे एक झोपड़ी से कोई बच्चा झांककर हमें देख रहा है। विभूति बाबू ने कहा—'जरूर हमें भ्रम हो रहा है।' फिर भी उन्होंने जोर से पुकारा। आवाज सुनकर सचमुच एक दस-बारह साल का लड़का झोपड़ी से निकला। विभूति बाबू अविश्वास से आंखें मल रहे थे। फारेस्ट-गार्ड के माध्यम से पूछा—'यहां और कौन है?'

लड़का बोला, 'और कोई नहीं।'

विभूति बाबू का कुतुहल और अविश्वास चरमसीमा पर पहुंच गया। पूछा, 'और तुम इस घोर जंगल में अकेले इन झोपड़ियों में हो? तुम्हारे मां-बाप कहां हैं?'

'काम पर गये हैं।'

'और तुम्हें अकेला छोड़ गये?'

बच्चे ने शांत भाव से उत्तर दिया, 'झोपड़ियों की रखवाली करने के लिए।'

विभूति बाबू दंग रह गये। बोले, 'मेरा वश चले तो ऐसे मां-बाप को फांसी पर चढ़ा दूं। हम इतने आदमी हैं और जीप पर चल रहे हैं, फिर भी डर से हमारे प्राण निकले जा रहे हैं, और इस बच्चे को रखवाली करने के लिए यहां अकेले छोड़ दिया गया है, जब कि पग-पग पर बाघ और हाथी फिर रहे हैं।' लड़के से पूछा, 'तुम्हें डर नहीं लगता?'

वह मुसकराकर चुप रह गया।

'तुम्हारा नाम क्या है?'

'टुंबी हो।'

'यहां हाथी-बाघ नहीं आते?'

'आते हैं। रात को हाथियों ने बगलवाली झोपड़ी को तोड़ डाला।'

इसके बाद विभूति बाबू कुछ न बोले। वे सड़क पर आये और अकेले तेजी से थोलकोबाद कैंप की ओर बढ़ने लगे। हमने पुकारा—'जीप पर आकर बैठ जाइए।' लेकिन विभूति बाबू लौटे नहीं।

विभूति बाबू अपने में खोये लंबे-लंबे डगों से बढ़ते ही जा रहे थे। बिना हमारी ओर मुड़े ही बोले, 'हाथी मुझे और आप को मार दे, बाघ और हाथी मिलकर सारी दुनिया को नेस्तनाबूद कर दें, लेकिन जब तक इस संसार में एक भी टुंबी हो बचा रहेगा, मनुष्य अमर रहेगा।'

प्रस्तोता : भालचंद्र ओझा

जानलेवा जाड़ा

• नैन भटनागर

जाड़े का मौसम कुछ लोगों के लिए बहुत सुखद तो कुछ लोगों के लिए बहुत ही दुखद ! सुखद उन लोगों के लिए जिनके पास सुविधाएं हैं और दुखद उन लोगों के लिए जिनके लिए जीवन स्वयं एक बहुत बड़ी असुविधा बन गया है। लेकिन यह सब होते हुए भी इन लोगों का जाड़ा कट ही जाता है।

प्रकृति ने मनुष्य सहित प्रत्येक प्राणी के लिए एक ऐसी वैज्ञानिक व्यवस्था कर रखी है जो उसे हर परिस्थिति में जीवन जीने योग्य बना देती है। याक को लें तो पायेंगे कि अपने घने बालों के कारण शीत से अप्रभावित वह बरफीले पहाड़ी इलाके में आनंद से विचरता रहता है। मैदानी क्षेत्र के हिरन को लें। गरमी में जो बाल उन्हें ठंडक पहुंचाते हैं, पतझर आते ही वे बाल झरने शुरू हो जाते हैं और उनके स्थान पर सर्दियों में गरमी पहुंचानेवाले बाल उगने लगते हैं। इसी प्रकार बरफीले इलाकों के पशुओं के शरीर पर फर उग आते हैं और पक्षियों के पंख। लेकिन आदमी के शरीर पर न तो इस तरह के बाल ही उगते हैं और न पंख,
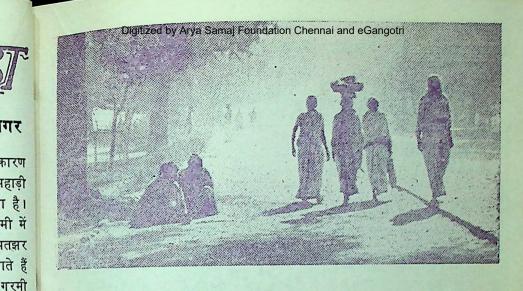
फिर भी वह ध्रुव प्रदेशों—जैसे विकट शीत-प्रदेशों में कैसे जीता है ?

ताप-नियंत्रण तंत्र

प्रकृति ने मानव को बाल या पंख—जैसी चीजें नहीं दीं, लेकिन उसने उसके शरीर के अंदर ऐसी व्यवस्था कर दी है जिससे वह सर्दी से अपना बचाव कर सके। इस व्यवस्था को हम ताप-नियंत्रण तंत्र कह सकते हैं। मानव उष्ण रक्तवाला एक ऐसा जीव है जिसके शरीर का ताप हमेशा एक-सा बना रहता है। चाहे गरमी हो या सर्दी, आदमी के शरीर का ताप हमेशा ९८.४ डिग्री फारेनहाइट या ३७ डिग्री सेंटीग्रेड ही रहता है। इस ताप का नियोजन मानव-शरीर में स्थित ताप-नियोजन तंत्र करता है। इसका केंद्र मस्तिष्क के हाइपोथेल्मस नामक भाग में होता है। यह केंद्र प्रत्येक समय शरीर की प्रक्रियाओं में क्षय होनेवाले ताप तथा शरीर द्वारा ग्रहण किये गये ताप के बीच संतुलन बनाये रखता है।

मनुष्य अपने लिए आवश्यक इस ताप को शारीरिक प्रक्रिया द्वारा स्वयं ही उत्पन्न करता है। यह ताप मांसपेशियों की गतिविधियों से पैदा होता है; जैसे टहलते समय मानव के हाथ-पैरों की मांस-पेशियों में जो गतिविधियां होती हैं, उनसे १४० किलो कैलोरीज ताप प्रति घंटे की दर से पैदा होता है। जैसे-जैसे मांसपेशियों की गतिविधियां बढ़ती जाती हैं, यह दर बढ़ती जाती है। ऊंचाई पर चढ़ते समय ताप-उत्पादन की दर २४० किलो कैलोरीज प्रति घंटा हो जाती है और हाकी या फुटबाल खेलते समय ४०० तथा कड़ा शारीरिक व्यायाम या मशक्कत का काम करते समय ५०० किलो

अधिकाधिक लोगों के लिये ज्यादा कपड़ा
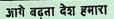
धोतियों और साडियों का उत्पादन बढ़कर 16 करोड़ वर्ग मीटर हो गया है; एक वर्ष पहले इनका उत्पादन केवल 10 करोड़ वर्ग मीटर था।

कंट्रोल का 90% कपड़ा सहकारी क्षेत्र की 28,000 फुटकर दुकानों से बेचा जाता है; इनमें से अधिकांश ग्रामीण क्षेत्रों में है।

दृढ संकल्प और कड़ी मेहनत से हम और बढ़ेंगे

'सौ नई सफलताएं' पुस्तिका मुफ्त पाने के लिए कृपया इस पते पर लिखें :—
वितरण प्रबंधक,
डी.ए.वी.पी. 'बी' ब्लाक,
कस्तूरबा गांधी मार्ग,
नई दिल्ली-110001

davp 75/454

कैलोरीज प्रति घंटा तक पहुंच जाती है। इसके विपरीत जब मांसपेशियां निष्क्रिय होती हैं, (यानी आराम से लेटे या सोते समय भी) तो वे ७० किलो कैलोरीज ताप प्रति घंटा पैदा करती रहती हैं। मांस-पेशियों द्वारा पैदा किये गये इस ताप की कुछ मात्रा इन कार्यों के करने में भी व्यय होती है लेकिन व्यय की गयी ताप की मात्रा केवल १५ से २० प्रतिशत ही होती है। शेष बची ८० से ८५ प्रतिशत ताप की मात्रा को शरीर अपने अंदर सुरक्षित रख लेता है। लेकिन सुरक्षित ताप की यह मात्रा शरीर को गरम रखते-रखते धीरे-धीरे क्षय होती रहती है। ताप-क्षय की दर आस-पास के वातावरण के ताप-मान पर भी बहुत निर्भर करती है। आस-पास का तापमान और हवा जितनी ज्यादा ठंडी होगी, ताप का क्षय उतना ही अधिक और तेज होगा। लेकिन शरीर का ताप-नियोजन तंत्र इस ताप-क्षय को खतरे की सीमा तक नहीं पहुंचने देता। ऐसी स्थिति आते ही ताप-नियोजन तंत्र की पहली प्रतिक्रिया यह होती है कि वह त्वचा के पासवाली रक्तवाहक नलिकाओं में संकु-चन पैदा कर देता है फलतः रक्तसंचार में कमी आ जाती है और त्वचा की सतह से होनेवाला ताप-क्षय रुक जाता है। इस प्रतिक्रिया को 'वासोमोटर कंट्रोल' कहते हैं। दूसरी प्रतिक्रिया के फलस्वरूप आंतरिक जैविक प्रक्रिया (मैटाबोलिज्म) बढ़ जाती है जिससे अधिक ताप पैदा

सर्दी के रोग

सर्दी कुछ व्यक्तियों पर अधिक प्रभाव डालती है। इससे हाथ-पैरों और चेहरे की त्वचा फट जाती है, अंगुलियां और एड़ियां सूजकर लाल हो जाती हैं, जिसे बिवाई फटना कहते हैं। बिवाई फटने का आरंभ खुजली से होता है। इसमें कभी-कभी फफोले तक पड़ जाते हैं और फिर घाव बन जाता है। इसका कारण प्रायः दोषपूर्ण रक्त-संचार होता है। हाथ-पैरों को दस्तानों और मोजों आदि से ढंककर गरम रखने के अतिरिक्त इसका अन्य कोई उपचार नहीं होता।

जुकाम, खांसी और ब्रोंकाइटिस—जैसी कुछ सामान्य बीमारियां भी इस मौसम में अपना प्रभाव दिखाती हैं। ये बीमारियां प्रायः श्वसन-प्रक्रिया से संबंधित होती हैं। हम जिस खुली हवा में सांस लेते हैं वह ठंडी होती है, जो हमारे ऊपरी श्वसन-तंत्र की आंतरिक सतह को ठंडा कर देती है। इसके फलस्वरूप इन सतहों में रक्त का संचार कम हो जाता है और इनमें छूत के रोगों के विरुद्ध अवरोधक शक्ति कम हो जाती है।

ठंड लगने से हृदय में दर्द के दौरे पड़ने की संभावना भी बढ़ जाती है। अतिरुधिर तनाव (हाइपरटेंशन) और रक्तचाप से पीड़ित व्यक्तियों में यह रोग बढ़ने लगते हैं। नेफ्राइटिस—जैसे गुर्दे-संबंधी रोग भी इस मौसम में बढ़ जाते हैं। ●
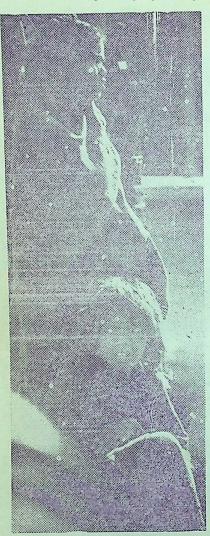
होने लगता है।

यद्यपि सर्दी के अनुरूप शरीर स्वयं को अभ्यस्त करने का प्रयास करता है, लेकिन इसमें उसे विशेष सफलता नहीं मिलती। फलतः वह मौसम के अनुकूल रहन-सहन अपनाने लगता है। हाल के कुछ परीक्षणों से यह तथ्य सामने आया है कि यदि मानव खुले ठंडे वातावरण में रहकर धीरे-धीरे उसे सहने का अभ्यास करे तो वह शीत के प्रति अभ्यस्त हो सकता है। पर्वतारोहियों के हाथ अभियान के दौरान अधिकांशतः खुले रहने के कारण शीत के अभ्यस्त हो जाते हैं और वे अपने नंगे हाथों पर आध-आध घंटे तक बर्फ को रखे रह सकते हैं।

ठंडी हवाएं

ठंड में जब शीत-लहरें चलती हैं तो ताप-क्षय की दर बहुत बढ जाती है। वैसे हवा की एक पतली परत आदमी के चारों ओर हर समय रहती है जो बंद बातावरण में ताप अवरोधक का कार्य करती है लेकिन खुले वातावरण में यह परत विश्रृंखलित हो जाती है। वस्तुतःशीत नहीं, बल्कि उसके साथ चलनेवाली तेज हवा अधिक घातक होती है। खोजों से यह भी पता चला है कि सर्दी सहने की क्षमता पुरुषों की अपेक्षा नारियों में अधिक होती है क्योंकि नारी-शरीर में चरबी की सतहें पुरुषों से अधिक मोटी होती हैं जो एक अच्छे ताप-अवरोधक का कार्य करती हैं। फलतः नारियां सर्दी को अधिक सह सकती हैं। इसी प्रकार शिशु और वृद्धों की अपेक्षा चपल बालक और प्रौढ़ व्यक्ति सरदी को अधिक सह सकते हैं। **—ए-१, २४२ए, लारस रोड नयी दिल्ली-११००३५**

ाल के
आया
तावरण
अभ्यास
स्त हो
अभि-
रहने
जाते हैं
व-आव
।
हवाएं
ी ताप-
से हवा
चारों
तावरण
रती है
परत
तुत:शीत
ली तेज
ीजों से
सहने
रियों में
रीर में
मोटी
वरोधक
यां सर्दी
प्रकार
बालक
यक सह
स रोड
००३५
म्बिनी

राजनेता बेंजामिन डिजराइली

'मैं संसद के इतिहास को बदल दूंगा,' यह उद्‌घोषणा करनेवाला व्यक्ति एक यहूदी था। बात उस समय की है जब ब्रिटिश संसद के दरवाजे गैर-सामंती लोगों, रोमन कैथोलिकों और यहूदियों के लिए बंद थे। बावजूद इसके साधारण परिवार में जन्मे बेंजामिन डिजराइली ने ब्रिटिश संसद में प्रवेश कर इतिहास को बदल दिया। वे लगातार तीस वर्ष तक वेंकंसफील्ड के शेरिफ रहे और १९वीं सदी के महान राजनीतिज्ञों में गिने जाते रहे।

डिजराइली का जन्म लंदन के एक यहूदी परिवार में १८०४ में हुआ था। पढ़ाई खत्म करने के बाद उन्होंने पहले वकालत, फिर दलाली का काम किया; परंतु दोनों में ही उनका मन नहीं लगा। पिता की मदद से उन्होंने पत्रकारिता की दुनिया में प्रवेश किया। उन्होंने अपना एक समाचार-पत्र निकाला, लेकिन उसमें सफलता नहीं मिली। एक असफल पत्रकार ने उपन्यास लिखना शुरू किया। पहला उपन्यास था 'विवियन ग्रे' और दूसरा 'द यंग ड्यूक'। इन उपन्यासों ने लेखक के रूप में डिजराइली की धाक जमा दी। अपनी साहित्यिक यशध्वजा के साथ उन्होंने सीरिया, मिस्र, तुर्की और येरुशलम की यात्राएं कीं। उन्होंने अपने अगले उपन्यासों में अंतर्राष्ट्रीय राजनीतिक धाराओं का चित्रण किया।

उन्होंने दिन-रात मेहनत की। अंत में १८३७ में मिडस्टोन-क्षेत्र से टोरी दल के उम्मीदवार के रूप में संसद में उनका चुनाव हो गया। संसद में पहुंचते ही बेंजामिन ने देश की गरीब जनता के लिए संघर्ष किया। फलस्वरूप उन्हें मंत्रिमंडल में शामिल कर लिया गया और १८६२ में वे इंगलैंड के प्रधानमंत्री बन गये।

उन्होंने चुपचाप पता लगा लिया कि मिस्र का बादशाह आकंठ कर्ज में डूबा है। अतः अविलंब ४० करोड़ पौंड में स्वेज नहर खरीदकर उन्होंने अपने देश के लिए पूरब का रास्ता खोल दिया। ●

१० ...
नाओं ...
नाओं ...
लगाय ...
अंश ...
हुआ ...
के बी ...
झौता ...
से अ ...
के लि ...
लगा ...
जाते ...
झौता ...
तक इ ...
करोड़ ...

भारत-अमरीकी ...

• रामसहाय पांडेय

आधुनिक भारत के निर्माण में अमरीका का सहयोग अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। इस परस्पर मैत्रीपूर्ण सहयोग की शुरूआत सन १९५१ से हुई, जब भारत ने अमरीका से २० लाख टन गेहूं खरीदने का समझौता किया। इसके बाद तो कई समझौते हुए, जिनके अंतर्गत अमरीका से कृषि-संबंधी साज-सामान खरीदा गया और भारत को आत्मनिर्भर बनाने के लिए अनेक क्षेत्रों में अमरीका से आर्थिक और तकनीकी सहायता प्राप्त करने के समझौते किये गये। भारत में विकास के लिए जो भी योजनाएं चलायी गयीं, उनके लिए लगभग ८० प्रतिशत पूंजी देश के भीतर से ही उपलब्ध की जाती थी। इसके अतिरिक्त जितनी भी विदेशी सहायता की जरूरत होती थी, उसमें आधे से अधिक अमरीका ने दी। अमरीका द्वारा प्रदत्त कुल सहायता में से ९० प्रतिशत सहायता सरकारी क्षेत्र की योजनाओं के लिए और

१० प्रतिशत सहायता गैर-सरकारी योजनाओं के लिए दी गयी। देश की पांचों योजनाओं के अंतर्गत सरकारी क्षेत्र में जो पूंजी लगायी गयी उसका २५ प्रतिशत से अधिक अंश अमरीका से सहायता के रूप में प्राप्त हुआ। सन १९५६ में भारत और अमरीका के बीच पी. एल. ४८० के अंतर्गत समझौता हुआ था, जिसके अनुसार अमरीका से अनाज और कृषि-संबंधी अन्य आयात के लिए भुगतान रुपये में ही किया जाने लगा। ये रुपये भारत में ही जमा किये जाते रहे। इससे संबंधित आखिरी समझौता १ अप्रैल, १९७१ को हुआ। तब तक इस संबंध में दी गयी सहायता २,५५७ करोड़ रुपये तक पहुंच गयी थी।

बाद में भारत सरकार ने यह निर्णय किया कि अनाज-आयात में कोई उधार नहीं लिया जाया करेगा। तब पी. एल. ४८० कार्यक्रम के अंतर्गत राहत कार्यों में लगी हुई स्वयंसेवी संस्थाओं को अनुदान के रूप में अनाज दिया गया। १९५५ के बाद इस दिशा में जो सहायता प्राप्त हुई, वह ८८ करोड़ डालर से अधिक राशि की थी। करोड़ों टन गेहूं अमरीका से भारत आया। संयुक्त राष्ट्र संघ, विश्व स्वास्थ्य संगठन, कोलंबो योजना, विश्व बैंक से जो भी सहायता भारत को प्राप्त हुई, वह लगभग अमरीकी सहायता ही थी। इनमें से कोई भी संस्था अमरीकी सहायता के बिना नहीं चल सकती।

संबंधों का नया दौर
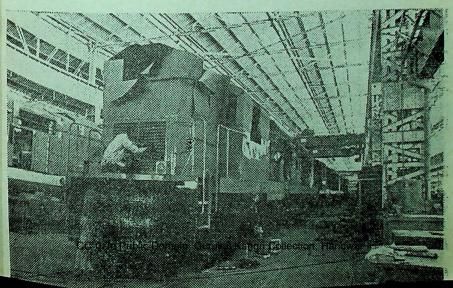
शिक्षा के प्रसार और विकास के लिए अमरीका ने २०० करोड़ रुपये से भी अधिक सहायता दी है। पी. एल. ४८० समझौते का जो रुपया भारत में जमा था, उसकी दो-तिहाई राशि भारत को अनुदान के रूप में दे दी गयी। अमरीकी खाते में जो एक-तिहाई राशि रहेगी, उस पर कोई ब्याज नहीं दिया जाएगा। अमरीका की सहायता से भारत में बीस उर्वरक कारखाने स्थापित किये गये। गांवों में बिजली पहुंचाने के लिए अमरीका ने २४४ करोड़ रुपये की सहायता दी। बीज की किस्में और खेती के नये तरीकों का विकास करने तथा पशु-सुधार के लिए १,४०० अमरीकी कृषि-विशेषज्ञों ने भारतीय कृषि-विशेषज्ञों के साथ मिलकर काम किया है।

उद्योगों के लिए मशीनी पुर्जे और कच्चा माल आयात करने के लिए भी भारत को अमरीकी सहायता प्राप्त हुई है। ३,००० से अधिक अमरीकी विशेषज्ञों और तकनीकी जानकारों ने विकास-कार्यों में भारत सरकार को सहायता दी। आवश्यक क्षेत्रों में प्रशिक्षण के लिए ६,००० से अधिक भारतीय अमरीका भेजे गये। जैसे-जैसे ये लोग प्रशिक्षण प्राप्त कर वापस आते रहे, उसी गति से भारत में अमरीकी विशेषज्ञों की संख्या कम की जाती रही। सन १९७३ में तकनीकी सहायता कार्यक्रम का समापन कर दिया गया।

सन १९४७ में जब भारत स्वतंत्र हुआ तब यह कहा गया कि यह विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र है। इसके पहले ही द्वितीय विश्व-युद्ध की समाप्ति के बाद नये राजनीतिक और सैनिक गठबंधन होने लग गये थे। सन १९४९ में चीन में कम्युनिस्ट सरकार कायम हुई तो विश्व दो बड़े गुटों में बट गया। एक का प्रमुख अमरीका बन गया और दूसरे गुट, अर्थात साम्यवादियों का नेता रूस को मान लिया गया।

भारत ने इनमें से किसी भी गुट में शामिल न होने का निर्णय किया। देश के नेता पं. जवाहरलाल नेहरू ने यूगोस्लाविया के मार्शल टीटो और मिस्र के जनरल नासिर से मिलकर विश्व के राजनीतिक रंगमंच पर गुटनिरपेक्षता का तत्वज्ञान प्रस्तुत किया। उस समय वाशिंगटन में जॉन फास्टर डलेस की तूती बोल रही थी। डलेस का दर्शन यह था कि जो देश उनके साथ नहीं हैं, वे उनके विरुद्ध हैं। किसी भी मामले में अगर रूस की ओर नाममात्र को भी झुका जाता, तो उसे अमरीका-विरोधी कार्य समझ लिया जाता। फिर साम्यवादी चीन को मान्यता देने और पं. नेहरू द्वारा कही गयी कुछ बातों से अमरीका अगर क्रुद्ध नहीं हुआ, तो अप्रसन्न अवश्य हो गया।

चीनी आक्रमण के बाद और नेहरू युग के अंत में अमरीका के प्रति भारत के रवैये में काफी परिवर्तन हुआ। पाकिस्तान को सैनिक सहायता देने के प्रश्न

पर तो भारत में बहुत ही आक्रोश फैला और अमरीका से विरोध प्रकट किया गया। उस समय के अमरीकी राष्ट्रपति आइजनहावर ने पं. नेहरू को आश्वासन दिया कि पाकिस्तान को दिये गये हथियार भारत के विरुद्ध प्रयोग में नहीं लाये जाएंगे, लेकिन १९६५ में जब भारत-पाक संघर्ष हुआ तब भारत के विरुद्ध अमरीकी हवाईजहाजों और टैंकों का खुलकर प्रयोग हुआ। उससे पूर्व कच्छ में भी पाकिस्तान ने भारत के विरुद्ध उनका प्रयोग किया।

भारत सरकार ने अमरीकी सरकार के पास विरोध-पत्र भेजा, लेकिन इसका कुछ उपचार करने के स्थान पर अमरीका ने भारत (जिस पर आक्रमण किया गया था) और पाकिस्तान (जिसने आक्रमण किया था)—दोनों को समान दर्जा दे दिया। कहा गया कि अमरीका का उद्देश्य युद्ध को समाप्त कराना था। भारत और पाकिस्तान को हर तरह की सैनिक सहायता बंद कर दी गयी और यह निर्णय किया गया कि शांति स्थापित होने तक अमरीका की ओर से दोनों देशों को कोई आर्थिक सहायता नहीं दी जाएगी। मार्च, १९६६ में श्रीमती इंदिरा गांधी अमरीका गयीं, तब कुछ गलतफहमियां दूर हो गयीं।

बंगला देश के निर्माण के बाद डॉ. हेनरी किसिंजर ने यह कहना आरंभ किया कि पुरानी बातें भूलकर दोनों देशों को पारस्परिक संबंध मधुर

ज्ञान-गंगा

यथा चतुर्भिः कनकं परीक्ष्यते
निघर्षणच्छेदनतापताडनैः।
तथा चतुर्भिः पुरुषः परीक्ष्यते
त्यागेन शीलेन गुणेन कर्मणा॥

—जैसे घिसने, काटने, तपाने और कूटने से सुवर्ण की परीक्षा होती है, उसी प्रकार त्याग, शील, गुण और कार्य से पुरुष की परीक्षा होती है।

प्रस्ताव सदृशं वाक्यं स्वभाव सदृशं प्रियम्।
आत्मशक्तिसमं कोपं यो जानाति स पंडितः॥

—जो मनुष्य प्रसंग के अनुसार बोलना, स्वभाव से ही प्रिय बोलना और अपनी शक्ति के अनुसार क्रोध करना जानता है वही विद्वान है।

अनुगंतुं सतां वर्त्म कृत्स्नं यदि न शक्यते।
स्वल्पमप्यनुगंतव्यं मार्गस्थो नावसीदति॥

—सदा सत्पुरुषों के बताये हुए मार्ग पर चलना चाहिए। यदि अच्छी तरह चलने की शक्ति न हो तो थोड़ा ही चलें। इस प्रकार के मार्ग पर चलनेवाला दुःख नहीं उठाता।

आत्मार्थं जीवलोकेऽस्मिन् को न जीवति मानवः।
परं परोपकारार्थं यो जीवति स जीवति॥

—इस संसार में अपने ही सुख के लिए सभी जीते हैं। लेकिन जो परोपकार के लिए जीता है, सचमुच वही जीता है।

—प्रस्तोता : ब्रह्मदत्त शर्मा

बनाना चाहिए। सन १९७२ के अंत तक दोनों ओर से कुछ अच्छे संकेत भी मिले। वियतनाम में अमरीकी नीति, पाकिस्तान को सैनिक सहायता और बंगला देश में स्वाधीनता-संग्राम के समय अमरीका की उदासीनता—इन कारणों से दोनों देशों के संबंध तनावपूर्ण थे। कहा गया कि इन बातों को भूलकर दोनों देशों के संबंध सामान्य बनाये जाने चाहिए। इस बात को नहीं भूलना चाहिए कि दोनों के कुछ सामान्य आदर्श हैं और दोनों को एक दूसरे की आवश्यकता है। ...लेकिन पुनः एक नन्हा-सा द्वीप दिएगो गार्शिया, जो हिंद महासागर में स्थित है और २५ किलोमीटर लंबा तथा १० किलोमीटर चौड़ा है, भारत-अमरीकी संबंधों को विगाड़ने का कारण बन गया। इस बारे में तनाव चल ही रहा था कि अमरीकी विदेश मंत्री २७ से ३० अक्तूबर, १९७४ तक की भारत-यात्रा पर आये। भारतीय नेताओं से बातचीत करते हुए उन्होंने संकेत दिया कि अमरीका विश्व में गुट-निरपेक्षता की ठोस भूमिका को स्वीकार करता है, उसे यह बात भी स्वीकार है कि भारत के राष्ट्रीय हितों तथा एशिया में शांति, विकास और स्थिरता के लिए उसका बहुत महत्व है। दिएगो गार्शिया तथा हिंद महासागर को शांति-क्षेत्र बनाये रखने से संबंधित सरकार के विचार भी उन्हें बताये गये। अमरीकी विदेश मंत्री ने यह भी माना कि अमरीका शांति तथा मैत्री की भारत-रूस संधि को अमरीका के साथ संबंध सुधारने में बाधा नहीं मानता।

डॉ. किसिंजर के आगमन का परिणाम यह हुआ कि भारत-अमरीकी आयोग की स्थापना की गयी। आयोग को यह काम सौंपा गया कि वह इस बात पर विचार करे कि दोनों देशों के संबंध कैसे मजबूत और मैत्रीपूर्ण बनाये जाएं। हर व्यक्ति कहने लग गया कि डॉ. किसिंजर बड़े जादूगर हैं और उन्होंने भारत-अमरीकी संबंधों का नया युग आरंभ कर दिया है।

भारत की स्थिति बड़ी स्पष्ट है कि वह अपने आंतरिक मामलों में किसी भी विदेशी शक्ति का हस्तक्षेप सहन नहीं करेगा, अपनी स्वतंत्रता को हर कीमत पर कायम रखेगा, किसी गुट में शामिल नहीं होगा, न किसी को डरायेगा और न ही किसी से डरेगा। सबसे दोस्ती भारत की विदेशनीति का सार है। प्रधानमंत्री ने इस नीति का बहुत ही सुंदर स्पष्टीकरण किया है, "जहां दोस्ती है, वहां दोस्ती बढ़ानी होगी। जहां उदासीनता है, वहां हमें उदासीनता दूर करनी होगी और जहां दुश्मनी है, वहां दुश्मनी को कम करने की कोशिश करनी होगी।" इस नीति के अनुरूप ही मतभेद होते हुए भी विदेशमंत्री श्री यशवन्तराव चव्हाण भारत-अमरीकी संयुक्त आयोग में भाग लेने के लिए वाशिंगटन चले गये।

उन्होंने बताया कि पाकिस्तान को हथियारों की सप्लाई तथा दिएगो गार्शिया के प्रश्नों पर मतभेद होते हुए भी दोनों देश अपने संबंधों को परिपक्व आधार प्रदान कर अधिक व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाने के पक्ष में हैं। दोनों ही यह चाहते हैं कि परस्पर सहयोग बढ़े। अमरीकी विदेश-मंत्री ने भी इस बात को दोहराया कि अमरीका भारत के साथ सहयोग तथा उपमहाद्वीप में सामान्यीकरण की प्रक्रिया का समर्थन जारी रखना चाहता है। श्री चव्हाण ने यह भी बताया कि राष्ट्रपति फोर्ड से भेंट होने पर फोर्ड ने कहा था कि भारत की आपातकालीन स्थिति पर उन्होंने कुछ समय पूर्व जो वक्तव्य दिया था, उसका उद्देश्य भारत को नाराज करना नहीं था। श्री फोर्ड ने भारतीय विदेश-मंत्री को यह भी बताया कि वे भारत की यात्रा और प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी से

लेखक

भेंट करने को उत्सुक हैं, समय मिलने पर वे भारत की यात्रा करेंगे।

भारत-अमरीकी संयुक्त आयोग की बैठक में एक महत्त्वपूर्ण निश्चय यह किया गया कि दोनों देशों में व्यापार और उद्योगों में पूंजी-विनियोग को बढ़ाने के लिए एक संयुक्त उद्योग व्यापार परिषद का गठन किया जाए। साथ ही यह भी निर्णय

अमरीकी शोधार्थी रोना रैंडल ब्राउन एक तमिल परिवार के साथ बातचीत में व्यस्त

किया गया कि परस्पर व्यापार में दोहरे कर से बचने के लिए द्विपक्षीय कर-संधि करने पर वार्त्ता की जाए। इस बारे में महत्त्वपूर्ण बात यह है कि परिषद में सरकारी क्षेत्र के उद्योग भी भाग ले सकेंगे। दोनों पक्षों की बातचीत के बाद एक संयुक्त विज्ञप्ति में भारत और अमरीका में व्यापार, विनियोग, विज्ञान, टेक्नालॉजी शिक्षा और संस्कृति के क्षेत्रों में परस्पर सहयोग की रूपरेखा भी प्रस्तुत की गयी।

कहा गया कि आर्थिक और व्यापारिक क्षेत्र में सहयोग के अंतर्गत दोनों देशों के बीच व्यापार में वृद्धि का निश्चय किया गया है। भारत से अमरीका को तैयार माल और आधुनिक औद्योगिक मशीनों के अधिक निर्यात तथा अमरीका के उच्च-स्तरीय टेक्नालॉजिकल उपकरणों के आयात से इस उद्देश्य को पूरा किया जाना चाहिए। यह भी तय हुआ कि भारतीय और अमरीकी फर्में मिलकर तीसरे देश में संयुक्त उपक्रम भी कर सकेंगी।

पारस्परिक हित के लिए खाद्य और बीजों पर बातचीत जारी रखने का फैसला किया गया। दोनों देशों के संयुक्त कृषि कार्यकारी दल ने सिफारिश की थी कि खाद के उपयोग पर अंतर्राष्ट्रीय गोष्ठी आयोजित की जाए और दोनों देश मिलकर तीसरे देश में खाद्य कारखाने लगायें तथा अनुसंधान करें। विज्ञान और टेक्नालॉजी के क्षेत्र में अब तक सपन्न २० संयुक्त परि[योजनाओं] की पुष्टि करते हुए आयोग ने यह मत व्यक्त किया कि दोनों देश इस बात पर संतुष्ट हैं कि गत १५ वर्षों में इस दिशा में काफी अनुसंधान हुआ है और इससे दोनों का ही हित हुआ है। शिक्षा और संस्कृति के क्षेत्र में भी सहयोग का विस्तार होगा और इस संबंध में अमरीका और भारत में गोष्ठियां होंगी।

हमारे विदेश-मंत्री का कहना है कि मतभेदों के बावजूद दोनों देश पारस्परिक संबंधों को अधिक व्यावहारिक आधार प्रदान करने के इच्छुक हैं। ऐसा प्रथम बार नहीं हुआ है जब दोनों सरकारों ने एक-दूसरे के प्रति ऐसी सद्भावना व्यक्त की है। आज हमें व्यापार की आवश्यकता है, अमरीका को उस पर कोई आपत्ति न होगी, लेकिन वास्तविक प्रश्न यह है कि क्या दोनों देशों ने एक-दूसरे के राजनीतिक उद्देश्यों को समझ लिया है?

यह स्पष्ट है कि यदि पाकिस्तान को हथियार न दिये जाएं तो इस उपमहाद्वीप में शांति की संभावनाएं काफी बढ़ जाएंगी, साथ ही अमरीका और भारत भी एक-दूसरे के काफी निकट आ जाएंगे। अमरीका में ऐसे लोगों की कमी नहीं है जिनके हृदय में भारत के लिए स्नेह और मैत्री की भावना है। आवश्यकता इस बात की है कि इस भावना को और अधिक बढ़ाया जाए।

—१४, तालकटोरा रोड, नयी दिल्ली-१

कहानी

• दीप्ति खंडेलवाल

वे तीन थे—एक मर्द, एक औरत, एक बच्चा। बच्चा तो खैर अभी चौपायों की श्रेणी में था, घुटनों के बल चलता था, कभी-कभी खड़ा हो जाता था, बोलता नहीं था। किंतु नहीं, मैं शायद गलत कह रही हूं। यदि बच्चा चौपाया था तो वह गेंदे के उस फूल को देखकर कैसे हंस सकता था जो उस ऊबड़-खाबड़, तीन-चार गज के आंगन में, बिना चाहे खिल आया था। बच्चा जब-तब गेंदे के उस फूल को देखकर किलकता था और तब लगता था वह इनसान है, वरना कुत्ते-बिल्ली तो गेंदे को देखकर नहीं किलकते न! फूल और इनसान के बीच जो अनाम रिश्ता होता है, वह शायद आदमी की पहचान है।

अभी-अभी घुटनों के बल थिरकते उस बच्चे ने गड़गड़ाहट की आवाज सुनकर आकाश की ओर देखा है और बैठकर तालियां पीटने लगा है। बच्चा

निश्चय ही इंसान है। वह हवाई जहाज को देखकर ही नहीं, चांद को देखकर भी ताली पीटता है। चांद और आदमी के बीच भी जो रिश्ता है, वह भेड़िये या भालू का और चांद का नहीं हो सकता।

हां, धीरे-धीरे, फूल और चांद का यह रिश्ता आदमी के भीतर मरता जाता है या निस्पंद होता जाता है, जैसे उस मर्द के भीतर हो गया है। बच्चा गेंदे के फूल या चांद को देखकर चाहे जितना किलके, वह आदमी—उस बच्चे का बाप—निस्पंद बना रहता है। वह उस फूल को देखकर भी नहीं देखता।

और वह औरत . . . अभी तीस की तो नहीं होगी, लेकिन उसकी दृष्टि सूनी हो चुकी है। मर्द उसका पति है, बच्चा उसका बेटा। वह एक औरत है, एक पत्नी, एक मां! या वह केवल एक मादा है। जब भी मैंने कहीं कोई मरियल लावारिस कुतिया देखी है, मुझे वह औरत याद आ गयी है। कुतिया और औरत में बहुत फर्क होता है . . . फिर क्यों ऐसा होता है कि कोई औरत उस फर्क को मिटाकर केवल भौंकती भटकती रह जाती है।

वह भौंकने लगी थी।

हुआ सिर्फ यह था कि हवाई जहाज को देखकर ताली पीटते बच्चे ने बाप को पकड़ लिया था, यानी कि उससे लिपट गया था। बाप ने चिड़चिड़ाकर उसे ढकेल दिया था। बच्चा लुढ़क गया था और रोने लगा था। तब बाप को समझ में आया था कि शायद कुछ गलत हो गया है, कुछ चोट लगने-जैसा। अभी शायद उसमें चोट का अहसास बाकी था और यह अहसास भी कि बच्चा उसका है। उसने उठकर बच्चे को उठाया और औरत के पास ले जाकर धीरे-से पटक दिया। 'इसे दूध पिला दे!' उसने गुर्रा कर कहा।

औरत टांग फैलाये बैठी सूप में चावल बीन रही थी। "काए पिलाऊं? मरा मेरा ही खून पीने को है।" उसने जैसे भौंककर कहा।

"पिलाती है या लगाऊं लात!" मर्द की, काले चेहरे पर जड़ी कौड़ियों-सी आंखें भयानक हो गयीं।

बच्चा रोये जा रहा था। मर्द की

आंखें भयानक हो उठी थीं और औरत हाथ नचा-नचाकर मर्द की तीन पुश्तों को गालियां देने लगी थी। मर्द ने जैसे परास्त होकर उसे एक लात जड़ दी और लौटकर आंगन में वैसे ही बैठ गया जैसे पहले बैठा था। औरत चीखती-चिल्लाती चुप हो गयी। सहसा उसे याद आया—उसे चावल रांधने हैं, 'हरामी लौटेगा न, तभी जाएगा।' वह उठकर चूल्हा जलाने लगी। लकड़ियों के धुएं से वह छोटा-सा आंगन भर गया था।

वह नाली पर बैठकर नहाने लगा। टूटे अल्युमीनियम के लोटे से दो-चार लोटे पानी उंडेलकर वह उठा। गीला गमछा कमर से खोलकर निचोड़कर बदन पोंछा फिर बांध लिया। भूख लगने लगी थी।

"ला, खाना दे।" वह फिर गुर्राया।

"ठैर, देती हूं।" चूल्हे की आग-सी ही जलती आंखों से उसे देखती, वह उठी। अंधेरी-सी कोठरी के भीतर घुसी, निकली। उसके हाथ में हंडिया थी, हंडिया में कल की बची दाल। भीतर छींके पर रख दी थी कि ठंडक में खराब न हो।

अल्युमीनियम की कोना-टूटी थाली में भात परोसकर, उस पर हंडिया से दाल उंडेलती वह फिर भौंकने लगी, "हरामी, मेरा हाड़ चबाकर जाएगा, फिर दारू पीकर लौटेगा। राच्छस! रोज मेरा खून पीवे है ।"

"अब चुप करती है या नहीं या फिर दूं दो-चार हाथ . . ." जल्दी-जल्दी दाल-भात के बड़े-बड़े कौर ठूंसता वह चीखा।

"अब छूकर तो देख, तेरे बाप का इजारा है?" वह जूड़ा खोलने, बांधने लगी।

'अपने लिए रख लिया?' वह लोटा उठाकर गटगट पानी पीने लगा था।

"जैसे तुझे बड़ी फिकर है। अरे मार के तो खा गया मुझे . . .!"

"अब कल का जुगाड़ कर। एक दाना नहीं है।" वह हांफने लगी थी।

"कर लूंगा।" वह जैसे परास्त हो गया था। एक अजीब-सी बात उसके मन में आयी थी—आखिर यह भूख रोज क्यों लगती है? यदि उसे ईश्वर से कुछ मांगने का हक हो तो वह सिर्फ इतना मांगे कि यह भूख न लगे। वह बहुत डरता है इस भूख से। जैसे रात-दिन उसके अंदर कोई भट्टी-सी जला करती है और वह भस्म होता रहता है। आज खाना मिल जाता है तो वह कल से डरता रहता है कि कल क्या होगा। अरे, मजूरी

मिली, न मिली। और, मोटा-झोटा अन्न तक डेढ़-दो रुपया किलो मिलता है। रुपया, रोटी, भूख . . . रुपया, . . . रोटी, भूख . . . इस चक्कर में सामने बैठी फूला उसे दिखायी नहीं पड़ती . . . शायद फूला को भी वह दिखायी नहीं पड़ता। उसे कुछ समझ में नहीं आता। वह फिर आकाश की ओर देखता है। आकाश में उसके लिए कुछ नहीं है।

वह उसी अंधेरी कोठरी में घुसता है। जांघिया और बंडी पहनकर निकलता है। जांघिया और बंडी में कई थेगलियां लगी हुई हैं। थेगलियां लगे वे कपड़े इतने चीकट मैले भी हैं कि अभी उन्हें पहनते उसे भी घिन आयी थी। वह उस घिन को पी गया था, ऐसे ही जैसे वह रात-दिन अपने भीतर उठते गुबारों को पिया करता है। वर्षों से उसका कोई दिन, कोई क्षण अच्छा नहीं बीता, फिर भी वह इस क्षण सोच रहा है कि शायद आज कुछ अच्छा हो। दूसरे ही क्षण वह स्वयं को गाली देता है,'अरे,अच्छा क्या होगा साले!'

वह चलने लगा है। सहसा रुकता है, "ए री सुन!"

वह घुटनों से सिर उठाती है।

"तेरे पास कुछ पैसे हैं?" वह कातर हो उठा है, जैसे याचना कर रहा हो।

"हां, हां गड़े हैं मेरे पास पैसे, तूने कमा-कमाकर दिये हैं न! कित्ती बार कहा कि मुझे भी नौकरी कर लेने दे तो निगोड़ा गढ़ा तो भरता रहे . . ."

वह
पेट पर
हाथ मारती
है, "लेकिन तू
तो तहसीलदार है,
मेहरिया को काम नहीं
करने देगा . . . भूखा
मरेगा, मेरा खून पियेगा,
राच्छस!"

"फिर साली ने नौकरी का नाम लिया . . . इज्जत देगी? हाथ-गोड़ काटकर चूल्हे में झोंक दूंगा . . . समझी!" वह उस पर झपटता है, "निकाल पैसे . . . निकाल . . ." उसने उसका झोंटा पकड़ लिया है।

'ले, ले जा नासपीटे, और अपनी अम्मा का खून पी आ . . .' वह अंटी में से अठन्नी निकालकर फेंक देती है।

उसका नाम माधो है।

फूला को छोड़कर अठन्नी
उठाता वह फिर कातर हो
आता है, "अरी तू
नहीं समझती कैसी
प्यास लगती है,
कैसी भट्टी
ज ल ती
है . . .

इहां . . ." वह सीने पर हाथ रखकर बताता है ।

फूला दीवार पर सिर पटकने लगी है, "तू मेरी मट्टी को समझता है ? मेरे भी परानन में आग लगी रहती है . . ."

वह दौड़कर बाहर निकल जाता है । मुड़कर नहीं देखता । फूला जोर-जोर से रोती दरवाजे तक आती है ।

इस चीख-पुकार से बच्चा जाग उठा है । रिरियाता रो रहा है । 'तू भी मर जा अभागे, जैसे चार-चार मर गये ..." वह लौटकर बच्चे के मुंह में स्तन दे देती है । बच्चा चुप हो जाता है । वह दीवार से टेक लगाकर बैठी आकाश को देखने लगी है ... उसकी सूनी दृष्टि और सूने आकाश के बीच कहीं कुछ नहीं है... 'हे परभू' एक दीर्घ श्वास लेती वह पलकें मूंद लेती है ।

उसकी पलकों में कोई इंद्रजाल नहीं है . . . । ऐसे अनेक दृश्य मैंने अपने बाथरूम की खिड़की से देखे हैं और मैं अपनी पलकों के रेशमी इंद्रजाल से फूला की सूनी, भयावह, कफन ओढ़े आंखों की दूरी नापती रह गयी हूं । वह भी एक औरत है, जैसी मैं हूं । मेरे अरुणिम कपोलों पर मेरी घनी श्यामल पलकें इंद्रजाल रचा करती हैं . . . राकेश उस इंद्रजाल को चूम लिया करते हैं . . . । मेरी सांस सुगंधित है . . . राकेश इस सुगंधित सांस को पी लिया करते हैं . . . । मेरे अंगों में सौंदर्य है, मेरे प्राणों में संगीत है . . . । सौंदर्य, सौरभ और संगीत के अहसास मेरे जीवन के पर्याय हैं । किंतु फूला के सम्मुख मेरे जीवन के पर्याय झूठे पड़ने लगते हैं ... फूला मुझे वास्तविक जिंदगी का पर्याय लगती है . . . नागफनी के कांटों-सी जिंदगी का . . . घावों-सी रिसती जिंदगी का . . . भूख का . . . प्यास का . . . जिंदगी के वीभत्स, कुत्सित, कुरूप यथार्थ का ।

हां, यह यथार्थ एक बहुत बड़ा सच है । एक बहुत बड़े हिस्से का सच । कहीं मैं फूला होती . . . सोचती मैं कांपने लगती हूं . . . । फूला में और मुझमें क्या अंतर है . . . ? स्थितियों का ही न, जिन्हें नियति का नाम भी दिया जा सकता है . . . यह नियति मेरी भी हो सकती थी . . . पलकों के इंद्रजाल

के परे फूला की किसी अस्थिपंजर कंकाल की-सी खोखली आंखों के प्रेत मुझे 'हांट' करने लगे हैं।

फूला को देखती मैं आत्मविस्मृत होने लगती हूं। फूला का वह गंदा आंगन नीले प्रकाश के आभा-लोक में परिवर्तित हो जाता है . . . फूला की देह से एक छायाकृति उठती है . . . फूला की फूलों की लता-सी, नारी की शाश्वत चेतना, जिसके अंगों में लावण्य है, जिसके ओठों में संगीत है . . . उसके पगों में चपलता है . . . उनमें बंधे घुंघरुओं में जीवन नाचने के लिए मचल रहा है . . . माधो की छायाकृति दूर से उन्मत्त-सी दौड़ती आती है . . . पुरुष की आदिम चेतना . . . जिसकी भुजाओं में सामर्थ्य है . . . जिसकी आंखों में कामना . . . फूला की कामना . . . फूलों-सी जिंदगी की कामना . . . ! माधो की फैली उन्मत्त भुजाओं में फूला समा जाती है, वे आलिंगनबद्ध हो जाते हैं . . . आकाश से रस बरसता है . . . धरती रस से नहा जाती है . . .। सहसा वह नीले प्रकाश का आभा-लोक रंग बदलने लगता है . . . वहां स्याह अंधेरे घिरने लगते हैं . . . कड़वा कसैला धुआं भर जाता है . . . चिताएं जलने लगती हैं . . . खोपड़ियां चिटकने लगती है . . . विरूपताओं के भयावह प्रेत नाचने लगते हैं . . . वह आभा-लोक श्मशान बन जाता है . . . मंडराते कौओं और गिद्धों का श्मशान . . . जलती देहों और मरती आत्माओं का श्मशान। इस श्मशान के प्रेतों के बीच खड़े फूला और माधो भी प्रेत हो उठे हैं . . . जीते-जागते प्रेत . . . भूख और प्यास के गिद्धों ने उनके शरीर का सारा मांस नोच लिया है . . . वे कंकाल मात्र रह गये हैं और अब एक दूसरे को नोच रहे हैं . . . मेरी मूंदी आंखें पूरी खुल जाती हैं। आह! सामने खड़े फूला और माधो पशु बन गये हैं या बना दिये गये हैं? मेरे भीतर एक चीत्कार उठता है। मेरे भीतर प्रश्न सिर पटकते हैं। फूला और माधो जिस तपती, कंटीली, पथरीली जमीन पर खड़े हैं वहां से नीले प्रकाश में नहाये किसी कक्ष के मखमली कार्पेट पर खड़े मैं और राकेश कितने दूर हैं . . . मान लो यह दूरी मिट जाए . . . अर्थात हमारी जमीन बदल जाए तो . . . तो क्या मैं, फूला और राकेश, माधो नहीं हो उठेंगे ? भूख और प्यास के ठोस, छटपटाते, दम तोड़ते यथार्थ के सम्मुख मुझे वायवी संवेदनाओं के स्पंदित अहसास झूठे लगने लगे हैं। संबंधों के रेशमी पाश झूठे लगने लगे हैं। सारे इंद्रजाल झूठे लगने लगे हैं।

उस रात राकेश ने मेरा साथ चाहा था। मैं अस्वस्थ थी। मेरे विवशता प्रकट करने पर राकेश मझे एक कोमल चुंबन देकर सो गये थे। शयनकक्ष का नीला प्रकाश उस कोमल चुंबन से बहुत खूबसूरत हो गया था! एक तृप्ति में भीगती

मैं बाथरूम में गयी . . . बाहर शायद पूर्णिमा की रात थी . . . चांदनी पूरी तरह खिली हुई थी . . . धरती से आसमान तक सब कुछ उज्ज्वल था। सहसा नजर नीचे गयी। टाट के टुकड़े पर सोयी पड़ी फूला को वह जगा रहा था।

"अरे नहीं रे . . ." फूला का स्वर एक आर्तनाद-सा लगा। मैंने देखा, वह आंखें बंदकर फूला पर ढह पड़ा था। उज्ज्वल चांदनी में, उनके काले, कुरूप शरीर एक हो गये थे . . . और हवा में जैसे एक आर्तनाद ठहर गया था। चांदनी में फूला का वह आर्तनाद "अरे नहीं रे" . . . और उसका वह ढहना जिस त्रासदी की सृष्टि कर गये थे . . . वह मुझे रुला गया था। फिर देर तक हवाओं में वह आर्तनाद ठहरा रहा . . .! और मुझे लगता रहा, जैसे वह काला, कुरूप, कौड़ियों-सी आंखोंवाला सिसक-सिसककर कह रहा हो, "अरे, बड़ी प्यास लगती है . . . भट्टी-सी जलती है . . . इहां . . ." और उसने अपने सीने पर हाथ रख लिया हो . . . और सचमुच भट्टी जलने लगी हो . . . और वह उसमें जलने लगा हो . . . जिंदा जलने लगा हो . . . उज्ज्वल चांदनी मुझे धधकती भट्टी-सी दिखायी दे रही थी . . . मेरी आंखों से अविरल अश्रु वह रहे थे।

शावरबाथ लेकर मैं बाथरूम की खिड़की पर खड़ी हूं। शैंपू की सुगंध मेरी देह की सुगंध से मिलकर एक हुई जा रही है। मेरे पैरों के नीचे सफेद टाइल्स के बाथरूम का फर्श जगमगा रहा है। मेरे मोहक अंग रेशमी गाउन में लिपटे हैं। घुंघराली अलकों से लेकर रेशमी पलकों तक मेरा अस्तित्व सुगंध और सौंदर्य से सराबोर है . . . मैं गुनगुना रही हूं, प्रणय का कोई मीठा गीत, जो मेरे गुलाबी होंठों से लेकर मेरी इंद्रधनुषी आत्मा तक ध्वनित है।

मैं नीचे देखती हूं। फूला भी नहा रही है। ईंट के एक टुकड़े से हाथ-पैर मलती वह भीं गुनगुना रही है—'अरे जर जाए तेरी लंबरदारी कुरती सिलवा दे टुइल की . . . !' फूला के पास फटी-पुरानी एक ही कुरती है, फूला के पास फटी पुरानी साड़ी भी एक ही है। फूला नहाकर उठती है। अब पहनने के लिए कुछ भी नहीं है। अपनी एकमात्र साड़ी, कुरती वह धोकर सूखने डाल चुकी है। फूला के पास नहाये बदन को पोंछने के लिए गमछा भी नहीं है।

सहसा वह ऊपर देखती है। मुझे खिड़की पर खड़ी देख लेती है। सकुचाती नहीं, चीखकर कहती है, 'अरे, अंदर जाओ मेमसाब, हमें क्या देख रही हो? हम भी तुम-जैसी हैं।"

फूला एक बहुत बड़ा सच कह गयी है। यही तो मैं भी सोचा करती हूं कि फूला मुझ-जैसी है . . . मैं हटती नहीं, वैसी ही खड़ी रहती हूं। फूला उठ खड़ी होती है। आंखें नचाकर, हाथ मटकाकर

जोर से चीखती है, 'आय हाय रे अनार-कली!'

फूला ने फिर एक सच कहा है—मैं अनारकली ही तो हूं। सौंदर्य और प्रेम की, कोमल और मधुर की अनारकली! किंतु यदि हमारी जमीन बदल जाए तो . . . मेरे पैरों के नीचे टाइल्स का यह बाथरूम नहीं, दो-तीन गज का वह ऊबड़-खाबड़, गंदा, नंगा आंगन हो तो . . . तो क्या अनारकली फूला नहीं बन उठेगी? रेशमी गाउन में लिपटी मैं, और साड़ी सूखने के इंतजार में अनावृत वह . . . ! फूला मेरे सम्मुख जिंदगी के विद्रूप-सी खड़ी थी . . .

फूला बैठकर बच्चे को दूध पिलाने लगी थी। बच्चे के लिए शायद मां की निर्वसन देह एक स्वाभाविकता थी या शायद वह अभी इतना छोटा था कि उसमें कपड़ों की चेतना ही नहीं जगी थी। वह मां की नंगी छातियों पर मुंह मार रहा था। फूला उसे थपकती गा रही थी, "आ जा री निंदिया आ जा, मेरे कन्हैया की आंखों में आ जा. . . " उस काले-कलूटे, घिनौने कन्हैया को दूध पिलाती उस निर्वसन यशोदा मां को देखती मेरी आंखें नम होने लगी थीं।

साड़ी सूख गयी थी। धुली साड़ी लपेटते फूला पल-भर के लिए अपने अंगों पर दृष्टिपात करते लजाती-सी लगी। अब वह लजा सकती थी, साड़ी सूख गयी थी न। निर्वसनता यदि एक विवशता ही उठे, तो लजाने की गुंजाइश भी कहां रहती है! मेरे वार्डरोब में यदि इतनी साड़ियां न भरी होतीं, तो मेरे कपोलों पर इतना कुंकुम न बिखरता होता।

"आज मुझे क्लब जाना है। राकेश कह गये हैं, 'आज मिस्टर माथुर के साथ तुम्हें डांस करना है। खयाल रखना। माथुर से टेंडर पास करवाना है . . .' जब झुककर, मुझे बांहों से घेरकर यह सब कह रहे थे तब मेरे कानों में बज रहा था, "फिर साली ने नौकरी का नाम लिया . . . इज्जत देगी? हाथ-गोड़ काटकर चूल्हे में झोंक दूंगा . . .समझी हरामजादी . . ."

पूरी तरह सज-संवरकर, तैयार होकर मैं बाथरूम में जाती हूं, केवल एक नजर नीचे देख लेने के लिए। रात के नौ बज रहे हैं, शायद आज अमावस की रात है। बाहर घना अंधेरा है। फूला के आंगन में, ओखली पर रखी ढिबरी जल रही है। दरवाजा खटकता है। फूला दौड़ती-सी आकर दरवाजा खोलती है, "आ गया रे हरामी! फिर चढ़ा आया. . ."

"हां फिर चढ़ा आया, तेरे बाप का इजारा है क्या. . ." हिचकी लेता वह कै करने लगता है। टिमटिमाती ढिबरी भी बुझ गयी है। शायद उसमें तेल नहीं बचा है। माधो लुढ़ककर ढेर हो गया है। फूला चुप है।

उन्हें घेरे अंधेरे खामोश हैं!

—न्यू रीडर्स क्वार्टर्स नं. १९, उसमानिया यूनीवर्सिटी, हैदराबाद—७ (आं. प्र.)

चित्र : १

चीनी मानचित्र, ११३० ई.

चित्र : ४

रोमंस का औरबियस टैरारम मानचित्र
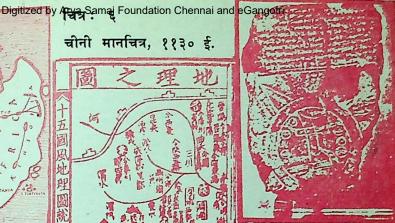
चित्र : २

मिट्टी पटल मानचित्र, अक्कद ईसा से २,३०० वर्ष पूर्व

नक्शों की कहानी

• निरंजन मिश्र

टिंबकटू किधर है ?— पूछा एक यात्री ने, जो सहारा के विशाल मरुस्थल में भटककर अहगर नामक स्थान पर आ पहुंचा था ।

जवाब नदारद ! हाथों का इशारा भी नहीं ! बहरहाल, थोड़ा झुका जरूर सामने खड़ा बूढ़ा अरब । पहले उसने जमीन पर कंकड़ बिछाये, फिर उनके ऊपर रेत की एक पतली-लंबी लकीर और बीच-बीच में कहीं-कहीं चौरस पत्थर। यात्री को जवाब मिल गया अपने सवाल का। उसके सामने उस क्षेत्र का धरातलीय चित्र प्रस्तुत था। कंकड़ों द्वारा सहारा की धरातलीय प्रकृति, रेत की पतली लाइन द्वारा रेतीले टीबों की श्रृंखला और चौरस पत्थरों द्वारा पथरीले पठारी भाग दिखाये गये थे। मानचित्र-

ऊपर बायें चित्र---५ रोमंस का प्यूटिंगर टेबुल मानचित्र, चौथी शताब्दी
ऊपर चित्र---९ जान फास्टर का न्यू इंगलैंड का मानचित्र, १६७७ ई.
नीचे बायें चित्र---१ मिट्टी-पटल मानचित्र, २,५०० ई. पू.

कला (कार्टोग्राफी) की भाषा ने यात्री को जितना बता दिया उतना शायद हजारों शब्द भी न बता पाते।

मानचित्र अभिव्यक्ति का सबसे पुराना साधन रहा है। अगर यह सोचा जाए कि इतिहास की वास्तविक शुरूआत तब से हुई जब से आदमी ने लिखना सीखा, तो कहा जा सकता है कि मानचित्रों का इतिहास स्वयं इतिहास से भी पुराना है। अन्वेषकों ने अपने अनुभवों के आधार पर बताया है कि दुनिया के अनेक भागों में उन्हें ऐसे लोग मिले जो लिखना तो नहीं जानते थे, पर नक्शा बनाने में कुशल थे। मार्शल द्वीप के निवासी ताड़ की पतली-पतली टहनियों को जोड़कर एक फ्रेम-जैसा बनाते थे और टहनियों के सहारे इस फ्रेम में कहीं-कहीं छोटे-छोटे गोले जुड़े रहते। बहुत दिनों तक नृतत्व-शास्त्री चक्कर में पड़े रहे, फिर समझ पाये कि टहनियां रास्तों और गोले द्वीपों

के
तथ
दाय
रहे
झोग
पट
नक्
नहीं
तल
आर
से
गा-
में
नक्
नक्
विच
में
२,५
इस

के द्योतक हैं। एस्कीमोज, रेड इंडियंस तथा एजटैक्स आदि अविकसित समुदायों के लोग भी इस कला में निपुण रहे हैं।

प्रारंभ में संभवतः यह रिवाज रहा होगा कि जैसे ही आवश्यकता पड़ी, झटपट जमीन पर नक्शा बना दिया। ऐसे नक्शों के स्थायित्व का कोई प्रश्न ही नहीं था। बाद में चिकनी मिट्टी के चौरस तल पर नक्शे बनाये जाने लगे। इन्हें आग में पका लिया जाता था। बेबीलोन से लगभग २०० मील उत्तर में स्थित गा-सूर नामक प्राचीन नगर के खंडहरों में से मिट्टी-पटल पर बना एक छोटा-सा नक्शा मिला है जो दुनिया का सबसे प्राचीन नक्शा माना जाता है। हारवर्ड विश्वविद्यालय के सेमिटिक पुरातत्व संग्रहालय में सुरक्षित यह नक्शा ईसा से लगभग २,५०० वर्ष पूर्व का माना जाता है। इस नक्शे (चित्र–१) में ऊपर से नीचे की ओर आती हुई एक नदी (संभवतः फरात) दिखायी गयी है, जो अपने डेल्टा प्रदेश में तीन भागों में विभक्त होकर समुद्र या खाड़ी में मिल जाती है। उत्तर, पूर्व एवं पश्चिम—तीनों दिशाएं छोटे-छोटे गोलों में अंकित हैं। नदी के दोनों तरफ पर्वत-शृंखलाएं मछली के आकार में विद्यमान हैं। यह नक्शा इतना छोटा है कि आसानी से हथेली के गढ़े में समा सकता है। यद्यपि यह टूटा है, लेकिन बिलकुल नया प्रतीत होता है। लगता ही नहीं कि इसे ४,५०० वर्ष पूर्व बनाया गया था।

ब्रिटिश म्यूजियम में भी मिट्टी-पटल पर बने ऐसे अनेक नक्शे सुरक्षित हैं, जिनमें रियासतों, नगरों और किसी-किसी में पूरे बेबीलोनिया को दर्शाया गया है। इनमें वह नक्शा बहुत महत्वपूर्ण माना जाता है जिसके ऊपरी हिस्से में अक्कद के सारगौन के अभियानों का उल्लेख है।

चित्र—३ : टॉलमी का विश्व मानचित्र

(चित्र—२) यह राजा लगभग ४,३०० वर्ष पूर्व गद्दी पर था।

गुण और स्वरूप की दृष्टि से भले ही ये बेबीलोनियन नक्शे साधारण हों, परंतु मानचित्र-कला के विकास की दृष्टि से इनके महत्त्व को नकारा नहीं जा सकता। इनका संख्या-क्रम १२ पर आधारित था (जैसे आज हम दशमलव पर आधारित संख्या-क्रम प्रयोग में लाते हैं) और संभवतः इसी आधार पर आगे चलकर गोले को ३६० अक्षांशों, अक्षांश को ६० मिनटों और मिनट को ६० सेकडों में विभाजित किया गया। बेबीलोनियनों ने पृथ्वी को महासागर में बहती एक 'डिस्क' के रूप में माना, जिसके ऊपर आकाश वृत्ताकार रूप में छाया हुआ है। यह विचारधारा यूनानी, रोमनों, यहां तक कि मध्ययुगीन यूरोप तक में हावी रही।

भू-सर्वेक्षण का प्रचलन नील की घाटी से आरंभ हुआ। रैमसैस द्वितीय (१३३३—१३०० ई० पू०) ने समस्त मिस्र का भू-सर्वेक्षण कराया। आंकड़ों को नक्शों में चित्रित किया गया। इनमें से कुछ नक्शे टूरिन (इटली) के म्यूजियम में सुरक्षित हैं।

एशिया में इस दिशा में चीनी लोग अग्रणी रहे, जिन्होंने यूरोपियनों से संपर्क होने से पूर्व ही समस्त देश को मानचित्रों में अंकित कर लिया था। चीनी-साहित्य में २२७ ई. पू. के एक मानचित्र का संदर्भ मिलता है। कागज के प्रयोग (१०० ई.) के बाद तो यहां लगभग सभी हिस्सों के नक्शे बना लिये गये थे। पेई-सू (२२४-२७३ ई.) ने समस्त क्षेत्रों के नक्शों को जोड़कर पूरे चीनी साम्राज्य का एक विशाल नक्शा तैयार किया। प्राचीनता के अतिरिक्त इन चीनी मानचित्रों का कोई खास महत्व नहीं है, क्योंकि अक्षांश और देशांतरों की दृष्टि से ये आधुनिक मानचित्रों के क्रम में फिट नहीं बैठते। इन मानचित्रों में चीन को पृथ्वी का केंद्र माना गया है तथा आसपास के सब देशों को छोटे-छोटे द्वीपों के रूप में दिखाया गया है।

आधुनिक मानचित्र-कला का श्रेय यूनानी विद्वानों को दिया जाता है, जिन्होंने मानचित्रों को खगोलीय एवं गणितीय आधार दिया। मिलेटस नगर के एनैक्जिमैंडर (६११—५४७ ई. पू.) ने उस समय तक ज्ञात समस्त पृथ्वी, प्रत्येक समुद्र तथा समस्त नदियों को चित्रित किया। उसी नगर के हिकैटयस ने इस मानचित्र को संशोधित करके प्रस्तुत किया। दोनों ही ने पृथ्वी को महासागरों से घिरी एक डिस्क माना।

पांचवीं शताब्दी ई. पू. तक यूनानी लोगों के लिए दुनिया से तात्पर्य था सिंधु नदी से लेकर अतलांतिक महासागर तक का भूभाग। उन्हें उत्तरी एवं दक्षिणी भागों का ज्ञान नहीं था। यहां तक कि कैस्पियन सागर के बारे में भी बहुत सीमित ज्ञान था।

चौथी शताब्दी ई. पू. में यह तथ्य प्रकाश में आया कि पृथ्वी पिंडाकार है। अरस्तू (३५० ई. पू.) ने पृथ्वी के झुकाव को नापा। इसी समय ध्रुव, विषुवत रेखा तथा अयन निश्चित किये गये। तापक्रम वितरण के आधार पर पृथ्वी को उष्ण, है। स्पष्ट था कि सायने मकर रेखा पर विद्यमान है। इसने इराटास्थनीज को पृथ्वी के आकार को मापने की प्रेरणा दी।

क्लाउडियस टॉलमी (९०–१६८ ई.) के समय यूनानी मानचित्र-कला अपनी चरमसीमा पर थी। इनकी अमर पुस्तक

चित्र। ७। हारफोर्ड मानचित्र १२८० ई.

शीतोष्ण तथा शीत कटिबंधों में विभाजित किया गया। इराटास्थनीज (२७६–१९६ ई. पू.) सिकंदरिया में पुस्तकालयाध्यक्ष थे। उन्होंने देखा कि सायने (अस्वान) के एक कुएं में सूरज की धूप नीचे पानी तक केवल २०-२२ जून को पहुंचती

'ज्योग्राफिया' के आठवें खंड में मानचित्रकला के सिद्धांतों को विस्तार से समझाया गया है। दो शंक्वाकार प्रक्षेपों का भी वर्णन है। पुस्तक के साथ एक विश्व का मानचित्र तथा २६ अन्य मानचित्र संबद्ध हैं। टॉलमी के विश्व-मानचित्र (चित्र-३)

में दुनिया को १८०० देशांतरों में बांटा गया है। अक्षांश व देशांतर एक पैमाने के आधार पर बगल में दिये गये हैं।

रोमन मानचित्र अलग ही तरह के थे। न इनमें अक्षांश, न देशांतर, न ध्रुव और न विषुवत रेखा होती थी और न ही इन मानचित्रों का कोई प्रक्षेपीय या गणितीय आधार था। वस्तुतः रोमनों ने केवल प्रशासनिक तथा सैनिक दृष्टियों से ही नक्शे तैयार किये, 'डिस्क' विधि को अपनाया। 'औरबियस टैरारम' श्रेणी के इन नक्शों (**चित्र-४**) में रोम तथा इटली को पृथ्वी का केंद्र माना गया है।

चौथी शताब्दी में बने 'प्यूटिंगर टेबुल' नामक नक्शे (**चित्र-५**) में रोमनों ने लगभग ५,०००० स्थानों को सड़कों द्वारा जोड़ा हुआ प्रस्तुत किया है। २१ फुट लंबे और १ फुट ऊंचे इस मानचित्र में नीचे की तरफ काले रंग से भूमध्य सागर तथा ऊपर की ओर उसी रंग में एड्रियाटिक सागर को चित्रित किया गया है। मध्य में रोम स्थित है जहां पोप सिंहासन पर न्याय दंड लिये विराजमान हैं। 'सभी सड़कें रोम को जाती हैं'—शायद इसी मानचित्र का सार हो।

मध्ययुग के अंतिम दौर में छापेखाने के आविष्कार और यूरोपीय अन्वेषकों द्वारा दुनिया के अज्ञात भागों की खोज—इन दो बातों से मानचित्रों के विकास में भारी सहयोग मिला। ११३० ई. में लियु चिंग टू नामक चीनी ने दुनिया का पहला [illegible] प्रकाशित किया। पश्चि... चीन के इस मानचित्र (**चित्र-६**) में उत्त... की ओर चीन की बड़ी दीवार दिखा... गयी है।

मध्ययुग में आठवीं शताब्दी से लेकर पंद्रहवीं शताब्दी के मध्य तक जित... नक्शे बनाये गये उनमें से लगभग ६५... खोजे जा चुके हैं। अरबों द्वारा निर्मि... इन मानचित्रों में इसलामी देशों को चित्रि... किया गया है। सभी पिंडाकार हैं। इनक... आधार संभवतः 'औरबिस टैरारम' र... हो। १२८० ई. में बना 'हरफोर्ड मै... इसी श्रेणी का प्रतिनिधि है। इस मान... चित्र (**चित्र-७**) में येरुशलम को दुनिय... का केंद्र दिखाया गया है।

टॉलमी के आधार पर भी चित्र बने... १२५० में मैथ्यू पैरिस ने इंगलैंड का प्रथ... उल्लेखनीय मानचित्र प्रस्तुत किया... प्रचलन के विपरीत इसने उत्तर दि... मानचित्र के ऊपर की ओर रखी। च... ऊपर की ओर पूर्व दिशा रखने के पक्ष... था। जबकि अरब तथा रोमन लोग उत्त... दक्षिण दिशा रखते आ रहे थे।

१५-१६वीं शताब्दी में डच, स्पैनि... पुर्तगाली और ब्रिटिश नाविक दुनिय... भर का चक्कर लगाकर ज्ञान-वृद्धि क... रहे थे। इनसे प्राप्त सूचनाओं के आधा... पर इन दिनों अनेक मानचित्र प्रकाश... आये। मार्कोपोलो से प्राप्त सूचनाओं... आधार पर फ्रा मौरो ने १४६० ई. ... धुर पूर्व का चित्रात्मक मानचित्र तैया...

किया । इस मानचित्र में बीचोबीच 'ग्रेट खान' के राजधानी नगर चांबालेच (पेकिंग) को विशाल महलों द्वारा प्रदर्शित किया गया है । अन्य नगरों का चित्रण भी इसी प्रकार है । मानचित्र में प्रथम बार चिपांगू (आधुनिक जापान) का नाम अलग से दिया गया । मार्कोपोलो के समय में प्रसिद्ध मंगोल सरदार कुबलाई खान (१२१६–९४) था । संभवत: फ्रा मौरो के मानचित्र का 'ग्रेट खान' वही रहा हो ।

मर्केटर (१५१२-९४) के कारण १६वीं शताब्दी मानचित्र-कला के विकास में अमर रहेगी । मर्केटर ने प्रथम बार भू-सर्वेक्षण से बने चार्टों को अक्षांश-देशांतरों से संबद्ध कर मानचित्रों के आधुनिक स्वरूप की नींव डाली । अपने नाम के प्रक्षेप द्वारा दिशाओं को सीधी रेखा द्वारा प्रस्तुत करके मर्केटर ने नाविकों के लिए समुद्री यात्राएं काफी सुगम कर दीं ।

अमरीका का पहला उल्लेखनीय मानचित्र १६७७ ई. में आया । जॉन फॉस्टर के इस मानचित्र (**चित्र-९**) में रूढ़ चिन्हों द्वारा न्यू इंगलैंड प्रदेश को प्रदर्शित किया गया है । १९वीं शताब्दी के अंत तक लगभग सभी देशों ने त्रिभुजीकरण के आधार पर सर्वेक्षण करके मानचित्र तैयार कर लिये थे । अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं द्वारा सारी दुनिया को एक ही पैमाने पर चित्रित भी किया जा चुका था ।

—१६४, आर्यनगर, अलवर (राज.)

वचन-वीथि

पुरानी बातों में से किसी अच्छी बात का चयन कर लेना नया आविष्कार करने के समान है ।

—ट्रूब्ले

सुखों के चले जाने पर ही हम उनका महत्त्व समझ पाते हैं, जब हम सुखी होते हैं तब नहीं ।

—अरस्तू

मनचाहा कार्य करने की स्वतंत्रता झूठी है। हमें जो कुछ करना चाहिए उसे करने की स्वतंत्रता ही सच्ची स्वतंत्रता है।

—सी. किंग्सले

ज्ञान युवकों को संयमी बनाता है, बूढ़ों को सुविधा प्रदान करता है । वह निर्धनों के लिए संपत्ति और धनिकों के लिए आभूषण के समान है।

—सिसरो

हमेशा यही सोचना चाहिए कि हम बहुत कम जानते हैं और हमारे जानने के लिए अनंत संसार पड़ा है।

—लाप्लेस

मस्तिष्क मनुष्य का एक पहलू मात्र होता है, लेकिन हृदय तो सब कुछ है —रिवरोल

१. वह कौन-सी संख्या है जिसे ११ से भाग देने पर शेष १ और १२ से भाग देने पर शेष ६ बचता है, जबकि १३ से भाग देने पर कुछ नहीं बचता ?

२. सन १९७४ के शुरू में कौन-सा धूमकेतु पृथ्वी के समीप आया था ? उसे सबसे पहले किसने और कब देखा था ?

३. एक मिस्त्री के पास इतनी तीलियां थीं जितनी साइकिल के दस पिछले पहियों में कुल मिलाकर होती हैं। उसने पांच अगले पहियों में पूरी-पूरी तीलियां लगायीं और चालीस तीलियां बेच दीं। अब उसके पास कितनी तीलियां बचीं ?

४. अंतर्राष्ट्रीय तिथि-रेखा किस देशांतर पर मानी जाती है ?

५. ये प्रसिद्ध व्यापारिक क्षेत्र किन नगरों के हैं ?—(क) चौरंगी, (ख) पिकेडली, (ग) मैनहटन, (घ) गिंजा।

६. संयुक्त वियतनाम की राजधानी किस नगर में रखा जाना तय हुआ है ? यह नगर वियतनाम के किस हिस्से में स्थित है ?

७. सन १९८० में होनेवाला विश्व ओलंपिक किस नगर में होगा ?

८. भारत में करेंसी नोटों की छपाई कहां होती है ?

९. निम्नलिखित उपकरणों का निर्माण भारत के किन नगरों में होता है और ये नगर किन राज्यों में हैं ?—(क) नेट विमान, (ख) विजयांत टैंक, (ग) राइफलें।

१०. भारत में सबसे बड़ी और प्रसिद्ध त्रिमूर्ति कहां है ? यह स्थान किस नगर के पास है ?

११. 'विश्व टेनिस संघ' ने भारत में १९७५ में हुई किस टेनिस-प्रतियोगिता को अंतर्राष्ट्रीय स्तर की मान्यता दी है ? यह प्रतियोगिता कहां हुई और पुरुष एकल के विजेता तथा उपजेता कौन रहे ?

अपनी बुद्धि पर जोर डालिए और यहां दिये प्रश्नों के उत्तर खोजिए। उत्तर इसी अंक में कहीं मिल जाएंगे। यदि आप सारे प्रश्नों के उत्तर दे सकें तो अपने सामान्य ज्ञान को श्रेष्ठ समझिए, आधे से अधिक में साधारण और आधे से कम में अल्प।

—संपादक

१२. **वसंतपंचमी** को हिंदी के किस प्रसिद्ध कवि का जन्म-दिन मनाया जाता है। इस दिन किस प्रसिद्ध हिंदी कवयित्री की मृत्यु हुई थी?

१३. **ये** ठंडे स्थान भारत के किन राज्यों में हैं? —(क) रानीखेत, (ख) कोदईकनाल, (ग) महाबलेश्वर, (घ) पचमढ़ी।

१४. **'भारतरत्न'** से अलंकृत वे दो नेता कौन थे जिनका निधन एक ही दिन हुआ था?

१५. **अंतर्राष्ट्रीय** न्यायालय कहां है? भारत और पाकिस्तान से अब तक कौन-कौन इसमें न्यायाधीश बन चुके हैं?

१६. (क) स्वतंत्रता से पूर्व कांग्रेस के अध्यक्ष को क्या कहा जाता था?

(ख) यह पद सीधे अपने पिता से किसने और किस सन में ग्रहण किया था?

१७. **इन** पुस्तकों के लेखक कौन हैं? (क) अर्थशास्त्र, (ख) प्राइड ऐंड प्रेज्यूडिस, (ग) गुलिस्तां, (घ) दि प्लेग।

१८. **भारत** में १९७५ में किन नगरों में नये दूरदर्शन-केंद्र शुरू हुए हैं?

१९. **भारत** में तोप का इस्तेमाल सबसे पहले किसने किया?

२०. **प्राचीन** भारत के किस सम्राट के अभिलेख भारत में सबसे बड़ी संख्या में मिलते हैं?

२१. **युद्ध** में वीरगति पाते समय झांसी की रानी लक्ष्मीबाई की आयु क्या थी?

२२. **एशिया** में सबसे ऊंची चिमनी
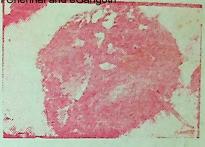
किस कारखाने की है? उसकी ऊंचाई कितनी है?

२३. **एक** शाला में वन-महोत्सव के समय छठवीं कक्षा के छात्रों को बारह पौधे दिये गये और उन्हें छह ऐसी सीधी कतारों में लगाने को कहा गया कि प्रत्येक कतार में चार पौधे रहें? पौधे किस तरह लगाये गये?

२४. (क) इंडिया सिक्योरिटी प्रेस, नासिक की स्थापना कब हुई थी?

(ख) भारत में डाक-टिकटों की छपाई कहां और कब आरंभ हुई थी?

(ग) संसार में सबसे पहले डाक-टिकट किस देश में चालू हुआ?

२५. **संसार** में सबसे पहले महिलाओं को मताधिकार किस देश में और कब प्राप्त हुआ था?

२६. **भारत** की राजधानी कलकत्ता से दिल्ली कब स्थानांतरित की गयी थी?

२७. **भारत** में किस नगर के समय को भारतीय मानक समय (इंडियन स्टैंडर्ड टाइम) माना जाता है?

२८. **ऊपर** दिये गये चित्र को ध्यान से देखिये और बताइये कि यह क्या है।

सत्यकथा

● जेम्स स्टार्क

विषधरों

पादरी आंद्रे दुपैरत अपराह्न को जैसे ही सोकर उठे, उनकी निगाह छत पर पड़ी। वे कांप उठे। छह फुट लंबा सांप उन पर गिरने के लिए तैयार था। अगले पल सांप उनके शरीर पर गिरकर रेंगने लगा।

पापुअन जंगल की जादूगरनियों ने पादरी आंद्रे को मारने के लिए तीसरी बार सांप भेजा था। यह घटना आज से पैंतालिस वर्ष पूर्व की है। तब पादरी आंद्रे ने आदिवासियों के बीच धर्म-प्रचार करने का बीड़ा उठाया था। यों उन्हें, अपने पद का कार्यभार संभालने के दो वर्ष पूर्व ही, जंगल की जादूगरनियों ने चेतावनी दे दी थी कि वे उनके भयंकर विषैले सांपों से बचकर रहें। पर वे न माने।

एक दिन पादरी आंद्रे गांव के मुखिया से मिलने के लिए तैयार हो रहे थे तब उन्होंने अपना कुरता फटा पाया। पादरी ने इस पर ध्यान नहीं दिया और चल पड़े। मुखिया ने उनका स्वागत किया और उन्हें अपनी झोपड़ी में ले गया। जब वे बात कर रहे थे तब झोपड़ी के एक अंधेरे कोने से एक जहरीला सांप धीरे-धीरे सरककर पादरी आंद्रे के पैरों तक पहुंच गया। उस पर नजर पड़ते ही उन्होंने तुरंत छड़ी से सांप के सिर पर चोट की।
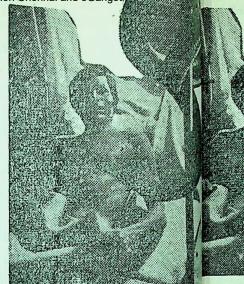
कुछ दिनों बाद पादरी आंद्रे ने एक पापुअन युवक को ईसाई बनाया। तत्सं- बंधी विधि अभी पूरी हुई ही थी कि युवक घबराकर चीखा, "फादर, आप वहीं खड़े रहिए। आप खतरे में हैं।"

लकड़ी के गिरजाघर की छत से एक ६ फुट लंबा सांप पादरी आंद्रे पर गिरने ही वाला था। युवक की सूझबूझ ने पादरी आंद्रे को संकट से बचा लिया।

जब वे निवास लौटे तब पाया कि उनके कुरते में से किसी ने जानबूझकर एक टुकड़ा कपड़ा काट रखा है। उन्होंने अपने नौकर को बुलाकर इस बारे में

के बीच
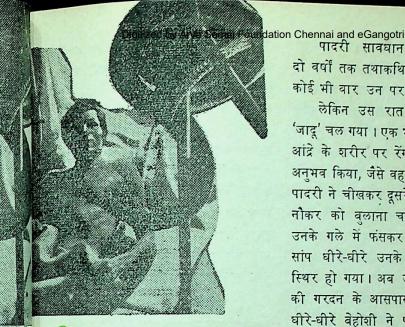
पूछा तो उसने बताया, "ये जादूगरनियों का काम है। वे सांपों को पकड़कर एक खोखले बांस में बंद कर देती हैं और दोनों सिरों पर अपने शिकार के कपड़ों के टुकड़े लगा देती हैं।

"ये जादूगरनियां सांपों से भरे हुए बांस को थोड़ा-सा गरमकर एक तरफ का कपड़ा हटाकर अपने शिकार से कुछ दूर रख देती हैं। सांप गरमी पाकर तड़पते हुए बाहर निकलते हैं। जादूगरनियों के शिकार के कपड़ों से उन्हें गंध तो बांस के अंदर ही मिल चुकी होती है, इसलिए शिकार को अपना दुश्मन समझकर उसे काटने के लिए आगे बढ़ने लगते हैं।"

पादरी सावधान हो गये। बाद में दो वर्षों तक तथाकथित जादूगरनियों का कोई भी वार उन पर नहीं चल पाया।

लेकिन उस रात जादूगरनियों का 'जादू' चल गया। एक भयंकर सांप पादरी आंद्रे के शरीर पर रेंगने लगा। उन्होंने अनुभव किया, जैसे वह कुछ ढूंढ़ रहा है। पादरी ने चीखकर दूसरे कमरे में सो रहे नौकर को बुलाना चाहा, पर आवाज उनके गले में फंसकर रह गयी। उधर सांप धीरे-धीरे उनके वक्ष पर जाकर स्थिर हो गया। अब उसका मुंह पादरी की गरदन के आसपास घूम रहा था। धीरे-धीरे बेहोशी ने पादरी को अपनी चपेट में ले लिया।

कई घंटों बाद जब होश आया तब उन्होंने देखा, सांप उनके कंधे पर से फिसलता हुआ नीचे गिर पड़ा है। पादरी आंद्रे का खोया साहस लौट आया। उन्होंने उछलकर पास रखी छड़ी उठायी और उससे सांप पर लगातार चोट करने लगे। जादूगरनियों का वार एक बार फिर बेकार हो गया था।

क्या यह कोई दैवी कृपा थी? सहसा उन्हें ध्यान आया, शाम उन्होंने इटली के एक मित्र से उपहार में मिले तीव्र गंधवाले साबुन से स्नान किया था और उसकी गंध अब तक उनके शरीर में व्याप्त थी। इसी गंध के कारण सांप चक्कर में पड़ गया था और उसने उन्हें डंसने से छोड़ दिया था। ●

यद्यपि राजभाषा के रूप में हिंदी का प्रयोग विगत सैकड़ों वर्षों से राजपूत नरेशों एवं सुलतान बादशाहों के प्रशासनों में होता आ रहा था, तथापि इसके व्यापक प्रयोग का स्वरूप मुगलों के राजकाज-संबंधी प्राचीन दस्तावेजों में ही देखने को मिलता है। प्रारंभ में मुगलों के सामने राजनीतिक, प्रशासनिक तथा सामाजिक दृष्टि से अनेक ऐसे प्रश्न थे जिनका समाधान राष्ट्रीय एवं भावात्मक एकता तथा प्रशासनिक स्थिरता की दृष्टि से अत्यावश्यक था। इन प्रश्नों में एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न था राजभाषा हिंदी का। उन्होंने परंपरागत राजभाषा हिंदी के व्यापक व्यवहार, स्वरूप तथा प्रसार-प्रचार में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की। मुगल प्रशासन में हिंदी केवल सिक्कों, सनद-परवानों और कतिपय कर्मचारियों तक सीमित न थी अपितु उन्होंने उसके विराट रूप की कल्पना की तथा उसे प्रशासन के प्रत्येक क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान किया, साहित्यिक दृष्टि से उसका सम्मान किया, उसकी श्रीवृद्धि में योगदान दिया और स्वयं सम्राटों ने हिंदी भाषा में कविताएं लिखीं।

मुगल सम्राटों ने प्रत्येक मित्र देशी रियासत में अपने वकील का कार्यालय स्थापित कर रखा था और सभी मित्र राजाओं ने भी मुगल सम्राटों की राजधानी में अपने-अपने वकील-कार्यालय स्थापित किये थे। ये वकील सम्राट तथा संबद्ध राजा के बीच एक कड़ी का कार्य करते थे। इन कार्यालयों का सभी काम हिंदी भाषा और देवनागरी लिपि के माध्यम से होता था।

मुगलकाल में राजभाषा

मुगल सम्राटों के प्रशासन का संपूर्ण काम-काज हिंदी के माध्यम से ही होता था। फारसी का प्रयोग तो विशेष परिस्थितियों में सम्राट के कतिपय संबंधियों तथा उच्च-तर अधिकारियों के साथ ही किया जाता था। जन-साधारण एवं राजाओं से संबद्ध सभी कार्रवाई हिंदी में ही की जाती थी।

इन प्रशासकीय कारवाइयों से संवद्ध जो हिंदी पत्र मुगल सम्राटों एवं हिंदू नरेशों के कार्यालयों में व्यवहृत होते थे, उनमें अमलदस्तूर, आवर्जा, खतूत अहलकारान, बही तालीक, सीगा, मुतफर्रिकात, हस्व तहरीर, याददाश्त, खाते नक्शा, मिसिल मुकदमा, इत्तलानामा, रसीद सनदी, दस्तूर, कौमवार, अर्जदाश्त, फरमान, वकील अर्जदाश्त, खतूत महाराजान, डोल, उत्सव का प्रसाद-पत्र, बही हकीकत, फर्द, खरीता व परवाना, स्याहदस्तूर, नक्शावसूल, निरंख, रोजनामा एवं प्रशस्ति आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। यद्यपि इन पत्रों के शीर्षक प्रायः फारसी भाषा के ही होते थे तथापि इनकी लेखन-शैली विशुद्ध रूप से भारतीय होती थी और उसकी अभिव्यक्ति लोक-प्रचलित हिंदी भाषा और देवनागरी

मुगलों के राजकाज में हिंदी

• रामबाबू शर्मा

लिपि के माध्यम से ही की जाती थी।
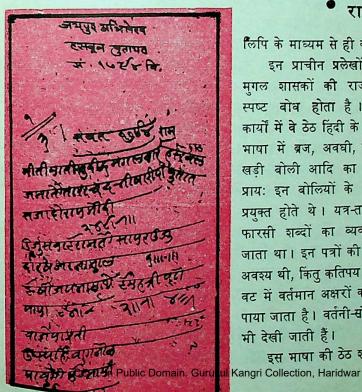
इन प्राचीन प्रलेखों के अध्ययन से मुगल शासकों की राजभाषा-नीति का स्पष्ट बोध होता है। प्रशासन-संबंधी कार्यों में वे ठेठ हिंदी के समर्थक थे। इस भाषा में ब्रज, अवधी, राजस्थानी और खड़ी बोली आदि का सम्मिश्रण था। प्रायः इन बोलियों के तद्भव शब्द ही प्रयुक्त होते थे। यत्र-तत्र लोक-प्रचलित फारसी शब्दों का व्यवहार भी किया जाता था। इन पत्रों की लिपि देवनागरी अवश्य थी, किंतु कतिपय अक्षरों की बनावट में वर्तमान अक्षरों की अपेक्षा वैषम्य पाया जाता है। वर्तनी-संबंधी विभिन्नताएं भी देखी जाती हैं।

इस भाषा की ठेठ शब्दावली, क्रिया-

पद, सर्वनाम, कारक, लिंग, वचन आदि सभी हिंदी के होते थे। यत्र-तत्र लोक-प्रचलित फारसी शब्दों का प्रयोग भी पाया जाता है। इन फारसी शब्दों को हिंदी के व्याकरण में रंग दिया जाता था। इस प्रकार यह भाषा तत्कालीन प्रशासन की मानक भाषा थी, जिसका व्यवहार राज-भाषा के रूप में संपूर्ण भारत में होता था।

अकबर के अमलदस्तूर

सम्राट अकबर के दरबार से ऐसे हिंदी 'अमलदस्तूर' समय-समय पर निकाले जाते थे, जिनके माध्यम से देश भर के अधि-कारियों, न्यायाधीशों, गुप्तचरों, व्यापा-रियों, साधुओं, सैनिकों और सिपाहियों तथा प्रजाजनों के लिए विभिन्न प्रकार के आदेश और अनुदेश भेजे जाते थे। ऐसे १४ पत्र बीकानेर अभिलेखागार में सुर-क्षित हैं। ये पत्र पुस्तकाकार कागज पर दोनों ओर काली स्याही से हस्तलिखित हैं, जो अकबर की राजभाषा हिंदी-संबंधी नीति के ज्वलंत उदाहरण हैं। इन अमल-दस्तूरों में सम्राट के प्रशासन-संबंधी सैकड़ों विषयों का सजीव चित्रण सरल भाषा में किया गया है।

सम्राट अकबर के समक्ष उच्चतर अधिकारियों को लोकहित की दृष्टि से शपथ लेनी पड़ती थी। इस आशय की अभिव्यक्ति निम्नांकित शब्दों के माध्यम से की जाती थी—

फलक के सुख पावणे के वास्ते व नीति मारग के वास्ते पहली राह षूब यही है जु सबकी सेवा करै परमार्थ के वास्ति सुखी साहिब कैसा सो यै दरबार साहि के आधीन हो है करि आपणा को अरप करता।

अधिकारियों को मध्यमार्ग का अनु-सरण करने के संबंध में अकबर ने निम्नां-कित शब्दों में आदेश दिये थे—

मकसुद वीचि का चलन गहै—सुबह औ शाम सोये नहीं—साहाब का भजन करे

सम्राट का विश्वास था कि प्रशास खुशामदी लोगों से कमजोर होता है इसलिए उसने अधिकारियों को इन शब्दों में स्पष्ट आदेश दे रखे थे—

और कुसामदी होइ तिसस्यै प्यार न करि किस वास्ते जु कुसामदी सै कुसी होइ तिसका काम पूरा न होइ।

जमीन की उपयोगिता से संबद्ध आदे के लिए निम्नांकित अभिव्यक्ति थी—

जिमी षेती लाईक होई सो एक विस्वे भी पड़ी रहे नहीं

अधिकारियों के लिए सम्राट के स्पष्ट आदेश थे कि व्यापारी जनता से नाज खरीदकर भंडारों में जमा न करने पायें—

और नाज रैत्य पास लेकै व्यापारी बहु षरीदि करि भंडसाल न करणै पावै

बादशाह और सरदारों के कर्तव्य के विषय में सम्राट के विचार और भाव देखिए—

पातिसाही अर सिरदारी का तात प जयई है जुषलक की रषवाली करै बिन रषवाली षवरदावरी सिरदार कहां व

सो है नहीं।

सम्राट सभी धर्मों का समान आदर करता था। इस प्रकार के आदेश की तत्कालीन हिंदी अभिव्यक्ति देखिए——

सब धर्म के अतीत है तिन सब ही स्यौ प्यार रखै।

अधिकारियों द्वारा जनता को दिये हुए आश्वासनों का पालन करने के लिए सम्राट के दरबार से निम्नांकित शब्दों में आदेश दिया जाता था——

विशेष रैयती स्यौ जु बोल बोले तिस स्यौ अवसि करि निवोहे।

मृत्युदंड का अधिकार स्वयं सम्राट को ही था। इस प्रकार का आदेश निम्नांकित होता था——

अर चूक मारणे की ही होई तो मेरी दरगाह भैजे अर हकीकत उसकी लिषै जु कुछ मेरा हुकम होई सु करै।

जहांगीर के प्रशासन में तो ऐसी हिंदी का भी प्रयोग होने लगा था जो पूर्णतया राजस्थानी से प्रभावित थी——

अकैलो राखीजै तरै किसा हूं न जांणा न दिया नै पात
सानं लिषियौ दक्षिणा था थे सगला नूं तेडावौ धौ पछौ उठे ही दक्षिणी जोर करसी तरै
पातसा साहजादारी हिंदुस्थानरा परगना सौह तगीर किया
जु दषिण गुजरात मांडू पैली धरती थां नू दी छै।

('राष्ट्रभाषा पर विचार' चंद्रबली पांडेय)

'बादशाहनामा' में सम्राट शाहजहां के जीवनचरित, प्रशासन-व्यवस्था और संगीतप्रियता का सजीव वर्णन है। इसकी भाषा वास्तव में ब्रज-बोली ही है।

औरंगजेब के राजकाज में हिंदी की विविध शैलियों का प्रयोग होने लगा था। ब्रजभाषा, राजस्थानी आदि बोलियों के अतिरिक्त प्रशासन में खड़ी बोली का प्राबल्य होता जा रहा था। यत्र-तत्र संस्कृत-मिश्रित प्राचीन तत्समात्मक शैली का भी प्रचलन था——

स्वस्ति श्री संवत १९७४ वर्षे भाद्र सुदि ७ गुरो पातशाहा श्री सुलतान आलम ज्यरी साहिब कुरान शानी सकल राया शिरोमणि महाराजजे वर एह वो पातशाहा श्री श्री श्री श्री श्री श्री श्री अवरंगजेब संखमुद्रा राज्यं करोति तस्या देशात गुजरात मध्ये सो श्री राजनगर सोवे साहिब नु आय श्री महावतषान दीवानी श्री श्री श्री हाजी माहिमदेसफि ७ छि।

यद्यपि औरंगजेब और उसके परवर्ती बहादुरशाह आदि सभी सम्राटों के राजकाज में हिंदी की अन्य बोलियों के अतिरिक्त ब्रज और खड़ी बोली की ही प्रधानता थी, तथापि ब्रज-बोली का महत्त्वपूर्ण स्थान शनैः-शनैः खड़ी बोली ग्रहण करती जा रही थी।

इन परवर्ती मुगल बादशाहों के प्रशासन की भाषा के कुछ नमूने देखिए——

(महाराज जयसिंह को बादशाह के लाहौर पहुंचने की सूचना)

आगे अरज दासति करै सालका भरी है तिसौ सगली अरज पहुंची होयजी श्री महाराजाधिराज सलामति पातसाहजी की या षवरि है जो रमजान ताइ लाहौर रहै।

महाराज जयसिंह को मुगल सम्राट के दरबार से गुरु गोविंदसिंह के व्यास नदी पार करने तथा उन पर विजय प्राप्त करने की सूचना—

श्री महाराजाधिराज सलामति गुरू की या षवरि है जो व्याह नदी उतरि गया श्री महाराजाधिराज सलामति औसर जैसा है जो गुरू की फतै करै तो सदा को अमर नाव होय अर पातसाह जी के हजूरि बड़ा मुजरा होय।

बुद्धि-विलास के उत्तर

१. ७८, २. कोहुटेक, चेक खगोल-विद लुबोज कोहुटेक ने ७ मार्च १९७३ को, ३. दो सौ (पिछले पहिये में ४०, अगले में ३२ तीलियां होती हैं), ४. १८० अंश देशांतर, ५. (क) कलकत्ता, (ख) लंदन, (ग) न्यूयार्क, (घ) टोकियो, ६. हनोई, उत्तरी वियतनाम, ७. मास्को, ८. इंडिया सिक्योरिटी प्रेस, नासिक, ९. (क) बंगलौर—कर्नाटक, (ख) आवड़ी—तमिलनाडु, (ग) ईसापुर—पश्चिमी बंगाल, १०. एलिफेंटा, बंबई, ११. ग्रैंड प्रिक्स—कलकत्ता, विजेता—विजय अमृतराज, उपजेता—ओरेंटिस, १२. सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', सुभद्राकुमारी चौहान, १३. (क) उत्तरप्रदेश, (ख) तमिलनाडु, (ग) महाराष्ट्र, (घ) मध्य-प्रदेश, १४. डॉ. विधानचंद्र राय, राजर्षि-पुरुषोत्तमदास टंडन, १५. हेग, बेनेगल नरसिंह राव तथा डॉ. नगेंद्रसिंह (भारत), जफरुल्ला खां (पाकिस्तान), १६. (क) राष्ट्रपति, (ख) जवाहरलाल नेहरू—सन १९२९; १७. (क) कौटिल्य, (ख) जेन आस्टिन, (ग) शेख सादी, (घ) कामू, १८. कलकत्ता, मद्रास, लखनऊ, १९. बाबर, २०. अशोक, २१. तेइस साल, २२. बोकारो इस्पात कारखाना, छह सौ फुट, २३.
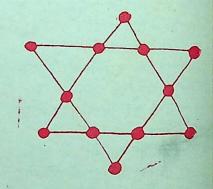
२४. (क) १९२५, (ख) सिक्योरिटी प्रेस नासिक, १९२६ में, (ग) ब्रिटेन में, २५. न्यूजीलैंड, १८९३, २६. सन १९११, २७. इलाहाबाद। २८. सेब के ऊपर बर्फ।

बादशाह द्वारा नवाब महावतखां को महाराज जयसिंह और अजीतसिंह के साढ़ौरा पहुंचने की सूचना——

पातसाह जी नवाब महावतिषां जी को फुरमाया जी दोनों राजों को हसबल हुकुम लीषौ जो साढ़ौरा सिताब पहुंचेजे (खतूत महाराजान, राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर से प्राप्त)

पत्र की नकल भेजने के संबंध में——
अर नकलषत की हजूरि भेजी है तिसो हकीकत अरज पहुंचैगी।

इन परवर्ती मुगल सम्राटों के राजकाज से संबद्ध देवनागरी लिपि में हस्तलिखित सहस्रों प्रलेख राजस्थान राजा अभिलेखागार बीकानेर में सुरक्षित हैं। यें विषय तत्कालीन व्यवस्था-विधि, नीति, पुरस्कार, दंड, सनद (प्रशंसा-पत्र), जागीर, मिर्जा का खिताब, सहायता, खैरात (दान), माफी, कारावास, गुरु गोविंदसिंह का पीछा करना, कार्यभार सौंपना, नौबत (अनुदान), बादशाह की यात्रा, सम्राट औरंगजेब की मृत्यु-सूचना, युद्ध, सेना-प्रयाण, हाकिमों के नाम परवाने, मंसबदारों की रद्दोबदल आदि हैं। इन सरकारी पत्रों की अभिव्यक्तियों से तत्कालीन प्रशासन-राजनीति, समाज-इतिहास और मनोवैज्ञानिक धारणाओं एवं तत्कालीन राजभाषा हिंदी, उसकी वर्तनी, लिपि और व्याकरणिक प्रयोगों का पता लगता है। ये पत्र क्रमशः भारतीय मान्यताओं और परंपराओं के आधार पर स्वतः पूर्ण होते थे।

मुगलकालीन प्रशासन-संबंधी हिंदी अभिलेखों के अध्ययन से यह और भी स्पष्ट हो जाता है कि जनता की भाषा राजकाज की भाषा हो सकती है। मुगल प्रशासन में प्रायः ऐसे ही शब्दों का प्रयोग किया जाता था। ये पारिभाषिक शब्द आज भी उतने ही सजीव, ताजे और लोकप्रिय हैं। अस्तु, व्यावहारिक दृष्टि से हमें आज भी राजकाज में इन शब्दों की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। मुगलकालीन दस्तावेजों से प्राप्त कतिपय इन शब्दों की सजीवता देखिए——

नीति, मारग (मार्ग), पहेली राह (पहली राह), षूबी (खूब), सेवा, परमार्थ, परवार साहिब, आधीन, अरपर (अर्पण), मकसुद (मकसद), बीचि (बीच), चलन गहै (ग्रहण करें), सुबसाम (शाम), सकति (शक्ति), असीस (आशीष), सीष (सीख), बुधि (बुद्धि), षेती (खेती)।

अस्तु, हिंदी का राजभाषा पक्ष भी उसके साहित्यिक पक्ष की भांति समृद्ध, गौरवशाली और महान है। उसमें सजीवता, नवीनता और गतिशीलता है। मुगल प्रशासकों के लिए तो वह सशक्त साधन रही है, जिसके माध्यम से उन्हें प्रशासन में दृढ़ता, स्थिरता, समन्वय और एकता स्थापित करने में पर्याप्त सहायता प्राप्त हुई थी।

——डब्लू-जेड/६२ गणेशनगर, पत्रालय तिलकनगर, नयी दिल्ली-११००१८

एक आदमी का कला-संग्रहालय

• रूथ हॉपकिंस

अमरीका भौतिक संपन्नता से ही नहीं, सांस्कृतिक और कलात्मक संपन्नता से भी समृद्ध है। अमरीकी लोग मानव की कलात्मक उपलब्धियों को जुटाने की दिशा में सतत सचेष्ट और क्रियाशील हैं। इस संदर्भ में करोड़पति जोसेफ एच. हिर्शहॉर्न स्वयं में एक सांस्कृतिक संस्था बन चुका है। वैसे तो उसका जन्म लटविया में हुआ था, लेकिन लगभग चालीस साल पहले वह अमरीका में आकर बस गया। इन चालीस वर्षों में उसने अपने परिश्रम से अपार संपत्ति अर्जित की। संपत्ति अर्जित करने तक ही वह सीमित नहीं रहा, उसने अमरीका और यूरोप के प्रसिद्ध कलाकारों की कृतियां खरीदकर निजी कला-संग्रहालय भी बना लिया। उस अकेले व्यक्ति के पास छह हजार कलाकृतियों का संग्रह है, जो अमरीकी
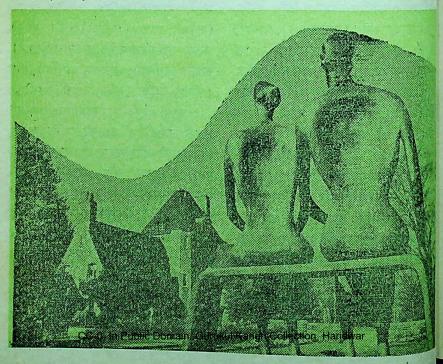
धनियों के निजी कला-संकलनों की तुलना में तो सबसे बड़ा है ही, आधुनिक कला-कृतियों के प्रमुख संग्रहालय न्यूयार्क्स म्यूजियम ऑफ मॉडर्न आर्ट की अपेक्षा दुगुनी कलाकृतियां उसके पास हैं।

हिर्शहॉर्न नियमित रूप से चित्रकारों और मूर्तिकारों के स्टूडियो में जाकर उनसे मिलता रहा है और उनकी कला-कृतियां खरीदता रहा है। कभी-कभी तो वह एकसाथ पांच, दस और पंद्रह चित्र तथा मूर्तियां खरीद लेता है। उसने केवल अपनी कलाभिरुचि की तुष्टि के लिए चित्रों और मूर्तियों का इतना बड़ा संग्रह किया, लेकिन सन १९६६ में उसने अपने इस बहुमूल्य संग्रह को राष्ट्र के लिए समर्पित कर दिया। उसे समर्पित करते हुए हिर्शहॉर्न ने कहा, "अमरीका-जैसे राष्ट्र ने मेरे लिए जो कुछ किया है या मुझ-जैसे आव्रजकों को जो कुछ दिया है, उसके प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए मैं यह कला-संकलन अमरीकी जनता को समर्पित करता हूं।"

हिर्शहॉर्न ने इस विशाल संकलन के समुचित प्रदर्शन के लिए वाशिंगटन में संग्रहालय-भवन निर्मित कराया और मूर्तियों के प्रदर्शन के लिए भवन के साथ ही एक उद्यान भी बनवाया। संग्रहालय और उद्यान का नाम हिर्शहॉर्न के नाम पर ही 'हिर्शहॉर्न म्यूजियम ऐंड स्कल्पचर गार्डेन' रखा गया। इस संग्रहालय के द्वार १ अक्तूबर, १९७४ को जन-

साधारण के लिए खोल दिये गये, जिससे इन कलाकृतियों का आनंद अकेले हिर्शहॉर्न ही नहीं, बल्कि इस देश की राजधानी में देश-विदेश से प्रति-वर्ष आनेवाले २१ करोड़ व्यक्ति भी ले सकें।

हिर्शहॉर्न संग्रहालय का भवन इसकी आधुनिक कलाकृतियों के अनुरूप ही आधुनिक है। माल रोड पर स्थित प्राचीन भव्य भवनों की पंक्ति में यह बेलनाकार तिमंजिला भवन आधुनिक स्थापत्य का अनूठा उदाहरण है। भवन की प्रत्येक मंजिल पर समकेंद्रिक वृत्ताकार दीर्घाओं के दो वृत्त हैं। केंद्रवर्ती स्थान खुला हुआ

है और दीर्घाओं के बीच की दीवारें कांच से बनी हैं।

इस संग्रहालय में १९वीं शती के उत्तरार्ध और २०वीं शती के आज तक के यूरोप और अमरीका के लब्धप्रतिष्ट कलाकारों की कृतियां संकलित हैं। यूरोप और अमरीका के उत्कृष्ट मूर्ति-शिल्पों के संकलन में यह संग्रहालय विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इन विशाल और भारी-भरकम मूर्तियों को उद्यान में स्थापित करना भी कठिन काम रहा है। ये सभी कलाकृतियां पहले हिर्शहॉर्न के कनेक्टीकट नगर स्थित मकान के भंडार और उद्यान में संरक्षित थीं, जिन्हें वहां से उठाकर वाशिंगटन लाना भी समस्यापूर्ण काम था। विशाल मूर्ति 'किंग ऐंड क्वीन' को तो हेलीकॉप्टर द्वारा उठाकर ट्रक पर लादा गया। चौदह टन भारी इन मूर्तियों को बहुत ही सावधानी और सुरक्षा के साथ वाशिंगटन लाया गया। कलाकृतियों को कहीं ले जाने के इतिहास में इन मूर्तियों का स्थानांतरण असामान्य घटना रही है।

एलेक्जेंडर काल्डेर, ऑगस्टे रोदां, हेनरी मूर, मारीनो मारिनी, सर जेकब एपिस्टन, डेविड स्मिथ-जैसे प्रख्यात मूर्तिकारों के मूर्ति-शिल्प इस संग्रहालय की गौरवमयी उपलब्धियां हैं। मूर्ति-शिल्प के उद्यान में प्रवेश करते ही द्वार के समीप हेनरी मूर का 'प्वाइंट' (संकेत) नामक एक आकर्षक शिल्प है, जो दर्शकों का स्व[illegible] करता-सा प्रतीत होता है। यह सन १९७० में निर्मित लेटी हुई दो आकृतियों का एक शिल्प है।

थोड़ा आगे चलने पर फ्रिट्ज वोत्रुबा का 'हाथ उठाये हुए आकृति' नामक कांस्य-निर्मित शिल्प और हेनरी मूर का 'वस्त्र से ढकी लेटी हुई आकृति' नामक शिल्प मिलते हैं। संग्रहालय की बगल में 'तीन लाल रेखाएं' नामक जॉर्ज रिकी का बनाया स्टेनलेस स्टील का एक चित्रित मूर्ति-शिल्प है। पीछे की ओर मारीनो मारिनी का सन १९५१ में बनाया 'बाजीगर' नामक कांस्य मूर्ति-शिल्प है। इसके बाद सर जेकब एपिस्टन का 'विजिटेशन' नामक मूर्ति-शिल्प दिखायी पड़ता है जिसे सन १९२६ में बनाया गया और १९५५ में कांस्य में ढाला गया।

संग्रहालय के बायीं ओर की पार्श्व-भूमि में रोदां द्वारा सन १८९८ में बनाया गया 'बाल्जाक का स्मारक' नामक कांस्य-शिल्प और बीच में अरिस्टीड माइलोल की 'सुंदरी' शीर्षक सन १९३६ की कांस्य-रचना है। इसके पास ही डेविड स्मिथ का 'क्यूबी-१२' नामक स्टेनलेस स्टील का एक मूर्ति-शिल्प स्थित है। एलेक्जेंडर काल्डेर का स्टील पर चित्रित एक मूर्ति-शिल्प तथा उसकी बगल में 'दो तश्तरियां' नामक एक अन्य उत्कृष्ट मूर्ति-शिल्प भी यहीं पर स्थित है। इन दोनों मूर्ति-शिल्पों के अतिरिक्त काल्डेर की तरह अन्य शिल्प-कृतियां भी इस संग्रहालय

में प्रदर्शित हैं।

ऑगस्टे रोदां द्वारा सन १८८६ में बनाया गया 'बर्गर्स ऑफ कैले' नामक कांस्य-निर्मित स्मारक मूर्ति-शिल्प इस संग्रहालय की सर्वाधिक उल्लेखनीय कृति है, जो उद्यान के बीचोबीच स्थित है।

अंदर की दीर्घाओं में चित्र तथा बाह्य दीर्घाओं में कुछ शिल्प-कृतियां भी प्रदर्शित हैं। एक दीर्घा में अमूर्त, अभिव्यंजनावादी शैली की कृतियां प्रदर्शित हैं जिनमें से तीन विशेष उल्लेखनीय हैं—टिम स्काट की लाल प्लेक्सीग्लास और स्टील-निर्मित तथा चित्रित एक शिल्पकृति, लारी जोक्स की 'डायमंड ड्रिल सीरीज' का 'ट्रोब्रियांड' शीर्षक बड़ा चित्र तथा फ्रैंक स्टेला का 'डरबजेर्ड-३' नामक एक्रिलिक रंगों से चित्रित पहिये का मूर्ति-शिल्प।

चित्र-दीर्घाओं में से समसामयिक दीर्घा में पॉप आर्ट की उल्लेखनीय कृतियां हैं। इनमें जॉर्ज सेगल का सन ६४ का बनाया 'बस-सवार' शीर्षक एक चित्र दर्शकों का ध्यान विशेष रूप से आकर्षित करता है। यह प्लास्टर-निर्मित एक त्रि-आयामी चित्र है। लारी रिवर्स का 'विल-बोर्ड फार द फर्स्ट न्यूयार्क फिल्म फेस्टि-वल' तथा फ्रांसिस बेकन का तैलचित्र 'स्टडी फॉर पोर्ट्रेट ऑफ वॉन गॉग—३' शीर्षक सन १९५७ का चित्र—इन दीर्घाओं के महत्त्वपूर्ण चित्र हैं।

मूर्ति-शिल्प के संकलन के क्षेत्र में

मेट्रोपोलिटन कला-संग्रहालय

न्यूयार्क के सेंट्रल पार्क में स्थित मेट्रोपोलिटन कला-संग्रहालय अमरीका का सबसे विशाल और संपन्न संग्रहालय होने के साथ ही विश्व में चौथे नंबर का सबसे बड़ा संग्रहालय है। यह सन १९७० में अपनी शताब्दी मना चुका हैं। ३०० मीटर लंबाई में फैले इस संग्रहालय में २४८ से अधिक दीर्घाएं है जिनका क्षेत्रफल आठ हेक्टर है। इसे देखने के लिए विश्व भर से लगभग साठ लाख दर्शक हर वर्ष आते हैं। संग्रहालय के निदेशक टॉमस होविंग का कहना है कि यह संग्रहालय मात्र कला-दीर्घाओं का समूह या प्राचीन और नवीन कलाकृतियों का कोषागार नहीं, बल्कि एक सांस्कृतिक, शैक्षणिक संस्थान है। संग्रहालय में इस समय ३६५,००० कलाकृतियां हैं जिनसे मानव-सम्यता की कलात्मक उपलब्धियों का सर्वेक्षण किया जा सकता है।

साइप्रस, पर्शिया, तुर्की, मेसोपोटामिया, फिलिस्तीन, सीरिया, अरब, भारत, चीन, जापान, कोरिया, थाइलैंड, कंबोडिया, तिब्बत और नेपाल-जैसे पूर्व-एशियाई देशों की प्राचीन कलाकृतियों का इस संग्रहालय में विपुल भंडार है।

प्राचीन कलाकृतियों के साथ ही 'मेट्रोपोलिटन' में यूरोप के महान कलाकारों के चित्र व मूर्तियां भी हैं।

प्रस्तोता : डॉ. जगदीश चंद्रिकेश

इस संग्रहालय का जो गौरवशाली स्थान है उसका कारण हिर्शहॉर्न की मूर्ति-कला के प्रति विशेष अभिरुचि है। इस संदर्भ में एक उल्लेखनीय तथ्य यह है कि अधिकांश कला-संग्रहों और संग्राहकों का ध्यान विशेष रूप से चित्रों पर ही केंद्रित होता रहा है, जबकि हिर्शहॉर्न का ध्यान प्रारंभ से ही, प्रचलित प्रवृत्ति के विपरीत, मूर्ति-कला पर विशेष रूप से केंद्रित रहा।

कुछ आलोचकों ने इस संग्रहालय पर यह आरोप लगाया है कि यह व्यक्ति-विशेष की अभिरुचि की कलाकृतियों का संग्रह है। निश्चय ही इसमें तो कोई संदेह नहीं है कि यह हिर्शहॉर्न की व्यक्तिगत पसंद की कलाकृतियों का संग्रह है, जिनमें कुछ कृतियां प्रचलित परंपराओं से हटकर या कमजोर और अनुपयुक्त भी हैं, लेकिन हिर्शहॉर्न ने इस संग्रहालय के ट्रस्टियों को यह अधिकार भी प्रदान कर दिया है कि वे जिस मूर्ति या चित्र को संग्रहालय में प्रदर्शन के उपयुक्त न पायें उसे हटा भी सकते हैं। वैसे हिर्शहॉर्न का कहना है —"ये सभी कलाकृतियां मेरे लिए मेरे बच्चों के समान हैं। हो सकता है कि मैंने किसी कमजोर या अनुपयुक्त कलाकृति को खरीदकर गलती की हो, लेकिन फिर भी मैं इनमें से प्रत्येक कलाकृति को समान रूप से प्यार करता हूं।"

यह पूछे जाने पर कि अपने इन 'बच्चों' को अपने से अलग करते समय आपको कैसा लग रहा है, हिर्शहॉर्न ने दार्शनिकता का पुट देते हुए कहा, "देर-सवेर हम सबको यह दुनिया छोड़कर जाना ही है, इसलिए इनको अपने से अलग करने पर दुःख की कोई बात नहीं है, बल्कि मेरे लिए खुशी की ही बात है कि इन कलाकृतियों को एक उपयुक्त और अद्भुत घर मिल गया, जहां इनकी देखरेख भली भांति हो सकेगी। इसके साथ ही इन्हें देखकर अन्य लोग भी आनंद ले सकेंगे।"

हिर्शहॉर्न ने आज भी कलाकृतियां खरीदने का शौक नहीं छोड़ा है। उसकी अभिरुचि पूर्ववत बनी हुई है। यदि वह कहीं अच्छी कलाकृतियां देखता है तो उन्हें पहले से कहीं अधिक उत्साह के साथ खरीदकर इस संग्रहालय में भिजवा देता है। ●

प्रख्यात अमरीकी शिल्पकार अलेक्जेंडर काल्डर की भव्य शिल्प-कृति 'टू डिस्क्स'। वाशिंगटन में व्हाइट-हाउस के निकट स्थित यह लौह-शिल्प काल्डर ने, जो पहले इंजीनियर थे, सन १९६५ में बनाया था। काफी ऊंचा एवं विविध रंगों द्वारा चित्रित यह शिल्प कला-प्रेमियों के आकर्षण का केंद्र है।

आज एक कवि का जीवन उस संघर्ष की कहानी है जिसमें वह अपनी आत्मा को अपने व्यक्ति, परिवेश, समाज और विश्व से जोड़ने को सतत उद्यमशील रहता है। समाज व्यक्ति को हर क्षण एक नया मुखौटा अपने चेहरे पर चढ़ाने को विवश करता है और प्रकृत स्वरूप का लोभी कवि उसे हटाकर अपने आपसे, व्यक्ति से, समाज से जूझता रहता है।

व्यक्ति श्यामनंदन, कवि किशोर से कितना जुड़ा, कितना भिन्न है—इसकी मीमांसा कठिन है, लेकिन इतना सत्य है कि इन दोनों के बीच की खाई को पाटने में उसे जटिल अंतर्द्वंद्वों से गुजरना पड़ा है। कविता की प्रेरणा उसे परिवार से मिली। उसके पिता उर्दू- फारसी के अच्छे कवि थे। शिव-भक्ति के उनके अनेक पद गांवों में लोकप्रिय हैं, लेकिन उनकी प्रतिभा नोन-तेल-लकड़ी जोड़ने में बलिदान हो गयी। श्यामनंदन चार भाइयों के बाद पैदा हुआ। मां-बाप की कामना थी, वह लड़की होता। उन्हें सुख के साथ कुछ दुःख भी हुआ। निम्न-मध्यम वर्ग की आर्थिक स्थिति पिता की दीर्घ अस्वस्थता के कारण कुछ और दलकी। इस कारण लड़की न होकर लड़का होना बाद को उन्हें अच्छा ही लगा। तात्पर्य यह कि उसने सीमा

जीवन-प्रबंध का मंगलाचरण

● डॉ. श्यामनंदन किशोर

और सामर्थ्य में जूझते अपने परिवार को बचपन से देखा और वह उसका एक अंग बन गया। निम्न-मध्यवर्ग की झूठी सफेदपोशी, आतिथ्य-सत्कार के परंपरागत संस्कार, स्कूल-कॉलेज जानेवाले बड़े परिवार का भरण-पोषण एवं इन सबके आर्थिक तनाव में खिचते माता-पिता! श्यामनंदन की कवि-प्रतिभा स्कूल में ही खूब चमकी—कवि-सम्मेलनों और पत्र-पत्रिकाओं में वह स्थान पाने लगा। कॉलेज में आते-आते 'शेफालिका' छपी। निराला ने भाषा की, पंत ने अभिव्यंजना की और आचार्य शिवपूजन सहाय ने हृदय-द्रावक गीतों की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

फिर वही बात। श्यामनंदन बहुत कम उम्र में किशोर बन गये—८-९ से कविता रची—१५-१६ तक आते-आते संग्रह छप गया, उसे भी उस समय के नामी प्रकाशक पुस्तक-भंडार, पटना ने प्रकाशित किया; लेकिन तब भी सजे-धजे किशोर बने कवि को श्यामनंदन ने छोड़ा नहीं। किशोर ने निःशुल्क शिक्षा के लिए आवेदन नहीं करने दिया और पिता को विवश देख श्यामनंदन की मां को कभी-कभी अपने गहने बंधक रखकर अपने लाडले के स्कूल-कॉलेज की फीस जुटानी पड़ी।

श्यामनंदन के इस दंश को किशोर ने आज तक नहीं भुलाया है। उसके काव्य में निर्धनों, असहायों और दलितों के लिए जो अशेष करुणा और कातरता है, उसका यही कारण है। संत स्वभाव के उसके पिता के मित्र और प्रशंसक हर जाति और संप्रदाय के थे। श्यामनंदन ने अपने पिता के हर धर्म के मित्रों को चाचा कहना सीखा था, उनसे प्यार पाया था, इसलिए किशोर की कविताओं में जाति-वर्ग और ऊंच-नीच के भेद के विरुद्ध कड़ी आवाज सुनायी पड़ती है, प्यार के क्षेत्र में किशोर का कवि और व्यक्ति दोनों बड़े धनी रहे हैं। शायद ही ऐसा कोई व्यक्ति हो, जो उनके संपर्क में आया हो और जिसका स्नेह या प्यार न मिला हो। लेकिन प्यार को अमिट पिपासा माननेवाले इस कवि (कवि का जीवन एक पिपासा, गीत अधूरे, अधर पराये) ने कभी संतोष नहीं पाया, इसीलिए उसके गीतों में दर्द, अभाव और एक टीस है। 'एक दीप

बर्लिन में काव्य पाठ
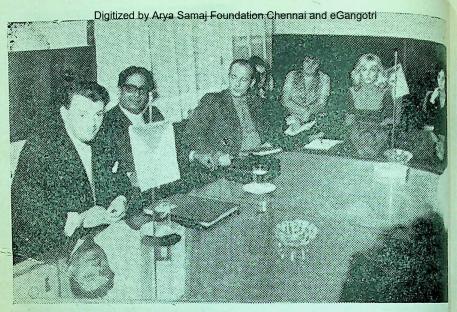
प्यार का न बुझ रहा न जल रहा', 'तुम खुले नयन के सपने हो।'—जैसे जिन प्रारंभिक गीतों को सुनकर बेनीपुरी गहरे आश्चर्य में पड़ गये थे और उन्होंने जिनकी प्रशंसा में कलम तोड़ दी थी, वे ऐसे ही भटके, खोये मन की तड़प की अभिव्यक्ति हैं। कवि ने अपने काव्य-संग्रह 'विभावरी' (४९) की भूमिका में अपने उस मृत्यु-पर्यवसित प्रेम की कथा का संकेत किया है, जिसमें नन्ही नायिका 'सीपी' का स्वर्गवास हो गया है। 'दुख को गान बना लेने दो,' 'ऐसा निर्मम प्राण न देखा'—जैसे गीत उसी शोक की प्रतिध्वनियां हैं।

कवि किशोर को या उन-जैसे प्रेमी हृदयों को व्यक्ति या व्यक्तियों को समर्पित प्रेममय गीतों की कड़ियां प्रसन्न भले ह करती रहीं, लेकिन '४२ में स्कूल छात्रों के साथ आंदोलन में भाग लेनेवा बालक श्यामनंदन के मन को स्वतंत्र देश नयी उमंग, नयी चेतना और नये विहान बहुत झकझोरा। इन दोनों की अभि व्यक्तियां 'विभावरी' में मिलती हैं, आका वाणी के अनेक लोकप्रिय जागरण ए अभियान-गीत भी इस संग्रह में हैं। '४७ के १५ अगस्त को बिहार के छात्रों बीच जो नये प्रयाण-गीत लोकप्रिय हु थे, उनमें इस संग्रह के कई गीत हैं। किशो का कवि यह बराबर सोचता रहा कि व्यक्ति को प्यार के गीत सुनाने, अपने दुख-दर्द दूसरों तक पहुंचाने से ही उसका दायित

समाप्त नहीं होता। जीवन की निराशा की मंझधार में डूबते-उतराते रहने से दूसरों की सहानुभूति मिलती है, प्रेमिल गीतों के रचयिता स्वप्निल कवि को समाज की कातर-दृष्टि मिलती है, लेकिन यहीं उसका कर्त्तव्य समाप्त नहीं होता। प्रश्न यह उठता है कि उन करोड़ों को उसने क्या दिया, जो दुख-दैन्य के रेगिस्तान में नंगे पांव चल रहे हैं, जो अन्याय-उत्पीड़न के चक्र में अनवरत घिर रहे हैं, जो प्रेम के पवित्र धागे पर वासना के मांझे चढ़ाकर दूसरों की आकाश-चढ़ी पतंग काट रहे हैं।

कुछ नहीं दिया? क्या किशोर को उस एकाकी श्यामनंदन को देने को कुछ नहीं? क्या इस समाज में उस-जैसे श्यामनंदन लाखों-लाख नहीं? और तब उसने 'जवानी और जमाना' का संतुलन सोच-समझकर स्थापित किया —

जवानी मस्ती, हंसती जलन
जवानी दो प्राणों का मिलन
जवानी हास, जवानी रुदन
जवानी तन-मन का संतुलन
जमाना विधुर हृदय सुनसान
जवानी का अक्षय सिंदूर

डॉ. श्यामनन्दन किशोर : राष्ट्रीय एकता सम्मेलन इटावा में भाषण करते हुए

किशोर ने सोचा कि दीये-तले घोर अंधियारा है—उसने स्वयं उस बेचारे श्यामनंदन को क्या दिया है, जिसने जी-तोड़ परिश्रम कर विश्वविद्यालय की परीक्षाओं में अपनी ध्वजा लहरायी है? क्या शोध, आलोचना, शिक्षा के अन्य क्षेत्रों में प्रसिद्धि पानेवाले श्यामनंदन ने किशोर को

जीवन और यौवन के विविध दृष्टिकोणों को सूक्ष्म दृष्टि से देखा। प्रणय को प्रेम का व्यापक परिदृश्य दिया—

है बहुत आसान जीवन
को कफन का हार देना
स्वप्न को मुश्किल मगर है
सत्य का आकार देना

भाग्य के बदले लिये मैं
शक्ति अपनी ही भुजा की
आपदाओं की लहर पर
नित मचलता ही रहूंगा
एक आशा पर टिकाये
सांस चलता ही रहूंगा

किशोर के 'जवानी और जमाना' की अनेक कविताओं में आशावाद का गहरा संकेत है, वह दृढ़ आस्था को अपनी पूंजी मानने लगा—

अगर जाना है तुमको पार
बहुत है तिनका का आधार
और मत सोचो मेरे मीत
कहेगा क्या तट से संसार

इस संग्रह के कारण श्यामनंदन की सहायता से किशोर प्रांत की सीमा से बहुत आगे निकल गया। दिनकरजी ने रवींद्रनाथ के शब्दों में इस पुस्तक के कवि का अभिनंदन किया। कई देशी-विदेशी भाषाओं में इसकी रचनाओं के अनुवाद हुए, यानी श्यामनंदन ने किशोर का साथ देकर उसे उपकृत किया। लेकिन प्यार जीवन भर कवि को सिरजता रहा। प्यार की विश्वजनीनता का उसका विश्वास सुदृढ़ रहा—

बन जाना निर्दोष कला है
दुनिया भूल छिपा पाती है
मेरा यही गुनाह कि दिल की
बात अधर तक आ जाती है
कौन हृदय ऐसा है बोलो
जिसे न सूनापन खलता है
कौन जवान कहेगा उसके
भीतर प्यार नहीं पलता है

'कमल, बंधूक और सूरजमुखी' में भी, जिसमें व्यंग्य-प्रधान रचनाएं हैं, कवि ने कमल को नायक मानकर प्रतीक रूप से तीन प्रकार की प्रेयसियों का चित्रण किया है। इस संग्रह में श्यामनंदन का व्यक्तित्व अधिक प्रखर है। 'कोल्हू का बैल,' 'कुंभकार' आदि कविताएं बहुमुखी शोषण के विरुद्ध गहरी प्रतिक्रियाएं हैं,... लेकिन कवि का उग्र व्यक्तित्व पुनः 'ज्वार-भाटा' में आकर प्रेमिल हो गया है। पुनः किशोर की विजय हुई है—श्यामनंदन पर! मिलन, विरह और वियोग के तीन खंडों में विभक्त प्रेम की अनंत कथा ही इसमें वर्णित है।

स्वतंत्रता के पूर्व जो भारतीय जीवन था, उससे अधिक स्वातंत्र्योत्तर भारत को देखने का अवसर कवि और व्यक्ति दोनों को मिला है। इसी बीच विवाह होना, नौकरी में आना, माता-पिता का स्वर्गवास, युवा भाई एवं अन्य प्रिय जनों का देहांत, पारिवारिक दायित्वों का बोझ! 'नयी उषा, नयी दिशा' का जो गीत १५ अगस्त, १९४७ को कवि ने गाया था, उसे बहुत दूर तक प्रतिफलित न होते देख कवि का स्वर अधिक उग्र हो गया। 'स्वराज्य' तो हमने पाया, पर सुराज की व्यवस्था लाने में हम अपने कर्तव्य की ऊंचाई को समझ नहीं पाये। राष्ट्र कितना ऊंचा है, यह नारे में जितना गूंजा, अंतरात्मा में नहीं। हम अपनी ऊंचाई

का अधिक ध्यान देते रहे, देश को भूल गये। फलतः गरीबी, अशिक्षा, बेरोजगारी और पारस्परिक शोषण जिस मात्रा में घटना चाहिए था, घटा नहीं। हम स्वतंत्रता का अर्थ अराजकता लेने लगे। देश का विकास रोकते चले। देश की ऐसी स्थितियों ने कवि को झकझोर दिया। उसने कवि, कलाकार, विज्ञानी, नेता सबके शैथिल्य और दायित्वहीनता को कड़ी फटकार बतलायी। 'सूरज नया पुरानी

यह देश महान है, यह तो कवि को पहले से ही अनुभूत था, लेकिन यह देश महत्तम है उसे विदेश में अनुभव हुआ। यहां की संस्कृति की जड़ इतनी गहरी और उसकी शाखाएं इतनी विस्तृत हैं, उसे प्रवास में अधिक अनुभव हुआ। अतिपरिचय के कारण अवज्ञा का स्वभाव मनुष्य में शायद नैसर्गिक है। अभाव की भूमि भाव के पौधों के लिए अधिक उपजाऊ है। कवि इस धरती से लगाव बहुत महसूस करता है।

पिता पुत्र

मेरठ विश्वविद्यालय के दीक्षान्त समारोह में

धरती', 'युग-बोध', 'शीर्षकहीन' आदि अनेक कृतियों में राष्ट्र के वास्तविक विकास के बाधक तत्वों का विरोध और उसके शिव तत्वों का आह्वान किया गया है। जब-जब देश को बाढ़, अकाल और युद्ध का सामना करना पड़ा, कवि ने अपने काव्य को देश की नैतिकता और साहस को बढ़ाने के लिए समर्पित पाया।

लोग मुक्ति की प्रार्थना करते हैं, कवि बार-बार इसी रूप में जन्म लेने की कामना करता है। उसे आदमी की कमजोरियों से बहुत प्यार है, लेकिन वे कमजोरियां कमजोर से कमजोर को बांधनेवाली हों, आदमी को आदमी से बांधनेवाली हों। दुर्बलता ही कवि को सशक्त बनाती है—दुर्बलता जो दूसरों को नहीं, स्वयं कवि

रूप-सौन्दर्य में नया रंग लाने के लिए

पैरिस ब्यूटी

अब आपके लिए लाये हैं
ब्रा और पैंटी सैट

मोहक रंगों और मन चाहे प्रिन्टों में

'पैरिस ब्यूटी' की एक और भेंट !
आकर्षक और मुलायम ब्रेसियर
के साथ मेल खाती पैंटी ।
फ़ैशन में नयापन चाहने वाली महिलायें
ब्रेसियर और पैंटी का नया सैट
उतना ही पसंद करेंगी, जितना कि
'पैरिस ब्यूटी' के ब्रेसियर !

निर्माता : **पैरिस ब्यूटी**
ब्रेसियर्ज कं०, दिल्ली-7

उपहार सैट
29.75

थोक विक्रेता :

पैरिस ब्यूटी सेल्स कार्पोरेशन

अजमल खाँ रोड, करोल बाग़,
नई दिल्ली-110005 फोन : 566594

को छलती रहती है। जैसे शेफाली चुप रातों-रात अपने वृंतों से अपने आप चू-चूकर किसी के पथ पर बिछकर उसका स्वागत कर रही हो ! सच, किसी के लिए लुट जाने में असीम ऊर्जा अर्जित होती है। कवि ने जिससे प्यार किया है, बहुत गहराई से किया है। समय और परिस्थिति के अंतराल से वह कटने या मिटनेवाला नहीं। बादल के कुछ पल घिर जाने से सूरज का अस्तित्व समाप्त थोड़े ही हो जाता है !

कवि को दुनिया से बहुत कुछ मिला है, लेकिन सबको बांधकर चलने की प्रवृत्ति ने उसे बहुत परेशान किया है। वह इस प्रयोग में असफल रहा है कि दुष्टों का हृदय-परिवर्तन पूर्णतः किया जा सकता है। समय-समय पर डंक मारने की उनकी वृत्ति को मूलतः नष्ट नहीं किया जा सकता। उनके दंश की उग्रता को कम जरूर किया जा सकता है। किशोर की कविताओं में व्यंग्य उसके जीवन को निर्विष करने में सहायता पहुंचाता है और उसके गीतों की प्रेमिल मुद्रा उसे सबसे जोड़े रहती है। उसका संकोच उसे कभी-कभी दब्बू बना देता है। वह कर्त्ता न बनकर माध्यम बनना अधिक पसंद करता है। उसकी यह लालसा कि वह अधिक से अधिक व्यक्तियों को लाभान्वित करे, उसे कभी-कभी ले डूबती है। कृतघ्नता को कवि अक्षम्य अपराध मानने को विवश है। न खुद हो सकता है, न दूसरों का होना बर्दाश्त है उसे। एक बार जोड़कर वह तोड़ नहीं सकता। जिसे अपना मान लिया, मान लिया, चाहे वह उसे मंझधार में भी छोड़ दे। इसीलिए दोस्त को किशोर बड़ी पूंजी मानता है। दोस्ती उसकी हर उम्र के लोगों से रही। वह अपने मीठे परिवार, प्यारे दोस्तों के बल पर धरती को स्वर्ग मानता है।

आत्म-निरीक्षण साधना-शाला की सर्वोत्कृष्ट परीक्षा है। स्वदोष-दर्शन जीवन-प्रबंध का मंगलाचरण है। कवि किशोर और व्यक्ति श्यामनंदन को जोड़कर आइने के सामने खड़ा कर दिया गया है। खड़ा करनेवाला हट तो गया है पर उसकी उपस्थिति का अनुभव मिट नहीं रहा है। वह एक-एक वस्त्र हटाता जा रहा है, पर पूर्णतः निर्वस्त्र होकर अपने को देखा भी तो नहीं जा रहा है। अपनी कुरूपता, अपनी कमजोरी, अपने विकलांग आदमी खुद देखने में संकोच करता है—दूसरों को कैसे दिखलाये। हां, इतना जरूर है कि बनानेवाले ने उसे सुंदर, सुडौल बनाकर कहीं कालिख लगा दी है, कहीं अंग-भंग कर दिया है ! वह भाग्यवान है कि उसे इतने उदार मित्र मिले हैं जो उसकी कालिख को डिठौना और उसकी अनगढ़ता को उसका बांकपन मानते हैं। यही भ्रम उसका सुख है, यही प्यार उसकी दौलत है। उसका दोष ही उसके व्यक्तित्व का लुभावना स्वरूप है, दूज का टेढ़ा चांद ही उसके आशुतोष मित्रों के मस्तक पर चढ़ गया है !

—अनिकेत, मुजफ्फरपुर-२

रामशरण 'दीनबंधु', मुजफ्फरपुर : चित्र-कथा परीक्षा-प्रणाली क्या है ?

नौकरी के उम्मीदवारों के व्यक्तित्व और उनकी मनोगत प्रवृत्तियों को जानने के लिए अनेक परीक्षा-प्रणालियां अपनायी जाती हैं। उन्हीं में से एक है चित्र-कथा परीक्षा-प्रणाली। इसमें उम्मीदवार को ३० सेकंड या एक मिनट के लिए कोई चित्र दिखाकर कहा जाता है कि वह साढ़े तीन या चार मिनट में उस पर एक कहानी लिखे। चूंकि इतने कम समय में आदि से अंत तक पूरी एक कहानी लिखना होती

है, इसलिए उम्मीदवार को अधिक सोचने और कल्पना करने का समय नहीं मिलता। फलतः वह स्वयं को ही उस कहानी का नायक मानकर झटपट लिख डालता है कि चित्र में दिखायी गयी स्थिति में यदि वह स्वयं होता तो क्या करता। इस प्रकार लिखी गयी कहानी में उसके गुण-दोष प्रकट हो जाते हैं, जिनके आधार पर उसे नौकरी के लिए चुना या रद्द किया जा

सकता है। एक ही कहानी से उम्मीदवार का पूरा व्यक्तित्व सामने नहीं आता, इसलिए एक ही बैठक में तेजी से एक के बाद एक दस-बारह चित्र-कथाएं उससे लिखवायी जाती हैं।

सुहास नवलकर, शहडोल : Charge d'affairs **का उच्चारण और अर्थ बतायें।**

यह फ्रेंच भाषा का शब्द है और इसका उच्चारण है 'शार्ज डि अफेयर्स'। शार्ज डि अफेयर्स उस कूटनीतिक प्रतिनिधि को कहते हैं, जो किसी देश के विदेश-विभाग या मंत्रालय द्वारा किसी अन्य देश में भेजा जाता है। वह अस्थायी तौर पर राजदूत का काम करता है, किंतु उसका पद राजदूत का नहीं होता। पूर्ण दौत्य-संबंधों के अभाव में या राजदूत की अनुपस्थिति में वह कार्यकारी दूत के रूप में काम करता है।

प्रवीरसिंह भट्टी, कुरुक्षेत्र : मैकियावेली कौन था ?

मैकियावेली इटली का राजनीतिज्ञ था। अपने राजनीति-संबंधी विचारों के कारण वह विख्यात भी है और कुख्यात भी। उसका जन्म सन १४६९ में फ्लोरेंस के एक मध्यमवर्गीय परिवार में हुआ था।

उसे शुरू से ही राजनीति में रुचि थी। तीस वर्ष की उम्र में उसे फ्लोरेंस के सचिव और द्वितीय चांसलर का पद मिला, जो उसने सन १५१२ तक योग्यतापूर्वक संभाला। तदुपरांत फ्लोरेंस की राजसत्ता में परिवर्तन होने के कारण उसका पद तो छीना ही गया, उसे षड्यंत्रकारी मानकर कैद किया गया और यातनाएं दी गयीं। बाद में उसे छोड़ दिया गया, लेकिन वह सक्रिय राजनीति में भाग नहीं ले सकता था, इसलिए उसने अपने जन्म-स्थान सान कासियानो लौटकर लेखन-कार्य शुरू किया और कई ग्रंथ लिखे। उसकी प्रसिद्ध पुस्तकें हैं—द प्रिंस, हिस्ट्री ऑव फ्लोरेंस, डिस्कोर्सेज अपॉन लाइवी, आर्ट ऑव वार, डायलॉग ऑन लैंग्वेज आदि, जिनमें से 'द प्रिंस' सबसे अधिक विवादास्पद रही है।

रसूल हुसैन, अलीगढ़ : क्या मक्खन निकले हुए दूध में इतना प्रोटीन रहता है कि हमारी शारीरिक आवश्यकता को पूरा कर सके?

जी हां, मक्खन निकले हुए दूध से प्रोटीन की आवश्यकता पूरी हो सकती है। उसमें स्निग्ध पदार्थ (चिकनाई) को छोड़कर शेष सभी तत्त्व बचे रहते हैं। इसलिए मक्खन निकले दूध को व्यर्थ समझना भूल है। कई बार तो वह सामान्य दूध से अधिक गुणकारी होता है।

रंजना, बरेली : आभीर जाति का उल्लेख महाभारत में कई बार आता है, किंतु स्पष्ट नहीं होता कि यह जाति क्या थी। कृपया स्पष्ट करें।

आपकी उलझन सही है। महाभारत में एक स्थान पर आभीरों को सिंधु के पश्चिम में रहनेवाली जाति कहा गया है। दूसरे स्थान पर उन्हें द्रोण के सुपर्णव्यूह

में योद्धाओं की पंक्ति में रखा गया है। तीसरे स्थान पर उन्हें पंचनद में द्वारका से कृष्ण की विधवाओं को लेकर लौटते अर्जुन पर आक्रमण करते दिखाया गया है और चौथे स्थान पर राजसूय-यज्ञ के प्रसंग में उन्हें शूद्र बताया गया है। इसलिए इतिहासकारों ने आभीर जाति का इतिहास अन्य साक्ष्यों के आधार पर खड़ा करने की चेष्टा की है। ये साक्ष्य हैं काठिया-

वाड़ में सुंद नामक स्थान में प्राप्त अभिलेख (१९१ ई०), एंथोवेन का नासिक-अभिलेख (३००ई०) और समुद्रगुप्त के प्रयाग-स्तंभ का लेख (३६० ई०)। इन साक्ष्यों से पता चलता है कि आभीर पश्चिमोत्तर भारत (मालवा, गुजरात, राजस्थान आदि) में रहनेवाली जाति थी, जो धीरे-धीरे मध्य एवं पूर्वी भारत में फैल गयी। इनमें से उच्च वर्ग के लोग क्षत्रिय और वैश्य बन गये और शेष शूद्रों में मिल गये।

सनातन 'आजाद', जमशेदपुर : 'बांबे हाई' क्या है?

'बांबे हाई' अरब सागर में बंबई के उत्तर में कुछ कि. मी. दूर एक समुद्री क्षेत्र है, जहां तेल एवं प्राकृतिक गैस आयोग द्वारा तेल निकाला जा रहा है। अब तक भारत में सबसे अधिक तेल बांबे हाई में ही मिला है और आशा की जा रही है कि सन १९७६ में यहां से लगभग दस लाख टन तेल प्राप्त होने लगेगा।

मिर्जा इस्माइल बेग, दिल्ली : क्या 'हीमोफीलिया' नामक रक्त-रोग पुश्तैनी होता है? यदि हां, तो माता से प्राप्त होता है या पिता से या दोनों से?

हीमोफीलिया का मूल कारण है माता या पिता के प्रजनन-जीवाणु (डिंब या शुक्राणु) में X क्रोमोसोम का विकार-ग्रस्त होना। शायद आप जानते होंगे कि पिता के शुक्राणु में X और Y नामक दो विभिन्न 'जीन' होते हैं, जबकि माता के डिंब में केवल दो X जीन होते हैं। माता-पिता के केवल X जीन मिलने से लड़कियां पैदा होती हैं, जबकि माता के X और पिता के Y जीन मिलने से लड़के पैदा होते हैं। इसलिए यदि पिता का X जीन विकृत हो तो लड़के हीमोफीलिया से मुक्त रहते हैं, लेकिन यदि रोग माता में हो तो लड़कों और लड़कियों दोनों में रोग की संभावना पचास प्रतिशत रहती है।

आनंद, जयपुर : 'प्लियोफिलम' किसे कहते है?

प्लियोफिलम रबड़ से बनायी जाने-वाली एक विशेष प्रकार की झिल्ली है, जिसका निर्माण कुछ वर्ष पहले आर्मीनिया के पॉलीमर रिसर्च इंस्टीट्यूट ने किया था। इसका उपयोग खाद्य-वस्तुओं को ताजा रखनेवाले आवरण के रूप में किया जा सकता है, क्योंकि इसकी रवेदार बनावट आक्सीजन को अंदर नहीं घुसने देती और कार्बन डाई-आक्साइड उसमें से अंदर पहुंच जाती है। इससे मांस, मछली, फल आदि काफी देर तक ताजे बने रह सकते हैं। यह वाटरप्रूफ होती है।

एक प्रश्न चलते-चलते

अनुराग वर्मा, झांसी : ऐसा प्रश्न बताइए जिसका उत्तर किसी भी प्रश्न से बड़ा हो?

आप कौन हैं?

—बिन्दु भास्कर

प्रतिबिंब

जन्म लेना ही पड़ा एकांत दर्पण में मुझे
आ गयी जब छविप्रसू आकृति किसी की सामने
फूलना ही पड़ गया मुझको विभा के वृंत पर
स्तब्ध छायापिंड को गति दी उसी के गान ने

झिलमिलाना ही पड़ा मुझको क्षणिकता में चमक
थी भिदी जिसमें छटा सतरंगिनी सूरजमुखी
रह गया मैं मुग्ध अपनी रंजना में ही चकित
कर न पायी काल-निर्ममता मुझे कण-भर दुखी

बुझ गयी जब वर्तिका सहसा छली नेपथ्य की
धार में जलबिंदु-जैसा मैं ढरककर सो गया
एक चित्रित स्वप्न-जैसा ही यवनिका में छपा
मैं बदलते दृश्य में आया-गया-सा हो गया

लुप्त होना ही पड़ा इस रंगशाला से मुझे
शून्यता के दिग्दिगंतों तक धंसे फैलाव में
पुंछ मुझे जाना पड़ा उस दर्पणी आलोक से
नव्यतर सौंदर्य-रूपों के बनाव-रचाव में

——अंचल

(दक्षिण सिविल लाइन, पचपेड़ी,
जबलपुर (म. प्र.)

लपटोंवाली आग

तुम्हारी लपटोंवाली आग
बनी मेरे अंतर का राग

हृदय की मेरी दीर्ण दरार
तुम्हारा लावामय उद्गार
निकलते जिससे बारंबार
उबलते हुए बुलबुले झाग

उफनकर मिलन-लगन का ज्वार
कंपाता नीलगगन का तार
गयी बन पवन-पटल के पार
छंद में मेरी व्यथा विहाग

न लगता प्रिय गुलाब का हास
भ्रमर का होता जिस पर रास
न भाती पारिजात की वास
तुम्हारा ऐसा गंध-पराग

–रामइकबाल सिंह 'राकेश'

(पोस्ट : भदई, मुजफ्फरपुर, (बिहार)

पंजाबी कहानी

• सुरजीत विरदी

एक शहर से चली हुई गाड़ी दूसरे शहर तक पहुंचनेवाली है, दूसरे स्टेशन के बाद तीसरे स्टेशन पर पहुंच जाएगी, फिर उससे आगेवाले पर; जैसे पिछले स्टेशन से पहलेवाला कोई और था, उससे पिछला कोई और। अगला स्टेशन मेरा है—अर्थात, वहीं मुझे उतरना है, राजन से मिलना है। राजन मेरा साथी है, मेरी अपनत्व-भावना है, अंतरंग इच्छा! मुझे राजन से क्यों मिलना है? —यह मुझे स्वयं नहीं मालूम, बस यों ही मन हुआ—चला आया। गाड़ी की खिड़की से बाहर झांकता हूं—हरियाली है। दूर . . . इक्का-दुक्का मकान नजर आ रहे हैं, जो गाड़ी की घट रही रफ्तार के साथ बढ़ रहे हैं। दिन की मद्धिम पड़ती रोशनी दुविधा में है कि कब रात की रोशनियों को जगह मिले! आकाश निरर्थ और शून्य-सा है—गाड़ी प्लेटफार्म पर रुक गयी है। ऐसे कई प्लेटफार्मों पर कई गाड़ियां रुकी हैं, कई चल पड़ी हैं, बहुत-सी न मालूम कब तक खड़ी रहें! ट्यूबों के प्रकाश में उतरते-चढ़ते लोग नाटक के पात्रों-जैसे लगते हैं, कागजी चेहरों-वाले!

बाहर आते ही राजन के घर तक पैदल चलने को जी चाहता है। डेढ़ मील तो कुछ भी नहीं, मैं दस मील भी चल सकता हूं—ऐसे नशीले मौसम में। सड़कों पर भरपूर रौनक और आपाधापी है। यह राजन का शहर है, इसलिए मेरा शहर है। राजन से मैं बहुत दिनों बाद मिलने आया हूं। वह मुझे देखकर खुश होगा, सौ-पचास गालियां देगा, फिर हम पियेंगे, बातें करेंगे, इधर-उधर की—भीतर-बाहर की। शायद राजन घर पर हो ही न! शायद वह किसी अन्य शहर में गया हुआ हो, या मेरे शहर ही चला गया हो! शायद हमारी गाड़ियां किसी पड़ाव पर एक-दूसरे की विरोधी दिशा में निकल गयी हों। खैर, किसी पार्क में एक बेंच पर सो जाऊंगा, या सारी रात घूमता
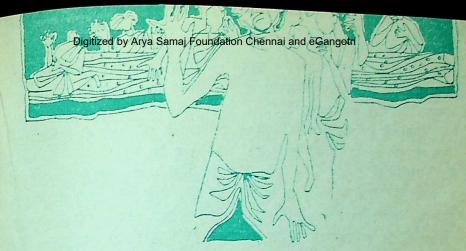
रहूंगा। शायद राजन रास्ते में ही कहीं आता मिल जाए, किसी फिल्मी दृश्य की तरह। मेरे बायें हाथ सिनेमा आ गया है। इसे देखकर मुझे कई दिन पहले की एक रात याद आयी है, जब मैं और रेशमा बालकनी की जुड़ी हुई सीटों पर सटकर फिल्म देख रहे थे। मैं संसार-भर के साहित्य में से याद किये वाक्य उसके कानों में फेंक रहा था। वह सारी दुनिया के अभिनेता-अभिनेत्रियों की बातें करती रही थी—किंतु मेरे हाथ और उसके अंग फ्रायड के ठीक या गलत होने के बारे में लड़ रहे थे। मुझे तो फिल्म का नाम भी याद नहीं, लेकिन बाद में रेशमा ने मुझे संवादों के साथ पटकथा भी सुना दी थी। इस शहर की लड़कियां बहुत खूबसूरत हैं। शायद राजन भी किसी के साथ सिनेमा देख रहा होगा, किंतु उसे तो होटल का कमरा अधिक प्रिय है। वह चाकू पैना करने के बजाय उसे चलाने में ही अधिक यकीन करता है।

अगले चौक पर इतनी भीड़ क्यों है? इतना बड़ा हुजूम तो मैंने कभी नहीं देखा। शायद कोई दुर्घटना हुई है। किंतु क्या? मैं भीड़ में जा घुसा हूं। धक्के देता, धक्के खाता, घिसटता, रगड़ता मैं आगे बढ़ रहा हूं, किंतु भीड़ का कहीं अंत ही नजर नहीं आ रहा। इतना आगे आकर पीछे लौटना कठिन ही है, लेकिन मैं पीछे नहीं लौटूंगा। भीड़ के भीतर तक पहुंचकर मामले की तह तक पहुंचूंगा।

पीछे से आये एक धक्के के साथ आगे खड़े किसी पहलवान की पीठ से जा चिपका हूं और आठवीं कक्षा में पढ़ी 'ब्रामा प्रेस' स्मरण हो आयी है। पहलवान आग्नेय नेत्रों से गरदन पीछे घुमाकर मेरी तरफ ऊपर से नीचे तक देखता है। मैं गले का थूक कठिनाई से भीतर निगल-कर मुसकराते हुए लगभग चीख पड़ता हूं— "यह सारा मामला क्या है जी? आपको तो दिखायी देता होगा।"

वह अपनी बांहों की शक्ति से भीड़

की लहरों को पीछे धकेलता है और मुझे भुजाओं से पकड़कर अपने सिर तक उठा लेता है, फिर कड़कती आवाज में पूछता है, "तुम्हें कुछ दीखता है?"

"मुझे तो सिरों के समुद्र के अलावा कुछ भी नहीं दीखता!"—मैं कहता हूं।

"नहीं!"

वह मुझे सिरों की सतह पर गिराकर और आगे निकल जाता है। मैं कुछ देर सिरों पर ही इधर-उधर तैरता हूं, पैरों में गिरकर गोते खाता हूं और बड़ी कठिनाई से संभलकर अपने पैरों पर खड़ा हो सका हूं। मेरी कमीज, पतलून से बाहर निकल गयी है और फट भी गयी है। मैं पहलवान को जोर-जोर से गालियां दे रहा हूं। पीछे से किसी ने मेरे बालों को मुट्ठी में भर लिया है, लेकिन भीड़ के हलके-से धक्के ने मुझे आजाद कर दिया है। मैं देखना चाहता हूं कि भीड़ की गहराई में क्या है? इतनी भीड़ क्यों? कोई कत्ल हुआ है क्या?

"नहीं, कत्ल नहीं हुआ!" मेरे पास से ही कोई बोला है, मैं हैरान हूं —इसने मेरी सोच की आवाज कैसे सुन ली? . . . लेकिन हो सकता है, मैंने चीखकर ही पूछा हो। वह मुझ-सा ही साधारण आदमी है। मैं उसके सिर से सिर जोड़कर पूछता हूं, "अगर कत्ल नहीं हुआ तो फिर क्या हुआ है?"

"यह तो जी, मुझे भी नहीं मालूम!"

"कोई पागल हो गया?"

"मालूम नहीं।"

"कोई रंगे-हाथों पकड़ा गया?"

"यह भी नहीं मालूम।"

"कोई बौराया हुआ कुत्ता है?"

"मुझसे क्यों पूछते हो? मुझे नहीं पता, खुद देख लो।"

हमारी आवाज शोर में खो गयी है। इस शोर में से मेरी अपनी ही आवाज मेरे प्रश्न का उत्तर दे रही है, जिसका उत्तर स्वयं मुझे नहीं सूझ रहा—किंतु मुझे तो राजन से मिलना है, यह मैं कहां आ फंसा हूं! राजन शायद कहीं इसी भीड़ में हो। रोशनी अब घटती जा रही है। बत्तियां जैसे गायब ही हो गयीं। कुछेक टार्चों की रोशनी इधर-उधर घूमती है। मुझे अब अहसास हुआ है कि भीड़ कहीं एक जगह नहीं खड़ी थी, चलती रही है

और शायद शहर से बाहर आ गयी है। टार्च की तेज रोशनी हवा में घूमती पतली और लंबी छड़ी की तरह हिलती है, इधर-उधर घूमती है और अचानक इसकी चमक में मुझे राजन का चेहरा दिखायी ता है। उसके माथे से खून बह रहा है कमीज फटी हुई है। चीखते हुए के गले की नसें उभर आयी हैं। राजन क्या कर रहा है ? मैं यहां क्या कर हूं ? मैं राजन को आवाज देता हूं इस शोर में मुझे भी नहीं सुनायी पड़ती। राजन दूर नहीं, लेकिन उस तक पहुंचना असंभव है। . . . किंतु मैं भीड़ के इस भाग को नहीं छोड़ूंगा, चूंकि राजन

समीप है। टार्च की रोशनी में राजन का चेहरा फिर देख सका हूं; लेकिन वह कुछ दूर हो गया है। मेरा एक पांव कीचड़ में धंस गया है, उसे बाहर निकालते समय जूता वहीं रह गया है। जूता ढूंढ़ने के लिए झुकना असंभव है।

अंधेरा बढ़ रहा है और इसी के साथ मेरी जिज्ञासा भी। ये लोग कहां जा रहे हैं ? जहां जा रहे हैं, वहां जाकर क्या करेंगे ? अब मुझे राजन का ध्यान भी नहीं आ रहा और मैं सारी ताकत लगाकर इंच-इंच आगे बढ़ता जा रहा हूं, नये फासले ढूंढ़ रहा हूं। हुजूम सिकुड़ता जा रहा है, जैसे गन्नों का गट्ठर पेरने की गरारी के नजदीक आ रहा हो। सारा हुजूम एक काले, बड़े पर्वत-जैसा है, जो अगणित पैरों से धीरे-धीरे आगे रेंगता जा रहा है।

मुझे अपने पैरों के तले पक्का फर्श महसूस हो रहा है, जैसे कंक्रीट की बड़ी-बड़ी सीढ़ियां हों। मेरे बिना जूते के पांव का मोजा फट गया है और शायद खून भी निकल रहा है, लेकिन मैं कुछ नहीं कर सकता। अब ऊपर अंधेरा बहुत गहरा हो चला है, सितारे भी नहीं दिखायी देते। नीचे जमीन पक्की और समतल है। —शायद हम किसी बड़े किले, पुराने मंदिर या मसजिद में आ घिरे हैं और ऊपर छाया अंधेरा कोई बड़ा गुंबद अथवा ऊंची छत है। टार्चों की रोशनी मेरे सिर से ऊंची है, इसलिए मुझे ठीक से कुछ

भी नहीं दिखायी दे रहा। पूरी ताकत लगाकर खिसकता हुआ, मैं फासला नापकर एक दीवार से जा लगा हूं। उसे हाथों से छूता हूं, ईंटें भुरभुरी हैं, पलस्तर उखड़ा हुआ और सीलन-भरा है। अब मेरा हाथ एक चौखट पर है। मालूम नहीं, यह चौखट लोहे की है, लकड़ी की अथवा सीमेंट की, लेकिन है कोई बहुत बड़ा 'मिथ'। मैं अपने-आपको निचोड़ता, भीड़ में से खिसक गया हूं—फिसल गया हूं और इस बड़ी चौखट में जा घुसा हूं। गीली कलई की गंध मेरे दिमाग में जा घुसी है। मैं पैरों से छूकर दो-चार सीढ़ियां उतर आया हूं, और जमीन फिर समतल है। मैंने दूसरा जूता भी निकाल दिया है, फर्श सीलन-भरा है। ऊपर फैलायी बांह छत से जा लगी है, छत बहुत नीची है।

अंधों की तरह इधर-उधर हाथ मारे जा रहा हूं। अचानक मेरा हाथ किसी कोमल जगह पर जा लगा है, जैसे अंगूरों का कोई बड़ा-सा गुच्छा पकड़ लिया हो और साथ ही अगणित सुइयां मेरे हाथ में चुभ गयी हैं। मैं चीख मारकर फर्श पर लेट गया हूं। एक टार्च की रोशनी मुझ पर पड़ी है और इसकी क्षणिक चमक में मैं देखता हूं कि लाखों तीखी मक्खियां, भिड़ें उड़ती हुई मेरी ओर आ रही हैं। तेज चलते पंखे के ब्लेडों की तरह मैं अपने हाथ, मुंह के आसपास घुमा रहा हूं। फिसलती हुई टार्च मेरे समीप आ पड़ी है। राजन मेरे गिर्द घूम रहा है। उसका मुंह मक्खियों का छत्ता बना हुआ है। अपनी कमीज उसने मेरे मुंह पर दबा रखी है। मेरे मुंह पर दबे कपड़े के नीचे हजारों डंक मेरी सांस को पिरोये जा रहे हैं। मैं दस आदमियों की ताकत से टांगें, बांहें घुमा रहा हूं। मैं रावण-जितना हो [illegible] हूं। मेरे सिर में भरी आतिशबाजी च[illegible] वाली है। आंच मेरे पांवों से शुरू ह[illegible] जांघों में से चलती हुई मेरे सिर की [illegible] सरकती आ रही है—मेरे शरीर [illegible] निकलकर त्रिशूल बाहर आ गये हैं [illegible] सारी भीड़ मुझ पर गिर पड़ी है।

—अनु. फूलचन्द 'मानव'

माधुरी ने तंबाकू के गुणों से प्रभावित होकर श्री जी से पूछा, "यदि मैं तंबाकू खाऊं तो चक्कर खाकर गिर तो नहीं पड़ूंगी?"

"कदापि नहीं, अगर आप कुर्सी पर बैठकर खायें!" श्रीजी ने सहज भाव से उत्तर दिया।

*

एक महाशय घायल होकर डॉक्टर के पास पहुंचे तो उसने घाव पर तीन टांके लगाये और बिल दे दिया।

"तीन टांकों के बीस रुपये!"—वह महाशय चिल्लाये।

"जी हां। यही मैं सबसे लेता हूं।"

"भगवान का लाख-लाख शुक्र है कि आप मेरे दर्जी नहीं हुए," उन महाशय ने जाते हुए कहा।

के हृदय में अपनी भाषा के प्रति प्रेम उत्पन्न कर दिया। —शिवकुमार गोयल

चाबुक की मार

महाकवि निराला से भेंट करने के लिए एक उच्चाधिकारी आये थे। उन्होंने अपनी कार सड़क के बीच में ही खड़ी कर दी और भीतर चले गये। इसी बीच एक बैलगाड़ीवाला उधर निकला। उसने यद्यपि बहुत बचाकर गाड़ी निकाली, फिर भी रास्ता संकरा होने के कारण कार के मडगार्ड से बैलगाड़ी टकरा ही गयी और मडगार्ड कुछ टेढ़ा हो गया। अधिकारी ने जब खिड़की से यह देखा, तब वे तुरंत गुस्से से तमतमाते हुए बाहर आये और गाड़ीवान का चाबुक छीनकर उसे दो-चार चाबुक जड़ दिये। निरालाजी से यह अत्याचार देखा न गया और वे 'अरे . . . रे, यह क्या करते हो ?' चिल्लाते हुए दौड़े और चाबुक छीनकर अधिकारी को दो-चार चाबुक मार दिये। अधिकारी चीखे, "निरालाजी, मुझे क्यों मारने लगे ?" निरालाजी ने जवाब दिया, "जो मनुष्य होकर, सभ्य और सुशिक्षित होकर अमानुषिक कार्य करता है, उसके साथ निराला यही व्यवहार करता है।"

अवकाश नहीं चाहिए

'हम काम नहीं कर सकते।'

"क्यों ?"

"इसलिए कि आप सप्ताह में दो दिन का अवकाश रख रहे हैं।"

"तो क्या तुम लोग सप्ताह में तीन दिन का अवकाश चाहते हो ? हमारे अमरीका में तो सप्ताह में केवल दो दिन का ही अवकाश होता है।"

"तीन दिन का नहीं, हम सप्ताह में केवल एक दिन का अवकाश चाहते हैं, जैसा कि हमारे देश जापान में होता है।"

"क्यों ? तुम्हें दो दिन के अवकाश में क्या घाटा है ? यह तो तुम्हारे हित में है।" जापान में नवनिर्मित अमरीकी मिल के मैनेजर सर जेम्स ने जापानी श्रमिकों से साश्चर्य पूछा।

"एक दिन के बजाय दो दिन का अवकाश रहने से हम आलसी बन जाएंगे। मनुष्य स्वभावतः अवकाश के दिनों में अन्य दिनों की अपेक्षा अधिक मौज-मजे से रहता है, इसलिए उसका व्यय-भार बढ़ जाता है। जो अवकाश हमारी श्रम-शक्ति घटाये, हमें आर्थिक बोझ से दबाये, ऐसा अवकाश हमें नहीं चाहिए।" —महाराज

तांत्रिक शक्तियों की चेतन

• स्वामी मदनानन्द
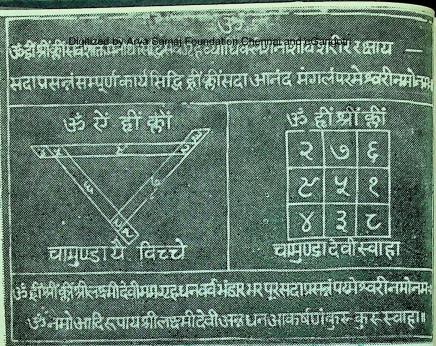
मेरे सामने एक छटपटाता हुआ युवक आकर गिरा। उसका चेहरा पीला पड़ गया था, हाथ-पैर ऐंठ रहे थे, मुंह से झाग निकल रहा था और आंखें बार-बार इस तरह मिचमिचा रही थीं जैसे रात के अंधेरे में अचानक नींद टूटने पर हजारों तेज मशालों की चकाचौंध वह बर्दाश्त न कर पा रहा हो। अपने यांत्रिक अनुभव से मैं तुरंत समझ गया कि उसने सूरज से आंखें मिलाने का दुस्साहस किया है। अपनी धाक जमाने के लिए वह अकसर साथियों के बीच बढ़-चढ़कर बातें किया करता था। एक दिन किसी मामूली पुस्त‍क में सूर्य-साधना की चर्चा पढ़कर उसने घोषणा कर दी कि मैं दिव्य दृष्टि प्राप्त करके रहूंगा। दूसरे दिन वह बिलकुल सवेरे जागा और अपनी अधूरी जानकारी का सहारा लेकर जुट गया सूर्य-साधना में। जैसे-जैसे किरणें तीखी होती गयीं वह अपने मन को और मजबूत करता गया। अचानक न जाने क्या हुआ कि रोशनी का दहकता हुआ लावा उसकी आंखों में स

गया और पूरे शरीर में किरणों की जलती हुई बरछियां चुभने लगीं।

आज तंत्र भी एक फैशन बन गया है, लेकिन वास्तव में यह न तो पारलौकिक शक्ति से जोड़नेवाला कोई माध्यम है और न जीवन को भौतिक सुविधाएं प्रदान करनेवाला साधन। हिप्पियों और निराशावादियों की तरह गांजा और चरस पीने, एल. एस. डी. खाने और फैशन की तरह तंत्र का इस्तेमाल करनेवाले लोग जिंदगी भर के लिए उसी तरह बेकार हो जाते हैं, जैसे वास्तविक तंत्र-ज्ञान से अपरिचित वह युवक।

नितांत अकेला

मुझे ठीक याद है कि माता-पिता का देहांत हो जाने के बाद इस संसार में मैं नितांत अकेला रह गया था। एक मामा थे, उन्होंने भी मुझे मारा-पीटा और घर से भगा दिया। निराश और निराश्रित मैं अपने जीवन की मंजिल तय करने के लिए अकेला ही निकल पड़ा। कलकत्ता पहुंचने पर उदास भटक रहा था कि एक साधु से भेंट हो गयी। वह मुझे बेलूर-मठ ले गया। वहां के आध्यात्मिक वातावरण का मेरे किशोर मन पर गहरा प्रभाव पड़ा। बेलूर-मठ से कुछ ऐसे संपर्क बने कि मैं नोआखाली चला गया और वहां राम ठाकुर वैष्णव के पास रहने लगा, लेकिन उनकी भक्ति-पद्धति मुझे जंची नहीं, इसलिए मैं कामाख्या-कामरूप पहुंच गया। वहां मैंने गुरु भूतनाथजी (चित्रकूट वाले नहीं) ...

अत्याधुनिक जीवन में और विशेष रूप से पश्चिमी जगत में लोग तंत्र-शक्ति और तांत्रिक चेतना के संबंध में दिलचस्पी के साथ चर्चा करते हैं। स्वामी मदनानन्द ने न केवल तंत्र-शास्त्र का अध्ययन किया है, बल्कि वे तंत्र-साधना भी कर चुके हैं। उन्होंने अपने अनुभव के आधार पर अधिकारपूर्वक यह लेख लिखा है, लेकिन हमारा इससे सहमत होना आवश्यक नहीं है। स्पष्ट है, कोई भी तांत्रिक क्रिया बिना गुरु का निर्देशन प्राप्त किये नहीं की जानी चाहिए।

—संपादक

स्वर्गीय) के चरणों में बैठकर दीक्षा प्राप्त की। उन्होंने मुझे कुछ बीज-मंत्र दिये जिनसे मैं आत्मज्ञान के प्रकाश से भर गया।

गुरु भूतनाथजी ने मुझे तंत्र की और अधिक शिक्षा प्राप्त करने के लिए गुरु नंबूदरीपाद के पास त्रिवेंद्रम भेज दिया। गुरु नंबूदरीपाद शंकराचार्य के सिद्धांतों को माननेवाले थे। वहां कुछ सीखने के बाद मैं उड़ीसा के साक्षीगोपाल नामक स्थान गया और अजुध्याबी महंती गुरु के निर्देशन में तंत्र का अध्ययन किया। लंबे समय तक इतनी जगहों पर भटकते हुए मैंने तंत्र की सम्यक शिक्षा प्राप्त की, ताकि अधकचरे ज्ञान के कारण कहीं मैं मुसीबत में न फंस जाऊं। मैंने निश्चय कर लिया था कि तंत्र-संबंधी विविध प्रक्रियाओं की पूरी जानकारी प्राप्त करने के बाद ही मैं साधना शुरू करूंगा, तभी तो पीड़ित मानव-समुदाय का तंत्र के द्वारा उपचार कर सकूंगा। तंत्र की साधना बिना किसी गुरु के नहीं करनी चाहिए अन्यथा हानियां हो सकती हैं। सबसे अधिक मनोवैज्ञानिक दुष्प्रभाव पड़ता है।

उड़ीसा में अपनी तंत्र-शिक्षा पूरी करने के बाद मैं कलकत्ता लौट आया। वहां मैंने १४ अगस्त, १९४७ को पहली भविष्यवाणी की। मैंने लॉर्ड माउंटबेटन को लिखा था कि स्वतंत्रता के लिए १४ और १५ अगस्त की मध्यरात्रि का समय भारत के लिए शुभ नहीं है—देश बाढ़, भूकंप, तूफान, अशांति और युद्धों से घिर जाएगी। फ्रांस के लॉरी कॉलिंस और डोमिनिक लापियर की पुस्तक 'फ्रीडम एट मिडनाइट' में मेरी इस भविष्यवाणी की विस्तृत चर्चा है। अब तक मैं १४७ भविष्यवाणियां कर चुका हूं।

निरंतर साधना करते-करते तांत्रिक में अंतर्दृष्टि उत्पन्न हो जाती है और वह सहज ही भविष्यवाणियां करने लगता है। तांत्रिक त्रिकालदर्शी होता है। वह भूत, भविष्य, वर्तमान तीनों कालों के बारे में बता सकता है। यद्यपि मैंने ज्योतिष का भी अध्ययन किया है, लेकिन मेरी अंतर्दृष्टि के विकसित होने में निश्चित रूप से पूर्वजन्म के संस्कारों का भी प्रभाव रहा होगा।

तंत्र : वैज्ञानिक उपचार-प्रक्रिया

मैं तंत्र को भगवान से नहीं जोड़ता, उसे पूरी तरह वैज्ञानिक पद्धति पर आधारित उपचार-प्रक्रिया मानता हूं। मन में उठती भावनाओं और पूरे शरीर में फैली नाड़ियों का तंत्र से घनिष्ठ संबंध होता है। भावना विविध शक्तियों का भंडार है। भावना से ही शक्तियों का उदय होता है, इसलिए तांत्रिक अपने मन में जैसी भावनाएं संयोजित करता है वैसी ही शक्तियां उसे प्राप्त होती हैं—

यादृशी भावना यस्य
सिद्धिर्भवति तादृशी

—जिसकी जैसी भावना होती है, उसे वैसी ही सिद्धि मिलती है। विश्वासों के आधार पर जीवन का स्थूल रूप तैयार

होता है या यों कहें कि जैसा बीज होगा वैसा ही पौधा उगेगा। यह भी ठीक है कि संकल्पों के अनुसार ही परिस्थितियां उत्पन्न होती हैं। साधना में भावना का होना आवश्यक है, अन्यथा पूर्ण लाभ की आशा नहीं की जा सकती—

न काष्ठे विद्यते देवो
न पाषाणे न मृण्मयो
भावे हि विद्यते देवः
तस्माद् भावस्तु कारणम्

—काष्ठ, पाषाण और मिट्टी की मूर्तियों में देवता नहीं होते। वे तो भावों में ही रहते हैं और भाव ही उनका कारण है। शास्त्रों में भावना की महत्ता बताने के लिए आडंबर की व्यर्थता सिद्ध की गयी है—

बहुजापात् तथा होमात्
कामक्लेशादिविस्तरैः
न भावेन बिना देवाः
यंत्रमंत्राः फलप्रदाः

—बहुत जप और हवन करने से काम, क्लेश की ही वृद्धि होती है। बिना सच्चे भाव के यंत्र, मंत्र और देवता फलदायक नहीं होते।

तंत्र की साधना के फलस्वरूप हृदय के तार उस शक्ति से मिल जाते हैं जिसके हाथों में संसार की बागडोर है। यहां यंत्र, मंत्र और तंत्र का भेद समझ लेना आवश्यक है। क्रमशः यम्, मन् और तन् धातुओं के साथ त्रल् प्रत्यय जोड़कर ही ये शब्द बने हैं। यम् का अर्थ नियंत्रण है, यानी जीवन से लेकर मरण तक संसार की समस्त भौतिक शक्तियों पर नियंत्रण प्राप्त कर लेना। इसीलिए बीमारी आदि में गंडा, तावीज-जैसे यंत्र दिये जाते हैं। मन् का अर्थ है अदृश्य वस्तुओं का सम्यक ज्ञान करा देना। सांप, बिच्छू के काटने पर या भूत लगने पर जहर उतारनेवाले अथवा ओझा मंत्र पढ़कर उन अदृश्य शक्तियों की

जानकारी प्राप्त कर लेते हैं और उनका दुष्प्रभाव दूर कर देते हैं। तन् का अर्थ है रहस्य का विस्तार अथवा उद्घाटन। तांत्रिक लोग भौतिक और आध्यात्मिक रहस्य को उद्घाटित करते हैं और तंत्र की प्रक्रियाओं से उपचार करते हैं।

यद्यपि तंत्र का रास्ता बहुत कठिन है, लेकिन साधना पूरी होने पर तांत्रिकों में विविध शक्तियों को नियंत्रित करने की

क्षमता उत्पन्न होती है। बीज-मंत्रों से ही शक्ति जाग्रत होती है। भविष्य का ज्ञान प्राप्त करने में तांत्रिक क्रिया बहुत सहायक होती है। तंत्र और यंत्र एक-दूसरे के पूरक हैं और मंत्रों के आधार पर ही यंत्र की सिद्धि होती है।

तंत्र-क्षेत्र : तीन भाव

तंत्र के क्षेत्र में तीन प्रकार के भाव बताये गये हैं—(१) पशु-भाव (२) वीर-भाव (३) दिव्य-भाव। अहंकार-युक्त संसारी जीव ही पशु हो जाता है। पशु शब्द पश् धातु से बना है जिसका अर्थ है बांधना। जो पाशों से बंधा है, वही पशु कहलाता है। तंत्र के संबंध में जिसे संदेह रहता है, मंत्रों को जो केवल अक्षर मानता है, गुरु में जिसका विश्वास नहीं होता, देवता को जो केवल पत्थर मानता है, दूसरों की निंदा करता है, ऐसा व्यक्ति हमेशा संदेह और भय में पड़ा रहता है। जो चारों ओर से संसार-मोह में फंसा रहता है उसे 'अधम पशु' कहते हैं। जो व्यक्ति अपने पशुत्व का अनुभव करता है और सत्कर्मों की ओर जिसकी प्रवृत्ति होने लगती है, उसे 'उत्तम पशु' कहा जाता है।

काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर पर विजय पानेवाला, सुख-दुःख में समान, अहिंसक, परमार्थी और जितेंद्रिय साधक ही वीर कहलाता है। जिन्हें तंत्र के अर्थों में तत्त्वज्ञान की उपलब्धि हो गयी है, लेकिन विषय-वासनाएं पूरी तरह क्षीण नहीं हो पायी हैं, उन्हें 'सभाव वीर' क[...] जाता है। जिनमें पशु-भाव की समा[प्ति] तो हो चुकी है, किंतु 'सभाव वीर' की [...] तत्त्वज्ञान का उदय नहीं हो पाया है, [...] 'विभाव वीर' कहलाते हैं। वीर-भा[व] पशु-भाव से ऊंचा है, लेकिन दिव्य-भा[व] से नीचा है।

जिसके मन में जगत और देवता [में] भेदभाव नहीं रहता, जो शत्रु और मि[त्र] को समान समझता है, जो देव की नि[ंदा] करनेवाले के साथ एक पल भी बात न[हीं] करना चाहता; वेद-शास्त्र, देवता [और] गुरु में जिसका दृढ़ विश्वास रहता [है], वह दिव्य-भाव से संपन्न है। स्त्री को दे[खते] ही उसके मन में गुरु-भाव जागता [है], नारी को वह शक्ति की प्रतिमा और पु[रुष] को शिव का साक्षात विग्रह समझता है।

तंत्र-साधना में पंचमकारों का वि[शेष] महत्त्व है। इनके प्रयोग का अधिकार [उसी] साधक को ही है, जिसकी इंद्रियां [...] नियंत्रण में रहती हैं और जो विषय-वा[स]नाओं से मुक्त रहता है। तामसिक प्रवृ[त्ति] का तांत्रिक पंचमकारों के रूप में मत्[स्य], मांस, मैथुन, मुद्रा और मदिरा का प्रयो[ग] करता है, लेकिन परिवार में रहकर [भी] तांत्रिक साधना हो सकती है और ऐ[से] सात्विक प्रवृत्ति का तांत्रिक उक्त वस्तु[ओं] के स्थान पर नारियल काटता है, दूध [व] गंगाजल चढ़ाता है, सिक्कों का उपयो[ग] करता है और परायी स्त्री को मां के सम[ान] समझता है। सामान्य व्यक्ति के लिए [...]

राम का नाम ही महामंत्र और सहज तंत्र है।

तंत्र-साधना में पूर्वजन्म के संस्कारों का काफी प्रभाव पड़ता है, साथ ही तांत्रिक के लिए साधना, ध्यान और मन तथा आचार-व्यवहार की शुद्धि आवश्यक है। तंत्र में विंदु की स्थिरता ही जीवन है। विंदु-साधक के लिए अहंकार का नाश आवश्यक है। बड़े-बड़े तपस्वी साधक भी अहंकार के महारोग से ग्रस्त हो जाते हैं।

श्री–यंत्र

श्री-यंत्र को सिद्ध करने की विधि मैंने नेपाल-नरेश के राजगुरु से सीखी थी। इस यंत्र को किस दिन, किस मास और किस समय पूजन-विधि के साथ बनाया जाता है, यह जाननेवाले लोग आजकल भारत में कम ही होंगे। इनमें काशीवासी गुरु गोपीनाथ चट्टोपाध्याय मुख्य हैं, लेकिन अब वे इतने वृद्ध हो चुके हैं कि शक्ति की आराधना के अतिरिक्त कुछ नहीं करते।

श्री-यंत्र से कलह का नाश होता है और मनुष्य की सभी कामनाएं पूरी होती हैं। यह यंत्र कागज पर नहीं बनता, बल्कि अष्टधातु और स्फटिक पर ही बनता है।

जो साधक योग के माध्यम से शिव-शक्ति की पूजा करते हैं, उनकी संध्या बिना मंत्र और जल के होती है और उनका जप बिना पूजा और होम के होता है।

ऐसे साधकों के समक्ष परम-शक्ति का ज्योतिर्मय सूक्ष्म-शरीर प्रकट होता है। उन्हें पत्थर के देवताओं की पूजा करने की आवश्यकता नहीं रहती। इस प्रकार श्री-यंत्र के संबंध में 'नवचक्रमयो देहः' कहकर इस यंत्र से ब्रह्मांड की उत्पत्ति और विकास का प्रदर्शन किया गया है।

सबसे अंदरवाले वृत्त के केंद्र में बिंदु है। इस बिंदु के चारों ओर नौ त्रिकोण हैं। इनमें पांच की नोक ऊपर की ओर और चार की नीचे की ओर है। जिनकी नोक ऊपर की ओर है, उन्हें भगवती का प्रतिनिधि माना जाता है और शिव युवती की संज्ञा दी जाती है। नीचे की ओर नोकवाले शिव का प्रतिनिधित्व करते हैं। इन्हें श्रीकंठ कहते हैं। ऊर्ध्वमुखी पांच त्रिकोण पांच प्राण, पांच ज्ञानेंद्रियों, पांच कर्मेंद्रियों, पांच तन्मात्रा और पांच महाभूतों के प्रतीक हैं। शरीर में यह अस्थि और मांस आदि के रूप में विद्यमान हैं। अधोमुखी चार त्रिकोण शरीर में जीव, प्राण, शुक्र और मज्जा के द्योतक हैं और ब्रह्मांड में मन, बुद्धि चित्त और अहंकार के प्रतीक हैं। पांच ऊर्ध्वमुखी और चार अधोमुखी त्रिकोण नौ मूल प्रकृतियों का प्रतिनिधित्व करते हैं। श्री-यंत्र में आठ दलवाला और दूसरा सोलह दलवाला कमल है।

श्री-यंत्र के ऊर्ध्वमुखी त्रिकोण अग्नि-तत्व के, वृत्त वायु का, बिंदु आकाश का और भूपुर पृथ्वी-तत्व का प्रतीक माना जाता है। यह यंत्र सृष्टि-क्रम का है।

—एस ४३०, ग्रेटर कैलाश,
नयी दिल्ली–४८

● श्रीकांत जोग

नामकरण की लीला

स्वतंत्रता से पहले राजघरानों के ठाठ थे। चारों तरफ जगमगाते आलीशान कमरे, कदम-कदम पर वैभव की झलक देनेवाली अनेकानेक वस्तुएं, जगह-जगह सम्मान में झुके हुए लोग और सबसे बढ़कर दास-दासियों की भीड़। इस तमाम भोग-विलास का आनंद केवल राज-परिवार के लोग ही नहीं उठाते थे, महलों में नियुक्त नौकर-चाकरों को भी जीवन की तमाम सुविधाएं सहज ही उपलब्ध थीं। राजपुर की महारानी की सेवा में भी वैसे तो अनेक दास-दासियां थीं, लेकिन द्रौपदी-बाई महारानी की सबसे अधिक प्रिय और विश्वसनीय दासी थी।

आजादी के बाद जब राज्यों का विलय हुआ तब अनेक दास-दासियों की सेवा समाप्त कर दी गयी, लेकिन द्रौपदी की सेवा बरकरार रही। प्रिवीपर्स के रूप में राज-घरानों को खासी रकम मिला करती थी, इसलिए आजादी के बाद भी राज्य-परिवार के सदस्य लगभग पहले की तरह ही ठाठ से रहा करते थे। द्रौपदी ने सारा जीवन महारानी की सेवा में लगा दिया था, इसी-लिए वेतन कम होते हुए भी राज-महल में रहने-खाने की व्यवस्था होने के कारण उसने अपना पूरा वेतन बचा लिया था। साथ ही बख्शीश आदि के रूप में मिले आभूषणों और कीमती चीजों का अच्छा-खासा संग्रह भी उसके पास हो गया था। इस तरह संचित जीवन-भर की कमाई से द्रौपदी ने एक आलीशान इमारत बनवा ली और अपने स्थान पर अपनी युवा बेटी को महारानी की सेवा में लगाकर स्वयं उस मकान में रहने चली गयी।

द्रौपदी ने सोचा कि इतना बड़ा मकान यों ही खाली रहता है, क्यों न अपने लिए एक-दो कमरे रखकर शेष हिस्से को किराये पर दे दिया जाए! इसलिए नीचे के हिस्से को उसने दूकानदारों को किराये पर दे दिया और ऊपरी हिस्से के कुछ कमरों को नौकरीपेशावाले लोगों ने किराये पर ले लिया। द्रौपदी ने निश्चय किया था कि उचित वर देखकर कमला का विवाह कर देगी और अपनी बेटी तथा दामाद को यह इमारत देकर स्वयं तीर्थयात्रा को चली जाएगी।

एक दिन पंडित रामानंद अपने निवास और ज्योतिष-कार्यालय के लिए मकान ढूंढ़ते हुए द्रौपदीबाई के पास आये। पंडित

जी की भव्यता, शुभ्र वेशभूषा आदि देखकर द्रौपदी बड़ी प्रभावित हुई, इसलिए उसने पंडितजी को मामूली किराये पर ऊपर के हिस्से में रहने के लिए और नीचे के हिस्से में ज्योतिष-कार्यालय के लिए दो कमरे दे दिये ।

वृद्धावस्था और दमे के कारण द्रौपदी का स्वास्थ्य गिरने लगा । जब उसकी तबीयत ज्यादा खराब हो जाती तब कमला राजमहल से उसके पास आ जाया करती थी, लेकिन कभी-कभी वह नहीं भी आ पाती थी । ऐसे अवसर पर पंडित रामानंद ही द्रौपदी की देखभाल किया करते थे । एक बार राजकुमारी के साथ कमला राजकुमारी की ननिहाल केशवगढ़ गयी । तीन-चार दिनों के बाद जब वह लौटी तब पता चला कि एक दिन पहले ही मां का देहांत हो गया । कमला ने पंडितजी की सहायता से मां का सारा कर्म-कांड कराया और मकान की देखभाल तथा किराया आदि वसूलने की जिम्मेदारी पंडितजी पर ही छोड़कर पुनः राजकुमारी की सेवा में राजमहल वापस चली गयी ।

छह-सात साल बाद जब राजकुमारी का विवाह हो गया और वह पति के साथ विदेश चली गयी तब कमला नौकरी छोड़कर अपने घर आ गयी । तब तक पंडितजी ने द्रौपदीवाले कमरे को भी उपयोग में लाना शुरू कर दिया था । कमला ने पंडितजी से अनुरोध किया कि

आधा हिस्सा उसके रहम के लिए, खाली कर दें। इतना कहते ही कमला ने देखा कि हमेशा शालीनता, सौजन्य और विनमृता से पेश आनेवाले पंडितजी का रूप ही बदल गया है! उन्होंने सभ्यता का मुखौटा उतार फेंका और वे कमला पर बरस पड़े, "क्या बात करती हो ? अब तुम्हारा इस मकान से क्या रिश्ता ?" तुम्हें मालूम होना चाहिए कि द्रौपदी के अंतिम दिनों में मैंने ही उसकी सेवा की थी। तू तो राजमहल में गुलछर्रें उड़ा रही थी, लेकिन मैंने द्रौपदी को धर्म-मार्ग बताया, दीक्षा दी और उसी के फलस्वरूप द्रौपदी मरते समय वसीयत द्वारा यह पूरी जायदाद मुझे दान कर गयी।"

यह सुनकर कमला हतप्रभ हो गयी। उसे याद आया कि मां उसे कितना चाहती थी! मां ने उससे कई बार कहा था 'कमला, यह मकान तेरे ही लिए है। शादी के बाद अपने पति के साथ तू यहां रहेगी।' यह कमला के लिए स्वीकार करना असंभव था कि मां जीवन-भर की गाढ़ी कमाई इस पंडित को दान कर गयी।

मजबूर होकर कमला ने मकान से संबंधित अपने अधिकारों की घोषणा तथा कब्जा पाने के लिए दावा दायर कर दिया। पंडितजी की तरफ से वादोत्तर प्रस्तुत हुआ, जिसका मुख्य आधार यही था कि उन्हें वसीयतनामे द्वारा बख्शीश में यह

मकान मिला है। वादीतर के साथ असली वसीयतनामा भी संलग्न था, जिसमें साफ-साफ लिखा था—

मैं द्रौपदीबाई, अपनी खुशी, अपनी इच्छा से, पूर्ण होश-हवास में अपना मकान—नंबर २१९, शंकर वार्ड, राजपुर का—पंडित रामानंद को दान करती हूं, क्योंकि मेरी पिछले दो-तीन वर्षों की बीमारी में उन्होंने ही मेरी देखभाल की और मुझे धर्ममार्ग बताकर मेरे लिए मोक्ष-प्राप्ति के द्वार उपलब्ध किये। संपूर्ण होश-हवास में गवाहों के समक्ष लिखा गया व हस्ताक्षर किये गये।

१० जनवरी, सन १९५० को लिखा गया यह वसीयतनामा भली भांति प्रमाणित हो चुका था। . . . लेकिन बार-बार यह प्रश्न उठता था कि द्रौपदी ने आखिर ऐसा किया क्यों ? क्या उसे अपनी बेटी के भविष्य की तनिक भी चिंता नहीं थी? पंडित रामानंद ने ऐसा क्या कर दिया जिससे द्रौपदीबाई अपनी एक लाख की जायदाद उसे बख्शीश में दे गयी ?

इसी दौरान राजपुर नगरपालिका के कुछ प्रकरण अदालत में आये थे। उसी सिलसिले में यह जाना कि आजाद भारत का संविधान जिस दिन देश में लागू किया गया था, उसकी खुशी में राजपुर की नगरपालिका ने शहर के बाजारों, सड़कों, चौराहों और वार्डों के नामों को बदलकर स्वतंत्रता-संग्राम में भाग लेनेवाले शहीदों और सेनानियों के नामों पर

कर दिया था। इन्हीं नामांतरों के सिलसिले में २६ जनवरी, १९५० को राजकुमार वार्ड का नाम बदलकर 'शहीद शंकर वार्ड' रखा गया था। शंकर राजपुर के ही निवासी थे और सन १९४० में गोरी सरकार की पुलिस ने उन्हें गोलियों से भून दिया था।

. . . और तब जैसे घुप्प अंधेरे में रोशनी का सैलाब उमड़ पड़ा। द्रौपदी का मकान जहां स्थित था, वह इलाका सन १९३० से २५ जनवरी, १९५० तक राजकुमार वार्ड के नाम से जाना जाता था, लेकिन २६ जनवरी, १९५० को ही उसका नाम 'शहीद शंकर

अंतरांध-यात्रा

क्या होगा अंत भला
अंतरांध-यात्रा का
हाथ की लकीरों का
खालीपन
कसे-कसे
खूब गुजरती हद से शाम
चुभ जाता जाने क्यों
अपनी ही
आंखों को
दरवाजे पर लिक्खा
अपना ही नाम
व्यस्त बहुत, सर्जन पर--
'म' में बस मात्रा (ॅ) का
सूर्योदय रोज
मगर माथे जम जाती है
उफ !
ठंडी धूप . . . अनायास
खिड़की के पार का
घना जंगल
पहले से कहीं अधिक
उग आता . . . और पास
(जिजीविषा ढोने का भ्रम हो
या मजबूरी)
अतिशय अभिनय यह सब
प्रासंगिक यात्रा का

--रवीन्द्र शलभ

(युग-परिचय, छीपी टैंक, मेरठ)

वार्ड' पड़ा । ११ जनवरी, सन १९५० को बुढ़िया द्रौपदी की मृत्यु हुई थी और १९५७ में कमला पंडित रामानंद से मकान वापस लेने आयी थी । ऐसी स्थिति में यह सवाल उठना स्वाभाविक था कि जिस 'शहीद शंकर वार्ड' के नामकरण का प्रस्ताव नगरपालिका में १५ जनवरी, १९५० को रखा गया, उस वार्ड का यह नया नाम १० जनवरी, १९५० (द्रौपदी की मृत्यु से एक दिन पूर्व) वसीयतनामे में भला कैसे आ गया ?

इसके बाद सारी बातें दर्पण की तरह नजर आने लगीं । द्रौपदी की बीमारी में किसी दिन उसका हस्ताक्षर ले लिया गया । धन देकर गवाह तैयार किये गये । कूट-परीक्षण में खरे साबित होने के लिए गवाहों को हर बात रटा दी गयी; लेकिन जाली वसीयतनामा बनानेवाले पंडित रामानंद यह भूल गये कि वास्तव में उनका मकान जिस वार्ड में है उसका नाम 'शहीद शंकर वार्ड' तो २६ जनवरी, १९५० को ही पड़ा था ।

कमला के भाग्य से खेलनेवाले पंडित रामानंद अपनी जबरदस्त जालसाजी में एक छोटी-सी भूल कर बैठे थे । यही भूल पकड़ में आ जाने से वसीयतनामा जाली साबित हुआ । अंत में कमला को उसका मकान मिल गया और पंडित रामानंद को कड़ी सजा भुगतनी पड़ी ।

--जिला अपर सत्र न्यायाधीश,
होशंगाबाद (म. प्र.)

"१४ मई, १९५१ को एक गांव में जन्म। हिंदी साहित्य में एम. ए. और जरमन भाषा में डिप्लोमा का पाठ्यक्रम पूरा करने के बाद संप्रति बी. एड. में अध्ययन-रत। किसी तरह का अभाव, घुटन या उत्पीड़न न होते हुए भी कभी-कभी कुछ कहने की आकांक्षा ही कलम से कागज पर आकर कविता का रूप ले लेती है ... और उसे ही आत्मतृप्ति का साधन मानकर कुछ लिखने की प्रेरणा पाती रहती हूं। इस आकांक्षा में स्थिरता नहीं, गतिशीलता है, जो कभी कविता, कभी कहानी और कभी लेख के रूप में मुझे अभिव्यक्त कर जाती है।"

...यों का अवलोकन भी किया था। अधि-...ांश पांडुलिपियां कैथी लिपि में लिखी हुई हैं। इस लिपि को हम बिहारी लिपि कह सकते हैं और यह कभी अदालती तथा जमींदारी कागजात लिखने में व्यवहृत होती थी।

दरिया साहब-कृत संत-साहित्य उच्च कोटि का है, फिर भी हिंदी-साहित्य के इतिहास में इसकी चर्चा नहीं के बराबर ही हुई। 'शिवसिंह सरोज', ग्रियर्सन-लिखित 'हिंदुस्तान की आधुनिक आम भाषाएं', रामचंद्र शुक्ल का 'हिंदी साहित्य का इतिहास'—सभी इसके संबंध में चुप रहे। केवल डॉ. रामकुमार वर्मा ने इसकी चर्चा की, लेकिन वह भी अत्यंत संक्षिप्त रूप से और सांकेतिक ढंग पर ही। डॉ. धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी ही प्रथम व्यक्ति हैं जिन्होंने दरिया साहब के संबंध में विशद अनुसंधान करके उनकी जीवनी और दर्शन को प्रकाश में लाने की चेष्टा की।

अंतरांध-यात्रा

क्या होगा अंत भला
अंतरांध-यात्रा का
हाथ की लकीरों का
खालीपन
कसे-कसे
खूब गुजरती हद से शाम
चुभ जाता जाने क्यों
अपनी ही
आंखों को
दरवाजे पर लिक्खा
अपना ही नाम
व्यस्त बहुत, सर्जन पर--
'म' में बस मात्रा (ॅ) का
सूर्योदय रोज
मगर माथे जम जाती है
उफ !
ठंडी धूप . . . अनायास
खिड़की के पार का
घना जंगल
पहले से कहीं अधिक
उग आता . . . और पास
(जिजीविषा ढोने का भ्रम हो
या मजबूरी)
अतिशय अभिनय यह सब
प्रासंगिक यात्रा का

--रवीन्द्र शलभ

(युग-परिचय, छीपी टैंक, मेरठ)

• र...
भ...
स्थान...
दादू...
उनकी...
पंथ'...
पूर्व...
पंथ...
'पंथी'...
अधिक...
संख्या...
पंथ क...
मुख्य...
मठों...

कुल...
१८...
में औ...
तीन...
पुस्तक...
पड़ी...
पांडुलि...
डाला...
का अ...
पढ़ेगा...
पहले...
शाहा...
में दि...
चर्चा...

फरव...

राजेश्वरप्रसाद नारायण सिंह

भारतीय संत-साहित्य में बिहार के निर्गुणपंथी संत दरिया साहब का स्थान उतना ही ऊंचा है जितना कबीर, दादू या रैदास का; लेकिन कई कारणों से उनकी ख्याति सीमित ही रही। वे 'दरिया पंथ' के संस्थापक थे और आज भी भूतपूर्व शाहाबाद तथा सारण जिलों में इस पंथ के १५० मठ अवस्थित हैं। दरियापंथी साधुओं की संख्या एक हजार से अधिक है और उनके गृहस्थ अनुयायियों की संख्या पांच-छह हजार है, फिर भी इस पंथ का अधिक प्रचार न हो सका। इसका मुख्य कारण उनके निर्गुण साहित्य का इन मठों के अंधकार में पड़े रहना है।

दरिया साहब ने गद्य और पद्य में कुल बीस पुस्तकें लिखी थीं, जिनमें से १८ भोजपुरी-मिश्रित हिंदी में, एक संस्कृत में और एक फारसी में थी, लेकिन केवल तीन पुस्तकें ही प्रकाश में आ पायीं। शेष पुस्तकों की पांडुलिपियां उक्त मठों में ही पड़ी रहीं। दरियापंथी महंतों ने तो उन पांडुलिपियों के बारे में यहां तक लिख डाला कि केवल दरियापंथी ही इन्हें पढ़ने का अधिकारी है, यदि अन्य कोई व्यक्ति पढ़ेगा तो वह निर्वंश हो जाएगा। सबसे पहले फ्रांसिस बुचनन ने पिछली सदी में शाहाबाद जिले पर लिखित अपने ग्रंथ में दरिया साहब और उनकी कृतियों की चर्चा की। बुचनन साहब ने उनके कई ग्रंथों का अवलोकन भी किया था। अधिकांश पांडुलिपियां कैथी लिपि में लिखी हुई हैं। इस लिपि को हम बिहारी लिपि कह सकते हैं और यह कभी अदालती तथा जमींदारी कागजात लिखने में व्यवहृत होती थी।

दरिया साहब-कृत संत-साहित्य उच्च कोटि का है, फिर भी हिंदी-साहित्य के इतिहास में इसकी चर्चा नहीं के बराबर ही हुई। 'शिवसिंह सरोज', ग्रियर्सन-

लिखित 'हिंदुस्तान की आधुनिक आम भाषाएं', रामचंद्र शुक्ल का 'हिंदी साहित्य का इतिहास'—सभी इसके संबंध में चुप रहे। केवल डॉ. रामकुमार वर्मा ने इसकी चर्चा की, लेकिन वह भी अत्यंत संक्षिप्त रूप से और सांकेतिक ढंग पर ही। डॉ. धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी ही प्रथम व्यक्ति हैं जिन्होंने दरिया साहब के संबंध में विशद अनुसंधान करके उनकी जीवनी और दर्शन को प्रकाश में लाने की चेष्टा की।

दरियापंथी मठों में जाकर, वहां के अधि-कारियों को राजी करके ब्रह्मचारीजी ने उनके जीवन से संबंधित बातों का पता लगाया और रचनाओं का संग्रह किया। इनके आधार पर निःसंकोच कहा जा सकता है कि संतों के बीच दरिया साहब का स्थान काफी ऊंचा और उनका साहित्य अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

फ्रांसिस बुचनन ने सन १८०९–१० ई. में शाहाबाद जिले का दौरा किया था। 'दरिया पंथ' का सबसे बड़ा मठ है धारकंधा, जहां दरिया साहब पैदा हुए थे। बुचनन सर्वप्रथम इस मठ में गये और इसके तत्कालीन महंत तथा अन्य दरिया-पंथी साधुओं से दरिया साहब के संबंध में महत्त्वपूर्ण बातों की जानकारी प्राप्त की। इनके आधार पर अधिकार के साथ कहा जा सकता है कि दरिया साहब एक मुसल-मान दर्जी-परिवार में पैदा हुए थे। उन्होंने स्वरचित पदों में अपने मुसलमान माता-पिता की संतान होने की चर्चा भी की है, लेकिन इसके साथ ही यत्र-तत्र यह भी कहा है कि वे जात-पांत में विश्वास नहीं रखते; वे न तो हिंदू हैं और न मुसल-मान। अर्थात, कबीरदास की भांति उनका विचार भी यही था कि 'जात-पांत पूछे ना कोई, हरि को भजै सो हरि का होई।'

दरिया साहब आज से लगभग ढाई-तीन सौ साल पहले हुए थे और करीब १२५ साल तक जिंदा रहे। विज्ञ दरिया-पंथी साधुओं के कथनानुसार, जिसका समर्थन उनकी वंशावली भी करती है, उनके पूर्वज मध्यभारत से आये हुए उज्जैनी क्षत्रिय थे—उसी वंश के जिसमें सन सत्तावन के गदर में प्रमुख रूप से भाग लेनेवाले बाबू कुंवरसिंह ने जन्म लिया; पर आगे चलकर वे मुसलमान बन गये—क्यों और कैसे, इस संबंध में अधिकारपूर्वक कुछ कहना कठिन है। वैसे तो अनेक किवदंतियां प्रचलित हैं, जिनमें से एक यह भी है कि दरिया साहब के हिंदू पिता को औरंगजेब ने काफी मज-बूर किया, इसलिए उन्हें उसके दर्जी की कन्या से विवाह करना पड़ा और इसी-लिए वे मुसलमान बन गये। इतना तो निश्चित है कि उनके वंश के लोगों के अब भी हिंदू नाम होते हैं, लेकिन उनका विवाह-संबंध मुसलमान दर्जियों के परि-वारों में ही होता है।

दरिया साहब के जीवन की एक महत्त्वपूर्ण घटना यह है कि उन्होंने मुर्शिदा-बाद के नवाब मीर कासिम द्वारा १०१

ज्ञान सिकारी मन पंछी है, धनुष पनच तुव पासा
द्रिग नहि देखे म्रिग सिर ऊपर, नाहिं बिटप वन घासा
कहें दरिया मन चंचल चतुरा, ताको का बिसवासा

बीघे जमीन का करमुक्त अनुदान प्राप्त किया था। १७६१ ई. के नवंबर महीने में मीर कासिम ने भोजपुर पर चढ़ाई की और स्थानीय विद्रोही जमींदारों, सामंतों पर धावा बोल दिया। वे भागकर गंगा के दूसरी ओर गाजीपुर चले गये । नवाब ने भोजपुर के सारे किले पर अधिकार कर लिया। वहां की जमींदारियां भी उसके अधिकार में आ गयीं। तभी उसने १०१ बीघे जमीन दरिया साहब के चरणों पर चढ़ायी और उनसे दुआ मांगी। इस संबंध में कहा जाता है कि जब मीर कासिम धारकंधा से थोड़ी दूर पर डेरा डाले हुए था तब धारकंधा-स्थित दरिया साहब के मकान पर उसकी दृष्टि पड़ी। दरिया साहब ने उसकी आज्ञा की अवहेलना करके उससे मिलने जाना अस्वीकार कर दिया था, इसलिए उसने मकान की ओर बंदूकें दागीं। मकान का ऊपरी हिस्सा धराशायी हो गया। तभी उसके मन में ग्लानि उत्पन्न हुई कि उसने व्यर्थ ही एक फकीर का मकान तोड़ दिया। वह दरिया साहब के पास पहुंचा और उनसे क्षमा मांगने लगा।

दरिया साहब ने मीर कासिम को कुछ उपदेश दिये, जिससे वह इतना प्रभावित हुआ कि उनके चरणों में एक बहुत कीमती हीरा अर्पित किया। दरिया साहब ने उसके जाते ही उस 'पत्थर' को समीप के एक जलाशय में फेंक दिया। मीर कासिम को जब इसका पता चला तब वह
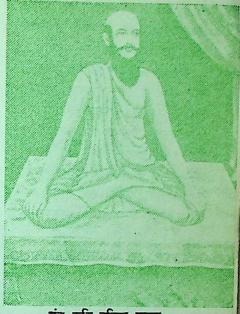
संत कवि दरिया साहब

क्रोधित होकर दोबारा आया और दरिया साहब से हीरा वापस मांगने लगा। उन्होंने पानी में हाथ डाला। तुरंत ही वह हीरा और साथ ही उस तरह के अनेक हीरे उनके हाथ में आ गये। दरिया साहब ने सब हीरे नवाब के सामने रख दिये। मीर कासिम पर इस अलौकिक घटना का गहरा प्रभाव पड़ा। वह उनसे क्षमा मांगने लगा और अनुनय-विनय करने लगा कि वे उससे १०१ बीघे जमीन की जागीर स्वीकार करें। दरिया साहब ने तो इसे स्वीकार नहीं किया, लेकिन मीर कासिम चुपके से इस जागीर की सनद उनके शिष्य को देकर चला गया। ... और तभी

धारकंधा के उस मठ की नींव पड़ी जो बाद में प्रसिद्ध दरियापंथी मठ के रूप में परिणत हुआ। मठ के महंतों ने कालांतर में इसे विशाल मठ का रूप दे दिया।

दरिया साहब ने ज्ञान प्राप्त करने के बाद धारकंधा में स्थायी रूप से आठ वर्ष बिताये थे। फिर दूर-दूर की यात्राएं कीं और अनेक शिष्य बनाये। उन्होंने अपने प्रवचन तथा लेखों में इस बात का संकेत दिया कि वे कबीर की आत्मा हैं, काशी में जन्म लेकर उन्होंने कभी स्वामी रामानंद से दीक्षा प्राप्त की थी। दरिया साहब एक महान निर्गुणिया संत थे।

उनकी कृतियां सभी धर्मों के समन्वय, कर्मकांड के विरोध और सार्वभौमिक भ्रातृ-भावना आदि के विचारों से ओतप्रोत हैं। नाम-साधन तथा सद्गुरु की महत्ता पर उनके सारे उपदेश आधारित हैं। उनका एकमात्र ध्येय है निर्गुण ब्रह्म की उपासना ... लेकिन बाद के दरियापंथी साधुओं और गृहस्थों ने अपने पंथ के लिए इतने अधिक विधि-विधान बना डाले कि उनकी लंबी सूची तैयार हो सकती है। दिन में पांच बार पूजा, दरिया साहब-रचित पदों का पाठ आदि ऐसे अनेक नियम हैं जिनका दरियापंथियों में आज भी कड़ाई के साथ पालन होता है। दरियापंथियों में हिंदू और मुसलमान दोनों ही होते हैं।

दरिया साहब की निम्नलिखित पंक्तियों में उनके आध्यात्मिक विचारों की झलक सहज ही मिल जाती है—

बड़-बड़ गीध पकरि के साधा
किमि करि पर फहरायो
चुंगत चारा जिमी पर रहेऊ
उड़ि कांहां तुम धायो
एक सरन सतगुरु का जानो
सो तुम किमि करि जावै
वार पार एह रहट लगा है
एक बूड़े एक आवै
सतगुरु सब्द साधि जो आवे
वार पार ते भीना
कहें दरिया कोई संत विवेकी
निकलि गया परमीना

★

बनिता बनी बनारस की
एह नैन बान सर गांसी
भेख अलेख घायल सब घुरमहि
नैन लगी नौलासी
ऐसा बहर कहर दरिया है
कनहरि बिनु किमि जासी
ममिता बेइलि लता लपटाना
भटकि परे चौरासी
सर्बस हरहिं सोक नहि हरहीं
ग्रिहि तजि होहिं उदासी
कहें दरिया नहिं इतते उत हैं
आगिलि पाछिलि नासी

★

भव जल लहर उतंग अति
गुरु तरनी करि पार
कनहरि कर गहि खेवहीं
का करता करुआर

—२-बी, महारानीबाग, नयी दिल्ली-१४

• पी. टी. सुंदरम

कलात्मक प्रतिभा से पूर्ण हाथ

हाथों के पर्वत और उन्हें घेरती रेखाओं से हमें किसी भी व्यक्ति की बौद्धिक-क्षमता, कलात्मक प्रतिभा आदि का भी अच्छा ज्ञान होता है। उदाहरण के लिए यहां प्रकाशित छापे से स्पष्ट है कि वह किसी प्रतिभासंपन्न एवं पढ़ने-लिखने में तेज युवती के बायें हाथ का छापा है।
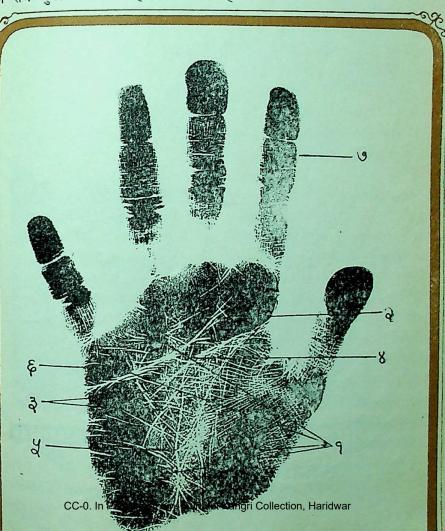
जैसा कि छापे से स्पष्ट है, इस युवती के हाथ के सभी पर्वत बहुत अच्छे हैं। शुक्र पर्वत काफी ऊंचा और शुभ प्रभाव डालनेवाला है। यही बात चंद्र, सूर्य एवं बुध पर्वतों के संबंध में भी है। (**चित्र : १**) इन सबसे ज्ञात होता है कि इस युवती ने जीवन के प्रारंभिक वर्षों में ही कला-जगत में प्रवेश किया होगा। यही नहीं, उसके कला-प्रदर्शन को प्रशंसा भी मिली होगी। यह बात गुरु एवं शनि पर्वतों के मध्य स्थित चतुर्भुज से भी पुष्ट होती है। इस चतुर्भुज से यह भी स्पष्ट होता है कि यह युवती प्रतिभा संपन्न तो है ही, साथ ही वह लोगों को आकर्षित करने, उनसे बोलने, व्यवहार करने में भी चतुर है। (**चित्र : २**) इस युवती के बायें हाथ में मौजूद दो मस्तिष्क रेखाएं भी यही दर्शाती हैं। (**चित्र : ३**)

मस्तिष्क रेखा से पता चलता है कि यह युवती कुशाग्र-बुद्धि है। किसी भी बात के मर्म को तुरंत समझ लेती है। मस्तिष्क रेखा से यह भी ज्ञात होता है कि उसने उच्च शिक्षा प्राप्त की होगी। मस्तिष्क रेखा पर द्वीप की स्थिति शुभ नहीं समझी जाती। (**चित्र : ४**) यदि इस युवती के हाथ में दोहरी मस्तिष्क रेखा न होती तो उसे भीषण मानसिक तनावों से गुजरना पड़ता। दोहरी मस्तिष्क रेखा होने के कारण वह इस द्वीप के दुष्प्रभावों से बची हुई है। यों चिंताएं उसे घेरने से बाज नहीं आतीं, पर बुद्धिमती होने के कारण यह उनसे आतंकित नहीं होती और उसकी चिंताएं मिट जाती हैं।

अब भाग्य रेखा को देखें। जैसा कि छापे से स्पष्ट है, इस हाथ की भाग्य रेखा पतली एवं गहरी है। (**चित्र : ५**) भाग्य रेखा से ज्ञात होता है कि यह युवती अपने जीवन में अच्छी-खासी संपत्ति का उपयोग करेगी। विशेषकर जीवन के उत्तरार्ध में उसे धन और यश दोनों की प्राप्ति होगी। विवाह रेखा, भाग्य रेखा एवं जीवन रेखा को देखकर मैं कह सकता हूं कि इस युवती का विवाह, संभव है, किसी प्रतिष्ठित व्यवसायी के साथ हो। इस विवाह से उसके पति-पक्ष को भी काफी लाभ होगा। विवाह रेखा देखकर मैं उसे सलाह दूंगा कि वह २८ वर्ष की अवस्था में विवाह करे। (**चित्र : ६**)

जीवन रेखा, भाग्य रेखा, एवं सूर्य रेखा को देखकर मैं कह सकता हूं कि ३१ वर्ष की अवस्था में इस युवती का देश-विदेश के सांस्कृतिक जगत में काफी नाम होगा। इसी बीच वह किसी शाला अथवा समाजसेवी संस्था की भी स्थापना करेगी। इसी अवस्था में वह किसी अत्यंत महत्त्व-पूर्ण राजनैतिक व्यक्तित्त्व के निकट-संपर्क में आएगी। इस युवती की तर्जनी की दूसरी पोर में एक स्पष्ट आड़ी रेखा है। (**चित्र : ७**) अतः मैं उसे परामर्श दूंगा कि वह समाज-सेवा को जीवन का ध्येय बनाये। अपनी बौद्धिक एवं कलात्मक प्रतिभा द्वारा वह इस क्षेत्र में काफी कार्य कर सकेगी, उससे समाज भी लाभान्वित होगा।

आधुनिक कहानियों का प्रतिनिधि संकलन

"कहानी आज के जीवन की निकटतम स्थितियों के बीच से गुजरती हुई सूक्ष्मतम नाजुक रेखा है।.. कहानियों में विविधता है। वे मानव-जीवन के विभिन्न वर्गों, अंगों और दृष्टियों का प्रतिनिधित्व करती हैं। उनमें गांव से लेकर महानगर तक समाहित हैं। व्यक्ति से लेकर संस्था तक और समाज से लेकर राजनीति तक सभी विषयों का समावेश इनमें हुआ है। इस दृष्टि से ये कहानियां एक वृहत्तर परिवेश का चित्रण करती हैं।" ('भूमिका' से) **श्रेष्ठ भारतीय कहानियां** अपनी तरह का पहला कहानी संग्रह है, जिसकी कहानियां पढ़कर लगता है कि संपादक ने कहानियों के चुनाव में नितांत ईमानदारी बरती है। इसका प्रमाण है—विभिन्न भाषाओं की कहानियों का चुनाव। असमिया, उड़िया, उर्दू, कन्नड़, कश्मीरी, गुजराती, डोगरी, तमिल, तेलुगु, पंजाबी, बंगला, मराठी, मलयालम, सिंधी और हिंदी,—इन पंद्रह भाषाओं की सोलह कहानियां (हिंदीतर कहानियों के हिंदी अनुवाद) इसमें संग्रहीत हैं। कहानियों के चुनाव में संपादक ने इन भाषाओं के लेखकों की प्रसिद्धि से अधिक रचनाओं के आधुनिकता-बोध और श्रेष्ठता पर ध्यान दिया है। इस दृष्टि से इस संग्रह को वास्तव में भारतीय कहानियों के आधुनिक लेखन का प्रतिनिधि संग्रह स्वीकार किया जा सकता है।

हर कहानी अपने बारे में खुद कहती है। सभी कहानियां छूने से बिखरनेवाली हैं। जितने आराम से कहानियां पाठक को अपने साथ ले जाती हैं, उससे तो लगता है कि 'संप्रेषण की समस्या' नाम की कोई समस्या है ही नहीं। जीलानी बानो की 'हाथ' से लेकर आबिद सुरती की

'कैनाल', नरेंद्र खजूरिया की 'काला तीतर', अमृता प्रीतम की 'पांच बरस लंबी सड़क', धर्मवीर भारती की 'सावित्री नंबर दो' और राजेंद्र अवस्थी की 'अपना शहर' तक, हर कहानी में अनुभूति के एक नये बिंदु की पकड़ है। पर कुल मिलाकर कहानियां ऐसी हैं, जिन्हें वर्गीकृत करना संभव नहीं। एक कहानी यदि 'मन की बात' कहती है तो दूसरी 'बुद्धि' की। एक व्यक्ति के 'भीतर की बात' कहती है तो दूसरी

'बाहर' की, 'परिवेश' की। एक अपनी साफगोई के कारण छू लेती है तो दूसरी अपनी जटिलता के कारण। एक यदि मानव की सारी विशेषताओं को भी छुपा लेने की बात कहती है तो दूसरी उसकी सारी कमजोरियों समेत उसे बीच चौराहे में विवस्त्र कर देने में समर्थ है। लेकिन ऐसी कोई कहानी नहीं है, जो पाठक के मन की बात न कहे।

व्यापक जीवन-संदर्भ को ये कहानियां स्पर्श करती हैं। मानव-मन के उतार-चढ़ावों को, उसके हर दर्द को, उसकी हर थकान को, उसके हर सुख को; उसकी हर चुभन को; हर पीड़ा, हर कशिश को, उसकी हंसी को, यौवन को; इन कहानियों में पकड़ा गया है।

प्रेम-विवाह और उससे उत्पन्न समस्याओं की पहचान है—तमिल कहानी 'कानूनदां' में। उधर उड़िया की 'यौवन की वापसी' 'बाहर' से 'घर' को वापसी है। घर के प्रति, काम के प्रति विद्रोह और फिर पुराने को ही स्वीकृति, इस कहानी के दो छोर हैं। कश्मीरी कहानी 'अगले दिन' बच्चों के बचपन में ही बड़े हो जाने और उनके बड़े होते हुए भी बच्चे बने रहने की स्थिति को व्यक्त करती है।

'पांच बरस लंबी सड़क' (पंजाबी) में वक्त के ठहराव और बिखराव—दोनों को एक साथ स्पर्श किया गया है।

संपादक की भूमिकावाली टिप्पणी ('कहानी आज के जीवन की निकटतम स्थितियों के बीच से गुजरती हुई सूक्ष्मतम नाजुक रेखा है।') स्वयं को सार्थक करती है, और संकलन के बहुविषयी चुनाव को इंगित करती है।

श्रेष्ठ भारतीय कहानियां
संपादक—राजेन्द्र अवस्थी, प्रकाशक—पराग प्रकाशन, ३।११४, विश्वासनगर, शाहदरा, दिल्ली-३२, पृष्ठ-२०८ मूल्य-२५ रु०

काव्य-संकलन

अनामा : 'अनाम' की नयी-पुरानी ७१ कविताओं का संकलन है। संकलन की पहली कविता—

सागर के महल
रिमझिम अपनी छाया में
आधी रात के पीछे
दूर हवा में हिलते
जुगनुओं के पत्ते हैं

से लेकर संकलन की अंतिम कविता—

आज सुना यूं ही निसंदर्भ
कल तुम्हारी शादी है
मौका है यकीनन नायाब
सेहरा कहने का
मिल ही जायेगा वह
कसीदाकार

तक, कवि ने प्रकृति के कुछ बिंबों के माध्यम से जीवन के कई बिखरे क्षणों को पकड़ा है।

सटीक शब्दों का प्रयोग इन कविताओं की पहचान बन गया है। हर शब्द एक

नयी गूंज पैदा करता है—

सांझ की उबासियों में
सरोवर को भी नींद आ गयी
चिड़ियों की लोरियां सुनते-सुनते
निंदिया गये पेड़

सारा शब्द-विधान पाठक के आस-पास का है, फिर भी नया लगता है। बहुत से पुराने बिंब––'नारी', 'वन,' 'चांद', आदि के––प्रयुक्त हुए हैं, पर नये संदर्भ में। फिर भी यह नयापन कविताओं को दुरूह नहीं होने देता। हालांकि कविता में अनुभूतियों का बिखराव नहीं है, फिर भी सारी कविताएं एक ही बिंदु के चारों ओर घूमती हुई प्रतीत होती हैं। कविताएं बेहद ताजगी लिये हुए हैं।

आधुनिक हिंदी कविता के लिए यह संग्रह महत्त्वपूर्ण उपलब्धि माना जाएगा। कवि की प्रथम कृति होते हुए भी जितनी सजी-संवरी है, वह कवि के व्यक्ति को नया रूप प्रदान करती है।

अनामा के कवि श्यामकिशोर सेठ भारतीय वन विभाग के सर्वोच्च अधिकारी हैं। प्रशासनिक कार्यों में व्यस्त ऐसे व्यक्ति द्वारा इतनी परिमार्जित कविताओं का सृजन प्रशंसनीय है।

अनामा
लेखक – श्यामकिशोर सेठ 'अनाम', प्रकाशक– पराग प्रकाशन, ३।११४, विश्वासनगर, शाहदरा, दिल्ली –३२, पृष्ठ–११०, मूल्य –१२ रु.

दो नाटक

पैर तले की जमीन : मोहन राकेश का अंतिम नाटक है। भूमिका से पता चलता है कि राकेश स्वयं इसे पूरा नहीं कर पाये। बाद में कमलेश्वर ने उनकी नोट-बुक और डायरी में लिखे गये अंशों के आधार पर इसे पूरा किया है।

मोहन राकेश का हिंदी नाट्य-साहित्य में अपना एक विशिष्ट स्थान है। उनका नया नाटक **पैर तले की जमीन** अस्तित्वों पर लगाये गये प्रश्नचिह्नों का नाटक है। आदमी जब कुछ करने में असमर्थ हो जाता है तब पैरों के नीचे की जमीन पर भी उसे थाह नहीं मिलती। पर जैसे ही उसका आत्मविश्वास लौटता है, वह हर जगह रुक सकता है, हर बांह उसे संबल लगती है, हर चेहरा एक पहचान। इसके उदाहरण हैं—इस नाटक के अयूब, अब्दुल्ला, पंडित और रीता, जिन्हें मोहन राकेश ने जीवंत बना दिया है। पर राकेश ने पहले नाटकों—'आषाढ़ का एक दिन' से 'आधे अधूरे' तक, हिंदी नाट्य-साहित्य और रंगमंच को कई अविस्मरणीय पात्र दिये हैं। **पैर तले की जमीन** के संबंध में यह बात नहीं है। उपर्युक्त नाटकों का लेखक अपने अंतिम नाटक में आकर इतना कैसे बिखर गया, विचारणीय है।

दरिंदे : पुरस्कृत नाटकों का संकलन है। ये नाटक हैं—'दरिंदे,' 'घरबंद,' 'दूसरा पक्ष' और 'अपना-अपना दर्द'। सभी नाटकों

में व्यक्तियों द्वारा ओढ़े हुए अलग-अलग मुखौटों की बात है। कभी यह मुखौटा सच का है तो कभी झूठ का। इन सभी को नाटककार ने अपने इन नाटकों में अपनी पैनी दृष्टि और धाराप्रवाह लेखनी के माध्यम से उतारा है। 'दरिंदे' एक प्रयोग नाटक है—जिसके सारे पात्र प्रतीक-पात्र हैं। अन्य नाटकों के पात्र जीवन के इन-उन संदर्भों में से लिये गये हैं—जो संभ्रांत किंतु टूटते परिवार, समाज, और बिखरते संबंधों पर व्यंग्यपूर्ण प्रश्नचिह्न लगाते हैं।

——रचना कनुप्रिया

पैर तले की जमीन

लेखक—मोहन राकेश, प्रकाशक—राजपाल एंड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली, पृष्ठ—११२, मूल्य—८ रु.

दरिंदे

लेखक——हमीदुल्ला, भारतीय ज्ञानपीठ बी/४५-४७, कनाट प्लेस, नयी दिल्ली, पृष्ठ—१२३ मूल्य—८ रु.

विविध

भारत-सोवियत सहयोग : दोनों देशों के मैत्रीपूर्ण संबंधों पर प्रकाश डालनेवाली कृति है। इसमें लेखक ने दोनों देशों के बीच राजनयिक संबंधों के विकास से लेकर एशियाई सामूहिक-सुरक्षा की सोवियत योजना पर विस्तार से प्रकाश डाला है। भारत-सोवियत सांस्कृतिक संबंध काफी पुराने हैं। रूस की अक्तूबर-क्रांति से भारत के राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन को भी काफी प्रेरणा मिली। स्वतंत्रता के बाद भारत के आर्थिक विकास में भी सोवियत संघ ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी है। यह पुस्तक इन सब विषयों की अच्छी जानकारी देती है। लेखक ने एशिया सुरक्षा योजना की सोवियत-कल्पना को स्पष्ट करते हुए उसे समूचे महाद्वीप के लिए उपयोगी सिद्ध किया है।

भारत-सोवियत सहयोग

लेखक——विश्वमित्र उपाध्याय, प्रकाशक——नवयुग पब्लिशर्स, चांदनी चौक, दिल्ली, पृष्ठ : २४७, मूल्य—१० रु.

भारतीय संगीत कोश : उत्तर भारतीय (हिंदुस्तानी) संगीत में व्यवहृत पारिभाषिक शब्दों की विशद् व्याख्या के साथ साथ विभिन्न वाद्ययंत्रों का अधिकृत विवरण प्रस्तुत करता है। जैसे सितार के संबंध में इस प्रचलित विश्वास का खंडन किया गया है कि अमीर खुसरो सितार के मूल आविष्कर्त्ता थे। इसी तरह भारतीय संगीत की उत्पत्ति के विवादग्रस्त प्रश्न पर भी ग्रंथकार ने सम्यक दृष्टिकोण से विचार किया है। अंत में दी गयी संगीतकारों की विस्तृत वंशावली ने इस पुस्तक के महत्व को और बढ़ा दिया है।

भारतीय संगीत कोश

लेखक—विमलकांत राय चौधुरी, अनुवादक—मदनलाल व्यास, प्रकाशक-भारतीय ज्ञानपीठ, बी।४५ – ४७, कनाट प्लेस, नयी दिल्ली, पृष्ठ-२३५ मूल्य-२५ रु.

——राजशेखर

चलते चलते

● सुशील कालरा

विज्ञान ने इतनी सुविधाएं दी हैं। हमें भी उन्हें भोगना चाहिए। बेशक किस्तों पर ही क्यों न सही, मैं टी.वी., फ्रिज, वाशिंग-मशीन इत्यादि खरीद कर बीवी-बच्चों के तानों से छुटकारा पा कर ही रहूंगा

किस्तों पर

1

कैसा टी.वी. लाये हो? तसवीर ऐसी नजर आ रही है जैसे कि कलाकार के सिर, नाक, मुंह कलम कर दिये गये हों

मैं अभी दूकानदार के कान खींचता हूं

3

राज. न. डा.-(सी)

कादम्बिनी
भारतीय भाषाओं की विशिष्ट पत्रिका
जून १९७६
पेरिस को जला डालो
शराब नशा नहीं है ?

स्टील वार्डरोब के

सर्व प्रथम निर्माता गोदरेज

आज भी यही सबसे बढ़िया है

- स्टॅण्डर्ड स्टोरवेल से ज्यादा चौड़ा और गहरा— मतलब ज्यादा जगह। सूट और ड्रेसेस के लिए काफी जगह— सिलवट नहीं।
- शेल्व्ज को ऊपर-नीचे कर सकने की खास व्यवस्था।
- लॉकर के नीचे (आप चाहें तो) अतिरिक्त हैंगर रॉड।
- ऊपर से नीचे तक आदमकद शीशा (आप चाहें तो)
- अतिरिक्त सुरक्षा के लिए खास चैनल-ग्रिप लॉकर।
- दरवाजे को अन्दर से, ऊपर और नीचे मजबूती से जकड़ रखने के लिए विशेष त्रिविध संचालित यंत्र-व्यवस्था।
- अंदर की ओर छिपे हुए कब्जे।
- दरवाजे और लॉकर पर ऐसा ताला जो दूसरी किसी चाबी से न खुल सके-अतः अतिरिक्त सुरक्षा।
- टिकाऊ व जंग-निरोधक फिनिशवाले तीन रंगों में।

साथ ही गोदरेज की जानी-मानी बेजोड़ श्रेष्ठता।

Godrej

मशहूर चीजों के निर्माता — गोदरेज

उत्तर रेलवे

समय सारणी सूचना

पहली मई, १९७६ से इस रेलवे की अगली समय सारणी लागू होने के फलस्वरूप, ६९ गाड़ियों के चालन समय में ५ से ६० मिनटों तक की कमी की जाएगी। महत्वपूर्ण परिवर्तन इस प्रकार हैं :

नई गाड़ियां जो चलाई गईं

१. मेरठ शहर और इलाहाबाद के बीच १६५ अप/१६६ डाउन संगम एक्सप्रेस गाड़ियों का संचालन निम्नलिखित समयानुसार प्रारम्भ किया जाएगा :

१६६ डाउन		स्टेशन		१६५ अप
१८.०५	छूट	मेरठ शहर	पहुंच	८.१५
२१.३०	पहुंच	खुर्जा शहर	छूट	४.३०
२२.०५	छूट		पहुंच	४.२०
०६.३५	पहुंच	कानपुर सेंट्रल	छूट	२२.०५
०६.५५	छूट		पहुंच	२१.४५
१०.४०	पहुंच	इलाहाबाद	छूट	१८.२०

१-१०-१९७४ से रद्द की गई गाड़ियों को पुन: चलाना

१. पुराना नं. ५ एफ. एफ., फिरोजपुर छावनी और फाजिल्का के बीच।
२. पुराना नं. ८ एफ. एफ., फाजिल्का और फिरोजपुर छावनी के बीच।

गाड़ियों का चालन क्षेत्र बढ़ाना

१. इस समय कालका और अमृतसर के बीच चलाई जा रही ३५ अप/३६ डाउन शिमला मेल का चालन क्षेत्र निम्नलिखित समयानुसार पठानकोट तक/से बढ़ाया जाएगा :

३५ अप		स्टेशन		३६ डाउन
४.५५	पहुंच	अमृतसर	छूट	२२.००
६.१०	छूट		पहुंच	२१.३०
९.००	पहुंच	पठानकोट	छूट	१८.४५

२. इस समय हावड़ा और लखनऊ के बीच चलाई जा रही ४९ अप/५० डाउन हावड़ा-लखनऊ एक्सप्रेस गाड़ियों का चालन क्षेत्र निम्नलिखित समयानुसार अमृतसर तक एवं से बढ़ा दिया जाएगा और उनका नया नाम हावड़ा-अमृतसर एक्सप्रेस होगा :

४९ अप		स्टेशन		५० डाउन
१४.४५	पहुंच	लखनऊ	छूट	११.५५
१७.२०	छूट		पहुंच	१०.५५
०३.०५	पहुंच	सहारनपुर	छूट	२४.००

०३.२५	छूट		पहुंच	२३.४०
०६.५७	पहुंच	लुधियाना	छूट	२०.०५
०७.१२	छूट		पहुंच	१९.४०
१०.२५	पहुंच	अमृतसर	छूट	१६.३५

३. इस समय दिल्ली और लखनऊ के बीच चलाई जा रही ८३ अप/८४ डाउन लखनऊ एक्सप्रेस गाड़ियों का चालन क्षेत्र वाराणसी तक एवं से बढ़ाया जाएगा और इनका नया नाम दिल्ली-वाराणसी एक्सप्रेस होगा। ये गाड़ियां सप्ताह में चार दिन बरास्ता फैजाबाद और तीन दिन बरास्ता सुलतानपुर चलाई जाएंगी जिसका विवरण नीचे दिया गया है :

गाड़ी नं.	दिन
८४ डाउन दिल्ली से वाराणसी बरास्ता फैजाबाद	सोम., मंगल, गुरु, शनिवार
८४/११४ डा. दिल्ली से वाराणसी बरास्ता सुलतानपुर	रवि, बुध, शुक्रवार
८३ अप वाराणसी से दिल्ली बरास्ता फैजाबाद	मंगल, बुध., शुक्र., रविवार
११३/८३ अप वाराणसी से दिल्ली बरास्ता सुलतानपुर	सोम., गुरु., शनिवार

टिप्पणी : सुलतानपुर के रास्ते वाराणसी-लखनऊ खण्ड पर इन गाड़ियों का नम्बर ११३ अप/११४ डाउन होगा।

११४ डा.	८४ डा.		स्टेशन		८३ अप	११३ अप
७.३०	७.३०	प	लखनऊ	छू	२०.४५	२०.४५
८.१५	८.१५	छू		प	२०.१५	१९.४५
	११.०८	प	फैजाबाद	छू	१७.१५	
	११.१८	छू		प	१७.०५	
११.२०		प	सुल्तानपुर	छू		१६.३७
११.३०		छू		प		१६.२७
१५.००	१५.३०	प	वाराणसी	छू	१३.००	१३.३०

उपर्युक्त गाड़ियों के समय में यदि बाद में कोई परिवर्तन किया जाएगा तो उसके बारे में अलग से सूचना दी जाएगी।

जो गाड़ियां रद्द की गईं

१. इलाहाबाद और मेरठ शहर के बीच १६५ अप/१६६ डा. संगम एक्सप्रेस गाड़ियों का चालन प्रारम्भ करने के परिणामस्वरूप खुर्जा और मेरठ शहर के बीच चलाई जा रही १-के एम./६-के. एम. गाड़ियां रद्द कर दी जाएंगी।

२. कम यात्री उपलब्ध होने के कारण पीपाड़ रोड और बिलारा के

बीच १-जे. पी. बी./२-जे. पी. बी गाड़ियां रद्द कर दी जाएंगी।

डीजल इंजनों से गाड़ियों का चलाया जाना

१. झांसी/दिल्ली और फिरोजपुर के बीच ३७ अप/३८ डा. पंजाब मेल गाड़ियों को डीजल इंजन से चलाया जाएगा। इन गाड़ियों की संशोधित संक्षिप्त समय-सारणी इस प्रकार है :

३७ अप		स्टेशन		३८ डाउन
२०.२५	प	दिल्ली	छू	७.१५
२२.०५	छू		प	५.४५
४.००	प	भटिण्डा	छू	२३.४०
४.३५	छू		प	२३.०७
६.१०	प	फिरोजपुर	छू	२१.३५

गाड़ियों का मार्ग परिवर्तन

६४ डा. अवध एक्सप्रेस गाड़ी का मार्ग परिवर्तन करके उसे आगरा शहर के बजाय आगरा फोर्ट के रास्ते चलाया जाएगा।

गाड़ियों के समय, थ्रू/खण्डीय सवारी डिब्बों के चलाने/रद्द करने के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी के लिए महत्वपूर्ण स्टेशनों के रेलवे बुकिंग/आरक्षण/पूछताछ कार्यालयों और बुक स्टालों पर बिक्री के लिए उपलब्ध मई, १९७६ की समय सारणी देखें।

मुख्य परिचालन अधीक्षक
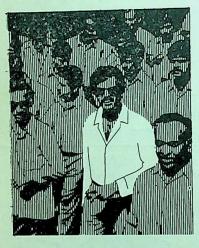
निम्नलिखित शब्दों के जो सही अर्थ हों उन पर चिह्न लगाइए और इसी पृष्ठ से आरंभ उत्तरों से मिलाइए।

● शांडिल्यायन

१. **अवितथ**—क. बिना तथ्य का, ख. मिथ्या, ग. सत्य, घ. ठीक।

२. **वितृष्णा**—क. विशेष तृष्णा, ख. बिना तृष्णा का, ग. संतोष, घ. घृणा।

३. **परुषता**—क. कठोरता, ख. पुरुषत्व, ग. पुरुष होने का भाव, घ. इन-सानियत।

४. **यायावर**—क. अश्वमेध का घोड़ा, ख. ब्राह्मण, ग. घुमक्कड़, घ. साधु।

५. **शल्य**—क. शील-संबंधी, ख. हथियार, ग. कांटा, घ. आपरेशन या चीर-फाड़ करने का औजार।

६. **मिस्कोट**—क. त्रुटि, ख. गुप्त परामर्श, ग. कोट, वेस्टकोट की तरह की एक पोशाक।

७. **अधिक**—क. ज्यादा, ख. बहुत ज्यादा, ग. सबसे ज्यादा, घ. किसी की तुलना में ज्यादा या बहुत।

८. **साधुवाद**—क. साधुओं का मत या सिद्धांत, ख. प्रसन्नता, ग. किसी व्यक्ति के कोई अच्छा काम करने पर उसकी प्रशंसा करना।

९. **अविकल**—क. जो विकल न हो, ख. अच्छा, ग. ठीक, घ. पूरा का पूरा।

१०. **प्रतिग्राही**—क. प्रत्येक व्यक्ति द्वारा ग्रहण किया जानेवाला, ख. प्रत्येक को ग्रहण करनेवाला, ग. वह जो दान ले।

११. **अदृष्टपूर्व**—क. पहले का भाग्य, ख. भाग्य से पहले का, ग. भाग्य, जिसे कोई देख नहीं सकता, घ. जो या जैसा पहले न देखा गया हो।

१२. **अभिज्ञान**—क. ज्ञान, ख. पूर्ण ज्ञान, ग. पहचान या देखकर बतलाना कि यह वही है।

१३. **गतानुगतिक**—क. बीता हुआ, ख. बहुत प्राचीन, ग. भूत और भविष्य, घ. पुरानी परंपराओं का आंख मूंदकर पालन करनेवाला।

उत्तर

१. घ. ठीक, सही, हूबहू। मूल शब्द है—'वि+तथ' अर्थात बिना तथ्य का, मिथ्या, झूठ। इसी में 'अ' उपसर्ग लगने से **'अवितथ'** बना है। आजकल इसका प्रयोग अंगरेजी 'इग्जैक्ट', 'प्रिसाइज' के अर्थ में हो रहा है।

२. घ. घृणा। यह संस्कृत शब्द 'वि+तृष्णा' रूप में बना है। संस्कृत में इसका प्रयोग 'तृष्णा का अभाव' या 'संतोष' के अर्थ में मिलता है, किंतु आधुनिक मानक हिंदी में इसका प्रयोग घृणा के अर्थ में ही होता है। उसे देखकर तो मुझे **वितृष्णा** होती है।

३. क. कठोरता। परुष वचन मत बोलिए। 'परुष' और 'पुरुष' दो शब्द हैं। 'पुरुष' से भाववाचक संज्ञा बनेगी 'पौरुष' या 'पुरुषत्व'।

४. ग. घुमक्कड़। संस्कृत में इस शब्द के क, ख, घ अर्थ भी थे, किंतु हिंदी में यह 'घुमक्कड़' अर्थ में सीमित हो गया।

५. घ. आपरेशन या चीर-फाड़ करने का औजार। इसी आधार पर हिंदी में शल्यकर्म या शल्यक्रिया (आपरेशन), तथा शल्य-चिकित्सा (सर्जरी) जैसे शब्द बने हैं।

६. ख. गुप्त परामर्श, षड्यंत्र। इस शब्द की व्युत्पति स्पष्ट नहीं है। लगता है उसके विरुद्ध कोई **मिस्कोट** चल रहा है।

७. घ. किसी की तुलना में ज्यादा या बहुत। बहुत-से लोग गलती से इसका प्रयोग 'बहुत' के अर्थ में करते हैं। जैसे, यह लिखना गलत है कि 'तुम्हारा पत्र मिले अधिक दिन हुए,' ठीक होगा—'तुम्हारा पत्र मिले बहुत दिन हुए।' 'अधिक' तुलनात्मक शब्द है। 'यह चीज **अधिक** अच्छी है' का अर्थ है किसी अन्य चीज की तुलना में अच्छी है। वस्तुतः यह अंगरेजी 'मोर' का समानार्थी है, न कि 'वेरी' का।

८. ग. किसी व्यक्ति के कोई अच्छा काम करने पर उसकी प्रशंसा करना, 'साधु' का अर्थ है—बहुत अच्छा। इसी आधार पर पहले प्रशंसा के रूप में 'साधु-साधु' कहा जाता था। [illegible] साधु-साधु कहि सुं[illegible] सुनायो (सूरदास)। इसी अर्थ में 'सा[illegible] से 'साधुवाद' शब्द बना है।

९. घ. पूरा का पूरा, बिना काट[illegible] छांटा। यह उनके अंगरेजी वक्तव्य [illegible] **अविकल** अनुवाद है, या यह उस नाट[illegible] का **अविकल** रूपांतरण है।

१०. ग. वह जो दान ले। प्राचीन का[illegible] में 'प्रतिग्रह' उस दान को ग्रहण करने [illegible] लिए प्रयुक्त होता था जो ब्राह्मण [illegible] विधिपूर्वक दिया जाता था। प्रतिग्राही जीवै नहीं, दाता नरकै जाय (तुल[illegible] दोहावली)।

११. घ. जो या जैसा पहले देखा [illegible] गया हो, अनोखा, विलक्षण। (अ=नहीं, दृष्ट=देखा हुआ, पूर्व=पहले।) यह घटना **अदृष्टपूर्व** है।

१२. ग. पहचान या देखकर बत-लाना कि यह वही है, पहचान। कालिदास के 'अभिज्ञान शाकुंतल' में 'अभिज्ञान' इसी अर्थ में आया है। आजकल 'अभि-ज्ञान' शब्द का प्रयोग पारिभाषिक रूप में 'रिकॉगनिशन' तथा 'आइडेंटीफिकेशन' के लिए हो रहा है।

१३. घ. पुरानी परंपराओं का आंख मूंदकर पालन करनेवाला। गता+अनु+गतिक, अर्थात मूल अर्थ है 'गत' के पीछे चलनेवाला।

आपके पत्र

मैंने अंगरेजों का नमक खाया

मई अंक में सार-संक्षेप के अंतर्गत 'दस्तंबू' का अनुवाद पढ़कर 'गालिब' के चेहरे पर जहां टूटते साहित्यकार की घुटन दिखायी पड़ी, वहीं उनकी सुविधाभोगी प्रवृत्ति भी उजागर हुई। 'गदर' के प्रति उनका दृष्टिकोण निश्चय ही स्वातंत्र्य-प्रेम से परे है।

जार्जिया वेट्टा का लेख 'वह पुरुषों पर शासन करना चाहती थीं' काफी रोचक लगा। समृद्धि के सागर में भी आम आदमियों की कसमसाहट का स्वर साफ सुनायी पड़ा।

—सुखनन्दनसिंह, बोकारो, इस्पातनगर

मई अंक के प्रारंभ में 'गदरी रिसाला' पढ़कर गर्व का अनुभव हुआ, पर अंक के अंत में 'फूलों का गुच्छा' —'दस्तंबू'—पढ़कर सर शर्म से झुक गया। अब कुछ दिन पूर्व राष्ट्रीय स्तर पर गालिब संबंधी जश्न की याद चुभन पैदा करती है।

—रमेश निगम, वाराणसी

महाभारत में रोम नगरी

'महाभारत में रोम नगरी' लेख में पुरातत्त्वविद डॉ. सांकलिया ने यह सिद्ध करना चाहा है कि हमारा प्रचलित महाभारत ईसवी सन की चौथी-पांचवीं शताब्दी जितना ही प्राचीन है, पर उन्होंने स्पष्ट नहीं किया कि यह काल-निर्धारण किस आधार पर किया गया है। विशेषज्ञों के अनुसार, उत्खनन में निकली वस्तुओं की 'कार्बन-१४' के आधार पर परीक्षा में भी कुछ शताब्दियों का आगा-पीछा तो हो ही जाता है।

फिर, महाभारत-काल से संबंधित सारे स्थानों का उत्खनन अभी पूर्ण कहां हुआ है! अनुमान मात्र के आधार पर यह कैसे निश्चित किया जा सकता है कि मूल महाभारत में दिग्विजय का अंश ही न हो! महाभारत में वर्णित रोमा नगरी कोई और भी तो हो सकती है! पुरातत्त्व एक विज्ञान ही है, अतः समग्र खोज-बीन के पश्चात ही निष्कर्ष प्रस्तुत करना चाहिए। डॉ. सांकलिया, ऐसा लगता है, चौंकाना ज्यादा पसंद करते हैं। डॉ. सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या और पुरातत्त्ववेत्ता डॉ. सांकलिया में कोई तो अंतर होना चाहिए!

—डॉ. गोपाल, इम्फाल

असली कपिलवस्तु कहां?

कृष्णमुरारी श्रीवास्तव का ऐतिहासिक लेख 'खोये कपिलवस्तु की खोज' जितना पैना है, उतना ही तथ्यपूर्ण और सामयिक

श्रद्धांजलि

मध्यप्रदेश के तीन विख्यात साहित्यकारों के निधन का समाचार हमें मिला है। ये हैं रामानुजलाल श्रीवास्तव, विष्णुदत्त मिश्र 'तरंगी' और नत्थूलाल सराफ।

रामानुजलाल श्रीवास्तव इंद्रधनुषी व्यक्तित्व के धनी थे। एक ओर उन्होंने 'ऊंट बिलहरीवी' के नाम से व्यंग्य-कविताएं लिखीं तो दूसरी ओर 'कर्मवीर', 'प्रहरी' और 'सारथी'—जैसे प्रतिष्ठित पत्रों के नियमित स्तंभ-लेखक भी रहे। उन्होंने 'प्रेमा' नामक पत्रिका का स्वयं प्रकाशन भी किया। 'उनींदी रातें' शीर्षक काव्य-संकलन में हमें उनकी मस्ती के दर्शन होते हैं तो 'महाकवि गालिब' और 'अनीस के मर्सिये' में गंभीर अनुसंधान-वृत्ति के।

विष्णुदत्त मिश्र 'तरंगी' हिंदी के एक जांबाज, फक्कड़ पत्रकार और ओजस्वी कवि थे। अपने पत्रकार-जीवन की शुरूआत उन्होंने जबलपुर के पत्र 'शुभचिंतक' से की थी। बाद में वे रायपुर के दैनिक 'महाकोशल' के भी संपादक रहे।

नत्थूलाल सराफ जबलपुर के सुपरिचित कवियों में से थे। उन्होंने अपने युग की पीड़ा को काव्य में उतारा था।

तीनों दिवंगत साहित्यकारों को 'कादम्बिनी' परिवार की श्रद्धांजलि।

—संपादक

भी। बुद्ध के जन्म स्थान को लेकर पुरातत्ववेत्ता अभी तक किसी एकमत पर नहीं पहुंच पाये हैं।

मेरी राय में अंतः साक्ष्य विश्लेषण तथा अन्य प्राचीन ग्रंथों से प्राप्त ऐतिहासिक आधार पर नेपाल स्थित तिलौरा कोट ही असली कपिलवस्तु है। इसे फ्यूरर और स्मिथ दोनों ने माना है।

—रामचन्द्र दिवाकर, नावागढ़ी, गया

काल-चिंतन

मई अंक का 'काल-चिंतन' पढ़ा। बधाई। सत्ता की भूख को नकारने की क्षमता चेग्वेवारा, गांधी, बुद्ध एवं राम में है। इनकी संख्या बहुत थोड़ी है, परंतु हमें ऐसा पढ़ा दिया गया कि हमारी पूरी संस्कृति इन्हीं की है। हमें इस लोक की नश्वरता का बोध कराने की पूरी जिम्मेदारी हमारी इसी संस्कृति की है, जिसमें प्रबुद्ध ऋषि एवं मुनि के समाज छोड़, उत्तरदायित्व त्याग, जंगल एवं कंदराओं में शरण लेते रहने की बातें बतायी गयी हैं।

इन महानताओं पर हमें गर्व अवश्य है पर ये हमें वस्तुस्थिति से परे ले जाती हैं, वास्तविकता को नकारती हैं, जिसके कारण दुनिया में सालाजार, फ्रांको, इयान स्मिथ जैसे तानाशाह लोगों का खून पीते रहे हैं। आपने ऐसे लोगों के लिए कुरसी की परिभाषा दी, आपका आभारी हूं।

—प्रमोदकुमार पाण्डेय, देवरिया

जुलाई अंक : कहानी विशेषांक

विशेष आकर्षण

● रूप बदलनेवाली आत्माएं

रोंगटे खड़े कर देनेवाली एक सत्यकथा जिसके लेखक ने तरह-तरह का रूप धरनेवाली आत्माओं से साक्षात्कार किया ।

● चमत्कार

हिटलर ने जिसके सिर के लिए बीस लाख मार्क का पुरस्कार रखा । स्तालिन जिसे देखते ही भयभीत हो उठा । जिसने सिकंदर और नेपोलियन की आत्माओं से संपर्क किया—कौन था वह ?

● हब्शी गुलामों के भारतीय व्यापारी

हब्शियों का व्यापार यूरोपीय ही नहीं करते थे, भारतीयों ने भी उन्हें गुलाम बनाकर अफ्रीका के बाहर बेचा था । हिंदी में अब तक अप्रकाशित एक रोमांचक कृति का सार ।

● 'वह रोज एक हत्या किया करता था'

'कादम्बिनी' के लिए विशेष रूप से लिखे गये, सुप्रसिद्ध अभिनेता दिलीपकुमार के संस्मरण ।

● संपादक को मार डालो !

सनसनीखेज कारनामों से भरी एक बेहद रोमांचक रचना ।

● कथा-साहित्य के अंतर्गत कृश्नचन्दर, राजेन्द्रसिंह बेदी, अमृता प्रीतम, विवेकी राय, गौरीशंकर राजहंस, लक्ष्मीनारायण लाल, गिरिराजकिशोर ।

इस अंक से एक धारावाहिक परिचर्चा—

● 'मेरी कहानियों का एक अविस्मरणीय पात्र'

हाजिर है, आगामी अंकों में हिंदी के शीर्षस्थ लेखकों की भारी भीड़—

अमृतलाल नागर, अज्ञेय, जैनेन्द्रकुमार, भगवतीचरण वर्मा, यशपाल, रेणु, धर्मवीर भारती, कमलेश्वर, राजेन्द्र यादव, मन्नू भंडारी, निर्मल वर्मा, कृष्णा सोबती, महादेवी वर्मा, उपेन्द्रनाथ अश्क, नरेश मेहता, हरिशंकर परसाई, अनंतगोपाल शेवड़े, उषा प्रियंवदा, भीष्म साहनी, रघुवीर सहाय, श्रीकांत वर्मा, शैलेश मटियानी, हजारीप्रसाद द्विवेदी, शिवप्रसादसिंह ।

आकल्पं कवि नूतनाम्बुदमयी कादम्बिनी वर्षतु

वर्ष १६ : अंक ८

जून, १९७६

निबंध एवं लेख

कविताएं कथा-साहित्य

स्थायी-स्तंभ

संपादक

राजेन्द्र अवस्थी

कथा-साहित्य

कविताएं

सार-संक्षेप

मुखपृष्ठ : छाया—प्रदीपचन्द्र

स्थायी-स्तंभ

संपादकीय सहकर्मी

संयुक्त संपादक—शीला झुनझुनवाला

सह-संपादक : दुर्गाप्रसाद शुक्ल, उप-संपादक : कृष्णचन्द्र शर्मा, विजयसुन्दर पाठक, सुनीता बुद्धिराजा, चित्रकार : सुकुमार चटर्जी

फिल्मों के निम्न-स्तर की चर्चा वर्षों से हो रही है। इसी चर्चा के बीच राजधानी में एक नया रंगमंच उभरा है—पंजाबी का रंगमंच। किसी शाम चले जाइए, वहां भी 'हाउस फुल' का बोर्ड मिलेगा। लेकिन यह रंगमंच है क्या? इसकी बानगी देखने के लिए कुछ नाटकों के शीर्षक देखिए : 'हलवा सूजी दा, चसका दूजी दा'; 'डेरा आशकां दा'; 'पानी झझरी दा, रिश्ता घघरी दा'; 'सोटी नरम ते वोटी गरम'; 'हंजु प्यार दे रोने यार दे'; 'अग जवानी दी, लोड़ जनानी दी'; 'तिन सोनियां इक महिवाल'; 'चढ़ी जवानी बुड्ढे नूं'।

इन शीर्षकों के हिंदी-अनुवाद क्रमशः इस प्रकार हैं : 'सूजी का हलवा और दूसरी औरत की लत'; 'आशिकों का अड्डा'; 'गागर का पानी घाघरे का रिश्ता'; 'नरम लकड़ी, गरम औरत';

राजधानी का रंगमंच : कुछ विनाशक तत्त्व

'प्रीत किये दुख होय'; 'जवानी की आग, औरत की जरूरत'; 'एक प्रेमी तीन प्रेमिकाएं'; 'बूढ़े को जवानी चढ़ी'।

इन नाटकों की पृष्ठभूमि शीर्षकों से स्पष्ट है। इनके कथानक नितांत हलके रोमानी प्रसंगों से भरे पड़े हैं। कई तो चोरी और उधार के हैं। उदाहरण के लिए 'अग जवानी दी, लोड़ जनानी दी' मराठी के नाटक 'उसना नवरा' की चोरी है। यही नाटक हिंदी में 'उधार का पति' नाम से पहले ही चुराया जा चुका है।

इन नाटकों के संवाद 'मजेदार' होते हैं—कोई भी संवाद एक अर्थ में प्रयुक्त नहीं होता, सब द्विअर्थी हैं। उनमें भी दूसरा अर्थ अधिक स्पष्ट है। श्लील और अश्लील-जैसे प्रतिवाद को छेड़े बिना हम कहेंगे कि वे नितांत बाजारू और घटिया दर्जे के हैं। कई नाटकों में तो संवाद इतने गंदे हैं कि स्टेज पर केवल कपड़ा उतारना रह जाता है। इन नाटकों को देखने के लिए टिकट नहीं मिलते। कई नाटकों में तो 'ब्लैक' का जोर है।

पंजाबी के इन नाटकों का एक प्रभाव और हुआ है। हिंदी और बंगाली में पिछले कुछ वर्षों से जिस तरह नाटकों का परिष्कार हो रहा था और धीरे-धीरे एक अच्छा रंगमंच उभर रहा था, उसे जबरदस्त धक्का लगा है। अच्छे रंगमंचों के लिए दर्शक सीमित हैं। इसके सिवा रंगमंच में काम करनेवाले अच्छे पात्रों की संख्या भी बहुत नहीं है। पंजाबी के नाटकों में काम करने वालों को खासे रुपये भी मिल जाते हैं। अब वे अन्य नाटकों में काम करने के लिए भी वही राशि मांगते हैं। अतः पिछले डेढ़-दो वर्षों में विकसित होता हुआ संस्कारपूर्ण रंगमंच फिर पीछे खिसक गया है।

इसके सिवा कुछ प्रश्न भी विचारणीय हैं। पहले भी 'नौटंकी' और 'तमाशा' होते रहे हैं। ये लोककला के पक्ष हैं, लेकिन इनके पीछे व्यवसाय की भावना नहीं रही। इसके बावजूद उनका पतन हुआ है और अब 'नौटंकी' और 'तमाशा' मंडलियां भी इनी-गिनी रह गयी हैं। निश्चय ही इनके पीछे जन-आक्रोश रहा है। तब खुले रंगमंच पर इतने हलके स्तर के नाटकों को प्रदर्शित करने की इजाजत देना समूची जन-चेतना के साथ धोखा है, और एक वर्ग-विशेष को निम्नतम स्तर पर उतरकर पैसा कमाने के लिए बढ़ावा देना है।

इन दिनों जब फिल्मों के स्तर को लेकर ही सेंसर-बोर्ड के कार्यों पर पुनर्दृष्टि दी जा रही है, तब ऐसे नाटकों को प्रदर्शन की आज्ञा देकर उन्हें बढ़ावा देना, चेतना के विपरीत है। हम स्वस्थ और मनोरंजन-पूर्ण रंगमंच को विकसित देखना चाहते हैं। उसके माध्यम से दर्शकों को साहित्यिक संस्कार देना एक अच्छी परंपरा बनाना है। इसमें यदि आघात पहुंचता है तो ऐसे व्यक्तियों और कार्यों का विरोध होना चाहिए।

हम राजधानी में विकसित हो रही इस गलत परंपरा का विरोध करते हुए दिल्ली-प्रशासन से आग्रह करेंगे कि वह ऐसे नाटकों के प्रदर्शन पर तत्काल प्रतिबंध लगाये।

दैनिक पत्रों का भी कुछ कर्तव्य है—उन्हें ऐसे नाटकों के विज्ञापन छापना बंद कर देना चाहिए, ताकि उन्हें और बढ़ावा न मिले। रंगमंच का यदि गलत विकास होता रहा तो एक दिन स्वस्थ परंपरा खोज के लिए अनुसंधान-केंद्र बनाने पड़ेंगे! ●

काल-चिंतन

—प्रश्न है : 'आज का आदमी सब कुछ प्राप्त करने की दौड़ में व्यस्त है। क्या सारे सुख 'प्राप्त' कर लेने में ही निहित हैं ?'

★★

—'प्राप्त' करना एक बात है और 'सुख' पाना दूसरी बात! कई बार प्राप्त करने का लक्ष्य सुख नहीं होता।

—अर्जुन के शर-संधान की घटना इसका प्रमाण है। ऊपर लटकी हुई घूमती मछली, तेल में उसकी पड़ती परछाईं और उस परछाईं को देखकर मछली की एक आंख का संधान!—इस समूची घटना के पीछे लक्ष्य द्रौपदी को पाना नहीं था। संभवत: किसी ने अर्जुन के कौशल को ललकारा था और वह अर्जुन के लिए परीक्षा की एक घड़ी थी।

—परीक्षा देकर और डिग्रियां लेकर नौकरी ही की जाए, जरूरी नहीं है। कई बार अपनी बौद्धिकता को प्रमाण-पत्रों में बांधना पड़ता है। लेकिन प्रत्येक प्रमाण-पत्र बौद्धिकता का सही प्रतिबिंब नहीं है।

—कितनी बार, कितने काम ऐसे नहीं हैं जो हमें मजबूरी में करने पड़ते हैं!

—हममें से अधिकांश व्यक्ति एक मजबूर जिंदगी जीते हैं।

—भीतरी और बाहरी भय से आ... उनके समूचे जीवन-दर्शन और क्रि... शीलता के पीछे न सुख का भाव है और न 'प्राप्त' करने की अभिलाषा... लगता है, कोई उन्हें जिलाये जा र... है और जब तक वह जिलाता रहे... वे जीते रहेंगे।

—आश्चर्य यह है कि इन विडंबना... और माध्यमों के बीच भी वे सुख ... क्षण पा लेते हैं। यह उनका पाना ... वास्तविक सुख नहीं है।

—और सुख परिभाषित नहीं हो सकता...

★★

—मनुष्य के भीतर हमेशा इच्छाएं ज... लेती रहती हैं। लेकिन इच्छाएं अनं... आकाश नहीं हैं। वे परिवेश की चेत... से उत्पन्न होकर सामर्थ्य की सी... में कपड़े में लगे बटन की तरह टंकि... रहती हैं।

—इच्छाओं और आकांक्षाओं का असी... और अनंत आकाश होते हुए भी व्यक्ति... की सीमा में आकर वे उसके घेरे के सा... बंध जाती हैं।

—इसलिए आदमी न तो सब कुछ पा... चाहता और न पा ही सकता है...

—वह जिंदगी भर बच्चे की तरह ए... झुनझुने के साथ खेलता रहता है... अपने छोटे-से संसार में वह सम... ब्रह्म-जगत और अनंत लीलाओं ... परिपूर्ण युगों की व्यापक कल्प... करता, सांसों को उमर देता है।

—समूची जिंदगी एक छल है।
—इच्छाएं गरमी के दिनों में लगनेवाली प्यास हैं।
—सुख का नन्हा-सा टुकड़ा फटी हुई रजाई में टंका हुआ थिगड़ा है।
—पा लेने की चेतना घास में उगे हुए बीज हैं।

★★

—वास्तव में आदमी की दौड़ रेगिस्तान में उठनेवाले बगूलों के घेरों से भिन्न नहीं है। वह 'सब कुछ' के बीच कुछ

नहीं है, लेकिन इस सत्य को वह हमेशा अस्वीकार करता चलता है।
—अपने को खोजना सबसे महत्त्वपूर्ण है। सर्जनात्मक व्यक्ति तभी अभि-व्यक्ति देता है, जब वह अपने आपको खोज लेता है।
—हम स्थायी वस्तु खोजना चाहते हैं जिसके साथ चिपके रह सकें।
—चिपके रहने के संकल्प में ही कभी-कभी हमें आईने की परछाईं की तरह सुख की चमक मिल जाती है। उसी को पकड़ने के लिए हम दौड़ने लगते हैं।
—सुख की इस खोज में व्यक्ति वास्तव में उससे दूर जाता है।
—वह एक बेचैनी को जन्म देता है।
—लेकिन वही बेचैनी उसे आगे बढ़ाती है। वह उसे भटकाती है।
—सारी भटकन के बावजूद व्यक्ति की ग्राह्यता ही उसका संबल है। वह पाता वही है जो ले सकता है।
—स्पष्ट है, आज के आदमी की दौड़ मात्र एक बेचैनी है और बेचैन आदमी कोई स्थायी सुख-संग्रह नहीं कर सकता।
—सुख के अभाव में 'प्राप्त' का ज्ञान उस क्षण विशेष का परिचय है।
—लेकिन यदि इस बेचैन जिंदगी में एक क्षण भी ऐसा मिल जाए तो उसे ही समूचा सुख मानकर कैद कर लेने में कौन-सा धोखा है!
—बीते हुए कल और आनेवाले कल के साथ जीने की अपेक्षा वर्तमान के एक क्षण में अपने को भिगो देना तवे-जैसी तपती दोपहर में बहती नदी में तैरना है। तैरने से शांति मिलती है।
—इसलिए 'प्राप्त' के एक क्षण को अपनी मजबूत मुट्ठियों में कैद कर लीजिए और यह सोचना छोड़ दीजिए कि उसके पीछे आपका लक्ष्य किसी सुख की खोज था।

राजेन्द्र अवस्थी

और वे मानते थे कि प्रत्येक राज्य को स्वतंत्र रहने का अधिकार है।

स्पष्टतः दोनों की शक्तियों में कोई समानता नहीं थी। एक ओर मुगल साम्राज्य की विशाल वाहिनी थी तो दूसरी ओर मेवाड़ के राजपूत और भील सैनिकों की छोटी-सी टुकड़ी। परंतु, मेवाड़ के साथ प्रताप का अदम्य उत्साह, तीव्र स्वातंत्र्य-भावना तथा अद्भुत संगठन-शक्ति थी। वे राजकुल के वंशज होने के साथ-साथ सच्चे जन-नायक भी थे।

मानसिंह ने भड़काया

इसमें संदेह नहीं कि अकबर भी प्रताप की वीरता का लोहा मानता था। कुछ इतिहासकारों का मत है कि यदि आमेर के राजकुमार मानसिंह ने प्रताप के विरुद्ध

चेतक की समाधि

राजस्थानी काव्य में प्रताप

कलपे अकबर काय, गुण पुंगीधर गोड़िया
मिणधर छाबड़ मांय, पड़े न राणा प्रताप-सी

—महाराणा प्रताप उस मणिधारी सर्प के समान थे जो अपने प्रकाश से अकबर के साम्राज्य को चकाचौंध कर रहे थे। अकबर उन्हें अपने पिटारे में रख ही कैसे सकता था!

अकबर पथर अनेक, के भूपत मेला किया
हाथ न लागो हेक, पारस राणा प्रताप-सी

—अकबर ने चाहे और अनेक पत्थर (रत्न) एकत्रित कर लिये हों, परंतु वह प्रताप-जैसे पारस पत्थर को न ले पाया।

अकबर जासी आप, दिल्ली पासी दूसरा
पुन-रासी प्रताप, सुजस न जासी सूरमा

—अकबर इस संसार से चला जाएगा। दिल्ली दूसरे को मिल जाएगी, परंतु हे पुण्यों के पुंज प्रताप, तेरी वीरता का सुयश नहीं जाएगा—वह तो अमर रहेगा।

—प्रस्तोता : महेशकुमार कटरपंच

अकबर को न भड़काया होता तो संभवतः हल्दीघाटी का भीषण युद्ध न होता और वह अपनी राजनीतिक सूझबूझ तथा कूटनीति के सहारे महाराणा को अपने वश में करने का प्रयत्न करता रहता; किंतु जब मानसिंह को प्रताप ने यथोचित सम्मान न देकर लौटा दिया तब उसने मेवाड़ की ईंट से ईंट बजाने की

आमेर के राजा मानसिंह

प्रतिज्ञा की और अकबर को चढ़ाई करने के लिए भड़काया।

मानसिंह के बदले हुए तेवर देखकर ही प्रताप ने अनुमान लगा लिया था कि अब शीघ्र ही मेवाड़ पर युद्ध के बादल उमड़नेवाले हैं। अतएव वे भी तैयारी करने लगे। उन्होंने अपनी प्रजा को म मेवाड़ से हटाकर कुंभलगढ़ तथा केलवा में ला बसाया ताकि मेवाड़ के जिस भा पर मुगल सेना का आधिपत्य हो चुका वहां डेरा जमाये मुगल सैनिकों को र तथा उनके पशुओं को चारा न मिल स और उनकी संचार-व्यवस्था भंग हो जाए मुगल सेना से मुठभेड़ करने के लिए उन्हों हल्दीघाटी का चुनाव किया और जो मूनो नामक वीर सेनानी की अध्यक्ष में तीन सौ अश्वारोही सैनिक उस घा के प्रवेश-द्वार पर नियुक्त कर दिये ता आकस्मिक आक्रमण के समय वे मुग की गति को रोक सकें।

इधर ३ अप्रैल, १५७६ को पू तैयारी के साथ मुगल सेना कुंवर मानसिं के नेतृत्व में अजमेर से मेवाड़ के लि चल पड़ी। साथ में आसफ खां, मेहता खां, सैयद अहमद, सैयद हाशिम बरहा राजा जगन्नाथ कछवाहा तथा राम लू करण-जैसे अनुभवी सेनानी थे। यह सेना मांडलगढ़ पहुंची। वहां दो मास तक र कर यह सेनानी-मंडल मेवाड़ी सेना की गतिविधियों का अध्ययन करता रहा परंतु मानसिंह की समझ में यह नहीं आ रहा था कि धावा किधर से बोला जाए। जब महाराणा की सेना ने कुंभल गढ़ से आगे बढ़कर हल्दीघाटी से बा किलोमीटर पश्चिम में स्थित लोहसिं नामक ग्राम में डेरा डाला तब मुग सेना भी मांडलगढ़ से हटकर खामनू

के निकट मोलेला नामक स्थान पर पहुंच गयी, जो बनास नदी के दूसरे तट पर है। इस प्रकार दोनों शिविरों के बीच केवल १५ किलोमीटर का अंतर रह गया। यहीं से हल्दीघाटी के विश्व-विख्यात युद्ध का संचालन हुआ था।

हल्दी-जैसा रंग

हल्दीघाटी राजस्थान की प्रसिद्ध पर्वत-श्रेणी अरावली का एक भाग है, जो कुंभलगढ़ से सहारा तक फैली हुई है। इसकी चट्टानों को यदि तोड़कर पीसा जाए तो रेत का रंग हल्दी-जैसा होता है। इसीलिए इसे हल्दीघाटी कहते हैं। यह घाटी गोगुंडा से २७ किलोमीटर उत्तर में और नाथद्वारा के मंदिर से लगभग १६ किलोमीटर पश्चिम में है। उत्तर-पूर्व की ओर यह लगभग २ किलोमीटर में फैली है और खामनूर ग्राम के दक्षिण में समाप्त होती है। जिस समय यह युद्ध हुआ था उस समय घाटी के अधिकांश भाग में एक-साथ दो आदमी भी मुश्किल से निकल सकते थे।

राणा ने अपनी सेना को चार भागों में विभाजित कर व्यूह-रचना की। इस रचना के अनुसार सबसे आगे हरावल और पीछे चंद्रावल सेनाएं थीं। कुछ सेना दक्षिणी पार्श्व में और कुछ वाम पार्श्व में थी। महाराणा स्वयं सेना के केंद्र में थे। भीलों की पैदल सेना राणा पुंजा के नेतृत्व में घाटी की पहाड़ियों पर थी। उनके पास धनुष-बाण तथा नुकीली कटारें थीं।

भारत की थर्मोपली हल्दीघाटी
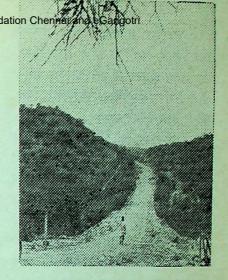
२१ जून १५७६

२१ जून, १५७६ को मानसिंह अपनी सेना को बादशाही बाग के मैदान में ले आया। यह मैदान हल्दीघाटी के बिलकुल निकट है और खामनूर तथा भागल ग्रामों के मध्य है। इस सेना के अग्रिम दस्ते के साथ सुप्रसिद्ध इतिहासकार अब्दुल कादिर बदाऊंनी भी था, जिसने इस युद्ध का विस्तृत विवरण अपने इतिहास 'मुंतखिब-उल-तवारीख' में दिया है। दोनों सेनाएं कुछ समय तक इस प्रतीक्षा में रहीं कि पहले कौन आक्रमण करे। अंत में उसी दिन (२१ जून को) राजपूतों का हाथी मेवाड़ की पताका लिये घाटी के द्वार से आगे बढ़ा। उसके पीछे महाराणा की हरावल सेना थी, जिसका नेतृत्व हाकिम खां सूर कर रहा था। आगे बढ़ते ही मेवाड़ी सेना ने ढोल, बाजों

और 'हर हर महादेव' की आवाजों के बीच मुगल सेना पर धावा बोल दिया। यह धावा इतना भयंकर था कि मुगलों के पैरों तले की जमीन खिसकने लगी।

मुगल सेना के पैर उखड़े

इसी समय एक तीर शेख इब्राहीम के दामाद शेख मंसूर के लगा, जो एक टुकड़ी का नायक था। उसके गिरते ही उस दस्ते की कमान काजी खां नामक मुल्ला ने संभाल ली। वह भी एक तीर से घायल होकर रणक्षेत्र से भाग खड़ा हुआ। साथ ही उसने अपने सैनिकों को भी जान बचाकर भाग जाने का परामर्श दिया। मुगल सेना के भागते ही महाराणा की सेना हल्दीघाटी का मोर्चा छोड़कर उसका पीछा करते हुए बादशाही बाग में पहुंच गयी। यहां मुगलों की चंद्रावल सेना व्यूह बनाये खड़ी थी। हाकिम खां सूर और प्रताप दोनों ही अपना शौर्य प्रदर्शित करते हुए आगे बढ़े और अपनी-अपनी टुकड़ियों के साथ मुगल सेना पर टूट पड़े। इस भयानक आक्रमण का मुकाबला करने में असमर्थ होने के कारण मुगलों की पार्श्व-सेनाएं तथा कुछ अन्य टुकड़ियां भी मैदान छोड़कर भाग खड़ी हुईं। ऐसा प्रतीत होता था कि मुगल सेना अंतिम रूप से पराजित हो गयी है, परंतु बरहा के सैयदों ने पीठ नहीं दिखायी। वे मेवाड़ी सेना से जमकर लोहा लेते रहे, किंतु जब उनके भी पैर उखड़ने लगे तभी मेहतार खां अपना दस्ता लेकर चंद्रावल से आगे बढ़ आया और साथ ही [...] घोषणा करा दी कि अकबर विशाल [...] लेकर स्वयं रणभूमि में आ गया है। [...] समाचार से पलायन करती हुई मुगल [...] रुक गयी और उसे नया उत्साह मिला।

युद्ध ने फिर भयंकर मोड़ लि[...] स्वयं मानसिंह अपना हाथी लेकर [...] आया। मानसिंह के हाथी को देख[...] प्रताप का घोड़ा चेतक उछलकर उ[...] पास जा पहुंचा। उसी समय महारा[...] ने निशाना लगाकर अपना भाला मा[...] सिंह की ओर फेंका, जो हाथी के [...] जाने के कारण मानसिंह के बजाय उ[...] हाथी के लगा और वह चिंघाड़ता हु[...] मैदान से बाहर दौड़ गया। इस मुठ[...] में चेतक के भी अगले पैर बुरी त[...] घायल हो गये। इसी समय मुगल सैनि[...] का ध्यान राणा की ओर गया, जो उ[...] समय अपने सैनिकों से अलग हो[...] अकेले पड़ गये थे। उन्होंने राणा को चा[...] ओर से घेर लिया, परंतु राणा अपने र[...] कौशल से शत्रुओं को चीरते हुए बाहर नि[...] आये। इतिहासकारों का कथन है कि य[...] महाराणा घाटी के मोर्चे को छोड़कर बा[...] शाही बाग के मैदान में न पहुंचते तो उ[...] कदापि पराजय का मुंह न देखना पड़ता। यद्यपि हल्दीघाटी के युद्ध में महारा[...] प्रताप की पराजय हुई, तथापि यह परा[...] मुगलों की विजय से कहीं अधिक मह[...] थी।

—सैलानी भवन, घों[...]
दिल्ली-११००[...]

• उत्सवकुमार चतुर्वेदी
• सत्येन्द्रकुमार अग्रवाल

पेट्रोल क्या है ? पेट्रोल खनिज-तेल का भाग होता है, जिसका क्वथनांक ८० से २०० डिग्री सें. के बीच होता है। यों तो प्राकृतिक पेट्रोलियम में इसकी मात्रा अत्यंत अल्प होती है, लेकिन उसमें अधिक मात्रा में उपस्थित 'फ्यूल आयल' के 'ऊष्मीय-विघटन' (क्रैकिंग) से इसकी मात्रा काफी बढ़ा ली जाती है। रासायनिक दृष्टि से पेट्रोल ७ से ११ कार्बन परमाणुओंवाला 'अल्केन' होता है, जिसे 'गैसोलिन' भी कहते हैं।

पेट्रोल-चालित इंजन आकार में छोटे और हलके होने के बावजूद अधिक दक्षता और शक्ति के होते हैं, जिससे उनका उपयोग मोटरसाइकिल और स्कूटरों से लेकर वायुयानों तक में होता है। 'जेट-युग' आ जाने से आजकल अधिकतर भारी उड़ानों में पेट्रोल के स्थान पर 'किरासिन' का प्रयोग होने लगा है, क्योंकि जेट-इंजन इसी से चलते हैं। फिर भी सड़कों [illegible] गाड़ियों, कारों, मोटरसाइकिलों, स्कूटरों आदि में अभी भी पेट्रोल-इंजनों का ही प्रयोग होता है।

कारों में डीजल-इंजन लगाकर इस समस्या से छुटकारा नहीं पाया जा सकता, क्योंकि अंततः डीजल की भी तो कमी ही है। वैज्ञानिक ऐसे किसी भी समाधान पर विचार नहीं करना चाहते जिसमें पेट्रोलियम का किसी भी रूप में प्रयोग होता हो। इस प्रकार हमारे सामने केवल तीन विकल्प रह जाते हैं—(१) ऐसी कारों का निर्माण और विकास जो ऊर्जा के दूसरे साधनों द्वारा चल सकें (यथा, बिजली से चलनेवाली कारें), (२) ऐसे साधन अपनाये जाएं जिससे कारों के पेट्रोल का खर्च कुछ कम हो (यथा, पेट्रोल के साथ 'मेथनॉल' आदि के मिश्रण से चलनेवाली कारों का विकास), (३)

कोयले, कूड़े तथा अन्य कार्बनिक पदार्थों से कृत्रिम पेट्रोलियम बनाने की विधियों का विकास।

बिजली की कारें

पेट्रोल-चालित कारों के विकल्प के रूप में बिजली की कारों का ध्यान आता है। इसमें सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि कारों का रास्ता ट्रामों और रेलों-जैसा निश्चित नहीं होता, अतः उनके चलते समय ही बिजली देकर नहीं चलाया जा सकता! एक ही रास्ता है—पेट्रोल-टंकी की जगह बिजली की टंकी हो और पेट्रोल-पंपों के स्थान पर बिजली के पंप।

अनेक तरह की पुनः आवेशित की जा सकनेवाली बैटरियां इस तरह की टंकियां ही तो हैं। सबसे साधारण होती हैं सीसा-अम्ल (लेड-एसिड) बैटरियां। ये बैटरियां भी कारों का इंजन स्टार्ट करने में प्रयुक्त की जाती हैं। संख्या बढ़ाकर इनसे काफी मात्रा में ऊर्जा ली जा सकती है, जिससे कारों को गति मिले। 'निरावेशित' हो जाने पर इन्हें सस्ती दरों पर पुनः 'आवेशित' भी किया जा सकता है।

लेकिन ये बैटरियां बहुत भारी होने के साथ-साथ बहुत-सा स्थान भी घेरती हैं। अतः इनसे चालित वाहन की शक्ति का एक बड़ा भाग इन्हीं को ढोने में ही खर्च हो जाएगा, और एक बड़ा स्थान ये स्वयं घेर लेंगी। समान भार का पेट्रोल इन बैटरियों के मुकाबले १०० गुना अधिक शक्ति रखता है। साधारण गाड़ियों के प्रति-टन भार पर प्रति-मील जाने के लिए ०.५ अश्वशक्ति-घंटे ऊर्जा चाहिए, इस प्रकार एक टनवाली पारिवारिक कार को ५६ किलोमीटर जाने के लिए ५ लिटर पेट्रोल चाहिए, जिसका भार मात्र ४ कि. ग्रा. होगा। यही कार यदि बैटरियों से चलायी जाए तो बैटरियों का वजन ३२० कि. ग्रा. होगा और ये ०.१६ घन-मीटर स्थान घेरेंगी।

'सोडियम-सल्फर सेल' एक दूसरा महत्त्वपूर्ण विकल्प है। समान भार का होने के बावजूद यह अपने अंदर साधारण 'सीसा-अम्ल' बैटरियों की अपेक्षा दस गुना अधिक विद्युत संचित कर सकता है। लेकिन सुचारु रूप से काम करने के लिए इसे २५० से ४०० डिग्री सें. उच्च ताप चाहिए। निश्चय ही बहुत-सी ऊर्जा बैटरियों को इतना ऊंचा ताप देने में ही व्यर्थ खर्च हो जाएगी।

इसी तरह की एक अन्य बैटरी बनाने में अमरीकी वैज्ञानिकों ने भी सफलता पायी है। बैटरी का नाम है 'लिथियम-क्लोरीन सेल'। लिथियम का भार लेड की अपेक्षा लगभग १/२० होता है। लेकिन इस बैटरी को भी ७०० डिग्री सें. का ताप चाहिए।

हाइड्रोजन-कारें

ऐसा अनुमान है कि अगली शताब्दी का मुख्य ईंधन द्रव-हाइड्रोजन ही होगा। हाइड्रोजन के सिवा और कोई तरल

ईंधन इतना सुलभ और प्रदूषण-रहित नहीं हो सकता। हाइड्रोजन का बड़े पैमाने पर उत्पादन पानी के विद्युत-अपघटन से या रक्त-तप्त लौहादि कतिपय धातुओं पर भाप गुजारने से हो सकेगा। प्रथम विधि से स्वतंत्र आक्सीजन भी मिलेगी, जिसका उद्योगों में अपना महत्त्व है।

इस हाइड्रोजन का उपयोग वाहनों के चलाने में दो तरह से किया जा सकेगा। 'हाइड्रोजन-सेल' द्वारा विद्युत प्राप्त करके या इसे विशेष प्रकार के अंतर्दहन-इंजनों में हवा के मिश्रण के साथ जलाकर। 'हाइड्रोजन-सेल' सफलतापूर्वक आविष्कृत किये जा चुके हैं, लेकिन इनमें हाइड्रोजन के साथ आक्सीजन भी लगती है, अतः यह विधि खर्चीली है। हाइड्रोजन-इंजनों में आक्सीजन के स्थान पर हाइड्रोजन का ही प्रयोग होने से यह विधि अपेक्षाकृत सस्ती पड़ेगी।

ऐसी कारें प्रदूषण-रहित होंगी। इनके 'एक्झास्ट' से जो जल-वाष्प और अमोनिया निकलेगी, उसका वायुमंडल में मिलते जाना बहुत ही अच्छा होगा। यही अमोनिया वायुमंडल में मिलती जाएगी और वर्षा के साथ पृथ्वी में पहुंचकर भूमि में नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ाएगी, जिससे उर्वरा-शक्ति बढ़ेगी।
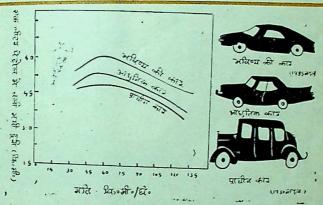
विभिन्न माडलों की कारों द्वारा बढ़ती गति के साथ प्रति-लिटर पेट्रोल में तय हुई दूरी। आधुनिक कारों की लगभग ६२ कि. मी. प्रति घंटे की चाल लाभप्रद है। भविष्य की कारों के लिए यह गति ६५ कि. मी. प्रति घंटे रहेगी।

पानी से चलनेवाली कारें

निकट भविष्य में आप अपनी कार में चार-छह गैलन पानी डालकर आराम से लंबी-लंबी यात्राएं कर सकेंगे!

गौरव की बात यह है कि यह योजना एक भारतीय दिमाग की उपज है। तारापुर (महाराष्ट्र) के वी. आर. वर्वे का यह

सिद्धांत काफी रोचक है। पानी के विद्युत-विच्छेदन से हाइड्रोजन और आक्सीजन मुक्त होते हैं। अब यदि एक ग्राम पानी से प्राप्त हाइड्रोजन और आक्सीजन को पुनः जलाया जाए तो उससे बहुत अधिक ऊर्जा मिलती है, जितनी इन्हें पानी का विद्युत-विच्छेदन करके निकालने में लगी थी।

इस प्रकार यदि हम एक ग्राम पानी से प्राप्त हाइड्रोजन और आक्सीजन जलाएं तो इतनी ऊर्जा मिल जाएगी जो एक ग्राम पानी का विद्युत-विच्छेदन करने के बाद भी बहुत-सा कार्य कर सकेगी। बस, इस कार का यही सिद्धांत है, जिस पर कार्य किया जा सकता है।

इस कार में एक 'स्टार्टर' होगा, जिसमें नमक के तनु अम्ल और अल्यूमीनियम-धातु के संयोग से हाइड्रोजन उत्पन्न होगा। इस हाइड्रोजन से इंजन चालू किया जाएगा, इंजन के साथ एक डायनमो भी चलेगा, जो पानी के विद्युत-विच्छेदन के लिए दिष्ट (डी. सी.) धारा उत्पन्न करेगा। इसी धारा से पानी का विच्छेदन किया जाएगा और इस प्रकार इंजन के लिए ईंधन अर्थात हाइड्रोजन उत्पन्न होगा। इंजन की शक्ति का एक भाग जल से हाइड्रोजन उत्पन्न करने में व्यय होगा, जबकि अधिकांश भाग सवारियों का भार खींचेगा।

अन्य साधनों से चलनेवाली कारें

वैज्ञानिकों को कुछ ऐसे इंजन बनाने में सफलता मिली है, जो बिना पेट्रोलियम के, ऊर्जा के अन्य साधनों द्वारा चल तो सकेंगे, लेकिन अनेक व्यावहारिक कठिनाइयों के कारण, विशेषकर अत्यधिक भार और बड़े आकार के कारण, साधारण कारों में प्रयुक्त नहीं किये जा सकते। ऐसे इंजनों को चलाकर पहले उनसे विद्युत-शक्ति प्राप्त की जाएगी, फिर या तो इस शक्ति को बैटरियों में एकत्र करके उनसे कारें चलायी जाएंगी या इस विद्युत से जल-विच्छेदन करके हाइड्रोजन प्राप्त कर लिया जाएगा, जिससे सब तरह के वाहन दौड़ाये जा सकेंगे।

ऐसे ही एक 'स्टर्लिंग' इंजन बनाने का प्रयास कई देशों में तेजी से चल रहा है। यह एक बहिर्दहन-इंजन होगा। यह लकड़ी और खर-पतवार से लेकर सौर और नाभिकीय-उर्जा तक, सभी से चल सकेगा।

पेट्रोल की बचत करनेवाली कारें

पृष्ठ २९ पर, चित्र में प्राचीन, आधुनिक और भविष्य की कारों के प्रारूप और वेग बढ़ने के साथ उनकी पेट्रोल खाने की दर में परिवर्तन का ग्राफ दिया गया है।

पेट्रोल में 'मेथनॉल' मिलाकर कार चलाने की विधि तो काफी पहले से ही ज्ञात है। इस विधि द्वारा इंजन की बनावट में बिना कोई परिवर्तन किये १५ प्रतिशत तक तेल आसानी से बचाया जा सकता है। इससे इंजन की दक्षता भी अपेक्षाकृत बढ़ जाती है। इसी तरह

कादम्बिनी

अखिल भारतीय कहानी-प्रतियोगिता

पुरस्कार : एक हजार रुपये

विस्तृत घोषणा अगले अंक में

पेट्रोल में ही 'पावर-अलकोहल' और थोड़ी मात्रा में बेंजीन मिलाकर भी पेट्रोल की अच्छी-खासी बचत की जा सकती है। यह विधि भारत-जैसे देशों के लिए विशेष उपयोगी हो सकती है, क्योंकि हमारे पास 'पावर-अलकोहल' प्राप्त करने का अत्यंत सस्ता साधन चीनी मिलों से बड़ी मात्रा में उपलब्ध 'शीरा' है।

कुकिंग गैस और अलकोहल—ईंधन !

१५ कि. ग्रा. का एक साधारण सिलिंडर एक साधारण कार को लगभग ४०० किलोमीटर खींच देता है, अतः यह विधि व्यापारिक स्तर पर बड़ी खरी उतरती है, लेकिन हमारे देश में कुकिंग-गैस का अभाव ही है। यह विधि उन देशों के लिए वरदान हो सकती है जिनके पास प्राकृतिक गैस के विशाल भंडार हों। 'गोबर-गैस' से भी कारें चलाने का परीक्षण होना चाहिए, जिसका अपने देश में काफी बड़ी मात्रा में उत्पादन हो सकता है।

ऐसी भी कारें आसानी से बनायी जा सकती हैं जो पूर्णतया अलकोहल से ही चलें। साधारण कारों के इंजनों में थोड़ा-सा परिवर्तन करके उन्हें 'मि... इल-अलकोहल' (मेथनॉल) से ... लायक आसानी से बनाया जा सकता ... प्रति-इंजन ८०० रुपये से अधिक ... नहीं आएगा। यदि हम इसमें ... गैस से प्राप्त मीथेन का प्रयोग करें ... ठीक रहेगा, अन्यथा महंगा पड़ेगा।

इसी तरह केवल 'पावर-अलकोहल' (इथाइल-अलकोहल) से चलनेवाले इं... का भी विकास करना होगा। ... चीनी मिलों में बहुत-सा शीरा ... होता है, जिसका किण्वन करके बहुत ... सस्ती दर पर इथाइल-अलकोहल प्र... किया जा सकता है।

पृथ्वी पर कार्बनिक पदार्थों ... जल की कोई कमी नहीं है, अतः हम आ... से कृत्रिम पेट्रोल बना सकते हैं।

अभी हाल में ही अमरीकी वैज्ञानि... ने कूड़े-करकट और मनुष्यों तथा प... के मलों से भी पेट्रोलियम बनाने की वि... विकसित कर लेने का दावा किया ... इस विधि से प्राप्त तेल अत्यंत उच्च ... का है, लेकिन अभी यह विधि महंगी है।

—१९०, विश्वेश्वरैया छात्राव... का. हि. वि. वि., वाराणसी-२२१००...

एक कंजूस मरकर धर्मराज के ... पहुंचा। धर्मराज ने उससे पूछा, "... भई, स्वर्ग में जाओगे या नरक में ..."

कंजूस बोला, "जहां दो पैसे ... फायदा हो।"

नहाने के टब के लिए

विश्वास करेंगे कि नहाने के एक टब के लिए भी अदालत १ लाख ८० हजार मार्क, यानी ६ लाख ४२ हजार रुपये का जुरमाना कर सकती है। यह आदेश जरमनी की एक अदालत ने वूपरटाल नगर-प्रशासन को दिया है कि वे जुरमाने की यह रकम बाथ-टब के स्वामी लोठार शिरमेर को तुरंत अदा कर दें। इस टब की विशेषता यह है कि जरमनी के विख्यात कलाकार जोसेफ ब्यू को बचपन में इसी में स्नान कराया जाता था और कला-संग्राहक शिरमेर ने इस बाथ-टब को वूपर-टाल नगर-प्रशासन के एक तहखाने में रखवा दिया था। वर्षों गुजर गये, एक दिन कुछ कर्मचारी उस तहखाने में गये तो उन्होंने इस गंदे टब को साफ कर दिया। उसे देखकर शिरमेर क्रोध से जल उठा। उसने तुरंत अदालत में दावा किया कि उसके पुराने टब के पुरानेपन को दूरकर कर्मचारियों ने टब की कीमत घटा दी है, इसलिए उसे ४० हजार मार्क क्षतिपूर्ति के रूप में दिये जाएं। दिलचस्प बात यह है कि अदालत ने टब की 'एंटीक' स्थिति खत्म करने के अपराध में हरजाने की राशि बढ़ाकर १ लाख ८० हजार मार्क कर दी।

निष्कर्ष : बाथ-टब पर धूल जमने दीजिए। जो चीज जितनी पुरानी दिखेगी, उतनी ही कीमती होगी।

भारती यह चला

प्रगतिशील युवा लेखकों का एक दल 'धर्मयुग' के संपादक धर्मवीर भारती से मिलने बंबई पहुंचा। उनमें से किसी ने भारती-जी को देखा नहीं था। सब नाम से ही परिचित थे। वे 'धर्मयुग' कार्यालय में जाकर संपादक के कमरे के सामने खड़े हो गये। वहां अच्छी-खासी भीड़ लग गयी। वहां के किसी अधिकारी ने उन लेखकों से कहा कि कृपया आप लोग लाइन लगा लें। तभी एक सज्जन तेजी से आये और सीधे संपादक के कमरे में घुसने लगे। प्रगतिशील लेखक भला कैसे बर्दाश्त करते! उन्होंने उनको पकड़ लिया और पीछे धकेलकर कहा, "अजी लाइन में लगिए। हम लोग घंटे भर से खड़े हैं।" वे सज्जन भौंचक्के रह गये। उन्होंने पुनः अंदर जाने की कोशिश की तो इस बार भी प्रगतिशील लेखकों ने भला-बुरा कहकर पीछे कर दिया। अब क्या था, वे सज्जन अत्यधिक क्रोधित होकर बोले, "ठीक है! नहीं जाने देते तो मत जाने दो, धर्मवीर भारती यह चला।" और वे सज्जन तेजी से पीछे मुड़ गये।

संपादक और लार्ड

एक बार एक प्रसिद्ध लार्ड 'लंदन टाइम्स' के मुख्य संपादक के कार्यालय में पहुंचा। संपादक महोदय अपने काम में इतने व्यस्त थे कि उन्हें लार्ड के आने का पता भी न चला। लार्ड ने संपादक महोदय की मेज पर जोर से मुक्का मारा और बोला, "तुम्हें पता नहीं मैं कौन हूं?"

संपादक महोदय ने बिना ऊपर देखे ही कहा, "कृपया, कुरसी पर बैठिए।"

"मैं एक प्रसिद्ध लार्ड हूं, लार्ड," लार्ड ने गुस्से में ही कहा।

"तो आप दो कुरसियों पर बैठिए," संपादक महोदय नीची नजर किये ही बोले।

लीजिए दिल हाजिर

उर्दू के शायरों का दिल भी उनकी शायरी की ही तरह नाजुक होता है। पेश है इस नाजुक दिल की दास्तान:

गम है या इंतजार है, क्या है
दिल जो अब बेकरार है, क्या है

—सोज

सौ टुकड़े हो गया न सुनी हमने पर सदा
क्योंकर न जी को भाये, अदाये-शकिस्ते दिल

—अख्तर

मेरा दिल किसने लिया नाम बताऊं किसका
मैं हूं या आप हैं, घर में कोई आया न गया

—बहर

तड़पते देखता हूं जब कोई शै
उठा लेता हूं, अपना दिल समझ

—तस

हम तेरे इश्क से तो वाकिफ नहीं,

सीने में जैसे कोई दिल को मला करे

—

किसी ने मोल न पूछा दिले शिकस्ता
कोई खरीद के टूटा पियाला क्या क

—आ

गुमां न क्योंकि करूं तुझपै दिल चुराने
झुकाके आंख, सबब क्या है मुसकराने

—अमा

मैंने जो मांगा कभी दूर से दिल डर-डर
उसने धमका के कहा—'पास तो
दे

—

संपादक की डाक से

तुम्हें खो दूंगी

प्रिय
तुम किस शोर के उपासक हो
मुझे पता नहीं
इतना पता है
कि शोर में मैं तुम्हें खो दूंगी
मेरा एकांत तुम्हें मेरे
बीच खींच लाएगा
ऐसे में तुम्हीं कहो
मेरे अंदर-बाहर (बहुत बारीक-सा)
क्या इतना भी भय —कहीं रह पा

उर्दू-कहानी

● महेन्द्रनाथ

मैं अपने दीवान पर लेटा हुआ मरने की प्रतीक्षा में जी रहा था। दर-असल इस किस्म की अवस्था का वही व्यक्ति अनुमान लगा सकता है जिसे एक बार हार्ट-अटैक हो चुका हो और दूसरी बार हार्ट-अटैक होने की आशंका हो।

मैं बिलकुल इस मूड में था कि मौत आती है तो आ जाए। दिल की धड़कन बंद होती है तो बंद हो जाए। इस समय बाहर अंधेरा छाया हुआ था। चारों ओर उदासी और एकरसता का राज्य था, अर्थात वातावरण मौत के लिए खुशगवार था। अचानक टेलीफोन की घंटी बजी। मैंने रिसीवर उठाया कि दूसरी ओर से आवाज आयी, "आदाब-अर्ज !"

मैंने कहा—"आप हैं . . . फरमाइए !"

दूसरी ओर से वे बोले, "भई, मैंने आज कुछ दोस्तों को दावत दी है, यानी एक मीटिंग बुला रहा हूं, जिसमें सांस्कृतिक और सामाजिक मसलों पर विचार किया जाएगा। हम लोगों ने सदा तानाशाही और फासिज्म के खिलाफ आवाज बुलंद की है, इसलिए हमारा फर्ज है कि इस समय प्रगतिशील आंदोलन को नये सिरे से जिंदा किया जाए। क्या विचार है तुम्हारा ?"

मैंने जवाब दिया, "विचार तो बुरा नहीं !"

"और हां," वे बोले, "व्हिस्की और स्वादिष्ट खाना भी सेवा में प्रस्तुत किया जाएगा। तुम्हें जरूर आना होगा।"

मैंने 'हां' कर दी और सोचने लगा,
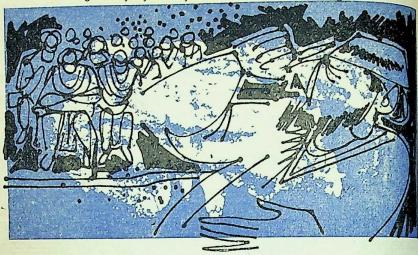
'इस दीवान पर मरने से तो बेहतर है कि पुराने और जिगरी दोस्तों से मिला जाए और ठाठ से शराब पीकर दोस्तों की महफिल में दम तोड़ा जाए ताकि शानदार जनाजा तो निकले !' मैंने अपना फैसला बीवी को सुनाया कि मैं जा रहा हूं।

"कहां ?" बीवी ने चितातुर स्वर में पूछा, "देखिए, आपकी तबीयत ठीक नहीं है। सुबह से पसीना आ रहा है और फिर दिल का दौरा... कहीं..." यह कहकर वह चुप हो गयी।

"अब कुछ भी हो जाए, मैं जरूर जाऊंगा।"

और मैं दीवान से उठा। शोख-भड़कीली कमीज और नयी पैंट पहनकर घर से चल दिया।... टैक्सी में बैठकर सीधा अपने दोस्त के घर पहुंचा। वहां पहुंचकर पता चला कि अभी तक बहुत कम लोग आये थे। मेरा मित्र मुझे नीचे वाले कमरे में ले गया। वहां एक अन्य पुराने दोस्त से मुलाकात हो गयी। वह भी मेरी ही तरह दिल का मरीज था। मुझे देखते ही बोला, "एक पेग मार लो। तबीयत जरा हलकी हो जाएगी।"

इतने में एक दुबला-पतला-सा शायर आया और बड़ी गंभीरता से कहने लगा, "आप सबको ऊपर बुलाया है।"

जब शराब के एक-दो पेग गले से नीचे चले जाते हैं तब यादों का एक जुलूस नजरों के आगे से गुजरने लगता है—दिन, रात, शामें, भाषण, नारे, आजादी, इनकलाब, हिंदू-मुस्लिम-एकता, प्रगतिशील आंदोलन, गजलें, कहानियां, जुलूस, जलसे, गिरफ्तारियां, किसी का अंडरग्राउंड हो जाना, आग लगा देनेवाले भाषण, पूरी दुनिया एक बिरादरी, सब

वर्ग खत्म, केवल सर्वहारा की हुकूमत होगी . . . उनमें से बहुतों ने अपने खून से आशा के दीप जलाये थे। दुःख सहे थे। भूखे रहे थे। आजादी से इश्क किया था। बड़े खूबसूरत अफसाने लिखे थे। चेहरे बड़े दुबले-पतले-से थे। आंखें अंदर को धंसी हुईं, किंतु चेहरों पर मासूमियत और दिलों में इनकलाब की शमा रोशन थी। जिंदगी से लड़ने की इच्छा थी और विरोधी शक्तियों से टक्कर लेने की हिम्मत थी।

जब मैं ज्यादा शराब पी लेता हूं तब जी चाहता है कि भाषण दूं। इसी बीच एक वृद्ध व्यक्ति ने उठकर भाषण देना भी शुरू कर दिया, "हमारे देश पर एक संकट आया है, और इसीलिए आज हम यहां एकत्र भी हुए हैं। . . ."

मैंने मन में सोचा, 'क्या इससे पहले कभी इस देश पर संकट नहीं आया था? भला इस समय भाषण करने की क्या जरूरत थी?' फिर दिमाग से आवाज आयी, 'भाषण सुनने में क्या हर्ज है?'

जिस अंदाज से भाषण किया गया

उर्दू के प्रख्यात लेखक स्व. महेन्द्रनाथ

था, उसमें सहृदयता थी, विनम्रता थी। साथ ही जोश-खरोश भी था। दरअसल इस किस्म के भाषण मैं कई बार सुन चुका था। अपनी उम्र के आरंभिक सफर में इस किस्म के मूल्यों से अपने साहित्यिक जीवन का मैंने श्रीगणेश किया था। और अब मैं दिल का रोगी इन्हीं मूल्यों की खातिर मरने के लिए मजबूर किया जा रहा हूं। इससे बड़ी और क्या मूर्खता हो सकती है!

भाषण के बीच शराब का एक और दौर चला। उसके बाद लोगों ने तालियां बजायीं। शराब के नशे में वे तालियां बजाना भूल गये थे।

धीरे-धीरे धुंध छंट रही थी। पुराने चेहरों की जगह नये चेहरे आ रहे थे। दुबले-पतले चेहरे, बुद्धिमान आंखें, तेज-तर्रार भाषण, जिनमें इनकलाब की गरज थी। वे चीखें, वे ललकारें, वह तड़प, वह आंखों की चमक, वह साफ-सुथरा अंतःकरण, कहां था वह! ये चेहरे अब मोटे हो गये थे। खाते-पीते लोग, मोटे लोग, नफीस कपड़े पहने हुए, दबी-दबी आवाजें, शांत निगाहें, सुलझी हुई बातें, गंभीरता से बात करने का अंदाज। अब एक नयी ऋतु थी। एक नयी बहार थी। बहुतों को बहुत कुछ मिल गया। बहुतों को अभी बहुत कम मिला। बहुत-से साथी अब खाते-पीते वर्ग से संबंध रखते हैं। यह कोई बुरी बात नहीं थी। इनमें से हर व्यक्ति ने मेहनत की थी, जिंदगी में संघर्ष किया था। हां, कुछ हार मानकर बैठ गये। मगर बहुतों ने लड़-झगड़कर अपनी जगह बना ली।

एक व्यक्ति ने कहा, "हमारे पास अब इन कामों के लिए समय नहीं है। हम लोग बेहद व्यस्त हैं। एक ऐसी जगह काफिला आकर रुक गया है जहां हम लोगों के पास नहीं जा सकते, लोगों को हमारे पास आना चाहिए।"

एक अन्य व्यक्ति बोला, "यहां जितने

विद्वान जमा हैं, उन्होंने इतना काम किया है कि अब वे और काम नहीं कर सकते। इसीलिए उन लोगों को बुलाना चाहिए था जो नयी पीढ़ी से संबंध रखते हैं।"

मेरे मस्तिष्क में कई प्रश्न उभरे—'नयी पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी! नया साहित्य और पुराना साहित्य! बढ़िया साहित्य और घटिया साहित्य! इनसान को आगे बढ़ानेवाला साहित्य या इनसान को पीछे ले जानेवाला साहित्य! सोद्देश्य या बिना उद्देश्य का साहित्य! हुजूर! एक किस्म का साहित्य हो तो उसकी परि-भाषा की जाए। साहित्य के तो सहस्रों रूप हैं। जैसे किसी इनसान का चेहरा दूसरे इनसान से नहीं मिलता, इसी प्रकार एक लेखक की रचना दूसरे लेखक से नहीं मिलती, पर साहित्य की आत्मा यानी इनसान की आत्मा तो एक होती है। जब हमने आगे आने की कोशिश की तब हमसे आगे बहुत से लोग थे। हमने उन्हें पीछे धकेला। गालियों से नहीं, बल्कि काम से!'

सोचने से क्या होता है! लेखक सोचकर लिखे या लिखकर सोचे। पढ़-कर सोचे या सोचकर पढ़े . . . मैं बैठ-कर पी रहा था। कई लोग खड़े होकर शराब पी रहे थे। शराब बैठकर पी जाए या खड़े होकर पी जाए। दरअसल इस समय मुझे शराब काफी चढ़ गयी थी और जी चाह रहा था कि इस समय मैं उन विद्वानों के खिलाफ बोलूं . . . अच्छा मौका है आगे बढ़ने का, भाषण करने का। इस किस्म के अवसर कहां मिलते हैं! इतने विद्वानों और बुद्धिजीवियों की टोली कहां मिलेगी! उनकी पोल खोलूं। उनकी प्रतिष्ठा को पांव तले रौंदूं।

मैं हाल से बाहर निकला। लोग खाना खा रहे थे। 'पागल . . . बेवकूफ . . . जाहिल अपने-आपको बड़ा समझते हो . . . !' मैंने अपने-आपको एक मोटी-सी गाली दी, और फिर खानेवालों की महफिल में शामिल हो गया।

—अनु. सुरजीत

● आचार्य कालीचरण मि

२६ जनवरी, १७३२। पेरिस के एक चर्च से लगे कब्रिस्तान के अहाते में एकत्रित भीड़ का धैर्य टूट गया और वह हिंसात्मक कार्रवाई पर उतारू हो गयी। तोड़-फोड़ और विरोधी गुट पर सशस्त्र आक्रमण ! भीड़ की इस नाराजगी का कारण वह पट्टिका थी जो फ्रांस के तत्कालीन शासक की ओर से कब्रिस्तान के द्वार पर लगायी गयी थी। पट्टिका पर अंकित था—

राजा की आज्ञा है कि
ईश्वर इस स्थान पर
अब कोई चमत्कार न दिखाये

भीड़ का कहना था, ईश्वर को चमत्कार न दिखलाने की आज्ञा देनेवाला राजा कौन होता है ? ईश्वर जब और जहां चाहेंगे, चमत्कार दिखलाएंगे। और, इस घटना के बाद पेरिस में एक ऐसे गुप्त संप्रदाय का गठन हुआ जो तंत्र-मंत्र-जैसी विधियों में विश्वास रखता और रात के अंधकार में ऐसे पूजा-विधान करता जिनके विवरण पढ़कर आज भी रोंगटे खड़े हो जाते हैं।

इस संप्रदाय का पूजा-पाठ रात में होता। किसी एक गुप्त स्थान पर उ सदस्य, जिनमें अधिकांश स्त्रियां हो एकत्र होते। इसके बाद वे एकसाथ प्रा करते और प्रार्थना के उपरांत कुछ व्यक्ति जिन्हें 'महान सहायक' कहा जाता शेष लोगों को नोकीली लकड़ियों से कों शुरू कर देते, पर लोग दर्द के का चीखते-चिल्लाते नहीं, वरन खुशी से हं गाते। इस पूजा-विधान में स्त्रियों दुर्दशा की जाती, किंतु वे सारी यंत्र प्रसन्नता से झेलतीं।

भक्तों पर को

कभी-कभी यह होता कि लोग अंधकार 'महान सहायक' की प्रतीक्षा में प्रार्थ की मुद्रा में सिर झुकाये बैठे होते। अचा वह खिड़की के रास्ते चुपचाप आता भक्तों पर कोड़े बरसाना शुरू कर देता १८वीं शती तक फ्रांस में यह संप्रदाय फला-फूला, पर एक दिन नये विश्वा और नये संप्रदायों के उदय के का

गुप्त तांत्रिक संप्रदायों को प्रभावित करनेवाले मिथरा-संप्रदाय का प्रतीक-चिह्न

उसका अंत हो गया।

संसार के प्रायः प्रत्येक देश में, चाहे वह सुसंस्कृत अमरीकी देश हो, या अज्ञान के अंधकार में डूबा कोई अफ्रीकी देश, सदियों से ऐसे गुप्त संप्रदाय कार्यरत रहे हैं जिन्होंने निरर्थक प्रतीत होनेवाले शब्दों और ज्यामितीय रेखांकनों के सहारे अलौकिक जगत से संपर्क किया है। मिस्र में इस तरह के अनेक संप्रदाय थे। फराओ मेरीकारा को मिले निर्देशों में से एक यह था कि 'ईश्वर ने जादू मनुष्य को अपनी रक्षा करने के लिए ही सौंपा है।'

भारत में तंत्र को शिवप्रणीत शास्त्र माना गया है। उसके तीन भाग माने गये हैं— आगम, यामल और मुख्य तंत्र। वाराही तंत्र में इनकी विशद व्याख्या की गयी है तथा कहा गया है कि कलियुग में वैदिक मंत्रों, जपों, यज्ञों आदि का कोई फल नहीं प्राप्त होनेवाला है। उनके स्थान पर कार्य-सिद्धि के लिए तंत्र-शास्त्र में वर्णित मंत्रों और उपायों की सहायता लेनी चाहिए। यों तो शक्ति की उपासना वैदिक काल से ही प्रचलित है, पर उसका चरमोत्कर्ष शाक्त-संप्रदाय में हुआ। भारत में तांत्रिक-पूजा के तीन प्रधान केंद्र थे—केरल, कश्मीर और कामाख्या। आरंभ में इस पूजा का स्वरूप सात्विक था, पर कालांतर में उसका स्थान पंचमकार—मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा और मैथुन—ने ले लिया। आजकल तांत्रिक पूजा का जिक्र होते ही

मारण, उच्चाटन, [illegible] संप्रदाय के एकाक्षरी मंत्रों—'ह्रीं', 'क्लीं', 'श्रीं', 'शूं','क्रूं' (बीज मंत्रों) आदि का ध्यान आ जाता है।

इसी से मिलती-जुलती पूजा-रीति अन्य देशों में भी प्रचलित थी। अन्य देशों के तांत्रिक भी अपने हितैषियों की रक्षा के लिए पूजापाठ किया करते थे।

एक अतृप्त आत्मा से विवाह

द्वितीय विश्वयुद्ध के पहले की घटना है। बर्मा के मांडले शहर में एक भारतीय व्यापारी रहता था। किसी कारण उसका व्यापार ठप हो गया और वह दाने-दाने को मोहताज हो गया। एक दिन उसके पास एक व्यक्ति आया। घनी काली दाढ़ी, [illegible] मस्तक पर लाल टी[illegible] उसने व्यापारी से कहा कि यदि वह उ[illegible] शर्त मान ले तो उसके सारे कष्ट दू[illegible] सकते हैं, पर उसकी शर्त बड़ी वि[illegible] थी। वह व्यक्ति चाहता था कि वह व्या[illegible]पारी भविष्य में अपनी पत्नी से कोई शा[illegible]रिक संबंध न रखने का वचन दे। [illegible] उस व्यापारी ने और खोजबीन की [illegible] उस व्यक्ति ने कहा कि मैं तुम्हारी प[illegible] का विवाह एक अतृप्त आत्मा से [illegible] दूंगा। एवज में वह आत्मा तुम्हें मालाम[illegible] कर देगी। उस व्यापारी ने इस तरह प[illegible] बेचने के बदले भूखों मर जाना पसंद कि[illegible]

प्रेतों का कब्रिस्[illegible]

रंगून का एक अन्य धर्मावलंबी व्या[illegible]

चित्र-लिपि में छिपी गुप्त शक्ति

उपासना-समारोहों में प्रयोग में लायी जानेवाली पीतल की कुल्हाड़ी
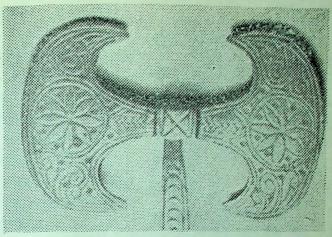
इस प्रलोभन में आ गया। उसने स्वेच्छा से अपनी पत्नी का 'विवाह' ऐसी अतृप्त आत्मा से कर दिया। 'विवाह' के बाद उसका कारोबार चल पड़ा और उसकी गणना रंगून के धनी-मानी नागरिकों में होने लगी।

प्रख्यात शिकारी केनेथ ऐंडरसन ने भी अपनी एक पुस्तक में ऐसे एक यहूदी व्यापारी का जिक्र किया है जिसने पहले तो अपनी पत्नी का 'विवाह' ऐसी आत्मा से कर दिया, पर कुछ समय बाद जब वह मालामाल हो गया तब एक दिन अपनी वासना पर नियंत्रण न रख सका। फलतः कुछ ही दिनों के भीतर उसे फिर कंगाल हो जाना पड़ा। एंडरसन ने एक 'रजतबंध बंधुत्व संघ' का भी उल्लेख किया है। वे स्वयं भी उसके सदस्य हैं। इस संघ की सदस्यता के प्रतीक रूप में उनके पास चांदी का एक बाजूबंद है। उन्होंने एक मिस्री तांत्रिक का भी जिक्र किया है। वह मिस्री तांत्रिक उनके एक मित्र को, जो फौज में डॉक्टर था, प्रेतों से मिलवाने एक कब्रिस्तान ले गया था। दोनों ने सफेद वस्त्र धारण किये थे। नियत तिथि को गुलाब के फूलों का एक बड़ा हार लेकर वे दोनों रात में कब्रिस्तान पहुंचे। कब्रिस्तान पहुंचकर मिस्री तांत्रिक ने एक खास कब्र ढूंढ़ी और फिर रात के बारह बजते ही मंत्रोच्चार शुरू कर दिया। इसके पूर्व उस तांत्रिक ने फौजी डॉक्टर को एक तावीज भी दिया था, जिस पर कुछ रेखाएं खिंची थीं और रोमन लिपि में कुछ अरबी शब्द लिखे थे। मिस्री तांत्रिक मंत्रोच्चार करता-करता रुक गया और भद्दी-भद्दी गालियां देने लगा। इसके बाद फौजी डॉक्टर को लगा जैसे वह तांत्रिक किसी से हाथापाई कर रहा है। काफी देर तक यह स्थिति रही। अंत में तांत्रिक जैसे परास्त हो गया

और धरती पर गिर पड़ा। गिरते-गिरते उसके मुंह से अस्फुट स्वरों में निकला— 'वह...गुलाबी हार मुझे दो।'

फौजी डॉक्टर ने कब्र के सिरहाने रखे उस हार को उठाकर तांत्रिक को दे दिया। हार पाते ही तांत्रिक ने उसके टुकड़े-टुकड़े कर डाले। हार के नष्ट होते ही वह ठीक हो गया। बाद में उसने फौजी डॉक्टर को बतलाया कि प्रेतात्माएं उससे चिढ़ गयी थीं और उस पर चढ़ बैठी थीं।

मंत्रोच्चार द्वारा कार्यसिद्धि

तंत्रविद्या पर पश्चिमी जिज्ञासुओं ने भी काफी खोज की है। इनमें से एक फ्रांसीसी विद्वान (बुई सॉन) मॉरिस हैं। उन्होंने अपनी एक पुस्तक में संसार के तांत्रिक संप्रदायों और जादू-टोना करनेवाले लोगों के बारे में विस्तृत जानकारी दी है। उनके अनुसार पहले मंत्रोच्चार द्वारा कार्य-सिद्धि की जाती थी। बाद में मंत्र-शक्ति लिखित अक्षरों में रूपांतरित हो गयी।

हिंदू धर्म के अतिरिक्त बौद्ध धर्म की अपनी तांत्रिक परंपरा रही है, पर उसका स्वरूप आज प्रचलित तांत्रिक धारणा से बिलकुल अलग है। तिब्बत-स्थित बौद्ध तांत्रिक संप्रदायों में कुछ तांत्रिक ऐसे भी थे, जो ध्वनि एवं अन्य उपकरणों के माध्यम से विलक्षण प्रभाव उत्पन्न करते थे।

वह पृथ्वी को सुला देता था

एक अंगरेज विद्वान ने अपने एक शोध-ग्रंथ में ऐसे तांत्रिक लामाओं की जानकारी दी है।

से हुई
को सु
बीस
के लि
करते
तांबे
पर
'इस
पांच
उठाय
कम
देख
पृथ्वी
जाएगी
त्यों
सहारे
उन
की य
अंधेरी
था।
हाल
गुफा
बड़ा
उठाय
लटकी
छोटी
गुफा
यह
खूंटिय
जून

तिब्बत में उनकी भेंट एक ऐसे लामा से हुई थी जिसका दावा था कि वह पृथ्वी को सुला देता है। लामा ने पहले उनसे बीस सेर वजनवाले एक पत्थर को उठाने के लिए कहा। उसके बाद उसने मंत्रोच्चार करते हुए एक कटोरी से गाढ़ा-सा तेल तांबे के तार से बनी कूंची से उस पत्थर पर छिड़का। फिर उसने उनसे कहा कि 'इस पत्थर को पांच मिनट बाद उठाइए।' पांच मिनट बाद उन्होंने उस पत्थर को उठाया तो उसका वजन एक सेर से भी कम हो गया था। उन्हें आश्चर्य में पड़ा देख लामा ने कहा, "मैंने कुछ देर के लिए पृथ्वी को सुला दिया है। जब वह जाग जाएगी तब इस पत्थर का वजन ज्यों-का-त्यों हो जाएगा।"

एक अन्य लामा ने घंटे की आवाज के सहारे अंधेरी गुफा में प्रकाश किया था। उन अंगरेज विद्वान को एक गंधक-झील की यात्रा करनी थी। यात्रा के मार्ग में अंधेरी गुफाओं में से होकर गुजरना पड़ता था। गुफाओं के बीच में सौ-सौ फुट चौड़े हाल थे। उन अंगरेज विद्वान के साथ गुफा में प्रवेश करते ही लामा ने नौ इंच बड़ा तांबे का एक छोटा-सा घड़ियाल उठाया। उसके चारों ओर चांदी की झालरें लटकी थीं। फिर उसने घड़ियाल पर एक छोटी-सी मुगरी से चोट की। चोट पड़ते गुफा हरे प्रकाश से आलोकित हो उठी। यह प्रकाश गुफा की दीवारों में टंगी खूंटियों से हो रहा था। जैसे ही प्रकाश

गदना गुदवाए एक महिला

धीमा होता, लामा घड़ियाल पर चोट करता और प्रकाश तेज हो जाता।

झील के पास पहुंचते ही लामा ने घड़ियाल पर दो बार चोट की तो एकसाथ पचासों स्थान पर प्रकाश चमक उठा। एक स्थान पर प्रकाश काफी अधिक था। उन अंगरेज विद्वान ने देखा कि यह प्रकाश चार इंच बड़े एक चमकीले पत्थर के टुकड़े से हो रहा है। वह टुकड़ा भूरे रंग की धातु की थाली में जड़ा हुआ था। थाली तांबे के तार के सहारे लटकी थी।

तंत्र विद्या द्वारा कार्यसिद्धि के अनेक उदाहरण मिलते हैं, पर आज के वैज्ञानिक युग में इस प्रकार की घटनाओं पर सहज ही विश्वास नहीं होता। ●

१. **बुद्धिप्रकाश** ने एक घड़ी कुछ रुपये में खरीदी और उतने ही प्रतिशत मुनाफा लेकर उसे ११९ रुपये में बेच दिया। बताइए वह घड़ी कितने रुपये में खरीदी गयी थी?

२. **निम्नलिखित** आकृति को चार समभागों में विभाजित कीजिए—
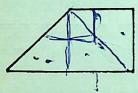
३. क. **महाभारत** के प्रथम और अंतिम पर्वों के नाम बताइए।

ख. भगवद्‌गीता महाभारत के किस पर्व के अंतर्गत है?

४. **नीचे** लिखे महासागरों के सबसे अधिक गहरे क्षेत्र कौन-से हैं? उनकी गहराई भी बताइए।

क. प्रशांत, ख. अतलांतक, ग. हिंद।

५. **भारत** में वर्तमान (क) उच्च न्यायालयों, (ख) विश्वविद्यालयों, (ग) आई. आई. टी. (इंडियन इंस्टीट्यूट ऑव टेक्नोलॉजी) की संख्याएं बताइए।

६. **केंद्र** में इस समय मंत्रियों (कैबिनेट मंत्रियों, राज्य-मंत्रियों तथा उप-मंत्रियों) की संख्या कितनी है?

७. **दुनिया** में प्रथम महिला राष्ट्रपति कौन हुई हैं?

८. **फ्रांस** में प्रथम महिला जनरल का नाम बताइए।

९. **संस्कृत** के निम्नलिखित ग्रंथों के रचयिता कौन हैं?

क. स्वप्नवासवदत्तम्, ख. किरातार्जुनीयम्, ग. मालविकाग्निमित्रम्, घ. उत्तर-रामचरित।

१०. **निम्नलिखित** पुरस्कार पाने वालों के नाम बताइए—

क. नेहरू-पुरस्कार, १९७४

ख. पॉल गेटी कंजरवेशन पुरस्कार (भारतीय प्राप्तकर्ता)

अपनी बुद्धि पर जोर डालिए और यहां दिये प्रश्नों के उत्तर खोजिए। उत्तर इसी अंक में कहीं मिल जाएंगे। यदि आप सारे प्रश्नों के उत्तर दे सकें तो अपने सामान्य ज्ञान को श्रेष्ठ समझिए, आधे से अधिक में साधारण और आधे से कम में अल्प।

—संपादक

ग. अमरीका में बसे किस भारतीय को उत्कृष्ट पत्रकारिता के लिए वहां का पुलिट्जर-पुरस्कार तथा भारत सरकार की ओर से पद्मभूषण की उपाधि मिली है ?

११. क. **महिलाओं** के लिए टेबल-टेनिस की नेशनल ट्राफी का क्या नाम है ?

ख. टेस्ट क्रिकेट में सर्वाधिक शतक किसने बनाये हैं ?

१२. **बैसाखी** किन दो ऐतिहासिक घटनाओं के बारे में उल्लेखनीय है ?

१३. **निनेवा** किस प्राचीन साम्राज्य की राजधानी थी ?

१४. १६ जुलाई, १८९३ को हिंदी-जगत में कौन-सी महत्त्वपूर्ण घटना हुई थी ?

१५. **बिच्छू** का डंक उसके शरीर के किस भाग में होता है ?

१६. **निम्नलिखित** चित्र को ध्यान से देखिए और बताइए कि यह क्या है।

ज्ञान-गंगा

औषधार्थसुमंत्राणां बुद्धेश्चैव महात्मनाम्।
असाध्यं नास्ति लोकेऽत्र यद् ब्रह्माण्डस्य मध्यगम्।।

—इस संसार और समस्त ब्रह्मांड में औषध, धन, सुमंत्र तथा महात्माओं की बुद्धि के सामने सब साध्य (संभव) हो जाता है।

प्राणैरपि हिता वृत्तिरद्रोहो व्याजवर्जनम्।
आत्मनीव प्रियाधानमेतन्मैत्रीमहाव्रतम्।।

—मित्र की प्राण देकर भी भलाई करना, द्रोहभाव को दूर रखना, कपटशून्य व्यवहार और अपनी आत्मा के समान समझकर मित्र का प्रिय करना—मैत्री के ये चार महाव्रत कहे गये हैं।

अप्रियाण्यपि पथ्यानि ये वदन्ति नृणामिह।
त एव सुहृदः प्रोक्ता अन्ये स्युर्नामधारकाः।।

—इस संसार में जो लोग अप्रिय, पर हितकारी बात कहते हैं वही सच्चे मित्र हैं, दूसरे तो नाममात्र के मित्र होते हैं।

सन्तोषामृततृप्तानां यत्सुखं शान्तचेतसाम्।
कुतस्तद् धनलुब्धानां, इतश्चेतश्च धावताम्।।

—संतोष रूपी अमृत से तृप्त और शांतचित्त लोगों को जो सुख मिलता है वह धन के लोभ से इधर-उधर भटकनेवाले लोगों को कैसे मिल सकता है!

—प्रस्तोता : ब्रह्मदत्त शर्मा

पिकाडली की शाम और टेन डाउनिंग स्ट्रीट

• राजेन्द्र अवस्थी

टेन डाउनिंग स्ट्रीट के नाम से कोई भी व्यक्ति अचानक चौंक पड़ता है। वर्षों से यह ब्रिटिश प्रधान-मंत्रियों का निवासस्थान है। प्रधान-मंत्री बदलते रहे हैं, यह स्ट्रीट नहीं बदली और अब तो ब्रितानिया सरकार के शासन की प्रतीक बन गयी है। इसके बावजूद यह मात्र एक सकरी गली है। मुश्किल से एक कार भीतर जा सकती है। पास-पास मकान बने हुए हैं और उन्हीं में प्रधान-मंत्री का निवास-स्थान है। पहले ही हम बता चुके हैं कि उन दिनों के प्रधान-मंत्री विल्सन टेन डाउनिंग स्ट्रीट के किनारे खड़े मजे में सिगार पी रहे थे, शायद उन्हें किसी की प्रतीक्षा थी। सुरक्षा की कोई व्यवस्था हमें दिखायी नहीं दी। यह सब तब था जब लंदन में यहां-वहां बम-विस्फोट हो रहे थे। जब पहला बम-विस्फोट हुआ था तब हम उस स्थान के सामने की ही इमारत में थे।

बम-विस्फोट के समय

उन दिनों और आज भी आयर्लैंड ने इंगलैंड में विस्फोटक स्थिति पैदा कर दी है। पिछले कुछ वर्षों से वहां प्रोटेस्टेंट और कैथोलिकों के बीच धार्मिक-युद्ध जैसी स्थिति बन गयी है। उत्तरी आयर्लैंड में दिनदहाड़े गोली चलाने और हत्या की घटनाएं रोज ही होती हैं। आयर्लैंड के लोग अपने को इंगलैंड के शेष हिस्से से अलग करना चाहते हैं।

इसी राजनीतिक वातावरण के कारण लंदन में लगातार बम-विस्फोट होते रहे हैं। संभवतः अपना प्रोटेस्ट दिखाने के लिए वे यह सब करते हैं।

लंदन ही नहीं, दुनिया के बड़े शहरों में भीड़भरे इलाकों में से एक पिकाडली सरकस : जिस तरह नयी दिल्ली को कनाटप्लेस से पहचाना जाता है, लंदन को पिकाडली से

बुधवार की दोपहर 'टाइम्स लिटरेरी सप्लीमेंट' के संपादक मिस्टर ई. ट्रेविन के साथ हमने लंच लिया और इसी के साथ पुस्तकों की समीक्षा के संबंध में हमारी चर्चा हुई। 'टाइम्स' का लिटरेरी सप्लीमेंट लंदन में ही नहीं, दुनिया भर में रुचि के साथ पढ़ा जाता है। उसका मुख्य आकर्षण है—पुस्तकों की समीक्षाएं। नयी से नयी पुस्तकों की जानकारी उससे मिल जाती है। मिस्टर ट्रेविन युवा व्यक्ति हैं। उन्होंने बताया कि कई बार प्रकाशक पुस्तक छपते ही मात्र उसके फर्मे एकत्रित कर यहां भेज देते हैं। उसके बाद पुस्तक का मुखपृष्ठ और अन्य चीजें छपने तथा बाइंडिंग में समय लगता है। जब पुस्तक बाजार में आती है, तभी 'टाइम्स लिटरेरी सप्लीमेंट' में उसकी समीक्षा भी छप जाती है। इससे पुस्तक की बिक्री पर बहुत प्रभाव पड़ता है। हमारे यहां के अधिकांश समीक्षकों की तरह फ्लैप मैटर देखकर समीक्षाएं नहीं लिखी जातीं।

इतनी पुस्तकों का सम्हालना आसान नहीं है। संपादक महोदय का कहना था कि वे पुस्तकों का चुनाव करते हैं और प्रयत्न यही किया जाता है कि अच्छी पुस्तकें ही समीक्षा के लिए समीक्षकों को दी जाएं, यद्यपि समीक्षकों में विशेषज्ञों की खोज करना उनके लिए भी कठिन है। 'टाइम्स' की ओर से प्रतिवर्ष पुरस्कार भी दिये जाते हैं। पुरस्कार-समिति के अध्यक्ष एग्न्यूस विल्सन से उसी रात एक इतालवी रेस्तरां में भेंट हुई थी। पिकाडली के पास यह सामान्य-सा रेस्तरां है—विनाची। शांत वातावरण है, इसलिए एग्न्यूस साहब को यही जगह पसंद है। वे लंदन से कुछ दूर एक शांत नगर में रहते हैं, वहीं लिखते-पढ़ते हैं। लंदन में उन्होंने एक कमरा ले रखा है और जब-तब आते
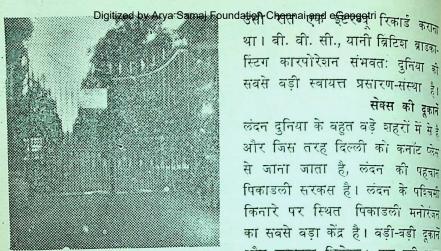
चर्चिल का निवास-स्थान

रहते हैं।

युवा लेखक : नारों से दूर

फ्रीलांस लेखक के रूप में एग्न्यूस ने लेखन को स्वीकार किया है और अब वे आधुनिक समीक्षकों में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। एग्न्यूस से हमारी भेंट पहले भारत में हो चुकी है, इसलिए लंदन में मिलकर हमें और खुशी हुई थी। वहां के युवा लेखकों में हमारे यहां की तरह अराजकता नहीं है; आक्रोश है, लेकिन वह संयत है और लेखकीय स्थिति नारों से नहीं लेखन से बनती है। एग्न्यूस ने बताया कि अंगरेजी में अनेक युवा लेखक नये मूल्यों को लेकर आ रहे हैं और वे समूचे एशिया की शोषित जनता के प्रति तीव्रता से आकर्षित हो रहे हैं।

काफी रात विनाची में हम बैठे रहे, वहीं से सीधे बी. बी. सी. पहुंचे, जहां उसी रात एक इंटरव्यू रिकार्ड कराना था। बी. बी. सी., यानी ब्रिटिश ब्राडकास्टिंग कारपोरेशन संभवतः दुनिया की सबसे बड़ी स्वायत्त प्रसारण-संस्था है।

सेक्स की दूकानें

लंदन दुनिया के बहुत बड़े शहरों में से है और जिस तरह दिल्ली को कनॉट प्लेस से जाना जाता है, लंदन की पहचान पिकाडली सरकस है। लंदन के पश्चिमी किनारे पर स्थित पिकाडली मनोरंजन का सबसे बड़ा केंद्र है। बड़ी-बड़ी दूकानें और शानदार थियेटर। एक पूरी सड़क है 'सेक्स' के लिए। बहुत बड़ी सेक्स की दूकानें हैं और 'पॉरनो' फिल्मों का एक खासा बड़ा अड्डा है। 'सेक्स शॉप' यूरोप

लंदन में घूमता हुआ टावर : इसके रेस्तरां में बैठकर सारे शहर को देखि
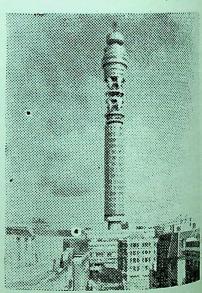
लंदन में महारानी का आधिकारिक आवास––बकिंघम पैलेस। महारानी विक्टोरिया से लेकर रानी एलिजाबेथ तक सारे सम्राट और सम्राज्ञी इसी महल में रहते रहे हैं

के अन्य देशों की तरह हैं और यहां सभी तरह की छपी सामग्री से लेकर इठलाती और लचीली लड़कियां भी खरीदी जा सकती हैं। पब भी हैं और कैबरे थियेटर भी। बड़े होटल हैं तो भारतीयों द्वारा चलाये जानेवाले मामूली रेस्तरां भी। शाम उतरते पिकाडली में पहुंच जाइए, पूरी रात अपने-आप आसानी से कट जाएगी। इसी के थोड़ा आगे हाइड पार्क है, जो कई मीलों के घेरे में बसा है। उसी से लगा दूसरा बाग है, जहां की झील में नौका-विहार की सुविधा है। पिकाडली में कबूतरों का झुंड और पानी के फव्वारे आते-जाते हर आदमी को आकर्षित करते हैं।

लंदन बहुत पुराना शहर है और घना बसा है। बंबई की तरह लाल रंग की बसें देखकर कभी-कभी लगता ही नहीं कि हम भारत में नहीं हैं। यहां के अनेक दर्शनीय स्थलों में पोस्ट-आफिस का वह ६२० फुट ऊंचा टावर भी है, जहां एक घूमता हुआ रेस्तरां है और माइक्रो-वेव रेडियो का केंद्र है। घूमते हुए रेस्तरां से जगमगाता हुआ सारा लंदन देखा जा सकता है।

बकिंघम पैलेस : इतिहास

लंदन की महारानी का अधिकारीय आवास–बकिंघम पैलेस––बहुत बड़ा आकर्षण है। इस शानदार राजमहल को सन १७०३ में जॉन शेफील्ड ड्यूक ऑव बकिंघम ने बनवाया था। साठ वर्ष बाद जार्ज तृतीय ने इसे खरीद लिया और सन १८३७ में महारानी विक्टोरिया ने इसे राजमहल घोषित कर समूची ब्रितानिया सत्ता का

शाही-केंद्र घोषित कर दिया। पत्थरों से बना यह राजमहल आज भी महारानी का निवास-स्थान है।

पंद्रह दिन हमने लंदन में गुजार दिये थे और इतने दिनों में ही यह शहर लगभग अपना-सा लगने लगा था। यूरोप के अन्य हिस्सों की तरह न तो यह अपरिचित लगा, न भाषा की कठिनाई हुई और न ही यह उतना मंहगा है। एक बात जरूर है—आर्थिक विपन्नता का दौर लंदन में तभी शुरू हो गया था और पौंड की अंतर्राष्ट्रीय स्थिति डालर की तुलना में तेजी से नीचे आ रही थी।

५ बजे शाम रेल से हम शेफील्ड के लिए रवाना हुए। ढाई घंटे की यात्रा निहायत आरामदेह थी—पूरी रेल में मुश्किल से २५ सवारियां थीं। मेरा पूरा डब्बा केवल मेरे लिए था। बचपन में हमने पढ़ा था, शेफील्ड की कैंचियां सबसे अच्छी होती हैं और यह भी पढ़ा था कि पूरे शहर में दिन-रात धुआं चक्कर काटता रहता है। वह रात तो हमने हेलम टावर होटल पर गुजार दी, लेकिन दूसरी सुबह, जो रात की वर्षा के बाद धुलकर साफ हो गयी थी और चमकने लगी थी, जब हमने शेफील्ड देखा तब कहीं धुआं नहीं था। चारों ओर फूलों से सजे सुंदर बाग हैं और पहाड़ीनुमा घेरे में समूचा शहर बसा है। यह दुनिया का सबसे पहला शहर है, जहां पहला फौलाद का कारखाना बना था। आज भी दुनिया का सबसे बड़ा फौलाद का कारखाना शेफील्ड में ही है। यहां १,६०० फैक्टरियां हैं और १,७०० रजिस्टर्ड कंपनियां। एक जमाना था, पूरा शहर जहरीले धुएं से ढका होता था। लोगों का रहना मुश्किल था, लेकिन बीस

प्रधान-मंत्री का निवास-स्थान
टेन डाउनिंग स्ट्रीट
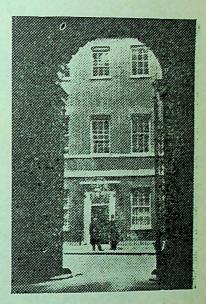
वर्षों के अथक परिश्रम के बाद वहां के नगर-प्रशासन ने शेफील्ड को एक स्वच्छ शहर बना दिया है। कारखानों पर प्रतिबंध लगाये गये और लोगों को कोयला जलाने से रोका गया।

प्रदूषण की रोकथाम

यहां के नगर-प्रशासन ने एक रंगीन फिल्म हमें दिखायी, जिसे देखकर एक समूचा नक्शा सामने आ गया—किस तरह नियमों,

रंगरूप जिससे बचपन झांके

अपनी त्वचा को पियर्स की कोमल देखभाल में रखिए. हर पारदर्शक टिकिया—साबुन बनाने में सौ बरसों के अनुभव का सबूत. पियर्स कोमल है—और कितना शुद्ध; आप वास्तव में इसके आरपार देख सकते हैं.

पियर्स से आप की त्वचा में भोला लड़कपन झलकता है

हिन्दुस्तान लीवर का उत्कृष्ट उत्पादन

लिंटास-PS.56.J7
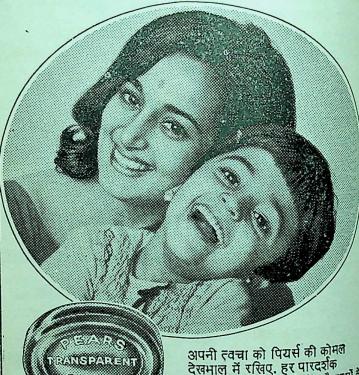
क़ानूनों और सख्त प्रयत्नों से प्रशासन ने इस शहर को अब इतना स्वच्छ बना दिया है कि प्रदूषण की समस्या को मिटाने के लिए जो कुछ किया जा सकता है, यह शहर उसका आदर्श बन गया है। अब चिमनियों से स्वच्छ धुआं निकलता है और सारा शहर ताजा हवा में तैरता रहता है। हमने विश्व का सबसे बड़ा फौलाद का कारखाना भी देखा और पूरा कारखाना घूमते हुए कहीं घुटन महसूस नहीं हुई। यहां के युवा इंजीनियर ने बताया कि कुछ समय पहले वे कुतुब-मीनार के पास बने लौह-स्तंभ का एक छोटा-सा टुकड़ा परीक्षण के लिए ले गये थे। उन्हें आश्चर्य था, वर्षों बाद भी स्तंभ लोहे के जंग से कैसे बचा है! उन्होंने बताया कि परीक्षण के बाद वे इस नतीजे पर पहुंचे हैं कि उस लौह-स्तंभ के चारों ओर एक हलकी-सी जिंक कोटिंग है और उन दिनों यह विधि दुनिया में किसी को पता नहीं थी। उनका कहना था कि इससे सिद्ध होता है, भारत का अतीत समृद्ध रहा है और उन दिनों उसके पास वह जानकारी थी, जो शायद आज तक दुनिया को पूरी तरह उपलब्ध नहीं हो पायी।

उसी शाम हम बर्मिंघम के लिए चल पड़े और शेक्सपियर के जन्मस्थान के पास ही चर्चिल के जन्म-स्थान को देखते हुए फिर एक पूरा दिन आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में व्यतीत कर हमें जो सुख और शांति मिली, अनुभव ही की जा सकती है। ●

बुद्धि-विलास के उत्तर

१. ७० रु., २. नीचे चित्र देखें—

३. क. आदि, स्वर्गारोहण, ख. भीष्मपर्व, ४. क. चैलेंजर डीप—१०,९९३ मीटर, ख. प्योर्टोरिको डीप—९,२१७ मीटर, ग. व्हार्टन डीप—६,६६० मी. ५. क. १८, ख. ११४, ग. ५, ६. कैबिनेट-मंत्री—१६, राज्य-मंत्री—२४, उप-मंत्री—२२, ७. श्रीमती इसाबेल पेरोन—अर्जेंटीना (अब पदच्युत), ८. वेलेरी आंद्रे, ९. क. भास, ख. भारवि, ग. कालिदास, घ. भवभूति, १०. क. राउ प्रेबिश, ख. डॉ. सलीम अली, ग. डॉ. गोविंदबिहारी लाल, ११. क. जयलक्ष्मी कप, ख. डॉन ब्रैडमैन (आस्ट्रेलिया)—२९ शतक, १२. गुरु गोविंदसिंह द्वारा 'खालसा' की स्थापना (१६९९), अमृतसर में जलियांवाला गोली-कांड (१९१९), १३. असीरिया, १४. नागरी-प्रचारिणी-सभा (काशी) की स्थापना, १५. दुम की नोक में, १६. केश

हमारे बागों के प्रमुख ग्रीष्मकालीन पक्षी

• यू. सी. चोपड़

हुदहुद हमारे बाग-बगीचों का एक प्रमुख पक्षी है। उस की चोंच पतली और मुड़ी हुई होती है जिससे वह पत्तियों में अथवा पृथ्वी में कीड़े-मकोड़ों की तलाश करता है और 'चक-चक' शब्द करता रहता है। गीत गाते समय उसकी नोकदार शिखा फैल जाती है।

हुदहुद

बुलबुल

संगीत एवं प्रेम का पक्षी बुलबुल

सुंदर, छोटी बुलबुल शुद्ध एवं मधुर स्वर के लिए सर्वश्रेष्ठ है। यह गौरैया से बड़ी होती है। सिर में चोटी तथा दुम के नीचे लाल, पीले निशान होते हैं। नर ही गाता है। मुख्य भोजन फल है।

दरजी पक्षी

दरजी पक्षी की सारी प्रसिद्धि उसके घोंसले पर आश्रित है। उसका घों[सला] गहरा होता है। उसमें वह रुई, ऊन, घो[ड़े] के बाल आदि रखकर उसे अत्यंत को[मल] बनाता है। बहुधा वह उसमें को[मल] घास भी बिछाता है। वह दो या अ[धिक] लटकती हुई पत्तियों को सीकर एक झू[लता] हुआ सुंदर घोंसला बनाता है। वह [घोंसले की] सिलाई रेशम, सूत, ऊन आदि के डोरों [से] करता है। वह पत्तियों को अपनी चों[च] से छेदकर, उसमें डोरे को डालकर घों[सला] सीता है। सिलाई के आरंभ में वह ड[ोरे] में गांठ भी बांध देता है जिससे ड[ोरा] निकल न जाए। हरा जिस्म, भूरी चों[च]

दरजी पक्षी

और दुम नोकीली होती है।

कोयल

कुछ पक्षी ऐसे भी हैं जो अपने घोंसले नहीं बनाते। वे धोखा देकर दूसरे पक्षियों के घोंसलों में अपने अंडे रख देते हैं। ऐसे पक्षियों में कोयल भी एक है। वह देखने में सुंदर होती है। उसकी चोटी काली तथा दुम काली और सफेद तथा लंबी होती है।

कौआ कोयल का शत्रु है, लेकिन कोयल येन केन प्रकारेण कौए के घोंसले में ही अपने नीले रंग के अंडे रख देती है।

कीड़े-मकोड़े ही कोयल का मुख्य भोजन हैं।

कोयल

मैना

मानव-भाषा की नकल में प्रवीण। रंग श्यामलता-मिश्रित भूरा। चोंच, पैर, कान तथा आंख के पास चमड़ी चमकदार पीली या नारंगी। मादा की उपस्थिति में नर का स्वर विशेष मीठा हो जाता है।

मैना

बया

बुनकर पक्षी या बया का रंग पीला होता है। भोजन बीजों का होता है। गुंबद के आकार का घोंसला बनाता है जिसकी चोटी किसी पेड़ की शाखा से, जलधारा पर बंधी रहती है। ताड़ की पत्तियों, घास, नारियल की जटा आदि से घोंसला बनाता है।

बया

शराब नशा नहीं है!

● आर्थर हिल

'शराब नशा नहीं है?' अकसर यह बात शराब पीनेवालों के मुंह से सुनी जाती है। उनमें से अनेक कहते हैं कि वह एक आवश्यकता है और आज की आधुनिक दुनिया में तो उसे 'प्रेस्टिज सिंबल' (प्रतिष्ठा-प्रतीक) माना जाता है। शाम को किसी के यहां जाइए और वह शराब न पिलाये तो शायद आप कहेंगे कि जाना बेकार हुआ! शराब के बिना पार्टियां अधूरी हैं, शराब के बिना दोस्ती निरर्थक है! इसलिए बड़े शहरों में आम तौर से कहा जाता है—'मजे में शाम गुजारनी है तो शराब पीजिए।'

चिंता, तनाव और 'फ्रस्ट्रेशन' से मुक्ति

का रास्ता शराब है' यह विश्वास हजारों वर्षों से प्रचलित है। भारत-जैसे देश में भी सोमरस का प्रयोग होता था। इसके बावजूद आधुनिक विज्ञान और चिकित्सा ने यह सिद्ध करने की कोशिश की है कि शराब मानसिक और शारीरिक, दोनों तरह से हानिप्रद है। डॉक्टरों का विश्वास है कि शराब पीने से शरीर के भीतर पौष्टिक तत्त्व समाप्त होते हैं और मनुष्य की शक्ति क्षीण होती है। जो लोग नियमपूर्वक रोज शराब पीते हैं, वे हर दिन मौत का खतरा मोल लेते हैं। शराब की आदत बुरी होती है। एक बार यदि वह पड़ गयी तो छूटती नहीं। शराबी उसे कहते हैं जो रोज पीता है, अकेले पीता है और अपने पीने के समय को इतना महत्त्वपूर्ण मानता है कि उसे दूसरे बड़े-से-बड़े कामों और सामाजिक संबंधों की भी चिंता नहीं होती।

कितनी शराब हानिप्रद ?

कितनी शराब पीना हानिकारक है ? आधुनिक चिकित्सा-विज्ञान ने यह सिद्ध कर दिया है कि यदि लगातार रोज चार पेग लिये जाएं तो उससे शरीर पर ऐसे खतरनाक प्रभाव पड़ेंगे, जिनका ठीक होना संभव नहीं है। अमरीका की 'नेशनल इंस्टीट्यूट ऑव अलकोहल एब्यूज ऐंड अलकोहलिज्म' के डाइरेक्टर डॉ. मारिस ने सलाह दी है कि जो शराब पीते हैं और अपने स्वास्थ्य की रक्षा भी करना चाहते हैं उन्हें ब्रिटिश चिकित्सक डॉ. फ्रैंसिस एंस्टी द्वारा १९६२ में दी गयी सलाह को पूरी तरह मानना चाहिए—एक दिन में डेढ़ औंस से अधिक शराब कभी मत पीजिए, खाली पेट शराब पीना खतरनाक है, जितनी भी शराब पियें, भोजन के साथ लें। शराब कभी 'नीट' न पी जाए, उसमें पानी या सोडा जरूर मिलाइए। शराब पीनेवालों को आत्म-नियंत्रण रखना चाहिए और यदि पीना उनकी मजबूरी ही है तो दिन में डेढ़ बोतल से अधिक बीयर न पियें और दो पेग

गर्भपात की अनुमति है

क्या आप जानते हैं? कब!
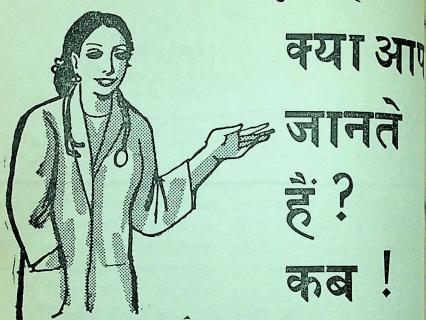
कभी-कभी गर्भपात बहुत जरूरी हो जाता है। जब गर्भधारण से मां के जीवन को खतरा पैदा हो जाए या उसके शारीरिक अथवा मानसिक स्वास्थ्य को गम्भीर खतरा पैदा होने की सम्भावना हो।

जब बच्चे के शारीरिक अथवा मानसिक विकृति के साथ पैदा होने का खतरा हो।

जब गर्भधारण बलात्कार के कारण हो।

जब वास्तविक अथवा संभावित सामाजिक या आर्थिक वातावरण से मां के स्वास्थ्य को हानि पहुंचने की संभावना हो।

जब गर्भधारण, गर्भ निरोध के किसीउपाय के विफल होने के कारण हो।

गर्भपात पहले तीन महीनों में आसानऔर सुगम होता है।

निःशुल्क सेवा के लिए : समीप के किसी भी सरकारी अस्पताल से सम्पर्क कीजिए।

डीएवीपी-७६/४९

से अधिक व्हिस्की न लें।

अमरीका के अनेक चिकित्सकों ने ये निष्कर्ष निकाले हैं कि शराब किसी भी रूप में पीना नुकसानदेह है। अपने शोध से वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि शराब का सीधा प्रभाव (१) जिगर (२) हृदय (३) मस्तिष्क पर पड़ता है।

शराब के प्रभाव से जिगर की सबसे बड़ी बीमारी है—'सिरोसिस' यानी यकृत से होनेवाला पीलिया। कहा जाता है कि पचीस और पैंतालीस वर्ष की आयु के बीच जितने व्यक्ति मरते हैं, उनमें एक-चौथाई व्यक्तियों की मृत्यु का कारण शराब से होनेवाली 'अलकोहोलिक सिरोसिस' है। न्यूयार्क शहर में तो हृदय और कैंसर रोगों के बाद सबसे अधिक लोग 'सिरोसिस' से ही मरते हैं। जिगर के मोटे हो जाने से पाचन पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है।

लेकिन सन १९४९ में डॉ. सी. एच. बेस्ट ने चूहों पर प्रयोग के बाद यह घोषित किया कि जिगर के मोटे हो जाने से शकर की कमी हो जाती है और जो थोड़ी शकर शरीर में बचती है, वह शराब को पचाने में ही खर्च हो जाती है। डॉ. बेस्ट वही हैं जिन्होंने 'इंसुलिन' का आविष्कार किया था।

डॉ. लाइबर ने यह पता लगाया कि अच्छे-से-अच्छे भोजन के बावजूद नियमित शराब पीनेवाले व्यक्ति का जिगर खराब हो जाता है, क्योंकि जिगर की सारी क्रियाशीलता शराब से उत्पन्न स्थिति का सामना करते रहने में खर्च होती रहती है। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह होता है कि सारा 'फैट' जिगर में जमा होता जाता है। इतना ही नहीं, अच्छे भोजन के बावजूद शरीर में 'कोलेस्टेरॉल' की मात्रा बढ़ जाती है और ऐसी 'एसिडिटी' (अम्लता) पैदा होती है जो समस्त पाचन-शक्ति को नष्ट कर देती है। आश्चर्य की बात यह है कि आदमी जिगर में फैट होने से नहीं मरते, बल्कि उनकी मृत्यु 'सिरोसिस' से होती है। ये निष्कर्ष पंद्रह बंदरों पर प्रयोग करने के बाद निकाले गये हैं। उन्हें रोज खूब शराब पिलायी गयी। उसके बाद पता लगा कि उन सबके जिगर मोटे हो गये हैं। उनमें से पांच बंदरों के जिगर में सूजन थी, दूसरे
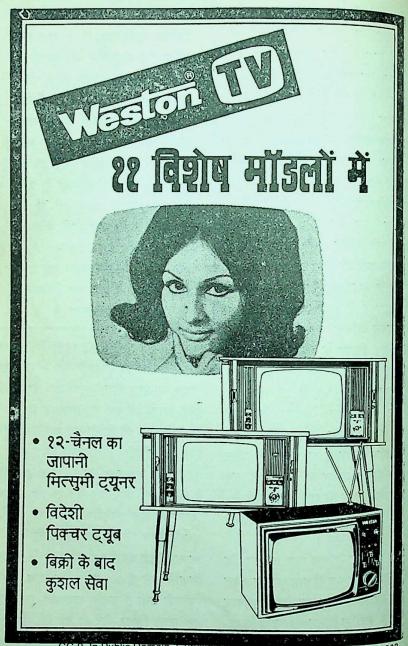
चेस्टरसन और बेल्लाट नामक दो ब्रिटिश साहित्यकारों ने एक बार सोचा कि मद्यपान की बुराई की जांच की जाए। लिहाजा दोनों ने पहले दिन व्हिस्की में पानी मिलाकर पिया और नशे में चूर हो गये। दूसरे दिन उन्होंने वाइन में पानी मिलाकर पिया और नशे में चूर हो गये। तीसरे दिन ब्रांडी में पानी मिलाकर पिया और नशे में चूर हो गये। चौथे दिन दोनों ने अपनी जांच-रिपोर्ट इस प्रकार तैयार की—'जैसे भी पियें, नशा चढ़ जाता है। इसलिए हमारा यह निष्कर्ष है कि पानी हानिहारक है।'

पांच पीलिया के शिकार हो गये और पांच इन दोनों रोगों के शिकार एकसाथ हो रहे।

बंदरों में पैदा जिगर की सारी स्थितियां आदमी के जिगर से इतनी अधिक सामान्य थीं कि दोनों में अंतर करना कठिन था।

यूरोप में बताया गया कि यदि एक दिन चार पैग ह्विस्की पी जाए तो उसका कोई असर नहीं होता, लेकिन यदि इतनी ही मात्रा लगातार बीस वर्षों तक पी जाए तो सिरोसिस होने की पूरी आशंका है।

ऐसी पत्नी से सावधान!

मान लीजिए एक अधिकारी दिनभर काम करने के बाद घर लौटा है। घर आते ही उसकी पत्नी उसकी थकान उतारने के लिए प्रेम से एक पेग मार्टिनी देती है। उसके बाद खाना खाते समय वही आदमी बहुत बढ़िया किस्म की आधी बोतल शराब पीता है और फिर नींद लाने के लिए सोने के पहले दो पेग ब्रांडी पीता है। निश्चित रूप से वह शराबी नहीं है, क्योंकि उससे उसे कभी गहरा नशा नहीं आयेगा। लेकिन कुछ ही दिनों बाद पता लगेगा कि उसकी 'सिरोसिस' से मृत्यु हो गयी है। अमरीका और यूरोप में ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं।

शराब से हृदय-रोग

डॉ. जैक मेंडलसन अमरीका के मानसिक रोगों के बहुत बड़े चिकित्सक हैं। अनेक प्रयोगों के बाद उन्होंने यह पता लगाया है कि शराब पीने से हृदय-रोग होने की पूरी आशंका है। बताया गया है कि शराब चाहे थोड़ी ही क्यों न पी जाए,

शराब का शिष्टाचार

इंगलैंड—चीयर्स
अमरीका—हीयर्स टु यू
फ्रांस—अवोद्रे सौते
जरमन—प्रौस्ति
न्यूजीलैंड—कियोरा
स्वीडन, डेनमार्क, नार्वे—स्कॉल्
मोरक्को—साहावल्लाह
ग्रीनलैंड—कसौंगता
इटली—सेल्यूट
स्पेन—सलूद
हॉलैंड—प्रोस्त
चीन—कानबेई
भारत—बमभोले, चियर्स भी

लेकिन उससे हृदय को रक्त-प्रवाह की प्रक्रिया संभालने में इतना अधिक श्रम करना पड़ता है कि किसी भी समय उसके कमजोर होने का भय बना रहता है। हृदय पर शराब से उत्पन्न नशे का प्रभाव तुरंत पड़ता है और उससे हृदय की क्रियाशीलता कमजोर होती जाती है। हृदय की मांसपेशियों में तनाव आ जाता है और कैलशियम को ग्रहण करने और छोड़ने की प्रक्रिया में अंतर पड़ता है।

आप पागल भी तो हो सकते हैं!

जहां जिगर और हृदय पर पड़नेवाले शराब के प्रभावों को प्रयोगों द्वारा आसानी से जान लिया गया है, वहां अभी तक निश्चित रूप से यह जानकारी नहीं मिल पायी है कि शराब का प्रभाव मस्तिष्क पर किस तरह
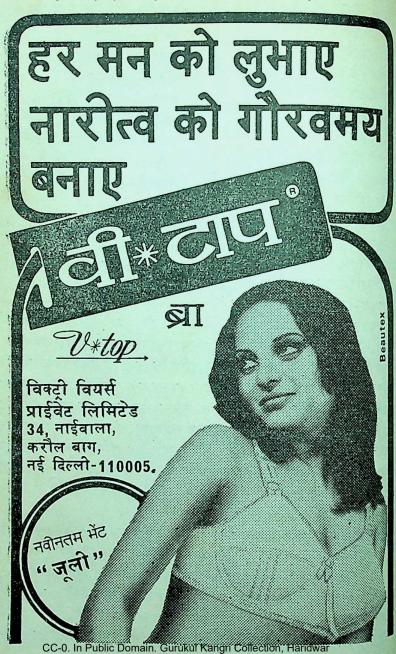
हर मन को लुभाए
नारीत्व को गौरवमय
बनाए
वी*टाप®
ब्रा
V*top
विक्ट्री वियर्स
प्राईवेट लिमिटेड
34, नाईवाला,
करौल बाग,
नई दिल्ली-110005.
नवीनतम भेंट
"जूली"
Beautex

से पड़ता है। फिर भी १९... में ... पता लगा कि बहुत अधिक पीने से मस्तिष्क में विकार किस प्रकार उत्पन्न हो जाता है। स्नायु-तंतुओं पर उसका असर पड़ता है, फलस्वरूप पूरे शरीर की स्नायविक क्रिया कमजोर पड़ जाती है। उनकी स्मरण-शक्ति कमजोर होने लगती है और पढ़ने की ताकत भी कम हो जाती है, लेकिन यह बात विवादग्रस्त है।

अमरीका के डॉ. नोबल ने बताया है कि मस्तिष्क में अपार क्षमता है। वह जीवन-शक्ति और प्रोटीन बनाने का काम करता है। छोटे अणुओं को प्रभावशाली बनाकर वह नये 'ब्रेन-सेल्स' (मस्तिष्क-कोषिकाएं) बनाता चलता है। वह एक प्रकार का रस भी तैयार करता है, जो समूचे शरीर की क्रियाशीलता को प्रभावित करता है। शराब मस्तिष्क की इसी अपार क्षमतावाली शक्ति को क्रमशः छीन लेती है और मस्तिष्क की प्रत्येक क्रिया को नुकसान पहुंचाती रहती है। खाली पेट शराब पीने से याददाश्त कमजोर हो जाती है। वे अपने को एकाग्र-चित्त नहीं कर सकते और गंभीर विषयों को समझने में उन्हें देर लगती है। खाली पेट शराब पीने से वह रक्त में घुलकर मस्तिष्क को निष्क्रिय बना देती है। यह कहा जा सकता है कि जो व्यक्ति खाली पेट शराब या ह्विस्की रोज पिये, वह बीस-तीस वर्षों में अपनी याददाश्त पूरी तरह खो सकता है।

शराब पीना मजबूरी है तो ध्यान दीजिए

इतना सब जानने के बावजूद यदि शराब पीना आपकी विवशता ही है तो कम-से-कम इन बातों पर ध्यान रख सकते हैं:

- किसी भी स्थिति में चार पेग से ज्यादा व्हिस्की मत पीजिए।
- शराब का शरीर के वजन के साथ गहरा संबंध है। यदि आपका वजन कम है तो आपको उसी के अनुसार कम शराब पीनी चाहिए।
- यदि आपको अलसर है अथवा आप 'एसिडिटी' से ग्रस्त हैं तो आपको बिलकुल शराब नहीं पीनी चाहिए।
- यदि आपको रोज शराब पीने की आदत है तो सप्ताह में एक या दो दिन 'ड्राई डे' मानकर चलिए ताकि आपके जिगर को थोड़े से आराम का मौका मिल जाए।
- कभी 'नीट' शराब मत पीजिए और जितनी भी पीजिए, बहुत धीरे-धीरे।
- रूसी व्यक्तियों की तरह एक ही घूंट में पिया जानेवाला वोदका जितना कम कर सकें, अच्छा है।
- भूलकर भी खाली पेट शराब न पियें। उसे भोजन के साथ लें।

तो लीजिए, चीयर्स! यह चीयर्स खाली पानी का भी तो हो सकता है। शराब नशा नहीं है, यह संभव हो सकता है, क्योंकि आपको बेहद शराब पीने की आदत पड़ चुकी है, लेकिन शराब का हर घूंट आपकी जान का दुश्मन तो है ही। ●

क्षणिकाएं

गरमी

पत्नी बोली
आज है अत्यधिक गरमी
पति झुंझलाया
सारी रात तुम
गुस्से में
जलती जो रहीं

—राजेन्द्र चंचल

भोर

मुर्गे ने बांग दी
नटखटी सवेरे ने
क्षितिज की कन्नियों पर
एक पतंग टांग दी

दूज की रात

रात की घसेरिन
के अंगना
तारों ने खूब
कूद-फांद की
अपने ही साथ
उठा ले गये
बेहतरीन हंसिया
वह चांद की

—मोजेस माइकेल

आम

आम तुम फूलते ही
बौरा जाते हो
इसलिए फलने पर
पत्थर खाते हो

—हरिकृष्ण तैलंग

मैं, हवा और सूरज

मैं
हवा और सूरज
पक्के हिसाबी और समझदार
के बाद
नहीं समझ पाये ये खेल
इंजन भागता है आगे को
पीछे को उगलती है धुआं रेल

—सुखवीर वि[illegible]

अमराई पर

फल की अमराई पर
चहकती पहरेदारी
कोई टूंग गया धीरे से
दरख्त के होंठ
बिल्ली के हाथों दही की रखवा[illegible]

जिद्दी हवा

कोई नन्हा-सा छौना
ठुनकता है मां से
मां छुड़ाती है साड़ी
—जिद्दी हवा
पत्ते बार-बार संभलते हैं

—अ[illegible]

तुम आया
तुम आयीं
कोहरे की मचान-सी
बर्फ की चट्टान पर
तुम आयीं
लगा
धुंध में लिपटी हुई
अठखेलियां करती हुई
धूप
इठलाई हो !
—मनोज भटनागर

छाया : महेन्द्र राजा जैन
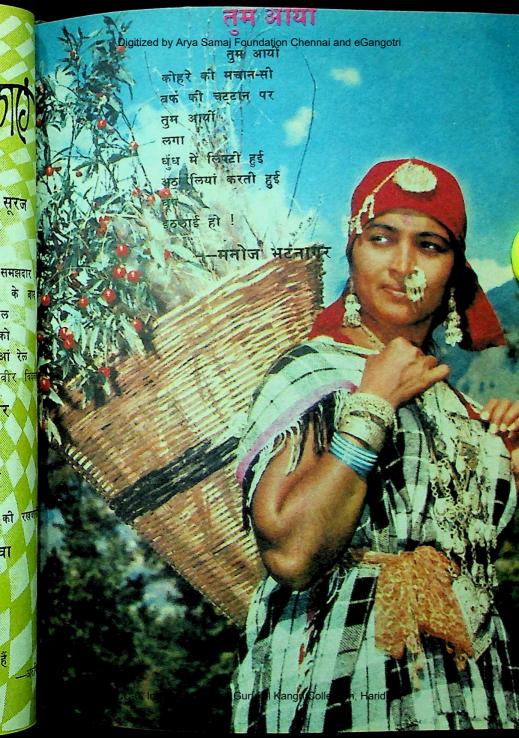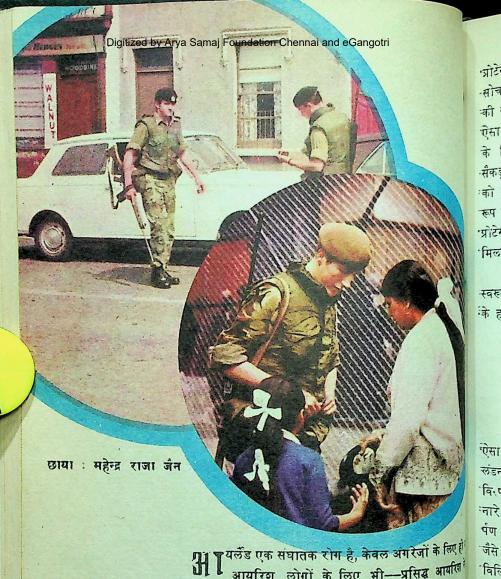
आयर्लैंड एक संघातक रोग है, केवल अंगरेजों के लिए ही आयरिश लोगों के लिए भी—प्रसिद्ध आयरिश जार्ज मूर ने करीब ९० वर्ष पहले कहा था। पर आज अ (उत्तरी आयर्लैंड) में हिंसा और आतंक का जो साम्राज्य हुआ है, उससे पता चलता है कि इस संघातक रोग की जड़ें भी गहरी जम चुकी हैं।

मार्च, १९७२ में जब ब्रिटिश सरकार ने अल्सटर की भंग कर वहां का शासन अपने हाथ में ले लिया तब लोगों का था कि शायद अब वहां स्थिति सुधरे।

प्रोटेस्टेंट और कैथोलिक ——दोनों को ही सोचने का कुछ समय मिलेगा और गृहयुद्ध की सुलगती आग बुझ जाएगी। लेकिन ऐसा जान पड़ता है कि इस देश में शांति के लिए उपयुक्त अवसर नहीं आया। सैकड़ों वर्ष पहले की इतिहास की घटनाओं को यहां के लोग आज की घटनाओं के रूप में देखते हैं और यही वह कारण है जो प्रोटेस्टेंट और कैथोलिकों को एकसाथ मिलकर बैठने से रोकता है।

बोयान का युद्ध, जिसके परिणाम-स्वरूप १६९० में अल्सटर में प्रोटेस्टेंटों के हाथ में शासन आया, आज भी उन्हें

वे भी अपने को अंगरेज कहने को तैयार नहीं

● महेन्द्रराजा जैन

ऐसा जान पड़ता है जैसा बेलफास्ट या लंडनडेरी में अभी कुछ ही घंटे पहले बम-विस्फोट हुआ। प्रोटेस्टेंट क्षेत्रों में लिखे हुए नारे '१६९० को मत भूलो' और 'हम समर्पण नहीं करेंगे' आज ऐसे जान पड़ते हैं जैसे बोयान का विजेता ऑरेंज का प्रिंस विलियम अभी जीवित हो और स्टारमांट महल (अल्सटर का संसद-भवन) से अल्सटर का शासन-संचालन कर रहा हो।

इसके विपरीत कैथोलिकों को १९१६ की घटनाएं, जिनके परिणामस्वरूप अंततः आयलैंड का एक बड़ा भाग—दक्षिण-आयलैंड—स्वतंत्र देश बन गया, वाग-साइड और क्रेगान के समान हाल की ही घटना जान पड़ता है। पर अंगरेज लोग हैं कि इन घटनाओं को एक साधारण-सा

सामने के पृष्ठ पर ऊपर: गश्त लगाते जवान किसी की भी गाड़ी रोककर तलाशी ले सकते हैं। नीचे: हैंडबैग, पर्स, जेब और झोले की तलाशी—क्या पता कहीं बम ही न रखा हो। ऊपर: प्रत्येक वर्ष १२ जुलाई को सभी शहरों और गांवों में निकलनेवाले विशाल (प्रोटेस्टेंट) जुलूस का एक दृश्य।

विद्रोह कहकर आंख मूंद लेते है।

आज के आयर्लैंड, विशेषकर उत्तर-आयर्लैंड को समझने के लिए आयर्लैंड के इतिहास की कुछ महत्त्वपूर्ण घटनाओं पर गौर करना जरूरी है।

आयर्लैंड की समस्या की शुरूआत ११५५ से हुई जब पोप एड्रिआन चतुर्थ ने इंगलैंड के तत्कालीन शासक हेनरी द्वितीय को आयर्लैंड की जमींदारी देकर आशा की थी कि वह आयर्लैंड पर आक्रमण कर वहां के लोगों की धर्म के प्रति गिरती हुई आस्था बनाये रखेगा। कैथोलिक धर्म के इतिहास में एड्रिआन एकमात्र अंगरेज पोप था। आयर्लैंड में उस समय ईसाई धर्म था, पर कुछ लोग रोम के पोप और कैथोलिक मत की आज्ञाओं के विपरीत कार्य करने लगे, जिससे कैथोलिक मत के भविष्य के लिए खतरा हो गया था।

११७१ में हेनरी ने आयर्लैंड पर आक्रमण कर वहां पड़ोसी नार्मन शासकों के संभावित आक्रमण को रोक दिया। आयरिश लोगों ने भी हेनरी को आयर्लैंड का शासक मान लिया और इस प्रकार ८०० वर्ष पुरानी उस परंपरा का आरंभ हुआ जिससे आज भी इंगलैंड वहां अपना प्रभुत्व बनाये रखना चाहता है। यद्यपि आयरिश लोगों ने उन्हें अपना शासक मानकर इगलैंड के अधीन रहना स्वीकार कर लिया था, इंगलैंड के शासक कभी भी पूरे आयर्लैंड को अपने काबू में नहीं कर सके। परिणामस्वरूप उस समय से ... और हत्या की जो शुरूआत हुई, वह आ... तक चली आ रही है।

जब अंगरेज शासकों ने देखा कि आयर्लैंड को अपने काबू में नहीं कर ... रहे हैं तब उन्होंने आयर्लैंड को पूर्ण... तहस-नहस कर वहां के मूल निवासियों- विशेषकर उत्तर आयर्लैंड के लोगों ... खदेड़कर दक्षिण की ओर भगाने ... उनकी जगह स्कॉटलैंड और इंगलैंड ... कट्टर प्रोटेस्टेंटों को लाकर वहां ब... की योजना बनायी और इसकी शुरू... हुई एलिजाबेथ प्रथम के समय से। क... एक दशक तक आयर्लैंड के दो नेता ओनील और ओडेनिल ने डटकर अंगरे... का मुकाबला किया, पर १६०३ में कि... की लड़ाई में पराजित होकर वे फ्रांस ... गये।

एलिजाबेथ के उत्तराधिकारी जे... प्रथम ने १६०८ में उत्तर आयर्लैंड ... आयरिश जमींदारों से भूमि छीन... वह भूमि इंगलैंड और स्कॉटलैंड से आ... बसे हुए लोगों को इस शर्त पर प... दे दी कि वे वह जमीन किसी भी आय... या कैथोलिक को किराये पर नहीं ... इसके लिए इंगलैंड और स्कॉटलैंड ... अखबारों में किरायेदारों के लिए वि... पन दिये गये और बाद के ३० वर्षों ... करीब २० हजार अंगरेज और एक ... स्कॉट आल्सटर में आकर बसे।

पर आयर्लैंड के कैथोलिक शांत ...

कैथोलिक क्षेत्र में आई. आर. ए. समर्थक नारा

वाले नहीं थे। उन्होंने जब अपनी भूमि अंगरेजों और स्कॉट लोगों के हाथ में जाती देखी तब विद्रोह कर दिया। परिणामस्वरूप बहुत खून-खराबा हुआ। अनुमान है कि उस समय करीब ४० हजार प्रोटेस्टेंटों की हत्या की गयी और करीब ७ हजार प्रोटेस्टेंट ठंड और भूख से मर गये।

इसका बदला लिया ऑलिवर क्रॉमवेल ने। इंगलैंड का शासक बनने के बाद उसने सबसे पहले आयर्लैंड की समस्या से निबटना चाहा। उसके शासन में कैथोलिकों का अंधाधुंध कत्ल किया गया। क्रॉमवेल के इस आतंक के बाद केवल मुट्ठी भर—करीब ५ लाख—आयरिश बच रहे थे।

क्रॉमवेल के बाद यद्यपि एक कैथोलिक (चार्ल्स द्वितीय) ब्रिटेन का शासक बना और उसका पुत्र जेम्स द्वितीय भी कैथोलिक था तथापि तथाकथित 'ग्लोरियस रिवोल्यूशन' (शानदार क्रांति) ने जेम्स को गद्दी से हटा दिया और प्रोटेस्टेंट ऑरेंज के प्रिंस विलियम के हाथ में सत्ता आयी।

आधुनिक आयर्लैंड का इतिहास वस्तुतः इसी समय से आरंभ होता है। अपना खोया राज्य वापस लेने के प्रयास में जेम्स द्वितीय ने आयर्लैंड में प्रिंस विलियम के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। अपने समर्थकों की सहायता से उसने करीब तीन हजार प्रोटेस्टेंटों को मौत की सजा दी, जिससे बचने के लिए वे लोग लंडनडेरी भाग गये, पर वहां भी जेम्स की

सेना ने उनका पीछा नहीं छोड़ा। बाद में जब प्रिंस विलियम की सेना सहायता के लिए वहां पहुंची तब कहीं प्रोटेस्टेंटों को मुक्ति मिली। १६९० में बोयान की लड़ाई में प्रोटेस्टेंटों की आयलैंड पर अंतिम विजय हुई और जेम्स द्वितीय हारकर फ्रांस भाग गया।

आयलैंड में प्रोटेस्टेंटों को कैथोलिकों के हाथ जो कष्ट सहने पड़े, उनके पूर्वजों की किस प्रकार हत्या की गयी और उन्हें किस प्रकार सताया गया, यह पीढ़ी-दर-पीढ़ी लोग अभी तक नहीं भूले हैं और उसी विजय की स्मृति में अल्सटर में प्रति वर्ष १२ जुलाई को गांव-गांव में एक विशाल परेड निकलती है, जिसे यहां के राष्ट्रीय त्योहार की संज्ञा दी गयी है।

आयलैंड की कैथोलिक और विशेष-कर अंगरेजों के प्रति विद्वेष रखनेवाली जनता पर राज्य कर पाना आसान नहीं था। ऐसी स्थिति में आयरिश पार्लिया-मेंट का नियंत्रण प्रोटेस्टेंटों को सौंप दिया गया। इस प्रोटेस्टेंट पार्लियामेंट ने आय-लैंड में प्रोटेस्टेंट अल्पमत की जड़ें गहरी जमाने और कैथोलिकों पर प्रोटेस्टेंटों का आधिपत्य बनाये रखने के लिए विशेष कानून बनाये। ये कानून कैथोलिकों की स्वतंत्रता को नियंत्रित करते थे। कैथो-लिक न तो जमीन खरीद सकते थे, न उसे पट्टे पर ले सकते थे। जो कैथोलिक जमींदार किसी प्रकार बच गये थे, वे अब अपनी संपत्ति किसी एक पुत्र को नहीं दे सकते थे। इसका एक परिणाम यह हुआ कि कैथोलिकों के हाथ में बड़ी-बड़ी जमींदारियां नहीं रहने पायीं।

१८ वीं सदी के प्रारंभ में जब विलियम पिट इंगलैंड का प्रधानमंत्री बना तो उसने अपने तरीके से 'आयरिश समस्या' से निबटना चाहा। उसका विश्वास था कि आयलैंड का इंगलैंड में विलय ही समस्या का एकमात्र समाधान है। इससे कैथोलिकों को भी पूरे-पूरे राजनीतिक अधिकार मिल जाते। अतः १ जनवरी १८०१ को ब्रिटिश पार्लियामेंट ने 'ऐक्ट ऑव यूनियन' पासकर आयलैंड को ब्रिटेन में मिला लिया।

दुर्भाग्यवश इसके तुरंत बाद ही आयलैंड में भयंकर अकाल पड़ा, जिसके कारण ब्रिटेन और आयलैंड के संबंध बहुत बिगड़ गये। उस अकाल के समय में अधिकांश खाद्यान्न आयलैंड से इंगलैंड भेजा गया जबकि आयलैंड में लोग भूखे मर रहे थे।

१८८६ में उदारवादी प्रधानमंत्री ग्लैडस्टन इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि आयरिश समस्या का समाधान आयलैंड को स्वराज्य (होमरूल) दे देने से ही होगा, पर लार्ड रैंडोल्फ चर्चिल ने विरोधी दल के नेता के रूप में इस बिल का विरोध किया और आयलैंड की समस्या ज्यों-की-त्यों रह गयी।

अंततः १९१६ के ईस्टर में आयलैंड में ब्रिटिश विरोधी आग भयंकर रूप में

भड़की, जब आयरिश लोगों के राष्ट्रीय दल 'सिन फीं' ने ब्रिटेन के प्रथम महायुद्ध में फंसे रहने का फायदा उठाकर आयलैंड में ब्रिटिश शासन के विरोध में विद्रोह कर दिया। यद्यपि ब्रिटिश सेना ने निर्दयता से इस विद्रोह को दबा दिया, तथापि इससे ब्रिटिश सरकार की कठिनाइयों का अंत नहीं हुआ। अभी वह कैथोलिकों से पूर्णतः निबट भी नहीं पायी थी कि इसी बीच अल्सटर के प्रोटेस्टेंटों ने अपनी अलग नागरिक सेना बनाकर उसे प्रशिक्षित करना आरंभ कर दिया। उद्देश्य आयलैंड में ब्रिटिश शासन बनाये रखना था।

१९२० में कैथोलिक शक्तियों यानी आई. आर. ए. (आयरिश रिपब्लिकन आर्मी) और ब्रिटिश सेना में फिर युद्ध छिड़ा तब वह दो वर्ष तक चलता रहा। जब ब्रिटेन ने देखा कि आई. आर. ए. के रूप में उठी हुई आयरिश राष्ट्रवाद की मांग को दबाया नहीं जा सकता तब समझौते के रूप में आयरिश फ्री स्टेट (वर्तमान स्वतंत्र आयलैंड) की स्थापना हुई, जो आयलैंड का बंटवारा कर दक्षिण के २६ प्रांतों को मिलाकर बनाया गया था। बाकी बचे हुए ६ प्रांत, जहां अधिकांश लोग प्रोटेस्टेंट थे, 'अल्सटर' के रूप में ब्रिटेन के संरक्षण में रहे।

१९४९ में आयलैंड के ब्रिटिश राष्ट्रमंडल से अलग होने के बाद वहां जितने भी नेता हुए, सभी आयलैंड के बटवारे को मानने से इनकार करते रहे। वहां के
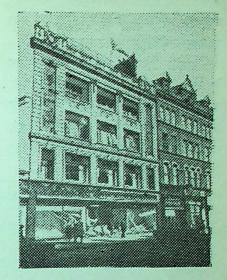
बम से क्षतिग्रस्त इमारत का दृश्य : नीचे से लेकर ऊपर तक मकानों की खिड़कियां तथा शो-केस टूटे हुए हैं।

संविधान में भी स्पष्ट रूप से कहा गया है, "देश की सीमा पूरे आयलैंड की सीमा है, जिसमें उसके सभी द्वीप तथा प्रादेशिक समुद्र भी हैं।"

दूसरी ओर अल्सटर की सरकार, जिसकी अपनी अलग संसद है, इस बात के लिए दृढ़ है कि वहां का शासन प्रोटेस्टेंटों के हाथ में रहे। १९२० में सम्राट जार्ज पंचम ने अल्सटर की पार्लियामेंट का उद्घाटन करते हुए सभी आयरिश लोगों से अपील की थी कि वे अब अतीत को भूलकर वर्तमान तथ्य स्वीकार करें और अधिक सहनशील बनें। पर इसके विपरीत अल्सटर के प्रथम प्रधानमंत्री ने

अल्सटर की सरकार को प्रोटेस्टेंट लोगों की प्रोटेस्टेंट सरकार कहा था। इससे वहां रहनेवाले कैथोलिकों को भय हुआ।

इसके बाद तो कैथोलिकों को एक के बाद एक नयी समस्या का सामना करना पड़ा। न तो उन्हें अपनी संख्या के अनुपात में संसद में प्रतिनिधित्व मिला, न सरकारी नौकरियों में समानता तथा
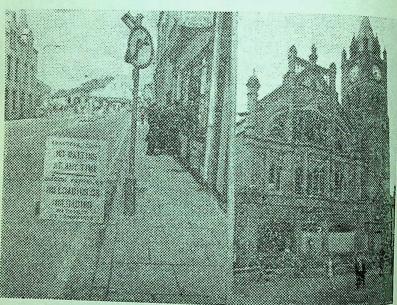
मुख्य सड़कों पर गाड़ी छोड़ना मना है, क्योंकि ऐसी ही गाड़ी से बमबाजी हुई है

लंदन का प्रसिद्ध गिल्डहाल (टाउनहाल) जिसे कैथोलिकों ने बम से क्षतिग्रस्त कर दिया

नये मकानों की सुविधाएं। परिणामस्वरूप उनकी अपनी गंदी बस्तियां बन गयीं और इस प्रकार अल्सटर की वर्तमान दुर्दशा के बीज बोये गये।

आखिर १९६८ में अल्सटर के 'सिविल राइट्स असोसिएशन' ने आंदोलन चलाया और समानता की मांग की। उनकी ... में प्रोटेस्टेंटों ने उपद्रव करना शुरू ... दिया, पर पुलिस चुप बैठी रही। ... १९६९ में उपद्रवों के फलस्वरूप लंदन... और बेलफास्ट में ८ व्यक्तियों की ... हुई और २०० घायल हुए। इस ... के कुछ ही घंटे बाद ब्रिटिश सेना का ... दस्ता अल्सटर में आया, जिसका ... दोनों वर्गों के लोगों को अलग-अलग ... कर शांति बनाये रखना था। एक ... अल्पसंख्यक कैथोलिकों ने ब्रिटिश ... का आगमन अपने लिए शुभ संकेत ... तो प्रोटेस्टेंटों ने उसे अपने लिए आक्र... कारी माना।

पर कैथोलिकों के लिए ब्रिटिश सेना का यह 'संरक्षक रूप' अधिक समय तक नहीं रह सका। बाद की घटनाओं से कैथोलिक लोग उसे अल्सटर सरकार का पिट्ठू समझने लगे। इसका एक कारण आई. आर. ए. का पुनर्जागरण भी कहा जा सकता है क्योंकि इसी समय से आई. आर. ए. ने अपनी गतिविधियों में तीव्रता शुरू कर दी। इसके बाद से अब तक की घटनाएं हत्या, लूट, डाकाजनी, बमबारी, कैथोलिकों के प्रति पक्षपात, प्रोटेस्टेंटों का आक्रोश आदि की घटनाएं हैं।

अल्सटर और आयरिश गणराज्य से करीब एक दर्जन दैनिक समाचारपत्र निकलते हैं। पिछले ५ वर्षों का इनका कोई भी अंक देखने पर प्रथम पृष्ठ पर ही प्रमुख समाचार के रूप में यह देखने को मिलेगा कि अल्सटर में पिछले २४ घंटों में कहां कितने बम फटे, कितने लोग मरे और घायल हुए, और कितनी इमारतों को क्षति पहुंची। पहले ये घटनाएं केवल प्रोटेस्टेंट क्षेत्रों में ही होती थीं, पर जब से (मार्च'७२ से) ब्रिटिश सरकार ने अल्सटर की संसद भंगकर वहां का शासन अपने हाथ में लिया है, प्रोटेस्टेंट लोग भी सरकार-विरोधी हो गये हैं और कैथोलिक क्षेत्रों में भी अब बमबारी की घटनाएं होने लगी हैं। अब तक अल्सटर का एक भी शहर या गांव ऐसा नहीं बचा है जहां कभी बम फटा हो और प्रत्येक शहर या गांव के केंद्र की एक भी ऐसी इमारत नहीं बची है जो बमबारी से अछूती रह गयी हो। बेलफास्ट (अल्सटर की राजधानी) में तो रोज ही बम फटते हैं और अग्निकांड होते हैं।

पहले तो यहां तक बात बढ़ गयी थी कि लंडनडेरी (अल्सटर का दूसरा सबसे बड़ा शहर) के दो उपनगरों— क्रेगान और बागसाइड में तथा बेलफास्ट की कुछ कैथोलिक-बहुल बस्तियों में आई. आर. ए. ने नाकेबंदी कर रखी थीं। किसी ब्रिटिश सैनिक या प्रोटेस्टेंट की हिम्मत नहीं होती थी कि इन नाकों को पारकर कैथोलिक बस्तियों में जा सकें। वहां आई. आर. ए. का अपना राज्य और अपने कानून थे। आई. आर. ए. के स्वयंसेवक प्रोटेस्टेंट-बहुल क्षेत्रों में बम रखकर और गोली चलाकर वापस अपने राज्य में आ जाते थे। पुलिस तथा सेना देखती रह जाती थी।

३१ जुलाई, १९७२ को ब्रिटेन ने एकाएक ४,००० अतिरिक्त सैनिक भेजकर आई. आर. ए. के इन क्षेत्रों पर धावा बोला और पूरा क्षेत्र अपने कब्जे में कर लिया। पर समस्या सुलझी नहीं। लोगों की आशा के विपरीत देखा जा रहा है कि आई. आर. ए. के स्वयंसेवक अब भी पुलिस और सेना की आंखों में धूल झोंककर कहीं न कहीं बम रखकर भाग जाते हैं। पुलिस और सेना की इस अकर्मण्यता के कारण अब यहां गृहयुद्ध की भी आशंका की जाने लगी है।

क्या अल्सटर में गृहयुद्ध रोका जा

सकता है? क्या वहां की समस्या का कोई समाधान है? ८०० साल पुरानी इस आयरिश समस्या को सुलझाने के लिए कुछ प्रस्ताव सामने आये हैं:

(१) **संयुक्त आयलैंड :** इसके लिए आयलैंड शुरू से ही मांग करता रहा है। पर यह सबसे अधिक असंभावित भी है। अल्सटर का स्वतंत्र आयलैंड में विलय प्रोटेस्टेंट लोग कभी सहन नहीं करेंगे। उनको भय है कि इससे उनका अनुपात प्रत्येक तीन कैथोलिकों में एक रह जाएगा। उनको यह भी भय है कि कैथोलिकों के साथ अभी जो व्यवहार अल्सटर में किया जा रहा है, वैसा ही संयुक्त आयलैंड में प्रोटस्टेंटों के साथ किया जाएगा। आयलैंड के संविधान में भी कुछ ऐसी बातें हैं जो प्रोटस्टेंटों को मान्य नहीं हैं और आयरिश संसद भी प्रोटस्टेंटों को खुश करने के लिए संविधान में परिवर्तन करने को तैयार नहीं। इन बातों में मुख्य हैं—गर्भ-निरोध पर प्रतिबंध, तलाक और कैथोलिक-चर्च को दी गयी विशेष सुविधाएं।

(२) **अल्सटर में नयी सरकार की स्थापना, जिसमें कैथोलिकों को उनकी संख्या के अनुसार प्रतिनिधित्व मिले :** इसके लिए भी प्रोटेस्टेंट तैयार नहीं। उनको भय है ऐसी सरकार में अल्पमत कैथोलिक अनावश्यक अड़ंगा लगायेंगे।

(३) **अल्सटर के कैथोलिक-बहुमत-वाले प्रदेश स्वतंत्र आयलैंड को दे दिये जाएं :** ऐसा करने से ब्रिटिश सरकार के लिए यद्यपि सीमा-सुरक्षा की बहु[त] समस्याएं अपने आप हल हो जाएं[गी] तथापि इससे प्रोटस्टेंट कभी संतुष्ट [न] होंगे। उनका कहना है कि उनका [जो] बचा-खुचा प्रदेश है, वह ऐसा करने से [और] भी छोटा हो जाएगा।

(४) **ब्रिटिश सेना की अल्सटर [से] वापसी :** यह आई. आर. ए. की मुख्य [मांग] है। इसके द्वारा ब्रिटिश सरकार [एक] निश्चित तारीख तक अपनी पूरी [सेना] अल्सटर से वापस बुला लेगी, [और] आयलैंड की सरकार तथा अल्सटर [के] यूनियनिस्ट लोगों को निबटारे के [लिए] एक निश्चित समय दे दिया जाए[गा]। यदि वे इस अवधि में कुछ नहीं कर [सके] तो स्वयं लड़-झगड़कर अपना निबटा[रा] कर लेंगे या राष्ट्रसंघ की सेना को शां[ति] बनाये रखने के लिए बुलाएंगे। इस प्रस्ता[व] को मानने में प्रोटस्टेंटों को मुख्य आप[त्ति] यह है कि दोनों वर्ग कभी सहमत नहीं [हो] सकेंगे और गृहयुद्ध होकर रहेगा।

ब्रिटेन भारत में भी बहुत-कुछ ऐ[सा] ही कर चुका है और उसके परिणाम कि[सी] से छिपे नहीं हैं। दूसरी बात यह भी [है] कि प्रोटेस्टेंट लोगों की दृष्टि में ब्रिटि[श] सरकार झूठी बन जाएगी। वह बरा[बर] कहती रही है कि वहां बहुमत (प्रोटेस्टें[ट]) का खयाल रखा जाएगा और सुर[क्षा] के लिए ब्रिटिश सेना बनी रहेगी।

—१४ किंग्सवे, कैरिकफर्गस क. ऐंटि[म] उत्तरी आय[लैंड]

अभेद

वे आये
और अपनी पीठ पर
एक भारी-भरकम गट्ठर लादकर लाये
न लस्त न श्लथ
न थकान का अता
न पसीने का पता
एकदम तरोताजा
खटखटाते हुए मेरा दरवाजा
उतार दिया गट्ठर मेरी देहरी पर
प्रतीक्षा नहीं की अभिवादन की
खोल दिया गट्ठर
मैं देखता रहा उनकी कुटिल मुसकान
तब तक मेरा घर, आंगन
और पूरा मकान ही क्या
समूचा आसमान
भर गया अंधेरे से
मेरा पेट, पीठ, हाथ, हरकत
हकीकत और अब समग्र चेतना
छटपटाने लगी उस अंधेरे में
मैं निरीह, निराश, असहाय, अनाथ
चीख रहा हूं इस अनिच्छित घेरे में
मेरे क्रंदन के सिवा सुनायी पड़ रहा है
उनका धूर्त अट्टहास
वे भी सटे ही बैठे हैं
ठीक मेरी चेतना के आसपास
कितने खुश हैं वे
मेरे इस हाल पर
उनका सुख यह है कि
उन्होंने पोत दिया है अंधेरा
एक जिंदा मशाल पर
और 'तभी' मैं सोचता हूं
यह 'मैं' केवल मैं ही नहीं
शायद 'तुम' भी हो
क्योंकि तुम केवल 'तुम' ही नहीं
भलेमानस की दुम भी हो

—बालकवि बैरागी
—पोस्ट मनासा, जिला मंदसौर (म.प्र.)

● उमा वासुदेव

सुना है कि जब मानिजी साहब रेलगाड़ी से सफर करते तब उनका डब्बा किसी मंगोल राजकुमारी के शरीर की तरह महकता था। गाड़ी का वह भाग किसी महल का एक छोटा कमरा बन जाता—रसपूर्ण, धनाढ्य और आरामदेह। उस बहार में न मिलनेवाले दूर-दराज से आये फलों की भीनी गंध, स्कॉच की लौकिक आनंददायी सुगंध और कठिनाई से मिलनेवाले सिगारों की उत्तेजक तीखी बू सांस लेती होती। लाल सुनहरे आमों की गहरे लाल अंगूरों से मानो होड़ लगी रहती, और खून से लाल मालटे तो ऐसे लगते कि द्वार पर सुनहरी वर्दी पहने सेवक निस्पृह सहज गर्व से खड़े रहते, कुछ न सुनते हुए, सावधान! उनकी आत्माएं अपने स्वामी के भेदों को अपने अंदर सोख लेतीं।

मानिजी का हर काम लालित्य और सहजता से भरपूर होता। एक बार, सुना है, कलकत्ता में उन्होंने एक लाख रुपया कुल तीन दिन में व्यय कर दिया था। ऐसा नहीं कि वे स्वयं पर ही पैसा लुटाते हों। उनका हृदय विशाल था, इ[...] कि सब लोग उसे देख चकित रह जा[...] उदाहरणार्थ, जब उन्होंने महाराजा क[...] सिंह को भोज के लिए निमंत्रित किया त[...]

कृष्णगढ़ से आनेवाली लंबी स[...] पर लोगों का हुजूम जमा हो गया [...] लंबी चमकीली लाल 'जैगुयार' कार [...] बैठे उस पुरुष की एक झलक भर [...] के लिए। १५० मील का सफर केवल [...] घंटे में तय कर लिया था। दो दिन प[...] अंगरक्षक गांव में लोगों को सूचित क[...] गये थे कि कोई भी वाहन सड़क प[...] नजर नहीं आना चाहिए, और जो [...] कोई पैदल सड़क पर चलेगा वह न[...] के लिए खुद ही जिम्मेदार होगा। इस[...] सड़कें बिलकुल साफ और सुनसान [...] पर सड़कों के दोनों ओर गांववाले इत[...] में खड़े थे। काफी झगड़े हुए थे। कोई [...] घर रहकर बच्चों की रखवाली क[...] को तैयार न हुआ था। एक साल के ब[...] को तो गोद में उठाया जा सकता है, [...] बड़े बच्चे हो सकता है ऐन मौके पर स[...] के बीच भाग जाएं! अंत में समझौ[...] हो गया था। लेकिन सब कुछ एक ही [...] में समाप्त हो गया था। गांववालों [...]

काफी
के लि
नजरों
कहन
की अ
अंगूठ

दीवा
से सु
रोश
जड़े
छत्तीं
सब

वरुण
ऐसी
ही ज
थे।

काफी निराशा हुई थी। वह प्रणाम करने के लिए हाथ भी न जोड़ पाये थे कि कार नजरों से ओझल हो गयी थी। कुछ का कहना था कि उन्होंने महाराजा साहब की अंगुली पर बहुत बड़ी हीरे की चमकती अंगूठी देखी थी।

मानिजी ने अपने मेहमान के लिए दीवारों को जरी और रेशम की चादरों से सुसज्जित किया। दीप-वृक्ष की सैकड़ों रोशनियों में राजकुमारों की पगड़ियों में जड़े नगीने अपनी झलक दिखा रहे थे—छत्तीस प्रकार के व्यंजन परोसे गये—ये सब उन लोगों ने सुना।

मानिजी ने एक पूरा शहर महाराजा वरुण सिंह को भेंटस्वरूप दे दिया था। ऐसी ही बातों के कारण वे अपने ही जीवनकाल में एक आख्यान बन गये थे। जनता उनसे बेहद प्रभावित हुई थी और बरसों से राजाओं, महाराजाओं को पूजने की आदी जनता के लिए वे नायक बन गये थे। जितने जाम अतिथि के मान में पिये गये उतने ही मानिजी के लिए भी।

वे भलीभांति जानते थे कि मानिजी–जैसे लोगों की संपत्ति, उन्हीं लोगों का दमन एवं शोषण करके एकत्रित की जाती है, फिर भी वे सब उनका अपार आदर करते थे। व्यवस्था के दोषों के लिए मानिजी को क्यों जिम्मेदार ठहराया जाए! वे जानते थे कि मानिजी साहब उन्हें उपयोग नहीं करना चाहते। वे केवल पूर्वजनों की परंपराओं का पालन करते हैं। बेटी की शादी के लिए अगर किसी के पास दहेज जुटाने का साधन न होता तो मानिजी भरपूर मदद करते। अगर किसी को सांप काट ले और मानिजी साहब
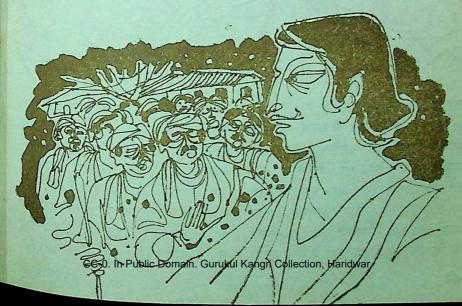
को पता चल जाए तो सबसे अच्छे डॉक्टर से इलाज करवाते और अगर समय हो तो अपनी कार में मरीज को शहर के बड़े अस्पताल ले जाते।

किसी का जन्मदिन न होता तो शेर का सफल शिकार ही काफी था, और नहीं तो पूर्णमासी भी एक अच्छा बहाना था। पूरी रात गांववाले शहनाई और घुंघरुओं के स्वर सुन सकते थे और अगर चाहते तो महल के किले के मैदान में दूर खड़े निर्विघ्नता से मनाये जा रहे

उत्सव का आनंद ले सकते थे।

स्वतंत्रता के बाद रियासतों का केंद्र में पूर्ण विलय और उसके परिणामस्वरूप मानिजी की दौलत का धीरे-धीरे लुप्त हो जाना उनके लिए बड़ा भारी आघात था। महल की मुक्तहस्तता उन्हें बहुत याद आती। वे सोच ही नहीं सकते थे कि बहुत ही निकट भविष्य में मानिजी काफी हद तक गरीब हो जाएंगे और सब शायद पहले से अधिक संपन्न, वे यह भी समझते थे कि वे चाहे कितने ही अमीर क्यों न हो जाएं, अकारण पैसा लुटा नहीं सकेंगे।

बेशक अब इसकी कोई जरूरत नहीं थी, फिर भी मानिजी साहब को सामने पाकर वे झुक जाते, कुछ तो जमीन पर लेटकर प्रणाम करते। अब वे ऐसा अपनी इच्छा से करते। 'हमी से मानिजी की शक्ति थी,' वे सोचते थे। उन्होंने तय किया कि वे मानिजी को दुबारा शक्तिशाली बना सकते हैं। उन्होंने कहा, "आप चुनाव लड़िये, एक-एक आदमी आपको वोट देगा।" मानिजी के इनकार करने पर उन्हें चोट पहुंची थी।

मानिजी का उत्साह समाप्त हो गया था। बाल तो कहीं-कहीं सफेद हो ही गये थे। अब उन्होंने दाढ़ी भी बढ़ा ली थी।

और खादी पहननी शुरू कर दी थी। उनके कंधे पर एक ढीला-ढाला अजीब-सा थैला लटका रहता और वे भिक्षुक-से लगते। अपना समय वे कुटिल राजनीतिज्ञों के साथ बिताते। वे लोग जी-भरकर उनका उपयोग करते क्योंकि जनता के लिए वे अभी एक आकर्षण की वस्तु थे। आरंभ में तो लोग बातों में आ गये, फिर उन्हें पता लगा कि राजनीतिज्ञ मानिजी को बेवकूफ बना रहे हैं पर उन्हें बिलकुल बुरा नहीं लगता! अपने व्यवहार द्वारा मानिजी इज्जत कम करा रहे थे। क्या उन्होंने उन्हें पूजा नहीं था? पर आज उसी मूर्ति के पांव मिट्टी के बन गये!

जब उन्होंने फिल्मों में रुचि लेनी शुरू की तब लोगों को कुछ राहत मिली थी। उन्हें आशा हो गयी थी कि अब मानिजी संभल जाएंगे, पर वे पूरी फिल्म कभी-कभी ही देखते। सिनेमाघर में एक सीट उनके लिए हमेशा सुरक्षित रहती। सेवक बता देते कि किस समय कोई खास नृत्य या गाना होगा। उसी समय वे चुपचाप पहुंच जाते। लोग उनके लिए हमेशा कुछ करना चाहते थे। यहां तक कि, अगर कोई दर्शक मानिजी की कुरसी के निकट बैठा होता तो वह कुछ दूर बैठ जाता। मानिजी इस तरह आम भीड़ का एक हिस्सा बनने से बच जाते।

कुछ दिनों बाद मानिजी ने अपनी दाढ़ी कटवा दी। फैसला कर लिया कि विशिष्टता की सब निशानियां मिटा दूंगा। वे उदासीन हो गये थे या फिर छुटकारा चाहते थे, बताना कठिन था। वे अब धर्म-कार्यों में पूर्ण रूप से लीन हो गये थे।

गांववालों को यह आसक्ति पसंद नहीं आयी। मानिजी एक तरह से

उनके स्वप्न का प्रतीक थे। और फिर, हर चीज और हर बात का एक विशेष समय होता है। जिस तरह मानिजी धर्म-कर्म में लीन हो गये थे, वैसा तो वृद्धावस्था में ही शोभा देता है।

पर मानिजी के चरित्र से वे पूरी तरह परिचित न थे क्योंकि मानिजी हर काम अत्यंत प्रबल और प्रकट रूप से ही करते। वे सुबह चार बजे उठ जाते जबकि पहले चार बजे सोते थे। दो घंटे समाधि में बैठते। मदिरापान और मांस खाना तो छोड़ ही दिया था। अब कोई ठहाका लगाकर हंसता, तो वे उसे डांट देते।

मानिजी अगर अपना समय पढ़ने-लिखने में लगाते तो भी ठीक था, पर वे तो सारा समय उस आश्रम में व्यतीत करते जहां एक ऐसा आदमी रहता था जिसकी धार्मिक सत्यता का कोई प्रमाण नहीं था। उसने भोली-भाली जनता अनंत की अपनी खोज के बारे में कहानियां सुना रखी थीं। मानिजी भिज्ञ न थे, फिर भी वे उसे संत मा थे। सर्वाधिक आपत्तिजनक तो यह कि वे अपनी संपत्ति और सामर्थ्य आदमी पर लुटा रहे थे!

विरोध का आभास मानिजी तब हुआ जब कौसेरी का राजा एक थोड़ी देर के लिए मिलने आ गया। प्रिवीपर्स नहीं है। केवल छोटा-सा मात्र है, पर दिखावा तो करना ही पड़ है! क्यों, करना पड़ता है यहां दिखावा? गाड़ी से उतरते हुए उसने कहा उसकी और मानिजी की कारें साथ-खड़ी थीं। राजा कौसेरी बहुत मा था। अपनी प्रजा की राजभक्ति फायदा उठाकर वह विधानसभा सदस्य बन गया था और अब मंत्री-पर नजरें टिकाये था। दोनों जब भोज लिए बैठे तब मानिजी को पुरानी याद आ गयीं। कालेज में बिताये मस्ती भरे दिन! कैसी-कैसी शर्तें लगती थीं

एक बार कारों की दौड़ के लिए लगी थीं—"जो हारेगा वह अपनी का दूसरे को भेंट में दे देगा"—मानिजी दिन बिना कार के ही लौटे थे। एक दो दिन के लिए दोनों दिल्ली गये। दो बजे तक दोनों मदिरापान करते रहे आध घंटे बाद मानिजी ने सुझाव किया, "यूरोप चलने के बारे में क्या वि

है? चार बजे एक हवाईजहाज जाता है।" अगले दिन दोनों लंदन में थे। कपड़े तक वहीं खरीदने पड़े थे। छह महीने बाद कहीं वे भारत लौटे।

उस रात दोनों काफी देर तक बातें करते रहे, पर कौसेरी को वे अपनी बात समझा न सके। दरअसल, अपनी बात उनकी अपनी ही समझ में नहीं आ रही थी। शायद उनके अंदर कहीं अंधकार व्यापक रूप से छा गया था। शायद वे अपनी ही नहीं, अपने पूर्वजों की भी चंचलताओं के लिए प्रायश्चित कर रहे थे। या शायद एकाएक उन्होंने महसूस कर लिया था कि धन-दौलत ही सब कुछ नहीं है।

"इस आधुनिक युग में तुम कैसी निकम्मी बातें कर रहे हो? अगर भगवान को ही ढूंढ़ना है तो उस तीसरे दर्जे के घटिया संत की क्या जरूरत है?" राजा कौसेरी ने कहा।

गुस्से के मारे मानिजी ने बातचीत बंद कर दी थी और सो गये थे। सुबह तीन बजे जब आंख खुली तब दोनों की बाकायदा लड़ाई होते-होते बची। कौसेरी ने चीखकर कहा था, "इस समय तुम मुझे आश्रम चलने के लिए कह रहे हो? तुम पागल तो नहीं हो गये?" जिद्दी मानिजी अकेला ही चला गया। कौसेरी भी बेहद नाराजगी में चला गया था।

उसी दिन 'संत' अपना मौनव्रत भंग करनेवाला था। लोग आश्रम में सुबह से ही एकत्र होने लगे थे। न जाने व्रत भंग करने

पर 'संत' के मुख से कौन-सी गहरी बात निकलनेवाली थी?

'संत' जिस ऊंचे तख्त पर बैठा था, उस पर लाल कपड़ा बिछा था। उस पर खूब सारे फूल बिखराये गये। धूप जल रही थी। लोग 'संत' को फल, चावल, मिठाइयां, केसर आदि भेंट कर रहे थे। दूर खड़े लोग भी 'संत' को देख सकते थे। उसकी आंखें बंद थीं, पांव पानी के एक पात्र में थे। कुछ लोग बार-बार घेरा तोड़कर पात्र में से पानी के घूंट पी रहे थे।

जब मानिजी वहां पहुंचे तब एक पल के लिए चुप्पी छा गयी, फिर पेड़ों में से छनती हवा की तरह एक फुसफुसाहट चारों ओर फैल गयी। मानिजी अपने लिए बनायी जगह पर बैठ गये। गाना फिर से शुरू हो गया। गरमी, मक्खियां, खाद की बू,

किसानों के [illegible] गंध, कुछ भी तो मानिजी को विचलित नहीं कर रहा था। वे पूजा में पूरी तरह से लीन थे। प्रसन्नता के स्थान पर एकाएक उनके अंदर निराकरण की भावना ने जन्म लिया। अभी तक वे जो कुछ भी थे सब बेमानी था। जीवित रहने के लिए कोई कारण नजर नहीं आ रहा था। मानिजी को लगा कि कुछ ऐसा करना चाहिए कि एक ऐसी असत्ता में और भी गहरे डूबा जाए जहां उन्हें कुछ भी याद न रहे, कुछ भी...वे उठे और संत के चारों ओर चक्कर काट रही भीड़ के साथ-साथ चलने लगे। फिर लोगों ने देखा कि वे आधा रास्ता चलकर ही रुक गये हैं। वे सीढ़ियों के पास गये, और दुबारा रुक गये। उस समय लोगों का गाना भी एकाएक रुक गया। अंदर की सांसें अंदर और बाहर की बाहर! एक सन्नाटा छा गया। नहीं! वे ऐसा नहीं कर सकते, पर मानिजी तख्त पर चढ़ गये। खड़े-खड़े उन्होंने 'संत' की ओर देखा और लोगों को लगा कि वे अहंकार और आत्म-अपमान से चोट खाया हुआ चेहरा देख रहे हैं। फिर मानिजी पात्र की ओर झुके।

हां! उन्होंने पात्र में से पानी का घूंट पी लिया था जिसमें 'संत' के पैर भी थे! एक दीर्घ 'आह' हवा में फैलकर मानो कह रही थी—"नहीं?" चीख लोगों के दिल से निकली थीं, "यह असंभव है।"

घेरे के बाहर मानिजी का युवा पुत्र [illegible] घृणा छलकाता हुआ अप चेहरा घुमा लिया। 'संत' ने एक पल के लिए आंखें खोलीं। उसकी आंखों में एक अजीब-सी चमक थी और होंठों पर उसके भी अजीब मुसकराहट। इस जीत की आशा तो उसे भी नहीं थी!

लोग व्यग्र और व्याकुल होकर सोच रहे थे कि मानिजी की श्रद्धा संपूर्ण थी। भीड़ का एक भाग तो मानिजी की सराहना कर रहा था और दूसरे को लग रहा था कि बहुत भारी क्षति हो गयी है। वे उन सबके स्वप्न-प्रतीक थे, एक काल्पनिक आख्यान थे और उन सबके प्रतिरोध चिह्न थे, जिससे उन्हें छुटकारा नहीं मिल सकता था। वे कुछ भी समझ नहीं पा रहे थे। एकाएक उन्हें लगा कि मानिजी की मृत्यु हो गयी है।

उन्हें ऐसा क्यों लगा? क्या स्वयं उन्होंने उस पात्र में से पानी के घूंट नहीं पिये? अगर मानिजी के लिए यह असंगत है तो उनके लिए भी तो असंगत है! वे नहीं जानते थे कि उनके अंदर जागरण की भावना जन्म ले रही है। वे तो संदेह की लहरों में बहे जा रहे थे। उन्होंने अपने-अपने सिर हिलाये—कैसी अजीब बात है!

उन्हें लगा कि उनका कुछ खो गया है—उन्होंने एक आख्यान को मरते देखा है। न जाने उस दिन घर लौटते समय इतने अधिक लोगों के मन शंका से क्यों विचलित थे?

—अनु. सरोज वशिष्ठ

सफलता के प्रतीक

एक बार बाग में बैठे हुए जगदीशचन्द्र बसु एक पौधे को निर्निमेष देख रहे थे। कितना शांत और निस्पंद है यह ! जैसे ही सूर्योदय हुआ उस पौधे में जीवंतता दृष्टि-गोचर होने लगी। उसकी पत्तियां सूर्य की ओर उठने लगीं। फूलों का रंग शोख होने लगा। बसु चौंक पड़े। उस दिन से वे तरह-तरह के पौधों और पेड़ों का अध्ययन करने लगे। यों शुरू हुई उनकी क्रांतिकारी खोज।

इन परीक्षणों के चौंकानेवाले परिणाम सामने आये। उन्होंने निष्कर्ष प्रस्तुत किया— पेड़-पौधों में भी जान होती है। उन पर ऋतुओं का प्रभाव पड़ता है। अच्छे या बुरे भोजन की प्रतिक्रिया होती है। वे बीमार भी पड़ जाते हैं।

वैज्ञानिक खिल्ली उड़ाने लगे। इसका जवाब उन्होंने वही दिया जो एक वैज्ञानिक देता है—उन्होंने प्रयोग करके दिखाये और खोज का विवरण लंदन की रॉयल सोसाइटी को भेजा, पर वहां कोई ध्यान नहीं दिया गया। जब एक ब्रिटिश वैज्ञानिक ने ऐसा प्रयोग कर दिखाया तब सनसनी फैल गयी। बसु ने चुनौती दी, और सत्य को स्वीकारा गया। बेतार का तार भी उन्हीं की खोज था, पर उसका श्रेय मार्कोनी को दे दिया गया था। उन्होंने पौधों को बेहोश करने की दवा भी बनायी।

३० नवंबर, १८५८ को रारीखाल ग्राम (ढाका) में जन्मे बसु को परिवार में धार्मिक वातावरण मिला। ग्राम-स्कूल में शिक्षा के बाद उन्हें अध्ययन के लिए कलकत्ता भेजा गया। १८८० में उन्होंने बी. ए. कर लिया। उनकी इच्छा आई. सी. एस. की परीक्षा में बैठने की थी, पर पिता ने कहा कि विदेशियों की नौकरी करने से अच्छा यह है कि तुम योग्य बनकर देशवासियों की सेवा करो, और बसु शिक्षा के लिए इंगलैंड चले गये।

कलकत्ता के प्रेसीडेंसी कालेज में जब वे विज्ञान पढ़ाते थे तब अधिकतर शिक्षक अंगरेज थे। उन्हें भारतीयों की अपेक्षा अधिक वेतन मिलता था। बसु ने समान वेतन की मांग की, पर कोई ध्यान नहीं दिया गया। अतः वे तीन वर्ष तक बिना वेतन लिये पढ़ाते रहे। प्रबंधकों को नौकरी तो पक्की करनी ही पड़ी, पिछला वेतन भी चुकाना पड़ा।

बसु की प्रतिभा की धाक जम गयी। उनके कालिज से अवकाश-ग्रहण कर लेने पर भी प्रबंधक पूरा वेतन देते रहे। उन्हें 'सर' की उपाधि देकर शासन ने स्वयं को गौरवान्वित अनुभव किया। १९१७ में उन्होंने बसु-विज्ञान-मंदिर की स्थापना की।

२३ नवंबर, १९३७ को हृदगति रुक जाने से उनका स्वर्गवास हो गया।

बौद्ध समाजवाद का मसीहा सलीब पर

● नेमिशरण मित्तल

"मैंने मार्क्स, ऐंगिल्स अथवा लेनिन की कृतियों की एक भी पंक्ति नहीं पढ़ी है। जब मैंने अध्यक्ष माओ से कहा कि मैं इतना बूढ़ा हो गया हूं कि अब साम्यवादी नहीं बन सकता तब उन्होंने मुझसे कहा कि 'तुम इतने बूढ़े कभी नहीं होगे।' संभव है, माओ की बात सही हो लेकिन मैं बौद्ध हूं और एक सिहनख के लिए भी यह संभव नहीं है कि वह एक-साथ बौद्ध और साम्यवादी, बन सके।"

ये शब्द कंबोदिया के भूतपूर्व राष्ट्राध्यक्ष राजकुमार नरोत्तम सिहनख के हैं और इस बात का प्रमाण भी है कि सिहनख हृदय से साम्यवादी नहीं हैं। साथ ही यह भी सत्य है कि उनके ही प्रयास से कंबोदिया के शासन की बागडोर पूरी तरह साम्यवादियों के हाथों में आयी और सिहनख को कंबोदिया का अध्यक्ष-पद छोड़ने के लिए विवश होना पड़ा है। प्रश्न यह है कि उन्हें इस स्थिति में धकेलने की जिम्मेदारी किस पर है? इसका एक ही उत्तर है—अमरीका के बौने और जल्दबाज राजनीतिज्ञों पर। अमरीका ने दक्षिण-पूर्व एशिया में चीनी साम्यवाद की बाढ़ रोकने की आड़ में कंबोदिया में सिहनख की सरकार का तख्ता पलटने में लोन नोल को जो मदद दी, उस सबने सिहनख को चीन की बांहों में धकेल दिया।

प्रधान सेनापति लोन नोल ने सिहनख का तख्ता ठीक उस समय उलटा जब वे राजकीय यात्रा पर रूस के लिए रवाना हुए। उन्हें यह समाचार हवाई-अड्डे पर अगवानी के लिए आये रूस के प्रधानमंत्री कोसीगिन ने दिया। रूस ने सिहनख की सरकार को ही कंबोदिया की वैधानिक सरकार मानने से इनकार कर दिया। इस पर वे चीन गये और वहां चीन के प्रधानमंत्री चाऊ एन लाई और अध्यक्ष माओ ने उनको कंबोदिया के एकमात्र विहित और वैध राष्ट्राध्यक्ष के रूप में मान्यता ही नहीं दी, वरन उनको भरपूर आर्थिक और सैनिक सहायता भी दी जिससे वे अपने देश को लोन नोल से मुक्त करा सकें।

शाही आतिथ्य

राजकुमार नरोत्तम सिहनख पीकिंग में पांच वर्ष तक शाही अतिथि के रूप में

रहे। उनके निवास के लिए चीन सरकार ने उन्हें भूतपूर्व फ्रांसीसी दूतावास का ३० कमरोंवाला विशाल भवन ही नहीं दिया, सात रसोइये, अनेक वैरे और नौकरानियां भी दीं, तथा इस नये राजमहल का पूरा खर्च सहर्ष उठाया। जब चाऊ एन लाई को यह मालूम हुआ कि सिंहनुक को तैरने और खेलने के लिए उपनगरों में जाना पड़ता है तब उन्होंने इसी शाही महल में एक तरण-ताल और स्टेडियम का निर्माण करा दिया तथा ताल के जल को गरम रखने की व्यवस्था करा दी।

बुद्ध के समान

इस सबके बावजूद पीकिंग का जीवन सिंहनुक के लिए उनकी पहले की जिंदगी के मुकाबले में संयम का जीवन था। उन्होंने इस बात का उल्लेख करते हुए एक बार स्वयं कहा था, "मुझे यह कबूल करना चाहिए कि सिंहनुक के वर्तमान जीवन के लिए मेरे मन में अधिक आदर है तथा अतीत के सिंहनुक के लिए किंचित घृणा। पहले तो मैं अपनी चहेतियों के साथ रास रचाने में ही काफी समय गुजार दिया करता था। अब मैं बुद्ध-जैसा हो गया हूं। मैं पत्नी के प्रति वफादार हूं।"

सिंहनुक ने कुल छह विवाह किये। उनकी वर्तमान पत्नी राजकुमारी मोनिक कंबोदियाई-इतालवी मिश्रित रक्त की हैं। सिंहनुक केवल १४ बालकों के पिता हैं जिनमें से दो मोनिक से हैं। १९७० से

१९५२ में सिंहासनारूढ़

मायो की छाया तले

पहले उनकी अनेक सुंदर रखैलें थीं।

सिहनख को कुछ अन्य शौक भी रहे हैं—गायन, फिल्म-निर्माण, बास्केटबॉल, तैरना, भाषण देना और 'कांबोजिया' नामक पत्रिका का संपादन।

साम्यवाद और सिहनख

'माई वार विद सी. आई. ए.' में सिहनख ने लिखा है कि 'मैं कंबोदिया में साम्यवाद नहीं चाहता था किंतु अमरीका ने मुझे साम्यवादी जगत की बांहों में धकेल दिया।' सिहनख ने यह भविष्यवाणी भी की थी कि 'अमरीका वियतनाम-युद्ध द्वारा चीनी-विस्तारवाद को रोकने के बजाय उस राज-मार्ग का निर्माण कर रहा है जिस पर से होकर अंततः चीन दिग्विजय यात्रा पर निकलेगा।' सिहनख की यह भविष्यवाणी सही निकली।

भविष्य-बोध

सिहनख कहा करते थे कि 'जो देश चीन के तलवे चाटता है, चीन उसका अपमान करता है। यदि मैं भी वैसा करूं तो वह मुझे भी नहीं बख्शेगा।' लेकिन वे यह भी जानते थे कि 'अमरीका के बौने राजनीतिज्ञ एक-न-एक दिन एशिया को साम्यवाद के दुर्ग में शरण लेने के लिए विवश कर देंगे।' और स्वयं उन्हें चीन की शरण ग्रहण करनी पड़ी।

चीन की सहायता से और सिहनख के नेतृत्व में उन्हीं खमेर रूज नेताओं और सैनिकों ने कंबोदिया को लोन नोल के चंगुल से मुक्त कराया है जिन्हें किसी समय सिहनख ने राष्ट्रद्रोही कहा था और जिनका दमन किया था। तीन हजार से वे अब पचास हजार हो गये हैं।

चीन में निर्वासन के दौरान नरोत्तम सिहनख खमेर रूज के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुए क्योंकि एक ओर तो उनके कारण संसार के पचास देशों ने उनकी सरकार को मान्यता दी तथा दूसरी ओर कंबोदिया की धर्मपरायण जनता सिहनख के कारण सहयोग करती रही। वह आज भी उन्हें बुद्ध का अवतार मानती है।

इस सबके बावजूद सिहनख यह जानते थे कि खमेर रूज के हाथों में सत्ता

आ जाने पर उनकी अपनी भूमिका गौण हो जाएगी। उन्होंने कल्पना की थी कि, 'मैं साल भर में केवल एक महीने के लिए कंबोदिया में रहूंगा जिसमें मैं विदेशी राजदूतों के प्रमाणपत्र ग्रहण तथा कानूनों पर हस्ताक्षर करूंगा। शेष समय में से कुछ में द गाल की तरह अपने संस्मरण लिखूंगा। मुझे महारानी एलिजाबेथ की तरह घोड़ों का शौक है अत: फ्रांस में घुड़-दौड़ देखूंगा। इसके अतिरिक्त संगीत की धुनें और फिल्में बनाऊंगा। सिंहनख का व्यक्तित्व स्वतंत्र रहेगा।'

खमेर रूज नेता हू निम और खिव संफन (शिव संपन्न) बत्तेमबंग के उस कृषक विद्रोह को नहीं भूल पाये जिसका नेतृत्व करने पर उन्हें १९६७ में नरोत्तम सिंहनख के कोप का भाजन बनना पड़ा था। वे कंबोदिया को सिंहनख के हाथों में नहीं सौंप सकते थे। उन्होंने ५ वर्ष तक सिंहनख को कंबोदिया का सम्राट बनाने के लिए नही वरन कंबोदियाई जनता पर साम्यवादी स्वर्ग लादने के लिए संघर्ष किया है। वे तो सिंहनख को शुरू में ही नाममात्र का राष्ट्राध्यक्ष बनाने को भी तयार न थे किंतु उत्तरी वियतनाम के प्रधानमंत्री ने उनपर दबाव डाला क्योंकि वे सिंहनख को वचन दे चुके थे कि उन्हें यह पद दिया जाएगा।

खमेर रूज नेता उन्हें पीकिंग के महल में बंदी रखना चाहते थे किंतु सिंह-नख का भी अपना व्यक्तित्व रहा है। वे अपने आपको व्याघ्र-नख (बाघनखा) कहते हैं। साम्यवादी अधिनायकवाद की स्थापना के बाद भी उनका व्यक्तित्व उनके प्रिय 'कांबोजिया' में सबसे अधिक प्रभावशाली रहा है तथा नयी कंबोदि-याई सरकार को जनवादी नहीं, वरन 'कांबोजियाई राष्ट्रीय एकतावादी शाही सरकार' के नाम से संबोधित किया जाता रहा है। अब उसमें से 'शाही' शब्द निकाल दिया जाएगा।

सिंहनख की त्रासदी

५ अप्रैल, १९७६ से पहले सिंहनख भले ही राष्ट्राध्यक्ष थे मगर जब १९७५ में उनके निजी सहायकों के पीकिंग से कंबो-दिया जाने का प्रश्न उठा तब सिंहनख ने उनसे स्पष्ट कह दिया कि 'मैं आपकी सुरक्षा की जिम्मेदारी नहीं ले सकता।' इसका परिणाम यह हुआ कि उनके प्रेस-

सिंहनख दंपति

सचिव तथा पचास अन्य सचिवों और सहायकों ने फ्रांस में शरण ग्रहण कर ली। सिंहनख के बेटे राजकुमार नरोत्तम युवानवत ने भी कंबोदिया लौटने से इनकार कर दिया। १९७१ में वह कंबोदिया से मकाओ चला गया। अब वह हांगकांग के एक कारखाने में काम करता है।

सिंहनख के प्रेस-सचिव ने एक भेंट में कहा था कि राजकुमार नरोत्तम सिंहनख गत वर्ष सितंबर में कंबोदिया की राजधानी नोमपेन्ह में २० दिन रहकर पीकिंग लौट गये और वहां से संयुक्त-राष्ट्र संघ महासभा में भाषण देने गये। गत अक्तूबर में वे उत्तरी कोरिया की यात्रा पर गये और उन्होंने स्पष्ट घोषणा की कि 'मेरे कंबोदिया लौटने का यह अर्थ कदापि नहीं है कि मैं साम्यवादी खमेर रूज की बर्बर नीतियों से सहमत हूं, लेकिन मैंने निश्चय कर लिया है कि मैं चीन और चीन के प्रधानमंत्री चाऊ एन लाई की रक्षा के लिए सूली पर भी चढ़ जाऊंगा क्योंकि उन्होंने कंबोदिया की और मेरी अपार मदद की है।'

प्रेस-सचिव ने यह भी बताया कि नोम पेन्ह लौटने पर खमेर रूज ने मंत्रिमंडल की एक बैठक बुलायी जिसकी अध्यक्षता नरोत्तम सिंहनख ने की लेकिन उनसे साफ तौर पर कह दिया गया कि आपका पद नाममात्र का है तथा आप मंत्रिमंडल की कार्यवाही में हस्तक्षेप नहीं करेंगे।

सिंहनख को नोमपेन्ह के बाहर १० मील से अधिक दूर जाने की अनुमति नहीं थी। वे इस स्थिति पर क्षुब्ध थे। उनके समस्त समर्थकों को राजधानी से दूर देहातों की ओर खदेड़ दिया गया। उनकी संपत्ति जब्त कर ली गयी तथा

कम्बोडियाई बौद्धों के महा-स्थविर छोअन (श्रवण) नाथ (८४ वर्षीय) को सीढ़ियों से उतरने में सहायता वरते हुए

उनके नाम बदल दिये गये जिससे कि उनके परिवार के लोग उन्हें तलाश न कर सकें।

बौद्ध-समाजवाद की भेंट

सिंहनख एक मंजे हुए राजनीतिज्ञ रहे हैं तथा उन्हें ही नहीं, उनके अनुयायियों

को भी यह विश्वास था कि एक-न-एक दिन वे खमेर रूज पर लगाम लगाने में भी सफल हो जाएंगे। सिंहनख ने १९७० से पहले 'संघकम' (जनवादी समाजवादी समाज) के नाम से जो आंदोलन शुरू किया था उसकी छाप कंबोदिया के लोगों के दिल पर काफी समय तक रही। सिंहनख कहते थे कि 'कंबोदिया के लोग मूलतः बौद्ध हैं अतः उनका समाजवाद बौद्ध-समाजवाद ही हो सकता है जिसका मूल आधार सबके लिए जीवन साधनों की उपलब्धि है तथा जो विषमताओं को सहन कर सकता है क्योंकि आखिर कंबोदिया के बौद्ध-समाजवाद में एक राजकुमार तो रहेगा ही—राजकुमार नरोत्तम सिंहनख।' मगर वे शायद यह भूल गये कि खमेर रूज नेता बुद्ध के नहीं, मार्क्स और माओ के अनुगामी हैं जो एक भी राजकुमार को सहन नहीं कर सकते थे।

बौद्ध-समाजवाद की स्थापना का अवसर सिंहनख को इतिहास-पुरुष ने नहीं दिया और उनको स्वयं ही सलीब पर चढ़ना पड़ा है। १५ नवंबर, १९०५ को जब वे इराक, सीरिया, सूडान, उत्तरी यमन, सोमालिया, तांजानिया, युगांडा, युगोस्लाविया, रूमानिया, अल्बानिया और पाकिस्तान की यात्रा पर रवाना हुए थे तब पीकिंग अथवा नोमपेन्ह से इस बारे में कोई सरकारी घोषणा नहीं की गयी। यह यात्रा २५ दिसंबर, १९७५ को पूरी हो गयी लेकिन उसका विस्तृत विवरण प्रेस को नहीं दिया गया और यात्रा से वे सीधे पीकिंग लौटे, नोमपेन्ह नहीं। इससे उसी समय संकेत मिल गया था कि खमेर रूज नेता उन्हें महत्त्व नहीं देते।

मार्च, १९७६ में राष्ट्रीय संसद के चुनावों में सिंहनख की विजय इस बात का संकेत थी कि वे कंबोदियाई जनता में अभी तक लोकप्रिय हैं। यह स्थिति उनके साम्यवादी मित्र नहीं सह पाये और उन्होंने सिंहनख को राष्ट्राध्यक्ष पद से उतारकर नीचे खड़ा कर दिया है। कंबोदिया के नये राष्ट्राध्यक्ष प्रख्यात कट्टरपंथी साम्यवादी खिव संफन हैं जिन्हें १९६७ में सिंहनख ने राष्ट्रद्रोही घोषित किया था। सिंहनख के घनिष्ठ मित्र और शरणदाता चाउ एन लाई की मृत्यु उनके लिए अभिशाप सिद्ध हुई है।

यद्यपि ऐसा दिखाया गया है कि सिंहनख ने राष्ट्राध्यक्ष पद स्वयं छोड़ा है तथापि यह उनकी पराजय है जिस पर उनका मौन रहना कठिन होगा। यह पराजय इस वज्र-राजनीतिज्ञ के जीवन में एक नये संघर्ष की शुरुआत हो सकती है और कंबोदिया के इतिहास में तीसरे मुक्ति-युद्ध की। पहला मुक्तियुद्ध फ्रांस के विरुद्ध लड़ा गया जिसके नेता सिंहनख थे। दूसरा, अमरीकी पिट्ठू सरकार के विरुद्ध था, उसका नेतृत्व भी सिंहनख ने किया। तीसरा मुक्तियुद्ध शुरू हुआ, तो वह खमेर रूज के विरुद्ध होगा और उसका नेतृत्व भी सिंहनख करेंगे। ●

हंसिकाएं : काव्य में

फरार

गरीबी अपराध है
और
जब से नयी योजनाएं निकली हैं
बहुत से अपराधियों के
भाग जाने की खबरें मिली हैं

त्रस्त

महंगाई के बारे में उन्होंने बताया
यह वही-अहीर की छोहरी है जिसने
छछिया भर छाछ पर नाच नचाया

नायिका-भेद

उनके वर्ण्य विषय पर
टिप्पणी देती हुई
कहने लगी वह
'इनकी कविताओं में
मिलेंगी नायिकाएं, कुछ
धूप में बाल सुखाती हुई
धूप में बाल सफेद करती हुई'

हालावाद

।शाबंदी के बारे में
उन्होंने आगे जोड़ दिया
कि
इसी समर्थन में
'मधुशाला' के कवि ने भी
लिखना छोड़ दिया

—डॉ. सरोजनी प्रीतम

एक महिला फर्राटे से कार चला रही थी। ट्रैफिक पुलिस के सिपाही ने रोका। महिला बिगड़ी, "जानते नहीं मैं कौन हूं? मैं इंस्पेक्टर जनरल पुलिस को जानती हूं, डी. आई. जी. मेरे घर के चक्कर लगाते हैं। तुम्हारे सारे बड़े अफसर मेरे आगे हाथ जोड़े खड़े रहते हैं।"

सिपाही ने पूछा, "आप मिस्टर सामंत को जानती हैं?"

महिला ने कहा, "नहीं।"

सिपाही बोला, "उन्हें जानतीं तो छूट जातीं। मिस्टर सामंत मैं ही हूं।"

एक कार खड्डे में गिर गयी। अंदर बैठे लोग चिल्लाये, "बचाओ, बचाओ।" दो आदमी रस्सा और लालटेन ले आये और कार को निकाला। कार के स्वामी ने दस रुपये दिये। आनाकानी के बाद उन्होंने दस रुपये लेना स्वीकार किया। जब वे दोनों आदमी जाने लगे तब कारवाले सज्जन बोले, "हमने आज तक ऐसे शरीफ आदमी नहीं देखे जो मेहनताना लेने में हिचकिचायें! तुम लोग क्या काम करते हो?" जवाब मिला, "दिन में खड्डा खोदते हैं और रात को आप जैसे लोगों की कार उसमें से निकालते हैं।"

★

एक मुर्गी कार के नीचे आकर मर गयी। कारवाले ने मुर्गीवाले को दस रुपये

दिये। मुर्गीवाला नम्रता से बोला, "दस रुपये और दीजिए।" कार के मालिक ने पूछा, "क्यों ?"

मर्गीवाला बोला, "घर में मुर्गा भी है। मुर्गी के बिना वह भी तो मरेगा!"

★

किरायेदार ने रात को दो बजे मकान-मालिक के कमरे की घंटी बजायी। मकान-मालिक ने दरवाजा खोला और क्रोध से पूछा "क्या बात है ?"

किरायेदार बोला, "मैं अबकी बार किराया नहीं दे सकूंगा।"

"सुबह बता देते, इतनी रात में क्यों जगाया ?"

किरायेदार ने जवाब दिया, "इस चिंता में मैं अकेला ही क्यों जागूं ?"

★

एक साहब के सिर में दर्द हो रहा था। वह दांतों के एक डॉक्टर के पास गये और कहने लगे, "डॉ. साहब, मेरे सिर में बहुत जोर से दर्द हो रहा है, बुरा हाल है, कुछ कीजिए, मैं तो दर्द के मारे मरा जा रहा हूं।"

डॉक्टर ने उन्हें कुरसी पर बैठाया और उनका एक दांत निकाल दिया।

वह साहब दांत के दर्द के मारे चिल्लाये, "यह क्या किया! दांत ही निकाल दिया ?"

डॉ. साहब बोले, "कोई बात नहीं, सिर का दर्द तो दूर हो गया ?"

★

अध्यापक : "एक चीज दस रुपये अस्सी पैसे में खरीदकर आठ रुपये नब्बे पैसे में बेच दी। क्या नफा-नुकसान हुआ ?"

छात्र : रुपये में नुकसान, पैसे में नफा।

★

सड़क पर चलते-चलते एक व्यक्ति पत्थर से टकरा गया। वह गुस्से में चिल्लाया, "कहां रास्ते में पत्थर गाड़ रखा है! इसे तो जहन्नुम में गाड़ना चाहिए।"

इस पर साथ चलता हुआ दूसरा व्यक्ति बोला, "क्या फर्क पड़ता है! जहन्नुम में भी तो तुम ही टकराओगे।"

★

एक आदमी को फांसी की सजा हुई। राजा ने हुक्म दिया कि इसे शहर से १० मील दूर पैदल ले जाया जाए और जंगल में फांसी दी जाए। सिपाही उसे जंगल में ले गये। वहां पहुंचकर जिस आदमी को फांसी होनेवाली थी, कहने लगा, "यहां मुझे इतनी दूर चलाकर क्यों ले आये ? वहीं फांसी दे देते!" "तुम्हें अपनी चिंता खाये जा रही है ? तुम तो यहां तक सिर्फ आये हो। हमें तो लौटना भी है!"

—रामरिख 'मनहर'

मर्लिन मनरो का खत डॉक्टर के नाम

● डॉ. कुसुम

हॉलीवुड की मेनका मर्लिन मनरो आत्महत्या के चंद बरस पहले एक बार बहुत बीमार हो गयी थी। तकलीफ उसके पेट में थी। मर्लिन के बारे में कहा जा सकता है कि वह एक खालिस औरत थी और उसके दिमाग में इस खयाल के सिवाय दूसरे किसी खयाल की गुंजायश ही न थी कि 'मैं एक औरत हूं, एक सुंदरी, और मेरा यह सौंदर्य ही मेरी एकमात्र निधि है।'

'मर्लिन को अपने जिस्म से बेहद मुहब्बत थी'--लोग ऐसा यों ही नहीं कहते थे। वह सचमुच खूबसूरत थी और अपनी इस खूबसूरती पर मोहित भी।

डॉक्टर ने उससे कहा था, "मर्लिन, मुझे बहुत अफसोस है कि मुझे तुम्हारे खूबसूरत जिस्म पर चाकू चलाना पड़ेगा। तुम्हारी जिंदगी बचाने के लिए तुम्हारे पेट का ऑपरेशन करना ही होगा।"

ऑपरेशन का खयाल मर्लिन के दिमाग को परेशान कर रहा था। वह सोच रही थी, "कौन जाने मेरी कोख में कोई दोष आ गया हो और डॉक्टर उसे निकाल डाले! हो सकता है पेट पर बहुत बड़ा चीरा लगाना पड़े और उसका एक बहुत बदसूरत निशान अपनी चांद-जैसी काया पर जिंदगी भर ढोना पड़े।"

हॉलीवुड में अस्पताल के बिस्तर पर वह रात भर छटपटाती रही थी कि कल सवेरे पेट चीरा जाएगा।

उसके कमरे की खिड़की से सटे बगीचे में खिले फूलों पर पहली भोर-किरण पड़ी। मर्लिन ने उचककर मेज पर से एक कागज उठाया और पेंसिल हाथ में लेकर सोचने लगी कि डॉक्टर के नाम एक खत लिखूं। उसने पत्र लिखा:

हॉलीवुड की मेनका

अत्यंत आवश्यक

आपरेशन से पहले पढ़ा जाए

प्रिय डॉक्टर, जहां तक हो, कम-से-कम काटना। मुझे यह मालूम है कि मेरा यह कहना फिजूल हो सकता है, मगर मेरे लिए यह बात बहुत अर्थभरी है कि मैं एक औरत हूं।

मैं आपसे बारंबार विनती करती हूं कि आप मेरे जिस्म का जितना अधिक-

मर्लिन ने पत्र को बीच में से सफाई के साथ मोड़ा और टेप की मदद से पेट पर ठीक उस जगह चिपका दिया जहां ऑपरेशन होनेवाला था।

नर्स ने मर्लिन को ऑपरेशन थियेटर में पहुंचा दिया। मर्लिन का पत्र अपनी जगह चिपका हुआ था। डॉक्टर ने उस को आदि से अंत तक पढ़ा। उसकी आंखों में करुणा उमड़ आयी। उसने आतमविश्वासपूर्वक अपने

मर्लिन द्वारा लिखे गये खत की अनुकृति

से-अधिक हिस्सा बचा सकें, बचा लें। मैं आपके हाथों में हूं। आप कई बच्चों के पिता हैं अतः आप यह समझते ही होंगे कि इसका क्या अर्थ है। कृपालु डॉक्टर, मुझे विश्वास है कि आप किसी-न-किसी तरह मेरा बच्चा बचा लेंगे। भगवान के लिए मेरी कोख निकालकर मत फेंक देना और कृपा करके जहां तक हो सके यह कोशिश करना कि मेरे पेट पर ऑपरेशन के बड़े निशान न पड़ने पायें।

मैं संपूर्ण हृदय से आपकी आभारी रहूंगी।

—मर्लिन मनरो

हाथों की ओर देखा और चाकू चला दिया। मर्लिन का यह पत्र हाल ही में प्रकाश में आया है। मर्लिन जीवन भर अपने नारीत्व की चरम उपलब्धि के लिए तरसती रही।

मर्लिन ने एक बार हॉलीवुड की प्रख्यात पत्रकार रैडी हेरिस से कहा था, "मेरे मन में अपनी कोख से अपने महान लेखक पति आर्थर मिलर के बच्चे को जन्म देने की कामना है।" और, उस दिन वह खुशी से उछल पड़ी थी जब उसे मालूम हुआ कि मिलर का बच्चा उसकी कोख में आ गया है।

मगर उसके भाग्य में यह सुख नहीं बदा था। ऑपरेशन के बाद मूर्च्छा दूर होने पर उसे सबसे पहली खबर यह मिली कि उसका बच्चा अब उसकी कोख में नहीं है। मर्लिन के उस पत्र के बावजूद डॉक्टर कुछ नहीं कर सका। इससे मर्लिन का संत्रास कई गुना बढ़ गया।

काफी दिन बाद मर्लिन ने रैंडी हेरिस से कहा, "सुनो रैंडी, हमने अपने घर में एक नया कक्ष जोड़ा है, इसका नाम रखा है—द नर्सरी। जबसे मैंने अपना बच्चा खोया है, अपना आखिरी बच्चा, मेरे मन से मां बनने की आशा ही समाप्त हो गयी थी। लेकिन अब वह लौट आयी है और मैं हर घड़ी फिर से मां बनने की आशा में जी रही हूं।"

मगर मर्लिन की खाली कोख भर नहीं पायी।

—द्वारा, विकास लिमिटेड,
सहारनपुर

चार मिनी कविताएं

भूत है अतीत
अजन्मा है भविष्य
वर्तमान नहीं आता
पकड़ में
तब
किस काल में रहता है
कालातीत मनुष्य

●

मौत नहीं थी
जो लेने आयी थी
जीवन के
बीते दिन थे
विदा मांगने
आये थे

●

जैसे आकाश से
वर्षा की बूंदें झरें
जैसे लता-गुल्मों से
'फूलों से फूल' झरें
झर जाते हैं
ऐसे ही
आयु के दिन

●

दर्द में से फूटता है
हंसी का निर्झर
अनुभूति जन्म लेती है
चोट के अंतर में
रात काली न हो
तो व्यर्थ है
तारों का सौंदर्य

—विष्णु प्रभाकर
—८१८, कुंडेवालान, अजमेरी गेट, दिल्ली-६

• डॉ. सत्यकुमार
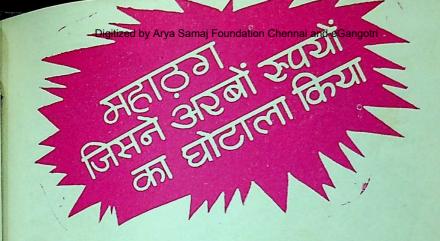
बीस साल तक वह बेताज बादशाह रहा। राजाओं-महाराजाओं, प्रधान-मंत्रियों, राष्ट्रपतियों में उसका बैठना-उठना था। दिन भर में टेलीफोन पर न जाने कितने देशों के राष्ट्रप्रमुखों से उसकी वार्ता होती थी। न जाने कितने देशों की सरकारों को उसने ऋण दे रखा था। स्टॉकहोम में उसने एक सौ पचीस कमरों का महल बनवाया था, जो 'दियासलाई महल' कहलाता था। वह पूरी शानशौकत के साथ बढ़िया किस्म के फर्नीचर, बढ़िया पर्दों और ऐश्वर्य के सभी साधनों से सजा था। उसका निवास तथा कार्यालय उसी महल में था। महल के एक भाग में 'दिया-सलाई-संग्रहालय' था। न्यूयार्क, पेरिस, लंदन और बर्लिन में भी उसने ऐसे ही सजेधजे आवासों की व्यवस्था कर रखी थी। सुख और सुविधाएं वहां समाये नहीं समाती थीं। सब जगह उसका पूरा स्टॉफ रहता था और वह बिना किसी एलान, बिना किसी पूर्व-सूचना के अपने किसी भी विदेशी कार्यालय में पहुंच जाता था। उसके लिए अकस्मात अपने किसी विदेशी निवास में उपस्थित हो जाना उसी प्रकार था जैसे आदमी मूड आने पर पान खाने या सिगरेट पीने चल देता है। वह अरब-खरबपति माना जाता था तथा 'दिया-सलाई-सम्राट' कहलाता था।

वह बड़ी शांत प्रकृति का व्यक्ति दीखता था। अपनी बात समझाकर कहने का उसे ढंग आता था। उसके चेहरे से आत्मविश्वास टपका पड़ता था। नाम था उसका क्रोगर।

वह जीवन भर अविवाहित रहा। जनसाधारण और मित्रों की दृष्टि में वह काम-धंधे में इतना फंसा हुआ था, जैसे उसे स्त्री के लिए समय ही न हो। पलक झपकाने का अवकाश नहीं है, विवाह की कौन सोचे! परंतु वास्तविकता कुछ और ही थी। हर बड़े शहर में, जहां उसका

जाना होता था, उसकी एक सुंदर 'रखैल' होती थी। जब एक रखैल से मन ऊब जाता था तब उसे दो लाख रुपया देकर वह संबंध-विच्छेद कर लेता था। दो लाख रुपया उन्हें मुंह बंद रखने का मिलता था। यद्यपि एकाध महिला ने क्रोगर को ब्लैक-मेल भी किया, तथापि उसके जीवनकाल में उसके विलासी जीवन पर ब्रह्मचर्य का पर्दा पड़ा रहा।

२ मार्च, १८८० को स्वीडन के एक उपनगर में क्रोगर का जन्म हुआ था। बचपन से ही उसका दिमाग बहुत तेज था, परंतु वह खुराफाती था। उसकी स्मरण-शक्ति गजब की थी परंतु मक्कारी उसकी रग-रग में भरी थी। कविता या पाठ के कई टुकड़े करके वह साथियों में बांट देता और जब वे रटकर इसे सुनाते तो इसे पूरा मसाला याद हो जाता था।

स्वीडन से ही इसने इंजीनियरिंग की डिग्री ली तथा अगले दस साल तक अमरीका में बड़े-बड़े उद्योगों का अध्ययन करता रहा, फिर स्टॉकहोम के ही एक वास्तुशिल्पी टोल के साथ व्यापार प्रारंभ कर दिया। फुटकर व्यापार करने के बाद इसने अपने परिवार द्वारा चलाये जा रहे दियासलाई के तीन छोटे कारखानों पर ध्यान दिया। प्रथम विश्वयुद्ध का समय था। दियासलाई-जैसी आवश्यक वस्तु की कमी हो जाती थी। क्रोगर ने यूरोप के सभी छोटे-छोटे देशों का दौरा किया तथा वहां के दियासलाई के कारखाने खरीद लिये।

प्रथम विश्वयुद्ध समाप्त होने के बाद यूरोप के देशों की हालत खस्ता होने लगी थी। क्रोगर ने इस अवसर का पूरा लाभ उठाया। उसने विभिन्न राष्ट्रों को ऋण देना प्रारंभ कर दिया, पर ब्याज की दर क्या थी ?—प्रत्येक देश में दियासलाई-उद्योग पर लंबी अवधि के लिए एकच्छत्र अधिकार।

सारी दुनिया में उसकी दियासलाई की तीलियां सुलगने लगीं। कहते हैं एक-तिहाई दुनिया क्रोगर की दियासलाई प्रयुक्त करने लगी थी।

दियासलाई के असली उद्योग के साथ उसने कई नकली उद्योग भी खड़े कर दिये थे। ये अधिकांशतः कागज पर थे। एक बड़ा-सा बोर्ड, एक ऑफिस और एक-दो कर्मचारी। काम कुछ नहीं। क्रोगर की साख पर शेयर बिक जाते। क्रोगर यह बात अच्छी तरह जानता था कि जनता केवल दो बातें चाहती है— एक तो अपने 'शेयर' के मूल्य में वृद्धि, दूसरे अपनी धनराशि पर अधिक ब्याज, यह दीखता रहे तो कंपनी बहुत अच्छी है, चाहे कुछ करती रहे। अतः अगले साल का लाभ, चाहे हो या न हो, जब जनता को दिखाना ही है, तो क्यों न पहले से आंकड़े तैयार रखे जाएं !

यही नहीं, अपनी गजब की स्मरण-शक्ति के बल पर क्रोगर ऐसे तथ्यों और आंकड़ों का ढेर लगा देता था कि शेयर-होल्डरों को मीटिंग में स्वीकारात्मक

सिर हिला देना पड़ा था। दो-दो, तीन-तीन करोड़ की पूंजी की ऐसी कितनी ही काल्पनिक कंपनियां उसने खोल रखी थीं, जिनके सारे आंकड़े जाली थे।

कुछ देशों को तो उसने वास्तव में ऋण दे रखा था और कुछ के नाम अपने खाते में झूठमूठ अरबों रुपये ऋण दिखा रखा था—कंपनी के डायरेक्टरों को दिखाने के लिए। इसके लिए उसे फर्जी दस्तावेज भी तैयार करने पड़ते थे। विभिन्न राष्ट्रों के प्रमुखों या वित्त-मंत्रियों के हस्ताक्षरों का वह अभ्यास करता रहता था। उसी देश के 'बांड-पेपर' खरीदकर, नियमानुसार रसीदी टिकट लगाकर वह सारी कार्यवाही बड़ी कुशलता से करता था। किसी को तनिक भी संदेह नहीं होता था। वह अपनी तरफ से ब्याज जमा करता रहता था।

उसकी आफिस की मेज पर जो विभिन्न रंगों के कीमती टेलीफोन लगे रहते थे, उनमें एक टेलीफोन करामाती था। मेज के नीचे एक बटन लगा था। क्रोगर उसे पैर से हलका-सा दबा देता। घंटी बजती। वह उठाता और किसी भी देश के सम्राट, राष्ट्रपति या वित्त-मंत्री का अभिवादन कर, काल्पनिक बेतकल्लुफाना बातचीत शुरू कर देता। सामने बैठा व्यक्ति उसके साधनों, जान-पहचान तथा संबंधों का कायल हो जाता।

एक बार अमरीका की अपनी एक कंपनी के डायरेक्टरों को वह संतुष्ट नहीं कर सका। उन्होंने जांच के लिए एक प्रमुख अधिकारी को स्वीडन भेजा। उसकी उपस्थिति में जब क्रोगर ने उस टेलीफोन का उपयोग किया तब वह हक्का-बक्का रह गया! यही नहीं, क्रोगर ने उसकी उपस्थिति में अपने कार्यालय के समस्त कर्मचारियों को संबंधित कंपनी के सारे कागज नये सिरे से तैयार करने का आदेश दे दिया। इस बीच अपने व्यवहार और चमत्कार से उस अधिकारी को क्रोगर ने इतना प्रभावित कर दिया कि वह जांच पूरी किये बिना ही पुरानी रिपोर्ट प्रमाणित कर गया।

लेकिन इस तरह आखिर कब तक काम चलता? क्रोगर का करोड़ों रुपये साल का खर्च था, वह कहां से पूरा होता? कंपनियां थीं ही नहीं, सौदे होते नहीं थे, रकम बढ़ती नहीं थी, परंतु आफिस का खर्चा, ब्याज, लाभांश, आयकर आदि तो देना ही पड़ता था। उसी से तो साख जमी हुई थी। वह सरकारों से ऋण लेने लगा। जिस सरकार को वह पंद्रह लाख आयकर देता हो, उसे एक करोड़ ऋण देने में क्या आपत्ति हो सकती थी? पर यह धंधा भी कितने दिन चलता!

धीरे-धीरे उसका आत्मविश्वास कम होने लगा। उससे भूल-चूक होने लगी। कई हिसाबों में गड़बड़ सामने आयी। डायरेक्टरों की मीटिंग में जहां वह धड़ल्ले से बोलता था, वहां उसकी जबान लड़खड़ाने लगी।

१९३२ में उसकी हालत बहुत खस्ता हो गयी। स्वीडन के प्रधानमंत्री से अच्छे संबंध होने के कारण उसने ऋण के लिए प्रार्थना की। जैसे-तैसे उसे बीस लाख का ऋण मिल गया, जबकि पहले ही उस पर सरकारी बैंक का पांच करोड़ ऋण था। सरकार ने उसे पूरा ऋण जल्दी चुकाने तथा सारे खाते दिखाने का आदेश दिया।

अब क्रोगर के सामने अंधेरा छा गया था। उसने एक रिवॉल्वर खरीदा। फिर अपने शयनकक्ष में छाती पर रिवॉल्वर रखकर गोली दाग दी।

सारे हिसाब-किताब की जांच करने में तेरह साल लगे और तब पता चला कि क्रोगर ने सात अरब से अधिक रुपयों का घोटाला किया था।

—७, जैन कालेज टीचर्स कालोनी,
नेहरू रोड, बड़ौत (मेरठ) उ. प्र.

कहानी

• शशिप्रभा शास्त्री

"ठीक है, अब तुम चली ही जाओ।"

"सर्दी बहुत ज्यादा है।"

"अब सर्दी की चिंता करोगी कि अपना भविष्य देखोगी, एक बार ठीक-सा इंतजाम हो जाए, गाड़ी ढर्रे पर चल निकले तो शांत हो यह रोज-रोज की चखचख।"

"पर क्या कहूंगी मैं जाकर, यह तो सोचो!"

"कहना क्या है, पूरी-पूरी बात सच-सच कह देना। सच कह देने से कुछ नहीं बिगड़ता, कुछ बिगड़ता है तो झूठ कहते रहने से। आज तक तुम सच्ची बात कह देतीं तो कभी का काम बन गया होता!"

"हुं।"

"इतनी देर मैं मुन्ने को देख लूंगा, अब तुम चली ही जाओ।"

अजय ने सुनीता को ठेल-ठालकर भेज ही दिया।

★★

बड़े उल्लास से निकली थी सुनीता, पर रास्ते में चलते हुए कदम फिर बंधने लगे : 'क्या समझाऊंगी मैं श्रीमती मेहंदी-रत्ता को! कितनी शर्म आयेगी जब मैं

उनसे कहूंगी कि उन्हें किसी न किसी तरह आया का इंतजाम करना ही है। वह अपनी आया को पचहत्तर रुपये देती हैं। मैं दे पाऊंगी पचहत्तर रुपये?' सोचते-सोचते श्रीमती मेहंदीरत्ता की तसवीर उसकी आंखों के आगे पुर गयी—गुलाबी गाल, गोल छोटा-सा नमकीन चेहरा, हर अंग में लुनाई मुलामियत—'ठीक है, काम कुछ करना नहीं पड़ता, हाथ पर हाथ धरे गिरस्ती का पूरा काम हो जाता है तो हाथ-पैर में बिवाइयां क्यों फटेंगी? यहां आंख खुलते ही जो चरखा चलता है तो रात तक चैन नहीं मिलता। दो छोटे-छोटे बच्चे, दिन-भर की नौकरी, खाना बनाकर, रखकर जाना, आते ही फिर खाना बनाने लगना। तिस पर सासजी की

चें-चें, ताने-तिश्ने और फब्तियां! अब आया मिल भी गयी तो कितना कुछ कर जायेगी वो? सर्दियों में आठ से पहले आया क्या आयेगी! आयेगी भी तो उसके नाज-नखरे और संभालो, चाय तुरंत बना कर दो, मिट्ठू और टीटू दोनों के लिए अलग दूध निकालकर रखो। क्रिश्चियन आया होगी तो मांजी उसे खाने की अलमारी छूने देंगी क्या? एक तूफान खड़ा रखेंगी।...

'श्रीमती मेंहदीरत्ता भाग्यवती हैं, सास-ननद किसी का लेना-देना नहीं है, दस बरस से क्रिश्चियन आया है, बच्चों को संभालती है, श्रीमती मेंहदीरत्ता कॉलेज जाती हैं तो उनको कॉलेज में लाकर, खाना खिलाकर जूठे बरतन वापस ले जाती है। कितना खयाल रखती है उनका, इसीलिए न कि वे लोग उदार विचारों के हैं, छुआछूत, जात-पांत कुछ नहीं मानते। श्रीमती मेंहदीरत्ता भी कितनी 'बोल्ड' निकलीं, फेरों से उठकर श्री मेंहदीरत्ता के साथ चली आयीं, नहीं तो मां-बाप तो बांध देते, जहां उन्होंने तय किया था। पुराने संस्कारों को काट डालना भी कितने साहस का काम है! अब बच्चों को अंगरेजी स्कूल में पढ़ा रही हैं, खुद मेम बनी घूमती हैं। कॉलेज में पढ़ाने जाना तो उनके लिए एक अच्छा खासा शगल ही है, नहीं तो उन्हें पैसों की क्या कमी है...' कितना कुछ सोच रही थी सुनीता चलते-चलते।

श्रीमती मेंहदीरत्ता की कोठी तक

पहुंचते-पहुंचते धुंधलापन छा गया, [illegible] ठंडी हवा कोट और पूरी बांह के स्वेटर को चीर छाती को रेतने लगी। सड़क के किनारे-किनारे टंगी नियोन-लाइट्स चम-चमा उठी थीं। श्रीमती मेंहदीरत्ता की कोठी के गेट पर चिपटी रातरानी महकने लगी थी। कोठी के कांचों से रोशनी और खामोशी एकसाथ झांक रही थीं। सहमते हुए सुनीता ने कॉल-बेल पर अंगुली रखी, तो एक विचित्र झनझनाहट के साथ ऊंचा झबरा अलसेशियन भीतर दरवाजे के कांचों से अपना थूथन रगड़-रगड़कर भौंकने लगा और उसके पीछे-पीछे श्रीमती मेंहदीरत्ता की बेटी पिंकी ने झांका।

"स्टॉप रूमी, स्टॉप!" उसने कुत्ते को प्यार से थपथपाया और दरवाजा खोल दिया। पिंकी सुनीता को नहीं पह-चानती थी, पर ममी की ही कोई फ्रेंड होंगी, यही सोच उसने शालीनतावश हाथ जोड़ दिये, बोली, "प्लीज बी सीटेड। ममी इज कमिंग।" और वह रूमी को लेकर भीतर चली गयी।

ड्राइंगरूम में बैठी सुनीता अपने चारों ओर देखने लगी—चिकना चौकोर हवादार कमरा, खिड़कियों पर रंगीन झिलमिलाते हुए परदे, बीच में अंडाकार सन-ग्लास की मेज, बड़े-बड़े कीमती सोफासेट, दोनों ओर रखी छोटी तिपाइयों पर ऐशट्रे, कार्निस पर कलात्मक खिलौने, पूरे कमरे में मोटा गुदगुदा कालीन और बायीं ओर कोनेवाली छोटी मेज पर स्टीरियो पर टेपरिकॉर्डर—सुनीता के हृदय पर आतंक छाता चला आ रहा था, 'आयाएं भी ऐसे ही मकानों में रहना पसंद करती हैं। एक हमारा मकान है। पूरा मकान अस्तबल की तरह खुदा हुआ, आया के बैठने के लिए न अलग-थलग चिकने बिल्लौरी रंग के बरामदे, न कोई कोठरी। क्यों आकर बैठी है वह यहां, किसलिए? अजय ने नाहक मुझे यहां ठेल-कर भेज दिया...' सुनीता सोच ही रही थी कि श्रीमती मेंहदीरत्ता ने ड्राइंगरूम में प्रवेश किया।

"हलो मिसेज शर्मा, कैसे इनायत की?" हड़बड़ी में सुनीता उठने-सी लगी, फिर खयाल आया, 'अपनी कलीग

हैं श्रीमती मेंहदीरत्ता, इतनी सकपकाहट आखिर क्यों ?" बोली, "आपके पास आज तो घर पर ही कहने आयी हूं कि आप हमारे लिए एक आया ढूंढ़ दीजिए।" एकाएक कोई दूसरी बात बना लेना सुनीता के वश में न रहा।

"ओह यस, आया के लिए आप मुझसे स्कूल में भी कई बार कहती रही हैं। अभी तक कोई नहीं मिली ? आपकी मदर-इनलॉ भी तो हैं, वो क्यों नहीं देख लेतीं बच्चों को ?"

"देख लेतीं, पर वो खुद काम करती हैं।" कहते-कहते सुनीता पर मानो घड़ों पानी पड़ गया। यही बात थी, जिसे कह-कर वह श्रीमती मेंहदीरत्ता के सामने छोटी नहीं बनना चाहती थी। पर अजय की जिद थी कि सब कुछ सच ही कह डालना चाहिए, आवश्यकता की गहराई को वे तभी 'फील' करेंगी। श्रीमती मेंहदी-रत्ता बड़ी हस्ती हैं, लेडीज क्लब और दूसरी बहुत-सी संस्थाओं की वे सदस्या हैं, सैकड़ों से जान-पहचान है, उनके लिए आया ढूंढ़ना आसान होगा। बड़ी आत्मी-यता से खुद को नंगा कर डालने-जैसी स्थिति में होकर सुनीता श्रीमती मेंहदी-रत्ता के चेहरे को पढ़ती हुई बड़ी आशा से तकने लगी।

"आई सी !" बड़ी संजीदगी से कहकर श्रीमती मेंहदीरत्ता एक गहरी चुप्पी में डूब गयीं। सुनीता घबरा उठी, 'क्या सचमुच श्रीमती मेंहदीरत्ता सोचने लगी हैं कि ऐसे लोगों में आया रखने की ताब होगी ही कहां, जहां सारा घर मजदूर बना कमा रहा है?' स्थिति को स्पष्ट करने की दृष्टि से ही वह बोली, "किसी भी तनख्वाह पर मिले, आया मिल जाएगी तो सहूलियत रहेगी। दोनों बेटों की वजह से मैं इतनी परेशान हूं कि कॉलेज में पढ़ाते हुए भी मन नहीं लगता।"

"दोनों बेटे ! क्या एज होगी दोनों की ?" श्रीमती मेंहदीरत्ता ने एक जानकारी लेने - जैसा सवाल फिर किया।

"बड़ा तीन साल का है, छोटा छह महीने का।" मिट्ठू और टीटू दोनों नाम उसे बेहद दकियानूसी लग रहे थे, नामों की जगह उसने विशेषणों का ही प्रयोग किया।

"ओह दे आर वेरी स्मॉल! बहुत छोटे हैं!"

"जी हां।" सुनीता अपनी आंखों में ही छोटी हो गयी; लगा श्रीमती मेंहदी-रत्ता कितनी महान हैं, कितनी भाग्यशा-लिनी, सिर्फ दो बच्चे पैदा किये हैं, बड़ी लड़की स्वीटी दस बरस की है, छोटी पिंकी छह बरस की—पूरे चार साल का फासला।

"अच्छा चलिए, चाय पी ली जाए।" श्रीमती मेंहदीरत्ता ने गरदन हलके से घुमाकर अत्यंत मधुर आवाज में पुकारा- "कैथी, चाय ले आओ।"

कैथी चाय की ट्रे रखकर चली गयी तो श्रीमती मेंहदीरत्ता अपने नाजुक हाथों से धीरे-धीरे चाय तैयार करने लगीं। हीरे की अंगूठी झिलमिलायी। बेहद नाजुक, बेमानी वजन का बारीक प्याला थामते हुए सुनीता का हाथ कांप गया। सर्दी से बचने के लिए भीतर पहने हुए घर के मैले स्वेटर की बांह कोट की बांह में से अचानक बाहर झांकने लगी। सुनीता का मन अपने ही प्रति घृणा से भर गया। पूरा नंगापन यहीं उजागर होना है!

चाय सिप करते हुए श्रीमती मेंहदीरत्ता ने कहा, "मैं पूरी कोशिश करूंगी कि आपको आया मिल जाए।"

"कैथी कौन है, आपकी दूसरी नौकरानी है?"

"हां, दूसरी नौकरानी ही है, हम लोग तो खाने-पीने में कोई परहेज नहीं करते न, इसलिए किसी भी किस्म का नौकर रख लेते हैं। मीट वगैरा सब बना लेती है।"

"जी!" सुनीता को खुद के मीट न खा सकने पर फिर नीचापन महसूस हुआ, 'एक हमारी मांजी हैं, मीट खाने-वाले को इतना दुरदुरायेंगी, भले ही [illegible] जैनी हो।'

मेंहदीरत्ता कहती रहीं, "मैं तो अपनी जमादारनी को भी पूरे घर में आने देती हूं, सफाई वगैरा वही करती है।"

सुनीता ने एक नजर ड्राइंगरूम के कांच को बेधकर बाहर के साफ-सुथरे सुचिक्कण बरामदे पर डाली, बरामदे के साथ लगी फूलों की लतरें बरामदे में लटकते बिजली के लट्टुओं के प्रकाश में कांप रही थीं।

"चलिए, क्रिश्चियन आया हो, आई डोंट माइंड।" सुनीता ने खाली प्याला सामने मेज पर टिकाते हुए आधा वाक्य अंगरेजी में अत्यंत स्वाभाविक ढंग से बोलने का प्रयास करते हुए जोड़ा। उसे लगा, इस वाक्य से अपनी प्रगतिशीलता को उजागर करते हुए वह जमीन से दो अंगुल ऊंचा उठ गयी है।

'हां, आदमी की आज की दुनिया

में इन सब छोटी-छोटी बातों को तो एकदम छोड़ देना चाहिए। अब अगर मैं यही सोचती रहूं तो क्लब, मार्केटिंग, स्विमिंग वगैरा किसी के लिए भी न जा सकूं।"

"वो तो है ही।"

'स्विमिंग ! श्रीमती मेंहदीरत्ता स्विम्स !! श्रीमती मेंहदीरत्ता की प्रगतिशीलता का एक दूसरा तुर्रा !' सुनीता फिर सिकुड़ गयी।

श्रीमती मेंहदीरत्ता ने कैथी को फिर आवाज दी और ट्रे उठाकर ले जाने के लिए संकेत से कह वे फिर अपने कश्मीर के टूर के बारे में बताने लगीं, "बस यही समझ लीजिए कि कश्मीर सचमुच इंडिया का स्विट्जरलैंड है, मैंने स्विट्जरलैंड भी देखा है, खैर स्विट्जरलैंड की तो बात ही और है !"

"आप स्विट्जरलैंड भी हो आयी हैं ?"

"हां, आपने तब ज्वाइन नहीं किया था। सब जानते हैं, मैं कहीं भी जा सकती हूं।" श्रीमती मेंहदीरत्ता ने अपना वाक्य पूरा किया।

"अच्छा तो मैं चलूं।" श्रीमती मेंहदीरत्ता के संस्मरणों को काफी देर सुनने के बाद सुनीता ने विदा ली।

'क्या मुसीबत है, कॉलिज में कभी बार विश तक नहीं की जाती और अपने काम के लिए इतनी देर से यहां लदे बैठे हैं। अब मांजी को जाकर बताऊंगी तो फिर

झगड़ा बखेड़ा होगा, म्लेच्छ हो गयी है दुनिया, ऐसों के हाथ का हमें पानी पीना गवारा नहीं। जैसे श्रीमती मेंहदीरत्ता इन्हें पानी पिलाने ही तो आ रही हैं न !' सोचती हुई सुनीता घर में संतुष्ट-सी घुसी।

"देखिए, क्या होता है, कहा तो है कि वे आया तलाश करेंगी," टीटू को तौलिये में थामते हुए उसने अजय को बताया।

"चलो ठीक है।"

"ठीक क्या है, वो तो बड़ी एरिस्टोक्रेट और लिबरल माइंडेड-लेडी हैं, ठीक क्या है ?" और सुनीता ने एक-एककर श्रीमती मेंहदीरत्ता के वाक्य का अंश-अंश सुना दिया।

"पर हैं शरीफ, तुम्हारी इतनी खातिर की, वायदा किया कि वे काम करेंगी।"

★★

श्रीमती मेंहदीरत्ता आया का इंतजाम आठ दिन बाद ही कर सकीं। आया क्रिश्चियन ही थी। "बड़ी मुश्किल से मिली है, नौकरों से डील करने का भी एक तरीका होता है और सबसे बड़ा गुर यही है कि उनकी बातों में कभी ज्यादा दखलंदाजी मत करो।"

"ठीक है, हमें तो काम निकालना है," सुनीता ने कृतज्ञता व्यक्त की।

★★

क्रिश्चियन आया ने तीसरे दिन ही प्राम की मांग की। "शाम को बाबा को पार्क में ले जाऊंगी, खुली हवा मिलेगी, यहां कचर-मचर में..." आया का इशारा उनके गली के मकान के माहौल से था।

'अच्छा है, बच्चे घूमने चले जाया करेंगे। श्रीमती मेंहदीरत्ता भी समझ लेंगी कि हम भी कोई यों ही नहीं। देखा जाएगा जो कुछ होगा, खर्च तो लगे ही रहते हैं।' सुनीता ने मन को समझाया।

शाम को अजय सुनीता को लेकर प्राम लेने निकला, तो आया पसंद करने साथ गयी। दोनों बच्चों को बुदबुदाते हुए मांजी ने रखा। प्राम की कीमत अनुमान से बहुत अधिक निकली। महीने का पूरा बजट ही डांवाडोल हो रहा था, पर आया के सामने किसी प्रकार से नीची न हो, वह कुछ सुना न बैठे, उसकी मनपसंद गाड़ी खरीद ली गयी। दोनों बच्चे उसमें लदकर पार्क घूमने जाने लगे।

★★

एक दो दिन बाद ही आया ने नयी गाड़ी को यह कहकर 'कंडैम' कर दिया कि 'यह बच्चा-गाड़ी बहुत भारी है, हलकी प्राम ठीक रहती है। भारी गाड़ी को चलाने का दम अब हममें नहीं रह गया है, फिर दो-दो बाबा लोग...' सुनीता को 'दो-दो बाबा लोग' शब्द अच्छे नहीं लगे, पर वह खामोश रही।

अजय को यह गाड़ी वापस करने के लिए काफी पैसे कटवाने पड़े, दूसरी गाड़ी हलकी थी। आया ने पास कर दी तो संतोष हुआ। अब सुनीता आया के साथ खुद को फिट बैठाने के लिए हर संभव प्रयत्न करती।

उस दिन श्रीमती मेंहदीरत्ता पति के स्कूटर पर पीछे बैठीं उड़ी चली जा रही थीं। राह चलती सुनीता की हसरतभरी निगाहों ने उन्हें देखा, स्कूटर पर चढ़े वे दोनों उसे नहीं देख सके। दस-पंद्रह कदम आगे बढ़कर ही स्कूटर रुक गया, तो उसे आश्चर्य हुआ—'श्री मेंहदीरत्ता ने स्कूटर वहां क्यों रोका? यहां तो मजार है। क्या ये लोग भी मन्नत मानते हैं, इतने आधुनिक सब प्रकार की रूढ़ियों से ऊपर उठे हुए...?' स्कूटर बाहर खड़ा रहा। दोनों पति-पत्नी भीतर चले गये, सुनीता खाली स्कूटर को देखती हुई सड़क पार कर गयी।

शाम को घर लौटने पर आया से जिक्र करने पर पता चला, श्रीमती मेंहदी-रत्ता ने पीर बाबा से धागा ले रखा है, उसी को खुलवाने या बंधवाने चली गयी होंगी।

अपने हाथ का पूरा पंजा खोलते हुए आया बोली, "न जाने किस किससे गंडा तावीज बंधवाती रहती हैं वो, उन्हें कई तरह के वहम रहते हैं, उनमें से एक वहम यह भी है कि उनका खुद का साहब किसी दूसरी के चक्कर में फंसा हुआ है।

"जरूरी नहीं है कि कोई हो ही, पर मेमसाहब वहमिन जो ठहरीं। वहमिन तो इतनी हैं कि चाय की पत्ती तक लॉक करके रखती हैं, कहीं आया खुद चाय बनाकर न पी जाए। सर्फ का डब्बा, मजाल है, कभी गुसलखाने में रह जाए। हर मंगलवार को पड़ोसी के घर के सामने टोटका किया मिलेगा।"

"टोटका! क्या कह रही हो आया? कौन करता है टोटका? श्रीमती मेंहदी-रत्ता? इतनी दूर स्विट्जरलैंड जाकर भी? बाहर के देशों को खूब देख-भालकर भी...?"

"क्या बात कर रही हैं आप मेम-साहब! कहीं नहीं गयी हैं ये, सिर्फ यहां शहर देखा है इन्होंने। दोनों मियां-बीवी में खूब चखचख रहती है, बुरी तरह गाली-गुफ्तार...। इन्हें देखकर कोई कह सकता है कि ये...!"

"लड़ाई होती है! पर क्यों, किस बात पर?"

"अपने आप खूब मटरगश्ती करती फिरती हैं। खूब यार-दोस्त बना रखे हैं। साहब के लिए जेल कर रखी है। वे न किसी से बोलें, न बात करें—ऐसा ही चलता है। साहब को दबना पड़ता है, आप जानती हैं...। और फिर साहब इन्हें पीर-मजार पर जाने से रोक भी तो नहीं सकते। वो क्या जानें कि ये वहां क्या करने जाती हैं। जो न कहा जाए वही थोड़ा है मेमसाब...!" और आया कान पर हाथ रखकर बाहर निकल गयी।

सुनीता ने गिरी हुई साड़ी हैंगर पर फिर से लटकायी और हैंगर को किसी प्रकार अलमारी की रॉड पर अटकाने की कोशिश करने लगी।

—३/६ भगवाननगर, देहरादून

यहां हम प्रसिद्ध साहित्यकार स्वर्गीय श्रीरामनाथ सुमन का मृत्यु से कुछ दिन पूर्व भेजा गया एक लेख प्रकाशित कर रहे हैं। यह परमहंस योगानन्द की आत्मकथा 'द आटोबायोग्राफी ऑव अ योगी' में उद्धृत कुछ संस्मरणों पर आधारित है। इसमें आध्यात्मिक क्षेत्र में भारतीय योगियों की अद्भुत उपलब्धियों की एक झांकी है।

• श्रीरामनाथ सुमन

परमहंस योगानन्दजी पिछले खेवे के एक श्रेष्ठ योगी हुए हैं। उन्होंने इस देश तथा अमरीका में क्रियायोग नामक योगापद्धति का प्रचार किया। दक्षिणेश्वर कलकत्ता तथा रांची में उनके आश्रम हैं और अमरीका में तो कई स्थानों पर उनकी संस्था 'सेल्फ रियलाइजेशन फैलोशिप' के केंद्र हैं। देश-विदेश में उनके अगणित शिष्य रहे हैं। वे वाराणसी के परम गृहस्थ-योगी लाहिड़ी महाशय द्वारा दीक्षित युक्तेश्वर महाराज के शिष्य थे। १९५२ ई. में उन्होंने अमरीका में ही समाधि ग्रहण की।

योगानन्दजी ने अपने जीवन के अनुभव-आत्मकथा के रूप में लिखे हैं, जो 'आटोबायोग्राफी ऑव अ योगी' के नाम से प्रकाशित हुई है। जिन महत योगियों से वे मिले और जिनको उन्होंने स्वयं देखा-परखा उनका विवरण भी उन्होंने दिया है। इसमें बनारस के एक ही समय में दो शरीर धारण करनेवाले स्वामी प्रणवानन्द, आकाशचारी नगेन्द्रनाथ भादुड़ी, महान योगी युक्तेश्वर, उनके गुरु लाहिड़ी महाशय आदि के विवरण हैं। यहां मैं योगानन्दजी द्वारा प्रस्तुत विवरण के आधार पर योगेश्वर बाबा के विषय में कुछ लिख रहा हूं।
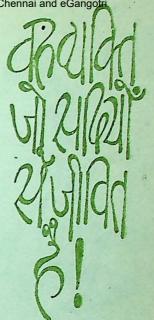
अवर्णनीय सिद्धियां

कहते हैं, शताब्दियों से वे हिमालय-प्रदेश में रहते और विचरण करते रहे हैं। कहते हैं कि उन्होंने आद्य शंकराचार्य को भी योग-दीक्षा दी थी। बदरी-नारायण का निकटवर्ती क्षेत्र उनके

स्वामी श्री युक्तेश्वर गिरि एवं श्री योगानंदजी, कलकत्ता १९३५

पद-संचार से ध्वनित होता रहा है। हजारों वर्षों से वे युवक दिखायी देते रहे हैं। उन्हें अवतार ही समझना चाहिए। उनकी सिद्धियां अवर्णनीय हैं। उनका स्वयं-नियुक्त कार्य है महान देवदूतों की सहायता करना। शंकर, कबीर और आधुनिक समय में लाहिड़ी महाशय उनके प्रधान दीक्षा-शिष्य हुए हैं।

बाबाजी के अस्तित्व का कोई ऐतिहासिक प्रमाण नहीं मिलता। स्रष्टा की भांति अदृश्य रहकर भी वे क्रियाशील हैं।

वे किसी भी माषा में वार्त्तालाप कर सकते हैं। लोग उनको 'बाबाजी' के साधारण नाम से पुकारते हैं, यद्यपि भक्त उन्हें महामुनि, महायोगी, त्र्यम्बक बाबा या शिव बाबा आदि नामों से भी स्मरण करते हैं। गौरवर्ण, उनकी सुदृढ़ यष्टि से सदा प्रकाश की धारा निकलती रहती है। वे पच्चीस वर्ष के लगते हैं।

उनकी मंडली में दो महान अमरीकी साधक भी हैं। अकसर वे आकाश-मार्ग से भ्रमण करते हैं, परंतु कभी-कभी एक चोटी से दूसरी चोटी तक पैदल भी जाते हैं। उनकी इच्छा बिना दूसरा कोई उन्हें पहचान नहीं सकता। विभिन्न भक्तों को उन्होंने कई रूपों में दर्शन दिये हैं—कभी दाढ़ी-सहित, कभी बिना दाढ़ी। उनके अक्षय शरीर को किसी प्रकार के आहार की आवश्यकता नहीं है, किंतु कभी-कभी वे फल, क्षीर और मक्खन ग्रहण करते हैं।

स्वामी केवलानन्द परमहंस योगानन्द के संस्कृत-शिक्षक थे। उन्हें बाबाजी के निकट संपर्क में आने का अवसर मिला था।

लाहिड़ी महाशय ने बताया था—जब मैं अपने तैंतीसवें वर्ष में था तब बाबाजी से पहली बार भेंट हुई थी। यह १८६१ ई. के पतझड़ की बात है। मैं दानापुर में सैनिक इंजीनियरिंग विभाग में एकाउंटेंट था। एक दिन मैनेजर ने मुझसे कहा—हमारे प्रधान कार्यालय से तार आया है। तुम्हारा तबादला रानीखेत को हो गया है, जहां सैनिक छावनी बनायी जा रही है।

श्री श्री लाहिड़ी महाशय : श्री युक्तेश्वर गिरि के गुरु महाराज

एक नौकर के साथ मैं अपनी इस ५०० मील की यात्रा पर चल पड़ा। तीस दिन में रानीखेत पहुंचा। मेरा काम हलका था, इसलिए घंटों मैं आसपास की रमणीक पहाड़ियों में घूमा करता था। मैंने अफवाह सुनी थी कि इस प्रदेश में बड़े-बड़े योगी-यती हैं। एक दिन तीसरे पहर हुए मैंने आश्चर्य से सुना कि कोई मुझे पुकार रहा है।

तब मैं एक छोटे मैदान में जा पहुंचा, जिसके किनारे बहुत-सी गुफाएं थीं। एक चट्टान पर एक तरुण योगी मुसकराते खड़े थे स्वागत की मुद्रा में हाथ फैलाये। उन्होंने स्नेहपूर्वक कहा—"लाहिड़ी, तुम आ गये! इस गुफा में विश्राम करो। मैंने ही तुम्हें बुलाया है।"

मैंने एक लघु गुफा में प्रवेश किया जिसमें कुछ ऊनी कंबल तथा कमंडलु थे।

"लाहिड़ी! उस आसन का तुम्हें स्मरण है?" योगी ने एक कोने में तहाये रखे कंबल की ओर संकेत किया।

चकित हो मैंने उत्तर दिया—"नहीं, प्रभु! रात होने के पहले ही मुझे यहां से चले जाना चाहिए। कार्यालय में सुबह मुझे जरूरी काम है।"

रहस्यमय संत ने अंगरेजी में उत्तर दिया—"कार्यालय तुम्हारे लिए यहां लाया गया है, तुम कार्यालय के लिए नहीं आये हो!" मैं यह देखकर हक्का-बक्का रह गया कि यह वनस्थ साधु न केवल अंगरेजी बोलता है बल्कि ईसा के शब्दों की व्याख्या भी करता है!

बात समझ में नहीं आयी, पर उन्होंने कहा—"मैं देखता हूं कि मेरे तार का परिणाम हुआ है।" पहेली मेरी समझ में नहीं आयी। मैंने उसका आशय पूछा।

"मैं उस तार की बात कह रहा हूं जिसके कारण तुम इस एकांत स्थल में आये हो। मैंने ही तुम्हारे अफसर के मन में यह बात डाली कि तुम्हारा तबादला रानीखेत को हो जाना चाहिए। जब कोई मानव-जाति से अपने ऐक्य का अनुभव कर लेता है तब सर्व मन ऐसे उत्क्षेपक स्टेशन बन जाते हैं जिनके द्वारा वह अपने संकल्प को व्यक्त करता है। लाहिड़ी, निश्चय ही यह गुफा तुम्हें परिचित-सी लगती होगी!"

मैं आश्चर्यचकित मौन खड़ा था कि संत ने मेरे पास आकर धीरे से मेरे माथे का स्पर्श किया। उनके कर-स्पर्श करते ही मेरे मस्तिष्क में एक अद्भुत तरंग दौड़ गयी और मेरे पूर्व-जीवन की बीज-स्मृतियां मुक्त होकर नाचने लगीं।

हर्ष-मिश्रित रुदन से पूर्ण वाणी मेरे मुख से निकली—"मुझे स्मरण है। आप मेरे गुरु हैं बाबाजी, जो निरंतर मेरे रहे हैं! अतीत के दृश्य स्पष्ट मेरे मानस में उभर रहे हैं; मैंने अपने पिछले जन्म में इस गुफा में कई वर्ष विताये हैं।" भाव-विभोर हो मैंने गुरुदेव के चरण पकड़ लिये।

"बहुत काल से मैं तुम्हारे लौटने की प्रतीक्षा करता रहा हूं। मरणांतर जीवन-तरंगों के ज्वार में तुम बिखर कर बह गये थे। तुम्हारे ऐंद्रजालिक कर्म-दंड ने तुम्हें स्पर्श किया और तुम चले गये। मैं अंधकार, तूफान, उथलपुथल तथा प्रकाश के बीच तुम्हारा पीछा करता रहा—शिशु की रक्षा में लगी चिड़िया-मां के समान। जब तुम मानव-योनि में गर्भकाल पूरा कर शिशु रूप में प्रकट हुए, तब भी मेरी आंखें तुम्हें देख रही थीं। धैर्यपूर्वक मास पर मास और वर्ष पर वर्ष बीतते गये हैं और मैं तुम्हें देखता रहा हूं। आज तुम मेरे साथ हो। इस गुफा को, जिसे तुम

बहुत चाहते थे, मैंने सदा स्वच्छ और तुम्हारे लिए तैयार रखा है। यह रहा तुम्हारा शुभ कंबलासन, जिस पर तुम नित्य बैठा करते थे और मेरा उपदेशामृत पान करते थे। देखो, मैंने पीतल का यह चषक कितना चमकदार रख छोड़ा है। मेरे आत्मन, क्या तुम्हें समझ में आ रहा है ?"

मैंने अस्फुट स्वर में कहा "ऐसे अमरण प्रेम की बात किसने सुनी है ?"

"लाहिड़ी, तुम्हें शुद्धीकरण की आवश्यकता है। इस कमंडलु के तैल का पान करो और नदी-तट से लगकर सो रहो।"

मैंने आज्ञा का पालन किया। यद्यपि बर्फानी रात बढ़ती चली आ रही थी, तथापि मेरे अंदर एक सुखद गरम प्रकाश भर गया।

अंधकार में किसी मनुष्य के हाथ ने उठाकर मुझे अपने पैरों पर खड़ा कर दिया और कुछ सूखे वस्त्र दिये।

"बंधु, आओ! गुरुदेव तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं," साथी ने कहा।

वह मुझे घने वन के बीच से ले चला। उस अंधकार में दूर पर सहसा एक प्रकाश-स्रोत दिखायी दिया।

"क्या सूर्योदय हो रहा है ? पर अभी रात तो बीती नहीं," मैंने पूछा।

मेरे पथ-दर्शक ने हंसकर कहा, 'अर्द्धनिशा का समय है। वह प्रकाश तो एक स्वर्ग-भवन से आ रहा है, जो आज रात बाबाजी के संकल्प से निर्मित हो गया है। सुदूर अतीत में एक बार तुमने किसी राजभवन के सौंदर्य का उपभोग करने की इच्छा प्रकट की थी। हमारे गुरुदेव तुम्हारी इच्छा की पूर्ति कर रहे हैं और तुम्हारे अंतिम कर्म-बंध से तुम्हें मुक्त कर रहे हैं। इसी श्रेष्ठ भवन में आज रात तुम्हें क्रियायोग की दीक्षा दी जाएगी। तुम्हारे सब बंधु इस लंबे निर्वासन का अंत होने पर तुम्हारे स्वागतार्थ उपस्थित हैं, देखो!"
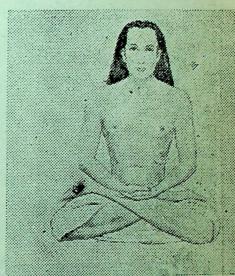
महावतार बाबाजी : श्री
श्री लाहिड़ी महाशय

चमचमाते स्वर्ण का एक विशाल राजभवन हमारे सामने खड़ा था, उसमें असंख्य रत्न जड़े थे और वह सुरम्य उपवनों से घिरा था। उससे असीम ऐश्वर्य बरस रहा था। लाल रत्नजटित प्रकाशमान फाटकों पर देवदूत-जैसे सुंदर लोग खड़े थे।

मैं बोला—"बंधु, इस भवन का सौंदर्य

मानव-कल्पना से परे है। कृपया इसके उद्भव का रहस्य मुझे बताइए।"

"बाबाजी ने अपने मन से इस सुंदर भवन की सृष्टि की है। उनके संकल्प-बल से सब परमाणु संघटित हो गये हैं, ठीक वैसे ही जैसे ईश्वर ने पृथ्वी का निर्माण किया, और उसे बनाये हुए हैं। जब इस भवन की सृष्टि का तात्पर्य पूरा हो जाएगा, बाबाजी इसे समाप्त कर देंगे।"

वहां से रत्नजटित गुंबदों तथा दालानों से होते हुए, सम्राट के भवन के समान बने उस निर्माण में मैं अनेक कमरों से गुजरा। हम एक बड़े हाल में पहुंचे। मध्य में रत्नजटित स्वर्ण-सिंहासन रखा था। उसमें कमलासन लगाये बाबाजी बैठे थे।

बाबाजी ने कहा, "लाहिड़ी, तुम भूखे हो। अपनी आंखें बंद करो।"

जब मैंने अपनी आंखें फिर खोलीं तब वह अद्भुत राज-भवन लुप्त हो चुका था। मैं, बाबाजी तथा सब शिष्य पृथ्वी पर बैठे थे। तभी बाबाजी ने एक मृत्तिका-पात्र जमीन से उठाया और बोले, "जो खाने की इच्छा हो, निकाल लो।"

मैंने चौड़े-छूछे पात्र को देखा और उसमें घी की ताजी लूचियां, कढ़ी और मिठाइयां भर गयीं। मैं खाता रहा और देखता रहा कि पात्र ज्यों-का-त्यों भरा रखा है। भोजन से तृप्त होकर मैंने जल के लिए इधर-उधर देखा। गुरुदेव ने पुनः उसी पात्र की ओर संकेत किया। भोज्य सामग्री की जगह जल भरा था।

उस दिन मैं अपने कंबल पर बैठा था। गुरुदेव आये। उन्होंने मेरे सिर पर हाथ फेरा और मैं सात दिन के लिए निर्विकल्प समाधि में चला गया।

आठवें दिन मैं गुरुदेव के चरणों में गिरकर बोला कि इस पवित्र वनस्थली में वे सदैव मुझे अपने पास रखें।

बाबाजी ने कहा—"वत्स, इस जन्म में तुम्हें अपना कार्य जन-समूह की दृष्टि के सामने करना होगा। अनेक जन्म के एकांत ध्यान के बाद अब तुम्हें मानवों की दुनिया में रहना होगा। इस बार जो तुम मुझ से विवाहित होने तथा व्यावसायिक दायित्वों के बाद ही मिले, इसके पीछे भी ईश्वरीय तात्पर्य था। तुम्हारा जीवन नगरों की भीड़ के लिए है कि लोग देखें कि एक आदर्श गृहस्थ योगी का जीवन कैसा होता है। क्रियायोग द्वारा साधकों को आध्यात्मिक उन्नति में सहायता करना तुम्हारा काम होगा। ... इस दुनिया के न होकर भी तुम इस दुनिया में रहोगे। ... अब ... जब भी तुम चाहोगे, मैं तुम्हारे पास उपस्थित होकर तुम्हारा पथ-प्रदर्शन करता रहूंगा।" ●

"सूरज की अपेक्षा चंद्रमा अधिक उपयोगी है।"

"कैसे ?"

"क्योंकि दिन की अपेक्षा रात में हमें प्रकाश की आवश्यकता अधिक होती है।"

प्रेरक प्रसंग

- सबसे सुखी कौन ?
- खून का दान
- सांप्रदायिकता से परे

सबसे सुखी कौन ?

सायरस ईरान का बादशाह था। उसने क्रोसस को जीत लिया था और एक चिता जलाकर वह उसे जिंदा जलाने की तैयारी कर रहा था। चिता में जीवित डाले जाने से पूर्व क्रोसस "सोलन ! सोलन !!" कहकर चिल्लाया।

सायरस ने उससे पूछा, "सोलन कौन है और तुमने इस समय उसको क्यों याद किया ?"

क्रोसस ने उत्तर दिया, "'जब मेरे दिन अच्छे थे तब मैंने एक दिन सोलन को बुलाकर पूछा कि संसार में सबसे अधिक सुखी कौन है ? उसने उत्तर में किसी ऐसे अज्ञात व्यक्ति का नाम बताया जो मर चुका था। तब मैंने उससे पूछा कि क्या मैं सुखी नहीं हूं ? उसने उत्तर दिया था कि जब तक कोई मनुष्य जीवित है, तब तक उसके बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता; क्योंकि यह कोई नहीं जानता कि भविष्य में किसी के जीवन में क्या होनेवाला है।

"... अब आप ही देखिए कि अपने को परम सुखी माननेवाले 'मुझको' आज चिता में जीवित जलकर मरना पड़ रहा है। मुझे इस समय सोलन के वाक्यों की सत्यता प्रतीत हो रही है, और इसीलिए मैंने उसे याद किया।"

यह बात सुनकर सायरस को ज्ञान हुआ। उसने क्रोसस को उसका राज्य लौटा दिया तथा भविष्य में दोनों अच्छे मित्र बनकर रहे। —डॉ. शिवलाल दवे

खून का दान

अप्रैल, १९६६ की बात है। सदर अस्पताल, मथुरा में एक ग्वाला अपनी बीमार पत्नी को लेकर आया। उसकी छाती में एक बड़ा घाव था। डॉक्टर ने मरीज देखकर कहा, "इसके शरीर में रक्त की कमी हो गयी है। काफी मात्रा में इसको रक्त चढ़ाने की आवश्यकता है, अन्यथा इसका बचना संभव नहीं।"

बूढ़े ग्वाले का रक्त उसके लिए उपयुक्त नहीं था। अन्य कोई उपाय नहीं था। यह देखकर वहां के नवयुवक

कंपाउंडर अहमद ने कहा, "हुजूर ! मैं खून देने को तैयार हूं।"

ग्वाले ने आभार प्रकट करते हुए कहा, "मैं मुंहमांगा मूल्य देने को तैयार हूं।"

"मुझे एक पैसा नहीं चाहिए। मैं किसी लालच से खून नहीं दे रहा हूं। यदि मैं सामर्थ्य होते हुए भी किसी सहायता के उचित पात्र के लिए कुछ न करूं तो अपने को मानव-धर्म से च्युत समझूंगा," अहमद ने गंभीर शब्दों में उत्तर दिया।

डाक्टर ने अहमद का रक्त लेकर उक्त ग्वालिन के शरीर में चढ़ाया और कुछ ही दिनों में ग्वालिन स्वस्थ हो गयी।

—महाराज

साम्प्रदायिकता से परे

विश्व प्रसिद्ध समाज-सेविका मदर टेरेसा ने अपना जीवन दीन-दुखियों की सेवा में अर्पित कर दिया है। उनका मूलमंत्र है प्रेम। वे कहती हैं कि मनुष्यों को एक-दूसरे से प्रेम करके प्रेम का संसार बसाना चाहिए, घृणा का नहीं। प्रेम की एक सच्ची गाथा का उदाहरण देते हुए उन्होंने बताया कि कलकत्ता के एक गरीब हिंदू परिवार के पास, जिसमें एक स्त्री तथा आठ बच्चे शामिल थे, खाने को एक दाना भी नहीं था। मदर टेरेसा ने उस भूखे परिवार के लिए कुछ चावल इकट्ठा किया और उस स्त्री को देने गयीं। अभी वे उस मकान में ही थीं कि वह स्त्री थोड़ी देर के लिए बाहर गयी। जब वह लौटी तब मदर टेरेसा ने उससे पूछा कि वह कहां गयी थी। बड़े संकोच के साथ उस स्त्री ने बताया कि उसके निकट ही एक अन्य मुसलिम परिवार था जिसे कई दिन से खाना नहीं मिला था। अतः वह चावल उसने उस अधिक भूखे परिवार को दे दिया था।

एक अन्य अज्ञात त्याग की मिसाल देते हुए मदर टेरेसा ने आगे कहा कि हाल में एक बालक उनके पास चीनी से भरा एक

डब्बा लाया। उसने कहा कि मैं अपने खाने में से बचाकर यह थोड़ी-सी चीनी लाया हूं ताकि आप उसे उन गरीबों को दे सकें जिन्हें इसकी अधिक आवश्यकता है।

मदर टेरेसा सदैव इस बात पर जोर देती हैं कि भूखों को खाना खिलाने का अर्थ है ईश्वर को भोग चढ़ाना और किसी बीमार या गरीब को कपड़ा पहनाने का अर्थ है परमात्मा की सच्ची सेवा करना।

—राजेश शर्मा

'**क**ला की स्वतंत्रता' का सबसे पहले यूनानी दार्शनिक प्लेटो ने उल्लेख किया था। बाद में होरेस, स्पिनोजा, लेसिंग और हीगेल-जैसे मनीषियों ने इस धारणा की व्याख्या और विश्लेषण प्रस्तुत किया। मार्क्स, एंगेल्स और लेनिन की रचनाओं में वैज्ञानिक साम्यवाद के प्रकाश में इस समस्या पर विचार हुआ है। लेकिन बूर्जुआ प्रचारकों की व्याख्या का यथार्थ से कोई

ग्रिगोरी ओगानोव
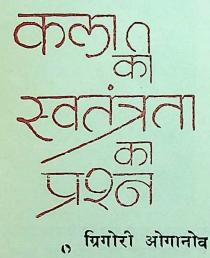
संबंध नहीं है। इनकी व्याख्या का उद्देश्य तो विश्व के सांस्कृतिक विकास पर समाजवाद के प्रभाव के विरुद्ध विष-वमन करना ही होता है। यह विशेष उल्लेखनीय है कि इन हथकंडों के कारण कला की स्वतंत्रता के बारे में युगों से विकसित अनेक सिद्धांतों को और विस्मृति में धकेल दिया गया है।

इस रूपांतर की सैद्धांतिक अनुमोदन स्वयं में खासा रुचिकर है। इसमें संबद्ध समस्त जटिलताओं और परस्पर संबंधों की उपेक्षा करते हुए बूर्जुआ दार्शनिकों ने मान्यता प्रस्तुत की है कि 'किसी को अपनी इच्छा के अनुसार व्यवहार का अवसर मिलना ही स्वतंत्रता की स्थिति है।' हमने किसी व्यंग्योक्ति के उद्देश्य से यह साधारणीकरण नहीं किया है। 'जैसा चाहो करो' वाला यह सूत्र हमने पश्चिमी जरमनी में प्रकाशित आधारभूत दार्शनिक शब्दकोश से ज्यों-का-त्यों उद्धृत किया है।

स्वतंत्रता की इस परिभाषा की तथा बूर्जुआ सिद्धांतशास्त्रियों की कुछ अन्य अपेक्षाकृत कम पारदर्शी व्याख्याओं की स्पष्ट विशेषताएं हैं—यह अराजकतावादी है और मात्र शब्दाडंबर है। 'जैसा चाहो करो' अराजकतावाद का मूलसार है तथा इसका उस रचनात्मक अर्थ से दूर का भी वास्ता नहीं है जो स्वतंत्रता की धारणा को प्रेरणाप्रद गुंजन से भर देता है।

समकालीन कला का ध्येय 'जीवन की यथार्थताओं के भी पार का मूल्यांकन करना' बताया जाता है। लेकिन यह सवाल करना अनुचित नहीं होगा कि क्या इस 'पार' का जीवन से भी इस तथाकथित 'परे' की स्थिति का कोई बिंदु उपलब्ध है ? क्या यह स्थिति वास्तव में इतनी संपन्न और चमत्कारों से परिपूर्ण है कि हम इसमें उन प्रश्नों का हल ढूंढ़ सकें जो आज हमें उद्वेलित किये हुए हैं, अथवा उन

मूल्यों का पता लगा सकें जो हमारी नजर से ओझल हैं और दैनिक संघर्षों के कुहासे में जिनका अर्थ कहीं खोया हुआ है ?

'रचनात्मक अभिव्यक्ति' के ये पश्चिमी मसीहा जो रचनात्मक व्यक्तित्व की हर प्रकार की अभिव्यक्ति के लिए नितांत निरपेक्ष और पूर्ण स्वतंत्रता की बड़े जोर-दार ढंग से मांग करते रहते हैं, जब यह यथार्थ से विमुख होने के अपने नियत कार्य

मैक्सिम गोर्की, लियोनिद लियोनोव, मिर्जा तुरसुन जादे, अलेकजेन्डर ब्लोक

को पूरा करना बंद कर देती है, ठीक उसी क्षण से बड़ी निर्ममता के साथ इस स्वतंत्रता का गला घोटने लगते हैं।

कलाकारों और उनके कार्य पर इस का प्रभाव पड़े बिना शायद ही कोई दिन गुजर पाता हो। समाचारपत्रों में लगातार प्रकाशित होता रहता है कि कलाकारों को जनता का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने के लिए क्या कुछ नहीं करना पड़ता। यह भी समाचार प्रकाशित होते रहते हैं कि किसी संकट के दौर में प्रतिक्रियावादी शक्तियां किस प्रकार ऐसे कलाकारों के विरुद्ध खुलेआम कार्रवाई से बाज नहीं आती हैं जो अपने सिद्धांतों को नहीं छोड़ते तथा जो यथार्थवाद के प्रति और अपनी जनता के प्रति पूर्ण आस्था बनाये रखना चाहते हैं। जब १९७४ में इटली में नव-फासीवाद (NEO FASCISM) के बढ़ते हुए खतरे के विरुद्ध वहां के श्रमिकों का अपने अधिकारों और मूलभूत लोक-तांत्रिक स्वतंत्रताओं की रक्षा के लिए आंदोलन उग्र होने लगा तब प्रत्युत्तर में प्रतिक्रियावादी शक्तियों का पहला वार कड़े सेंसर के रुप में सिनेमा, रेडियो और टेलीविजन पर हुआ। लोकप्रिय युवा कार्य-

क्रमों में कुछ शौकिया मंडलियों के गीतों के प्रसारण की बात तो दूर, उनका नाम तक लेने की भी मनाही कर दी गयी, क्योंकि इन मंडलियों ने इतालवी साम्यवादी दल के जलसों में अपने कार्यक्रम प्रस्तुत किये थे। टेलीविजन पर ऐसी फिल्मों के प्रदर्शन में बाधा उत्पन्न की जिन्हें प्रतिक्रियावादी पसंद नहीं करते थे।

सितंबर, १९७४ में 'ल एस्प्रेसो' नामक पत्र लिखा था : 'इटली के टी.वी.दर्शकों के सर पर पत्थरों का भार-सा लदा रहता है क्योंकि उन्हें इसी के माध्यम से सूचना ग्रहण करनी पड़ती है। पिछले कुछ वर्षों से ५ करोड़ ४० लाख लोगों के इस देश को जैसे आजन्म कारावास पाये कैदियों की एक विशाल जेल में बदल दिया गया है। नागरिकों को अपने घरों की कोठरियों में बंद होकर प्रतिदिन नियंत्रित मनोरंजन सहन करना होता है।'

यह हर्ष की बात है अनेक पश्चिमी कलाकारों ने स्वयं को तथाकथित आधुनिक सांचे में ढालने से इनकार कर दिया है। इन कलाकारों ने अपने-आप को आम जिंदगी से अलग नहीं किया है, यथार्थवाद को नहीं त्यागा है, और न ये ऐसे एकाकी कक्षों की खोज में रहते हैं जहां अपने कर्तव्यों से मुंह मोड़कर अपने सिर छिपा सकें। समसामयिक प्रश्नों में पूरी रुचि लेते हैं और एक श्रेष्ठतर जीवन के लिए संघर्ष में अपनी कला समर्पित करते हैं। ऐसे कलाकार अपनी कला-चेतना को बचाये रखने और अपने सृजन के अधिकार को सुरक्षित रखने का प्रयत्न करते हैं।

पुराने और नये ऐसे अनेक विख्यात कलाकार इसी श्रेणी में आते हैं, जैसे— एमिल जोला, रोम्यां रोलां, जार्ज बर्नार्ड शॉ, हेमिंग्वे, फॉकनर, ब्रेख्त, नेरुदा, गार्सिया लोर्का, पॉल रॉब्सन, आकीरा कुरोसोवा, आदि-आदि। यह दुर्भाग्यपूर्ण और मूर्खता-जन्य अपवाद कि समाजवाद कलाकार को सृजन की स्वतंत्रता नहीं प्रदान करता, कला और संस्कृति के इन महान व्यक्तियों को पथभ्रष्ट करने में पूर्णतया असफल रहा है। इनके सृजनात्मक अनुभव से स्पष्ट हो जाता है कि प्रत्येक सच्ची कलाकृति अनिवार्य रूप से किसी-न-किसी विचार से प्रभावित होती है। यही सृजनशील प्रगाढ़ता एक सच्चे कलाकार की मुख्य विशेषता होती है। अक्तूबर-क्रांति ने आम जनगण के सामने विस्तृत संभावनाओं और प्रत्याशाओं के द्वार उन्मुक्त कर दिये और साहित्य, कला द्वारा निभायी जानेवाली रचनात्मक भूमिका को अपना समुचित स्थान प्राप्त हुआ।

सोवियत साहित्यकार, चित्रकार, अभिनेता, आदि इसी सुखद और उत्तरदायित्वपूर्ण अनुभूति को अपनी सृजनात्मक स्वतंत्रता मानते हैं। यह अनुभूति उन्हें अपनी सैद्धांतिक और कलागत प्रेरणा की एकाग्रता से प्राप्त होती है। इस प्रकार की एकाग्रता से सोवियत रचनाधर्मियों की वैयक्तिकता कभी कुंठित नहीं हुई। इसका

सर्वोत्तम प्रमाण है—'धीरे बहो दोन रे' और 'रूसी वनप्रदेश' से लेकर 'वासिली तेर्किन'–जैसी उनकी कृतियां, गीतात्मक लालित्य से पूर्ण 'सिंड्रेला' से लेकर उन्मुक्त उल्लास से परिपूर्ण, 'लेनिनग्राद सिंफनी' के समान संगीत-रचनाएं। गोर्की, शोलोखोव, मायाकोवस्की, येसेनिन, लियोनोव, फेदिन, मिर्जा तसुजादे, गालिना उलानोवा तथा अन्य अनेक विख्यात कृतिकारों की रचनाओं की अद्वितीयता में अभिरुचिगत और शैलीगत वैविध्य की विपुलता देखी जा सकती है। इन रचनाकर्मियों का विदेशों में भी सम्मान है। इससे यह भलीभांति प्रमाणित हो जाता है कि सोवियत संघ में ऐसी रचनात्मक स्वतंत्रता है जिससे इन कलाकारों की प्रेरणा निर्बाध रह सकती है।

कलाकार को उद्बोधित करो! उसकी प्रतिभा कोई ऐसी चिड़िया नहीं है जो इस पापमय संसार से ऊपर आकाश में पंख फैलाये विचरण करती रहे तथा इसके आंधी-तूफानों और मानवीय चिंताओं और नियतियों से स्वयं को बिलकुल अछूता बनाये रखे। यह तो मानव-सभ्यता के महापोत के मस्तूल पर सीना तानकर लहरानेवाला वह पाल है, जो युग के झंझावातों से शक्ति ग्रहण करता है।

१९ वीं शताब्दी के आरंभ में मिसाइल लेर्मोंतोव ने प्रश्न किया था कि 'क्या यह पाल तूफानों का स्वागत इसलिए करता है कि उनके बीच ही विश्राम कर सकता है?'

> एक फिल्म की शूटिंग चल रही थी। एक दृश्य में यह फिल्माना था कि नायक का चेहरा भय के मारे पीला पड़ गया है। निर्देशक लाख कोशिश करते रहे, किंतु हीरो के चेहरे पर भय के चिह्न आते ही न थे। अंत में सहायक-निर्देशक ने अलग ले जाकर कान में कुछ कहा।
>
> अचानक नायक का चेहरा भय के मारे पीला पड़ गया। चेहरे का क्लोजअप ले लिया गया, जो बहुत सफल रहा।
>
> बाद में सहायक-निर्देशक ने बताया—"मैंने कहा था कि सूचना मिली है कि तुम्हारे बंगले पर इनकम-टैक्सवाले तुम्हारा इंतजार कर रहे हैं।"

और उसी शताब्दी के अंत में अलेक्सांद्र ब्लोक ने उत्तर दिया था कि 'हम तो विश्राम का स्वप्न ही देख सकते हैं!' टॉमस मान ने कहा था, "राजनीति से विमुख होकर संस्कृति स्वयं को आत्म-विभ्रम का ही शिकार बना लेती है, राजनीति से इस तरह नहीं बचा जा सकता।"

अपने युग की ही संतति सोवियत कलाकार क्या स्वतंत्र है? जी हां, वह पूर्ण स्वतंत्र है। वह इस गौरवमय शब्द (स्वतंत्रता) के संपूर्ण अर्थों में स्वतंत्र है, क्योंकि वह संसार से और अपने मानव-बंधुओं से अलग-थलग रहकर सृजन नहीं करता, बल्कि जन-जन के उज्जवल भविष्य के लिए सृजन कर्म में संलग्न है। ●

शेषशायी भगवान बनकर अपना काम कर रहे हैं!

• वियोगी हरि

जानकारी के दायरे जहां कोई तो बड़े होते हैं, बहुत बड़े भी होते हैं, तहां कोई-कोई छोटे होते हैं और बहुत ही छोटे। संभव नहीं कि हर किसी को, खासकर किसी छोटे दायरेवाले को सभी जानते हों। बड़े और छोटे की व्याख्या भी अलग-अलग हो सकती है। सापेक्षता हर जगह अपना काम करती है। समय का भी अपना प्रभाव अलग ही होता है। उसकी तख्ती पर कुछ ही नाम लिखे रह जाते हैं और बहुत सारे नाम पुछ जाते हैं, मिट जाते हैं।

दिल्ली में पिछले दिनों काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा के तत्त्वावधान में बाबू श्यामसुंदरदास की जन्मशती का समारोह हुआ था। एक राजनेता ने, जो बगल में बैठे थे, पूछा कि यह नया नाम कहां से आ गया? वे अपने समय के सत्ताधारियों से ही परिचित नहीं थे, पहले के भी कुछ नेताओं के नाम जानते थे। श्यामसुंदरदास-जैसों के नाम उनके लिए बिलकुल नये थे। दुनिया लोगों की अपनी-अपनी होती है। हिंदुस्तान के अंदर कई हिंदुस्तान हैं। अचरज नहीं, जो एक हिंदुस्तानवाला दूसरे हिंदुस्तानवालों से परिचित न हो। और, जबकि राजनीति के बवंडर से आंखों में धूल भर गयी हो, तब अपने से अलग रहनेवालों को पहचानना और भी मुश्किल हो जाता है।

मैं एक दिन अपने एक सुशिक्षित मित्र से धोत्रेजी के बारे में बात करने लगा, तो उन्हें यह नाम बड़ा अजनबी-सा लगा। मुझे आश्चर्य नहीं हुआ। उनकी जानकारी का दायरा बिलकुल अलग था। जब यह बताया गया कि धोत्रे बहुत नजदीक थे गांधीजी के, राजाजी के, राजेन्द्र बाबू के और सरदार पटेल के, तब तो उनका आश्चर्य और भी बढ़ गया। उनके लिए ऐसा स्वाभाविक था। ऐसा भी जमाना आगे कभी आ सकता है जब दो-चार

बड़े-बड़े नामों को छोड़कर कितनों के ही नाम विस्मृत हो जाएं।

इस भूमिका को यहीं पर छोड़ देता हूं। धोत्रे का दायरा दूसरा ही था। वे विनोबा के घनिष्ठ मित्रों में से एक थे। गांधी-सेवा-संघ के मंत्री थे। गांधी-स्मारक-निधि के भी मंत्री थे। गांधी-सेवा-संघ का भी नाम आज लोग भूल गये हैं। गांधी-निधि और सर्वोदय को भी इसी तरह कल या परसों वे भूल जाएंगे।

जिन मित्रों के साथ मेरा बहुत निकट का संबंध रहा, उनके चंद संस्मरण मैं लिख रहा हूं। भाई धोत्रे का किसी संघ या संस्था से संबंध होने के कारण ही मैं उनको याद नहीं कर रहा हूं। रघुनाथ श्रीधर धोत्रे मेरे एक ऐसे मित्र थे, जिनको मैं अपना अभिन्नहृदय मानता था। हम दोनों के मनोभाव और विचार बहुत अधिक मिलते थे। उनके साथ मेरी मित्रता कैसे हुई, इसका पता भी नहीं चला, क्योंकि वह सर्वथा स्वाभाविक थी। उनके साथ मेरा सामान्य परिचय बहुत वर्षों से था। जब वे दिल्ली में गांधी-स्मारक-निधि के मंत्री के रूप में रहने लगे, तब वह पुराना परिचय घनिष्ठ संपर्क में लय हो गया। कुछ ही वर्षों में वे मेरे आत्मीय बन गये। अधिक सही तो यह है कि उन्होंने मुझे अपना आत्मीय बना लिया।

हमारी वह दक्षिण-यात्रा

दक्षिण भारत की एक यात्रा मैंने धोत्रेजी और भाई श्यामलाल (कस्तूरबा-निधि के कार्यालय-सचिव) के साथ की थी। वह यात्रा कभी भूलने की नहीं। धोत्रेजी ने न जाने कितने अलिखित संस्मरण गांधीजी के हमें सुनाये थे। अनेक रचनात्मक संस्थाओं का इतिहास बताया था और सह-कार्यकर्त्ताओं के रेखाचित्र हमारे सामने रखे थे।

कोयंबत्तूर से नीलगिरि की ओर हम इस यात्रा में एक दिन जीपगाड़ी में जा रहे थे, कस्तूरबा-निधि के कार्य से। सारे दिन हम चलते ही रहे। पर थकान नहीं आयी। भाई धोत्रे की उस दिन की बातों में इतना अधिक हास्य-विनोद था और कहने की उनकी ऐसी सरस शैली

धोत्रे : संतुलन, संयम और विवेक के मूर्तरूप
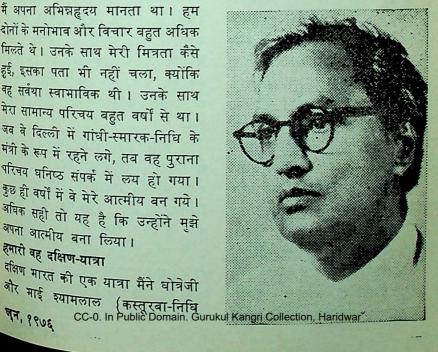
थी कि लगता था कि अच्छा हो हमारी वह जीप-यात्रा सारी ही रात चलती रहे। मराठी व हिंदी के गीत भी उन्होंने उस दिन स्वर-ताल और आलाप के साथ हमें सुनाये थे।

और भी कई प्रसंगों पर गंभीर चर्चाओं के बीच धोत्रेजी की साहित्यिकता एवं विनोदरसिकता मैंने देखी थी। मराठी तथा संस्कृत के अनेक कवियों की सूक्तियां उनकी जिह्वा पर रहती थीं। कथोपकथन का ढंग तो उनका निराला था ही।

इतिहास अपने साथ ले गये

दिल्ली में मेरे निवासस्थान पर जब वे ठहरते, तब घंटों, कभी-कभी तो आधी रात तक, बातों का सिलसिला चलता रहता था। गंभीर चर्चा तथा हास्य-विनोद में भी बापू का स्मरण वे कभी नहीं भूलते थे। गांधीजी अकसर दक्षिण अफ्रीका के प्रसंगों का उल्लेख किया करते थे। धोत्रेजी एक दिन कहने लगे कि क्यों न हम दोनों एक ऐसी पुस्तक तैयार करें जिसका नाम हो—'जब मैं दक्षिण अफ्रीका में था'।

हम मित्रों ने कितनी ही बार जोर देकर कहा था कि 'भाई, आपको बापू के तथा रचनात्मक संस्थाओं के ये अलभ्य संस्मरण अवश्य लिख डालने चाहिए।' वह न हो सका, यद्यपि मृत्यु से कुछ मास पूर्व उन्होंने वचन दिया था और पूरी तैयारी भी कर ली थी अनेक संस्मरणों को लिखने या लिखा देने की।

उनकी वेदना

धोत्रेजी के रोम-रोम में राष्ट्र-प्रेम व्याप्त था। संकीर्णताओं से वे बहुत ऊंचे थे। मन में तड़प रहती थी कि गांधीजी के सपनों का स्वराज्य कब देखने को मिलेगा। रचनात्मक कार्यों की प्रगति पर उनको संतोष नहीं था, क्योंकि वे देखते थे कि सरकार के अनुदानों और कृपा पर चलनेवाली संस्थाएं दिन-पर-दिन निस्तेज और निष्प्राण होती जा रही हैं। आशा की किरणें उनको दीख नहीं रही थीं और इसलिए उन्हें वेदना होती थी।

धोत्रे और विनोबा

भाई धोत्रे पूज्य विनोबाजी के प्रिय-सखा थे। विनोबाजी के प्रति पूरी श्रद्धा-भक्ति रखते थे, परंतु अपने-आपको उनका अनुयायी नहीं मानते थे। कुछेक बातों में उनके साथ मतभेद रखते थे। २२ सितंबर, १९६४ को मुझे उन्होंने जो पत्र लिखा था, उसका एक अंश मैं नीचे उद्धृत करता हूं—

"अगस्त मास में विनोबा की बीमारी के कारण वातावरण यहां चिंतित-सा रहा। मैं १७ जुलाई के दिन सहज ही विनोबा का दर्शन करने गया था। योगायोग से ऐसा हुआ कि जिस समय मैं उनके पास पौनार पहुंचा, तो वे अकेले ही थे। मुलाकात के लिए दूसरे कोई आनेवाले भी नहीं थे। इसलिए वर्षों के बाद उनसे एकांत में दिल खोलकर बातें करने

का मौका मुझे मिला और पूरे डेढ़ घंटे तक हमारी बातचीत हुई। मैंने कहा, "दूसरा कोई जो बातें आपसे कभी कहने की हिम्मत नहीं करेगा, ऐसी कुछ बातें आपको सुनाना चाहता हूं।'

"६ अप्रैल, १९६४ के दिन त्रिविध कार्यक्रम का जो 'धर्मचक्र' प्रवर्तित किया गया था वहां से मैंने कहना शुरू किया। मैंने पूछा, 'खादी-कमीशन-जैसी संस्था के द्वारा ग्राम-स्वराज्य की क्रांति लाने का जो प्रयास आप करना चाहते हैं, तो खादी-कमीशन यह चीज क्या है यह आपको मालूम है क्या? फिर, बापू ने १९३१ के प्रारंभ में जिस तरह कार्यारंभ किया था उस परिस्थिति में कितना बड़ा अंतर है, इसका मैंने विस्तार से वर्णन किया। बापूजी और थोड़े दिन रहते, तो शायद चर्खा-संघ को खत्म ही कर देते, ऐसा भी मैंने कहा। १९४७ के अंत में हरिजन-कालोनी (दिल्ली) में बापू से जो ८–१० दिन तक बातचीत हुई थी उसका सार भी मैंने सुनाया। उनको यह भी याद दिलायी कि उनका 'डिफेंस-मेजर' पहले १९५१–५२ में सारे देश को कताई सिखा देने का था, वह बात तो समझ में आ सकती है। लेकिन बुनाई मुफ्त कर देने के आश्वासन से गांव-गांव और घर-घर में कताई प्रारंभ हो जाएगी यह मानना व्यवहार्य नहीं हैं। बहुत बातें सुनाता रहा। वे बीच में पूछते जाते थे और मैं कहता जाता था। मैं वक्ता और वे श्रोता,

कहते थे कविताओं में आग के शोले हैं। घंटे-भर से हाथ सेक रही हूं, पर रत्ती-भर भी गरमी नहीं मिल रही है!

ऐसा सिलसिला रहा। बाद में मैंने कहा कि 'अब आप कहिए,' तो वही उन्होंने कहा कि 'विज्ञान और वेदांत दोनों एक-दूसरे को पुष्ट करेंगे ऐसी स्थिति अब आ रही है। दुनिया को बचाना है तो मैं कहता हूं कि इसी मार्ग पर उसको आना ही पड़ेगा' आदि बातें कहीं।"

ऊपर के उद्धरण से इस बात का पता चलता है कि धोत्रेजी गहराई में उतरकर चिंतन करते थे, क्योंकि वे एक अच्छे विवेचक थे। सिद्धांत को वे व्यवहार की कसौटी पर कसते थे। साथ ही, जिनको

बड़ा पान लेते थे, उन पर, मतभेद रहते हुए भी उनकी श्रद्धा-भक्ति में कोई कमी नहीं आती थी, क्योंकि वे भक्त-हृदय विवेचक एवं कर्मनिष्ठ व्यक्ति थे। विनोबाजी के प्रति विनोदप्रियता के साथ-साथ उनकी श्रद्धा-भक्ति नीचे के एक और उद्धरण से प्रकट होती है—

"परसों फिर एक बार विनोबा के दर्शनार्थ मैं पौनार गया था। अब तो विनोबा का मौन रहता है। सिर्फ ३० मिनट दिन में वे बोलते हैं। अपने प्रवचन के रूप में बोलकर सुनाते हैं—किसी की सुनते नहीं। बातचीत होती है, वह लिख-लिखकर होती है। अब आंखें बंद करने का व्रत ले लिया तो उनकी और उनकी दुनिया की एकसाथ मुक्ति हो जाएगी। सुन रहा हूं कि आंखों का भी कम-से-कम उपयोग करने का अभ्यास चल रहा है। ईश्वर की ही भूल है कि इस आदमी को उसने पंच-ज्ञानेंद्रियां और पंच-कर्मेंद्रियां देकर इस मानव-धरती पर भेजा है। सिर्फ ज्ञान-इंद्रियविहीन देकर भेजता तो धरती का उद्धार कब का हो जाता। विज्ञान-युग में कम-से-कम 'प्रवृत्ति' से अधिक-से-अधिक कार्य होता है न! आप वेदांत के पंडित हैं, जरा कृपा करके यह बात हमें समझाइए। खैर।"

१६ अक्तूबर, १९६४ को मुझे धोत्रेजी ने जो पत्र लिखा था, उसी में का यह उद्धरण है। इसमें साहित्यिक विनोद तो है ही, विनोबाजी के प्रति उनकी भक्ति-भावना खासी झलक रही है।

'जागिए रघुनाथ कुंवर'

मेरे लिए भाई धोत्रे का पारिवारिक संबंधों का रूप ही सदा अधिक आकर्षक रहा। मेरे यहां वे जब-जब आकर ठहरे, ऐसा नहीं लगा कि वे कोई मेहमान थे। स्वयं ही अपना सब काम कर लेते थे। किसी से कोई काम करने को कुछ नहीं कहते थे। सुबह-सुबह चाय पीने की आदत थी उनकी। सेवाग्राम में तो अकसर वे खुद ही अपनी चाय तैयार कर लेते थे। मेरे यहां या किसी दूसरी जगह जब चाय तैयार होने में कुछ देरी हो जाती, तब उनके चाय के प्याले के इंतजार का मैं इस प्रकार मजाक उड़ाया करता था, 'जागिए रघुनाथ कुंवर, टी के कप तोले।' स्वभावतः भाई धोत्रे का सार्वजनिक रूप उतना याद नहीं आ रहा, जितना कि उनका स्नेहभरा कभी न भूलनेवाला वह पारिवारिक रूप।

पत्रों में से चंद उद्धरण

भाई धोत्रे के पत्रों में से, जो उन्होंने समय-समय पर मुझे लिखे थे, चंद उद्धरण नीचे दे रहा हूं:

(१)

पूज्य बापूजी की प्रेरणा से जो विभिन्न प्रवृत्तियां अखिल भारतीय रचनात्मक संस्थाओं के द्वारा शुरू हुई थीं, वे सारी अब बहुत नाजुक हालत में से गुजर रही हैं, ऐसा मैं देख रहा हूं। राज्य में 'राज्याश्रित' और 'लोकाश्रित' प्रवृत्तियों में फर्क

करना ठीक नहीं है, ऐसा विचार प्रकट किया जाता है। वह ठीक भी है। परंतु इसके विषय में बहुत गंभीरता से सोचकर निर्णय करने की आवश्यकता है। स्वराज्य बापूजी के अर्थ में स्वराज्य बन जाए तो ही राज्याश्रय और लोकाश्रय एकरूप हो सकते हैं, क्योंकि फिर आज की कल्पना का राज्य ही मिट जाता है। आज की कल्पना का राज्य मिटाकर सही अर्थ में 'स्वराज्य' स्थापित करने का कार्यक्रम ही बापूजी का रचनात्मक कार्यक्रम है। इस दृष्टि से हरिजन-सेवक-संघ के कार्यक्रम के विषय में भी सोचने की आवश्यकता है। यह आप जानते ही हैं। सहज में लिख दिया है। (१४-११-१९५८)

(२)

जो स्थिति आज हरिजन-सेवक-संघ की हुई है, उसे देखकर आपसे कोई कम दुःख मुझे नहीं हो रहा है। उसके संबंध में आपको और मुझे सोचना हो तो आमूलाग्र सोचना आवश्यक हो गया है . . . मूलभूत सवाल है कि आज की परिस्थिति में हरिजन-सेवक-संघ का मिशन क्या है, क्या होना चाहिए? गांधी-निधि से जो सहायता मिलती थी, उसके स्थान पर भारत सरकार से सहायता मांगने की बात स्वर्गीय पंतजी थे तब से चली थी। अब भारत सरकार ने चालीस हजार की सहायता देना स्वीकार किया है। उसके लिए जो शर्तें भारत सरकार ने लगायी हैं वे आज ही मेरे पास आयी हैं। उन शर्तों को स्वीकार करने का अर्थ होता है, जो पंतजी ने हम लोगों से कहा था, हरिजन-सेवक-संघ को भारत सरकार का महकमा बनाना। जहां तक मैं जानता हूं ऐसा अपा कभी भी नहीं चाहते हैं, न चाहेंगे।

(६-४-१९६२)

(३)

आपका १९-१०-६४ का कृपा-पत्र बिहार-यात्रा से ३१-१०-६४ को सायंकाल लौट आने के बाद पढ़ा। मेरे अविनय के कारण आपके मन में पुण्य प्रकोप का भाव जाग्रत होने की तैयारी हो रही थी, यह पढ़कर दुःख हुआ। लेकिन आपका प्रकोप भी मैं प्रसाद ही मान लेता। आपको कोप आ सकता है इतना ही नहीं, 'प्रकोप' भी आ सकता है—यह देखकर अत्यंत खुशी भी हुई, क्योंकि जहां परम प्रेम रहता है, वहीं पर परम क्रोध रह सकता है, ऐसा कवियों ने कहा है। जवानी में मैंने एक अत्यंत काव्यमय भाषण इन सुप्रसिद्ध पंक्तियों पर दिया था कि 'अमर्श शून्ये न जनस्य जंतुना, न जात हार्देन नु विद्विषादरः ।'

विनोबा को कष्ट न देने का निर्णय किया गया, यह अच्छा ही हुआ। परंतु विनोबा अपने खुद को जो अतीव कष्ट दे रहा है उसका इलाज क्या है? पुराणों में अपने हाथ से अपनी चिता जलाकर मृत्यु की प्रतीक्षा करते हुए देहोत्सर्ग करने चले ऋषियों की ऐसी कथाएं हैं। ऐसा ही विनोबा का कुछ वर्तमान जीवन है।

४-११-६४ को गोपुरी में, जहां जमनालालजी, किशोरलाल भाई और जमनालालजी की माताजी की चिताएं जलायी गयी थीं उस भूमि पर 'गीताई-मंदिर' बनाने का संकल्प कमलनयन ने किया। उसकी भूमि-पूजा का समारंभ हुआ। उस दिन विनोबा को कई बार चक्कर आ गये थे। नियत समय से पचास मिनट के बाद वे अपने कमरे से सभा-समारोह के स्थान पर आ सके। उनका व्याख्यान भी हुआ। दूसरे दिन राष्ट्र-भाषा-प्रांगण में भी उनका व्याख्यान हुआ। वहां भी नियत समय से करीब एक घंटे के बाद वे कमरे से निकलकर सभा-स्थान पर पहुंचे। वे चुप बैठ नहीं सकते। बैठे हुए भी चक्कर आते हैं। फिर चलना बंद क्यों करें? उनके सामने सवाल पेश है कि 'मरकर गिरूं या पड़े-पड़े मरूं।' उन्होंने मरकर पड़ने को पसंद किया है। आवश्यकता पड़ने पर वाहन का उपयोग करने का विचार भी अब उन्होंने किया है। डॉक्टर के द्वारा जांच करा लेने के लिए अब वे तैयार हो गये हैं। शर्त इतनी ही है कि वे किसी तरह 'चलते' ही रहें। इस व्यामोह को दूर करनेवाला कोई श्रीकृष्ण भगवान कहीं है क्या? यह सारा दृश्य देखते रहना हमारे नसीब में आया है। बापू की नोआखाली-यात्रा हम समझ सके, लेकिन विनोबा की यह पैदल ग्राम-दान-यात्रा समझ में नहीं आ रही है। आप समझाएंगे क्या?

नये वर्ष के निमित्त मेरा अभिवादन स्वीकार करें। चि. भगवत और बिटिया (मेरी पुत्रवधू) को आशीष, बच्चों को प्यार।

(७-११-६४)

(४)

बापूजी की जन्मशती के बारे में 'हरिजन-सेवा' में आपकी संपादकीय टिप्पणी पढ़ी। आपने अत्यंत दुःख के साथ काफी लिख दिया है। लेकिन इसका आशय मानकर प्रत्यक्ष कुछ होगा ऐसी आशा आप भी बहुत कुछ नहीं करते होंगे। यह सारा निराशा का कर्मयोग है।

फिर, 'मेरे प्रवास' में 'वर्धा' तथा 'सेवाग्राम' शीर्षक आपकी टिप्पणी पढ़ी। बहुत अच्छी लगी। इस प्रकार घरेलू वायु-मंडल में मिलना-जुलना ही हमारे जैसे लोगों के लिए आनंद-स्थान बने हुए हैं।

(१२-२-१९६६)

(५)

परसों तारीख १२ फरवरी को पौनार में गांधी-अस्थि-विसर्जन के मेले में हम सब लोग गये थे। मेले के कार्यक्रम में कोई खास विशेषता नहीं थी। जाना चाहिए इसलिए चला गया था। सर्वसेवा-संघ के ट्रस्टी बोर्ड की एक विशेष बैठक उसी दिन वहीं बुलायी गयी थी। उसमें उपस्थित रहने के लिए मुझे खास तौर पर बुलाया गया था। इसलिए जाना आवश्यक था ही। सर्वसेवा-संघ से तो १९५४ में ही वैधानिक सारे संबंधों का मैंने विच्छेद कर दिया था। रुपये-पैसे के अभाव में सर्वसेवा-संघ के कई काम अब

आगे बढ़ नहीं पा रहे हैं। विचार एक चीज है, विचार को व्यावहारिक बनाना दूसरी चीज है। ये दोनों चीजें, या सिद्धियां कहो, बापू के पास यथेष्ट मात्रा में थीं, देश का, स्वराज्य का 'इष्ट' साध्य करने जितनी। लेकिन स्वराज्य को 'रामराज्य' बनाना उनके लिए भी अशक्य साबित हुआ। उनके ही देश-बांधवों ने 'हे राम' पुकारकर इस दुनिया से चले जाने के लिए उनको मजबूर किया। उसके बाद विनोबा आये। उन्होंने समस्त जगत पर सत्ययुग लाने का नारा बुलंद किया, 'जय जगत' की घोषणा की। लेकिन विनोबा और उनके जगत की स्थिति आज क्या है? अभी बाबाजी मोघे विनोबा के पास रहकर आये हैं। उनसे विनोबाजी के स्वास्थ्य के जो समाचार मिले उससे मालूम हुआ कि अपना अवतार-कार्य गांधी-शताब्दी से आगे चलता रहे ऐसी उनकी इच्छा नहीं है। अभी उनकी हालत यह है कि वे न बैठ सकते हैं और न खड़े हो सकते हैं। शेषशायी भगवान बनकर अपना काम कर रहे हैं। (१४-२-६७)

उनकी हर किसी चर्चा में बापू के प्रति अद्‌भुत श्रद्धा-भक्ति का दर्शन होता था। चर्चा के दौरान उनको अधीर और व्याकुल भी मैंने कई बार देखा था, जब गांधी-मार्ग से बहुत सारा उलटा ही उन्हें दीखता था। गहरी वेदना होती थी यह देखकर उन्हें कि बापू के कैसे-कैसे स्वप्न थे जो आज एक के बाद एक भग्न होते जा रहे हैं, किंतु दूसरे ही क्षण वेदांत की दृष्टि से वे अपना समाधान भी कर लेते थे।

जो सुहृद अत्यंत समीप रहा हो, उसके संबंध में बहुत अधिक नहीं लिखा जा सकता। फिर भी थोड़े में पूछा जाए, तो इतना ही कुछ कहा जा सकता है:

धोत्रे, अर्थात मूर्तरूप संतुलन, संयम और विवेक;
धोत्रे, अर्थात अद्‌भत स्मरण-शक्ति, परिणामतः गांधी-युग का साकार विश्वकोश;
धोत्रे, अर्थात सूक्ष्म विश्लेषण, स्वस्थ आलोचन और सही परामर्श;
धोत्रे, अर्थात सरलता, अंतःस्वच्छता, सौम्यता, निस्पृहता एवं स्नेहशीलता।

—एफ १३/२, मॉडल टाउन, दिल्ली-९

एक बार किसी भक्त संत ने सुकरात से पूछा, "महात्मन ! चंद्रमा में कलंक और दीपक-तले अंधेरा क्यों?"

सुकरात मुसकराये और बोले, "तुम्हीं बताओ, तुम्हें दीपक का प्रकाश और चंद्रमा की ज्योति क्यों नहीं दिखायी पड़ती?"

भक्त कुछ सोच में पड़ गया।

सुकरात ने तब गंभीरता से कहा, "देखो! संसार की हर चीज में अच्छे और बुरे दोनों पहलू हुआ करते हैं। जिन्हें अच्छा पहलू देखने की आदत है, वे अच्छाई देखते हैं और जिन्हें केवल बुरा पहलू देखने की आदत है, वे बुराई देखते हैं। यह सब दृष्टि-भेद पर निर्भर करता है।"

उत्तर सुनकर भक्त चुप हो गया।

शैतान का बेटा

● शंकरलाल मस्करा

उसे हम आज से पचहत्तर वर्ष पूर्व प्रकाशित अंगरेज उपन्यासकार ब्राम स्टोकर की अमर कृति 'ड्रेकुला' के माध्यम से ही जानते हैं। ब्राम स्टोकर के इस उपन्यास पर अब तक न जाने कितनी फिल्में बन चुकी हैं और संभवत: भविष्य में भी बनती जाएंगी क्योंकि रहस्य-रोमांच के साथ मनुष्य की पाशविक, वीभत्स तथा जुगुप्सावर्द्धक मूल प्रवृत्तियों का जैसा चित्रण ड्रेकुला के माध्यम से इन फिल्मों में होता है, वैसा शायद और किसी पात्र के माध्यम से नहीं हो पाएगा क्योंकि काल्पनिक ड्रेकुला को ऐतिहासिक और वास्तविक ड्रेकुला की आत्मा दे दी गयी है।

ब्राम स्टोकर के उपन्यास 'ड्रेकुला' में हम जोनाथन हार्कर नामक एक युवा अटॉर्नी के माध्यम से ड्रेकुला की कारगुजारियों से परिचित होते हैं। घने जंगलों के बीच बने एक दुर्गम दुर्ग में रहनेवाला काउंट ड्रेकुला जोनाथन हार्कर से अपना रूप ज्यादा देर तक नहीं छिपाना चाहता। वह हार्कर का उपयोग कर अक्षत-किशो-

बायें से—ड्रेकुला का एक काल्पनिक चित्र। ड्रकुला की भूमिका में अभिनेता क्रिस्टोफर ली

रियों, कुमारियों के रक्त का अमृत पीना चाहता है ताकि वह अमर हो जाए। क्रिस्टोफर ली तथा अन्य अभिनेताओं ने 'ड्रेकुला' को फिल्मों में इस भांति जिया है कि उसकी भांति वे भी चिर-परिचित हो उठे। इस काल्पनिक ड्रेकुला को तो हम सब जानते हैं, पर असली, ऐतिहासिक ड्रेकुला के बारे में बहुत कम लोगों को पता है।

असली ड्रेकुला भले ही कुमारियों का रक्तपान न करता रहा हो, पर लोगों को मौत के घाट उतारने में उसने काल्पनिक ड्रेकुला को भी मात दे दी थी।

असली ड्रेकुला कब ? कहां ?

असली ड्रेकुला सन १४३१-७६ में हुआ था। वह वैलीशिया का राजकुमार था। सदियों से यह प्रदेश रूमानिया में है। यों तो उसका वास्तविक नाम व्लाड था, पर उसने अपने पिता 'ड्रेकुल' के नाम पर अपना नाम ड्रेकुला रख लिया था। 'ड्रेकुला' यानी अजहदा या शैतान और ड्रेकुला अर्थात अजहदे अथवा शैतान का बेटा। वह एक और नाम से भी जाना जाता था। वह नाम था— 'व्लाड द इंपेलर'।

कहते हैं, अपने शासन-काल में एक बार ड्रेकुला को जब पता चला कि उसके राज्य के पड़ोसी तुर्क उस पर आक्रमण की योजना बना रहे हैं तब उसने उन्हें भयभीत करने के लिए अपने ही हजारों नागरिकों की हत्या करवा दी और उनके शव सीमा पर जमा करा दिये ताकि तुर्क आक्रमण का इरादा छोड़ दें।

वैलीशिया का राजकुमार ड्रेकुला

ऐसे ही उसने एक बार कुछ भिखारियों को भीख मांगते देख लिया। उसने तुरंत घोषणा करवायी कि राजा की ओर से भिखारियों को एक भव्य भोज दिया जाएगा। जब उसके एक महल में भिखारियों की भारी भीड़ इकट्ठी हो गयी तब ड्रेकुला ने महल का द्वार बंद करवा दिया और बाद में उस महल में आग लगवा दी। शीघ्र ही भिखारियों की हंसी और खुशी दर्दनाक चीखों में बदल गयी। कहते हैं, जब महल जलकर राख हो गया तब ड्रेकुला भीषण अट्टहास कर उठा।

ड्रेकुला के कठोर, पाशविक हृदय का परिचय देनेवाली एक और घटना है। एक बार तुर्कों के कुछ दूत ड्रेकुला से
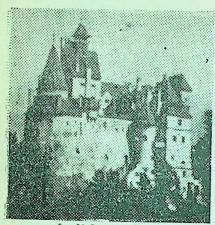
पर्यटकों के आकर्षण का केंद्र ड्रेकुला का दुर्ग

मिलने पहुंचे। जब उनसे कहा गया कि वे उसके सम्मान में अपनी टोपियां उतार दें तब दूतों ने इससे इनकार किया और विनम्रतापूर्वक स्पष्टीकरण दिया कि उनके देश में राजा के सामने टोपी उतारने का रिवाज नहीं है। इस पर ड्रेकुला क्रुद्ध हो उठा। उसने कहा, "तो फिर मैं भी तुम लोगों के रिवाज का पालन करता हूं।" और ड्रेकुला ने उनकी टोपियों को उनके सिरों पर कीलों से ठुकवा दिया। ऐसा था, विचित्र, असली ड्रेकुला।

एक लाख लोगों का कत्ल

कहते हैं, अपने छह वर्षों के शासन-काल में ड्रेकुला ने एक लाख लोगों का कत्ल-करवाया।

पर अब ड्रेकुला, अर्थात व्लाड के भी दिन फिरे हैं। उसकी कारगुजारियों से आकर्षित होकर विदेशों से पर्यटक वैलीशिया पहुंचते हैं। इनमें पूरब, पश्चिम-दोनों के पर्यटक शामिल हैं। रूमानिया सरकार के पर्यटन-विभाग ने ब्राम स्टोकर के प्रसिद्ध उपन्यास में वर्णित 'गोल्डन क्रोने होटल' जैसे होटल का निर्माण किया है, जहां बिलकुल वही खाना दिया जाता है, जिसका ब्राम स्टोकर के नायक जोनाथन हार्कर ने स्वाद चखा था।

कहते हैं, ४५ वर्ष की वय में ड्रेकुला तुर्कों के साथ हुए एक युद्ध में मारा गया था। तुर्की सैनिक उसका सिर काटकर उसे एक भाले की नोक में फंसाकर कुस्तुनतुनिया ले गये थे। उसका शेष धड़ रूमानिया के रूढ़िवादी संत अपने मठ में ले गये थे। यह मठ रूमानिया से पंद्रह मील दूर स्थित एक विशाल झील के मध्य बने वृक्षों से भरे टापू पर था।

सन १९३१ में स्नागोव नामक इस टापू की खुदाई की गयी तो इसमें मौत के घाट उतारे गये सैकड़ों लोगों के शव मिले, पर ड्रेकुला की कब्र खोदने पर उसका कंकाल नहीं मिला। एक अन्य द्वार के पास की गयी खुदाई में कुछ कंकालों के साथ लाल सिल्क के वस्त्र एवं कुछ आभूषण मिले, जिन पर ड्रेकुला का चिह्न अंकित था। ये सारी वस्तुएं बुखारेस्ट के राष्ट्रीय संग्रहालय में रखी गयी थीं, पर एक दिन ये सारी वस्तुएं गायब पायी गयीं। इनका आज तक पता नहीं लग पाया है।

—बी-३१५, राजौरी गार्डन,
नयी दिल्ली
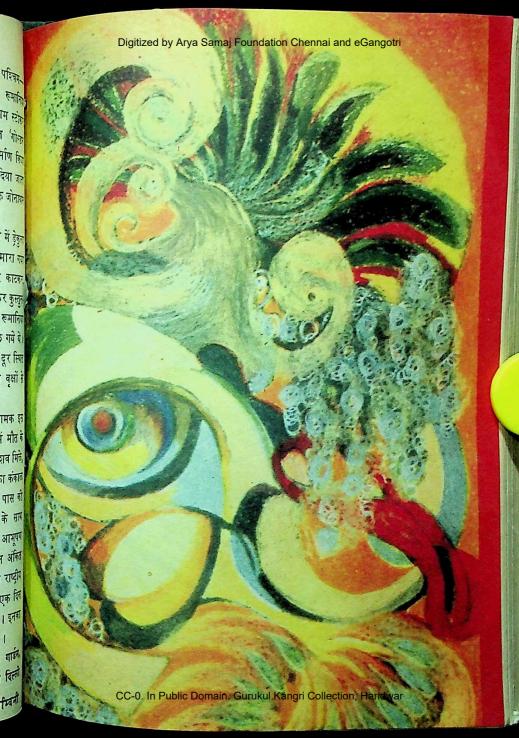
"संगीत में वह शक्ति होती है कि वह मन के तार झन्झना देता है, लेकिन संगीत की

हजार-हजार लहरियों से भी आकाश में बादल घिर आयें या दीपक की ज्योति
जल उठे, यह कदापि संभव नहीं है। संगीत हमारी मनःस्थिति के सूक्ष्मतम तंतुओं को
झकझोर सकता है, वह चमत्कार और जादू नहीं दिखा सकता। यदि बैजू बावरा मल्हार
गाते थे और उससे बादल घिर आते थे या तानसेन के स्वरों से दीपक जल उठते थे
तो ये सब उन्हें उपलब्ध तांत्रिक शक्तियों या कुंडलिनी-शक्ति पर उनके अपने नियंत्रण
का प्रताप था। आज का कोई बड़े-से-बड़ा गायक बिना योग-सिद्धि के ये सब करिश्मे
नहीं दिखा सकता। संगीत जीवन की एक सरस गति है, जादू नहीं।"

उस शाम पंडित रविशंकर से बातें करते हुए संगीत की चेतना के संबंध में जो कुछ
ज्ञान हमें प्राप्त हुआ, वह चौंका देने वाला था।

संगीत जादू नहीं है
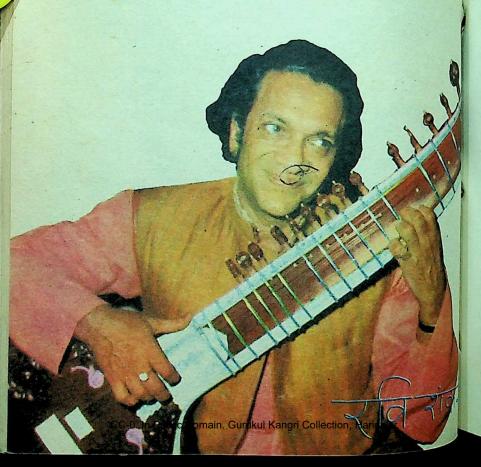
—रविशंकर

वर्षों से मन और मस्तिष्क किसी बात को मानते रहें और कोई अचानक आकर उसे छिन्न-भिन्न कर दे, ऐसा ही कुछ उस दिन पंडित रविशंकर से बातचीत करके हुआ था।

सुप्रसिद्ध सितारवादक रविशंकर का जन्म सन १९२० में बनारस में हुआ। बड़े भाई उदयशंकर की संगीत-नृत्य के प्रति रुचि और देश-विदेश में ख्याति ने रविशंकर को भी आकर्षित किया। विभिन्न वाद्यों से निकलती हुई स्वरलहरियां रविशंकर का मन आंदोलित कर जातीं। जब वे ९ वर्ष के ही थे तब उदयशंकर के नर्तकों और संगीतज्ञों के दल के साथ यूरोप चले गये। वर्षों वहां रहकर इस दल ने कई कार्यक्रम प्रस्तुत किये। पाश्चात्य और भारतीय संगीत की सूक्ष्मता को जानने का भी अवसर रविशंकर को मिला।

१९३२ में भारत लौटने पर रविशंकर ने उस्ताद अलाउद्दीन खां से संगीत की शिक्षा लेना प्रारंभ किया और स्वयं को संगीत के प्रति समर्पित कर दिया। वर्षों की साधना के पश्चात रविशंकर ने 'बीनकार' घराने की परंपरा में अपने-आपको दीक्षित कर लिया। सन १९४४ के बाद रविशंकर ने सभाओं में सितार-वादन प्रारंभ किया। फिर उन्हें जो ख्याति मिली, उससे सभी परिचित हैं।

पंडित रविशंकर आजकल अधिकतर अमरीका में रहते हैं और वहीं सितार का प्रशिक्षण देते हैं। पिछले दिनों वे भारत आये हुए थे। अचानक हमने उन्हें पकड़ा और फिर तो उनसे जमकर बातें हुईं।

बातचीत की शुरूआत 'मेघमल्हार' और 'दीपक राग' से हुई। उसी को स्पष्ट

करते हुए पंडित रविशंकर ने कहा, "मात्र संगीत से किसी तरह का चमत्कार करना संभव नहीं है। मैंने योग-साधना नहीं की, इसलिए मैं सितार बजाकर न तो बादलों को बुला सकता हूं और न तेल की बाती में ज्योति पैदा कर सकता हूं। मैं श्रोताओं की आंखों में आंसुओं के बादल जरूर लाकर उन्हें बरसा सकता हूं।" चर्चा के दौरान प्रश्न-उत्तरों का अटूट सिलसिला चलता रहा :

प्रश्न—अच्छे संगीत की पहचान क्या है?

उत्तर—जो संगीत कानों को अच्छा लगे, सुनते-सुनते आंखें बंद हो जाएं, किसी की याद आये—चाहे प्रिय की या भगवान की, दिल में मीठा-मीठा दर्द हो, आंसू बहनें लगें—वही सही और अच्छा संगीत है।

प्रश्न—क्या आप रागों के गायन-वादन के समय के पुनर्वर्गीकरण की आवश्यकता महसूस करते हैं ?

उत्तर—भारत में रागों के गाने के समय का वर्गीकरण बहुत वैज्ञानिक है, लेकिन शायद सुदूर भविष्य में इस तरह की कोई पाबंदी न रहे। कोई भी राग किसी भी समय गाया अथवा बजाया जा सके। कर्नाटक-संगीत में तो बहुत समय पहले ही यह प्रतिबंध हट चुका है। पहले वहां प्रत्येक राग के लिए समय नियत था, लेकिन लगभग पिछले पचास-साठ वर्षों से वहां यह पाबंदी नहीं रही। अब कोई भी राग व किसी भी समय गाते अथवा बजाते हैं। एक प्रकार से यह उचित भी है। कारण यह है कि संगीत-सभाएं प्रायः संध्या के समय होती हैं। यदि निर्धारित समय पर ही राग गाये जाएं तो सवेरे और दोपहर के रागों को गाने का अवसर कभी नहीं आएगा। संगीत की वह समृद्ध परंपरा जो इतने वर्षों से चली आ रही है, धीरे-धीरे समाप्त हो जाएगी। इसलिए संगीत को अपनी जरूरत के अनुसार ढालना चाहिए, जैसे हम लोग खाना खाने के बाद रसगुल्ला खाते हैं, गुजरात में उसे पहले खाया जाता है।

प्रश्न—सामान्यतः लोगों की धारणा है कि संगीत मंद गति से चलनेवाला माध्यम है और गायक श्रोताओं के साथ तादात्म्य करने में समय लेता है। यह धारणा कहां तक सही है?

उत्तर—कुशल संगीतकार कम समय में भी वह प्रभाव उत्पन्न कर सकता है जो कई लोग घंटों गाकर भी नहीं कर सकते। दूध को जितना अधिक पकाया जाए, उतना ही स्वादिष्ट होता है, परंतु कम होकर भी तो वह स्वाद देता है। जितना अनुभव और अभ्यास हो, उतना ही कलाकार अपने स्वरों से दिल को अधिक स्पर्श करेगा। उस्ताद अमीर खां, फय्याज खां, ओंकारनाथ ठाकुर आदि के तीन-तीन मिनट के रिकार्ड भी जो आनंद देते हैं, अपरिपक्व कलाकारों को घंटों सुनने में भी वह आनंद नहीं मिलता। मैं समझता

हूं कि श्रोताओं को प्रभावित करने के लिए अधिक देर की सीमा सही नहीं है। जितनी आवश्यकता हो उतना ही प्रदर्शन किया जाए तो अच्छा रहता है। यदि आवश्यकता कम चावल खाने की हो, और खा लिया जाए ज्यादा, तो बदपरहेजी ही होगी; पर यदि परिस्थिति हो और समझदार श्रोता हों, समय की पाबंदी भी न हो तो अधिक समय तक गाने-बजाने में ही आनंद आता है। संगीत का वह क्षण 'आइडियल' होता है। इसलिए कलाकार को स्वयं अपने श्रोताओं को पहचानना चाहिए।

प्रश्न--स्वाधीनता के पश्चात भारतीय संगीत जनसामान्य में अधिकाधिक लोकप्रिय हुआ है। लेकिन क्या यह सही नहीं है कि उसके कारण शास्त्रीय पक्ष गौण हुआ है?

उत्तर--स्वाधीनता के पश्चात कला के हर क्षेत्र में लोगों की रुचि बढ़ी है। संगीत के प्रति भी लोगों का रुझान अधिक ही हुआ है। लोकप्रियता के माने अधिक समय तक गाना-बजाना नहीं है। स्वर कान में पड़ने चाहिए। फिल्मी संगीत के माध्यम से ही लोगों में स्वरों की ओर रुचि पैदा होती है। इसीलिए जब सड़क पर चलता हुआ आदमी फिल्मी गाने गाता है तब मुझे अच्छा लगता है। कम-से-कम स्वर की पहचान तो हो रही है। क्या पता थोड़े दिन के बाद शास्त्रीय संगीत को भी वह समझने लगे; लेकिन इससे शास्त्रीय पक्ष गौण नहीं हुआ है।

साक्षात्कार के क्षण
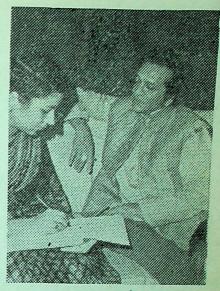
इसकी भी वजह है। इधर स्वाधीनता के बाद बड़े 'टेलेंटेड' गायक-गायिकाएं सामने आयी हैं। वे लोग चाहे कम देर के लिए गायें या अधिक देर के लिए--लोग उनको सुनने जाते हैं। उन लोगों ने पुरानी परंपरा को भी कायम रखने की कोशिश की है और नयेपन को भी वे अपनी शैली में ला रहे हैं। एक बात फिर भी है कि लोग नामी कलाकारों को ही सुनना पसंद करते हैं। कोई कलाकार चाहे कितना ही संगीत पर अधिकार रखता हो, पर यदि उसका नाम नहीं है तो लोग सुनने नहीं जाते। इसका कारण कलाकारों का श्रोताओं से परिचित होना है। शायद समय के साथ-साथ नये कलाकारों की भी 'पहचान' होने लगेगी।

प्रश्न—क्या संगीत लोकप्रिय होने के साथ-साथ फैशन नहीं बनता जा रहा है? संगीत-सभाओं में टिकटों की दरें इतनी ऊंची होती हैं कि सही श्रोता तो जा ही नहीं पाते। संगीत-सभाओं पर से टिकट हटा दिया जाए और उसका आयोजन किसी 'ऑडीटोरियम' के बजाए खुले मैदान में हो ताकि ज्यादा-से-ज्यादा लोग सुनने जा सकें तो . . . ?

उत्तर—यह किसी सीमा तक ठीक है कि कई बार असली श्रोता संगीत-सभा में सुनने नहीं जा पाते, लेकिन बिना टिकट के संगीत-सभा के आयोजन की सलाह मैं नहीं दूंगा। कुछ-न-कुछ तो टिकट रहना ही चाहिए। इससे नियंत्रण रहता है। अभी यहां की 'ऑडियंस' इतनी प्रबुद्ध नहीं हुई कि बिना पैसा खर्च किये वह शांति से बैठ सके, लेकिन मेरा विश्वास है कि जिस तेजी से संगीत का प्रचार हो रहा है, उससे शीघ्र ही ऐसी व्यवस्था की जा सकेगी। वैसे भी लोगों की अभिरुचि संगीत के प्रति पहले से बहुत बढ़ी है।

प्रश्न—श्रोताओं को प्रभावित करने के लिए संगीतकारों द्वारा अपनाये जाने-वाले 'गिमिक टच' के बारे में आपके विचार क्या हैं?

उत्तर—श्रोताओं को प्रभावित करने के लिए कभी-कभी स्वरों को 'गिमिक टच' दिया जाता है। उसी को लोग 'आलंकारिक' कह देते हैं। लेकिन संगीत सर्वांग का नाम है। उसमें नवरसों की स्थिति है। उसमें करुणा भी है, शांति भी; प्रेम भी है, भक्ति भी; स्वरों का कंपन भी है, अनुकंपन भी; वह इहलोक का आनंद भी देता है और पारलौकिक सुखद अनुभूति भी; वह श्रृंगार की भावना भी पैदा करता है और भक्ति की भी।

मैं जब सितार बजाता हूं तब पहले आलाप, फिर जोड़, झाला, ख्याल, फिर तान बजाता हूं। सुरतान गायन और वादन

दोनों में महत्त्वपूर्ण है, लेकिन वादन में गायन का ही आधार लिया जाता है। गायन के 'ध्रुपद' अंग का 'नोम' वादन में 'मीड़' और 'नोम' के रूप में बजाया जाता है। यह 'नोम' मूलतः 'ओ३म्' का तद्भव रूप है और 'अनरीत' 'अनंत हरिनारायण' का। संगीत के मूल में शांत रस व्याप्त है, जो सर्वरस में परिणत हो जाता है। उसे किसी प्रकार के अलंकार अथवा आडंबर की जरूरत नहीं है।

बाबा—उस्ताद अलाउद्दीन खां—

कहते थे कि 'ध्रुपद' हमारी मां-बहन के समान है, जिसे जरा-से भी शृंगार की आवश्यकता नहीं है। वह वैसे ही बहुत पावन और आकर्षक है। 'ख्याल' नवयुवती है, जो थोड़ा-सा 'टच' कर लेती है। 'ठुमरी' नवविवाहिता है, जो पूरी तरह लेप-आभूषण से मंडित और सुसज्जित है। लेकिन संगीत से इन सबमें से किसी एक को भी अलग नहीं किया जा सकता, क्योंकि

'संगीत' सर्वांग का ही नाम है। जैसे केवल आंख, नाक या कान को पूरा 'शरीर' नहीं कह सकते, वैसे ही किसी एक अंग को संगीत भी नहीं कह सकते।

कभी-कभी सर्वांग का वादन ही 'माइक' की अव्यवस्था के कारण लाउड हो जाता है और उसे श्रोता 'आलंकारिक' नाम दे देते हैं।

वास्तव में आदमी की तरह संगीत की भी दो श्रेणियां हैं—'इंट्रोवर्ट' और 'एक्स्ट्रोवर्ट'। पहली प्रकार का वादन श्रोता को भीतर-ही-भीतर स्वर-लहरियों में विचरण कराता है तो दूसरी प्रकार का वाह्य आनंद देता है। इसमें तबलावादक के साथ 'लड़ंत' का विशेष स्थान है।

प्रश्न——तबलावादक के साथ इस लड़ंत या सवाल-जवाब के कारण क्या सितार-वादन गौण नहीं हो जाता ?

उत्तर—नहीं, ऐसा नहीं है। यदि

रविशंकर : एक चिंतनशील भाव मुद्रा

तबला आवश्यकता के अनुरूप बजाया जाए तो जरूरी नहीं कि 'कुपच' हो। वादन 'सर्वांग' वादन का ही नाम है, इसलिए तबले का भी महत्व है, यह वादन की परंपरा है। मैंने तो अल्लारखा या किशन महाराज के साथ ही बजाया है। मेरे साथ यदि मेरे इन दोनों प्रिय तबला-

वादकों में से कोई हो। तभी बजाने में आनंद आता है। मुझे अपनी सितार-वादन-शैली पर गर्व है। 'गीतकार' घराने की यह शैली ध्रुपद अंग से प्रभावित है। मैं वादन में सभी पक्षों को महत्त्व देता हूं।

प्रश्न--विदेश में रहकर भारतीय संगीत के साथ-साथ आपने पाश्चात्य संगीत को भी अपनाया है। दोनों विधाओं में आपके अनुभव क्या है?

उत्तर--दरअसल मेरी दो 'आइडेंटिटी' हैं--एक, विशुद्ध सितार-वादक की, जहां मैं परंपरागत शास्त्रीयता को ही मान्यता देता हूं और जहां तनिक भी हेर-फेर की गुंजाइश नहीं है, और दूसरा रूप कंपोजर का है, जहां मैं किसी प्रकार का भी प्रयोग करने में नहीं हिचकिचाता। अपनी इसी 'आइडेंटिटी' के अंतर्गत मैंने यहूदी मेनुहिन के साथ भी संगीत-सभाओं में बजाया है। 'शंकर फेमिली ऐंड फ्रेंड्स' नाम से एक रिकार्ड भी है, जिसमें भारतीय और पाश्चात्य संगीत, दोनों के ही आधार पर मैंने स्वरों को कंपोज किया है।

प्रश्न--आपके बनाये रागेश्वरी, जोगेश्वरी, आदि नये रागों की रचना के पीछे क्या उद्देश्य है?

उत्तर--स्वाभाविक रूप से जो स्वर मेरे मन में गूंज उठे, उन्हीं के आधार पर नये रागों की रचना कर दी। राग को सोचकर नहीं बनाया जाता। जब कई दिन तक कुछ स्वर-लहरियां मन में उठती हैं और आंदोलित करती हैं, तब एक नया राग जन्म लेता है। बाद में विचार करके उसके गाने-बजाने के समय आदि को निश्चित किया जाता है। कौसी तोड़ी, बैरागी तोड़ी, रागेश्वरी, जोगेश्वरी, कामेश्वरी, नटभैरव, तिलक श्याम, बैरागी रसिया, पंचमसेगारा आदि नये रागों की संरचना मैंने की है। ये राग अब संगीत-जगत में बहुत प्रचलित भी हैं।

प्रश्न--बहुत से नये कलाकारों में आजकल विदेशों के प्रति आकर्षण बढ़ता जा रहा है। यह किस सीमा तक उचित है?

उत्तर--बिलकुल ठीक नहीं है। पहले अपने देश में पैर जमाकर फिर विदेश जाना चाहें तो जाना चाहिए, वरना अपरिपक्व अवस्था में जब वे वहां जाते हैं तब थोड़े से मान और धन की चकाचौंध से प्रभावित हो जाते हैं। बाद में जब वे स्वदेश लौटते हैं और उन्हें मान्यता नहीं मिलती तब वे 'फ्रस्ट्रेटेड' हो जाते हैं।

प्रश्न--नये संगीतकारों में कौन-कौन लोग आपको अधिक पसंद हैं?

उत्तर--बहुत से कलाकार हैं जिन्होंने संगीत को नये सिरे से संवारा-सजाया है। निखिल, परवीन, लतीफ, किशोरी, अमजद, शरनरानी, संयुक्ता पाणिग्रही, कनक, आदि तो बहुत अच्छे कलाकार हैं। पुराने लोगों में सितारवादकों में विलायतखां बहुत अच्छा बजाता है। वह और उसके शिष्यों ने गायकी अंग की जो शैली अपनायी है, वह मुझे पसंद है।

--प्रस्तोता : सुनीता बुद्धिराजा

पंजाबी-कहानी

• गुरुमुखसिंह जीत

यह माला अपनी लीजे

उस रोज वर्गीज बहुत खुश था। पिछले कई वर्षों की मेहनत के बाद उसके गिरजे में स्कूल खुल पाया था। वह और अन्य पादरी पैसे इकट्ठे करने के साथ-साथ गिरजे के साथ वाली जमीन पर स्कूल की बिल्डिंग बनवाते रहे थे। उन्होंने इस स्कूल को शुरू करने के लिए दिन-रात एक कर दिया था।

और आज स्कूल का उद्घाटन रोमन कैथोलिक चर्च के बिशप ने स्वयं आकर किया था। वे कोट्टायम से आये थे। उन्होंने फादर-वर्ग की बहुत तारीफ की जिन्होंने स्कूल की स्थापना के लिए कोई कसर न छोड़ी थी। बिशप ने मत्तन-चेरी के लोगों का विशेष रूप से और कोचीन, एरनाकुलम और अलवई के लोगों को आम तौर पर धन्यवाद दिया जिनकी सहायता से इस स्कूल का सपना साकार हो सका था।

मगर खुशी के इस महान और पवित्र दिन फादर वर्गीज को यों लगा जैसे पाप की एक तेज छुरी उसके सीने के आर-पार हो गयी है। वह पश्चाताप में डूब गया।

वैसे बात तो कोई इतनी बड़ी न थी पर फादर वर्गीज के मन में पापभरे विचार का एक कण चमकने लगा था। उस समय वह पैंतीस साल का था। एलप्पी के रोमन कैथोलिक स्कूल से मैट्रिक करने के बाद से ही वह गिरजे में काम कर रहा था। उसे बचपन से ही यीसू मसीह पर
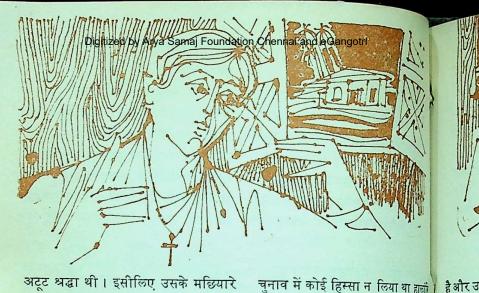
अटूट श्रद्धा थी। इसीलिए उसके मछियारे पिता जोजफ ने उसे सेमिनरी में दाखिल करवाया। वर्गीज से मछियारे का पैदायशी पेशा छूट गया। सोलह से पैंतीस वर्ष तक उन्नीस सालों का यह लंबा सफर उसने यीसू की शरण में तय किया। वह हर समय माला के मोती फिराता रहता। कोई विरोधी विचार उसके मन में पैदा होता तो वह अपनी छाती पर क्रास का चिह्न बनाता और घुटनों के बल झुककर यीसू मसीह की शरण लेता। पूरी सेमिनरी में उसका बहुत सम्मान किया जाता। उसकी श्रद्धा, नम्रता और ईश्वर-भक्ति को देखकर बिशप ने उसे अच्छा-ऊंचा स्थान दिया था। फलतः वह यीसू मसीह के पैगाम को लोगों तक पहुंचाने के लिए ज्यादा गंभीरता से जुट गया।

स्कूल की मैनेजिंग कमेटी ने स्टाफ चुना था। अध्यापक रखे थे—पुरुष भी और स्त्रियां भी। फादर वर्गीज ने इस चुनाव में कोई हिस्सा न लिया था हालांकि मैनेजर ने उसे इंटरव्यू-बोर्ड में बैठने के लिए कहा था। वह सारे झमेले से अलग उद्घाटन-समारोह की तैयारी में जुटा रहा था। जब कोटाय्यम के बिशप अपना भाषण दे रहे थे तब फादर वर्गीज सिर झुकाये माला फिरा रहा था। अचानक किसी के खांसने की आवाज आयी और उसने सिर ऊपर उठाया। अनचाहे ही उसकी निगाह एक तरफ बैठी शिक्षिकाओं की ओर मुड़ गयी और पल भर के लिए एक लड़की पर रुक गयी। वह थी सफेद साड़ी और सफेद ब्लाउज में सादगी की मूर्ति—माधवी कुट्टी। माधवी कुट्टी की नजर भी फादर वर्गीज की चोर निगाहों से टकरा गयी और उसने शर्म से अपनी आंखें झुका लीं।

अगले ही पल जब माधवी कुट्टी ने फिर निगाहें ऊपर कीं तब उसने देखा फादर छाती पर सूली का चिह्न बना रहा

है और उसके हाथ से माला के दाने बिजली की तेजी से फिसल रहे हैं। माधवी के दिल की धड़कन तेज हो गयी। उसके लिए यह नया अनुभव था। बी. ए. पास करके वह कुछ साल बेकार रही थी। यह उसकी पहली नौकरी लगी थी और वह बहुत झिझकती थी। पता नहीं, इस धड़कन का कारण कोई भय था या फादर वर्गीज की निगाह की चमक की कोमलता, जिसकी उसे बिलकुल आशा न थी?

और अब सांध्य प्रार्थना के समय फादर वर्गीज चैपल में यीसू मसीह की मूर्ति के सामने गिड़गिड़ाकर अपने पाप का प्रायश्चित कर रहा था—"लार्ड, मुझ पर दया कर।"

फिर कुछ रोज फादर वर्गीज हर समय गिरजे में व्यस्त रहा।

एक दिन प्रिंसिपल ने उसे बुलवा भेजा। अब फादर वर्गीज को जाना ही पड़ा। स्टाफ के सभी सदस्य वहां थे। प्रिंसीपल मिस्टर एंटनी ने सबका फादर से परिचय करवाया। माधवी कुट्टी के पास पहुंचकर प्रिंसिपल ने कहा, "फादर, यह लड़की पहली बार नौकरी कर रही है। इसे कोई अनुभव नहीं, इसलिए इसे आपकी और हमारी सबकी सहायता की आवश्यकता होगी। यों है यह बड़ी मेह-नती और आज्ञाकारी।"

माधवी कुट्टी ने अपनी आंखें झुका लीं। मगर ऐसा करते हुए भी उसने देख लिया कि फादर के चेहरे का रंग बदल गया है और घबराहट की एक परछाईं उसके चेहरे से गुजर गयी है।

कुछ देर बाद फादर वर्गीज प्रिंसी-पल के साथ अपने कमरे में वापस आ गया। कुरसी पर बैठने से पहले उसने क्रॉस का निशान बनाया और धीरे-धीरे स्कूल की समस्याएं समझने में डूब गया।

कुछ महीने इसी तरह बीत गये। फादर वर्गीज की झिझक अब खत्म हो

चुकी थी। अब वह माधवी कुट्टी से बात करते समय क्रॉस का निशान न बनाता बल्कि उसे अध्यापन के नये-नये पहलू समझाता।

एक रोज फादर वर्गीज ने उसके काम की प्रशंसा करते हुए कहा, "माधवी, तेरा अच्चन (पिता) कहां रहता है?"

"उद्योगमंडल। वे जीप-ड्राइवर हैं फर्टीलाइजर फैक्टरी में।"

"मैं उसे बताना चाहता हूं कि उसकी बेटी कितनी होशियार है और स्कूल में कितना अच्छा काम कर रही है।"

माधवी कुट्टी शरमा गयी। लाली की एक पतली-सी। तह उसकी कनपटी से चलकर सारे चेहरे पर फैल गयी।

"क्या तुम मुझे उससे मिलवा सकती हो? तुम जिस दिन कहो मैं तुम्हारे साथ चल सकता हूं।"

माधवी कुट्टी की शर्मभरी आंखों के सामने एक रंग निखर आया। उसने स्वयं को गौरवान्वित अनुभव किया। बोली, "क्यों नहीं फादर? आप तो हमें सम्मान दे रहे हैं!

माधवी ने देखा फादर के चेहरे पर कई रंग आपस में घुलमिल गये हैं। उसने माधवी के कंधे पर आशीषभरा हाथ रखा। माधवी के नंगे कंधे को ऐसा लगा जैसे उनका हाथ बड़ी तेजी से कांप रहा है और यह कंपकंपाहट उसके रोम-रोम पर तैरती उसके समस्त अस्तित्व को एक झटका दे गयी।

★★★

'मातृभूमि', 'मलयाला नाडु' और अन्य कई दैनिकों में पहले पृष्ठ पर खबर छपी कि मत्तनचेरी गिरजे के फादर वर्गीज ने रोमन कैथोलिक चर्च से त्याग-पत्र दे दिया है ताकि वह एक अध्यापिका माधवी कुट्टी से विवाह कर सके। यह जानते हुएं भी कि चर्च से उसे विवाह की आज्ञा नहीं मिल सकती, फादर ने कोटाय्यम के बिशप से विवाह के लिए अनुमति मांगी थी। अनुमति न मिलने पर उसने त्यागपत्र दे दिया।

फादर वर्गीज के इस निर्णय ने केरल के कैथोलिक समुदाय में खलबली मचा दी।

★★★

वर्गीज ने कोचीन के सर्वोत्तम होटल 'सी लार्ड' की आठवीं मंजिल में एक कमरा रिजर्व करवा रखा था। वहीं आज आठ बजे पत्र-प्रतिनिधि उससे मिलने आ रहे थे। माधवी से उसका विवाह आम चर्चा

का विषय बन गया था। वर्गीज ने टैक्सी मंगवायी और थोड़ा-सा सामान लेकर माधवी के साथ 'सी लार्ड' पहुंच गया। मैनेजर ने स्वयं उनका स्वागत किया और विशेष रूप से सुसज्जित कमरे में ले गया। पत्र-प्रतिनिधि भी पहुंच गये थे। वर्गीज माधवी कुट्टी को अपनी बांहों का सहारा देकर वहां ले आया। माधवी बहुत सुंदर लग रही थी। 'सी लार्ड' में वह सचमुच सागर-पुत्री लगती थी। पत्र-प्रतिनिधियों का खयाल था कि वर्गीज ने चर्च से त्याग-पत्र देकर कोई गलती न की थी।

इंटरव्यू के बाद प्रेस-फोटोग्राफरों ने कई पोजों में उनके फोटो ले लिये तो वे सबसे ऊपरवाली मंजिल पर अपने कमरे में आ गये। बेयरा डिनर रखकर चला गया। वर्गीज के लिए यह सारा अनुभव नया था।

बाद में वर्गीज ने माधवी को बताया कि उसने तो अब तक अपना जीवन यों ही सड़ने दिया है। जिंदगी का असल सुख क्या है, यह तो उसे अब पता चला है।

इस तरह दिन बीतते गये। वर्गीज का व्यक्तित्व माधवी से एकरूप होता गया। अब उसने नौकरी भी कर ली। माधवी को किसी दूसरे स्कूल में नौकरी मिल गयी। धीरे-धीरे लोगों की उत्सुकता खत्म होती गयी। स्वप्न या तो गायब हो गये या उनका महत्त्व समाप्त हो गया।

एक दिन एर्नाकुलम के मेन बाजार में वर्गीज को गिरजे का पुराना साथी फादर डीसूजा मिल गया। वे दोनों एक छोटे से होटल में बातें करने बैठ गये। फादर डीसूजा उससे उसके विवाहित जीवन का हाल पूछने लगा। उसके प्रश्नों में उत्सुकता थी।

"पहले तो मुझे यों लगा जैसे बिजली की चकाचौंध ने मुझे चुंधिया दिया है और मैं इंद्रधनुष के रंगों में ही बस गया हूं।"

फादर डिसूजा ने इसे बीच में ही टोककर कहा, "काश... !"

वर्गीज ने कहना जारी रखा, "पर फिर पता लगा कि इंद्रधनुष के रंग अलग-अलग होने पर धरती के रंगों की तरह ही लगते हैं। किसी में भी कोई अलग खिचाव नहीं। मगर आप क्या कहने जा रहे थे फादर... काश?"

"काश, तुमने यीसू मसीह की शरण न छोड़ी होती! ऐसा लगता है जैसे पाप ने
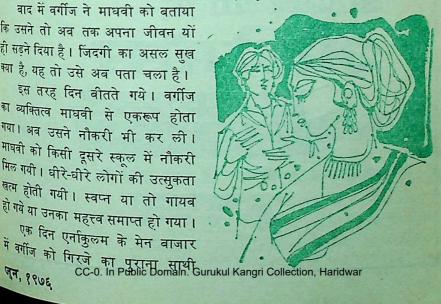
तुम्हारी आत्मा को ग्रस लिया है !"

"नहीं, नहीं, फादर," वर्गीज ने प्रतिरोध करना चाहा फिर कुछ ठहरकर बोला, "हां, फादर! आप शायद सच कह रहे हैं। मैंने चर्च से गद्दारी की, उससे मुख मोड़ा । लार्ड मुझे क्षमा कर दो।"

"यीसू मसीह सबके गुनाह माफ करता है । वह तुम्हारे क्यों न करेगा ? तुम तो उसके सेवक रहे हो।"

इस घटना के बाद वर्गीज के दिमाग में अनजाने ही पाप का अहसास घुस आया। उसने कई बार स्वयं को समझाया कि उसने चर्च से त्यागपत्र दे दिया है और वह अब साधारण जीवन व्यतीत कर रहा है। पति-पत्नी के संबंधों में पाप का कोई स्थान नहीं, फिर भी उसे विश्वास न आता।

अब वह जब कभी भी माधवी को प्यार करता तब बाद में अपनी कमजोरी पर शर्मिंदा होता । जब माधवी आंखों से ओझल हो जाती तब वह छाती पर सूली का चिह्न बनाता। उसकी माला भी अब मेज की निचली दराज से निकलकर ऊपरवाली दराज में आ गयी थी। जब माधवी सो रही होती, वह माला निकालकर फिराने लगता और प्रार्थना में जुट जाता।

धीरे-धीरे पाप के अहसास ने उसे इस तरह जकड़ लिया कि जब कभी भी माधवी उसकी तरफ प्यार से देखती या उसकी तरफ बढ़ती तब वह क्रॉस का चिह्न बनाने लग जाता और उसे टोक देता।

वह कहता, "मरियम ने यह जीवन हमें इसलिए नहीं दिया कि हम पापों में खो जाएं।"

"क्या कह रहे हो ? इसमें पाप कहां है ?"

"तुम यीसू मसीह के सामने प्रार्थना करके पूछो । ये सब पाप ही है । हमें इससे बचना चाहिए।"

यह सुनकर माधवी कांप जाती और पीछे हट जाती । आहिस्ता-आहिस्ता पाप का भय उसे भी अपनी पकड़ में जकड़ता गया । वह अब हर समय स्वयं को प्रार्थना में मग्न रखने का प्रयत्न करती। एक रोज माधवी की चाह बहुत प्रबल हो उठी । उसने साहस किया । रात को खाना खाने के बाद वह अचानक पति से लिपट गयी । वर्गीज चौंक गया, स्वयं को माधवी की पकड़ से छुड़ाकर उसने सूली का निशान बनाया और फिर घुटनों के बल झुककर यीसू मसीह के आगे प्रार्थना करने लगा ।

माधवी सिसकती हुई अपने बिस्तर पर आ लेटी। उधर वर्गीज सारी रात तक माला फिराता रहा ।

इस बीच एक दिन माधवी को अपने मातृत्व का बोध हुआ। प्रसन्नता से उसका रोम-रोम पुलक उठा। वह वर्गीज को सूचना देने बढ़ी । पहले तो लज्जा ने उसे रोका, पर नये अहसास ने उसे पाप के अहसास से मुक्त कर दिया और वह बड़े प्यार से कहने लगी, "डार्लिंग, तुम अब जल्दी ही अच्चन बन जाओगे और मैं माधवी

अम्मा ।"

वर्गीज कांप उठा और स्वभाववश क्रॉस का निशान बनाते हुए घुटने टेककर प्रार्थना करने लगा। पर प्रसन्नता से पागल माधवी ने वर्गीज को आलिंगन में लेना चाहा तो उसे क्रोध आ गया और उसने मांधवी को चांटा मार दिया और हांफता

हुआ यीसू मसीह के आगे प्रार्थना करने लगा।"

★★★

धीरे-धीरे माधवी की आत्मा बुझती गयी। वह हर समय उदास रहने लगी, लेकिन उसका रूप निखरता जा रहा था। उसका चेहरा और सुनहरा होता गया। जैसे-जैसे गर्भ के दिन बढ़ते गये—वह और भी कमनीय होती गयी।

कभी-कभी माधवी के भीतर ज्वाला भड़क उठती। पर धीरे-धीरे उसका जोश ठंडा होता गया, आग बुझती गयी, राख भी ठंडी हो गयी।

एक रोज वर्गीज अपने दफ्तर में बैठा था कि उसके बॉस की प्राइवेट सेक्रेटरी मिस अनुपमा उसके पास आयी और सामने आकर बैठ गयी। उसे देखते ही उसके भीतर कई कोमल भाव करवटें बदलने लगे।

जब वह घर पहुंचा, माधवी दरवाजे पर उदास खड़ी थी। साफ-सुथरे मगर सादा कपड़ों में माधवी उसे बहुत सुंदर लगी। उसने कमरे में घुसते ही उसे चूम लिया। लेकिन माधवी निर्विकार खड़ी रही।

खाना खाकर वर्गीज ने माधवी का हाथ थाम लिया और उसकी आंखों में देखकर मुसकरा दिया।

पता नहीं, माधवी किन विचारों में खोयी हुई थी! लगता था, जैसे मरियम से राह पूछ रही हो।

वर्गीज ने उसे पकड़कर पलंग पर बैठा लिया और फिर उठकर कमरे की बत्ती बुझा दी। वह अभी माधवी के करीब लेटा ही था कि वह चौंककर उठ बैठी। उठकर उसने कमरे की बत्ती जला दी और मेज से माला उठाकर वर्गीज की ओर फेंक दी। स्वयं वह उसी समय वहीं छाती के सामने क्रॉस का निशान बनाते हुए घुटने के बल बैठ यीसू मसीह के सामने प्रार्थना करने लगी—

—८२ हेमकुंट, नयी दिल्ली-११००४८

जिन्हें पढ़ने के लिए विदेशियों को हिंदी सीखनी पड़ी

● किशोरीदास वाजपेयी

प्रातःस्मरणीय महामहोपाध्याय पंडित गौरीशंकर हीराचंद ओझा इतिहास और पुरातत्त्व के असाधारण विद्वान थे और हिंदी के अद्वितीय आग्रही थे। अपनी राष्ट्रभाषा का इतना आग्रही विद्वान मैंने दूसरा न देखा, न सुना। इस शताब्दी के तीसरे दशक में मैं उनके पवित्र नाम से परिचित हुआ जबकि उनकी एक लेख-माला 'माधुरी' में प्रकाशित हो रही थी। लखनऊ से प्रकाशित होनेवाली 'माधुरी' अपने समय की सर्वोत्तम हिंदी मासिक पत्रिका थी। पंडित कृष्णबिहारी मिश्र और मुंशी प्रेमचन्द जी इसके संपादक थे। बड़े-बड़े विद्वानों की रचनाएं इसमें प्रकाशित होती थीं। इसी में ओझा महोदय की लेखमाला 'राजस्थान के इतिहास को भ्रष्ट करने का प्रयत्न' शीर्षक से निकल रही थी। इस लेखमाला में ओझाजी श्री विश्वंभरनाथ रेऊ के एक इतिहास-ग्रंथ का खंडन कर रहे थे। रेऊ साहब जोधपुर नरेश के आश्रित थे। ओझा महोदय किसी भी नरेश के आश्रित न थे और इतिहास में अपनी स्वतंत्र बुद्धि का उपयोग करते थे। वे अजमेर-संग्रहालय के क्यूरेटर थे और शिलालेखों को पढ़ते-पढ़ते प्राचीनतम भारतीय लिपियों के अद्वितीय ज्ञाता हो गये थे। अपने इस ज्ञान के बल से वे पुरातत्त्व के विश्वमान्य पंडित हो गये थे। उन्होंने हिंदी - साहित्य - सम्मेलन की अध्यक्षता करके और उसकी 'साहित्य-वाचस्पति' उपाधि को स्वीकार करके अपनी हिंदी-निष्ठा का परिचय दिया।

हिंदी का आग्रह

शताब्दी के चतुर्थ दशक के आरंभ में संसार को यह जानकारी मिली कि ओझाजी प्राचीन भारतीय लिपियों का विश्लेषण एक महाग्रंथ के रूप में करनेवाले हैं। इस जानकारी से पुरातत्त्व-विशेषज्ञों को महान हर्ष हुआ, पर पाश्चात्य विद्वानों को जब यह मालूम हुआ कि वे अपना यह ग्रंथ हिंदी में लिखेंगे तब उन्हें क्षोभ हुआ और लगभग सौ पाश्चात्य पुरातत्त्व-विशेषज्ञों ने उनसे प्रार्थना की कि आप यह अद्वितीय ग्रंथ हिंदी में न लिखकर अंगरेजी में लिखें तो संसार भर के विद्वान लाभान्वित होंगे। ओझाजी के हिंदी-आग्रह ने इसे अस्वीकार कर दिया। उन्होंने उन्हें उत्तर दिया कि आप लोगों का ज्ञान प्राप्त करने के लिए ही मैंने अंगरेजी पढ़ी है और आपको यदि मेरे ज्ञान की आवश्यकता है तो आपको हिंदी पढ़नी होगी।

ओझाजी ने 'प्राचीन भारतीय लिपि-माला' नाम से संकलित अद्वितीय ग्रंथ हिंदी में लिखा, जिसे हिंदी-साहित्य-सम्मेलन ने प्रकाशित किया। इस ग्रंथ को पढ़ने के लिए शतशः पाश्चात्य विद्वानों को हिंदी सीखनी पड़ी। हिंदी को सम्मान देनेवाला ऐसा आग्रही कोई दूसरा विद्वान इस देश में पैदा नहीं हुआ। हां, अपनी मातृभाषा मराठी को सम्मान देने के लिए लोकमान्य बालगंगाधर तिलक ने इससे पहले ही अपनी लोकोत्तर रचना 'गीता-रहस्य' मराठी में जरूर प्रकट की थी।

ओझाजी का वह महान ग्रंथ जब प्रकाशित हुआ, तब संसार के विद्वानों को अद्भत चीज मिली और सबने ओझाजी के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की। इस अवसर पर श्री जयचंद विद्यालंकार ने 'ओझा-अभिनंदन-ग्रंथ' की योजना बनायी और उस योजना को कार्यान्वित करने में जुट गये। वयोवृद्ध विद्वान श्री जयचंद विद्यालंकार ओझाजी के प्रमुख शिष्यों में हैं। इस अभिनंदन-ग्रंथ में समाविष्ट करने के लिए संसार भर के पुरातत्त्व-विशेषज्ञों ने और इतिहासवेत्ताओं ने लेख भेजे थे। वे सब लेख अंगरेजी, फ्रांसीसी, जरमन आदि में थे, जो ज्यों-के-त्यों नागरी लिपि में मुद्रित हुए थे, हिंदी अनुवाद के साथ।

मैं इतिहास का विद्वान नहीं और न पुरातत्त्व से परिचित हूं, पर ओझाजी की विद्वत्ता और उनके हिंदी-आग्रह के प्रति कृतज्ञतापूर्वक नतमस्तक हूं। मुझे नहीं मालूम कि हिंदी-साहित्य के जो इतिहास-ग्रंथ लिखे गये हैं उनमें कहीं ओझाजी का नामोल्लेख है या नहीं।

—४३४ गीतानगर, कानपुर

नेताजी अपने लंबे भाषण के दौरान बोले, "आज सारा देश सोया हुआ है। हमें देश को जगाना है। देश को जगाने के लिए हमें क्या करना होगा ?"

"अलार्म घड़ियों का प्रयोग," पीछे से एक ऊबभरी आवाज आयी।

अविस्मरणीय

कर्तव्य पहले . . .

सन १९५८ में विज्ञान-स्नातक (प्रथम वर्ष) की परीक्षा दे रहा था। मेरा सहपाठी मित्र भी, जिसके पिता हमारे विद्यालय में ही शिक्षक थे, परीक्षा दे रहा था। एक दिन उसके पिता की ड्यूटी हमारे ही हॉल में पड़ी। मेरा मित्र खुश हुआ कि उसके पिता ही निरीक्षक हैं। कुछ समय बाद उसने कुछ पर्चियां निकालीं और नकल शुरू कर दी। उसके पिता की नजर जब अपने लड़के पर पड़ी तब वे तेजी से आये और उसकी कापी तथा पर्चियां छीनकर कापी के साथ पर्चियां नत्थी कर दीं और कठोर टीका-टिप्पणी लिखकर कापी केंद्र-अधीक्षक को भेज दी। फलस्वरूप, मेरा मित्र एक वर्ष तक के लिए विश्वविद्यालय की परीक्षा में बैठने से रोक दिया गया।

आज मेरा वह मित्र अमरीका के एक सुप्रसिद्ध तकनीकी संस्थान में भौतिकी पढ़ाता है। मैं भारतीय रेलवे में मेकेनिकल इंजीनियर हूं। **—जनार्दनसिंह, लखनऊ**

ममता का पौरुष

मां ने कहा, "ब्रह्मबाबा की मनौती है आज। दूध ले जाकर चढ़ा दे।" उन्होंने लोटे में करीब एक सेर दूध लाकर दे दिया, जो मुझे ब्रह्म-स्थान पर गिरा देना था। स्थान घर से पश्चिम की ओर है, करीब आधा मील। मिट्टी के गोलाकार दो पिंड बने हैं उस पर—एक ब्रह्म का पिंड और दूसरा उनकी पत्नी का। पिंड टीले पर हैं, और उनके पास पहुंचने के लिए मिट्टी की सीढ़ी बनी है।

मैं दो-तीन सीढ़ियां ही चढ़ा था कि कुछ गिरने की आवाज आयी। मैंने गर्दन पीछे मोड़ी। चरित्तर बुढ़ऊ की पत्नी थी। वह ऊपर चढ़कर ब्रह्म को प्रणाम नहीं कर सकती थी, क्योंकि टीले पर ब्राह्मणों के अतिरिक्त अन्य किसी को वहां पहुंचने की इजाजत नहीं है। क्षणभर मैं ठिठका देखता रहा—चेहरे की उभरी हुई हड्डियां, मुंडित नारी-सिर और फटी चादर में लाज छुपाये कंकाल-सी जीविता!

जब मैं पांच-छह बरस का था तब चरित्तर अपनी पत्नी के साथ मेरे घर काम करता था। दोनों ने अंतर्जातीय विवाह किया था, मगर समय के अंतराल से चरित्तर दो लड़के तथा एक लड़की को पत्नी के पास ही छोड़कर कहीं भाग गया। पत्नी ने संतान के पालन-पोषण के लिए दूसरे के खेतों में कुदाल-हल चलाने-जैसा मरदाना काम भी किया। पर बड़ा लड़का काम करने लायक होते ही उसे छोड़ गया और छोटा चोरी करने लगा।

मैंने पात्र में अंगुलियां डालकर दूध

की सतह को छुआ और सिर्फ दो-तीन बूंदें ब्रह्म बाबा को चढ़ा दीं। सीढ़ी पर एक कुत्ता खड़ा ललचायी दृष्टि से पूरे दूध के गिरने की प्रतीक्षा कर रहा था। मेरी समझ से अब शेष दूध किसी को भी 'प्रसाद' रूप में दिया जा सकता था।

मैं नीचे आया और बोला, "ध्रुव की मां, तुम्हारी तबीयत खराब देख रहा हूं?"

"हां बाबू, ध्रुव पता नहीं कहां चला गया? जगरूप को लोगों ने जेल भिजवा दिया। घर में अनाज नहीं और न ही दवा-दारू के लिए पैसा है। न मालूम किस पाप का दंड भगवान दे रहे हैं..."

"अच्छा, यह दूध ले लो... मैंने थोड़ा दूध चढ़ा दिया और शेष 'प्रसाद' देने के लिए बचा लिया है।"

"नहीं बाबू, यह पाप होगा। ब्रह्म पर समूचा दूध चढ़ाते हैं।"

कृश शरीर कठिन कुदाल चलाती औरत, ममता का पौरुष, और दूध अस्वीकार करती औरत—उसका यह बिंब मेरे मन-मानस पर छा गया।

—शुक्ल अशोक 'एकल', पश्चिमी चंपारण

अस्पृश्यता : विभिन्न संदर्भ

दस-बारह वर्ष पूर्व, मई-जून का महीना था। मैं अपनी जमीन-जायदाद के झगड़े के सिलसिले में स्थानीय थाने में बैठा हुआ था। इतने में दो सिपाही एक अधेड़ व्यक्ति को घसीटते हुए लाये। शरीर पर चिथड़े, बाल धूल से अटे हुए, झुर्रियों भरे चेहरेवाला वह व्यक्ति बुरी तरह हांफ रहा था।

मैंने उत्सुकतावश पूछा, "थानेदार साहब, किस जुर्म में पकड़ा गया है इसे?"

"यह गांजा-भांग का अवैध धंधा करता है। कितनी बार पकड़ा, पर इसकी हालत पर तरस खाकर छोड़ दिया। मगर कुत्ते की पूंछ कभी सीधी हुई है?" मैंने उस व्यक्ति से पूछा, "दूसरा काम नहीं करते?"

"बाबूजी, पहले किराने की एक छोटी-सी दूकान अपना सामान-असबाब बेचकर की थी, पर मेरे हाथ का छुआ सामान कोई खरीदता नहीं था। जब फाके होने लगे तब कुछ काम ढूंढ़ने लगा, मगर कोई भी मुझे अपने घर नौकर रखने के लिए तैयार नहीं हुआ। इसलिए मजबूर होकर इस रास्ते पर चल पड़ा। अब इस धंधे से मुझे कोई शिकायत नहीं है। अब वही लोग मेरा स्पर्श किया गांजा-भांग खरीदकर खाते-पीते हैं जो कभी मेरी दूकान से सौदा खरीदने में झिझकते थे।" इतना कहकर उसने अपने दोनों हाथ आगे कर दिये। उसके दोनों हाथों की दो-तीन अंगुलियां कोढ़ से गली हुई थीं।

—रामजी चौबे, जबलपुर
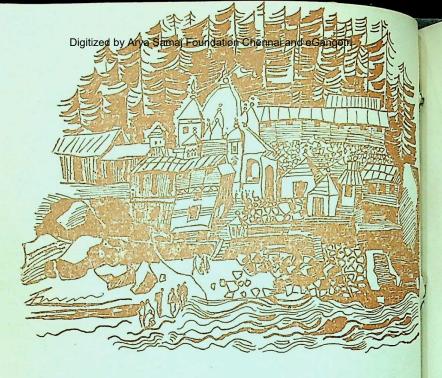
गोमुख की यात्रा

लेख एवं रेखा-चित्र

● रामनाथ पसरीचा

गंगा एक नदी ही नहीं, एक महान शक्ति भी है, जो सारे भारत को सदियों से अपनी ओर खींचती चली आ रही है। गंगाजल के बहाव के साथ इस देश की सभ्यता और इतिहास जुड़े हैं, जिसकी १,५०० मील लंबी धारा ने सारे भारत को एक माला में पिरो दिया है। मां गंगा अनंत काल से भारतवासियों के पाप अपने में लिए बह रही है।

किसी जमाने में गोमुख और गंगोत्री की यात्रा ऋषिकेश से आरंभ होती थी और यात्री कई दिन पैदल चलने के बाद ही मंजिल पर पहुंचते थे। गोमुख वह स्थान है जहां हिमालय से गंगा निकलती है। वहां उसे 'भागीरथी' के नाम से ही पुकारते हैं

गंगोत्री : ढोल, नगाड़ों और घंटों के स्वर यात्री की सारी थकान हर लेते हैं

गंगा की दूसरी धारा बदरीनाथ के पास से निकलती है और 'अलकनंदा' कहलाती है। दोनों धाराओं का संगम देवप्रयाग में होता है। पैदल रास्ते पर हिमालय के दृश्य हर कदम पर यात्रियों के मन मोह लेते, लेकिन अब तो सुंदर पहाड़, जंगल, झरने और बस्तियां तेजी से पीछे छोड़ती हुई बस एक दिन में गंगोत्री पहुंचा देती है।

भागीरथी के किनारे उत्तरकाशी एक पुराना धार्मिक नगर है। यह 'वरुना' और 'असी' नामक दो नदियों के बीच बसा है। यहां कई मंदिर हैं। इनमें विश्वनाथजी का मंदिर बहुत पुराना है। मंदिर में लोहे का २ फुट ऊंचा एक सुंदर त्रिशूल खड़ा है। कहते हैं, जब कलियुग में काशी की महत्ता कम हो जाएगी तब भगवान शिव उत्तरकाशी में आ जाएंगे।

उस शाम उत्तरकाशी से थोड़ा ऊपर जहां हम ठहरे थे, बहुत शांति थी। कभी-कभी हवा के साथ चीड़ के पेड़ सरसरा उठते थे या भागीरथी का शोर हवा से उठकर ऊपर आ जाता था। मैं बहुत देर तक भागीरथी की धारा देखता रहा था।

अगले दिन दोपहर को एक बार फिर बस का सहारा लिया और गंगोत्री की ओर चल पड़े। पुराने यात्रा-वृत्तांतों में जिन सुंदर स्थानों के बारे में पढ़ रखा था, बस उन्हें तेजी से पीछे छोड़ती चली जा रही

वचन-वीथी

जो स्वयं अपना मालिक है वही वास्तव में महान है। —जोसेफ हाल

कोई भी पीड़ा इतनी बड़ी नहीं है जिसे काल दूर न कर सके। —सिसरो

पति-पत्नी घर-गिरस्ती की चिंताओं के बारे में बातें करते हैं, किंतु अविवाहित स्त्री-पुरुष उन चिंताओं को ढोते हैं। —कालिंस

सूक्तियां उन कीलों की भांति हैं जो सचाई को हमारी स्मरण-शक्ति पर जड़ देती हैं। —दिदरो

मुसीबतें प्रायः मनुष्य जान-बूझकर मोल लेते हैं न कि ईश्वर उन पर थोपता है। —जर्मी टेलर

कल्पित चीजों के प्रति आकर्षण तो हो सकता है, किंतु प्रेम केवल वास्तविक चीजों से ही किया जा सकता है। —डे मॉय

शब्द पत्तों के समान हैं। शब्द-रूपी पत्तों की संख्या जितनी अधिक होगी, समझदारी-रूपी फलों की संख्या उतनी ही कम होगी। —पोप

थी। 'गंगनानी' में गरम पानी के झरने हैं। आगे 'हरसिल' नाम का स्थान है। यह स्थान समुद्र-तट से ८,५०० फुट ऊंचा है। यहां भागीरथी का पाट बहुत चौड़ा हो जाता है और यह कई धाराओं में बंट जाती है। यहां 'जड' जाति के लोग रहते हैं। ये लोग हिंदू हैं लेकिन गढ़वालियों के साथ इनके शादी-ब्याह नहीं होते। ये हिंदू देवी-देवताओं को मानते हैं लेकिन उनके मंदिर तिब्बती शैली के हैं। ये लोग जब सर्दियों में मैदान की ओर आते हैं या गरमियों में हरसिल लौटते हैं तो अपने पीछे मकानों की छतें जला देते हैं। जड लोग भेड़-बकरियां पालते हैं। औरतें सुंदर पट्टू और लोइयां बनाती हैं। पहले ये लोग तिब्बत से व्यापार करते थे, लेकिन अब यह व्यापार बंद है। चारों ओर बर्फ की सुंदर चोटियां दिखायी देती हैं।

रह-रहकर पुराना पैदल रास्ता दिखायी दे जाता था, जो अब सूना पड़ा था। शाम के समय हम 'लंका' जा पहुंचे। यहां से लगभग डेढ़ मील पैदल चलना पड़ता है। भैरों घाटी में पहले उतराई है, फिर कुछ दूर चलने पर 'जड गंगा' को एक पुल से पार करने के बाद चढ़ाई शुरू हो जाती है। यहां भागीरथी ऊंची चट्टानों के बीच होकर उनसे टकराती, उछलती, कूदती बहती है। दृश्य बहुत सुहावने हैं। चढ़ाई खतम होने पर बस या जीप मिल जाती है, जो पलक झपकते ही दस मील का रास्ता तय करके गंगोत्री पहुंचा देती है। जब हम गंगोत्री पहुंचे, रात हो गयी थी और मां

चांदी की पालकी में कंडेश्वर देवता का जुलूस

गंगा के मंदिर में आरती हो रही थी।

प्रातःकाल भागीरथी में स्नान किया। जल बहुत ठंडा था। कहते हैं, जिस शिला पर गंगा माई का मंदिर है उस पर बैठकर भगीरथ ने तप किया, फलस्वरूप वे गंगा को स्वर्ग से धरती पर ले आये थे।

कहते हैं, राजा सगर बहुत शक्तिशाली था। उसने अश्वमेध-यज्ञ की तैयारी की, तब स्वर्ग में इंद्र का सिंहासन डोल उठा। इंद्र ने यज्ञ में रुकावट डालने के लिए घोड़े को चुपके से पकड़ा और कपिल मुनि के आश्रम में, जो बंगाल की खाड़ी में स्थित गंगासागर में था, जा बांधा। घोड़े की तलाश हुई और सगर के साठ हजार बेटों ने जब उसे कपिल मुनि के आश्रम में बंधा पाया तब वे मुनि पर बरस पड़े। मुनि की तपस्या भंग हो गयी। उन्होंने आंखें खोलीं। जैसे ही उनकी नजर राजकुमारों पर पड़ी, वे सब भस्म हो गये।

सगर के पौत्र अंशुमान ने जब कपिल मुनि के पांव पकड़े तब मुनि का क्रोध शांत हुआ। घोड़ा तो उन्होंने उसी समय लौटा दिया, लेकिन साठ हजार को जीवन-दान देना इतना आसान न था। उसके लिए अंशुमान के पौत्र भगीरथ को ब्रह्मा की तपस्या करनी पड़ी। भगीरथ की तपस्या हिमवंत की बेटी गंगा को स्वर्ग से उतार लायी। शिव ने आगे बढ़कर गंगा को जटाओं में रोक लिया। एक बार फिर भगीरथ को शिव से प्रार्थना करनी पड़ी और गंगा को मुक्त कराना पड़ा। आगे रास्ते में जाह्नवी ऋषि तपस्या कर रहे थे। उनकी तपस्या भंग हो गयी। क्रोध में ऋषि ने गंगा को पी डाला। एक बार फिर भगीरथ

को गंगा मुक्त करानी पड़ी। तब कहीं सगर के बेटों की आत्माओं को मुक्ति मिली।

इसे पौराणिक कथा कहें, कथा के रूप में एक ऐतिहासिक घटना कहें, या फिर एक कवि की कल्पना कहें, जहां से गंगा अपनी डेढ़ हजार मील लंबी यात्रा आरंभ करती है अर्थात गोमुख, वह बर्फ के ऊंचे पहाड़ों में एक गुफा के रूप में है। यहां ऊंचे पर्वतों की धाराएं शिवजी की जटाओं के समान हैं—भव्य तथा अतुलनीय।

गंगोत्री से भागीरथी घाटी का दृश्य बड़ा सुहावना है। चारों ओर बर्फ से ढकी हिमगिरि की चोटियां हृदय तक शीतल कर देती हैं। यहां केदार-गंगा भागीरथी में मिलती है और दोनों एक बहुत सुंदर प्रपात के रूप में गौरी-कुंड में जा गिरती हैं। प्रपात की फुहार पर जब सुबह-शाम सूर्य की किरणें पड़ती हैं तब सुंदर इंद्रधनुष का रूप बन जाता है।

यहां से गोमुख केवल दस मील रह जाता है। लेकिन अधिकतर यात्री गंगोत्री से ही लौट जाते हैं। इक्के-दुक्के ही पैदल यात्रा करके गोमुख पहुंचते हैं। चढ़ाई गंगोत्री से ही आरंभ हो जाती है। सायंकाल हम 'भोजवासा' जा पहुंचे। वहां लालबिहारी बाबा का आश्रम है, जहां यात्रियों के खाने और ठहरने का प्रबंध बाबाजी की ओर से है। इस स्थान पर केवल भोज के पेड़ मिलते हैं, जिनकी छाल कागज-जैसी होती है। प्राचीन भारत में ग्रंथ इसी पर लिखे जाते थे।

गोमुख भोजवासा से लगभग दो मील आगे समुद्र-तट से १२,५०० फुट पर है। अगले दिन प्रातः मौसम साफ था। जैसे-जैसे हम बढ़े, घास खत्म होती गयी थी। रह गयी थीं केवल नंगी चट्टानें, पत्थर, बर्फीली चोटियां और नीला आकाश! नीला आकाश तो देखते ही बनता था। एक ऊंचे स्थान से गोमुख ग्लेशियर दिखायी दिया। भागीरथी बर्फीली चट्टानों से निकलकर पत्थरों से टकराती, भयंकर नाद के साथ एक लंबी यात्रा पर चल पड़ी थी। जल में हिमखंड बह रहे थे। दायीं ओर शिवलिंग पर्वत, और ग्लेशियर के एकदम ऊपर भागीरथी पर्वत की तीन चोटियों का कलश दिखायी दे रहा था।

थोड़ा और ऊपर जाने पर 'तपोवन' है। यहां से पूरब की ओर 'सतोपंथ' और चौखंबा पर्वत तथा अलकनंदा घाटी है, जहां से गंगा की दूसरी शाखा (अलकनंदा) निकलती है।

जब हम गंगोत्री से लौटे तब कंडेश्वर देवता का जुलूस देखने को मिला। जुलूस में औरतें, बच्चे, मर्द सभी थे, जो देवता को पालकी पर बिठाकर छह दिन पैदल चलकर आये थे। देवता की पालकी चांदी की थी और रंग-बिरंगे कपड़ों से ढकी थी। ढोल, घंटियों और नरसिंगों के नाद के साथ देवता को भागीरथी में स्नान कराया गया। इसके बाद देवता ने मंदिर में गंगाजी की पूजा की, फिर नाचना और खेलना आरंभ किया। लोग देवता से अपने भविष्य के बारे
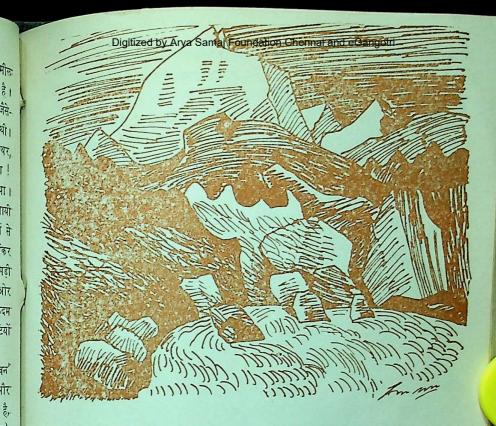
गोमुख : जहां से गंगा अपनी यात्रा प्रारंभ करती है

में पूछते थे तो पुजारी देवता की ओर से प्रश्न का उत्तर देता था। मंदिर के दालान में काफी देर यह मेला लगा रहा। बिलकुल इसी प्रकार देवताओं के जुलूस दशहरे पर कुल्लू घाटी में भी देखने को मिलते हैं।

वापसी पर हम एक बार फिर वहां से गुजरे जहां भागीरथी पर बांध बनाया जा रहा है। आज के भगीरथ उस बहुमूल्य स्रोत से, जिसे पौराणिक काल का भगीरथ अपनी तपस्या से इस धरती पर लाकर छोड़ गया था, बिजली निर्मित करने के महान कार्य में जुटे हुए हैं।

—ई/२, नानकपुरा, नयी दिल्ली-११००२१

चित्र-प्रदर्शनी में एक उच्च-भ्रू धनी संग्राहक चित्रकार से बोले, "वाह, क्या खूब चित्र है! मेरा तो मन कर रहा है कि इसके चमकते रंगों की याद साथ ले जाऊं।"

"याद तो साथ जाएगी ही, आपने अभी-अभी जिस दीवार से टेक लगायी है, उस पर मेरा ताजा रंगा एक चित्र सूख रहा है," चित्रकार ने ठंडी सांस भरते हुए कहा।

गुजराती-कथा

बंदर और मगर

• विनोद भट्ट

कुछ पके हुए जामुन नीचे गिराये। मगर ने उन्हें खाते-खाते पूछा, "घूमने चलोगे, बंदर भाई ?"

बंदर जैसे उसके इस प्रस्ताव की ही राह देख रहा था। उसने पेड़ पर से छलांग लगायी और सीधा मगर की पीठ पर सवार हो गया। दोनों हंस पड़े।

और मगर ने गहरे पानी की तरफ सरकना शुरू कर दिया। तालाब के बीच आकर लड़खड़ाती आवाज में मगरने कहा,

फिर तो मगर और बंदर दोनों ही कलेजेवाली वह पुरानी बात भूल गये। दोनों पूर्ववत मिलते रहते थे। बंदर वादे के अनुसार जामुन के पके हुए फल मगर को देता था और बदले में मगर उसे अपनी पीठ पर बैठाकर तालाब की सैर कराता था। वर्षों से यही क्रम चल रहा था।

आज भी जब मगर तालाब के किनारे पहुंचा तब बंदर ने जामुन के पेड़ पर से

"बंदर भाई ..."

"कहो मगर भाई!"

"मुझे एक बात कहनी है, लेकिन जबान नहीं खुल पा रही है..."

"खोलो भी मत, मगर भाई।"

"क्यों ?"

"तुम क्या कहनेवाले हो, यह मुझे मालूम है।"

"क्या कहनेवाला हूं ?"

"यही कि इतने वर्षों के बाद फिर तुम्हारी पत्नी ने खाने के लिए मेरा कलेजा मांगा है। क्यों, ठीक है न ?"

बंदर की बात सुनते ही मगर जैसे स्तब्ध रह गया। फिर कुछ स्वस्थ होता हुआ-सा वह बोला, "और तुम क्या जवाब देनेवाले हो, यह मैं भी जानता हूं।"

तुम आज्ञा करो, बस, इतनी ही देर..."

"सीरिअसली ?"

"हां मित्र, सीरिअसली, लेकिन एक बात कह दूं मित्र, औरतों की बात में आना ठीक नहीं है। आज मेरा कलेजा मांगती है, कल को तुम्हारा मांगेगी।"

"तुम्हारा कहना ठीक है, बंदर भाई !
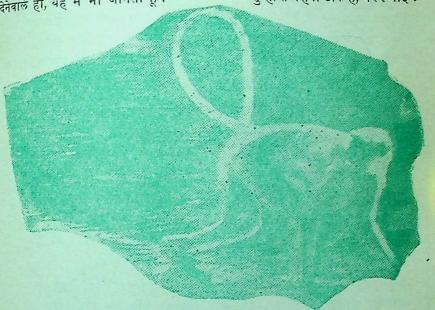
"नहीं जानते ... कहो, जरा सुनूं तो।"

"तुम कहोगे कि कलेजा तो मैं पेड़ पर भूल आया हूं, क्यों ठीक है न ?"

"नहीं ! आज तो कलेजा मेरे पास ही है। तुम्हें देने के लिए ही लाया हूं..."

"मेरी कसम ?"

"हां, तुम्हारी कसम। मेरे लिए मित्रता का मूल्य बहुत ऊंचा है। कलेजा तो क्या, तुम्हारे लिए जान भी हाजिर है।

लेकिन..."

"एक दूसरी बात भी कहनी है।"

"वह कौन-सी बात, मित्र ?"

"जाने दो, नहीं कहूंगा मगर भाई।"

"तुम्हें वह बात कहनी ही पड़ेगी।"

"सच कहूं दोस्त, मेरी पत्नी ने भी ऐसी ही जिद की थी कि उसे मगर भाई का कलेजा खाना है, समझे ! लेकिन यह सुनते ही मुझे तो गुस्सा चढ़ आया। मैंने

तो स्पष्ट कह दिया कि ऐसा नहीं हो सकता। खबरदार, फिर कभी ऐसा बोलोगी तो तुम्हारी जीभ ही खींच लूंगा! हम दोनों के बीच काफी तकरार हुई, तब उसने बताया कि तुम्हारी पत्नी (मगरी) और उसके बीच शर्त लगी है कि दोनों में से किसका पति अधिक बेवकूफ है! मित्र का कलेजा कौन मांगता है?"

"क्या बात करते हो, बंदर भाई!"

"यह तो तुमने बहुत आग्रह किया इसलिए मुझे लाचार होकर सच बात कहनी पड़ी।"

"थैंक यू वेरी मच, बंदर भाई, तुमने मुझे यह बात न बतायी होती तो महान अनर्थ हो जाता। मुझे मगरी को ठिकाने लाना होगा।"

यह कहकर बंदर को तालाब के किनारे उतारकर मगर तेजी से गहरे पानी में अपनी मगरी के पास दौड़ गया।

—अनु. गोपालदास नागर

लिखने बैठे आग

मन का तुलसीदास क्षुब्ध है
गाये गीत कबीर

दो रूपों की कांवरिया को
ढोये एक शरीर
बुनते-बुनते तार सांस के
कर्म-जुलाहा कहता
शंकाकुल हो हृदय जहां पर
वहां ज्ञान कब रहता
पूरी कामायनी सृष्टि है
कुरुक्षेत्र है भीर
मन का तुलसीदास क्षुब्ध है
गाये गीत कबीर

भावों की मूरत कजलायी
छंद-राग सब छूटे
अनगढ़ भाषा और शब्द के
कंगूरे तक टूटे
लिखने बैठे आग कलम से
खींच रहे पर चीर
मन का तुलसीदास क्षुब्ध है
गाये गीत कबीर

बौनापन पदलोलुप होकर
उभर पृष्ठ पर आया
किरच-किरच हो गया कांच वह
जुड़ा, कहां खिल पाया
आंखों से ढरका हाथों तक
रहा नहीं वह नीर
मन का तुलसीदास क्षुब्ध है
गाये गीत कबीर

—तारादत्त 'निर्विरोध'

एम-७, डाकतार कालोनी, सी-स्कीम, जयपुर

• अनवर आगेवान

अंगूठी प्रेमियों के प्रेम का प्रतीक

प्राचीन काल से ही मानव अपनी देह को सजाने के लिए विविध प्रकार के आभूषणों-अलंकारों का उपयोग करता आया है। ये गहने देश-काल के साथ बदलते रहे हैं। किंतु अंगूठी एक ऐसा अलंकार है जो प्राचीन काल से लेकर आज तक समान महत्त्व की भूमिका निभाता चला आया है। यह अन्य सभी जेवरों से अधिक लोकप्रिय रहा है। आम लोगों के हृदयों में अंगूठी ने एक अनोखा स्थान प्राप्त किया है। आधुनिक युवती से लेकर अनपढ़ ग्रामीण नारी तक, अंगूठी सबको प्यारी है। उतनी ही प्रिय वह पुरुषों को भी है।

अंगूठी की इस लोकप्रियता के पीछे अनेक कारण छिपे हैं। अंगूठी का प्रयोग मात्र शोभा के तौर पर नहीं, वरन भिन्न-भिन्न उद्देश्यों से किया जाता है। सबसे
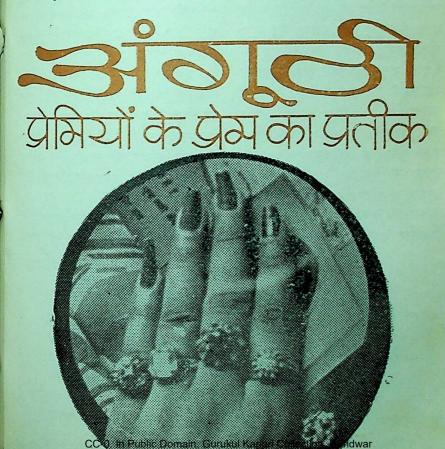
पहले, अंगूठी एक आभूषण ही नहीं, प्रणय और प्रीत का प्रतीक भी समझी जाती है। यह प्रतीक-रूप में परस्पर-स्नेह, विश्वास और श्रद्धा की सृष्टि खड़ी कर देती है। यह प्रियतम अथवा प्रेयसी के प्रेम का प्रतीक, वियोग की स्मृति तथा दो मुग्ध हृदयों का सेतु है। अंगूठी के गोलाकार में समर्पण की एक अनोखी दुनिया समायी हुई है।

अंगूठी की लोकप्रियता का दूसरा कारण यह है कि यह अंगुली में हर समय पहने जाने-योग्य अति हलका और प्रायः सबकी खरीद में आ सकनेवाला आभूषण है। अंगूठी किसी भी धातु की बनायी जा सकती है। लोग आर्थिक स्थिति के अनुसार सोने, चांदी की हीरे जड़ी और मीनाकारी की अंगूठी से मन बहला सकते हैं, साथ ही अपने प्रिय साथी को भी रिझा सकते हैं। अंगूठी भांति-भांति के आकार-प्रकार की बनायी जा सकती है। यही उसकी विशिष्टता है। विविध नामों से जाना जानेवाला यह आभूषण कब और कैसे बना, यह कोई नहीं बता सकता, किंतु भारतीय साहित्य में अनामिका-मुद्रिका ने स्त्री-पुरुष के परस्पर-स्नेह, राज्य की मुद्रा और संकेत के रूप में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया है।

महाकवि कालिदास का 'अभिज्ञान शाकुंतलं' नाटक मानो मुद्रिका को ही केंद्र बनाकर लिखा गया है। राजा दुष्यंत ने वन में शकुंतला को अपनी अंगूठी याद के रूप में दी थी, किंतु शकुंतला से वह खो गयी और उससे वह संकट में पड़ गयी। अंत में अंगूठी मिलने से बिछुड़े हुए युगल का फिर से मिलन हो गया।

प्राचीन काल में मुद्रिका प्रदर्शन के लिए ही नहीं पहनी जाती थी, वरन वह सरकारी मुहर का भी काम देती थी। महत्त्वपूर्ण कागजों पर राजा की मुद्रिका की छाप अंकित की जाती थी। अंगूठी की निशानी को हस्ताक्षर जितना ही महत्त्व दिया जाता था।

पुरुष तथा स्त्री द्वारा अंगूठी के परस्पर आदान-प्रदान से प्रेम का रिश्ता
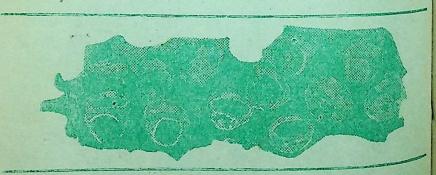
अटूट बनाने की प्रथा प्राचीनकाल से चली आयी है।

ईसाइयों में चौथी शताब्दी से शादी-ब्याह के अवसर पर अंगूठी पहनाने का रिवाज शुरू हुआ। पहले तांबे की अंगूठी बनायी जाती थी। बाद में सोने की बनायी जाने लगी। धर्माचार्यों ने ऐसा नियम भी बना दिया कि जिस शादी में अंगूठी का उपयोग नहीं होगा, उसे पक्का नहीं समझा जाएगा। विवाह की अंगूठी के साथ वर नववधू को घर की चाबी भी देता था। अंगूठी में एक पतले धागे से नववधू के जेवरों की पेटी के साथ चाबी अटका दी जाती थी। उसका अर्थ यह था कि वह उस घर की सर्वाधिकारिणी बन गयी है।

आज भी पश्चिम के अनेक देशों में अंगूठी की अदला-बदली ही शादी निश्चित होने की मुख्य विधि मानी जाती है। एक-दूसरे से विवाह करने का वचन देते हुए प्रेमी अपनी प्रेमिका को विश्वास के प्रतीक के रूप में अंगूठी उपहारस्वरूप देता है। इस अंगूठी को 'एनगेजमेंट-रिंग' (प्रणय-मुद्रिका) कहा जाता है।

प्राचीन काल में मिस्र में अमीर सोने की अंगूठी पहनते थे और गरीब चांदी, तांबे, कांच और चमकनेवाली मिट्टी की अंगूठियां पहनते थे। विवाह के अवसर पर अंगूठी भेंट करने का रिवाज सबसे पहले यूरोप में यहूदियों ने शुरू किया। वर जब वधू को अंगूठी भेंट करता अथवा पहनाता था तब उसका तात्पर्य यह होता था कि पति के तमाम अधिकारों में पत्नी को समान अधिकारिणी बनाया गया है और उसके सुख-दुख में पत्नी उसकी हिस्सेदार होगी।

इसी पद्धति से पाश्चात्य देशों में प्रेयसी को दी जानेवाली अंगूठी में हीरा जड़ाया जाने लगा क्योंकि हीरा अमर तथा उज्ज्वल प्रेम का प्रतीक माना जाता था। हीरे की चमक प्रेम-ज्योति की अमर शिखा मानी जाती थी। जहां ऐसे प्रेम की ज्योति सदैव जगमगाती है, वहां सुख का स्वर्ग बस जाता है। ऐसा प्रेम-प्रकाश
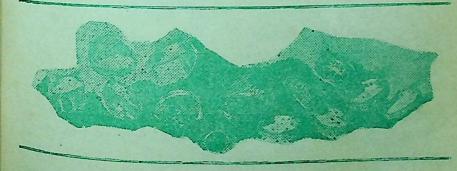
जीवन-मार्ग को निरंतर प्रकाशित करती रहता है और दांपत्य-जीवन को सुख की अनुभूतियों से भरापूरा रखता है।

मध्ययुग में अनेक राजा तथा धनवान अपने नाम के प्रथम अक्षर की कलात्मक डिजाइन 'संकेत-चिह्न' के तौर पर खुदवाते थे। धार्मिक विधि में रत्न-जड़ित मुद्रिका पहनने की प्रथा थी। व्यापार के उत्कर्ष के लिए व्यापारी लोग स्पष्ट चिह्नवाली धातु की अंगूठी पहनते थे। यज्ञ-याग, श्राद्ध-क्रिया–जैसी विधियों में दर्भ की अंगूठी पहननी पड़ती थी, जिसे 'पवित्री' कहा जाता है। पांच धातुओं के तारों से बनी 'पवित्री' नजर न लगने तथा ग्रहों की कुदृष्टि शांत करने के लिए पहनी जाती थी।

इस प्रकार अंगूठियां अनेक प्रकार की बनायी जाती थीं और अनेक उद्देश्यों से पहनी जाती थीं। मध्ययुग में एक अंगूठी 'विषमुद्रा' नाम से जानी जाती थी। उसके नग में जहर भरा रहता था। शत्रु के साथ हाथ मिलाते समय उस विषैले नग का स्पर्श होते ही शत्रु के शरीर में विष का प्रभाव हो जाता था।

अनिष्टकारी ग्रहों के कुप्रभावों से बचने के लिए निर्धारित रत्नों की अंगूठियां पहनने की प्रथा थी, जो आज भी विद्यमान है। ये रत्न नौ प्रकार के हैं—हीरा, मानिक, मोती, पन्ना, पुखराज, गोमेद, लहसुनिया, प्रवाल और नीलम। इन रत्नों में से ज्योतिष-शास्त्रानुसार अपने ग्रहों के अनुकूल रत्न की अंगू[ठी] पहनने से उस ग्रह का बुरा प्रभाव दूर हो सकता है। दूसरे देशों में भी ग्रहों की पीड़ा से बचने के लिए लोगों में विभिन्न र[त्नों] की अंगूठियां पहनने का रिवाज है।

मध्ययुग में इटली में हीरे के बा[रे] में मान्यता थी कि उसके पहनने से मन के तमाम क्लेश दूर होकर मन को शांति मिलती है। यदि हीरे-जड़ित अंगूठी दोनों पति-पत्नी धारण करें तो उनका वैवाहिक जीवन सुख-शांति और अनन्य स्नेह की भावना से पूर्ण रहेगा। कहते हैं, सिक्कों का प्रचलन आरंभ नहीं हुआ था त[ब] लेन-देन में सोने-चांदी की अंगूठियां का चलन था।

इस प्रकार संसार में प्राचीन काल से आज तक अंगूठी विभिन्न आकार-प्रकार तथा रूपों में व्यवहृत होती थी। आधुनिक अलंकारों में तो अंगूठी की नयी से नयी डिजाइनें देखने को मिलती हैं। अंगूठी पहनने के स्थान भी बदल गये हैं। प्रायः लोग अनामिका में ही उसे धारण करते रहे हैं। इस अंगुली की नाड़ी का सीधा संबंध हृदय की नाड़ी से है। हृदय से ही मानव की भावनाएं नियंत्रण में रखी जा सकती हैं। किंतु अन्य अंगुलियों में भी अंगूठी पहनना कोई अपवाद नहीं है। कुछ लोग तो शृंगार के लिए सभी अंगुलियों को अंगूठियों से सुशोभित करते हैं।

—गोपालकृष्ण भवन, तिलक रोड, बंबई-७७

"आम आदमी की लड़ाई में शरीक होकर संकल्पों को अपाहिज न होने देने के लिए संघर्ष। परिणामतः शून्य और आक्रोश पर बर्फ उंड़ेलकर आम आदमी को जिलाने के प्रयास में घायल होना।

"कहानियां एवं लेख 'एम. आकिल' के भरोसे छोड़ 'शलभ' बन कविताओं के लिए प्रस्तुत हूं। शेष एवं तिरस्कृत रचनाओं के विरुद्ध संघर्ष जारी है।"

तुम्हारा खयाल आते ही

तुम्हारा खयाल आते ही
मुझे बुखार आने लगा
पतझड़ ने इसी बहाने
वसंत को लूटा
गरमी की तपन से
पत्थर दहक उठे
इसी गरमी से आंखें जल पड़ीं
और तुम्हारे खयालों में
हम बीमार पड़ने लगे
मेरी कमजोरी से
पाला मस्ताने लगा
सूखे जंगल में
बहार आने लगी
अब तो चादर ओढ़कर
सोना दुश्वार हो गया
थमी पुरवइया में
गरम सांसें घुलने लगीं
प्यार को बदनाम होना था
सारे जंगल में इसकी खुशबू महक उठी
तुम्हारा खयाल आते ही
मुझे बुखार आने लगा

—'शलभ'

द्वारा एम. आकिल, ३२३, मोतीनाला,
जबलपुर-४८२००२ (म. प्र.)

गोष्ठी

सुनीता पाटवा, नयी दिल्ली : 'फोटो-पीरियडिज्म' क्या है?

फोटो-पीरियडिज्म वनस्पति-विज्ञान की एक आधुनिक शाखा है, जिसके अंतर्गत पेड़-पौधों पर प्रकाश की वांछित अवधि का अध्ययन तथा तत्संबंधी प्रयोग किये जाते हैं। इसका जन्म पेड़-पौधों पर कृत्रिम प्रकाश के प्रभावों को जांचने के सिलसिले में हुआ है।

प्रभुशरण जायसवाल, बंबई : क्या मृत व्यक्तियों के शरीर से रक्त लेकर उसका उपयोग रोगियों की चिकित्सा में किया जा सकता है?

जी हां, यदि मृत व्यक्ति के शरीर से मृत्यु के दो-तीन घंटे बाद या अधिक से अधिक छह घंटे बाद तक रक्त निकाल लिया जाए तो वह रक्त रोगियों को देने के काम आ सकता है। यदि रेफ्रिजरेशन की समुचित सुविधा हो तो यह रक्त सर्दियों में चार सप्ताह तक और गरमियों में तीन सप्ताह तक सुरक्षित रह सकता है। जहां एक स्वस्थ व्यक्ति एक बार में अधिक से अधिक एक पाइंट रक्त दे सकता है, वहां मृत शरीर से अमरीका में तीन पाइंट और रूस में छह पाइंट तक रक्त निकाला गया है तथा रोगियों को सफलतापूर्वक दिया गया है। मृत व्यक्ति का रक्त लेते समय यह सावधानी बरतनी पड़ती है कि वह रक्त रोगों, दवाइयों और नशे की आदतों से ग्रस्त न रहा हो। आम तौर पर उन लोगों का रक्त अच्छा माना जाता है जिनकी मृत्यु सिर पर चोट लगने या हृदयगति रुकने–जैसी आकस्मिक मृत्यु के रूप में हुई हो। रूस और अमरीका के बाद भारत में भी अब यह व्यवस्था की जा रही है कि मृतकों के रक्त से रोगियों को बचाया जाए।

श्यामबिहारी बैद, चंडीगढ़ : निर्वेद एक स्थायी भाव (शांत रस का) भी है और संचारी भाव भी। दोनों में क्या अंतर है? कृपया स्पष्ट करें।

स्थायी भाव के रूप में निर्वेद वह है जो परमार्थ-चिंतन के कारण संसार के समस्त विषयों को असार एवं असत्य समझने से उनके प्रति विराग उत्पन्न होने का परिणाम होता है, जबकि संचारी भाव के रूप में निर्वेद का अर्थ है इष्ट

वस्तु का वियोग होने या अन्य किसी कारण से किसी वस्तु या व्यक्ति के प्रति उपेक्षा या उदासीनता। यह (संचारी) भाव क्षणिक या अल्पकालिक होता है।

सरोजिनी, मेरठ : क्या सोवियत रूस में धर्म का उन्मूलन कर दिया गया है? यदि नहीं तो वहां धर्म की क्या स्थिति है?

जी नहीं, रूस में राजधर्म कोई नहीं है, किंतु लोगों को इस बात की आजादी है कि वे चाहें तो किसी भी धर्म में विश्वास करें और न चाहें तो न करें। सोवियत कानून के तहत एक ही निवास-स्थल (गांव या शहर) में रहनेवाले २० व्यक्ति यदि एक ही धार्मिक संप्रदाय के सदस्य हों तो उन्हें एक धार्मिक समुदाय स्थापित करने और सरकारी अधिकारियों से उसे पंजीकृत कराने का अधिकार है। धार्मिक संगठनों को पूजा-स्थल या तो राज्य निःशुल्क देता है या उन्हें अपने पूजा-स्थलों के निर्माण के लिए किराये पर स्थान लेने की अनुमति देता है। धार्मिक समुदायों को प्रार्थना-सभाएं अथवा धार्मिक अनुष्ठान करने और धार्मिक सम्मेलन आदि आयोजित करने का अधिकार है और इसके लिए परिवहन आदि की सुविधाएं राज्य की ओर से दी जाती हैं, किंतु वहां धर्म राज्य से और शिक्षा धर्म से पृथक है। नागरिकों को धार्मिक पूजा-पाठ करने की स्वतंत्रता है तो धर्म-विरोधी प्रचार करने की भी स्वतंत्रता है।

देवेशकुमार, झांसी : पौराणिक राजा ऋतुपर्ण कौन थे और नल-दमयंती की कथा से उनका क्या संबंध है?

ऋतुपर्ण इक्ष्वाकु वंशज अयुतायु के पुत्र और अयोध्या के राजा थे। राजा नल अपना राज छिन जाने पर ऋतुपर्ण के यहां शरण लेकर उनके सारथी बन गये थे। नल को घोड़ों को वश में लाने और उन्हें हवा की तेजी से दौड़ाने की विद्या 'अश्वहृदय' आती थी। इस विषय में ऋतुपर्ण के सारथी की कीर्ति फैली तो दमयंती को संदेह हुआ कि सारथी-वेश में नल ही ऋतुपर्ण के यहां रहते हैं। अतः दमयंती की इच्छा से उसके पिता ने ऋतुपर्ण के पास संदेश भेजा कि कल दमयंती का दूसरा विवाह होनेवाला है। नल ने एक ही दिन में ऋतुपर्ण को विदर्भ पहुंचाया। वहां

पहुंचने पर नल-दमयंती का मिलन हुआ।

प्रतिभा मेहरोत्रा, पटना : इंगलैंड के 'डिगर्स' संप्रदाय का परिचय दें।

'डिगर्स' (खुदाई करनेवाले) संप्रदाय के माननेवाले सत्रहवीं शताब्दी के थे। इन्होंने अनजुती जमीन को जोतना शुरू किया, इसलिए इनका यह नाम पड़ा। इस संप्रदाय का नेता गेरार्ड विस्टानली यद्यपि एक धार्मिक व्यक्ति था, तथापि वह मनुष्यों की आर्थिक और सामाजिक समानता में विश्वास करता था और समाज के वर्गभेद को बनाये रखनेवाले चर्च की कटु आलोचना करता था। उसकी प्रसिद्ध पुस्तक है ('The true leveller's standard advanced') १६४९, जिसमें उसने लिखा है—हालांकि अनाज महंगा है, फिर भी गरीब आदमी को चार पेनी प्रतिदिन पर काम करना पड़ता है और ऊपर से धर्म-कर्म वसूलनेवाला पादरी उसे मन के संतोष का पाठ पढ़ाता है। 'डिगर्स' के अतिरिक्त उस समय कुछ संप्रदाय भी थे, जो मनुष्य की आर्थिक, सामाजिक समानता में विश्वास करते थे। चर्च की ओर से उनका विरोध और दमन किया जाता था।

सदानंद, रांची : चलते हुए जलपोत से सागर की गहराई जान लेने का क्या उपाय है? क्या लंगरयुक्त जंजीर तल तक लटकाने पर पोत की गतिशील अवस्था में गहराई का सही माप मिल सकता है?

जी नहीं, जलपोत में सागर की गहराई मापने का यह तरीका अत्यंत प्राचीन काल में चलता होगा और तब निश्चय ही पोत को रोककर 'लंगरयुक्त जंजीर' लटकायी जाती होगी। आजकल ऐसा नहीं होता। अब यह काम प्रतिध्वनि के जरिये किया जाता है। पोत से एक तीव्र ध्वनि-संकेत सागर-तल तक भेजा जाता है, फिर उसकी प्रतिध्वनि को विशेष यंत्र द्वारा सुनकर स्वचालित घड़ी से उस प्रतिध्वनि का समय नोट कर लिया जाता है, फिर तदनुसार हिसाब लगा लिया जाता है कि सागर की गहराई कितनी है।

शमशेर सिंह, इलाहाबाद : क्या यह सच है कि छह वर्ष की अवस्था तक बच्चा यदि भाषा न सीख पाये तो फिर कभी नहीं सीख सकता? कारण?

जी हां। यदि कोई बच्चा छह वर्ष की उम्र तक बोलना नहीं सीख पाता तो जीवन-पर्यंत भाषा पर उसका अधिकार नहीं हो सकता। जीवन के ये प्रारंभिक वर्ष मस्तिष्क के विकास की दृष्टि से बड़े महत्त्वपूर्ण होते हैं। इस अवस्था में मस्तिष्क बड़ा परिवर्तनशील और ग्रहणशील होता है। मातृभाषा के साथ-साथ वह विदेशी भाषाएं भी आसानी से सीख सकता है।

चलते-चलते एक प्रश्न और...

हकीकत राय अरोरा, विलासपुर : बिंदु का भास्कर से क्या संबंध है?

जो आपकी राय और हकीकत में है।

—बिंदु भास्कर

कुश्ती के आचार्य

• ब्रजभूषण दुबे

रियासती राजाओं के संरक्षण में कुश्ती-कला का काफी प्रचार-प्रसार हुआ था। राजकीय संरक्षण में तैयार हुए पहलवान उस समय विश्व में खूब चमके। इनमें गुलाम, कीकरसिंह, कल्लू, गामा, इमामबख्श, हमीदा, गूंगा, केशरसिंह आदि के नाम सर्वविदित हैं। इनके अतिरिक्त उत्तरप्रदेश के दो पहलवानों ने मल्ल-विद्या में बड़ी ख्याति अर्जित की। इनमें एक थे इटावा के शम्मा पहलवान, जिन्होंने २१ वर्ष की अवस्था में विश्व के पहलवानों को ललकारा था। दूसरे हैं डॉ. शांतिप्रकाश आत्रेय, जिन्होंने अपने अध्ययन-काल में गामा के भतीजे भोलू से बराबरी की कुश्ती लड़कर सभी को चकित कर दिया था। कुश्ती समाप्त होने पर 'विश्वविजेता' गामा के मुंह से अनायास ही निकल पड़ा था—'आत्रेय तो पहलवानी के अवतार हैं, इन्हें तो पढ़ना-लिखना छोड़कर केवल पहलवानी करना चाहिए।'

आत्रेय मालवीयजी के काल में १९३७ से '४४ तक काशी हिंदू विश्वविद्यालय के छात्रों में कुश्ती में शीर्षस्थ बने रहे। उच्च शिक्षा प्राप्त करते हुए उन्होंने शम्मा की चुनौती स्वीकार की, किंतु शम्मा स्वयं पीछे हट गया। सुच्चासिंह को बलरामपुर में परास्त कर महाराजा बलरामपुर से 'रुस्तमे-उत्तरप्रदेश' की उपाधि एवं चांदी का गुर्ज प्राप्त करने के बाद आत्रेय ने पाकिस्तान के मुहम्मद शरीफ, अमानत

डॉ. शांतिप्रकाश आत्रेय : रुस्तमे उत्तरप्रदेश

गोदरेज की ओर से
नया, धुलाई का साबुन
Godrej®
WASHING SOAP
फिर भी दाम कम, अब सिर्फ़ ५५ पैसे*
एक बार फिर विशेष लाभ
बढ़िया धुलाई
महकभरी धुलाई
गोदरेज
धुलाई का साबुन

तथा मीरदीन 'उर्फ' अमीरा के अतिरिक्त रूमानिया के जार्ज कांस्टेनटाइन को परा-जित कर भारत का नाम चमकाया था। १९३७ से लेकर '५६ तक आत्रेय अध्ययन एवं अध्यापन के साथ-साथ कुश्ती-कला की साधना भी करते रहे। इस अवधि में उनकी सैकड़ों कुश्तियां देश के विभिन्न नगरों में हुईं। यह गौरव की बात है कि आत्रेय कुश्ती से संन्यास लेने तक अविजित रहे।'

व्यायाम का निराला ढंग

आत्रेय के व्यायाम का ढंग निराला था। १ बजे रात से उनकी कसरत का क्रम एक गिलास अनार का रस पीकर प्रारंभ होता था। वे प्रतिदिन ४,००० से ५,००० तक बैठक तथा १,५०० से २,००० तक दंड करते थे। आजकल बड़े-से-बड़े पहलवान भी इतना रियाज नहीं करते। हजारों दंड-बैठकों के बाद डंबलों की कसरत, दौड़ तथा ३२ सेर वजन के फावड़े से अखाड़ा खोदने का अभ्यास चलता था।

५ फुट १० इंच कदवाले आत्रेय का वजन २४० पौंड तथा अंगों के माप निम्न प्रकार थे—सीना ४९-५३ इंच, गरदन साढ़े १८ इंच, कमर—३५ इंच, दायीं रान—२९ इंच, बायीं रान—२८ इंच तथा दोनों बाजू १८-१८ इंच के थे।

सवेरे कसरत तथा कुश्ती के बाद एक सेर दूध में आधा किलो बादाम पीते थे। कुल मिलाकर एक पाव घी दोनों समय में लेते थे। रात्रि में पुनः दूध तथा बादाम की उतनी ही मात्रा का सेवन करते थे। पूर्णतः निरामिष-भोजी आत्रेय को आंवले का मुरब्बा बहुत प्रिय रहा। वे कभी-कभी सूखी रोटी भी चाव से खाते थे। इसके अतिरिक्त बीहदाना, बला, रेशाखतमी, नागौरी, असगंध, मुलैठी तथा समयानुकूल अनेक देशी काष्ठौषधियों का सेवन भी वे करते रहे।

लड़ंत की विशेषताएं

स्वाधीन भारत के पहलवानों में दांवों की सीमित-परिधि में परिभ्रमण करने की परंपरा परिलक्षित हो रही है, किंतु आत्रेय इससे सदा मुक्त रहे। वे सामने से जाकर बगली डूबने, बगली डूबकर उलटा मारने तथा उलटा खाली जाने पर वहीं से दोहरी टांग मारने में दक्ष थे। खड़ी कुश्ती में तेगा खींचने का उन्हें अच्छा अभ्यास था। ढांक मारने में तो वे बड़ी फुरती का प्रदर्शन करते थे। कुश्ती के समय प्रतिद्वंद्वी द्वारा नीचे पकड़ लिये जाने पर नीचे से डब्बी अथवा ढेकुली दांव करके वे बंधनमुक्त ही नहीं हो जाते थे, बल्कि प्रायः अपने प्रति-द्वंद्वी की छाती पर सवार होने में भी सफल होते थे। नीचे से हाथ बांधकर घड़ फेंकने में वे बहुत तेज थे तथा गरदन पर घुटना रखनेवाले प्रतिद्वंद्वी को भी उलटे चित कर लेते थे। नीचे बैठे प्रतिद्वंद्वी को प्रायः एक लंगी सवारी डालकर, हाथ चढ़ाकर, गुट निकालकर, घुटना रखकर अथवा अनेक प्रकार के घिस्सों के सफल प्रयोग से चित कर लेते थे। खड़ी तथा बैठी दोनों

प्रकार की लड़ंत में वे [illegible] रूप से सिद्ध हुए थे।

१९४३ में उन्होंने काशी-हिंदू-विश्वविद्यालय से दर्शन-शास्त्र में स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त की। १९५४ में योग-वेदांत

शम्मा पहलवान एवं डॉ. शांति प्रकाश आत्रेय जिन्होंने २९ वर्ष की उम्र में विश्व के अनेक पहलवानों को ललकारा था

विद्यालय, ऋषिकेश ने उन्हें 'व्यायाम-केसरी' की उपाधि से अलंकृत किया। १९६३ में उन्हें अपने शोध-ग्रंथ 'योग इज द सिस्टम फॉर फिजिकल, मेंटल ऐंड स्प्रिचुअल हेल्थ' पर काशी हिंदू विश्वविद्यालय से पी-एच. डी. की उपाधि मिली।

सतत अध्यापन-कार्य

काशी हिंदू विश्वविद्यालय तथा महारानी लाल कुंवर डिग्री कॉलिज, बलरामपुर में क्रमशः शारीरिक प्रशिक्षक, वार्डन, उप-प्राचार्य तथा विभागाध्यक्ष के पदों पर २०-२२ वर्षों तक अपनी सेवाएं दीं। कुछ वर्ष पूर्व उन्होंने 'ग्राम-विद्यापीठ' की नींव रखी। सहारनपुर के पास राजूपुर के अंतर्गत सरस्वतीनगर में प्रारंभ की गयी इस विद्यापीठ का संचालन डॉ. आत्रेय अत्यंत कुशलतापूर्वक कर रहे हैं।

'पद्मभूषण' डॉ. बी. एल. आत्रेय के सुपुत्र डॉ. शांतिप्रकाश आत्रेय को विद्वत्ता पैतृक देन के रूप में मिली है। उन्होंने अभी तक लगभग ३० पुस्तकों का प्रणयन किया है, जिनमें 'भारतीय तर्कशास्त्र', 'पश्चिम का आधुनिक दर्शन', 'मनोविज्ञान', 'शिक्षा में सांख्यिकी विधियां', 'योग-मनोविज्ञान', 'भारतीय-दर्शन', 'योग-मनोविज्ञान की रूपरेखा' तथा 'गीता-दर्शन' उल्लेखनीय हैं। इधर कुछ वर्षों से इंदौर की 'भारतीय कुश्ती' पत्रिका में भी डॉ. आत्रेय के लेख नियमित रूप से प्रकाशित हो रहे हैं।

डॉ. आत्रेय भारतीय कुश्ती के साथ ही ओलंपिक फ्रीस्टाइल के दांव-पेंचों की भी अच्छी जानकारी रखते हैं।

डॉ. आत्रेय अखाड़े में प्राप्त अपने अमूल्य अनुभवों, सिद्ध-प्रयोगों एवं विस्मृत होते जा रहे दांवों को भारतीय पहलवानों तक पहुंचाना चाहते हैं। अभी समय है और उनकी महत्त्वपूर्ण सेवाओं तथा अनुभवों का लाभ उठाया जा सकता है।

—३०, गोराचंद रोड, कलकत्ता-१४

हस्तरेखाएं कामुकता भी दर्शाती हैं

हाथ व्यक्तित्व ही नहीं मन का भी दर्पण होता है। हाथ की बनावट तथा रेखाएं व्यक्ति के बारे में सब कुछ बता देती हैं, चाहे वह कितना ही छिपाना चाहे। यदि कोई हस्तविद बारीकी से रेखाओं का अध्ययन करने की क्षमता रखता है तो वह भावी खतरों की सूचना भी देने में समर्थ होता है। फलस्वरूप उन खतरों से बचा भी जा सकता है। किसी व्यक्ति का हाथ देखकर उसके नितांत निजी जीवन के बारे में भी पता लगाया जा सकता है। आइए, इस लेख के द्वारा किसी आदमी के नितांत निजी रहस्यों को हाथ की बनावट तथा रेखाओं द्वारा पढ़ना बताएं।

व्यक्ति कितना निष्ठावान है, उसमें किस सीमा तक काम-भावना है? क्या वह अच्छा पति या पत्नी है? ऐसे प्रश्नों का उत्तर देने के लिए पहले जीवन रेखा को देखा जाता है। उससे व्यक्ति की आयु का अनुमान लगाया जाता है। अनुमानित आयु के आधार पर ही विशिष्ट समय में होनेवाली घटनाओं का ब्योरा दिया जा सकता है।

किसी भी लड़की का हाथ देखकर आसानी से यह पता लगाया जा सकता है कि वह कितनी वफादार है। इसके लिए उसके दाहिने हाथ में ऊपरी किनारे पर नीचे उतरती रेखाओं को देखिए। (चित्र में 'क' रेखाएं)। इन रेखाओं की संख्या यह बतलाती है कि उसके जीवन में कितने पुरुष आ चुके हैं या आनेवाले हैं। पुरुषों के हाथों में ये रेखाएं हलकी होती हैं और स्त्रियों के हाथों में गाढ़ी। हस्तविद इन रेखाओं को स्नेह की रेखाएं कहते हैं।

लंबवत रेखाएं यह बतलाती हैं कि महिला के कितने बच्चे होंगे—यदि वह चाहे तो। अनुमानित आयु के आधार पर यह भी पता लगाया जा सकता है कि किस उम्र में कितने बच्चे होंगे। जुड़वां बच्चे होने की सूचना दो रेखाओं के लगभग मिले रहने से मिलती है। इन रेखाओं द्वारा पूर्व-गर्भपात की सूचना भी मिल

जाती है। इस अवस्था में क्षैतिज रेखा आधी लंबवत हो जाती हैं।

अब आप दूसरी तथा तीसरी अंगुली को मिलानेवाली रेखा को देखिए। साधारणतः यह रेखा अर्धचंद्राकार होती है। (चित्र में 'ज' रेखा)। यदि रेखा गहरी तथा अटूट है तो व्यक्ति अस्थिर मन का है। रेखा जितनी हलकी तथा टूटी हुई होगी उतना ही व्यक्ति अधिक निष्ठावान होगा। यदि यह रेखा बिलकुल नहीं है तो उस व्यक्ति पर आंख मूंदकर विश्वास किया जा सकता है।

अब जीवन रेखा की ओर देखिए। क्या जीवन रेखा शुक्र पर्वत के गिर्द बहुत सुंदर घुमाव लिये हुए है? अंगूठे के आधार को रेखा जितना ही अधिक घेरे हुए होगी व्यक्ति में उतनी ही अधिक कामवासना होगी। अंगुलियों के सिरे की बनावट की सहायता से भी काम-भावना मालूम की जा सकती है। यदि किसी लड़की की अंगुलियों के सिरे नुकीले हैं तो उसके द्वारा कुछ परेशानी पैदा की जा सकती है। ऐसा व्यक्ति सेक्स के बारे में अत्यधिक बोलता होगा, किंतु रोमांस के अवसर पर वह कामुक नहीं होगा।

हाथ को मोड़कर हाथ और कलाई के बीच पड़नेवाली रेखाओं (चित्र में 'ग' रेखाएं) को देखकर यह मालूम किया जा सकता है कि क्या वह अच्छा पति या पत्नी है। यदि ये रेखाएं क्षैतिज हों तब तो अच्छा है और यदि हथेली की ओर ऊपर उठ रही हैं तब ठीक नहीं है। साधारणतः इस प्रकार की रेखाएं लड़कियों के हाथों में होने से प्रायः उनके बच्चे न होने का संकेत है।

अब शुक्र पर्वत की ओर देखिए। यदि किसी की जीवन रेखा अंगूठे के आधार के बहुत नजदीक है तब उसका जीवनसाथी अच्छा सिद्ध होगा। अब हाथ का बाहरी भाग (चित्र में 'घ') देखिए। यह गोलाईनुमा होने के बजाय यदि चपटा है तो जीवन-साथी कम संवेदनशील होता है। अंगूठे के नाखून चपटे और सफेद होने पर उस व्यक्ति पर कभी विश्वास मत कीजिए। शुक्र पर्वत का अत्यधिक ऊंचा होना असामान्य काम-प्रवृत्ति का सूचक है। मुलायम शुक्र पर्वतवाले व्यक्ति इस दृष्टि से दुर्बल होते हैं।

अब जीवन-रेखा तथा भाग्य रेखा को ध्यान से देखिए। क्या कोई दोनों रेखाओं को काटती हुई क्षैतिज रेखा है? (चित्र में 'च' रेखाएं)। ये रेखाएं जीवन में कोई न कोई कष्ट उत्पन्न करने की सूचक होती हैं। यदि रेखाएं हलकी हैं तो दुःखों से आसानी से छुटकारा पाया जा सकता है और यदि रेखाएं गाढ़ी हैं तो दुःखों से छुटकारा पाने के लिए प्रयत्नशील रहना पड़ेगा।

आप हमेशा जीवन रेखा से मिलनेवाली अतिरिक्त रेखा (चित्र में 'घ') से सावधान रहिए। इसका अर्थ यह है कि आपके महबूब के पैरों में खजली होती
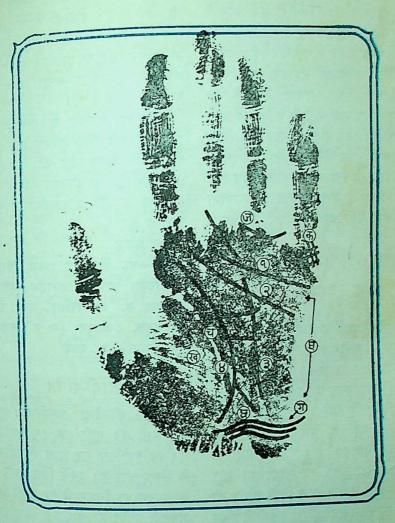
रही है। आप उसके साथ रोमांस के लिए घूमने-फिरने जा सकते हैं। परंतु, याद रखिए टिकट लेना न भूलें !

देखा आपने, आप किसी भी व्यक्ति के नितांत निजी जीवन के बारे में हाथ की बनावट तथा हस्तरेखाओं से पता लगा सकते हैं। किंतु मस्तिष्क में सावधानियां रखना भी जरूरी है। ●

विचार प्रवाह : प्रो. सिद्धेश्वर प्रसाद के २४ निबंधों तथा भाषणों के अंशों का यह संकलन उनके विचारों और अनुभवों का निचोड़ है। इसमें राष्ट्रीयता, सांप्रदायिकता, नैतिक आदर्श, धर्म एवं अध्यात्म, अहिंसा, सत्याग्रह, प्रजातंत्र, समाजवाद, साहित्य, शिक्षा, उद्योग आदि अनेक विषयों पर बड़ी बारीकी से विचार प्रकट किये हैं। इसके अतिरिक्त उन्होंने गांधीजी, नेहरूजी और जैनेन्द्रजी आदि के संबंध में भी अपने विचारों को मौलिक ढंग तथा निर्भीकता से प्रस्तुत किया है। गांधीजी के बारे में वे कहते हैं, . . . "पश्चिम ने

जीवन-दर्शन की प्रगतिशील अभिव्यक्ति

अपनी सीमाओं के बावजूद जिस उन्मुक्त भाव से गांधीजी को समझने का प्रयास किया, उस प्रयास का उनकी जन्मभूमि में ही अभाव-सा प्रतीत होता है। . . . गाधीजी की अहिंसा संतों की निष्क्रिय अहिंसा नहीं है बल्कि सत्याग्रह का सक्रिय विज्ञान भी है। . . . गांधीजी का जीवन सतत संघर्ष का जीवन था और मृत्यु-पर्यंत वह किसी न किसी प्रकार की अग्नि-परीक्षा से ही गुजरते रहे।" ('सक्रिय अहिंसा', पृ. १२–१५)। साथ ही उनके ये विचार कुछ उलझन-सी भी पैदा कर देते हैं—" . . . यदि भारत-विभाजन के प्रस्ताव के विरुद्ध गांधीजी ने सत्याग्रह किया होता तो निश्चय ही देश का विभाजन नहीं होता और शायद उनकी हत्या भी नहीं होती। गांधीजी के बाद उनके एक भी उत्तराधिकारी ने सत्याग्रह का मार्ग अपनाया होता तो आज हम स्वावलंबी हो दुनिया में मस्तक ऊंचा कर चलते।" (पृष्ठ ११५)

संकलन वास्तव में पठनीय है। इसकी सामग्री विचारोत्तेजक है। इसमें प्रगतिशील जीवन-दर्शन की अभिव्यक्ति है, जिसमें देश के उज्ज्वल भविष्य तथा मानवता के प्रति आशावादिता के स्वर मुखरित हुए हैं।

विचार प्रवाह

लेखक—प्रो. सिद्धेश्वर प्रसाद, संपादक—हरिवंश भाटिया, प्रकाशक—हरिवंश भाटिया, स. अवतारसिंह, नर्मदा रोड, मदनमहल, जबलपुर (म. प्र.) पृष्ठ—१२५, मूल्य—१८ रुपये

कहानी-संग्रह

विश्व की श्रेष्ठ कहानियां : इसमें १९ देशों की चुनी हुई १९ कहानियां हैं। इन कहानियों का चयन बड़े परिश्रम से किया गया है। इनमें जिस प्रकार के वातावरण का चित्रण है वह हमारे लिए अजनबी प्रतीत हो सकता है, किंतु इनमें समाहित मनोभावों से हम प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकते। यह कहना कठिन है कि ये कहानियां अपने-अपने देशों की सबसे अच्छी कहानियां हैं। चयन संभ-

अतः इस दृष्टि से किया भी नहीं गया है, किंतु रोचकता एवं प्रभावोत्पादकता में ये किसी प्रकार कम नहीं हैं। दुनिया के विभिन्न देशों या समाजों में झांकने की ये ऐसी खिड़कियां हैं जिनसे हम दुनिया के प्रत्येक कोने में बसे मानव के मन के भीतर झांक सकते हैं। प्रत्येक कहानी की अपनी मौलिकता और अंदाज है। ल्यूइस नकोसी की अफ्रीकन कहानी 'होटल का कमरा' में एक स्त्री की रोमांस की अतृप्त अभिलाषा का चित्रण है, तो ग्रैहम ग्रीन की बर्तानवी कहानी 'दो भले व्यक्ति' में स्त्री या पुरुष की आयु के वर्ष केवल कपड़ों की सिलवटों की तरह लगते दिखाये गये हैं। हर्बट कूनर की आस्ट्रियन कहानी में, जिसमें एक नाटक में एक स्त्री के साथ बलात्कार के दृश्य का वर्णन है, वीभत्स होते हुए भी यथार्थ के प्रति मनुष्य की निष्क्रियता प्रदर्शित करनेवाला एक भयंकर उपहास है। पाकिस्तानी लेखक अहमद नदीम कासमी की 'लारंस आफ थलेबिया' में सामंतवादी समाज की क्रूरता को ही नहीं वरन उसका बदला लेने के प्रयास को भी दिखलाया गया है।

अनुवाद की भाषा में सरलता है। संकलन अपने ढंग का अनूठा है। इससे विदेशी कथा-साहित्य को समझने-परखने में सहायता मिलेगी।

विश्व की श्रेष्ठ कहानियां
संपादक—अमृता प्रीतम, प्रकाशक—पराग प्रकाशन, ३/११४ विश्वासनगर, शाहदरा, दिल्ली-११००३२, पृष्ठ—१२०, मूल्य—१५ रुपये

कितनी कैदें : समसामयिक हिंदी कहानी को जितने नये हस्ताक्षर मिले हैं, उनमें मृदुला गर्ग का नाम उल्लेखनीय है। समसामयिक बोध और वैयक्तिक अनुभूति, दोनों को परस्पर आश्रित करके कथा-लेखन की जिस नयी शैली को मृदुला गर्ग ने जन्म दिया है, उसी का सुंदर और महत्त्वपूर्ण

उदाहरण उनका वह नवीनतम कहानी-संग्रह है। इसमें उनकी दस कहानियां संग्रहीत हैं। युवा कुंठाओं के जन्म और पल्लवन का सशक्त परिचय मिलता है, संग्रह की पहली कहानी 'कितनी कैदें' में टूटते-बिखरते हुए प्रेम एवं पारिवारिक संबंधों को लेखिका ने मनोवैज्ञानिक स्पर्श दिया है। मानसिक तनावों की भाषा ही व्यक्ति के जीवन की भाषा बन जाती है; इसी को संग्रह की हर कहानी में लेखिका ने उभारा है। 'हरी बिंदी', 'एक और

विवाह', 'उनको जाने की खबर' आदि कहानियों में व्यक्ति के एकाकीपन को लेखिका ने मार्मिक अभिव्यक्ति दी है।

—कृष्णचन्द्र शर्मा

कितनी कैदें

लेखिका—मृदुला गर्ग, प्रकाशक—इंद्रप्रस्थ प्रकाशन, के-७१, कृष्णनगर, दिल्ली—११००५१, पृष्ठ—११८, मूल्य—९ रुपये

रात और दिन : सरकारी अफसरों की पोल खोलने का दावा करनेवाला उपन्यास है, लेकिन पूरा उपन्यास बिखरी हुई घटनाओं का पिटारा-सा लगता है। हरीश, रमा, खेमसिंह और आयशा सभी पात्रों की कथा अव्यवस्थित लगती है। पुलिस के संकेत देने पर भी पाठक अंत तक नहीं समझ पाता कि रमा और खेमसिंह कौन हैं। नरेन्द्र की पत्नी का क्या हुआ? यदि लेखक किसी एक थीम को लेकर चलता तो उपन्यास रोचक हो सकता था।

रात और दिन

लेखक—मन्मथनाथ गुप्त, प्रकाशक—राजपाल एंड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली, पृष्ठ—१५९, मूल्य—१० रुपये

आज कल परसों : दो उपन्यासों का संकलन है। पहले उपन्यास 'आज कल परसों' में एक लेखक के जीवन की झांकी है। अपनी रचना-प्रक्रिया के दौरान लेखक बाह्य जगत से बेखबर किस प्रकार साहित्य-सृजन करता है यह सुशांत के द्वारा दर्शाया गया है। शेष समय में भी सभी सामाजिक बंधनों को तोड़ता हुआ लेखक अनुभव बटोरने के बहाने अनेक असामाजिक तत्त्वों की पैरवी करता है। उपन्यास लिखने के लिए एक सोसाइटी गर्ल पाखी का संपर्क तो माना जा सकता है, किंतु उसके लिए अपनी मां और पत्नी की भावनाओं का तिरस्कार करते हुए अपने मकान को बेचकर पाखी को मकान खरीद देना तर्कसंगत नहीं लगता। सारांश में उपन्यास यह सिद्ध करना चाहता है कि लेखक के लिए सामाजिकता का तिरस्कार या एक मुहरबंद जिंदगी जीना कोई अनिवार्यता नहीं है।

दूसरा उपन्यास 'गुलजारी बाई' ईस्ट इंडिया कंपनी के आगमन, अंगरेजों के षड्यंत्र तथा भारतीय नवाबों की ढहती नीवों की पृष्ठभूमि पर रचा गया है। गुलजारी बाई एक बिल्ली है, जो एक अंगरेज हकीम और महल की एक दासी की प्रेमकथा का सूत्रपात करती है। सफलता-विफलता के विभिन्न सोपानों से गुजरती हुई इस प्रेमकथा का अंत दुःखद है।

आज कल परसों

लेखक—विमल मित्र, प्रकाशक—राजपाल एंड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली, पृष्ठ—१०३, मूल्य— ७ रुपये

आलोक वृत्त : गांधीजी की जीवनी पर आधारित एक चरित-काव्य है। अंत में कुछ सॉनेट भी संकलित हैं। पूरी पुस्तक

में काव्य की मार्मिक पकड़, गहनता तथा अर्थवत्ता के दर्शन नहीं होते ।

—डॉ. शशि शर्मा

आलोक वृत्त
लेखक—गुलाब खंडेलवाल, प्रकाशक—अर्चना, २९ ए., बी. के. पाल एवेन्यू, कलकत्ता-६, पृष्ठ—१०५, मूल्य—१० रुपये

मुर्गीखाना—कुछ खास किस्म की औरतों के पारस्परिक प्रेम-संबंधों को लेकर लिखा गया अपने ढंग का एक नया उपन्यास है। पुरुषों की भांति कुछ महिलाओं में भी परिस्थितिवश 'समलैंगिक संबंधों' की प्रवृत्तियां हावी हो जाती हैं, जो किसी स्पर्शजन्य रोग की भांति फैलती जाती हैं। उपन्यास की नायिका मिस शर्मा को अपने हॉस्टल में रूपमेट सविता दीदी से यह रोग लगता है, और सविता दीदी को यह 'नशा' शायद वार्डन सीतादेवी से मिलता है। मिस शर्मा के जीवन में सुनील के रूप में पुरुष आता है, लेकिन आत्मग्लानिवश वह उसे नहीं अपना पाती। अब उसके जीवन में कभी जूली है या फिर उसकी अपनी युवा नौकरानी मुन्नी।

लेखक ने बड़ी खूबसूरती से ऐसी महिलाओं की समस्याओं और पीड़ाओं को व्यक्त किया है। इसकी भाषा सहज है और शैली आकर्षक।

मुर्गीखाना
लेखक—केवल सूद, प्रकाशक—विवेक प्रकाशन, ५९२-बी, नेहरू गली, विश्वास-नगर, शाहदरा, दिल्ली-३२, पृष्ठ—८८, मूल्य ६ रुपये।

आज की महिलाएं: महिलाओं ने जीवन के हर क्षेत्र में पदार्पण किया है। राजनीति, पत्रकारिता, विज्ञान, कला, पर्वतारोहण, अंतरिक्ष-यात्रा, प्रशासनिक सेवा आदि क्षेत्रों में उन्होंने पुरुषों के समतुल्य ही कार्य किया है और योग्यता प्राप्त की है। 'आज की महिलाएं' इन्हीं देशी-विदेशी विशिष्ट महिलाओं के जीवन-वृत्तों का संग्रह है। इसमें विमला मेहता ने अपनी परिपक्व लेखन-शैली के माध्यम से विश्व की अग्रणी महिलाओं के जीवन-वृतांतों को मूर्तिमंत किया है। पुस्तक चार खंडों में विभाजित है—'विश्व की महान महिलाएं', 'भारत की विशिष्ट महिलाएं', 'पुरुषों के क्षेत्र में महिलाएं' तथा 'विश्व की विशिष्ट महिलाएं'।

अब तक हिंदी में पुस्तकाकार रूप में ऐसी कोई अच्छी कृति उपलब्ध नहीं थी जिसमें महिलाओं की इस सर्वतोन्मुखी प्रतिभा का पूर्वाग्रहमुक्त आकलन हो। इस क्षेत्र में श्रीमती विमला मेहता का यह प्रयास सराहनीय है।

—रचना कनुप्रिया

आज की महिलाएं
लेखिका—विमला मेहता, प्रकाशक—पराग प्रकाशन, ३।११४, विश्वासनगर, शाहदरा, दिल्ली—३२; पृष्ठ—१९१ मूल्य—१२ रुपये

पेरिस को
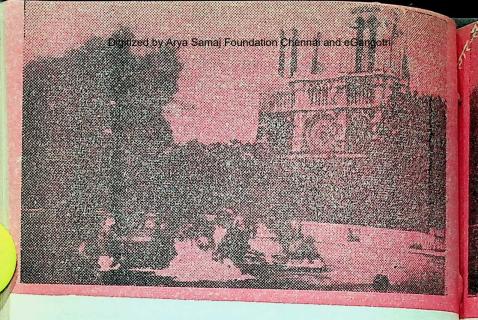
२ अगस्त, १९४४! पेरिस पर जरमन आधिपत्य स्थापित हुए सवा चार वर्ष बीत गये। नात्रेदम के एक बुर्ज पर जरमन वायुसेना लुफ्तवाफे का अधेड़ सार्जेंट दूरबीन लेकर पहरे पर तैनात है। रात गहराती जा रही है और सार्जेंट चारों ओर दृष्टि डालने के बाद निश्चिंत हो गया है। उसे मालूम है कि फ्रांसीसी मुक्ति-सेना इस क्षेत्र में अपने छाताधारी सैनिक और संदेशवाहक उतारती है, लेकिन ऐसा प्रायः पूर्णिमा की रात में ही होता है जब चारों ओर दूधिया चांदनी खिली रहती है। यह रात तो अंधेरी है, चारों ओर स्याही पुती हुई है। इस रात मुक्तिसेना के छाताधारी सैनिकों के उतरने की कोई संभावना नहीं है। यह सोचकर उसने दिमाग को ढीला छोड़ दिया और ऊंघने लगा।

उधर दो मील दूर गेहूं के कुचले हुए गीले खेत में दो पुरुष और एक महिला त्रिकोण बनाकर लेटे हुए हैं। उनके हाथ में ऐसे लैंप हैं जिनकी रोशनी बहुत ऊंचाई से ही देखी जा सकती है। उन्होंने ओर्क की घाटी पर उड़ते हुए हैलीफाक्स बमवर्षक विमान के मोटरों की दबी-घुटी-सी आवाज

जला डालो

• डोमीनिक लापियर, लारी कॉलिंस
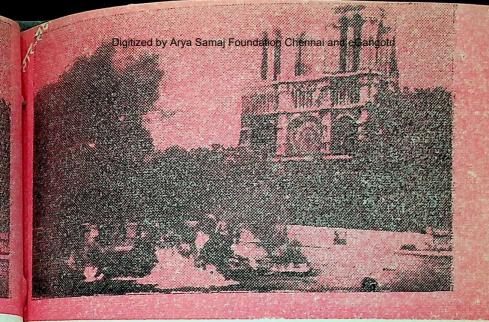
सुनी और वे चौकन्ने हो गये। उन्होंने अपने लैंपों की बत्तियां जलानी-बुझानी शुरू कीं। विमान-चालक ने वह रोशनी देखी और एक बटन दबाया। विमान के पीछे के दरवाजे की लाल बत्ती बुझ गयी और उसकी जगह हरी बत्ती जल उठी। दरवाजा खुल गया जिसके हत्थे को पकड़कर एक नौजवान विमान से नीचे कूद पड़ा।

वह छाताधारी कोई पेशेवर सैनिक नहीं, चिकित्सा-विज्ञान का एक फ्रांसीसी विद्यार्थी अलेन परपेजात था। उसकी

पेटी में पचास लाख फ्रांक (फ्रांसीसी सिक्का) के नोट बंधे हुए थे, लेकिन वह यह रकम पेरिस पहुंचाने के लिए उस अंधेरी रात में विमान से छलांग नहीं लगा रहा था। उसके जूते के तले में सिल्क का एक निहायत बारीक टुकड़ा जड़ा हुआ था जिसमें सांकेतिक भाषा में कोई संदेश था। और उसे यह भी मालूम था

ऊपर: नोत्रदाम के सामने जलता हुआ जरमन टैंक

कि यह संदेश अत्यंत आवश्यक है। तभी न मुक्तिसेना के अधिकारियों ने उसे इस अंधेरी रात में लंदन से पेरिस भेजा था!

परपेजात यह संदेश मुक्तिसेना के जासूस जेड एमिकाल के लिए लाया था। शेष रात परपेजात ने भूसे के एक बूंगे में बितायी। सवेरे सात बजे वह अपने कपड़ों पर लगे सब तिनके झाड़कर सड़क पर पहुंच गया। उसके सामने से जरमन वायुसेना का एक ट्रक गुजरा, उसने हाथ दिखाकर ट्रक को रोका और ड्राइवर ने खिड़की खोलकर उसे अपने पास बैठा लिया। फ्रांस का जासूस दुश्मन की गाड़ी में सवार होकर पेरिस पहुंच गया।

पेरिस की मुक्ति अभी नहीं

सेंट-ऐन के विक्षिप्त-गृह की घंटी पर तीन लंबी और एक छोटी ध्वनियां गूंज उठीं। सिस्टर जोन ने खिड़की में से झांका और परपेजात ने कहा, "मैं कर्नल के लिए संदेश लाया हूं, मेरा नाम अलेन है।" कर्नल क्लाड ओलीवियर ने संदेश पढ़ा, "मित्रराष्ट्र उच्च-कमान ने दृढ़ता से निश्चय कर लिया है कि मित्रराष्ट्र सेनाएं पेरिस को छोड़कर आगे बढ़ जाएंगी और पेरिस की मुक्ति में अधिक-से-अधिक देर लगायी जाएगी। इस योजना को किसी भी हालत में बदला नहीं जाएगा।" नीचे हस्ताक्षर थे—जनरल (सेनापति)

कर्नल ने सिर उठाकर परपेजात की ओर देखा और अनायास कह उठा, "हे प्रभु, यह तो भीषण संकट है!"

"जोड्ल, मैं जानना चाहता हूं कि क्या पेरिस जल रहा है?" यह कहकर हिटलर ने मेज पर घूंसा मारा और वह दुगने वेग से चीखने लगा, "पेरिस जल रहा है या नहीं? बोलो जोड्ल, तुरंत जवाब दो।"

हिटलर ने स्वप्न देखा था कि उसका रीश (जरमन साम्राज्य) पूरे एक हजार वर्ष तक कायम रहेगा। वह पेरिस को उसका प्रदर्शन-कक्ष बनाना चाहता था। किंतु, पश्चिमी मोर्चे पर भारी पराजय और वहां से नाजी सेनाओं की वापसी के कारण वह पेरिस को नष्ट करने पर उतारू हो गया। उसने आदेश जारी कर दिये कि 'पेरिस को जला डालो, उसको बारूद से नेस्त-नाबूत कर दो' और वह बारूद सचमुच पेरिस के ऐतिहासिक भवनों, महलों और स्मारकों की नींव में भर दिया गया। ...मगर पेरिस बच गया। पेरिस की उस भीषण त्रासदी की यह मर्मांतक कहानी सुना रहे हैं—(प्रख्यात कृति 'फ्रीडम एट मिडनाइट' के लेखक-द्वय) लारी कालिन्स और डोमिनिक लापियर। उनकी पुस्तक 'इज पेरिस बर्निंग' का यह सार-संक्षेप प्रस्तुत कर रही हैं डॉ. कुसुम)

यह निश्चय मित्रराष्ट्रों की सेना के सर्वोच्च सेनापति जनरल ड्वाइट डी. आइजनहावर का था। उन्हें पक्का विश्वास था कि जरमन सेनाएं पेरिस को अपने हाथों में बनाये रखने के लिए भरसक प्रयास

करेंगी। उन्हें पेरिस से निकालने के लिए स्तालिनग्राद की तरह पेरिस के हर गली-कूचे में युद्ध करना होगा, एक लंबा युद्ध। इस युद्ध में पेरिस पूरी तरह तबाह भी हो सकता है। आइजनहावर पेरिस की तबाही के लिए तैयार न थे। न वे यह चाहते थे कि उनकी समूची सेना और सैनिक-सामग्री एक नगर के बचाव में ही खप जाए।

अल्जीरिया में उदास फ्रांसीसी सेनापति

फ्रांस की पराजय के बाद १८ जून, १९४० को चार्ल्स द गाल ने लंदन से अपने देश-वासियों के नाम एक संदेश में कहा था कि वे साहस न खोयें। फ्रांस को एक दिन मुक्त करा लिया जाएगा। द गाल ने संकल्प कर लिया था कि मुक्त फ्रांस पर 'मेरा नियंत्रण होगा।' उनके मन में यह धारणा उत्पन्न हो गयी थी कि उनके मार्ग में दो बाधाएं हैं—फ्रांसीसी कम्युनिस्ट पार्टी और अमरीका। राष्ट्रपति फ्रैंकलिन डी. रूजवेल्ट ने द गाल की 'राष्ट्रीय फ्रांस-मुक्ति-समिति' (कमिटि फ्रांकाय द लिबरेशन नेशनेल : सी. एफ. एल. एन.) को मान्यता देने से इंकार कर दिया था।

जो भय हाइजनहावर के मन में जरमनी के बारे में था वही द गाल के मन में फ्रांस के बारे में था। उन्होंने निश्चय कर लिया था कि वे पेरिस पर साम्यवादियों का नियंत्रण स्थापित न होने देंगे। वे जानते थे कि जो शक्ति पेरिस पर अधिकार कर लेगी, वही फ्रांस पर शासन करेगी। इसी कारण उन्होंने यह आदेश दिया था कि पेरिस पर शस्त्र न गिराये जाएं क्योंकि वे साम्यवादियों के हाथों लग सकते हैं।

हिटलर का स्वप्न और पेरिस

पेरिस द गाल का ही स्वप्न न था। वह शताब्दियों से जरमन जाति का भी स्वप्न था। १९१४ से १९१८ तक साठ लाख जरमन सैनिक 'पेरिस चलो' के नारे पर पूरे चार वर्ष पेरिस के पूर्वी क्षेत्र में खाइयों में पड़े रहे, जिनमें हिटलर भी था। उनमें से बीस लाख उन खाइयों में ही मर गये थे। उन चार लंबे वर्षों की विफलता को हिटलर ने १९४० में चार सप्ताह के भीतर सफलता में परिणत कर दिया और पेरिस पर जरमन आधिपत्य स्थापित होने के दो सप्ताह बाद ही वह पेरिस की दिग्विजय-यात्रा पर गया। जब वह अपनी काली मर्सिडीज कार से उतरकर त्रोका-देरो के एस्प्लेनेड पर खड़ा हुआ तो उसके सामने एक ऐतिहासिक दृश्य फैल गया—सोन नदी, एफेल टावर, चैंप द मार्स के उद्यान, लैस इनवैलीड्स में नेपोलियन की कब्र का सुनहरा गुंबद और बायीं ओर क्षितिज को छूता हुआ ८०० वर्ष पुराना नात्रेदम का टावर।

अब चार वर्ष बाद हिटलर के हाथों में पांच वर्षों के युद्ध का एक ही पुरस्कार बचा रह गया था—पेरिस। मित्रराष्ट्रों की सेनाएं नार्मंडी में प्रवेश कर चुकी थीं और हिटलर जानता था कि पूर्वी मोर्चे पर मात खाने के बाद अब उसके सिर पर फ्रांस का युद्ध आ पड़ा है। यदि वह उस

युद्ध में हार गया तो उसके सामने केवल एक युद्ध शेष रह जाएगा—जरमनी का युद्ध। हिटलर ने अपने छोटे से जीवन-काल में पेरिस पर दो बार आक्रमण किया था और अब वह उसका स्वामी था, लेकिन इतिहास की विडंबना यह थी कि अब हिटलर को पेरिस पर आक्रमण नहीं वरन उसका रक्षण करना था। पिछले पांच दिनों से हिटलर अपने रास्तेनबर्ग के बंकर में पेरिस के नक्शों का अध्ययन कर रहा था। अंततः उसने बरगद की भारी मेज पर घूंसा जमाया और वह अपने सेनापतियों की ओर मुड़कर चीखा, "जो शक्ति पेरिस को अपनी मुट्ठी में रख सकती है, वही फ्रांस पर शासन करेगी।"

२० जुलाई को हिटलर की हत्या का षड्यंत्र उसके ही सेनापतियों ने किया था जिसके कारण वह बहुत शंकालु हो गया था। वह पेरिस के जरमन कमांडर जनरल हंस वान बोइनबर्ग-लैंग्सफैल्ड के स्थान पर किसी अधिक वफादार सेनापति की नियुक्ति करना चाहता था। हिटलर के प्रमुख विश्वासपात्र जनरल विल्हेल्म-बुर्गडौर्फ ने उससे कहा कि यह काम हमें सेवास्टोपोल के नाजी विजेता मेजर जनरल डीट्रिख वान कोल्टित्ज को सौंपना चाहिए। हिटलर ने यह सुझाव मान लिया और आदेश दिया कि कोल्टित्ज को तुरंत रास्तेनबर्ग बुलाया जाए।

ऐतिहासिक मुलाकात

कोल्टित्ज का स्वागत बुर्गडौर्फ ने किया और वे दोनों हिटलर के बंकर के सामने टहलते हुए हिटलर के आमंत्रण की प्रतीक्षा करने लगे। कोल्टित्ज ने पूछा, "मुझे इस काम के लिए क्यों चुना गया?" बुर्गडौर्फ ने गंभीरतापूर्वक उत्तर दिया, "क्योंकि हम यह जानते हैं कि वहां जो किया जाना है वह तुम ही कर सकते हो।"

संकेत पाते ही दोनों हिटलर के कक्ष में दाखिल हुए। वह उस समय एक डेस्क का सहारा लिये खड़ा था। कोल्टित्ज ने सलामी दी और यह देखकर सन्नाटे में आ गया कि जो हिटलर किसी जमाने में शौर्य की प्रतिमा था, वही अब बूढ़ा हो गया है और उसकी आंखें एकदम निस्तेज हो गयी हैं। हिटलर ने अपने बायें हाथ को दायें हाथ से संभाल रखा था क्योंकि वह बुरी तरह कांपता था।

हिटलर ने बोलना शुरू किया

वह कोल्टित्ज को अपने जीवन की समूची कहानी सुनाने लगा। उसने कहा 'मैंने बहुत परिश्रम से नाजी दल का संगठन किया जिसने जरमनी की संघर्षशील आत्मा के मार्गदर्शन के लिए आवश्यक नेतृत्व प्रदान किया है।' अब उसकी आवाज में गरमी आयी और उसने कहना शुरू किया, "नार्मंडी की पराजय एक अस्थायी चीज है। मैं शीघ्र ही नये शस्त्रों द्वारा नयी विजय की ओर बढ़ूंगा।"

फिर वह कोल्टित्ज की आंखों में देखकर बोला, "तुम अब पेरिस जा रहे हो। तुम्हारा पहला काम आतंक पैदा

करता है, सेना को अनुशासित करना है। तुम फ्रांसीसी जनता के प्रतिरोध का बर्बरतापूर्वक दमन करोगे। उस मामले में तुम्हें मेरा पूरा समर्थन मिलेगा।" मुलाकात समाप्त हो गयी और कोल्टित्ज को लगा कि सब कुछ समाप्त हो चुका है।

पेरिस का प्रश्न : कब्रिस्तान-सा माहौल

कोल्टित्ज ने पेरिस पहुंचकर कार्यभार

में रखना चाहते हैं तो हमें पेरिस पर अधिकार जमाये रखना होगा। अंतिम जरमन सैनिक के प्राण बने रहने तक पेरिस की रक्षा की जाए, भले ही उसके लिए कितनी भी तबाही करनी पड़े।" फिर कुछ रुककर बोला, "पेरिस को क्यों न नष्ट कर डालें, जब मित्रराष्ट्र अपने बमों से जरमनी को नष्ट कर रहे हैं!"

द गाल का नगर-प्रवेश

संभाल लिया। उधर हिटलर का सहायक जनरल वाल्टर वार्लीमौंट पश्चिमी मोर्चे से लौटकर वहां की रिपोर्ट देने हिटलर के बंकर पहुंचा। मेज पर पेरिस का मानचित्र फैलाकर हिटलर कहता जा रहा था, "अगर हम सीन नदी को अपने कब्जे

उधर कोल्टित्ज पश्चिमी मोर्चे के सर्वोच्च कमांडर जनरल फील्ड मार्शल गुंथर वानक्लूज से मिलने जा पहुंचा। क्लूज ने कोल्टित्ज से कहा, "पेरिस की रक्षा की जाएगी और वह तुम करोगे। दुश्मन पेरिस को छोड़कर आगे निकलने

की कोशिश करेगा, तुम उसे वहां युद्ध में उलझाओगे, उसे पेरिस के गली-कूचों में लड़ने के लिए विवश करोगे।"

कोल्टित्ज ने सेना की मांग की तो क्लूज ने कहा, "अभी उसकी जरूरत नहीं है। समय आने पर तुम्हें सेना दे दी जाएगी।"

कोल्टित्ज पेरिस के निवासियों के मन पर यह धाक जमाना चाहता था कि जरमन सेना का पेरिस पर पूर्ण नियंत्रण है और भले ही वह नियंत्रण एक हजार वर्ष तक न रहे, अभी कुछ और समय तक उसके ढीला पड़ने की आशा नहीं करनी चाहिए। वह मुक्ति-संघर्ष को दबाये रखना चाहता था। सैनिकों की कमी को छिपाने के लिए उसने उन्हें आदेश दिया कि प्रत्येक जरमन सैनिक दोपहर को बारह बजे शुरू होनेवाली सशस्त्र परेड में वर्दी पहनकर शामिल हो और एक ही चौक में दो बार परेड घूमे जिससे पेरिस के लोगों पर यह आतंक बैठ जाए कि जरमन सैनिकों की संख्या बहुत अधिक है। परेड शुरू हुई जिसमें जरमन टैंकों, ट्रकों और कवचबद्ध गाड़ियों ने भी भाग लिया।

कोल्टित्ज इस परेड की प्रतिक्रिया जानने के लिए स्वयं असैनिक वेश में द ल ऑपेरा के चौक में काफे द ल पैक्स के सामने खड़ा होकर अखबार पढ़ने का बहाना करने लगा। उसके पास खड़ी तीन लड़कियां खिलखिलाकर हंस रही थीं और परेड का मजाक उड़ा रही थीं। कोल्टित्ज का चेहरा लाल हो गया। उसे लगा—परेड अपने प्रयोजन में निष्फल हो गयी।

पेरिस की हत्या के लिए एक नया दैत्य

१४ अगस्त को हिटलर के बंकर में सेनापतियों की मंत्रणा चल रही थी। अचानक हिटलर का ध्यान पेरिस की ओर गया और वह शस्त्रास्त्र अधिकारी जनरल बुहले की ओर मुड़कर चीखा, "हमने ब्रैस्ट-लिटोव्स्क और सेबास्टोपोल पर आक्रमण के लिए जिस ६०० मि. मी. की तोप का निर्माण किया था वह कहां है? उसे फौरन कोल्टित्ज के पास पेरिस भेज दो।"

वह विशालकाय तोप जिसे उसके आविष्कारक जनरल कार्ल बेकर के नाम पर कार्ल कहा जाता था, बर्लिन के एक अस्त्रागार में थी। कार्ल तोप परमाणु-बम से पहले के जमाने की सबसे अधिक घातक तोप थी। उससे ढाई टन के गोले छोड़े जा सकते थे जिनकी मोटाई दो फुट होती थी और वह तीन मील तक वार कर सकती थी। उसका गोला सीमेंट कांक्रीट से बनी आठ फुट मोटी दीवार को वेध सकता था। पेरिस का समूचा शहर चंद गोलों से नष्ट किया जा सकता था। कोल्टित्ज ने उसका इस्तेमाल सेबास्टोपोल के युद्ध में किया था। कार्ल को उसी दिन रेलगाड़ी द्वारा पेरिस के लिए रवाना कर दिया गया। आठ दिन बाद तोप पेरिस पहुंच गयी।

उधर क्लूज ने कोल्टित्ज को अपने बंकर में बुलाया और वहां उसके स्टाफ
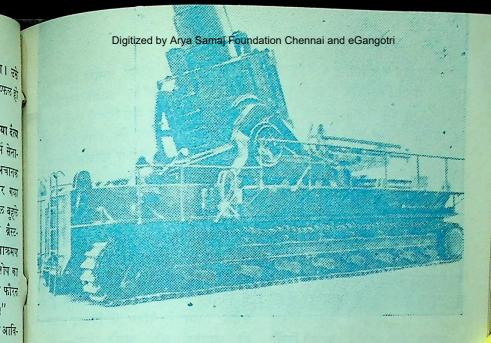
तीन मील मार करनेवाली तोप 'कार्ल'

अध्यक्ष गुंथर ब्लूमैंट्रिट ने पेरिस के मानचित्र की मदद से समझाना शुरू किया कि पेरिस के आसपास के तमाम उद्योगों को नष्ट कर देना है तथा नगर की जल, गैस, बिजली आदि अनिवार्य सेवाओं को तहस-नहस कर डालना है। कोल्टित्ज ने शांतिपूर्वक जवाब दिया कि ये हम तब करेंगे जब हमें पेरिस छोड़कर जाना होगा, अभी तो हमारे सैनिकों को भी उन सब सेवाओं की आवश्यकता है, वे भी पानी पीते हैं। इस जगह आकर क्लूज ने चर्चा को रोक दिया और कहा कि इस बारे में अंतिम आदेश मैं शीघ्र ही दूंगा। दो दिन बाद ही क्लूज को सर्वोच्च कमांडर के पद से हटा दिया गया और उसे जरमनी लौटने का आदेश दिया गया। चलते समय उसने कोल्टित्ज को आदेश दिया कि पेरिस को नष्ट करना शुरू कर दो। नियति की कैसी विडंबना है कि चंद घंटे बाद ही जरमनी के रास्ते में क्लूज को यह पता लग गया कि हिटलर को उस पर संदेह हो गया है कि वह भी २० जुलाई के षड्यंत्र में शामिल था, और उसने जहर खाकर आत्महत्या कर ली। पेरिस तो नष्ट नहीं हुआ क्लूज समाप्त हो गया।

कोल्टित्ज जब पश्चिमी कमान के प्रधान कार्यालय से लौटकर अपने होटल में आया तब उससे कहा गया कि जरमनी के प्रधान सेनापति जोड्ल ने कुछ इंजीनियर भेजे हैं जो ये आदेश लाये हैं कि

पेरिस के तमाम कारखानों के नीचे बारूदी सुरंगें बिछा दीं जिससे कि पेरिस के पतन की स्थिति में उन्हें उड़ाया जा सके। इस दल का नेता कैप्टेन वर्नर एबरनैक था।

अगले दिन जोड्ल ने कोल्टित्ज को फोन किया और उससे कहा, "हमने पेरिस को नष्ट करने के जो आदेश दिये थे उनके पालन की क्या स्थिति है? मुझे इस बारे में तुरंत फ्यूहरर को सूचित करना है।" कोल्टित्ज ने कहा, "बारूदी सुरंग बिछानेवाला दस्ता एक दिन पहले ही यहां पहुंचा है, हम सुरंगें बिछा रहे हैं।"

विशी सरकार द्वारा नियुक्त पेरिस के महापौर पियरे चार्ल्स टैंटिंगर को किसी अनाम व्यक्ति ने फोन पर बताया कि पेरिस के पुलों के आसपास के क्षेत्र जरमन सेना ने खाली कर दिये हैं, उन्हें बारूद से उड़ाया जानेवाला है। यह सुनना था कि टैंटिंगर जनरल कोल्टित्ज के पास पहुंचा। कोल्टित्ज ने उसे स्पष्ट कहा कि मेरा यह कर्तव्य है कि मैं मित्रराष्ट्र सेना को पेरिस में घुसने से रोकूं, इसके लिए मुझे पुलों, बिजलीघरों, रेलवे और संचार साधनों को नष्ट करना होगा।

टैंटिंगर कुछ क्षण खामोश रहा, उसके बाद वह छज्जे पर जा खड़ा हुआ और कोल्टित्ज से बोला, "यह सही है कि सेनापति को प्रायः सुरक्षा का नहीं, तबाही का दायित्व सौंपा जाता है, फिर भी आप कल्पना करके देखें कि एक दिन आप पर्यटक के तौर पर यहां आयें और इसी छज्जे पर खड़े होकर हमारी प्रसन्नता और हमारी व्यथा के साक्षी स्मारकों को देखकर कहें कि एक दिन मैं इन्हें नष्ट कर सकता था लेकिन मैंने मानवजाति के प्रति उपहारस्वरूप इनका संरक्षण किया, तो क्या वह आत्मसंतोष विजेता की समस्त महत्ता के बराबर नहीं होगा?"

क्लूज की जगह पश्चिमी जरमन कमान का प्रधान सेनापति बनकर फील्ड मार्शल मौडल आ गया। उसने कोल्टित्ज का यह तर्क स्वीकार कर लिया कि क्लूज ने विनाश के जो आदेश जारी किये हैं, उनके पालन से पेरिस में विप्लव खड़ा हो जाएगा, और उसने कहा—"मैं सोचकर तुम्हें आखिरी आदेश दूंगा, मगर यह ध्यान रखना कि यदि हमारी पराजय हुई तो यह शहर नष्ट हो चुका होगा। इस काम में हमें ४० घंटे ही लगेंगे।"

लौह-पुरुष का निश्चय और अगला कदम

डेलमास ने जब यह देखा कि साम्यवादियों ने संघर्ष की पूरी तैयारी कर ली है तब वह भागकर लंदन गया और उसने मित्र-राष्ट्र हाईकमान को पेरिस पर आक्रमण के लिए तैयार करने की कोशिश की, जिसमें वह विफल होकर लौटा, मगर उसके संदेश ने फ्रांस के लौह-पुरुष को अंतिम निश्चय के लिए विवश कर दिया। द गाल ने निश्चय कर लिया था कि उन्हें पेरिस पहुंचकर अपनी सत्ता का प्रदर्शन करना होगा, पर अपने इस प्रयोजन को उन्होंने मित्रराष्ट्रों से छिपाया।

१९ अगस्त : संघर्ष और संधि

साम्यवादियों ने एक गुप्त सभा में यह निश्चय किया कि १९ अगस्त को संघर्ष छेड़ दिया जाएगा। उन्हें मालूम न था कि द गालवादियों के नेता अलेक्जांद्रे पेरोडी ने उनके बीच अपना जासूस छोड़ रखा है। पेरोडी को ज्यों ही यह मालूम हुआ, उसने पेरिस-पुलिस के हड़ताली अधिकारियों और सिपाहियों के पास यह संदेश भिजवा दिया कि १८ अगस्त को सवेरे ही सात बजे

वर्ष दो माह और चार दिन बाद उस भवन पर फ्रांस का तिरंगा राष्ट्रध्वज फिर से फहरा उठा और राष्ट्रधुन बजने लगी।

साम्यवादियों को इस घटना की सूचना एक घंटे बाद मिली। तब तक द गाल द्वारा नियुक्त पेरिस-पुलिस-प्रीफेक्ट चार्ल्स लुइजेत अपने पद का भार संभाल चुका था।

मगर साम्यवादी भी कम चुस्त न थे, उन्होंने सारे शहर में संघर्ष छिड़ने और आम विद्रोह के बारे में पोस्टर चिपका दिये

मवितदूत हेमिंग्वे—दायें से प्रथम

बायेत के नेतृत्व में पुलिस के प्रधान कार्यालय पर अधिकार कर लिया जाएगा।

१९ अगस्त को सवेरे हजारों पुलिसमैन और नागरिक पुलिस-प्रधान-कार्यालय में घुस आये और उनके सामने बायेत ने घोषणा की कि फ्रांस के गणतंत्र और चार्ल्स द गाल के नाम पर मैं पुलिस-प्रधान-कार्यालय पर अधिकार करता हूं। चार

और जरमन सैनिकों की हत्याएं की जाने लगीं।

जनरल कोल्टित्ज इस समाचार पर रोष में आ गया और उसने अपने सैनिक अधिकारियों के साथ परामर्श के बाद निश्चय किया कि पुलिस के प्रधान कार्यालय पर बम गिराये जाएं और उसे टैंकों से धूल-धूसरित कर दिया जाए। उसने

अपने सह[illegible] को आदेश दिया कि वायुसेना २० अगस्त को सूर्योदय के आधे घंटे बाद बम गिरायेगी, इसके लिए उसे सचेत कर दिया जाए ।

लगभग इसी समय स्वीडन के राजदूत नोर्डलिंग के फोन की घंटी बजी । पुलिस के प्रधान कार्यालय से कोई बोल रहा था, "हमारी स्थिति विकट हो गयी है । जरमन सेना ने हमें चारों ओर से घेर लिया है । क्या आप हमारे लिए कुछ नहीं कर सकते ?" नोर्डलिंग ने तुरंत कोल्टित्ज को फोन करके मिलने की अनुमति मांगी और हां में उत्तर मिलने पर वह कोल्टित्ज के होटल पहुंच गया । बाहर से गोली चलने की आवाज आयी और कोल्टित्ज उत्तेजित होकर बोला, "कल सवेरे मैं उन्हें साफ कर दूंगा । हमारे विमान बम गिराकर पुलिस कार्यालय को धूल में मिला देंगे ।"

यह सुनकर नोर्डलिंग ने धीरे से कहा, "नोत्रे-दाम वहां से सिर्फ २०० गज दूर है और सेंट-चैपेल सड़क के उस पार; विमान जरा चूक गये तो सब कुछ नष्ट हो जाएगा । इन शब्दों ने कोल्टित्ज को चौंका दिया और वह बोला, "आखिर मेरे सामने दूसरा रास्ता ही कहां है ?"

"रास्ता तो है, युद्ध-विराम स्वीकार कर लिया जाए," नोर्डलिंग ने कहा । कोल्टित्ज सोचने लगा कि यदि सचमुच युद्ध-विराम से शांति स्थापित हो जाए तो पेरिस के विनाश से बचा जा सकता है । उसने नोर्डलिंग से कहा, "कोशिश करो, मगर मेरा नाम उसके साथ मत जोड़ना ।"

नोर्डलिंग ने पुलिस के प्रधान कार्यालय को फोन करके कहा "युद्ध-विराम स्वीकार कर लिया गया है, तुम अपनी ओर से संघर्ष को तुरंत रोक दो ।" इस समय सवेरे के तीन बजे थे, सिर्फ ३ घंटे २१ मिनट बाद पेरिस पर बम-वर्षा होनेवाली थी जिसे नोर्डलिंग के प्रयास ने रोक दिया ।

द गाल की फ्रांस वापसी

सर विल्सन ने अमरीकी सरकार से बातचीत करने के बाद द गाल को फ्रांस-यात्रा की अनुमति दे दी । द गाल तुरंत फ्रांस पहुंच गये और आइजनहावर से मिले । आइजनहावर के लिए द गाल की राजनीतिक विवशताएं महत्त्वहीन थीं, लेकिन द गाल के लिए वे सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण थीं । उन्होंने निश्चय कर लिया था कि फ्रांस पर साम्यवादियों का प्रभुत्व स्थापित नहीं होने दिया जाएगा । उन्होंने आइजनहावर से साफ तौर पर कह दिया कि फ्रांस के लिए पेरिस की मुक्ति इतनी महत्त्वपूर्ण है कि यदि मित्रराष्ट्र सेना ने उस ओर ध्यान न दिया तो मुझे विवश होकर द्वितीय फ्रांसीसी बख्तरबंद डिवीजन को आपके नियंत्रण से वापस लेकर अपनी ओर से पेरिस भेजना होगा ।

उधर पेरिस में मुक्तिसेना और जनरल कोल्टित्ज के बीच हुआ युद्ध-विराम साम्यवादियों ने भंग कर दिया तथा चारों ओर मारकाट शुरू हो गयी । नागरिकों ने घायलों और मुर्दों को अस्पतालों

सैनिकों की परेड

और मरघटों में पहुंचाने के लिए स्वयंसेवी दस्ते संगठित किये। इन्हीं में से एक दस्ते में ज्यां पाल सार्त्र भी थे जिन्होंने इस खयाल से रात की ड्यूटी ली थी कि रात में अधिक शांति रहती है। वे अपने अनुभवों को लिखना चाहते थे। उनके साथियों में फ्रांस के राष्ट्रीय रंगमंच 'कामेडी फ्रांकाय' के सदस्य थे।

आइजनहावर ने अधिकारपूर्वक द गाल की धमकी का उत्तर देते हुए कहा था कि यदि फ्रांसीसी डिवीजन पेरिस के लिए चली तो उसे शस्त्रास्त्र, रसद और गैसोलीन नहीं दिये जाएंगे। मगर उन्हें मालूम न था कि लेक्लर्क काफी दिनों से दुगुना राशन, शस्त्रास्त्र और गेसोलीन ले रहा था।

रेने जिला-कार्यालय में फ्रांस की अस्थायी सरकार के अध्यक्ष जनरल द गाल २१ अगस्त की सुबह आइजनहावर के नाम अंतिम चेतावनी लिख रहे थे। उनका यह संदेश लेकर उनके मित्र जनरल अल्फोंजे जिन रवाना हो गये और द गाल एक दूसरा पत्र लिखने बैठ गये। यह जनरल लेक्लर्क के नाम था, और उसमें द गाल ने फ्रांस के मुखिया की हैसियत से आदेश दिया था कि तुरंत पेरिस के लिए कूच करो।
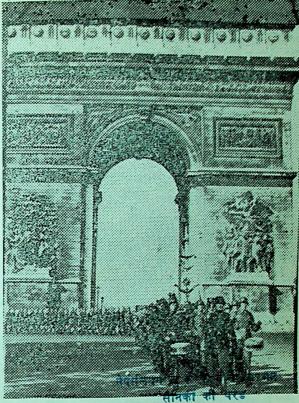
जनरल कोल्टित्ज का अंतःकरण

पेरिस का सर्वोच्च जरमन शासक जनरल वान कोल्टित्ज बार-बार यह आदेश प्राप्त कर रहा था कि पेरिस को नष्ट कर दो, लेकिन वह इसके लिए तैयार न था। यों अब तक समूचे पेरिस के नीचे बारूदी सुरंगें बिछायी जा चुकी थीं और कोल्टित्ज के एक इशारे पर समूचा पेरिस

एक विस्फोट में तबाह हो सकता था, लेकिन वह इसके लिए तैयार न था। वह जानता था कि यह विश्वासघात है और इसके लिए हिटलर उसे मौत की सजा दे सकता है। उसने निश्चय किया कि यदि मित्रराष्ट्र-सेनाएं पेरिस में प्रवेश करके उसे इस दायित्व से मुक्त नहीं कर लेतीं तो अंततः उसे पेरिस को नष्ट करने का आदेश देना ही होगा। पर वह चाहता था कि मित्रराष्ट्र-सेनाएं आकर पेरिस को संभाल लें और उसे बंदी बना लें।

२२ अगस्त को स्वीडन के राजदूत राउल नोर्डलिंग कोल्टित्ज के बुलावे पर उसके होटल पहुंचे। कोल्टित्ज ने नोर्डलिंग को ह्विस्की पेश की और स्वयं अपना गिलास एक ही घूंट में समाप्त करके बोला, "आपका युद्ध-विराम तो विफल हो गया है।" नोर्डलिंग ने कोल्टित्ज से कहा, "वास्तव में मुक्तिसेना पर द गाल के अतिरिक्त अन्य किसी व्यक्ति का वश नहीं चलता।"

यह सुनते ही कोल्टित्ज के मुंह से निकल पड़ा, "तब कोई द गाल से मिलने क्यों नहीं जाता?" पहले तो नोर्डलिंग यह सुनकर खामोश हो गया मगर बाद में बोला, "आप इजाजत देंगे?" "क्यों नहीं?" कोल्टित्ज ने उत्तर दिया।

नोर्डलिंग घर लौटा तो उसे दिल का दौरा पड़ गया और अंततः उसने अपने भाई को मित्रराष्ट्र-प्रधान कार्यालय के लिए रवाना किया जिसकी रिपोर्ट के आधार पर अमरीकी सेनापति ब्रेडले ने द्वितीय फ्रांसीसी बख्तरबंद डिवीजन के पीछे-पीछे चौथी अमरीकी डिवीजन को भी रवाना कर दिया।

२२ अगस्त की रात के बारह बजे जब फ्रांसीसी जनरल लेक्लर्क ने अपने डिवीजन के लिए कूच के आदेश पर हस्ताक्षर किये, ठीक उसी समय ग्यारह सौ मील दूर रास्तेनबर्ग के फ्यूहरर बंकर में हिटलर ने जनरल कोल्टित्ज के नाम यह आदेश जारी किया: "सैनिक और राजनीतिक योजनाओं में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण पेरिस के पुलों की रक्षा की योजना है। पेरिस छिन जाने पर सीन नदी के उत्तर में समूचा तटवर्ती क्षेत्र हाथ से निकल जाएगा जिसमें इंगलैंड पर आक्रमण करने के लिए बनाये गये राकेट-अड्डे हैं। इतिहास साक्षी है कि हर बार पेरिस छिन जाने पर समूचा फ्रांस हाथों से निकल गया है। अतः शहर की इमारतों को उड़ा दो और मुक्तिसेना के सेनापतियों को चौराहों पर फांसी लगा दो।"

यह आदेश मिलते ही कोल्टित्ज ने साठ मील दूर जरमन सेना 'बी' समूह के मुख्य कार्यालय में स्टाफ के मुखिया जनरल स्पीडेल के नाम फोन किया और उससे कहा कि इस शानदार आदेश के लिए शुक्रिया। स्पीडेल चकित होकर बोला कि कौन-सा आदेश जनरल? कोल्टित्ज ने उसे बताया कि वही पेरिस को मलबे के ढेर में बदल डालने का आदेश।

स्पीडेल ने प्रतिरोध के स्वर में कहा कि यह आदेश फ्यूहरर का है।

कोल्टित्ज रोष में बोलता जा रहा था, "मैंने चैंबर ऑव डेपुटीज (संसद भवन) में एक टन, ल इनवैलीड्स के तहखाने में दो टन, और नोत्रेदम की नींव में तीन टन बारूद भरवा दी है। आशा है, तुम इस योजना से सहमत हो।" उत्तर मिला, "हां।" कोल्टित्ज ने फिर कहा, "मैं मैडलीन और ओपेरा को एक ही झटके में साफ करा दूंगा और शीघ्र ही आर्क द ट्रायंफ (विजय मेहराब) और एफेल टावर को भी बारूद से गिरवा दूंगा ताकि पुलों का मार्ग रुक जाए।

पेरिस के लिए कूच

हिटलर के आदेश पर छब्बीसवीं और सत्ताइसवीं जरमन पैंजर डिवीजन पहले ही कूच कर चुकी थीं और वे २६ अगस्त को पेरिस पहुंचनेवाली थी। उधर फ्रांसीसी सेना ने २३ अगस्त के सवेरे पेरिस की ओर कूच का बिगुल बजा दिया था।

दो दिन पहले ही तीन अमरीकी रैमबुले पहुंचे थे। इनमें से एक कर्नल डेविड ब्रूस था, दूसरा जीप-ड्राइवर पैल्के और तीसरा एक युद्ध-संवाददाता जो अमरीकी प्रेस-कोर के मुखिया के नाते पेरिस की ओर बढ़ रहा था। इस संवाद-दाता ने रैमबुले पहुंचकर सबसे पहले ग्रैंड वेनूर नामक होटल को जरमनों के कब्जे से छीना। उसने होटल में कुछ हथगोले, एक कारबाइन बंदूक और एक नक्शा लेकर प्रवेश किया। लोग उसे कैप्टन कहकर पुकार रहे थे। यह कैप्टन फ्रांस के इतिहास में फ्रांसीसी सेना का पहला गैर-फ्रांसीसी जनरल बना : जनरल अर्नेस्ट हेमिंग्वे। हेमिंग्वे इधर-उधर फैले जरमन सैनिकों को पकड़ते और उनकी पतलून उतरवाकर उन्हें मुक्तिसेना के रसोईघर में आलू छीलने पर लगा देते।

पेरिस में इस समय संघर्ष तीव्र होता जा रहा था। नगर में न भोजन की सामग्री थी, न पीने का प्रचुर जल, मगर नगर-वासी अपनी मुक्ति के लिए पागलों की तरह लड़ और मर रहे थे। पेरोडी ने

कोल्टित्ज : आत्मसमर्पण

आपके परिवार को सर्वश्रेष्ठ ही चाहिये !
COLGATE DENTAL CREAM
DC.G.49 HN (R)
कोलगेट डेन्टल क्रीम से सांस की दुर्गंध रोकिये... दंतक्षय का दिनभर प्रतिकार कीजिये !
वैज्ञानिक परीक्षणों से यह सिद्ध हो चुका है कि १० में से ७ लोगों के लिए कोलगेट सांस की दुर्गंध को तत्काल खत्म कर देता है और खाना खाने के तुरंत बाद कोलगेट विधि से दांत साफ़ करने पर अब पहले से अधिक लोगों का— अधिक दंतक्षय रुक जाता है। दंत-मंजन के सारे इतिहास की यह एक बेमिसाल घटना है। क्योंकि एक ही बार दांत साफ़ करने पर कोलगेट डेन्टल क्रीम मुंह में दुर्गंध और दंतक्षय पैदा करने वाले ८५ प्रतिशत तक कीटाणुओं को दूर कर देता है।
इसका पिपरमिंट जैसा स्वाद भी कितना अच्छा है—इसलिए बच्चे भी नियमित रूप से कोलगेट डेन्टल क्रीम से दांत साफ़ करना पसंद करते हैं।
ज्यादा साफ़ व तरोताजा सांस और ज्यादा सफ़ेद दांतों के लिए...
दुनिया में अधिक लोग दूसरे टूथपेस्टों के बजाय कोलगेट ही खरीदते हैं।
अधिक सफ़ेद दांतों, अधिक स्वस्थ मसूढ़ों व मुंह में अधिक ताजगी के लिये कोलगेट टूथ ब्रश इस्तेमाल कीजिये ! १६ विभिन्न किस्मों में— आपके परिवार में हरेक के लिये अनुकूल !

बहुत अक्लमंदी का काम किया। विशी सरकार के मंत्री भाग गये थे, उसने उनके निवास-स्थानों और मंत्रालयों पर अपने लोग तैनात कर दिये। यह साम्यवादियों का प्रभुत्व बचाने की योजना थी।

२३ अगस्त को मित्रराष्ट्र सेना का प्रेस अधिकारी ले. सैम ब्राइटमैन ग्रैंड वेनूर होटल के रेस्तरां में बैठा सोच रहा था कि यदि फ्रांस के सैनिकों को इस समय कहीं से जनरल द गाल मिल जाएं तो जरमनों की धज्जियां उड़ा दें। इतने में ही उसके लिए खाने की सामग्री लिये चली आ रही परिचारिका किसी अज्ञात रोमांच से सिहरकर खड़ी हो गयी और उसके हाथ से भोजन-सामग्री सहसा गिर पड़ी। उसने एक दीर्घ निश्वास किया और सीने पर हाथ रखकर वह चीख उठी: "द गाल, द गाल, द गाल, द गाल!"

सचमुच उसने रैमबुले से गुजरते हुए द गाल को देख लिया था, और जिन्होंने उन्हें नहीं देखा था वे भी उनकी जय के नारे लगा रहे थे, मगर द गाल उन नारों के बीच स्थितप्रज्ञ बने फ्रांसीसी सेना के आगे-आगे अपनी राजधानी की ओर बढ़ रहे थे। वे रैमबुले के राजमहल में पहुंचे जहां उनके लिए राष्ट्रपति का कक्ष खोला गया, मगर उन्होंने उसमें प्रवेश करने से इनकार कर दिया और एक सिरे के दो कमरों में दफ्तर जमा लिया।

चार साल बाद पेरिसवासियों ने खिड़कियां खोल दीं और गिरजाघरों की घंटियां मुक्ति के निनाद में बज उठीं।

जरमन सेनापति का भोज

उधर मारिस होटल में जरमन सेनापति जनरल वान कोल्टित्ज के सहायक अधिकारी उसे विदाई का भोज दे रहे थे। सहसा वातावरण गंभीर हो गया और कोल्टित्ज ने खड़े होकर कहा, "सेनापतियो, पेरिस हमारे हाथों से निकल गया है। जरमनी की पराजय हो गयी है।"

भोज-समारोह समाप्त हो गया और कोल्टित्ज ने फोन पर स्पीडेल से पूछा, "यदि आप हमारे सनिकों को पेरिस से निकाल सकें तो हम पुलों और इमारतों के नीचे बिछी बारूदी सुरंगों को आग लगा दें। निकाल सकेंगे आप?"

"नहीं," स्पीडेल ने उत्तर दिया, "सेनापति महोदय, मुझे भय है कि हम पेरिस से आपके सैनिकों को नहीं निकाल पायेंगे।" जनरल कोल्टित्ज के लिए अब समर्पण के सिवा कोई दूसरा मार्ग नहीं रह गया था। यही वह मार्ग था जिसका निर्माण उसने स्वयं किया था।

ठीक एक बजे जनरल कोल्टित्ज भोजन के लिए बैठा। ठीक उसी समय कैप्टन जैक बार्नेट और उसके दो सौ सैनिक पांच टैंकों पर सवार होकर एक मील दूर एक चौराहे से कोल्टित्ज की गिरफ्तारी के लिए रवाना हुए। उनके आगे-आगे मुक्तिसेना का एक दस्ता हेनरी कार्चर के नेतृत्व में बढ़ा। मार्ग में पांच में से तीन टैंक नष्ट हो गये तथा अनेक

सैनिक मारे गये। अंततः मॉरिस होटल पहुंचकर कार्चर ने दहलीज में लगे हिटलर के चित्र पर गोली चलायी। थोड़ी देर तक जरमन सैनिकों ने गोली चलायी मगर अंत में समर्पण कर दिया।

कोल्टित्ज अपने कमरे में एक मेज के सहारे शांत और गंभीर मुद्रा में खड़ा था। उसका द्वार खुला और फ्रांसीसी सेना के अधिकारी ले. कार्चर ने उसे सलामी देकर कहा, "मैं जनरल द गाल की सेना का ले. कार्चर हूं।"

कोल्टित्ज ने उत्तर दिया, "मैं जनरल वान कोल्टित्ज, पेरिस का जरमन कमांडेंट।" कार्चर बोला, "आप मेरे बंदी हैं।"

कोल्टित्ज ने कहा, "हां।"

एक अन्य अधिकारी मेजर ज्यां द ल होरी, कोल्टित्ज को लेकर पुलिस के प्रधान कार्यालय में पहुंचा, जहां जनरल लेक्लर्क अभी भोजन करने बैठा ही था। होरी ने घोषणा की कि कोल्टित्ज यहां आ गया है। लेक्लर्क खाना छोड़कर उठा। साथवाले कमरे में दोनों सेनापतियों ने समर्पण के दस्तावेज के बारे में विचार-विमर्श किया और अंततः कोल्टित्ज ने हथियार डालने का आदेश दे दिया।

क्या पेरिस जल रहा है?

जब हिटलर को यह बताया गया कि मित्रराष्ट्रों की सेनाएं पेरिस में प्रवेश कर रही हैं तब वह चीखा, "जोड्ल, क्या पेरिस जल रहा है?" सन्नाटा छा गया।

हिटलर फिर चीखा: "जोड्ल, मैं यह जानना चाहता हूं कि क्या पेरिस जल रहा है? पेरिस जल रहा है या नहीं...?"

"नहीं।"

यह सुनना था कि हिटलर ने आदेश दिया, "पेरिस पर 'वी' बम बरसाए जाएं!" जोड्ल ने पश्चिमी कमान के प्रधान सेनापति फील्ड मार्शल मौडल को फोन किया, मगर वह दौरे पर था और हिटलर का आदेश स्पीडेल ने सुना। स्पीडेल पेरिस का नाश नहीं चाहता था, अतः उसने निश्चय कर लिया कि मैं मौडल को यह आदेश नहीं बताऊंगा।

मगर हिटलर का पागलपन सीमा पार कर गया था। उसने लुफ्तवाफे को सीधे ही यह आदेश दे दिया कि पेरिस पर राकेट बरसाओ। इसका नतीजा यह हुआ कि पेरिस के आकाश पर जरमन विमान मंडराने लगे और अंधाधुंध राकेट बरसाने लगे, जिसके कारण ६०० इमारतें धराशायी हो गयीं, २१३ लोग मारे गये और ९१४ घायल हुए।

द गाल अपने कमरे की खिड़की से यह दृश्य देख रहे थे कि उनके कान में पेरिसवासियों के हंसने और गाने की ध्वनियां पड़ीं। वे उदास हो गये और बुदबुदाये, "ओह, पेरिस के लोग समझ रहे हैं कि पेरिस की मुक्ति ही युद्ध की समाप्ति है! यह तो एक कठिनतर संघर्ष की शुरूआत भर है। युद्ध जारी है!"

दी हिन्दुस्तान टाइम्स लिमिटेड की ओर से सन्तोष नाथ द्वारा हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस, नयी दिल्ली में मुद्रित तथा प्रकाशित

चलते चलते
सुशील कालरा
अखबार में विज्ञापन देखा–आप मकान किराये पर उठाना चाहते हैं
आपने कुछ देर कर दी, पहला फ्लोर तो सुबह चार बजे ही अखबार के हॉकर ने ले लिया है. लेकिन अभी बरसाती खाली है
हम आधुनिक विचारों के हैं इसलिए आप लहसुन-प्याज या जो चाहे खायें, पर बच्चों की अवश्य जिद है कि किरायेदार के पास टी.वी., फ्रिज आदि होने ही चाहिए
बाकी रही पहचान-सिफारिश की बात, भला पेशगी किराये से बड़ी कौन सी गारंटी है?
सर्दी के मौसम में ठंडी हवा और गरमी के मौसम में खुली धूप। बरसाती पर रहने वाले तो प्रकृति के निकटतम हैं
अजी, बिलकुल प्राइवेसी, बाथरूम पर छत की आवश्यकता ही नहीं। हमारा मकान तो हवाई जहाज के रूट पर है ही नहीं
लेकिन नल
नल की क्या आवश्यकता है, पानी कभी ऊपर से आ जाता है, कभी नीचे से लाना पड़ता है

CEMENT...
The very name brings to mind
images of buildings...
houses, bridges, roads –
and our mighty dams
and a hundred other
ways in which cement is used
Fifteen years ago in 1960-61
India was producing
only 80 lakh tonnes
of cement a year...
Five years later in 1965-66
India produced
a crore and 8 lakh tonnes
and in 1973-74
a crore and half tonnes
or almost...
The whole Nation
has been on the move
all these years
and we at Rajgangpur too
have done our humble bit
by making more and more
Cement available to our people
Helping them build
a better tomorrow
better and more houses
more bridges...
and one of the longest
dams ... at Hirakud...
Having begun 25 years ago
in a small way,
in far away Rajgangpur,
in the midst of jungles
and inaccessible areas
we have transformed
the face of the countryside
around us...
And today we are proud of
what we have done
and promise to do more...
FOR OUR PEOPLE..
FOR OUR COUNTRY..
FOR INDIA'S PROGRESS
CEMENT
ORISSA CEMENT LIMI
RAJGANGPUR
GOVAN/OCL/76

कादम्बिनी
भारतीय भाषाओं की विशिष्ट पत्रिका
स्पर्श : एक जुआ
आराम के लिए नींद जरूरी नहीं
हिटलर के साथी : तलाश जारी है
'शिकार मेरा पुराना शौक है—'

फ़ैशन-किंग बनने गए; ठन ठन गोपाल बन गए

कमला वस्त्रों के सस्ते दाम-धनवान सी शान

CU-A 1856 Rev

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बालों को रंगने के बारे में आप जो कुछ भी जानना चाहते थे,

उनका सहज सुखद समाधान है, गोदरेज

बाल सफ़ेद आने का कोई ख़ास वक़्त नहीं होता। कभी अचानक आने लगते हैं, तो कभी वक्त से पहले भी। सफ़ेद बाल आने लगें तो जितने मुँह, उतनी बातें। कुछ इसका मखौल उड़ाते हैं तो कुछ इस पर गम्भीरता से सोचते हैं। मगर करता कोई भी कुछ नही। है न दुःख की बात, क्योंकि सफ़ेद बाल काले किये जा सकते हैं — बड़ी आसानी से।

प्रश्न : बाल रंगना शुरू कब किया जाय ?

उत्तर : बाल सफ़ेद होने के पहले प्रमाण के साथ ही करें तो आदर्श है।

प्रश्न : क्या यह सच है कि किसी भी हेयर डाइ को लगातार इस्तेमाल करते रहने से बाल खराब हो जाते हैं ?

उत्तर : जी नहीं, बशर्ते कि जो हेयर डाइ आप इस्तेमाल करें वह ऊँचे दर्जे का हो। गोदरेज हेयर डाइ बालों को सुघड़, सुन्दर बनाता है। इसका कारण है इसमें मिले हुए विशेष तत्व। इतना ही नहीं, इसके अन्दर ही विशेष गुणकारी पदार्थों के होने से इसमें बालों को सँवारने की और उसे चमकदार आकर्षक बनाये रखने की विशेष क्षमता है।

प्रश्न : क्या इससे त्वचा पर खराब असर पड़ता है ?

उत्तर : आम तौर पर ऐसा कोई बुरा असर नहीं होता। लेकिन फिर भी शुरू में ही त्वचा पर इसके असर का परीक्षण कर लेना बेहतर है। किसी भी अच्छे हेयर डाइ के साथ उसके परीक्षण संबंधी निर्देश अवश्य लिखे होंगे।

प्रश्न : आपका पर्मनंट हेयर डाइ कितना पर्मनंट (स्थायी) है ?

उत्तर : रंगने के बाद बालों का रंग हफ़्तों वैसा ही रहता है। पर ज्योंही नये बाल निकलने लगें तो उन्हें तीन से चार हफ़्ते बाद फिर से रंगने की ज़रूरत पड़ती है।

प्रश्न : क्या इस डाइ के रंग से कपड़े या तकिये वग़ैरह ख़राब होने का डर है ?

उत्तर : बिल्कुल नहीं। गोदरेज हेयर डाइ अन्य डाइ की तरह, रंग को बालों पर पोतता नहीं। यह बालों के तनों की गहराई में घुस बैठता है।

प्रश्न : बालों को रंगने के बाद अपने बालों को रोज की तरह धो-सँवार सकती हूँ ?

उत्तर : जी हाँ, बेशक! आप अपने बालों को शैम्पू से धो सकती हैं और कोई भी हेयर ऑइल या हेयर क्रीम इस्तेमाल कर सकती हैं।

प्रश्न : क्या बालों को घर पर रंगना सुविधाजनक रहता है ?

उत्तर : जी हाँ, बिल्कुल। गोदरेज हेयर डाइ लगाना बड़ा ही आसान है : डाइ में स्पंज डुबाकर उसे बालों पर लगाइये, रंग बालों की जड़ों तक अपने आप एक सा बड़ी आसानी से फैल जायगा।

सभी पॉलिएस्टर कपड़ों पर 'टेरीन' ट्रेडमार्क नहीं लगाया जा सकता।

हमारे विचार से आपको इसका कारण जान लेना चाहिए।

'टेरीन'® ट्रेडमार्क से आपको पता चलता है कि यह कोई सामान्य पॉलिएस्टर कपड़ा नहीं है। यह एक जाँचा-परखा पॉलिएस्टर कपड़ा है। 'टेरीन' पॉलिएस्टर रेशे के निर्माता कैमिकल्स एण्ड फाइबर्स आफ इंडिया लिमिटेड (कॅफी) इस कपड़े की जाँच-परख कर चुके हैं। इनमें से एक जाँच है– रगड़ अवरोध जाँच।
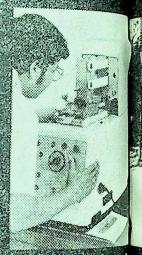
कई घंटों तक फिसलने के खेल में बच्चों की पतलून की सीट को जिस प्रकार की रगड़ सहनी पड़ती है इस जाँच में हूबहू उसी प्रकार की रगड़ से कपड़े को परखा जाता है।

कपड़े का नमूने का टुकड़ा लेकर उसे कॅफी की प्रयोगशाला में रगड़ अवरोध की जाँच करने वाली मशीन पर परखा जाता है। यहां उसे एक विशेष ब्लेड पर आगे-पीछे रगड़ा जाता है। अगर कपड़ा चित्तीदार हो जाये तो यह उसके घटिया होने की निशानी है। इस लिए उसे 'टेरीन' ट्रेडमार्क नहीं दिया जाता।

जब आप 'टेरीन' कपड़े ख़रीदते हैं तो आपको अपने पैसों की पूरी-पूरी क़ीमत वसूल होती है।

क्योंकि हम कपड़ों के नमूनों की जाँच इसी लिए तो करते हैं कि हमें इसका इत्मीनान हो जाये कि आपको अपने पैसों की पूरी-पूरी कीमत वसूल होगी। हम केवल रगड़ अवरोध की ही जाँच नहीं करते, बल्कि 'क्रीज़' अवरोध, सिकुड़न अवरोध और रंग पक्का होने की भी जाँच करते हैं। इतना ही नहीं और भी कई प्रकार की जाँच करते हैं। अगर कपड़ा किसी एक जाँच पर खरा नहीं उतरता तो उसे 'टेरीन' ट्रेडमार्क नहीं मिलता।

इसका कारण यह है कि हम इस ओर विशेष ध्यान देते हैं कि आप को केवल चुने हुए कपड़े ही 'टेरीन' ट्रेडमार्क के साथ मिलें। इन्हें गुणवत्ता का विशेष ध्यान रखने वाले मिल बनाते हैं– वे कुछ मिल जो नये-नये ढंग के फ़ैशन निकालते हैं, नये-नये डिज़ाइनों और बुनावटों के कपड़े पेश करते हैं और सबसे महत्वपूर्ण यह कि जिनके बनाये हुए कपड़े हमारी कड़ी गुणवत्ता जाँचों पर खरे उतरते हैं।

खुद अपनी भलाई के लिए कपड़े पर 'टेरीन' ट्रेडमार्क देख लीजिये।

® 'टेरीन' — केमिकल्स एण्ड फ़ाइबर्स ऑफ़ इंडिया लिमिटेड का रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क है।

CHAITRA-CAFI-457 HIN

राष्ट्र में एक बार फिर आत्मविश्वास जागा है

१९७५-७६

उपभोक्ता की रक्षा

* मूल्य लेबल और मूल्य सूची का लगाना जरूरी बनाकर फुटकर दुकानों में मूल्यों पर नियंत्रण। गरीब लोगों को आवश्यक सामान की निरन्तर सप्लाई।

* एक राज्य से दूसरे राज्य को सामान के लाने-ले-जाने पर लगी रोक हटाकर सार्वजनिक वितरण व्यवस्था को सरल और कारगर बनाया गया। इस काम में उपभोक्ता सहकारियों की सहायता ली गई।

* उपभोक्ताओं की दृष्टि से महत्वपूर्ण कुछ उद्योगों में एकमात्र विक्रय एजेंट नियुक्ति की प्रथा समाप्त कर दी गई।

* सभी को उचित दामों पर सामान दिलाने के लिए दिल्ली में सहकारियों और स्वीकृत एजेंसियों के जरिए बिक्री की आदर्श योजना चालू :

  यह योजना शीघ्र ही कोचीन, कोयम्बतूर, दुर्गापुर और नैनीताल में भी शुरु की जाएगी।

डीएवीपी ७६/१५२

बॉम्बे डाइंग कपड़ों में

मन में बसी
जो मूरत,
दर्पण में
प्रतिबिंबित!

बॉम्बे डाइंग निर्मित पुरुषोचित
वस्त्र। पॉलियस्टर/कॉटन शर्टिंग की
शानदार श्रृंखला—
४७/५०, ६७/३३, ८०/२०
और १०० % पॉलियस्टर
फ़िट्स, पॉलियस्टर डेनिम्स
व टेक्सचराइज्ड सूटिंग्स।

U BDM-29 76 Hin

कॅपिताना पॉलियस्टर शर्टिंग वाइीन पॉलियस्टर सूटिंग

बॉम्बे डाइंग

दूसरी एयरलाइनों के मुक़ाबले एयर-इंडिया अब आपके ज़्यादा क़रीब है!

भारत भर में स्थित ४० दफ़्तर. आपकी बेहतर और तत्पर सेवा के लिए.

आगरा
फ़ोन : ७३४३४
अहमदाबाद
फ़ोन : २३१००, २२२३२
अमृतसर
फ़ोन : ४६१२२
बैंगलोर
फ़ोन : ७५१४३, ७५१४४
बड़ोदा
फ़ोन : ६५६७९
भोपाल
फ़ोन : ६११५५
भुवनेश्वर
फ़ोन : ५०५३३, ५०५४४
बंबई
फ़ोन : २९९६९६
कलकत्ता
फ़ोन : ४४-२३५६
चंडीगढ़
फ़ोन : २८२१२

कोचिन
फ़ोन : ३१२९५
कोयम्बतूर
फ़ोन : २३९३३
दार्जिलिंग
फ़ोन : ३५५
दिल्ली
फ़ोन : ४४२११
दुर्गापुर
फ़ोन : २४८०
गोआ
फ़ोन : ३०८१
हैदराबाद
फ़ोन : ३६७४७, ३३७४७
इंदौर
फ़ोन : ५३५५
जयपुर
फ़ोन : ६५५५९
जमशेदपुर
फ़ोन : ३८०९

जोरहाट
फ़ोन : ११२८
जालंधर
फ़ोन २६६९
कानपुर
फ़ोन : ६४४३२
लखनऊ
फ़ोन : २६१७१
लुधियाना
फ़ोन : २०२१
मद्रास
फ़ोन : ८६१९३
मदुरई
फ़ोन : २४९४७
मंगलोर
फ़ोन : ४६६९
मोगा
फ़ोन : २८५३
मुरादाबाद
फ़ोन : १२९४

नागपुर
फ़ोन : ३३२४१, ३३९६२
नवांशहर
फ़ोन : १०२
पटना
फ़ोन : २२७१९
पूना
फ़ोन : २६३३६
रांची
फ़ोन : २१८४१
श्रीनगर
फ़ोन : ६१४१
सूरत
फ़ोन : २८७५९
त्रिवेन्द्रम
फ़ोन : ६१७७६
वाराणसी
फ़ोन : ६४१४६, ६६११६
विशाखापट्टनम
फ़ोन : ४६६५

इनमें से किसी भी दफ़्तर या अपने ट्रैवल एजेंट से संपर्क कीजिए.

एयर-इंडिया

AI.1216

क्या आपको डाकघर बचत बैंक से कोई शिकायत है?

कृपया अपनी शिकायत अथवा सुझाव सम्बन्धित 'डाकघरों के अधीक्षक' (सुपरिन्टेन्डेन्ट आफ पोस्ट आफिसिज) को भेजें

अगर आपको १५ दिन के भीतर संतोषजनक उत्तर न मिले तो महा डाकपाल (पोस्ट मास्टर जनरल) को लिखें।

डाक - तार

डीएवीपी ७६/१३१

शब्द-सामर्थ्य बढ़ाइए

● शांडिल्यायन

निम्नलिखित शब्दों के जो सही अर्थ हों, उन पर चिह्न लगाइए और इसी पृष्ठ से आरंभ उत्तरों से मिलाइए।

१. **अलील**--क. असफल, ख. बीमार, ग. बिना लीला के, बिना कुछ किये; घ. छोटी सखी।

२. **प्रत्याभूति**--क. शपथ, ख. सामने आना, सामने होना; ग. उपस्थिति, हाजिरी; घ. जमानत।

३. **लवाजिमात**--क. नौकर-चाकर, ख. परेशानी, आफत; ग. साज-सामान, घ. अंगड़-खंगड़, बेकार की चीजें।

४. **डांड़ामेड़ी**--क. अंतर, फर्क, ख. तराजू की डांड़ी; ग. अनबन, घ. समीपता, पास-पास होना।

५. **वाहिनी**--क. सवारी, गाड़ी; ख. सेना, ग. नदी, घ. हवा।

६. **तूदा**--क. चिड़िया का बच्चा, ख. ढेर, राशि; ग. टुकड़ा, घ. सुस्त।

७. **विकच**--क. खिला हुआ, प्रफुल्लित; ख. बहुत कच्चा, ग. पका हुआ, घ. बिका हुआ।

८. **असमंमिति**--क. बिना समिति का, जिसके लिए कोई समिति न बनायी गयी हो; ख. सामान्य, साधारण; ग. अनुपात का न होना, बेडौलपन, घ. घनत्व।

९. **अजगरी**--क. अजगर की तरह बड़ों-बड़ों को निगलने की प्रवृत्ति; ख. अजगर की तरह भगवान-भरोसे बैठे रहने की प्रवृत्ति, काहिली, ग. बहुत मोटा और भारी होना, घ. बकरे को निगलना।

१०. **अटाटूट**--क. टूटा हुआ, ख. अधूरा, अपूर्ण; ग. अत्यधिक, बेशुमार; घ. जो टूटा न हो, अक्षुण्ण।

११. **अतिपात**--क. बाधा, विघ्न; ख. मृत्यु, मौत; ग. बुरी तरह से असफल होना, घ. अतिक्रमण, उल्लंघन।

१२. **यारबाश**--क. विनोदी, हंसमुख; ख. मिलनसार, सबसे घुलमिल जानेवाला, ग. प्रेमी, घ. चतुर, चालाक।

उत्तर

१. ख. बीमार। अरबी आदि में इस अर्थ में इस शब्द का प्रयोग मुक्त रूप से होता है, किंतु हिंदी में प्रायः तबीयत के साथ होता है। प्रयोग होगा --उनकी तबीयत कुछ **अलील** है, आज वे आ नहीं सकते। अर. वि.।

२. घ. जमानत। प्रयोग--तुम-जैसे धोखेबाज व्यक्ति की **प्रत्याभूति** देकर भला कौन अपने ऊपर आफत मोल लेगा? तत्स., सं., स्त्री.।

३. ग. साज-सामान, यात्रा आदि में साथ रहनेवाला सामान। मूलतः यह शब्द अरबी का 'लाजिम' है जिसका अर्थ है 'आवश्यक' या 'जरूरी' आदि। 'लाजिम' का अशुद्ध बहु. है 'लवाजिम'

और फिर गलती से 'लवाजिम' का भी बहुवचन 'लवाजिमात' उर्दू-हिंदी में चल पड़ा है। प्रयोग— इतना सारा **लवाजिमात** लेकर यात्रा करते हुए तुम्हें उलझन नहीं होती। अर., सं., पुं.।

४. ग. अनबन। प्रयोग—उन दोनों के बीच आजकल कुछ **डांड़ामेड़ी** है, देखते नहीं सीधे मुंह एक दूसरे से बोलते तक नहीं! घ. समीपता, पास-पास होना। प्रयोग—उसके गांव तथा मेरे गांव में **डांडामेड़ी** है। उसकी तथा मेरी बोली में भला क्या अंतर हो सकता है। यह शब्द सं. 'द्रंड' के तद्भव 'डांड़' तथा सं. मित्ति के तद्भव 'मेड़' के मेल से बना है। तद्भ., सं., स्त्री.।

५. ख. सेना, फौज। प्राचीन भारत में **वाहिनी** सेना के एक भेद को कहते थे, जिसमें ८१ हाथी, ८१ रथ, २४३ घोड़े और ४०५ पैदल होते थे। प्रयोग—बंगला देश की मुक्तिवाहिनी ने अदम्य उत्साह और साहस का परिचय दिया। तत्स., सं., स्त्री.।

६. ख. ढेर, राशि। प्रयोग—बर्फ के **तूदे** पर पड़ती सूर्य की किरणें उसे जैसे चांदी का चमचमाता ढेर बना रही थीं। फा., सं., पुं.।

७. क. खिला हुआ, प्रफुल्लित। प्रयोग—माधवीलता के **विकच** पुष्पों की मधुर सुगंध वातावरण को मादक बना रही थी। तत्स., वि.।

८. ग. अनुपात का न होना, बेडौलपन। 'सममिति' का प्रयोग अनुपातयुक्त या सुडौलता के लिए होता है जिसे अंगरेजी में 'सिमेट्री' कहते हैं। उसी से यह शब्द बना है जो अंगरेजी 'असिमेट्री' का प्रतिशब्द है। प्रयोग—यह डिजाइन तो अच्छा है, किंतु अवयवों की **असममिति** कारण इसका वह प्रभाव नहीं पड़ता, जो पड़ना चाहिए। तत्स., सं., स्त्री.।

९. ख. अजगर की तरह भगवान-भरोसे बैठे रहने की प्रवृत्ति, काहिली। प्रसिद्ध है कि अजगर अपने आहार आदि के लिए विशेष यत्न नहीं करता। प्रयोग—अपनी यह **अजगरी** नहीं छोड़ोगे तो इसी तरह सारी उम्र दाने-दाने के लिए तरसते रहोगे। 'अजगरी' को 'अजगरी वृत्ति' भी कहते हैं। फा., सं., स्त्री.।

१०. ग. अत्यधिक, बेशुमार, अपरिमेय। प्रयोग—**अटाटूट** झंझटों के कारण बहुत दिनों से चैन की नींद नसीब नहीं हुई। तद्भ., वि.।

११. क. बाधा, विघ्न। प्रयोग—नाना प्रकार के **अतिपातों** के कारण, वह कार्य अभी पूरा तो नहीं हो पाया, किंतु मैं निराश नहीं हूं। घ. अतिक्रमण। प्राकृतिक नियमों का **अतिपात** अंततः अनिष्टकर ही होता है।

१२. ख. मिलनसार, सबसे घुल-मिल जानेवाला। प्रयोग—अरे भाई, वह तो बड़ा **यारबाश** आदमी है, उससे मिलने में क्यों हिचक रहे हो? फा., वि.।

आपके पत्र

ग्रंथ विमोचन

अगस्त अंक में 'समय के हस्ताक्षर' के अंतर्गत 'ग्रंथ विमोचनः पुस्तकों पर चर्चा-गोष्ठियां' पढ़कर लगा कि आपने सही नब्ज पकड़ी है। सचमुच, इस तरह की चर्चाएं पेशेवर ढंग से करवायी जाने लगी हैं और ग्रंथ-विमोचन 'स्टंट' बन गया है।

—रामप्रसाद कौशिक, नयी दिल्ली

आपका सुझाव कि चर्चा-गोष्ठियों में प्रकाशित पुस्तकों के बजाय पांडुलिपियों पर चर्चा हो, काफी अच्छा है, पर व्यावहारिक नहीं। साधारण या अधकचरा लेखक या कवि अपनी पांडुलिपि पर चर्चा कराने की हिम्मत ही नहीं करेगा। करेगा तो स्थानीय साहित्यिक मठाधीश उसकी ऐसी बखिया उधेड़ेंगे कि वह पांडुलिपि प्रेस में जा ही नहीं पाएगी। रही बड़े या नामी साहित्यकारों की बात, उनके ऊपर इन चर्चाओं, गोष्ठियों का कुछ प्रभाव ही नहीं पड़ता। इससे अच्छा हो कि 'तमाशा' समाप्त ही करने की दशा में सतत प्रयास हों। आपका यह अग्रलेख इस दिशा में एक 'माईल स्टोन' बनेगा, ऐसा विश्वास है।

—डंठल, सीतापुर

ग्रंथ-विमोचनों और तत्संबंधी चर्चा-गोष्ठियों पर आपने बड़ा ही सामयिक प्रश्न उठाया है। हो सकता है, निहित—स्वार्थवाले वर्ग को यह अप्रिय लगे तथापि चर्चाएं, 'प्रकाशन-पूर्व पांडुलिपियों पर आयोजित हों' इस समाधान की काट का कोई तीर किसी तरकश में नहीं हो सकता।

—बालमुकुंद गर्ग 'मुकुंद', हरसिद्धि, उज्जैन

अगस्त अंक में 'वसुदेव : कृष्ण चरित्र की उपेक्षित कड़ी' शीर्षक लेख शोधपूर्ण रहा। सचमुच, वसुदेव के भाग्य की विडंबना हमारी सहानुभूति का विषय है।

—सुनयना देशपांडे, वर्धा

अगस्त अंक में वैचारिक मनोभूमि पर लिखा गया श्री शिवसागर मिश्र का आत्म-साक्षात्कार सर्वश्रेष्ठ लगा। इसमें साहित्य, दर्शन और व्यक्तित्व के साथ लेखक के जीवन की संक्षिप्त झांकी भी मिली। लेखन प्रक्रिया के परिप्रेक्ष्य में लेखक का कथन 'मुझे बहुत-सी धूप-छांह, अंधेरी, टेढ़ी-मेढ़ी, ऊबड़-खावड़ अछोर गलियों से गुजरना पड़ता है—' यह प्रायः सभी सृजनशील साहित्यकारों के सत्य की ओर संकेत करता है।

—रामचंद्रसिंह त्यागी, फतुहा (पटना)

चांदायन का भोगवाद

'चांदायन का भोगवाद' (अगस्त अंक) शीर्षक लेख में 'चांदायन' में एक-मात्र भोगवाद सिद्ध करने के लिए लेखक ने केवल दो पंक्तियों से काम चलाया है। मेरे विचार से यदि वे चांदा के रूप-सौंदर्य को अभिव्यक्त करनेवाले कड़वकों (६५-८४) को ही ध्यानपूर्वक पढ़ लेते तो यह भ्रांति उत्पन्न न होती। 'चांदा' के पार्थिव रूप को कवि मौलाना दाऊद ने सदैव अपार्थिव रूप में ही देखा है।

इस संबंध में एक तथ्य और—चांदायन की आधारभूमि ज्योतिष है, जिसके परिप्रेक्ष्य में हिंदू, इसलाम एवं सूफी धर्म की त्रिवेणी प्रवाहित होती है। मेरे मतानुसार चांदा तथा लोरिक का मिलन दो बलवान मित्र ग्रहों का एक गृह में मिलना है। महादशा में इस प्रकार का योग अत्यंत हर्षदायक होता है।

—डॉ. शिवकुमार शांडिल्य, नैनीताल

सिगरेट के धुएं में

कादम्बिनी के प्रत्येक अंक में कुछ उपयोगी लेख अच्छे पथप्रदर्शक का काम करते हैं। अगस्त अंक में डॉ. प्रणव सेनगुप्त के विचारोत्तेजक लेख 'सिगरेट के धुएं में स्वर्ग के दर्शन' ने मुझे काफी लाभ पहुंचाया है। इस लेख को पढ़ने से पहले मैं सिगरेट पीना अपनी शान समझता था, लेकिन डॉ. प्रणव सेनगुप्त के तर्कों ने मुझे बेहद प्रभावित किया और मैंने अब सिगरेट पीना छोड़ दिया है।

—अजयकुमार सिन्हा, जमुई (बिहार)

●

इस अंक में बुद्धि-विलास के प्रश्न २ का उत्तर यह पढ़ें : प्लूटो, २४७.६९७ वर्ष।

'कादम्बिनी' के जुलाई अंक में पृष्ठ १३४ पर प्रकाशित पेंटिंग 'बहादुरशाह का पलायन' के चित्रकार हैं श्री भुवन वर्मा

—संपादक

आकल्पं कविनूतनाम्बुदमयी कादम्बिनी वर्षतु

कादम्बिनी

वर्ष १६, अंक ११
सितम्बर, १९७६

निबंध एवं लेख

संपादक
राजेन्द्र अवस्थी

कथा-साहित्य

कविताएं

सार संक्षेप

मुखपृष्ठ छाया— एम. एस. अग्रवाल, सुभाष कम्बोज

स्थायी-स्तंभ

संपादकीय सहकर्मी

संयुक्त संपादक : शीला झुनझुनवाला

सह-संपादक : दुर्गाप्रसाद शुक्ल, उप-संपादक : कृष्णचंद्र शर्मा, विजयसुन्दर पाठक; चित्रकार : सुकुमार चटर्जी

हमारे कुछ पाठकों ने जबलपुर से प्रकाशित 'पहल' नामक पत्रिका की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है। 'पहल' अनियतकालीन, अव्यावसायिक और अपंजीयित पत्रिका है। इसके अनेक अंकों में और विशेषकर मई '७६ के अंक में जो सामग्री प्रकाशित हुई है, वह न केवल आपत्तिजनक है, बल्कि घृणित और निंदनीय भी है। सारे अंकों को और उनमें प्रकाशित आपत्तिजनक सामग्री को देखने के बाद हमारे सामने जो प्रश्न उठता है वह है इस पत्रिका द्वारा राष्ट्रविरोधी और हल्के स्तर की सामग्री का प्रकाशन ।

इस पत्रिका में गांधी और नेहरू को 'राष्ट्रीय बुर्जुआ' कहा गया है। इसके अधिकांश पृष्ठ देशव्यापी चेतना और सरकार की नीति की परवाह किये बिना नितांत आपत्तिजनक अंशों से भरे पड़े हैं । उन्हें उद्धृत कर हम ऐसे प्रसंगों का प्रचार नहीं करना चाहते, लेकिन उदाहरण के लिए एक

सरकारी अनुदान

अंश देना आवश्यक है—

"पिछले दिनों भारतीय सत्ता ने भी इस तरह की तमाम हत्यारी कार्यवाहियां की हैं।" ('पहल'-१, पृ.-१) यह अंश और अंशों की अपेक्षा बहुत सामान्य ही समझा जाएगा, अन्यथा इस पत्रिका में लगातार जगह-जगह प्रधानमंत्री से लेकर आज की प्रत्येक राजनीतिक परिस्थिति को अपनी रंगी हुई दृष्टि से देखा गया है। बार-बार क्रांति के लिए उकसाया गया है और राजसत्ता को उखाड़ फेकने के लिए आमंत्रित किया गया है। ('पहल'-६, पृ.-९)

इस पत्रिका के संपादक व्यावसायिक पत्रिकाओं से इसलिए परेशान और नाराज हैं, क्योंकि उनकी ऐसी बेतुकी रचनाएं उन पत्रिकाओं में नहीं छप पातीं। अपनी रोजी-रोटी के लिए एक सरकारी संस्थान (या सरकार द्वारा अनुदान-प्राप्त संस्थान) में काम करते हैं। इससे भी बड़ी बात यह है

कि मध्यप्रदेश शासन साहित्य परिषद ने इसे राज्य की श्रेष्ठ साहित्यिक पत्रिका समझकर विशेष अनुदान की व्यवस्था भी की है। यह कहा जा सकता है कि यह पत्रिका मध्यप्रदेश सरकार के अनुदान से प्रकाशित होती है।

मध्यप्रदेश सरकार ऐसी राष्ट्रविरोधी गतिविधियों को प्रोत्साहित करना चाहती है, यह हम नहीं मानते। लगता यह है कि इसके पीछे कुछ विशिष्ट व्यक्ति और अधिकारी हैं और शासनतंत्र के सामने पत्रिका की ये गतिविधियां पहुंच नहीं पा रही हैं।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का पक्षधर प्रत्येक व्यक्ति है, लेकिन जहां उसका दुरुपयोग होने लगे, वहां उसे रोकना जरूरी है।

हमारा पहला प्रश्न तो मध्यप्रदेश की सरकार से ही है कि आखिर जहां वह अनुदान देती है, वहां की गतिविधियों को इस सीमा तक नजर-

का दुरुपयोग

अंदाज क्यों किया जाता है ?

केंद्रीय सरकार विशेषकर सूचना और प्रसारण मंत्रालय तथा गृह विभाग का ध्यान हम अपनी इस टिप्पणी के द्वारा इस ओर आकर्षित करना अपना कर्त्तव्य समझते हैं।

यह पत्रिका यदि साहित्यिक पत्रिका है तो साहित्य के इतने मुद्दे हैं, जिनपर खुलकर चर्चा की जा सकती है, लेकिन साहित्यिकता के आवरण में एक विशिष्ट राजनीतिक पक्ष का प्रचार किसी भी सृजनशील साहित्य की सीमा में नहीं आता।

हमारी राय में ऐसे साहित्य को सरकार-विरोधी 'परचेवाला साहित्य' कहा जाएगा और तब उसके साथ वही व्यवहार होना चाहिए जो ऐसे प्रसंगों में होता है। ●
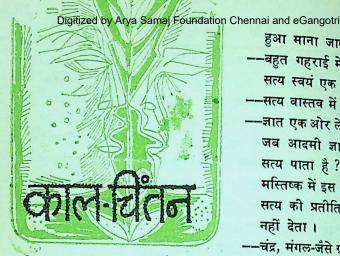
—जिज्ञासा है, 'मुक्त होकर' सोचना ही सत्य की रक्षा है। मन के भीतर उठने-वाली चेतना को वाणी मिलना चाहिए—यह एक आवश्यक तथ्य है।

●●

—जिज्ञासा अनुचित नहीं है। केंद्रीय प्रश्न 'सत्य' का है। सत्य की चेतना को ही 'मुक्त' माना गया है।

—बीसवीं सदी मनुष्य के महत्त्व की चिंता नहीं करती, उसके लिए महत्त्वपूर्ण हैं विचार और विचार-प्रणालियां।

—परिणामतः मनुष्य का गौरव गौण हो गया है और उसी के विचार उसी पर प्रणाली बनकर हावी हो रहे हैं।

—मनुष्य की बनायी मशीनें जैसे मनुष्य को ही खाने लगती हैं, विचार-प्रणाली पर आधारित आदमी की कार्य-चेतना उसे अपने भीतर के आदमी से काट देती है।

—अपने आपसे कटा मनुष्य सत्य से कटा हुआ माना जाएगा।

—बहुत गहराई में जाएं तो पता चलेगा सत्य स्वयं एक 'मिथ' है।

—सत्य वास्तव में ज्ञात से दूर होता है।

—ज्ञात एक ओर ले जाने की प्रक्रिया है। जब आदमी ज्ञात से कटता है तभी सत्य पाता है? अन्यथा 'ज्ञात' चेतना मस्तिष्क में इस तरह हावी होता है कि सत्य की प्रतीति को पास फटकने ही नहीं देता।

—चंद्र, मंगल-जैसे ग्रहों की वैज्ञानिक उपलब्धियां आज भी 'ज्ञात' की चेतना से सत्य की परिधि में विश्वास खोज रही हैं।

●●

—स्पष्ट यह है कि सत्य कोई खोज नहीं है। सत्य की खोज के लिए किसी दिशा का निर्देश नहीं किया जा सकता।

—दूरी तय करने के लिए पहले अपनी निकटता को निगलना पड़ता है। इससे हटकर जो लोग छलांग लगाकर दूरी तय करना चाहते हैं, उनके परिणाम निश्चित हैं।

—इसलिए सत्य की खोज भी पहले अपने भीतर और अपने आसपास से शुरू होती है।

—सत्य की खोज के पहले ज्ञात को ताक में रख देना आवश्यक है।

—तभी मन के भीतर से वह वैसे ही उपजता है जैसे आसमान का पानी पड़ते ही धरती के गर्भ से नये अंकुर फूटते हैं और नये अज्ञात प्राणी जन्म

लेते हैं।
—अर्थ हुआ, सत्य अनायास ही मन के भीतर प्रकट होता है।

●●

—सत्य के प्रकट होते ही झूठ चीटियों की तरह आ धमकता है।
—झूठ सत्य का विरोधी नहीं है, क्योंकि सत्य की पहली प्रक्रिया झूठ से ही आरंभ होती है।
—झूठ के आवरण में फंसे सत्य को अपने आसपास का सारा कूड़ा-करकट स्वयं खाना पड़ता है।
—इस गति में एक अवसर आता है कि मनुष्य का शब्द ही सत्य बन जाता है और वह शब्द के सत्य से ऊपर उठ जाता है।
—यहीं सत्य की खोज समाप्त हो जाती है।

●●

—इस स्थिति तक पहुंचना आसान नहीं है। ईसा और बुद्ध भी यहां तक नहीं पहुंच सके।
—इस सदी का 'ज्ञात' तो पहुंच के रास्ते और भी अवरुद्ध करता है।
—हृदय-रोपण की घटना इसका प्रमाण है। उससे शंका उठती है कि यदि आत्मा एक होती है तो हृदय-रोपण के बाद क्या एक शरीर में दो आत्माएं वास करने लगती हैं?
—आत्मा का निवास हृदय माना गया है। जब एक शरीर का हृदय निकालकर दूसरे में लगाया जाता है तब क्या आत्मा साथ-साथ चलती है?
—आधुनिक चिकित्सा ने 'दिलों' को निकालकर सुरक्षित रखने में सफलता पायी है। शरीर के बाहर निकला हुआ 'दिल' भी धड़कता है तो आत्मा का क्या हुआ?
—आदमी के ऐसे अन्वेषणों ने उसके सत्य को ही चुनौती दी है।
—सत्य ही जब छूट गया तब मुक्त होने या मुक्त-विचार रखने की बात कहां रह गयी!

●●

—मुक्त कौन है?
—आत्मा को मुक्त कहा जाता था, वह भी विज्ञान के हाथों बंदी हो गयी।
—आदमी अपने परिवेश से कब ऊपर उठा है।
—संस्कार जीवन-पर्यंत उसका साथ नहीं छोड़ते।
—धर्म ने उसके मस्तिष्क को बांध दिया है।
—परिवार उसे दीमक की तरह खाता है, तब भी वह वहीं बैठा रहता है।
—समाज मकड़ी का जाला है।
—राजनीति विभिन्न वातावरणों की उपज है, जिससे 'मुक्त' होना असंभव है।
—जैसे समय नहीं बीतता, आदमी बीत जाता है, वैसे ही मिथ्या सत्य नहीं टूटता, सत्य का धनुष टूटता है।
—मिथ्या सत्य ही जब सत्य को निगल जाता है तब 'मुक्ति' कहां?
—इसलिए मुक्त होकर सोचना शरीर का धर्म नहीं है, क्योंकि शरीर अपने आपमें एक बड़ा झूठ है।
—मन के भीतर उठनेवाली चेतना संस्कारग्रस्त है इसलिए उसे वाणी देने या न देने का कोई अर्थ नहीं है।

यमुना जो कभी सिंधु से मिलती थी

● प्रेमनारायण अग्रवाल

वैदिक काल में वर्तमान हरियाणा और राजस्थान राज्यों को सींचती हुई महिमामय सरस्वती अपना जल आज के कच्छ के रन में उड़ेलती थी। उसकी शस्य-श्यामला घाटी में बसे अनेक समृद्धिशाली नगरों में लोग धन-धान्य से पूर्ण जीवन बिताते थे। हड़प्पा, मोहनजोदड़ो तथा उसके बाद की कई सभ्यताओं का इसी घाटी में उत्थान-पतन हुआ। कच्छ की खाड़ी में सरस्वती के मुहाने पर एक विशाल बंदरगाह था, जहां देश-विदेश के जलपोतों का आवागमन होता रहता था। वेदों में सरस्वती का माहात्म्य गंगा से भी अधिक मानकर उसका गुणगान किया गया है। कहा जाता है कि प्रयाग में गंगा, यमुना तथा सरस्वती का अत्यंत पवित्र संगम है। गंगा और यमुना की धाराएं तो प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होती हैं, लेकिन सरस्वती अदृश्य है। यथार्थ में सरस्वती नाम की कोई नदी उत्तर-भारत

पश्चिम भारत में नदियों की स्थिति तब और अब : खंडित रेखाएं विलुप्त पुरातन सरिताओं की वाहिकाएं प्रदर्शित करती हैं
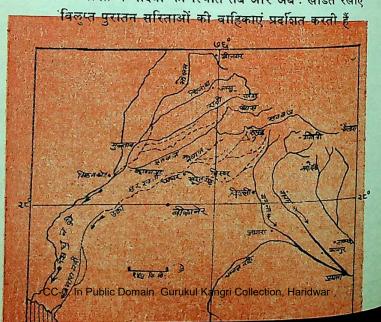
में नहीं है। तो पौराणिक सरस्वती कहां विलुप्त हो गयी? क्या सरस्वती वास्तव में कभी थी भी?

भूविदों का मत है कि हिमालय से निकली वर्तमान टोंस और यमुना नदियां कभी दक्षिण-पश्चिम की ओर बहती हुई हिमाचल प्रदेश के सिरमौर जिले से निकली घग्घर से संगम करती थी। इन तीन नदियों की संयुक्त धारा ही कभी सरस्वती नाम से करनाल, हिसार, हनुमानगढ़, सूरतगढ़, बीकानेर आदि के भूभाग सींचती हुई कच्छ के रन में जा समाती थी। शतद्रु अर्थात वर्तमान सतलज तब उसकी मुख्य सहायक नदी थी। संभवतः मनु तथा महाभारत युद्ध के बीच किसी समय गंगा की भूतपूर्व सहायक चंबल से निकली एक छोटी-सी उत्तरी धारा ने आगे बढ़कर सरस्वती की धारा अपनी ओर मोड़ ली। सरस्वती का जल हरण कर गंगा तो निहाल हो गयी, पर लुटी-ठगी सरस्वती निढाल होने लगी। सरस्वती का जल हरण करनेवाली चंबल की धारा को यमुना नाम प्रदान कर दिया गया। इस प्रकार अपहृत सरस्वती ही यमुना नाम से प्रयाग में विलीन हो गयी और यह संगम 'त्रिवेणी-संगम' अर्थात तीन नदियों—गंगा, यमुना तथा अदृश्य सरस्वती का पावन संगम कहलाने लगा। भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण के भूतपूर्व निदेशक श्री ओल्डम का मत था कि वर्तमान यमुना संभवतः दक्षिण तथा

लेखक

दक्षिण-पश्चिम की ओर बहती हुई वर्तमान राजस्थान में कहीं सरस्वती से मिलती थी, या कम-से-कम सरस्वती की जलराशि में भागीदार तो थी ही। यमुना और अदृश्य सरस्वती की संयुक्त धारा एक ही तली में सरस्वती या घग्घर के नाम से बहने के कारण इस विश्वास को बल मिला कि सरस्वती का जल भी यमुना के साथ ही गंगा में जाता है। फलस्वरूप गंगा-यमुना का संगम 'त्रिवेणी-संगम' नाम से विख्यात हो गया।

पौराणिक ग्रंथों में सरस्वती

ईसा से हजारों वर्ष पूर्व के पौराणिक साहित्य में सरस्वती को गंगा से भी विशाल तथा पावन बताया गया है।

आधुनिक वैज्ञानिक साहित्य में सरस्वती का उद्गम हिमाचल प्रदेश में सिरमौर के निकट शिवालिक पर्वत-श्रेणी में, पूर्व की ओर यमुना तथा पश्चिम में सतलज

के मध्य माना जाता है। अध-बदरी से सरस्वती अपनी मैदानी यात्रा आरंभ कर बहावलपुर तथा बलछपड़ को सींचती हुई मरुस्थल में लुप्त हो जाती है, पर थोड़े ही अंतर पर पुनः प्रकट होकर बहती है। सरस्वती के उद्गम-क्षेत्र से ही घग्घर निकलती है तथा लगभग १७५ किलोमीटर तक स्वतंत्र रूप से प्रवाहित हो पटियाला में रसूला के समीप सरस्वती से जा मिलती है। इस प्रकार बनी संयुक्त-धारा निचली यात्रा में हक्रा नाम से जानी जाती है। इसके वर्तमान सूखे पाट की विशालता प्राचीन काल में सरस्वती की महानता का प्रतीक है। बीकानेर में हनुमानगढ़ के निकट यह पूर्णतः मरुस्थल में विलुप्त हो जाती है। भटनेर के निकट पूर्व की ओर से आकर इसमें चित्रंग मिल जाती है। चित्रंग के सूखे पाट का अनुसरण कर पूर्वोत्तर में यमुना तक पहुंचा जा सकता है। चित्रंग की वाहिका में ही कदाचित कभी यमुना भी प्रवाहित होती थी। भटनेर और सिरसा के मध्य इसमें सरहिन्द भी आ मिलती है। सिर से सरहिन्द का पथ अनुसरण कर तोहना होकर रोपड़ पहुंचा जा सकता है, जहां सतलज मिल जाती है। सरहिन्द वाहिका ही कभी सतलज की मुख्य वाहिका रही होगी। इन दो परित्यक्त पथों के अतिरिक्त तीन अन्य वाहिकाएं भी हैं, जिन पर चलकर सतलज तक पहुंचा जा सकता है। इन्हें नैवाल कहा गया है जो कुरुलवाला के निकट इससे मिलती हैं। यह भी पता चला है कि ग्यारहवीं सदी के पहले सतलज 'सिन्धु' परिवार से संबंधित नहीं थी, वरन वह अनेक कई वाहिकाओं के माध्यम से सरस्वती में मिलती थी।

बीकानेर क्षेत्र में हक्रा का सूखा पाट लगभग १६० किलोमीटर की दूरी तक पांच से आठ किलोमीटर चौड़ा है। इस पाट की श्याम वर्ण चिकनी मिट्टी कांटेदार झाड़ियों से युक्त तटवर्ती बलुई मिट्टी से सर्वथा भिन्न है। इस वाहिका को स्थानीय लोग अब भी सरस्वती नाम से ही जानते है। हक्रा के सूखे पाट की चिकनी मिट्टी पर उपजी वनस्पति ने बलुए तूफानों से इसकी सुरक्षा की है, अन्यथा हक्रा का चौड़ा पाट भी अब तक बालू के ढेर के नीचे दब चुका होता। हक्रा के तट पर बिखरे टीलों में प्रागैतिहासिक तथा प्रारंभिक ऐतिहासिक युग के उपनिवेशों के अनेक पुरावशेष प्राप्त हुए हैं। सर आरेल स्टीन तथा पुरातत्त्व विभाग द्वारा इन टीलों के व्यापक सर्वेक्षण में मंदिर, पुरावशेष तथा बरतनों के टुकड़े मिले हैं जो मोहनजोदड़ो तथा बाद की सभ्यता के हैं। घग्घर घाटी की खुदाई में लगभग एक दर्जन उपनिवेशों के चिह्न मिले हैं, जिनके विषय में निष्कर्ष निकला है कि इन उपनिवेशों का पतन मुख्यतः नदी सूख जाने के कारण ही है।

मरुभूमि सींचने को जल

ए. घोष के मतानुसार वैदिक काल में सरस्वती आदि पौराणिक सरिताएं वहां

मान राजस्थान को सींचती हुई अरब-सागर में गिरती थीं। घग्घर, हक्रा तथा पूर्वी नारा के वर्तमान शुष्क पाट कदाचित वैदिक कालीन नदियों के वाहक थे। इन पौराणिक नदियों की घाटी में प्राप्त पुरावशेष हड़प्पा से लेकर प्रारंभिक आधुनिक युग तक के समकालीन हैं। सरस्वती घाटी की खुदाई से ज्ञात हुआ है कि कम-से-कम तीन सभ्यताओं का इस घाटी में उत्थान तथा बाद में पतन हुआ है। यह घाटी सदा से ही सूखी होती तो इन सभ्यताओं का पनपना संभव न होता।

में एक गहरी खाड़ी के रूप में था और उसमें देश-विदेश से भारी जलपोतों का आवागमन होता था। ईसा-पूर्व चौथी सदी में सिकन्दर के आक्रमण के समय से आठवीं सदी में अरबों के आक्रमण के समय तक इस खाड़ी में होकर जलयान सिन्ध तक आते थे। टाड के अनुसार हक्रा का सूखना सर्व प्रथम सन १०४४ ई. में बीकानेर में आरंभ हुआ। यूनानी तथा अरब अभिलेखों में इस बात का उल्लेख है कि बारहवीं सदी के अंत तक सतलज मूल रूप से स्वतंत्र थी तथा उसका संगम
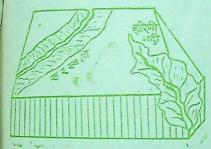
जब गंगा ने सरस्वती का जल अपहरण कराया

किसी समय सरस्वती मरुस्थल के लगभग १८,००० वर्ग किलोमीटर क्षेत्र की सिंचाई के लिए जल प्रदान करती थी।

यमुना के पूर्व की ओर मुड़ जाने से सरस्वती का ऊपरी भाग कदाचित ईसा पूर्व ५,००० वर्ष तथा मनु और महाभारत काल के मध्य सूखना आरंभ हुआ। इसका निचला भाग नवीं शताब्दी तक बीकानेर, बहावलपुर तथा सिंध में जल से पूर्ण था। कच्छ का रन तब अरब-सागर

बीकानेर में घग्घर से होता था। तेरहवीं सदी में सतलज ने अपना दक्षिणी पथ छोड़कर कपूरथला के निकट व्यास नदी से नाता जोड़ लिया। सतलज यद्यपि बड़ी नदी है, फिर भी व्यास-सतलज संगम की संयुक्त धारा व्यास नाम से ही जानी जाती है। इस संयुक्त धारा में अलीपुर के निकट चिनाब भी मिलती है और अंत में व्यास-सतलज-चिनाब की संयुक्त धारा मिठ्ठनकोट में सिन्धु से मिल जाती है।

यमुना आज गंगा की प्रमुख सहायक नदी है, पर एक समय वह सिन्धु से संबंधित थी। सरस्वती का उद्गम यमुना और सतलज के मध्य शिवालिक पर्वत-श्रेणी में है। यमुना और सरस्वती की युग्म धाराएं दक्षिण-पश्चिम में प्रवाहित होती हुई बीकानेर के उत्तर में सूरतगढ़ के निकट एक-दूसरे से मिलती थीं। यह संयुक्त धारा अपनी आगे की दक्षिण-पश्चिमी यात्रा में घग्घर के नाम से बहती थी तथा बहावलपुर होती हुई अंत में सिन्धु में मिल जाती थी। कुछ विद्वानों की धारणा है कि सरस्वती कभी सिन्धु में नहीं मिली और अपना जल स्वतंत्र रूप से कच्छ के रन में ही उड़ेलती रही।

सरस्वती के जल का हरण

संभवतः मनु और महाभारत युद्ध के मध्य किसी अज्ञात-काल में गंगा की तत्कालीन सहायक चंबल की एक छोटी-सी उत्तरी शाखा ने आगे बढ़कर सरस्वती का प्रवाह छोड़कर उसकी धारा गंगा में मिला दी। अपहर्ता नदी यमुना नाम से कृतार्थ हुई किंतु गंगा द्वारा अपहृत सरस्वती भी अस्तित्वहीन नहीं हुई। नवीं सदी तक घग्घर और सतलज की विपुल जलराशि सरस्वती को प्राप्त होती रही, लेकिन सरस्वती की रही सही संपदा पर अब सिन्धु की निगाह पड़ी। ग्यारहवीं सदी में सरस्वती की मुख्य सहायक सतलज ने सरस्वती से सबंध तोड़ा और वह पहले व्यास से और बाद में सिन्धु से मिल गयी। सतलज ने इस प्रकार सन १५९३ तथा १७९६ ई. में दो बार सरस्वती का जल हरण कर सिन्धु को समर्पित किया। क्षतिपूर्ति में असमर्थ सरस्वती पूर्णतः समाप्त हो गयी।

नदी के अपहरण की क्रिया में वस्तुतः एक बलवती तथा सक्रिय नदी परिस्थितियां अनुकूल पाकर कमजोर नदी का जल अपने में मिला लेती है। नदियां अपनी घाटी की लंबाई मुख्यतः अभिशीर्ष अपरदन द्वारा बढ़ाती हैं, और उसका शीर्ष पीछे सरकता जाता है। अभिशीर्ष-अपरदन में कई कारक सहायता करते हैं वर्षा की वृद्धि, अनुकूल जलवायु तथा भू-संरचना, कोमल शैलों का अनावरण, भूमि के उत्थान आदि से अपरदन प्रखर हो जाता है। फिर यदि एक ही क्षेत्र में कई नदियां बहती हों तथा एक नदी अनुकूल परिस्थितियां पाकर दूसरी नदी की अपेक्षा अधिक कांट-छांट अथवा अपरदन करने में समर्थ हो तो पहली नदी अधिक नीची हो जाएगी। इस अवस्था में भीषण अपरदन के फलस्वरूप नदी पथ-भ्रष्ट हो जाती है। अपहरणकर्ता नदी 'हारिणी' तथा अपहृत नदी 'हरित' या 'खंडित' नदी कही जाती है। साधारणतः अपहृत नदी लगभग समकोण पर घूम-कर 'हारिणी' नदी से मिल जाती है। संभवतः सरस्वती के जल का अपहरण भी ऐसे ही हुआ था।

—पी. पी. एन. कालेज, कानपुर

देवताओं का सेनापति मनुष्य की चपेट में

• प्रो. आर. वी. सुब्रमण्यम

अपने पैरों से चन्द्रमा को रौंदना मनुष्य की पहली विजय थी। मंगलग्रह पर वाइकिंग–१ का उतरना उसके साहस और श्रम की दूसरी बड़ी सफलता है। ये दोनों घटनाएं इतिहास के पृष्ठों के अमिट अध्याय हैं। वाइकिंग–१ को मंगल पर ४ जुलाई को उतरना था, अमरीका की आजादी की दो सौवीं सालगिरह के मौके पर। लेकिन पूर्व निर्धारित स्थान उतरने लायक नहीं पाया गया और वह एक नये स्थान पर २० जुलाई को उतरा। यह एक विलक्षण संयोग रहा कि मानव की महानतम उपलब्धि का दिन होने का गौरव एक बार फिर २० जुलाई को मिला।

अब चन्द्रमुखी कौन है?

सात साल पहले १९६९ में इसी २० जुलाई को मनुष्य ने चंद्रमा पर कदम रखे थे। सदियों से चंद्रमा की सुंदरता और कमनीयता के गीत गा रहे मनुष्य ने देखा कि ऊबड़-खावड़ सतह, गड्ढों और विवरों से भरे चंद्रमा में सौंदर्य का नाम-निशान नहीं है। चन्द्रमुखी संबोधन से फूली न समानेवाली सुंदरियों और कल्पना में खोये कवियों पर इस जानकारी से चाहे जो बीती हो, पृथ्वी से दूर अन्य ग्रहों की खोज के अभियान में मानव की यह सफलता निश्चय ही अभूतपूर्व महत्व की और बड़ी रोमांचक थी।

और अब चांद के बाद मंगल की बारी आ गयी है। लाल रोशनी से चमकता मंगल जिसके संबंध में आदमी की जिज्ञासा उतनी ही पुरानी है जितनी इस धरा पर आदमी

मंगल की ऊबड़-खाबड़ सतह और बीच में उभरी चट्टानें

का अस्तित्व। आदिम मानव जब धरती पर आया और नजर उठाकर आकाश की ओर देखा तब ग्रह-नक्षत्रों और तारों के बीच अपने लाल रंग के कारण अलग दीखनेवाले इस ग्रह के प्रति आकर्षित हुए बिना न रह पाया। समय के साथ सभ्यताओं का उदय हुआ। विभिन्न देशों के लोग मंगल के बारे में अपने-अपने तरीके से कल्पनाएं करने और धारणा बनाने लगे।

युद्ध का देवता, सुंदरी की बांहें!

पश्चिम के लोगों ने मंगल की लाल रोशनी को खून का रंग माना। उन्होंने इस ग्रह को लड़ाई और खून खराबे से जोड़ा और अपने युद्ध के देवता मार्स का नाम उसे दे दिया। इसी के नाम पर उन दिनों वसंत में शुरू होनेवाले वर्ष के पहले महीने को मार्च कहा गया। मार्च सैनिक अभियानों का महीना था ही, मार्स के सम्मान में कई त्योहार भी इस माह में होने लगे। उसकी पूजा के लिए मूर्तियां भी बनने लगीं।

कवच और शिरस्त्राण पहने ऊंचा-पूरा, खूबसूरत मार्स बेहद रोबीला लगता है। कुछ मूर्तियों में वह सफाचट है जबकि ज्यादातर में दाढ़ीवाला। उसका रथ एक उन्मत्त स्त्री हांकती है जिसे देखते ही शत्रुओं के होश उड़ जाते हैं। पश्चिम में जब वीरता के लिए सैनिकों को पुरस्कार दिये जाते तब वे पुरस्कार पहले मार्स की मूर्ति के आगे रखे जाते।

रोमवासियों के लिए मार्स रोम के संस्थापक जुड़वां भाइयों रोमुलस और रेमस का पिता था। उनकी मां जो राज-कुमारी थी, राजा की कारा में बंदी थी। एक दिन वह सो रही थी कि मार्स उसके

वीनस के ख्याल में डूबा मार्स

भूमिपुत्र 'मंगल'
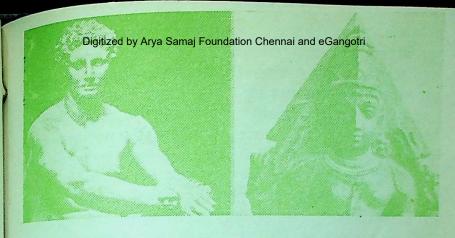
पास पहुंच गया। फलस्वरूप जुड़वां भाइयों का जन्म हुआ। राजा कहीं मार न डाले, इस डर से दोनों को एक टोकरी में रखकर टाइबर नदी में बहा दिया गया। पास की झाड़ी से निकलकर एक मादा भेड़िया पास आयी और बच्चों को भूखा देखकर अपना दूध पिलाया। बाद में एक गड़रिया वहां पहुंचा और उन्हें पालने लगा।

मार्स की कितनी ही मूर्तियां और चित्र कलाकारों ने बनाये हैं। इनमें सबसे दिल-चस्प वीनस से उसके प्रेम के हैं। वीनस का पति वलकन जब घर में न होता तब मार्स अभिसार के लिए जा पहुंचता। एक दिन किसी देवता ने वलकन को खबर दे दी। उसने एक पतला जाल पलंग पर डाल दिया। वीनस और मार्स जाल में फंस गये। तब देवताओं के झुंड के झुंड उन्हें देखने आये और उनकी हंसी उड़ाने लगे।

विवाह में निर्णायक भूमिका

मंगल का संबंध खून और युद्ध से जोड़ने में भारतीय भी पीछे नहीं रहे। प्राचीन हिंदू ग्रंथों में उसे रक्त नक्षत्र कहा गया और उसे देवताओं का सेनापति माना गया। इन लोगों ने समझा कि वह भी पृथ्वी का ही एक टुकड़ा है इसलिए उसे भूमिसुत या पृथ्वीपुत्र नाम दिया। दहकते लाल रंग के कारण उसे कहीं-कहीं अंगारक भी कहा गया।

हिंदू ज्योतिष में मंगल को नौ ग्रहों में से एक माना गया। उसके अनुसार यह पाप ग्रह और क्रूर ग्रह है तथा किसी भी अन्य ग्रह की अपेक्षा ज्यादा प्रभाव डालता है। जन्म-लग्न में मंगल प्रबल हो तो व्यक्ति उग्र स्वभाव का और प्रखर होता है। मंगल अनुकूल न हो तो मनुष्य को परेशानियां और आफतें घेर लेती हैं। अनुकूल होने पर मंगल लाभ भी पहुंचाता है। इसीलिए मंगल शब्द का प्रयोग शुभ, कुशलता या कल्याण के अर्थ में भी होने लगा। हिंदुओं में विवाह तय करने में मंगल

की भूमिका निर्णायक होती है।

ध्रुव की बर्फ से सिंचाई

मंगल के बारे में ऐसी ही कल्पनाओं और धारणाओं के बीच खगोलविद् सौर-मंडल के इस महत्त्वपूर्ण ग्रह के अध्ययन में जुटे रहे। दूरबीन के आविष्कार के बाद पता चला कि पृथ्वी के समान मंगल में भी मौसम बदलते रहते हैं और वहां के ध्रुव प्रदेश का रूप परिवर्तन होता है। वहां दिन साढ़े चौबीस घंटे का होता है।

दो सौ साल पहले सन १७७७ में खगोलविदों ने मंगल पर आड़ी पतली रेखाओं का जाल देखा। काफी सोच-विचार के बाद उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि मंगल ग्रह में प्राणी रहते हैं जिनकी सभ्यता विकास के शिखर पर पहुंच चुकी है। उन्हीं प्राणियों ने ध्रुव प्रदेशों की पिघली बर्फ का उपयोग सिंचाई में करने के लिए नहरें खोद ली हैं जो पृथ्वी से रेखाओं का जाल दीख पड़ती हैं। इसके बाद मंगल में जीवन मौजूद होने की संभावना की चर्चा होने लगी।

मंगल ग्रह में प्राणियों की मौजूदगी के बारे में लिखा तो न जाने कितने लेखकों ने लेकिन एच. जी. वेल्स सबसे आगे निकल गये। उनके अनुसार मंगल में ऐसे प्राणी हैं जो मनुष्यों से बहुत भिन्न किंतु उनकी अपेक्षा बुद्धिमान हैं। उनकी सभ्यता अति विकसित है और वे प्रलय ढानेवाले अस्त्र-शस्त्र बना चुके हैं। वेल्स की सुप्रसिद्ध पुस्तक 'ग्रहों की लड़ाई' में इनके पृथ्वी पर खौफनाक हमले का रोचक वर्णन है।

दहशत भरा दिन

और १९३८ की ३१ अक्तूबर को लोगों ने सुना कि मंगल ग्रह के अजीबो-गरीब प्राणियों ने पृथ्वी पर धावा बोल दिया है। वे भीषण लपटें फेंकनेवाले हथियारों से लैस हैं और नगरों को एक के बाद एक तबाह करते जा रहे हैं।

दहशत से भर उठे लोगों ने अपने घरों के दरवाजे मजबूती से बंद कर लिये पर फिर भी इस डर से कांपते रहे कि हमलावर कहीं दरवाजे तोड़कर न घुस आयें। इसी बीच एक नगर की बिजली चली गयी और वह अंधकार में डूब गया। वहां के लोगों की तो जैसे जान ही निकल गयी। उन्हें लगा कि मंगल के खूंख्वार प्राणी उनके द्वार पर ही आ पहुंचे हैं। फिर भी कुछ लोगों ने हिम्मत दिखायी और पास की छावनी में जाकर बोले कि वे मंगल के प्राणियों से आखिरी सांस तक लड़ने के लिए तैयार होकर आये हैं।

बाद में पता चला कि दरअसल 'ग्रहों की लड़ाई' पर आधारित रूपक प्रसारित हो रहा था। लेकिन पूर्व सूचना नहीं थी, इसलिए लोगों ने उसे समाचार समझकर सच मान लिया था।

अंतरिक्षयानों से सूचनाएं

मंगल से संबंधित ये धारणाएं अंतरिक्ष युग शुरू होते ही तेजी से बदलने लगीं। केप-केनेडी से १९६४ में छोड़ा गया अमरीकी अंतरिक्षयान मैरिनर–४ जुलाई १९६५

दशहरा दीपावली के शुभ अवसर पर
नये पाठकों के लिए 'कादम्बिनी' की आकर्षक बचत
कादम्बिनी
मैं इस कार्ड के साथ .... वर्ष का चंदा चैक/मनीआर्डर/पोस्टल आर्डर द्वारा भेज रहा/रही हूं। कृपया मुझे/मेरे स्नेही को तुरन्त ग्राहक बना कर 'कादम्बिनी' भेजना शुरू कर दीजिए।
(श्री/श्रीमती/कुमारी)
नाम ....
पता ....
संलग्न : पोस्टल आर्डर नं.................. चैक नं.
.... बैंक का नाम ....
.... मनीआर्डर रसीद नं..................
डाकघर ....
चैक, पोस्टल आर्डर अथवा मनीआर्डर—सरकुलेशन मैनेजर, हिन्दुस्तान टाइम्स लि., १८-२०, कस्तूरबा गांधी मार्ग, नई दिल्ली-११०००१ के पते पर भेजें।
कादम्बिनी
सारे परिवार के स्वस्थ मनोरंजन के लिए
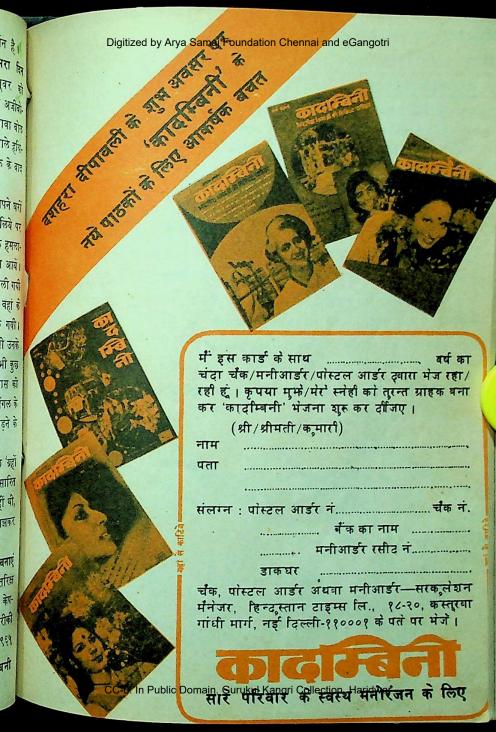
अपने मित्रों एवं सम्बन्धियों को उपहारस्वरूप 'कादम्बिनी' भेजिए। वे आपके आभारी होंगे।

चन्दे की रियायती दरें :

- एक वर्ष के विशेषांकों सहित १२ अंकों के लिए : २० रुपए
- दो वर्ष के विशेषांकों सहित २४ अंकों के लिए : ३८ रुपए
- तीन वर्ष के विशेषांकों सहित ३६ अंकों के लिए : ५५ रुपए

—हलके स्तर की सस्ती पत्रिकाओं की बजाय 'कादम्बिनी' पढ़ने की आदत डालिए।

—'कादम्बिनी' पूरे परिवार के साहित्यिक संस्कार के लिए भारतीय भाषाओं की एकमात्र विशिष्ट पत्रिका है।

—ज्ञानवर्धन और मनोरंजन की विविधतापूर्ण सामग्री से पूर्ण 'कादम्बिनी' का प्रत्येक अंक एक विशेषांक होता है।

—'कादम्बिनी' का प्रत्येक अंक एक 'ज्ञानकोष' है। हर अंक सुरक्षित रखिए—कभी भी आपको उसकी जरूरत पड़ सकती है।

में मंगल से ६ हजार मील की दूरी से गुजरा और वहां के २१ चित्र भेजे। इनसे पता चला कि मंगल का एक हिस्सा भी चंद्रमा के समान विवरों से भरा है। मैरिनर से आयी रेडियो-तरंगों से वहां हवा विरली होने, कार्बन डाइआक्साइड की प्रचुरता और ग्रह का अयन-मंडल होने की बात सामने आयी। चार साल बाद जुलाई-अगस्त १९६९ में मैरिनर–६ और मैरिनर–७ मंगल के और पास पहुंचे। इनसे प्राप्त दो सौ बढ़िया चित्रों और सूचनाओं से मालूम पड़ा कि वहां वातावरण में नमी इतनी कम है कि किसी प्राणी का जिंदा रहना संभव नहीं। तापमान दिन में–६३ से ७७ और रात में –६३ से १५३ अंश फैरनहीट, तीन सौ मील तक लंबे विवर और ध्रुवों पर बर्फ की पतली सतह। लेकिन यह सब मंगल के बस एक हिस्से के बारे में था।

वर्ष १९७१–७२ में मैरिनर–९ मंगल के पास पहुंचा और दिन में दो बार के हिसाब से साल भर उसकी परिक्रमा करके ७३०० से ज्यादा चित्र भेजे। इनसे जानकारी मिली कि मंगल भौमिकीय रूप से जीवित ग्रह है जिसकी सतह में परिवर्तन होते रहते हैं। उसकी समानता चंद्रमा की अपेक्षा पृथ्वी से ज्यादा है, फिर भी वह दोनों से अलग है। वहां बहुत ऊंचे ज्वालामुखी हैं जिनमें निक्स आलंपिकस की ऊंचाई ७० हजार फुट से भी ज्यादा है। अमरीका के ग्रैंड कैनयन से कई गुनी गहरी और तीन हजार मील से ज्यादा लंबी एक घाटी का भी पता चला जिसके दोनों ओर सहायक नदियों के समान उप-घाटियां हैं। मंगल के वर्तमान वातावरण में पानी नहीं हो सकता, इससे माना गया कि यह घाटी अतीत में बहनेवाली और बाद में सूख गयी नदियों से बनी है। यह भी स्पष्ट हुआ कि पूरा ग्रह विवरों से भरा नहीं है वरन वहां पठार, तराई आदि और बर्फ से ढंके ध्रुव प्रदेश भी हैं। वहां तीस-चालीस मील तक ऊपर उठनेवाली धूल का भीषण बवंडर भी देखा गया जिसकी रफ्तार नीचे के हिस्से में प्रति घंटे सैकड़ों मील रही। बवंडर कई हफ्ते रहा और फिर साफ हो गया। तब माना गया कि मंगल की सतह पर जो लगातार परिवर्तन होता दीखता है, वह ऐसे ही धूल के तूफानों के कारण है।

अमरीकी अंतरिक्षयान मैरिनर–९ जब मंगल के करीब पहुंचने को था, उसके कुछ महीने पहले सोवियत संघ के अंतरिक्षयानों ने भी मंगल की सतह की छानबीन करने की कोशिश की थी। सोवियत अंतरिक्षयान मार्स–२ ने २७ नवंबर १९७१ को मंगल के पास पहुंचकर एक कैंपसूल उसकी सतह पर उतरने के लिए छोड़ा, लेकिन वह मंगल की सतह से टकराकर नष्ट हो गया। पांच ही दिन बाद २ दिसंबर को मार्स-३ ने एक कैंपसूल मंगल पर उतरने के लिए छोड़ा। इस कैंपसूल में टेलीविजन कैमरा लगा

था। उसने बीस सेकंड तक चित्र भेजे भी पर इसके वाद संपर्क टूट गया। सन १९७४ में मंगल के पास पहुंचे मार्स–६ का भी वहां की सतह छू पाने के पहले ही पृथ्वी से संपर्क भंग हो गया। उसी साल १४ मार्च को मार्स–७ बजाय मंगल पर पहुंचने के उससे आठ सौ मील दूर से गुजरकर अंतरिक्ष में खो गया।

वाईकिंग परियोजना

इसके बाद आयी अमरीका की वाइकिंग परियोजना। इसके तहत वाइकिंग-१ और वाइकिंग–२ नामक अंतरिक्षयान मंगल की खोज के लिए छोड़े गये। २० अगस्त ७५ को छोड़ा गया वाइकिंग–१ यान २० जुलाई को मंगल पर उतरा। यान का मुख्य भाग 'आरबिटर' परिक्रमा करता रहा जबकि दूसरे भाग 'लैण्डर' ने मंगल की सतह पर उतरकर खोजबीन चालू कर दी। कुछ ही सेकंड बाद उसने मंगल के चित्र और सूचनाएं पृथ्वी पर भेजना शुरू कर दिया।

पृथ्वी से ३४ करोड़ ४० लाख मील दूर की जा रही इस खोज का लक्ष्य मुख्य रूप से यह पता लगाना है कि मंगल पर जीवन है या नहीं। वाइकिंग–१ में एक स्वचल जीववैज्ञानिक और भूतत्व-वैज्ञानिक प्रयोगशाला शामिल है।

वाइकिंग–१ द्वारा मंगल पर की जा रही खोज का कार्यक्रम कई माह चलनेवाला है। इसी बीच ४ सितंबर को वाइकिंग–२ मंगल पर उतरेगा और खोज चालू कर देगा।

वाइकिंग–१ से जो सूचनाएं और चित्र मिले, उनसे पता चला है कि वहां के वातावरण में आरगान गैस का प्रतिशत पृथ्वी की अपेक्षा ज्यादा है। नाइट्रोजन कुल ३ प्रतिशत है जबकि पृथ्वी के वातावरण में उसका प्रतिशत ७८ है। वहां की मिट्टी में आक्सीजन भी मौजूद पायी गयी है।

आक्सीजन सजीव पदार्थों से प्रकाश का संश्लेषण होने से बनती है। तथापि वैज्ञानिकों की राय है कि जीवन के अभाव में भी आक्सीजन मौजूद रह सकती है।
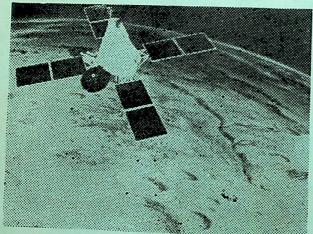
मंगल की कक्षा में परिक्रमा करता वाइकिंग-१ और-सतह पर उतरा लैंडर

• रूथ विंटर

स्पर्श एक जुआ है?

लाजवंती की छोटी-सी बेल हर किसी ने देखी होगी। इसे 'छुई-मुई' भी कहते हैं। दोनों ओर फैली हुई छोटी-छोटी पत्तियां, इमली की पत्तियों-जैसी। कुछ छू जाए तो सिकुड़कर फौरन बंद! बेल के इस गुण ने हिंदी भाषा को 'लाज से छुई-मुई हो जाना' जैसा सरस मुहावरा दिया है। स्पर्श भले ही बहुत हल्का हो, इतना कि लगभग पता ही न चले, लेकिन उसका असर बड़ा तीव्र हो सकता है।

स्पर्श के इस असर के बारे में जानने के लिए अमरीका में हाल ही एक मनोरंजक परीक्षण हुआ। इंडियाना राज्य में लफायते स्थित परड्यू विश्वविद्यालय के मनोविज्ञान विभाग के प्राध्यापक डॉ. रिचर्ड हेसलिन ने पुस्तकालय के लिपिकों से कहा कि वे सदस्यों से कार्ड लेते समय

कुछ के हाथ हल्के-से छू दिया करें और कुछ के न छुएं। लिपिकों ने ऐसा ही किया। स्पर्श मुश्किल से आधे सेकंड का और इतना हल्का था कि ज्यादातर लोगों को तो जब बाद में बताया गया तब पता चला कि उनकी अंगुलियां लिपिक की अंगुलियों से छू गयी थीं। इन लोगों को स्पर्श के बारे में बताये जाने के पहले उनसे पूछा गया कि वे पुस्तकालयों, लिपिकों और स्वयं अपने बारे में कैसा महसूस करते हैं? जिन महिलाओं और पुरुषों से स्पर्श हुआ था, उन्होंने पुस्तकालय की सराहना अन्य पुरुषों या महिलाओं से ज्यादा की, जिनसे स्पर्श नहीं किया गया था।

स्पर्श: संचार का पहला साधन

स्पर्श हमारे लिए संचार का सबसे सीधा और शायद सबसे तेज साधन है। त्वचा में लाखों संवेदनशील रंध्र होते हैं जो न केवल गरमी, सर्दी या पीड़ा होने की सूचना देते हैं, वरन यह भी बताते हैं कि इनसे आपको कैसा महसूस हो रहा है। डॉ. हेसलिन के परीक्षण से पता चलता है कि आपके हाथ में ऐसी शक्ति है कि लोग आपके बारे में और स्वयं अपने बारे में भी अच्छा महसूस करें।

स्पर्श: एक भाषा है

स्पर्श की अपनी भाषा होती है, लेकिन दुर्भाग्य से इसके अर्थ बड़े अनिश्चित होते हैं। दूसरी भाषाओं की तरह ऐसा कोई कोश नहीं है जो बता सके कि किसी विशेष तरह से स्पर्श का क्या अर्थ होता है और इसी तरह हमें हमेशा यह पता नहीं होता कि हमारे स्पर्श का दूसरे क्या मतलब लगाएंगे और उनकी प्रतिक्रिया क्या होगी! अलग-अलग हालातों में अलग-अलग लोगों पर एक ही जैसे स्पर्श की प्रतिक्रिया में काफी भिन्नता मिलेगी। अब जरा इन स्थितियों की कल्पना करें:

१. महाविद्यालय का एक छात्र सहपाठी छात्रा को रोज देखते-देखते प्रेम करने लगता है। दोनों में यौन आकर्षण भी हो जाता है। एक बार छात्र की नजर छात्रा पर पड़ती है तो उसे जोर की इच्छा होती है कि उसे बाहों में भर ले। छात्र के चुंबन से छात्रा को कैसा लगेगा?

२. दुनिया में व्याप्त उपेक्षा और बेरुखी के वातावरण से दुखी एक युवा डॉक्टर इस हालत को बदलना चाहता है और तय करता है कि अपने मरीजों को देखते समय वह उनका स्पर्श पूरी गर्मजोशी से करेगा। इससे उसकी प्रैक्टिस पर क्या असर पड़ेगा?

३. एक विवाहित पुरुष कार्यालय में बॉस से डांट खाकर परेशान-सा घर आता है तो पत्नी दिखाना चाहती है कि उसकी निगाहों में उसकी इज्जत पहले जैसी ही है। इसके लिए वह उसके शरीर को कामातुर होकर सहलाती है। इसकी प्रतिक्रिया क्या होगी?

४. अधेड़ आयु का एक व्यक्ति विमानतल पर अपने बचपन के दोस्त का इंतजार कर रहा है जो उसी से मिलने

आ रहा है। दोनों ने एक-दूसरे को पांच साल से नहीं देखा। विमान से उतरते मित्र पर नजर पड़ते ही वह दौड़कर जाता है और लोगों से घिरे दोस्त के गले में बांहें डालकर कार-पार्क की ओर बढ़ता है। कार-पार्क के सूनेपन में वह अपनी बांहें अचानक दोस्त के गले से हटा लेता है।

इससे दोस्त को कैसा लगेगा?

५. अमरीका में बस गया एक इतालवी बीस साल के ठंडे वैवाहिक जीवन के बाद अपनी अमरीकी पत्नी से तलाक पा लेता है। दो दशक से स्नेह के लिए तरस रहा यह व्यक्ति यूरोप की लंबी यात्रा इस उम्मीद से करता है कि उसे कोई ऐसी यूरोपीय महिला मिलेगी जो उसकी भावनाएं और जरूरतें समझ सकेगी। लंदन के एक रेस्तरां में उसकी मुलाकात स्काटिश लहजे में बात करनेवाली एक आकर्षक महिला से होती है। महिला बताती है कि वह दो बजे की गाड़ी से घर लौट रही है, एडिनबरा इन दिनों बहुत खुशनुमा होगा और कोई उसके साथ हो तो उसे बुरा नहीं लगेगा। इधर उस व्यक्ति का कार्यक्रम दोपहर बाद विमान से एथेंस जाने का है। अब उस व्यक्ति को क्या करना चाहिए? अपना कार्यक्रम रद्द करके महिला के साथ जाए या एथेंस जाने के लिए विमानतल पहुंचे?

इनके परिणाम क्या होंगे?

इन पांचों स्थितियों के लिए पूरी तरह निश्चित ऐसे कोई उत्तर नहीं हैं जो हमेशा ही ठीक साबित हों। फिर भी हाल के अध्ययनों के अनुसार इनके बारे में मनोवैज्ञानिकों और समाजविज्ञानियों की राय इस प्रकार है:

१. हो सकता है कि छात्रा अपने सहपाठी की भावनाएं ठीक से न समझ सके और बुरी तरह घबरा जाए।

२. आज समाज की जो हालत है, उसे देखते हुए इस प्रकार के व्यवहार से मरीज शायद डॉक्टर को हमेशा के लिए नमस्कार कर लेंगे।

३. पति की परेशानी बढ़ सकती है।

४. दोस्त राहत महसूस करेगा कि उसके प्रति स्नेह का प्रदर्शन ठीक जगह किया गया और तकलीफदेह हालत आने के पहले हाथ हटा लिया गया।

५. एथेंस जाना चाहिए क्योंकि स्काच महिला जिंदगी के इस मोड़ पर अनुकूल साबित होना कठिन है। हो सकता है इतालवी से मिलती-जुलती, जैसे कि यूनानी महिला ज्यादा मौजूं हो।

इन उत्तरों का औचित्य समझने के लिए मानवीय स्पर्श के नये विज्ञान में हुए शोध से उत्तरों का स्पष्टीकरण होता जाएगा। स्पर्श में असर डालने की क्षमता होने के बावजूद वैज्ञानिकों ने उस पर हाल ही गंभीरता से नजर डाली है। डॉ. हेसलिन मानते हैं कि स्पर्श व्यवहार का एक ऐसा रूप रहा है जिसका अध्ययन आंखों या हाथ के इशारे, जैसे अभि-व्यक्ति के अन्य तरीकों की तुलना में उपेक्षित रहा है। डॉ. हेसलिन द्वारा नीचे दिये वर्गों का ध्यान रखें तो समझ में आ जाएगा कि स्पर्श का लोग क्या अर्थ लगाते हैं और उस पर उनकी प्रतिक्रिया कैसी रहती है?

कारोबारी या व्यावसायिक स्पर्श : इस मामले में कोई भी एक व्यक्ति किसी दूसरे का स्पर्श इसलिए करता है, क्योंकि उससे उसे कुछ प्रयोजन होता है। डॉक्टर और मरीज, खेल प्रशिक्षक और खिलाड़ी, दरजी और ग्राहक के स्पर्श-संबंध इसी वर्ग के होते हैं। इस मामले में यद्यपि व्यवसाइयों की बेरुखी को ठीक न कहने की प्रवृत्ति है, लेकिन निहायत ठंडा और विशुद्ध कारोबारी रुख जरूरी होता है। होना यह चाहिए कि स्पर्श कारोबारी होने का तथ्य स्पष्ट हो जाए, क्योंकि कई बार वास्तविक संपर्क बहुत आत्मीय हो सकता है जो कि किसी अजनबी के मामले में ठीक नहीं होगा।

सामाजिक स्पर्श : इस वर्ग के स्पर्श के परंपरा से चले आ रहे नियम हैं कि स्पर्श कैसे किया जाए और कैसे नहीं। हाथ मिलाने और चुंबन की क्रियाएं इसी वर्ग में हैं। इनका प्रयोजन दोनों पक्षों की मानवीयता को मान्यता देना है। स्पर्श इस बात का प्रतीक है कि बराबरी के दो लोग मुकाबले पर हैं और वे एक-दूसरे

की मानवीयता को मान्यता देते हैं। हेसलिन मानते हैं कि इस प्रकार हाथ मिलाने से बहुत कुछ हासिल होता है।

दोस्ती या गर्मजोशी का स्पर्श : अकसर इस प्रकार का स्पर्श सबसे ज्यादा परेशानी पैदा कर सकता है। सामाजिक स्पर्श की तुलना में यह कम औपचारिक होता है और प्यार या यौन आकर्षण का प्रतीक भी मान लिया जा सकता है। समलिंगी व्यक्तियों के बीच यह विशेष खतरनाक होता है। जब कोई व्यक्ति अपने साथी के साथ एकांत में हो तो दोस्ती या गर्मजोशी से भरे स्पर्श की घटनाएं कम होती है, क्योंकि एकांत का संबंध प्रेम और सेक्स से माना जाता है और इस प्रकार के स्पर्श को गलत समझा जा सकता है।

स्नेह या आत्मीयता का स्पर्श : इस वर्ग के स्पर्श के लिए जरूरी है कि आपका संबंध ऐसा हो कि जिसे स्पर्श करें वह बेचैनी महसूस न करे। किसी के कपोलों के स्पर्श या उसका हाथ अपने हाथ में लेने को ज्यादातर लोग स्नेह का प्रतीक मानेंगे। इन प्यार-भरे स्पर्शों के भी कई प्रकार होते हैं जो प्यार की कमी या वृद्धि का संकेत करते हैं। दोनों व्यक्तियों में से किसी के हृदय में स्नेह की भावना कम गहरी हो तो वह इस प्रकार के स्पर्श से परेशानी महसूस कर सकता है।

कामोत्तेजक स्पर्श : यह सबसे तेज असर का स्पर्श होता है। इस प्रकार का असर सुखद लगता है, क्योंकि उसमें सेक्स और उत्तेजना की भावना होती है, तथापि इन्हीं भावनाओं के कारण वह भयोत्पादक और चिंताजनक भी हो सकता है। इस वर्ग के स्पर्श में हाथ-में-हाथ लेने का असर कम होगा जबकि कामांग सहलाना ज्यादा असरकारी होगा। हेसलिन मानते हैं कि ये दोनों बातें एक-दूसरे में समाती भी हैं। कुछ लोगों के लिए कामोत्तेजन और प्रेम एक ही चीज है जबकि दूसरे लोगों के लिए दोनों बातें अलग-अलग।

गहरी आत्मीयता की ओर

स्पर्श के इन पांचों वर्गों का क्रम निर्धारित करने के दो तरीके हैं। एक तो यह है कि कारोबारी स्पर्श से जैसे-जैसे कामोत्तेजक स्पर्श की ओर बढ़ते चलें, दूसरे व्यक्ति के बारे में आपका दृष्टिकोण अधिकाधिक वैयक्तिक और मानवीय होता जाता है। आत्मीयता जैसे-जैसे गहरी होती जाती है, सामनेवाला व्यक्ति वस्तु के बजाय जीता-जागता व्यक्तित्व बनता जाता है। दूसरे सिद्धांत के अनुसार किसी भी व्यक्ति की सबसे ठीक पहचान दोस्ती या गर्मजोशी में ही होती है और किसी रिश्ते में इतनी सनकें बर्दाश्त नहीं की जा सकतीं। बड़ी समस्या तो यह है कि जिस स्पर्श को आप दोस्ती या गर्मजोशी का मानते हैं, उसी को दूसरा व्यक्ति स्नेह या आत्मीयता का मान सकता है। यह बात डॉ. हेसलिन के एक परीक्षण से सामने आयी। परीक्षण उन्होंने अपने सहायकों डॉ. तुअन

आपके परिवार को
सर्वश्रेष्ठ ही
चाहिये!
कोलगेट डेन्टल क्रीम से
सांस की दुर्गंध रोकिये... दंतक्षय का
दिनभर प्रतिकार कीजिये!
वैज्ञानिक परीक्षणों से यह सिद्ध हो चुका है कि १० में से ७ लोगों के लिए कोलगेट सांस की दुर्गंध को तत्काल खत्म कर देता है क्योंकि एक ही बार दांत साफ़ करने पर कोलगेट डेन्टल क्रीम मुंह में दुर्गंध और दंतक्षय पैदा करने वाले ८५ प्रतिशत तक कीटाणुओं को दूर कर देता है। और बच्चों को इसका पिपरमिंट जैसा स्वाद बहुत पसंद है।
अधिक सफ़ेद दांतों, अधिक स्वस्थ मसूढ़ों व मुंह में अधिक ताजगी के लिये कोलगेट टूथ ब्रश इस्तेमाल कीजिये। १६ विभिन्न किस्मों में— आपके परिवार में हरेक के लिए अनुकूल!
Colgate
DENTAL CREAM
STOPS BAD BREATH. FIGHTS TOOTH DECAY ALL DAY
DC.G.34 HN
ज्यादा साफ़ व तरोताज़ा सांस और
ज्यादा सफ़ेद दांतों के लिए... कोलगेट खरीदिये

गुयेन और मिशेल गुयेन के साथ मिलकर स्नातक कक्षाओं के छात्रों पर किया। छात्रों और छात्राओं से यह बताने को कहा गया कि उनके विपरीत लिंग का कोई निकट व्यक्ति उनके शरीर का स्पर्श करे तो उन्हें कैसा लगेगा। स्पर्श के चार तरीके थे—थपथपाना, झकझोरना, आघात करना या अनजाने ही छू जाना। जिन अंगों के इन चार तरीकों से स्पर्श की बात की गयी, उनमें सिर, चेहरा, ग्रीवा, कंधे, छाती या सीना, बाजू, हाथ, कमर, जांघ, कामांग, पैर और पीठ शामिल थे।

विभिन्न और विपरीत प्रतिक्रियाएं

परड्यू के शोधकर्त्ताओं ने पाया कि पैरों के स्पर्श को छात्र खेलने की प्रवृत्ति का सूचक मानते हैं, हाथों के स्पर्श को स्नेह, दोस्ती और प्रसन्नता का प्रतीक तथा कामांगों के स्पर्श को यौनेच्छा का। अंग विशेष के एक ही तरीके से स्पर्श के सवाल पर महिलाओं और पुरुषों के उत्तर काफी भिन्न थे। छात्र मानते थे कि कामांग के स्पर्श का अर्थ प्रेम, गर्मजोशी और प्रसन्नता है जबकि छात्राएं ऐसा नहीं मानती थीं। ऐसे ही प्रश्न हेसलिन ने विवाहित जोड़ों से भी पूछे और पाया कि पत्नियों ने जब पतियों का स्पर्श किया तब पतियों ने उसका अर्थ किसी तरह की गर्मजोशी, प्रसन्नता या प्यार से नहीं लगाया, जबकि पतियों के स्पर्श की पत्नियों पर प्रतिक्रिया बहुत स्पष्ट और तीव्र रही। जब पत्नियों ने पतियों का स्पर्श किया तब वे घबरा गये और अपनी क्षमता के प्रति चिंतित हो उठे। दूसरी ओर विवाहित महिलाओं ने इस प्रकार के स्पर्श से सुख महसूस किया।

स्पर्श की प्रतिक्रिया लोगों पर कैसी होती है, यह बहुत कुछ देश-देश के चलन और संस्कृति पर भी निर्भर करता है। अमरीका के लोग एक-दूसरे का स्पर्श कम ही करते हैं। रूस के लोग इस मामले में आगे हैं। युवावस्था में वे एक-दूसरे का स्पर्श करके प्रेरणा प्राप्त करते हैं और उनकी यह आदत आजीवन कायम रहती है। अरब के लोग अपने साथी का स्पर्श करना पसंद करते हैं। जापान के लोग स्पर्श करते तो हैं, लेकिन उसमें औपचारिकता और अलगाव की भावना बनी रहती है। समाजविज्ञानियों के अनुसार यूनानी लोग, विशेषकर वहां की महिलाएं स्पर्श किया जाना बहुत पसंद करती हैं और स्काटलैंड की महिलाएं सबसे कम।

स्पर्श-भूख : अजनबीपन का एहसास

चाहे जिस संस्कृति पर विचार किया जाए, सामने यही बात आती है कि दुनिया में आत्मीयता की कमी है और कितनी ही समस्याएं स्पर्श के न होने से ही पैदा हो जाती हैं। डॉ. हेसलिन तो यह भी मानते हैं कि पागलखानों और जेलों में बंद लोगों के साथ एक विडंबना यह भी है कि उन्हें स्नेहिल स्पर्श नहीं मिलते। यह भी पाया गया है कि चिकित्सालयों में परिचारिकाएं वृद्धों के बजाय युवा मरीजों का

स्पर्श ज्यादा करती हैं, क्योंकि वे उन्हें आकर्षक लगते हैं।

शायद ही कोई दिन ऐसा जाता हो जब व्यक्ति किसी दूसरे का स्पर्श न करता हो। फिर भी इन स्पर्शों के अर्थ अभी बराबर समझे नहीं जाते।

स्पर्श से स्वास्थ्य लाभ

स्पर्श का वैज्ञानिक अध्ययन भले ही पहले न हुआ हो, किंतु उसमें चमत्कारी शक्ति होने के उदाहरणों की कमी नहीं है। प्राचीन और मध्यकालीन यूरोप में बीमार आदमी राजा के पास जाता था, राजा या रानी उसका स्पर्श कर देते थे और वह अच्छा हो जाता था या कम-से-कम ऐसा महसूस करने लगता था। पूर्व के देशों में जिनमें भारत भी शामिल है न केवल प्राचीनकाल में वरन आज तक देखा जाता है कि साधु-संत या महात्मा किसी बीमार को बस छू देते हैं और उसकी बीमारी दूर होने लगती है।

स्पर्श से विद्युत का उद्भव

स्पर्श का असर आखिर होता क्यों है? हर व्यक्ति के अपने कुछ गुण होते हैं और कुछ शक्तियां होती हैं जो त्वचा के लाखों-करोड़ों रंध्रों से स्फुरित होती रहती हैं। जब स्पर्श होता है तब इन शक्तियों या गुणों का संप्रेषण उसी प्रकार दूसरे व्यक्ति को हो जाता है जैसे तारों का संपर्क होने पर विद्युतधारा एक से दूसरे स्थान की ओर प्रवाहित होने लगती है। यही कारण है कि नेक व्यक्तियों का स्पर्श होने से अच्छा लगता है। लेकिन स्पर्श से होनेवाला शक्तियों का यह संप्रेषण इकतरफा नहीं होता। दोनों ही पक्ष एक-दूसरे की शक्तियों का कुछ-न-कुछ अंश ग्रहण करते हैं। इसीलिए इसमें अकसर एक बड़ा खतरा भी निहित होता है कि जिस व्यक्ति से आपका स्पर्श हुआ, उसकी बेचैनी या चरित्र की विसंगतियां भी कुछ हद तक आपमें प्रवेश कर जाएं। कहा जा सकता है कि प्रत्येक स्पर्श एक जुआ है—वह सुखद भी हो सकता है और वैर-विरोध के भाव भी पैदा कर सकता है। स्पर्श सुख है, लेकिन आत्मीयता के बिना वह अर्थहीन है। ●

एक जगह रामलीला हो रही थी। उस समय का दृश्य दिखलाया जा रहा था, जब लंका विजय के पश्चात राम, सीता और लक्ष्मण पुष्पक विमान में बैठकर अयोध्या की ओर प्रस्थान करनेवाले थे। पहले सीताजी को पुष्पक विमान में बैठने को कहा गया। सीताजी के बैठते ही किसी गलती के कारण विमान, जो रस्सियों के सहारे लटका हुआ था, ऊपर चला गया। तभी वह युवक, जो लक्ष्मण का पार्ट कर रहा था, राम की तरफ मुखातिब होकर रुआंसे स्वर में बोला—'भैया राम, अगर आपके पास टाइम-टेबिल हो तो जरा देखकर बतलाइए कि दूसरा विमान कितने बजे छूटता है।'

ी कहानियों का एक अविस्मरणीय पात्र

भावुक और सरल हृदया : दिव्या

● यशपाल

कथा-लेखकों से प्रायः पूछ लिया जाता है कि तुम्हारी सृष्टि के सैकड़ों पात्रों में से किस पात्र ने तुम्हें सबसे अधिक उद्वेलित या प्रभावित किया जिसे तुम्हारा मानसिक प्रतिनिधि या बिंब माना जा सके? लेखक को इस प्रश्न का उत्तर देने में कठिनाई या उलझन होती है। सामान्यतः समझ लिया जाता है कि लेखकों की सभी रचनाओं—कहानियों अथवा उपन्यासों के पात्र लेखकों के अपने जीवन के परिवेशों या आयामों में से उन्हें विशेष-रूप से या अधिकतम प्रभावित करनेवाले व्यक्ति या ऐसे व्यक्तियों के प्रतिबिंब होते हैं। ऐसे अनुमान का कारण जान पड़ता है कि लेखकों की रचनाओं के विभिन्न पात्र पाठकों को न्यून या अधिक मात्रा में प्रभावित करते हैं या पाठकों की सराहना-सहानुभूति पाते हैं। पाठक सहज मान सकते हैं कि जिस रचना का जो पात्र सर्वाधिक जीवंत और प्रभावी बन पड़ा है, लेखक ने उस पात्र के सृजन में या उसे प्रतिबिंबित करने में अधिकतम तन्मयता से श्रम किया होगा। पाठक अनुमान करेंगे, लेखक का ऐसा पात्र उसकी प्रकृति, प्रवृत्ति, मान्यताओं और भावनाओं का सर्वाधिक प्रतिनिधि या मूर्त-रूप होगा या लेखक ने ऐसे पात्र में स्वयं को सर्वाधिक न्यस्त करने का संतोष अनुभव किया होगा। लेखक की किसी एक रचना के लिए ऐसा अनुमान कुछ सीमा तक ठीक हो सकता है, परंतु अधि-

कांश लेखक अपनी कल्पना-रचित समग्र सृष्टि के संबंध में ऐसा अनुमान स्वीकार नहीं करेंगे, मैं भी नहीं कर सकता। कारण, कि कोई भी कथा-लेखक अपनी विस्तृत-से-विस्तृत रचना में भी अपने संपूर्ण चिंतन और भावनाओं के क्षेत्रों और दिशाओं को पूर्णतः समाहित नहीं कर सकता।

कभी एक ही सफल या सशक्त रचना में पाठकों को परस्पर विरोधी प्रवृत्तियों या मान्यताओं के दो या अनेक पात्र समान रूप से जीवंत या प्रभावी जान पड़ सकते हैं। रचना विशेष का एक पात्र अपने चरित और विचारों से अपने सृजन के अभिप्रेत के लिए पाठक-समाज का समर्थन पाकर अपने जनक द्वारा निर्दिष्ट कार्य को पूरा करता है। क्या उसी रचना का अन्य पात्र (जिसे विरोधी या खलनायक भी कहा जा सकता है) अपने चरित से पाठक-समाज में अपने सृजक द्वारा त्याज्य बनाये जाने के प्रति विरक्ति और विरोध-भावना जगाकर अपने जनक के अभिप्रेत को पूरा नहीं करता? ऐसे भी उदाहरण हैं कि खल जान पड़नेवाला पात्र लेखक के प्रतिपादित के विरोध से, लेखक के अभिप्रेत के प्रकट समर्थक पात्र की अपेक्षा, लेखक के प्रयोजन को अधिक कौशल और सफलता से पूरा कर सके। ऐसी स्थिति में परस्पर विपरीत के प्रतिनिधि या मूर्त पात्र लेखक का उद्देश्य पूरा करने में समान रूप से उसके प्रतिनिधि का प्रिय न होकर भी, क्या उसके वात्सल्य और आभार के समान अधिकारी नहीं होंगे?

एक और भी पक्ष है। संभवतः प्रस्तुत प्रश्न का समाधान अनेक लेखकों की विभिन्न रचना-प्रक्रियाओं में पाया जा सके। अनुमानतः कथा-रचना की प्रक्रिया दो तरह हो सकती है। कुछ लेखक तथ्य घटनाओं, स्थूल अनुभवों, स्थूल परिवेशों या भुक्त विषयवस्तु से कथा-रचना करते हैं। स्थूल अनुभवों, परिवेशों और विषयवस्तु से अभिप्राय ऐसी भावनाओं, परिस्थितियों और घटनाओं से है जो रचनाकार को प्रत्यक्ष या स्थूल भौतिक अनुभवों या संवेदनाओं से अभिव्यक्ति की स्फूर्ति, उद्वेलन, आवेग या प्रेरणा देते हैं। स्वयं को यथार्थवादी कहनेवाले कुछ लेखक स्थूल या तथ्य अनुभूतियों से उद्भूत या प्रेरित रचनाओं को भोगा हुआ लेखन भी कहते हैं और ऐसी रचनाओं को ही प्रामाणिक और यथार्थवादी मानना चाहते हैं। ऐसे रचनाकार व्यक्ति और समाज के परिवेशों में व्याप्त विचारों, भावनाओं, अप्रकट अंतर्विरोधों, वैचारिक द्वंद्वों और नये समन्वय की चिंताओं को उस समय तक यथार्थ नहीं मानना चाहते जब तक वे तथ्य अनुभवों के रूप में प्रत्यक्ष न हो जाएं या घटना रूप में उनका विस्फोट न हो जाए। संभव है, ऐसे स्थूल, यथार्थ विषयवस्तु से रचना करनेवाले कथाशिल्पी अपने कुछ पात्रों या पात्र विशेष को अपनी

प्रेरणा के विशिष्ट स्रोत या अपने मंतव्यों का विशिष्ट प्रतिनिधि या अपनी सतत छाया बता सकें। मैं ऐसी रचना-प्रक्रिया पर निर्भर ही न करता। अतः इसके विषय में अधिक न बता सकूंगा।

कहा जा सकता है कि लेखक अपने अभिप्रेत की स्थापना के लिए एक द्वंद्व रचता है। द्वंद्व के लिए दो पक्ष तो चाहिए ही, एक पक्ष लेखक की स्थापना का प्रतिनिधि और दूसरा पक्ष उसकी स्थापना का विरोधी। लेखक अपनी स्थापना की विजय के लिए स्वयं-प्रसूत विरोधी चरित्र का पराभव या उसे बलि कर देता है। प्रश्न है, लेखक की जो मानसिक संतति अपने सर्जक के अभिप्रेत के लिए बलि हो गयी, लेखक की कृतज्ञता, वात्सल्य और आदर न पाएगी?

उपरोक्त प्रश्न पर विचार के लिए तर्कजाल बढ़ाते जाने की अपेक्षा प्रश्न को व्यावहारिक रूप में लें। अन्य लेखकों के पात्रों की सफलता-असफलता की चर्चा के बजाय अपने ही पात्रों को प्रस्तुत करता हूं। मेरा एक चर्चित उपन्यास है, 'दिव्या'। अनेक विश्वविद्यालयों में उच्च कक्षाओं के लिए पाठ्य पुस्तक होने के कारण साहित्यिक रुचि के लोगों के लिए परिचित उदाहरण हो सकता है। इस उपन्यास की प्रमुख पात्र दिव्या कला निष्णात, अति भावुक, सरल हृदया है। अपनी आस्था के लिए उसका साहस और दृढ़ता उसे पराजय और पीड़न की भंवरों में डालते जाते हैं। समाज और जीवन-व्यापार के क्षेत्र में असफल और तिरस्कृत होकर भी वह झुकती नहीं। उसका आत्मविश्वास विवेक और आस्था उद्ग्रीव रहते हैं।

इस उपन्यास की अन्य प्रमुख नारी पात्र है, सीरो। परिस्थितियां सीरो की स्पृहा को, सुलभ अवसर के मार्ग उसकी स्पृहाओं को बढ़ाकर उसे विवेकहीन बना देते हैं। उसकी अबाध स्पृहा और अविवेक ही उसे कुछ समय के लिए कामना-पूर्ति के सिंहासन पर पहुंचा देते हैं।

इस उपन्यास का एक पात्र है, पृथुसेन; —प्रखरबुद्धि, शूर, अपमान और अन्याय के प्रतिकार के लिए प्राणांत संघर्ष के लिए उद्यत। परिवर्तित परिस्थितियां उसके मार्ग के अवरोध दूर कर उसके लिए सफलता का सोपान प्रस्तुत कर देती हैं। पद, अधिकार और सामर्थ्य की असीम लालसा और सफलता का उन्माद उसके विवेक को ग्रस लेते हैं। परिस्थितियों का दूसरा परिवर्तन उसे पराभव और प्राण-संकट में डाल देता है। शक्ति की स्पर्धा के उन्माद से मुक्त उसका पुनः जागृत विवेक भटकन को पहचानकर शाश्वत सत्य का पथिक बनना चाहता है।

उपन्यास का एक पात्र मारिष है। मारिष संतुष्ट आत्मसम्मानी - अपरिग्रही स्वभाव के कारण साधनहीन है, परंतु याचक-दीन नहीं। वह अपनी मान्यताओं पर अडिग और उनके उद्घोष में निर्भीक है। वह कथानक में कभी-कभी अकस्मात

आता है, परंतु जब भी वह आता है, पाठक की स्मृति में उल्का की रेखा बना जाता है। विस्तार की आशंका में उपन्यास के केवल चार पात्रों का परिचय दे रहा हूं।

भाग्य या परिस्थितियां सीरो की मुट्ठी में हैं।

उपन्यास का एक प्रसंग अति संक्षेप में : दिव्या अभिजात कुल की पुत्री थी। वह पृथुसेन के शौर्य, उसके प्रति अन्याय में सहानुभूति, उस पर विश्वास से उसके आकर्षण की प्रवंचना में गर्भवती हो गयी। प्रतिद्वंद्विता में सीरो ने उसे ठुकराकर छद्म वेश में शरण खोजने के लिए विवश कर दिया। सद्यः प्रसूता दिव्या को मथुरा के एक पुरोहित ने क्रय कर लिया। पुरोहित की रुग्णापत्नि अपने नवजात पुत्र की उदरपूर्ति में अक्षम थी। दिव्या के भूख से बिलखते पुत्र को उसके सामने रखकर उसका स्तन प्रवाहित हो जाने पर उसका स्तन स्वामी-पुत्र को पान करा दिया जाता। दिव्या का पुत्र क्षुधा से मरणासन्न हो गया।

एक मध्याह्न में दासी दिव्या भूख से सिसकते अपने पुत्र को वक्ष पर लिये स्वामी-गृह से भाग गयी। अपरिचित महानगर में भटकती अभागी दासी के लिए शरण कहां? उसे भिक्षाटन से लौटते भिक्षुओं का आह्वान बार-बार सुनायी दिया——संसार के संतप्त लोगो-शांति और रक्षा के लिए बुद्ध की शरण आओ! धर्म की शरण आओ! संघ की शरण आओ! दासी दिव्या ने शरण के विश्वास से बौद्ध विहार के मुंदे द्वार के

सन्मुख बार-बार गुहारा। बौद्ध आश्रम में नारी का प्रवेश निषिद्ध है। आर्त नारी की पुकार पर आश्रम के स्थविर द्वार के मुंदे कपाटों से प्रकट हुए। दिव्या ने स्थविर के चरणों में सिर रखकर अपनी संतान की प्राण-रक्षा के लिए बुद्ध की शरण, धर्म की शरण, संघ की शरण की याचना की।

स्थविर ने शांति के संकेत से दिव्या से पूछा—"देवी, बुद्ध की शरण, धर्म की शरण, संघ की शरण की इच्छुक तुम कौन हो?" "धर्मपिता, मैं इस असहाय संतान की माता हूं," दिव्या ने अपने पुत्र की ओर संकेत किया।

स्थविर ने पूछा—"देवी, क्या तुम्हारे धर्म और संघ की शरण-ग्रहण करने में तुम्हारे पति की अनुमति है?" दिव्या ने उत्तर दिया—"देव, दासी का पति नहीं है।"

स्थविर ने पूछा—"यदि पति नहीं है तो धर्म और संघ की शरण पाने में तुम्हारे पिता की अनुमति है?" दिव्या ने उत्तर दिया—"भंते, पिता भी नहीं है।"

स्थविर ने प्रश्न किया—"देवी, यदि पति और पिता नहीं हैं तो संघ की शरण के लिए तुम्हारे पुत्र की अनुमति है?" दिव्या ने अपना पुत्र सन्मुख कर दिया—"देव, दासी का पुत्र अनुमति देने योग्य नहीं है।"

स्थविर ने नेत्र झुकाये प्रश्न किया—"यदि तुम दासी हो तो क्या तुम्हारा स्वामी तुम्हें संघ की शरण की अनुमति देता है?" दिव्या ने व्याकुल याचना की —"नहीं भंते, दासी अपने पुत्र की रक्षा के लिए शरण मांगती है।" स्थविर ने सिर हिला दिया—"देवी, धर्म के नियमानुसार संघ नारी के अभिभावक की अनुमति बिना नारी को संघ में शरण नहीं दे सकता।"

स्थविर के उत्तर से आहत दिव्या ने पुनः साहस किया—"परंतु देव, भगवान तथागत ने तो वेश्या अंबपाली को संघ में शरण दी थी।" स्थविर ने उत्तर दिया—"देवी, वेश्या स्वतंत्र नारी है।" स्थविर आश्रम के द्वार के भीतर चले गये।

उपन्यास पढ़ने के उपरांत प्रख्यात बौद्ध दार्शनिक भदंत आनन्द कौसल्यायन से भेंट हुई तो दिव्या-स्थविर संवाद के उल्लेख से बोले—"बौद्ध धर्म के गाल पर क्या चांटा लगाया है! वाह! वाह!"

दिव्या ने पाठकों से कितनी सराहना या सहानुभूति पायी है? अनुमान के लिए बता दूं, पंजाब से केरल और मारीशस तक उपन्यास के अनेक पाठक-परिवारों में बेटियों को दिव्या नाम दे दिया गया है।

स्वर्गीय राष्ट्रकवि मैथिलीशरण (दद्दा) ने 'दिव्या' को अनेक बार पढ़ा था। साक्षात होने पर मुसकान से पूछ लेते—"कहो मारिष, आजकल किस सत्य का निरूपण हो रहा है?" इन दो उल्लेखों

से दिव्या को नारी-पक्ष में मेरी मान्यता और मारिष को पुरुष-रूप में अपने प्रिय प्रतिनिधि मानने से मुनाकिज नहीं हो सकता पर क्या यह दोनों ही मेरे प्रिय पात्र हैं?

उपन्यास के चार ही पात्रों के परिचय के लिए वचनबद्ध हूं। माना कि दिव्या और मारिष इस उपन्यास-प्रासाद के मंडप हैं, परंतु इन दोनों मंडपों के चरित की पूर्णता का बोझ प्रासाद की नीवों, अनेक भित्तियों, स्थणों, उपस्थणों—पृथुसेन, रुद्रधीर, सीरो-मल्लिक, धर्मस्थ, रत्नमाला, वैद्य, भिक्षु-चीवुक के बिना कैसे संभलता? क्या उपन्यास के ये पात्र जिन्होंने आत्म-बलिदान कर मेरे अभिप्रत की अभिव्यक्ति को सबल बनाया, मेरे मानसिक अस्तित्व के अविभाज्य अंश और प्रिय नहीं हैं?

संक्षेप का संकल्प है, परंतु अधूरी बात से भ्रम की आशंका। क्या केवल 'दिव्या' उपन्यास के प्रमुख पात्रों को ही अपने प्रतिनिधि और मानसिक बिंब मान सकता हूं? मेरी अनुभूति यदि ऐसी होती तो दिव्या से पूर्व और पश्चात अपने अभिप्रायों की अभिव्यक्ति के लिए 'झूठा सच' आदि दस अन्य उपन्यासों और सोलह कहानी-संग्रहों के पात्रों की सृष्टि के लिए व्याकुलता क्यों अनुभव होती? मेरे विश्वास में मेरी संपूर्ण रचनाओं के पात्र मेरे वैचा-

रिक अस्तित्व के विभिन्न पार्श्वों के प्रिय प्रतिनिधि और मेरे ही बिंब हैं। केवल पाठकों की सहानुभूति पानेवाले पात्र ही नहीं, पाठकों की वितृष्णा और विरोध पानेवाले पात्र भी मेरे उतने ही प्रिय हैं। खल जान पड़नेवाले मेरे पात्रों ने ही मेरे मंतव्य के प्रवक्ता पात्रों को अपने कंधों पर उठाया है। इसलिए वे मेरी कृतज्ञता और वात्सल्य के कम अधिकारी नहीं।

यदि दंभ न समझें तो कहूंगा—लेखक कथा की सृष्टि का ब्रह्मा है। ब्रह्म कृष्ण के मुख से 'गीता' में कहता है। शंकर, वल्लभाचार्य से लेकर तिलक, अरविन्द और संस्कृत जाने बिना भी एनीबेसेंट, गांधीजी और आचार्य विनोबा अपने-अपने विचार से 'गीता' की सैकड़ों व्याख्याएं कर चुके हैं, तो मेरा दुस्साहस ही अक्षम्य क्यों ? 'गीता' में कृष्ण की उक्ति लेखक की स्थिति से दोहराता हूं :—

अनेकवक्त्रनयनमनेकानद्भुत दर्शनम।
अनेक दिव्याभरणं दिव्यानेकोद्यता युधम।।

मैं देश-काल अनुसार समाज-संसार को अनेक दृष्टियों से देखता हूं और अनेक अवसरोचित वाणियों में समयानुकूल अभिव्यक्ति करता हूं। अभिप्रेत को प्रकट करने के लिए मैं अनेक दिव्य और हेय रूपों और आभरणों में संघर्ष अथवा युद्ध के लिए उद्धत रहता हूं। समय से विकसित और परिवर्तित होनेवाले मेरे आत्मा के प्रकट बिंबों में अभीष्ट अभिप्रेत ही समाहित है।

—३३५ महानगर, लखनऊ

ज्ञान-गंगा

स्मरन्ति सुकृत्यान्येव न वैराणि कृतान्यपि।
सन्तः परार्थं कुर्वाणा नावेक्षन्ते प्रतिक्रियाम्।।

—सत्पुरुष केवल सत्कर्मों की ओर ध्यान देते हैं। कोई वैर करे तब भी उसका स्मरण नहीं करते। उनका एकमात्र ध्येय सभी का हितचिंतन होता है, शत्रु से भी बदला लेने का उन्हें स्वप्न में भी ध्यान नहीं होता।

श्रोतव्यं हितकामानां सुहृदां हितमिच्छता।
कर्तव्यो हि निर्बन्धो निर्बन्धो हि क्षयोदयः।।

—सदा ही अपने हितैषी और सर्वथा हित चाहनेवाले संबंधियों की बात सुननी चाहिए, हठ न करना चाहिए। अनुचित हठ का परिणाम सदा विनाश होता है।

धर्मं यो बाधते धर्मः न स धर्मो कुधर्म तत्।
अविरोधी तु यो धर्मः सधर्मो मुनि-पुंगव।।

—जो धर्म दूसरे धर्म की उपेक्षा करता है वह धर्म नहीं कुधर्म है। मुनिवर, धर्म वही है जो किसी का विरोध नहीं करता।

द्वे कर्मणी नरः कुर्वन् अस्मिल्लोके विरोचते।
अब्रुवन् परूषं किंचद् असतोऽनर्चयंस्तथा।।

—दो काम करनेवाले पुरुषों की ही इस संसार में परम प्रतिष्ठा होती है। जो कभी-भूलकर भी कठोर या अप्रिय वचन नहीं बोलता और न दुष्ट की पूजा या सत्कार करता है।

—ब्रह्मदत्त शर्मा

एक नव-विवाहित युवक ने अपने खास दोस्तों को पार्टी में बुलाया। उसका एक जिंदादिल दोस्त उसे सफल वैवाहिक जीवन के बारे में बताने लगा। सारी बात सुनकर युवक ने उससे पूछा, "और कोई सलाह देना चाहोगे ?"

"दो अंतिम बातें बता रहा हूं। एक तो तुम अपनी पत्नी से पहले ही तय कर लेना कि सप्ताह में एक दिन तुम दोस्तों के साथ बिताओगे; और दूसरे तुम उस रात को दोस्तों पर बरबाद मत करना।"

हजारों आदमी वहां इसी पेशे से अपनी जीविका चला रहे हैं।"

★

दो अमरीकी घूमने के लिए पहली बार भारत आये। अमृतसर में वे एक होटल में घुसे। नियमानुसार सबसे पहले उनके सामने प्याज और हरी मिर्च की प्लेटें रखी गयीं। एक ने जैसे ही मिर्चें चबायीं उसके आंसू बह निकले।

दूसरे ने पूछा, "रो क्यों रहे हो ?"

"मुझे एकाएक अपने पिता की याद

★

पत्नी : कभी तो तुम मुझे पुरुष नजर आते हो, पर कभी-कभी तुम औरतों-जैसा व्यवहार करने लगते हो ! क्या कारण है ?

पति : कुछ नहीं। मेरी वंश-परंपरा का दोष ही समझो, क्योंकि मेरे पूर्वजों में आधे पुरुष थे और आधे स्त्री।

★

किसी एक देश से लौटकर कोई सज्जन अपने भाषण में वहां की खूबियां यों बता रहे थे—"वहां आबादी इतनी ज्यादा है कि आदमी की जान की किसी को कोई परवाह नहीं। यहां तक कि वहां फांसी की सजा पाये लोग कुछ रकम देकर दूसरे को तैयार कर लेते हैं . . .

आ गयी जिन्हें फांसी दे दी गयी थी," उत्तर मिला। दूसरे ने मिर्चें चबाना शुरू की, तो उसका भी वही हाल हुआ।

अब पहले वाले ने पूछा, "तुम क्यों रो रहे हो ?"

"सहानुभूति में।"

★

"यथार्थ और भ्रम का अंतर समझाने की कृपा करें गुरुवर।"

"तुम्हारा यहां मौजूद होना और मेरा उपदेश देना यथार्थ है, पर मेरा यह सोचना कि तुम उसे ध्यान से सुन रहे हो, भ्रम है।" गुरु ने शिष्य की जिज्ञासा शांत की।

★

"तुम इतनी जल्दी फिर क्यों छुट्टी

पर जा रहे हो?" एक सैनिक से उसके अफसर ने पूछा।

"बात यह है हुजूर, एक लड़की से मेरी दोस्ती है और कल उसका विवाह है; और उस लड़की की इच्छा यह है कि मैं उसकी शादी में उसका पति बनकर सम्मिलित होऊं।"

★

"आपसे मिलकर बड़ी खुशी हुई।"

"लेकिन मुझे नहीं हुई !"

"ओपफो ... भाई, किसी को थोड़ी देर खुश करने के लिए आप भी तो मेरी तरह झूठ बोल सकते हैं कि नहीं !"

★

एक नटखट लड़की से कक्षा में उसकी अध्यापिका ने कहा, "मैं अगर तुम्हारी मां होती तो तुम्हें एक दिन में ठीक कर देती।"

"जी, आज मैं पापा से इस बात का जिक्र करके देखूंगी," लड़की ने कहा।

★

एक लड़की हर आदमी को बड़े गर्व से बताती थी कि मैं एक बहुत बड़े मेजर की बेटी हूं। इस पर उसकी मां ने समझाया, "बेटी, ऐसा नहीं कहा करते, नहीं तो सुननेवाले झुंझला जाते हैं।"

दूसरे दिन एक मेहमान ने बच्ची से पूछा, "क्या तुम्हारे पिता मेजर हैं?"

"कल तक मैं भी यही समझती थी, पर अब मम्मी ने मना कर दिया है।" बच्ची ने बताया।

—रामरिख मनहर

हंसिकाएं काव्य में

देर

तुम्हारे विरह में
विरह गीत लिख-लिखकर
पत्रिकाओं में भिजवाये
सिर्फ तुम न लौटे
सभी लौट आये

टैक्स

उनके संबंधों पर
टिप्पणी देते हुए कहा उन्होंने—
'बात सही है
जब से, आयकर अधिकारी से
संबंध हुआ है
वह जैसे उनकी
संपत्ति बन गयी है !'

भाषण

चूल्हे-चौके से विमुख होती
भारतीय महिलाओं को
चकला-बेलन का महत्त्व बताते हुए,
चकले की बात पर
निकले सभा से—बेलन खाते हुए

प्रत्युत्तर

होटल के कमरे में
गाने लगे दोनों
'—और चाबी खो जाए
—मजा तभी है।'
होटल का मैनेजर, सुनकर चिल्लाया—
'मेरे पास इसकी
डुप्लीकेट की है !'

—डॉ. सरोजनी प्रीतम

जहां भारत की पहली बैलगाड़ी सुरक्षित है

● राजेन्द्र अवस्थी

महीने का पहला शनिवार ! म्यूनिख का बाजार भीड़ से भरा था। रंग-विरंगे कपड़े और खासी चहल-पहल !

कल शाम एक अखबार ने हमारा इंटरव्यू लिया था। अखबार के प्रतिनिधि ने कल ही बता दिया था कि हर महीने के पहले शनिवार को म्यूनिख (जरमनवासी इसे म्यूनीचेन कहते हैं) के घर सड़कों पर आ जाते हैं। महीने-भर की खरीदारी और मनोरंजन सब एक दिन में !

उस अखबार के संवाददाता को भारत की गरीबी से हमदर्दी थी। भारत के बारे में उसने जो प्रश्न पूछे, वहां के लोगों के ज्ञान के परिचायक हैं। उसका पहला प्रश्न था, 'भारत में भुखमरी है, फिर आप लोग गायों को क्यों नहीं खाते?'

प्रश्न सुनकर मैं बिलकुल नहीं चौंका। ऐसे प्रश्न कई दिनों से कई लोग करते आ रहे थे। मैंने विनम्रता से उन्हें बताया कि जरमनी का औद्योगीकरण इतना अधिक हो गया है कि 'फोक कल्चर' या लोककला नाम की कोई चीज वहां नहीं बची। पूरा देश परंपरा से कट गया है। परंपरा के नाम पर स्वीडन की तरह वहां भी 'स्कांसा' है, जहां देखा जा सकता है कि पांच-सात सौ वर्ष पहले जरमनी के लोग कैसे रहते थे !

मैंने कहा, 'दोस्त, आपको आपके

पुराने जहाजों और माडलों में मुखर जहाजरानी का इतिहास

देश की ही एक पुरानी बात मैं बताना चाहूंगा। जिन दिनों यूरोप में रोमन सभ्यता का प्रचार-प्रसार था और आज की तरह मशीनों ने यहां आदमी पर कब्जा नहीं किया था, उन दिनों यहां के खेत ट्रेक्टरों से नहीं, हल द्वारा जोते जाते थे और उनमें घोड़े लगाये जाते थे। अब हल नहीं हैं, लेकिन जरमनी के लोग अब तक घोड़े को पूज्य मानते हैं और उसका मांस नहीं खाते। आपको शायद यह पता नहीं होगा कि भारत के अधिकांश खेत अब भी हल से जोते जाते हैं और उन्हें बैल खींचते हैं। गायों का दूध पीकर हमारी गरीब जनता जीवित है। आप ही बताइए, जब आप घोड़े का मांस नहीं खाते तब हम कैसे अपने गाय-बैलों को मार सकते हैं, जिनकी सार्थकता और उपयोगिता आज भी है।'

उन्होंनें विवाद करना चाहा तो मैंने सीधे कह दिया, 'आइए, हमारे-आपके बीच आज समझौता हो जाए—आप घोड़े का मांस खाने लगिए, हम गाय खा लेंगे।' मेरी हंसी फूट पड़ी और वे ऊपर आकाश की ओर देखने लगे। जरमनी में विकास के बावजूद आकाश अब भी था।

उनका दूसरा प्रश्न था, 'यदि किसी रेगिस्तान में अकेले आप और एक गाय छोड़ दी जाए, तो आप क्या करेंगे? उस गाय को खाएंगे या तब भी नहीं?'

मेरा स्पष्ट उत्तर था, 'तब भी नहीं।' मैं जोर से हंसा था। मैंने आल्पस पर्वत पर हुई विमान-दुर्घटना का उल्लेख किया था, जहां आदमी एक-दूसरे को खाते रहे, लेकिन बच नहीं सके। बचने की आशा के साथ 'प्रतीक्षा' जुड़ी है। यदि यह विश्वास हो जाए कि दो-चार-दस दिन में कोई रेगिस्तान से बाहर निकाल लेगा तो भूखा भी रहा जा सकता है या कुछ भी खाया जा सकता है, वह प्रतीक्षा न हो तो... ? मैंने उत्तर दिया, 'मित्र, आपने रेगिस्तान देखे नहीं। मैं घुमक्कड़ हूं, इसलिए रेगिस्तान देखने जा सकता हूं, गाय को खाने

प्रदर्शनी में रखा सोलहवीं सदी का कलापूर्ण पियानो

के लिए घास चाहिए। आप ही बताइए वह भला वहां कैसे पहुंचेगी और क्यों पहुंचेगी? ...परंतु, मान लीजिए, ऐसी स्थिति आयी भी, जैसी आप बता रहे हैं, तो किसी प्रतीक्षा के अभाव में हम दोनों एक-दूसरे से लिपटकर मर जाना पसंद करेंगे।'

मैं जानता था, जिस सभ्यता में वह देश खड़ा है, ऐसी भावनाओं के लिए वहां कोई जगह नहीं है।

इसके बावजूद समूचे पश्चिमी जरमनी में बावेरिया एक ऐसा राज्य है जो जीवंत है और जिसकी अपनी विशेषता है। बावे-रिया की आबादी आस्ट्रिया से दुगुनी है। यहां बड़े-बड़े देहात हैं, खेत हैं, चारागाह हैं। दिलेर लोग हैं—जो नाचते-गाते हैं और मशीनों की आवाज को भेदकर अपने गीत छोड़ते हैं। बावेरिया जरमनी का पंजाब है। वैसे ही तगड़े और हंसमुख लोग हैं। कारखानों की वहां कमी नहीं है। बड़ी मोटरकारों से लेकर कंप्यूटर और मशीनें तक बनती हैं। यह राज्य जरमनी का सबसे बड़ा हिस्सा है। इसका इतिहास १६वीं सदी से निरंतर क्रमबद्ध मिलता है। सन १९४९ से यह फेडरल जरमनी का अंग है। बावेरिया प्राकृतिक सपदा में भी समृद्ध है। वहां का प्रशासन अन्य प्रांतों की तरह ही चलता है, लेकिन बावेरिया की जनता अपने को जरमनी से भिन्न मानती है।

म्यूनिख बावेरिया का सबसे बड़ा शहर है और यहां की राजधानी भी है। सन १८०६ तक यहां राजशाही थी। सन १९१८ में यह लोकतंत्र का एक हिस्सा बना। म्यूनिख खूबसूरत शहर है और रोम की सभ्यता और संस्कृति से प्रभावित है।

बावेरिया का कैसल (किला) दर्श-नीय है। इसका निर्माण काल १६६०-१६८० बताया जाता है। बड़े-बड़े ग्रीक चित्रों तथा रंगीन तैल चित्रों से पूरा किला भरा हुआ है। सोने की पालिश लगा फरनीचर अब भी वहां सुरक्षित है। बड़े और कीमती गलीचे, रेशम के कपड़े और प्राचीनतम लकड़ी के सामानों से केसल के कमरे भरे पड़े हैं। दीवारों पर लगे चित्र विभिन्न मौसमों के हैं। वसंत और शिकार, जुलाई और गरमी में पार्कों के मजे, ये सब जीवंत चित्रों के विषय हैं।

कैसल में एक कमरा है—बच्चा जननेवाला। कहा जाता है, बावेरिया के राजा की एक रानी ने किसी कनीज से एक लड़का खरीद लिया था और घोषणा कर दी थी कि यह उसी के प्रसव का बच्चा है। थोड़े दिन बाद यह भेद गुप्त नहीं रह सका। तब राजा ने कैसल में बच्चा पैदा करने के लिए एक कमरा ही अलग बना दिया। इस कमरे में एक विशेष पलंग है। उसके सामने सात कुर-सियां हैं। बीच में टेबल है। टेबल के सामने बड़ा शीशा लगा है। इस शीशे में पलंग का सारा दृश्य दिखायी देता है। नियम बना दिया गया था कि जब कोई रानी बच्चा दे तो सात लोग उन सात कुरसियों में

बैठकर शीशे को देखते रहेंगे और जब सातों हस्ताक्षर कर देंगे तब वह सही बच्चा समझा जाएगा।

इसी महल में एक-दूसरे राजा की ४८ प्रेमिकाओं के चित्र लगे हैं। ये सारे चित्र एक इतालवी चित्रकार के बनाये हैं।

म्यूनिख खेल-कूद की दुनिया में सबसे बड़ा नाम है। हमने विशालकाय ओलंपिक स्टेडियम देखा। १९६९-७० में वह निरंतर तीन वर्षों के श्रम के बाद बनकर पूरा हुआ था। स्टुटगार्ड के इंजीनियर बीमिश ने इस स्टेडियम की कल्पना की थी और उसी ने इसे बनाया भी। बीच में एक बड़ा मुख्य स्टेडियम है। उसके आसपास तीन स्टेडियम और हैं। बीच में एक तरणताल है और आसपास स्वाभाविक-सी लगनेवाली पहाड़ियां हैं। स्टेडियम की छत 'फ्लैक्सेबल' बारीक कांच की बनी है। जिस दिन हम वहां पहुंचे थे, फुटबाल मैच चल रहा था। स्टेडियम के पास ही म्यूनिख की सबसे ऊंची इमारत है—पी. एन. यू. यू.। यह शानदार इमारत मोटरकार के चार सिलिंडरों के आकार में बनी है और उसके ऊपर बने ६६० फुट के टावर से सारा शहर दिखायी देता है। यह इमारत वास्तव में एक मोटरकार कंपनी की है।

म्यूनिख की अधिकांश इमारतें पत्थर की बनी हैं और समय तथा मौसम की मार से काली हो गयी हैं। शहर के बीच पत्थरों का बना ऑपेरा हाऊस है। दूसरे महायुद्ध में यह बुरी तरह क्षतिग्रस्त हो

म्यूनिख का टेलीविजन टावर

गया था, लेकिन अब वह फिर ताजा और साफ बनकर खड़ा हुआ है। म्यूनिख दर्शकों के लिए आकर्षण का केंद्र है—वार-पिलर या युद्ध-स्मारक, कहते हैं ३३ हजार सैनिक युद्ध के लिए यहां गये थे, केवल तीन हजार वापस लौटे, बाकी वहीं भून डाले गये। यह स्मारक युद्ध के प्रति घृणा का प्रतीक है। अनेक तरह के संग्रहालय, थियेटर कंपनियों की बड़ी-

बड़ी इमारतें, संगीत के लिए विशाल कंसर्ट हॉल, मेले, प्रदर्शनियां, भीड़, चहल-पहल सब-कुछ म्यूनिख में मिलेगा। शहर से गुजरते हुए एक लंबे प्रस्तर-स्तंभ पर बनी उड़ती हुई लड़की, जिसे 'ऐंजिल ऑव पीस' कहते हैं, ग्रीस के राजा लूथिक का संग्रहालय--'पेनाकुटीज' जहां वानगॉग से लेकर आधुनिकतम चित्रकारों के चित्र सुरक्षित हैं, पत्थरों की बनी बावेरिया राज्य की संसद आदि कुछ ऐसी चीजें हैं, जहां रुके बिना नहीं रहा जा सकता।
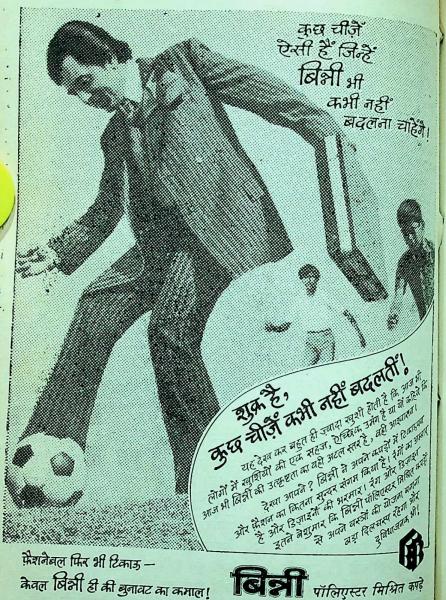
इन सबके बीच म्यूनिख में सबसे निराली जो चीज है, वह है 'डच म्यूजियम'। दुनिया में यह अपने ढंग का संग्रहालय है। इसमें सबसे पहली मोटरकार से लेकर, सन १९७६ में निकली कारें तक रखी हुई है। इसी तरह सबसे पहले रेलवे इंजन और विमान से लेकर आधुनिकतम इंजन और विमान सुरक्षित हैं। जहाज भी हैं और भारत की सबसे पहली बैलगाड़ी भी वहां सुरक्षित है। इसी संग्रहालय में कोयला, लोहा, नमक और पोटेशियम की विशाल खदानें बनायी गयी हैं। पांच मंजिला यह संग्रहालय इतना विशिष्ट है कि दुनिया की हर वस्तु को यहां देखा जा सकता है। निश्चय ही इस संग्रहालय का मूल्य आंकना कठिन है, क्योंकि यहां रखा सुपरसोनिक विमान ही कितना कीमती होगा, जाना जा सकता है। फिर कोई चीज झूठी नहीं है, सभी असली हैं।

संग्रहालय से जब हम बाहर निकले तब दोपहर हो गयी थी। हमारा गाइड विश्वविद्यालय का छात्र था और पार्ट-टाइम में यह काम किया करता था। 'ईजागेट' पार करते ही हम पुराने म्यूनिख शहर में पहुंच गये थे। भीतर जाते ही विश्वविद्यालय नजर आया और इसी के पास बने चर्च से बजती हुई घंटियां सुनायी दीं। इसी के पास बावेरिया के पुराने राजा का किला है। किला अब भी अच्छी स्थिति में है। खुले भाग में वहां झाड़ लगे हैं। उनके नीचे पत्थरों की बेंचें पड़ी हैं। हल्के प्रकाश में कोई भी शाम वहां आसानी से बितायी जा सकती है।

हमारा गाइड विश्वविद्यालय की इमारत को देखकर नाराज हो उठा था। हम एक बैंच पर बैठ गये। उसने बातें शुरू कर दीं--सरकार ने कानून बनाकर विश्वविद्यालय में हड़तालों को गैरकानूनी घोषित कर दिया है। उसका कहना था, 'यदि आप स्ट्राइक नहीं कर सकते तो यूनीवर्सिटी जाकर क्या करेंगे?' 'पढ़ने के बाद यदि आपने असिस्टेंट प्रोफेसर के साथ किसी पब में बैठकर बीयर न पी तो कालेज की पढ़ाई क्या हुई? वह तो स्कूल हो गया।' उसका कहना था, विश्वविद्यालय अब स्कूल बनते जा रहे हैं। 'नानसेंस,' अजीब तरह से मुंह बनाकर वह उठ बैठा और अपने उखड़े मन से फिर हमारे साथ आगे बढ़ गया।

(क्रमशः)

क्या ये आंकड़े सही हैं ?

यकीन न हो तो किसी से भी पूछ लीजिये

* सन् १९०१ में भारत की कुल आबादी लगभग साढ़े २३ करोड़ थी
* आज के भारत के अतिरिक्त तब इसमें बर्मा, बंगला देश, लंका और पाकिस्तान शामिल थे
* आज सन् १९७६ में अकेले भारत की आबादी ६० करोड़ से अधिक है
* सन् १९०१ में उत्तर प्रदेश की कुल आबादी ४ करोड़ ८६ लाख थी
* सन् १९५१ में यह बढ़ कर लगभग सवा ६ करोड़ हुई
* आज सन् १९७६ में यह साढ़े ९ करोड़ है

जमीन बढ़ नहीं सकती । इसलिए बढ़ती हुई आबादी की इस रफ्तार को आप फौरन नहीं रोकते तो क्या नतीजा होगा

सूचना एवं जन-सम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश द्वारा प्रसारित

क्षणिकाओं के संदर्भ में,

काव्य की
सभी मान्यताएं
उनसे जुड़कर
मजाक बन जाती हैं,
जब वे पूरे साठ मिनट तक
'क्षणिका' सुनाती हैं

●

'क्षणिका' का
पारिश्रमिक छीन
श्रीमतीजी ने कहा,
क्या तुम्हारे क्षणों पर मेरा—
इतना भी अधिकार नहीं रहा ?

—राजा दुबे

बधाई

संपादक जी
अस्वीकृति पत्र मिला
धन्यवाद
बड़े सुंदर कागज पर
बड़ी अच्छी छपाई है
बधाई है

—सरोज द्विवेदी

यातना

सांसों के केंद्र से
जीवन की परिधि तक
पीड़ाओं का व्यास
जीवित कहां तक रहता ?
बेचारा देवदास

—सुशील यादव

विवशता

रोशनी की फसल
उगायी तो थी
किंतु बेचना पड़ा—
अंधेरे के नाम।

—विनोद तिवारी

उपलब्धि

मेरे आंगन की हर एक क्यारी में
उग रहीं नागफनी की किस्में
और
माली ये कसम खाता है—
हुजूर, मैंने गुलाब बोया था।

—कुन्दनलाल भारतीय

गुलाब

बदसूरत पति
और खूबसूरत पत्नी
बेमेल जोड़े को देख
लगता है—
गुलाब अपनी डालवाली
स्थिति में आ गया है।

—हस्तीमल 'हस्ती'

गणेश चतुर्थी के अवसर पर

पहला अंग-प्रत्यारोपण भारत में हुआ था

प्रसिद्ध हृदयरोग विशेषज्ञ, विनोदप्रिय डॉक्टर क्रिश्चियन बर्नार्ड ने अपनी बंबई-यात्रा के दौरान यह कहकर कि अंग-प्रत्यारोपण का पहला सफल आपरेशन भारत में हुआ, लोगों को अचंभे में डाल दिया था। डॉ. बर्नार्ड ने कहा था, 'मैंने तो केवल फिलिप ब्लेबर्ग के बीमार दिल को निकालकर, उसकी जगह एक तंदुरुस्त दिल लगाया था, लेकिन आपके यहां तो एक बालक का सिर कट जाने पर उसके धड़ में पशु का सिर लगाकर, उसे पुनः जीवित कर देने में सफलता पा ली गयी थी।'

डॉ. बर्नार्ड का इशारा पार्वती-नंदन गणेश की ओर था। उनके इस कथन पर एक श्रोता ने मीठी चुटकी ली, 'डॉ. बर्नार्ड बेहद चतुर हैं। अपनी भारत-यात्रा की सफलता के लिए उन्होंने किस खूबसूरती से विघ्नहर्त्ता गणेश की वंदना की है।'

गणेश-जन्म के संबंध में अनेक कथाएं प्रचलित हैं। अंग-प्रत्यारोपण की एक कथा ब्रह्मवैवर्त पुराण में मिलती है। उसके

● आचार्य कालीचरण मिश्र

अनुसार पार्वती ने शिव से पुत्र की कामना के लिए पूजा की, लेकिन उन्हें निराश होना पड़ा। सहसा एक दिन आकाशवाणी हुई कि पार्वती, तुम्हारे कक्ष में एक सुंदर शिशु लेटा हुआ है।

अपने कक्ष में मनचाही संतान पाकर शिव-पार्वती ने एक भोज में सभी देवताओं
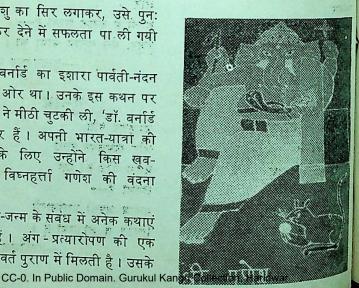
गणेश चित्रकला में

को आमंत्रित किया । शनि भी आये । सबने शिशु को आशीर्वाद दिया, लेकिन शनि अपनी दृष्टि नीचे ही किये रहे । पार्वती के अनुरोध पर शनि ने शिशु की ओर देखा पर शनि की दृष्टि पड़ते ही शिशु का सिर कटकर गोलोक की ओर उड़ गया ।

पार्वती को दुखी देख विष्णु समस्या के निदान के लिए गरुड़ पर सवार होकर उड़े ।

उन्होंने पुष्पभद्र नदी के तट पर एक हाथी को लेटे देखा । उन्होंने तुरंत उसका सिर काटा और पार्वती के सिर-विहीन शिशु के धड़ पर लगा दिया ।

शायद यह संसार का पहला अंग-प्रत्यारोपण था ।

विघ्नकर्ता से विघ्नहर्ता

विघ्नहर्ता गणेश का कार्य पहले प्रत्येक कार्य में विघ्न डालना ही था, यह बात आज आसानी से गले के नीचे नहीं उतरती, पर है वह पुराण-सम्मत । पुराणों में ही कहा गया है कि इंद्र एवं अन्य देवताओं की प्रार्थना पर शिव ने अपने तेज से विघ्नकर्ता गणेश की सृष्टि की । लेकिन शिव ने उन्हें यह भी निर्देश दिया कि जो तुम्हारा पूजन करे, उसके कार्यों में विघ्न तो डालो ही नहीं, वरन उसे सफल भी बनाओ ।

गणेश के विघ्नकर्ता से विघ्नहर्ता बनने की कहानी जितनी रोचक है, उतनी ही विवादपूर्ण और विग्रहकारक-भी ।

पिता शिव की भांति गणेश भी विद्वानों

गणेश मूर्तिकला में

में इस मतभेद के कारण बने हुए हैं कि वे आर्य हैं या अनार्य अर्थात द्रविड़ । अनेक भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वान गणेश को अनार्य अथवा द्रविड़ देवता मानते हैं । उनके अनुसार गणेश मूलत: भारत के सूर्यपूजक आदिवासियों के आराध्य देव थे । पहले पशुओं के सिर के टोटम बनाये जाते थे । हाथी को पशुओं में न केवल विशालकाय और बलिष्ठ, बल्कि चतुर भी माना जाता था, इसलिए आदिवासियों में उसके सिर का टोटम बेहद लोकप्रिय हुआ ।

स्वर्गीय डॉक्टर संपूर्णानंद के अनुसार वैदिककाल के सप्त-सैंधववासी आर्यों में

हिंदी नाटक
समाज शास्त्रीय अध्ययन

बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी ने डॉ. सीताराम झा 'श्याम' का एक ग्रंथ प्रकाशित किया हैं—'हिंदी नाटक समाज शास्त्रीय अध्ययन'।

अब तक हिंदी नाटक से संबंधित जितनी भी समीक्षात्मक कृतियां लिखी गयी हैं, उनमें नाटकों के सामाजिक पक्ष के अध्ययन को प्राय: छोड़ दिया जाता था। जबकि वास्तविकता यह है कि नाटक समाज से ही जन्म लेता है, उसी में पनपता है। इसी को दृष्टि में रखते हुए लेखक ने अपने ग्रंथ में कई नवीन स्थापनाएं की हैं। इनमें समाज के विभिन्न कार्यकलाप और प्रतिदिन घटनेवाली घटनाएं, जन-सामान्य और विशेष के बीच मोह-व्यामोह, मूल्यों का उन्नयन और विघटन आदि किस प्रकार नाटकों के कथानक की धुरी बनते हैं, इसका एक विस्तृत और सुलझा हुआ अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। भरत के नाट्य सिद्धांतों से लेकर अधुनातन रंग-मंचीय कला तथा परिवार, विवाह, वर्ग भेद आदि सामाजिक समस्याओं, राजनीति से संबंधित कथानकोंवाले समस्त नाटकों को लेखक ने अपनी पुस्तक में समेटा है।

हिंदी नाटक समाजशास्त्रीय अध्ययन लेखक: डॉ. सीताराम झा 'श्याम'; प्रकाशक: बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी, पटना, पृ. ३९२, मूल्य १४ रु. ५० पैसे

गणेश की पूजा नहीं होती थी। पूर्व की ओर बढ़ने तथा अनार्यों से संपर्क होने पर आर्यों को विवश होकर नये देवी-देवताओं को स्वीकार करना पड़ा। ये देवी-देवता मूलतः 'ग्रामदेव' थे। प्राय: सभी ग्रामदेव क्रूर कर्मा होते हैं। अपने अनार्य पड़ोसियों से आर्यों ने ऐसे ही क्रूर कर्मा देवी-देवता लिये—नाग, गधे पर सवार शीतला, श्वान पर सवार भैरव तथा मूषक पर सवार गजमुख विनायक इसी कोटि में आते थे। चूंकि ग्रामदेवों की कल्पना आर्यों के स्वभाव के प्रतिकूल थी, अत: विनायक का कायाकल्प कर उन्हें विघ्नकर्ता से विघ्नहर्ता और अनार्य से आर्य बना दिया गया।

और जब उन्हें देवता पद दिया गया तब उनकी पूजा की पद्धति निर्धारित की गयी। उपनिषद की रचना के साथ-साथ एक संप्रदाय भी स्थापित किया गया। गणेश को सर्वस्व माननेवाला ऐसा गाणपत्य संप्रदाय दसवीं शती के अंत तक काफी शक्तिशाली रहा।

तांत्रिकों के प्रिय गणेश

गाणपत्य संप्रदाय के उदय के पूर्व भी गणेश एक बेहद लोकप्रिय और शक्तिशाली देव माने जाते रहे। हिंदुओं के अतिरिक्त बौद्धों एवं जैनों को भी उन्होंने प्रभावित किया। इन धर्मों के तांत्रिक संप्रदाय भी उनके प्रभाव से नहीं बच सके। तांत्रिक साधना में गणेश की कल्पना तीन नेत्रोंवाले देवता के रूप में ही की गयी है। तांत्रिकों के 'वज्र गणपति' मूषक की बजाय मेंढक-...

जीव पर सवार हैं। शारदा तिलक तंत्र में वे अनेक त्रिकोणों और वृत्तों के मध्य स्थित हैं। एक स्थल पर उन्हें अपराजिता देवी के पैरों तले रौंदा जाता हुआ, चित्रित किया गया है। गणेश का तांत्रिक बीज है—'गड.'।

शक्तिपूजा में भी गणेश का ध्यान किया जाता है, लेकिन विघ्न हरण की प्रार्थना के बाद उनसे शेष पूजा के पूर्व ही गमन कर जाने का अनुरोध भी होता है। नवग्रहों एवं सप्त मातृकाओं के पूजन में भी गणेश की पूजा का विधान है। नवग्रहों के पूजन में उन्हें प्रथम स्थान यानी नवग्रहों के बिलकुल दायीं ओर रखा जाता है, जबकि सप्तमातृका पूजन में वे चामुंडा की बगल में आसीन होते हैं।

जिस तरह गणेश की कल्पना के मूल-स्रोत के रूप में विद्वान एकमत नहीं हैं, उसी तरह उनके स्वरूप के संबंध में भी विवाद है। डॉ. भांडारकर के अनुसार आठवीं शती तक गजमुखवाले देवता का उल्लेख नहीं है। महाभारत, रामायण में यद्यपि गणेश का शिव से पृथक अस्तित्व स्पष्ट किया गया है, फिर भी गजमुखवाले देवता की चर्चा नहीं मिलती।

विघ्नहर्ता से आशुलिपिक

विघ्नहर्ता गणेश महाभारत के रचनाकार व्यास के आशुलिपिक कैसे बन गये? यह भी एक दिलचस्प प्रश्न है। प्रबोधचंद्र बागची के मत से यह भ्रम गणेश के एक नाम 'सिद्धिदाता' से हुआ। डॉ. भांडारकर

सफेदी की सीख

कान के पास पहला सफेद बाल देख मैं चौंका। तब उम्र मुझे समझाते हुए बोली, "तेरी सुनने के लिए मैं एक पल भी रुक तो सकूंगी नहीं। हां, तेरी सांस के साथ सांस मिलाकर चलना मेरी नियति है। सबसे पहले मैं कान में कहती हूं कि मैं चली। जो करना-धरना हो सो करले, धरले। अगर तब भी कोई नहीं सुने तो फिर मैं उसका सिर सहलाती हूं। दाढ़ी में हाथ डालती हूं। बात तब भी उसकी समझ में नहीं आये, तो मैं उसका रोम-रोम चूमती हूं। तू इस सबको 'सफेदी पोतना' कहता है? छिः! मेरा काम है अपनी विदा की सूचना पल-पल देना। इस पर भी यदि कोई मेरे दुलार को नहीं समझे तो मैं अंततः उसे झिड़ककर कह देती हूं—'मरता हो तो मर। मैं चली।' और तेरा पुता पुताया मकान एक ही सांस में खाली कर देती हूं।"

मैं कुछ समझा, कुछ नहीं समझा। पर पा रहा हूं कि उम्र कुछ न कुछ बोलती, बतियाती बराबर मेरे साथ-साथ चल रही है। न तेज, न धीमे।

—बालकवि बैरागी

के अनुसार गणेश और बृहस्पति के मिलन से भी यह भ्रम होता है। ऋग्वेद में बृहस्पति स्वर्ण-परशुवाले एक महत्त्वपूर्ण देव हैं और गणेश के पास भी परशु है । डॉ. संपूर्णानंद के अनुसार तो ऋग्वेद में गणेश के लिए प्रयुक्त माना जानेवाला 'गणानांत्वागण-

गणेश—लोककला में

पतिं...' मंत्र वस्तुतः बृहस्पति के लिए है, गणेश के लिए नहीं ।

कुछ विद्वान इस मंत्र को गणेश के लिए उपयुक्त मानते हैं । उनके लिए गणेश पूर्णतः एक वैदिक देव हैं, ऐसे देव जिनमें बुद्धि एवं शक्ति मूर्तिमंत हो उठी है । वे गणेश की सूंड को शौर्य, कानों को दीर्घायु ओर मूषक को ज्ञान और बुद्धि का प्रतीक मानते है । उनके हाथों में स्थित परशु संहार, कमल बुद्धि की शुद्धता अक्षमाला काल-गणना एवं मोदक समृद्धि का प्रतीक है ।

कुछ विद्वान गणेश के हाथों में को मोह एवं अंकुश को प्रवृत्ति का नि मानते हैं । इनमें से प्रथम तमोगुण द्वितीय रजोगुण का सूचक है । विस्तारक और विश्लेषक बुद्धि का प्र है । गणेश का सिर कटना जहां अहं नाश का प्रतीक है, वहां गजमुख प्रत्यारोपण संश्लेषक बुद्धि के हो जाने का द्योतक है। एक दंत उनकी अद्वैतप्रियता का सूचक माना है, जबकि लंबोदर इस बात का प्रमा कि उनके उदर में अनेक ब्रह्मांड समाये हैं

कुछ अन्य विद्वानों का विचार है कि गणेश मूलरूप में एक कृषि देवता रहे होंगे इस संदर्भ में मूषक पर ही सवारी क का अर्थ स्पष्ट हो जाता है। चूहे को भी कृषकों का शत्रु फसलों का नाश क करनेवाला माना जाता है । गणेश ने नियंत्रण में किया और अपनी सवारी रूप में इस्तेमाल किया । गणेश के दांत को वे हल का प्रतीक मानते हैं।

गणेश अपने मूलरूप में चाहे जो हों, आज तो वे सभी मंगल कार्यों में प पूजे जाते हैं । एक समय उन्होंने भारत राष्ट्रीय आंदोलन में भी एक महत्त्व भूमिका निभायी । तिलक ने ब्रि सरकार के प्रतिबंधों के बीच भी जनता राजनैतिक चेतना उत्पन्न करने के लि जिस देवता को चुना, वे गणेश ही थे।

शिकार मेरा पुराना शौक है

नेतृत्व की दूरदर्शिता एवं प्रशासनिक क्षमता के गुण श्री विद्याचरण शुक्ल को अपने पिता स्वर्गीय पं. रविशंकर शुक्ल (मुख्य मंत्री, मध्यप्रदेश) से विरासत में मिले हैं। केंद्रीय मंत्रिमंडल में अपने १० वर्षों के निरंतर कार्यकाल में जो कार्य उन्होंने किये हैं, वे उनकी प्रतिभा और क्रियाशीलता के प्रतीक हैं। एक युवा और कर्मठ मंत्री के रूप में श्री शुक्ल ने अपना विशिष्ट स्थान बनाया है।

श्री शुक्ल तटस्थ देशों के सूचना मंत्रियों के शीर्ष सम्मेलन के अध्यक्ष थे। इस सम्मेलन से तटस्थ देशों ने समाचार के क्षेत्र में अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाया है और पश्चिमी देशों की बड़ी समाचार एजेंसियों के लिए एक चुनौती छोड़ी है। इसी महत्त्वपूर्ण विषय के साथ कुछ अन्य विषयों पर हम श्री शुक्ल के विचार पाठकों के सामने प्रस्तुत कर रहे हैं। —संपादक
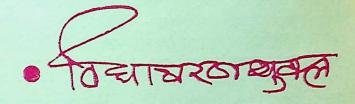
तटस्थ देश और समाचारों की दुनिया

प्रधानमंत्रीजी ने कुछ समय पहले कहा था, जिस तरह तटस्थ देश तकनीकी क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनने की कोशिश कर रहे हैं, उसी तरह उन्हें समाचारों के क्षेत्र में भी आत्मनिर्भर बनना चाहिए। हमारे देश में इसी दृष्टि को सामने रखकर तटस्थ राष्ट्रों के मंत्रियों का एक शीर्ष सम्मेलन आयोजित हुआ था। इसके बाद पश्चिमी देशों के पत्रकारों ने यह आशंका प्रकट की है, 'क्या भारत तटस्थ राष्ट्रों का नेतृत्व करेगा ?' हमारी दृष्टि स्पष्ट और साफ है, हम

अल्जीरिया और भारत—दो तटस्थ देशों के सूचना-मंत्री विचार-विमर्श की मुद्रा में

किसी का नेतृत्व नहीं करना चाहते। भारत तटस्थ राष्ट्रों की समाचार-समितियों के एकीकरण के लिए सक्रिय रहा है। प्रत्येक तटस्थ देश अपने समाचारों और उससे संबंधित नीतियों के लिए स्वतंत्र है।

तटस्थ देशों द्वारा अपनी समाचार एजेंसियों का पूल बनाने के निश्चय ने उपनिवेशवादी शक्तियों का एक बहुत बड़ा हथियार छीन लिया है। उपनिवेशवाद अपना प्रभाव जमाने में आज तक इसीलिए सफल रहा, क्योंकि तटस्थ देशों के पास अपने को अपनी निगाहों से देखने का कोई साधन न था।

इस स्थिति का फायदा उठाकर उपनिवेशवादी शक्तियां अपनी समाचार एजेंसियों के जरिए तटस्थ देशों में विरोधाभास पैदा करती रहीं हैं। साधारण मतभेदों को बढ़ा-चढ़ाकर रखना और आंतरिक एकता का भाव विकृत कर फूट डालना, उनका काम रहा है।

समाचार की दुनिया और पश्चिमी देशों के षड्यंत्र

उदाहरण के लिए जिन दिनों नयी दिल्ली में समाचार-एजेंसियों का पूल बनाने के प्रश्न पर तटस्थ राष्ट्रों के मंत्रियों का सम्मेलन चल रहा था, सूडान में 'कू' (सत्तापहरण) की एक खबर आयी। जब सूडान के उच्चायुक्त ने खारटूम से संपर्क किया तब यह खबर बेबुनियाद

निकली। असलियत यह थी कि आपसी मतभेदों का फायदा उठाकर पहले यह खबर कुवैत के एक अखबार में छपायी गयी, फिर एक बड़ी समाचार एजेंसी ने उस अखबार के हवाले से यह खबर चारों ओर प्रसारित कर दी। यही नहीं, पश्चिमी समाचार एजेंसियां एशिया, अफरीका, और लैटिन अमरीका के देशों को पिछड़ा हुआ सिद्ध करने की कोशिश में भी लगी

नासिर और नेहरू जिन्होंने पहली बार तटस्थ राष्ट्रों की एकता के प्रयत्न किये

भारत की प्रधान मंत्री, तटस्थ देशों के प्रतिनिधियों से मिलते हुए

रहती हैं। इन देशों में होनेवाले निर्माण कार्यों की वे उपेक्षा करती हैं। जैसे जइरे अफरीका का एक प्रमुख देश है। वहां काफी विकास कार्य हुए हैं। पर हमें बताया जाता है कि जइरे बहुत पिछड़ा हुआ है। जइरे के राष्ट्रपति मोबुतू का जो चित्र हमारे सामने रखा जाता है, वह किसी तानाशाह-जैसा होता है। हमें नाइजीरिया, लीबिया या लैटिन अमरीकी देशों से खबरें सीधे नहीं मिलतीं। वे लंदन, पेरिस या वाशिंगटन होकर आती हैं। इसीलिए प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने उक्त सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए कहा था कि पश्चिमी देशों की समाचार एजेंसियों और प्रकाशन संस्थाओं द्वारा पेश किये गये विवरणों को असावधानी से अपनाने की बजाय हमें एक दूसरे को सीधे जानना चाहिए। एक दूसरे के दृष्टि-कोणों का ताजे से ताजा परिचय पाने के लिए संपर्क बनाये रखना चाहिए।

सीधे आदान-प्रदान की जरूरत

प्रधानमंत्री ने और भी कई महत्त्व-पूर्ण बातें कही थीं। उन्होंने विदेशी प्रति-निधियों को बताया था कि "सन १९७२ में हमारे यहां भीषण अकाल पड़ा। लाखों लोगों को भोजन देने और काम उपलब्ध कराने के लिए हमें अपनी सारी प्रशास-निक और संगठनात्मक क्षमता को जुटाना पड़ा। हमने एक भी व्यक्ति को मरने नहीं

दिया। पर समाचारपत्रों और समाचार एजेंसियों ने इस शानदार उपलब्धि को नजरअंदाज कर दिया। वे केवल विपत्ति की घटनाओं को तलाशते रहे !"..."शक्ति-शाली देशों के संचार-माध्यम अपने भूत-पूर्व उपनिवेशों की सरकारों को अयोग्य और भ्रष्ट चित्रित करना चाहते हैं।" प्रधानमंत्री ने अपने भाषण में यह भी कहा था कि 'जब हमारे बारे में कोई झूठ बात कही जाती है तो हम जान सकते हैं कि सही क्या है और गलत क्या है? पर जब दूसरों के बारे में कोई गलत खबर होती है तो हम तत्काल ही उसकी सत्यता का पता नहीं लगा पाते। . . . इसी-लिए शिक्षा के साथ-साथ समाचार-पत्रों, रेडियो, दूरदर्शन तथा फिल्मों आदि के क्षेत्रों में हम लोगों के बीच सीधे आदान-प्रदान की जरूरत है।'

उपनिवेशवाद का खात्मा

तटस्थ देशों की राष्ट्रीय समाचार एजेंसियों के पूल का गठन इस दिशा में एक सही और सामयिक कदम है। इस पूल के गठन से उपनिवेशवाद के बचेखुचे प्रभावों का खात्मा हो जाएगा। मैं तो कहूंगा कि उपनिवेशवाद के ऐसे प्रभावों के खात्मे की नयी दिल्ली से शुरुआत हो गयी है।

समाचार एजेंसियों का पूल बनाने की दिशा में काम शुरू हो गया है। समा-चारों के आदान-प्रदान, टेलेक्स-व्यवस्था आदि के मामले में समझौते के बाद अब समाचार एजेंसियों के कार्य में आपसी तालमेल बैठाया जा रहा है। इन समा-चार एजेंसियों का कार्यक्षेत्र सारे संसार में फैला हुआ है। इसीलिए शीघ्र ही एक समय ऐसा आएगा, जब तटस्थ देशों को पश्चिमी शक्तियों की वर्तमान पांचों समाचार एजेंसियों में से किसी एक की भी जरूरत नहीं पड़ेगी।

समाचार एजेंसियों के पूल का गठन तटस्थ देशों के बीच आपसी सहयोग को भी बढ़ाएगा। बहुत कम तटस्थ देश विक-सित हैं। ऐसे देश अपने अन्य साथी-देशों की मदद करेंगे। तटस्थ देशों में कुछ ऐसे भी हैं, जहां एक भी अखबार नहीं निक-लता। ऐसे देशों को भारत नये अखबार निकालने में पूरी सहायता करेगा। भारत के पास इस क्षेत्र में पर्याप्त अनुभव और ज्ञान है। वह इन देशों को मशीनें आदि भी दे सकता है।

एशियन टेली कम्युनिकेशन हाईवे —एक नयी योजना

तटस्थ देशों की समाचार एजेंसियों के पूल से अर्थ व्यवस्था को बढ़ाने में भी मदद मिलेगी। विश्व-राजनीति पर भी उसका स्वस्थ असर पड़ेगा। अब पश्चिमी समाचार एजेंसियां फूट डालनेवाले समाचार नहीं भेज पाएंगी क्योंकि तटस्थ देशों के बीच सीधे संपर्क के कारण झूठे समाचारों का शीघ्र पर्दाफाश हो जाएगा। 'एशियन टेली कम्युनिकेशन हाइ वे' परियोजना से एक नयी संभावना का पता लगा है।

जाम्बिया का प्रतिनिधि-मंडल—श्री विद्याचरण शुक्ल के साथ भारत में जाम्बिया के उच्चायुक्त श्री ए. सी. चड़ीपुड़िया

इस परियोजना से सन् १९७७–७८ तक १५ एशियाई देश आपस में जुड़ जाएंगे। इनमें से अधिकांश तटस्थ देश हैं। इस प्रणाली से संवाद कम खर्च में तेजी से भेजे जा सकेंगे। आज स्थिति यह है कि काबुल की बजाय लंदन संवाद भेजना या वहां से पाना अधिक आसान है।

सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए मैंने कम्युनिकेशन यानी संचार-क्षेत्र में व्याप्त दो विचित्र तथ्यों की ओर प्रतिनिधियों का ध्यान आकर्षित किया था।

७० प्रतिशत आबादी और २६ प्रतिशत अखबार

इनमें से पहला तथ्य तटस्थ एवं विकसित राष्ट्रों के संचार-साधनों के बीच मौजूद चौड़ी खाई से संबंधित है। विकसित राष्ट्रों में से अधिकांश कई उपनिवेशों के स्वामी रह चुके हैं। एशिया, अफरीका तथा दक्षिण अमरीका में संसार की आवादी का ७० प्रतिशत से भी अधिक भाग रहता है, लेकिन इन क्षेत्रों से प्रकाशित होनेवाले दैनिक पत्रों की संख्या बहुत अधिक नहीं है। इन क्षेत्रों से संसार के कुल दैनिक पत्रों का केवल २६ प्रतिशत प्रकाशित होता है।

यूनेस्को ने प्रति सौ व्यक्तियों के लिए दैनिक अखबारों की दस प्रतियों, पांच रेडियो सेटों, दो टेलीविजन सेटों व दो सिनेमा सीटों का मानदंड तय किया है। आज संसार की तीन चौथाई आबादी, जिनमें से अधिकांश तटस्थ राष्ट्रों की ही जनता है, इस मानदंड से कहीं नीचे है।

यह भीषण असंतुलन साम्राज्यवादी शक्तियों द्वारा दुनिया के बहुत बड़े भाग पर सदियों तक राजनैतिक प्रभुत्व बनाये रखने का ही बुरा परिणाम है। इन उपनिवेशवादी शक्तियों ने औद्योगिक विकास के साथ-साथ संपर्क माध्यमों का भी विकास कर उनसे जबर्दस्त फायदा उठाया, लेकिन अपने अधीन देशों को उन्होंने जानबूझकर इन लाभों से वंचित रखा। इस सदी में जब इन देशों ने राजनैतिक स्वतंत्रता प्राप्त की तब उन्हें बड़ी-बड़ी अंतर्राष्ट्रीय समाचार एजेंसियों से जूझना पड़ा। इन समाचार एजेंसियों का संचार-जाल विकसित देशों की राजधानियों में केंद्रित हैं। ये बड़ी समाचार एजेंसियां आज भी दुनिया के किसी भी हिस्से में इतनी सस्ती दर पर, इतनी तेजी के साथ संवाद भेजने की स्थिति में हैं कि हमारे पास उन्हें स्वीकार करने के सिवाय और कोई चारा नहीं है। सचाई तो यह है कि अधिकांश अंतर्राष्ट्रीय समाचार एजेंसियों का विकास पुराने उपनिवेशवादी देशों की राजनैतिक और आर्थिक शक्तियों से जुड़ा हुआ है। इन देशों ने शेष दुनिया में अपनी इन दोनों शक्तियों के विस्तार की कोशिश की है।

संचार साधनों का विकास

दूसरी समस्या—संचार माध्यमों की दिनोंदिन उन्नत होती टेक्नालॉजी के कारण विकसित और विकासशील देशों के बीच बढ़ते हुए अंतर की है। संचार-उद्योग में भारी पूंजी की जरूरत पड़ती है। साथ ही उसमें [illegible] और विशेष दक्षता की भी आवश्यकता होती है। तटस्थ राष्ट्रों के पास इन दोनों बातों का अभाव है। फिर अंतर्राष्ट्रीय सहायता भी नहीं मिल रही है। उदाहरण के लिए रोटेरी आफसेट छपाई और प्लेटों की खुदाई के लिए इलेक्ट्रानिक यंत्रों के उपयोग के कारण 'प्रिंटिंग टेक्नालॉजी' में क्रांति हो रही है। संचार के लिए उपग्रहों के उपयोग के कारण भी संचार माध्यमों का व्यवस्थित रूप से विकास नहीं हो पा रहा है।

टेलीविजन पर मनचाहा अखबार

कहते हैं, वह दिन जल्दी ही आनेवाला है, जब हम एक बटन दबाएंगे और अगले क्षण ही टेलीविजन के पर्दे पर हमारी रुचि का अखबार उभर आएगा।

आधुनिक समाज की एक मुख्य विशेषता यह है कि हम भौतिक वस्तुओं के उत्पादन और वितरण से हटकर सूचनाओं या जानकारी के एकत्रीकरण और वितरण की ओर बढ़े हैं। इसे 'नॉलेज इंडस्ट्रीज' (ज्ञान उद्योगों) का उदय कहा जाता है। विशेषज्ञों ने निष्कर्ष निकाला है कि सातवें दशक के अंत तक संचार-संभावनाओं का वस्तुतः 'विस्फोट' होगा, जिसका मनुष्य की जीवन पद्धति पर पिछली औद्योगिक क्रांति से ज्यादा असर पड़ेगा। 'यूनेस्को' का तो विचार ही है कि सातवें दशक को 'संचार दशक' के रूप में याद किया जाएगा।

पर इस प्रगति में हिस्सेदार कौन हैं?

प्रेस एजेंसीज पूल नई दिल्ली पर
गुट निरपेक्ष देशों का सम्मेलन
विज्ञान भवन VIGYAN BHAWAN

CONFERENCE OF
NON-ALIGNED COUNTRIES
ON PRESS AGENCIES POOL
NEW DELHI
जुलाई JULY 8-13, 1976

तटस्थ निरपेक्ष देशों का सम्मेलन : प्रतीक चिह्न

अन्य सब क्षेत्रों की तरह इस क्षेत्र में भी केवल संपन्न राष्ट्र और संपन्न होंगे ।

तटस्थ राष्ट्र एक हों !

इन संपन्न राष्ट्रों की अंतर्राष्ट्रीय समाचार एजेंसियां तटस्थ देशों की जनता के दिल दिमाग पर उसी तरह छा जाना चाहती हैं, जिस तरह उनकी अर्थ व्यवस्था पर बहुराष्ट्रीय निगम छाये हुए हैं । ऐसी परिस्थितियों में हम स्वयं को स्वयं की निगाहों से नहीं देख पाते । एक तरह से हमें अपनी बात को अपने लोगों से कहने के अधिकार से वंचित रखा गया है । तटस्थ देशों को एक दूसरे के बारे में जानकारी अपनी एजेंसियों से नहीं, वरन उन राष्ट्रों की एजेंसियों से मिलती है, जिनके विश्व मसलों पर बिलकुल अलग हित हैं । बेलग्रेड, काहिरा, लुसाका तथा अलजीयर्स में आयोजित तटस्थ राष्ट्रों के सम्मेलनों के बारे में विश्व-प्रेस द्वारा दिये गये समाचारों से यह तथ्य और स्पष्ट हो जाता है ।

तटस्थ राष्ट्रों की समाचार एजेंसियों का पूल बन जाने से इन विषमताओं को दूर करने में मदद मिलेगी और पारस्परिक सहयोग का नया युग शुरू होगा ।

आकाशवाणी और दूरदर्शन

आप हमारे देश में आकाशवाणी और दूरदर्शन की नीतियों के बारे में जानना चाहते हैं । हमारी नीति यहां भी स्पष्ट है । आकाशवाणी और दूरदर्शन मुख्य रूप से जनता की भलाई के लिए हैं । देश की बहुसंख्यक जनता गांवों में बसती है, अतः इन दोनों माध्यमों को गांवों की ओर उन्मुख किया जा रहा है । हमारे उपग्रह दूरदर्शन का गांवों पर स्वस्थ असर पड़ा है । दूरदर्शन पर प्रसारित होनेवाले शिक्षाप्रद कार्यक्रम बेहद उपयोगी सिद्ध हुए हैं । अगले छह-सात माहों में १२ हजार नये गांवों के सामुदायिक केंद्रों में दूरदर्शन सेट लगाये जाएंगे । इससे

गांवों की जनता को बहुत लाभ मिलेगा। आकाशवाणी और दूरदर्शन अब मात्र मनोरंजन के साधन नहीं हैं।

प्रोपेगेंडा नहीं, पब्लिसिटी

अकसर हम पर ये लांछन लगाये जाते हैं कि आकाशवाणी और दूरदर्शन के द्वारा हम सरकारी प्रोपेगेंडा कर रहे हैं। 'प्रोपेगेंडा' और 'पब्लिसिटी'——दोनों में बहुत अंतर है। 'प्रोपेगेंडा' करना हमारा उद्देश्य कभी नहीं रहा। हम तो इन माध्यमों से सही जानकारी पहुंचाना चाहते हैं।

इसी लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए आकाशवाणी तथा दूरदर्शन के प्रशासन को चुस्त बनाया जा रहा है। धीरे-धीरे हम इनमें कई परिवर्तन करने जा रहे हैं। इन दोनों संस्थानों में काम करनेवाले व्यक्तियों की प्रायः सभी समस्याओं को हमने दूर कर दिया है। उनके वेतनमान भी ठीक कर दिये हैं। काम की शर्तों में भी सुधार किया गया है। इससे कर्मचारियों को संतोष है और उनके संगठन के कुछ सदस्य आकर मुझे धन्यवाद भी दे गये हैं। इसके बावजूद यदि कुछ कर्मचारियों की और भी शिकायतें हैं तो उन्हें भी क्रमशः सुलझाया जाएगा।

शिकार मेरा पुराना शौक है!

अब मैं कुछ अपनी आदतों के बारे में बता दूं, शिकार मेरा पुराना शौक रहा है। असल में बचपन से ही प्रकृति से मुझे बेहद प्रेम रहा है। नैसर्गिक हरे वनों में घूमना, पेड़ों पर बैठे पक्षियों का मधुर कलरव सुनना, वन्य-पशुओं को उनके सहज रूप में, मुक्त भाव से विचरते देखना मस्तिष्क को शांति देता है। यदि यह कहा जाए कि प्रकृति के प्रति अगाध प्रेम ही मेरी शिकार की रुचि का मूल आधार रहा है, तो गलत नहीं होगा। शिकार केवल प्रकृति की गोद में लौटने का एक बहाना रहा है।

शिकार के आनंद के स्रोतों का यदि विश्लेषण किया जाए तो मैं कहूंगा कि शिकार का ८० प्रतिशत आनंद प्रकृति की सुषमा को देखने में ही है। शेष २० प्रतिशत आनंद तब मिलता है, जब सहज भाव से विचरते हिंस्र वन्य पशु सहज जीवन में देखने को मिलते हैं। तब उनका सौंदर्य ही निराला होता है।

गर्व से गरदन उठाये, शाही ढंग से घूमते हुए शेर, चीते, हिरण, हाथी या ऐसे ही अन्य वन्य पशु जंगल की शोभा हैं। इसलिए वन्य पशु को मारना एक तरह से पूरे आनंद का 'एंटीक्लाइमेक्स' है। निशाना साधकर गोली चलाने और परिश्रम के बाद सही शिकार को मारने में बचा हुआ एक प्रतिशत आनंद ही मिलता है। ९९ प्रतिशत आनंद तो वह पहले ही प्राप्त कर लेता है। यह सोचना गलत है कि जंगल में पहुंचने पर शिकारी किसी वन्य पशु को देखते ही अंधाधुंध गोलियां चलाना शुरू कर देगा। सच्चे शिकारी को हमेशा एक अच्छी 'ट्राफी' की तलाश होती है।

अच्छी ट्राफी की तलाश

यह ट्राफी किसी सुंदर शेर, चीता, सांभर

अथवा अपनी बिजली की-सी चपलता और फुरती के लिए प्रसिद्ध चीते के रूप में हो सकती है। शिकार के अपने कुछ नियम हैं और अच्छे शिकारी इन नियमों का पूरी तरह पालन करते हैं। इन नियमों के अनुसार मादा पशुओं को मारना वर्जित है।

शिकारी 'गेम एनीमल' की कोटि में आनेवाले पशुओं का ही शिकार करता है। ऐसे पशुओं को भी शिकारी अचानक धोखे से या छिपकर नहीं मारता। उसके मन के भीतर 'शिवलरी' या 'एडवेंचर' की भावना होती है, इसलिए वह जानवर को चुनौती देकर उसे बचने का पूरा अवसर देने के बाद शिकार करता है। छिपकर पशुओं को मारना कायरता है। एक अच्छा शिकारी अपने अनुभव से जान लेता है कि कौन-सा पशु मारा जाए। जैसे सांभर या चीते-जैसा सुंदर पशु किसी भी समय तेंदुए या शेर-पशुओं का शिकार बन सकता है। हिंस्र पशु का शिकार हो जाने के बाद उसका सौंदर्य सदा-सदा के लिए नष्ट हो जाता है। यदि उसे 'ट्राफी' के रूप में ही सुरक्षित रख लिया जाय तो गलत नहीं है।

शिकारी वन्य पशुओं का शत्रु नहीं

सही शिकारी को वन्य पशुओं का शत्रु नहीं मानना चाहिए। मैं तो कहूंगा कि सच्चा शिकारी ही वन्य पशुओं का सर्वोत्तम संरक्षण कर सकता है, क्योंकि वह वन्य पशुओं के स्वभाव से, उनकी जीवन-अवधि से अच्छी तरह परिचित होता है।

विज्ञान भवन

माफ कीजिएगा देवी जी... प्रेस एजेंसी पूल की मीटिंग का रास्ता किधर से है?

—व्यंग्य चित्र : सुधीर दर

वह जानता है कि जिस पशु का वह शिकार करेगा, उससे हानि नहीं होगी।

एक्कड़ों की खोज

उदाहरण के लिए चीतल को ही लीजिए—चीतल हमेशा एक नर नेता की छत्रछाया में झुंड में रहते हैं। इसी नर नेता पर झुंड का दायित्व होता है। धीरे-धीरे यह नेता बूढ़ा हो जाता है, लेकिन वह अपना स्थान सहज नहीं छोड़ता। इसी बीच झुंड में से युवा सदस्यों का उदय होता है। वे जब तब झुंड के उस बूढ़े नेता को चुनौती दिया करते हैं। एक दिन ऐसा भी आता है कि कोई युवा-सदस्य संघर्ष में उस बूढ़े चीतल

को पराजित कर स्वयं नेता बन बैठता है। तब बूढ़े चीतल को झुंड छोड़कर जाना पड़ता है। वह अकेला झुंड से कुछ दूर रहने लगता है। शिकारी की भाषा में ऐसा बूढ़ा, पदच्युत चीतल 'एक्कड़' कहलाता है। लगातार झुंड से बाहर रहनेवाले 'एक्कड़' के पुट्ठे सख्त और कड़े हो जाते हैं, यही उसकी पहचान है। वह अकेलेपन से त्रस्त यहां-वहां निरीह घूमता है। तब एक दिन ऐसा आ सकता है जब वह किसी अन्य हिंसक पशु का भक्षण सहज ही बन जाए। शिकारी जानता है कि ऐसे 'एक्कड़' को मारने में कोई हर्ज नहीं है। उसके शिकार का चीतलों की वृद्धि पर कोई बुरा असर नहीं पड़ेगा। इसलिए वह ऐसे 'एक्कड़ों' को ही अपने शिकार का निशाना बनाता है।

'किलर इंस्टिंक्ट' नहीं

मुझे शिकार का शौक है, लेकिन मुझ में 'किलर इंस्टिंक्ट' नहीं है। यों शेरों को मारने के मुझे अनगिनत मौके मिले हैं लेकिन मैंने केवल दो शेर ही मारे हैं। इसी तरह 'ट्राफी' के लिए चार-पांच पेंथरों का शिकार भी मैंने किया है। फोटोग्राफी मेरा शौक रहा है, इसलिए बंदूक की बजाय कैमरे से मैंने जंगली जानवरों की ज्यादा 'शूटिंग' की है और मेरे पास नैसर्गिक वनों में घूमते हुए शेर और अन्य जंगली जानवरों के सैकड़ों चित्र हैं। यों भी मैंने गलत ढंग से शिकार नहीं किया।

पशुओं को निरीह बनाकर मारने में कोई 'थ्रिल' नहीं है। मैंने पहले ही कहा है कोई भी अच्छा शिकारी अपने शिकार को भागने का, किसी सुरक्षित स्थान की ओर दौड़ने का पूरा मौका देता है। किसी वन्य पशु को चारों ओर से घेर-कर रात के अंधेरे में उस पर तेज प्रकाश डालकर उसे पूरी तरह असहाय बनाकर मारने में रोमांच नहीं है। रात में जंगली जानवरों को बहुत कम दिखायी देता है, उस समय उन्हें धोखा देकर मारना एक क्रूर कार्य है। जो शिकारी केवल गोश्त या चमड़े के लिए शिकार करते हैं, वे न तो सही शिकारी हैं और न उन्हें जंगल से या जंगली जानवरों से प्यार होता है। उनके लिए शिकार एक क्रूर खिलवाड़ है। पुराने राजा-महाराजाओं के शौक इसी क्रूर खिलवाड़ के अंतर्गत आते हैं। जो महा-राजा सैकड़ों शेर मारने का दावा करते हैं, वह वास्तव में उनका 'पागलपन' है। इसी से वन्य जंतुओं की संख्या में तेजी से गिरावट आयी है।

अच्छा शिकारी १० में से ८ बार असफल होकर लौटता है, क्योंकि वह जो चाहता है, उसे नहीं मिलता। लेकिन इस असफलता से उसे निराशा नहीं होती। वन-सौंदर्य और सहज वन्य जीवों को देख-कर जो हर्ष उसे मिलता है; वह उसका सबसे बड़ा सुख है। मेरे लिए शिकार इस आनंद को पाने का मात्र एक बहाना है। आज भी प्रकृति के बीच पहुंचकर मेरा मन और मस्तिष्क ताजगी से भर उठता है।

—७, रेसकोर्स रोड, नयी दिल्ली

कहानी
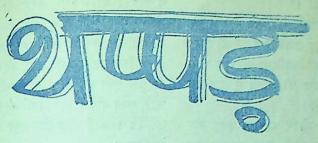
• कर्तार सिंह दुग्गल

तड़ाक से उसने अपने बेटे के मुंह पर थप्पड़ दे मारा।

मेज पर बैठे सब लोग हक्का-बक्का रह गये। ऐसा तो उसने कभी नहीं किया था।

और फिर हर कोई सोचने लगा, थप्पड़ खाने वाली बात तो सईद ने की ही थी।

कोई बात भी हुई।

दो घंटे बाद उसके अब्बा के हवाई-जहाज को उड़ना था। हवाई अड्डा जाने से पहले वे लोग मेज पर बैठे नाश्ता कर रहे थे। पिछले कुछ दिनों से हर महीने, हर दूसरे महीने उसके अब्बा को विदेश जाना पड़ रहा था। इतने धंधे उसने बढ़ा लिये थे। नाश्ता करने के बाद वे मोटर का इंतजार कर रहे थे कि बड़े भाई रशीद के मन में पता नहीं क्या आया, कि सहज स्वाभाविक ढंग से उसने कहा, "अगर अब्बा के हवाई जहाज का इस बार हादसा हो जाए तो . . . ?"

सारे बिट-बिट उसके मुंह की ओर देखने लगे।

इतने में छोटा सईद बोल उठा,

"अब्बा मर जाएंगे और अम्मी दूसरा व्याह कर लेगी ।"

ये बोल उसके होठों पर ही थे कि तड़ाक से थप्पड़ उसके मुंह पर आ पड़ा। पांचों की पांचों अंगुलियां उसके गाल में खुभ गयीं । सईद की आंखों से छल-छल आंसू बहने लगे।

इतने में मोटर का हार्न बजा और सब मेज पर से उठकर जल्दी-जल्दी मोटर की ओर चल दिये। हवाई जहाज का समय हो रहा था । हवाई अड्डा उनके घर के निकट ही था, किंतु कुछ वक्त तो रास्ते में लगता ही है ।

और बात आयी-गयी हो गयी ।

हवाई अड्डे पहुंचने की जल्दी में जैसे हर कोई सईद की बदतमीजी को भूल गया हो । सईद ही क्यों, बड़े भाई रशीद की भी नालायकी थी । इस तरह की बातें भी कोई करता है ? खास तौर पर जब घर का मालिक परदेश जा रहा हो !

लेकिन इस घर में बच्चों की परवरिश ही कुछ ऐसी हुई थी । जो किसी का जी चाहे, खाये पीये । जहां किसी का जी चाहे, उठे-बैठे । कोई रोक-टोक नहीं थी किसी के लिए ।

हवाई अड्डे से लौटकर शीरीं अपने काम में लग गयी । उसके दफ्तर का समय हो रहा था । दफ्तर में एक मीटिंग, एक और मीटिंग, उसके बाद मिलनेवालों का तांता । उसे सुबह मेज पर हुई बदमगजी का ध्यान तक न आया । अभी तो उसने घर पर टेलीफोन करके नौकर को हिदायत
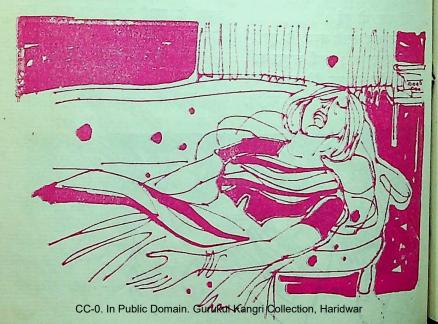
दी थी। बच्चों को मौसंबी का रस निकाल-कर पिला दे । छोटे सईद को पता नहीं क्या बात थी कि दिन-ब-दिन सूखता जा रहा था । जब मेज पर खाना लगता तो जैसे उसकी भूख उड़ जाती ।

उसके दफ्तर का यह तरीका था कि दोपहर का खाना सब अफसर मिलकर खाते थे । खाने के लिए इकट्ठा हुए, वे एक दूसरे के साथ दफ्तरी मामलों पर सलाह-मशविरा भी कर लेते थे। इस तरह उन्हें दिन-भर टेलीफोन न खड़काने पड़ते, न नोटिंग करनी होती । लाउंज के एक कोने में रेडियो चल रहा होता, अफसर लोग, एक आध जाम पीते, इतने में खाना लग जाता ।

उस दिन खाना शुरू ही हुआ था कि शीरीं की पी. ए. हांफती हुई आयी और पूछने लगी, "मैडम ! सुबह साहब बी. ओ. ए. सी. की फ्लाइट पर गये थे ?

शीरीं के हाथों में से छुरी-कांटा गिर गया । घबराहट में उसे कुछ नहीं सूझ रहा था ।

"फ्लाइट नंबर चार दो पांच ?" उसकी पी. ए. ने नंबर बोला ।

"हां, हां, यही फ्लाइट थी ।"

और फिर उसकी पी. ए. पास के कमरे में पड़े रेडियो की ओर दौड़ी । उसके साथ बाकी अमला भी था । उसने अंगरेजी में खबरें सुनी थीं । अब खबरें हिंदी में हो रही थीं ।

वही बात हुई थी । बी. ओ. ए.

सी. का जहाज, फ्लाइट नंबर चार दो पांच, जो उस दिन दिल्ली से लंदन के लिए रवाना हुआ था, दुर्घटनाग्रस्त हो गया था । जहाज के कर्मचारियों सहित किसी यात्री के बचने की आशा न थी। जहाज के इंजन में आग लग गयी थी और हवा में ही उसके टुकड़े-टुकड़े हो गये थे । यह दुर्घटना हवाई जहाज के उड़ने से कोई दस मिनट बाद हुई थी ।

हक्की-बक्की, दुर्घटना की खबर सुन रही शीरीं, पास खड़े अपने एक साथी अफसर की बांहों में ढेर हो गयी थी । और फिर लोग डॉक्टर की ओर दौड़ पड़े । शीरीं को सोफे पर लिटा दिया गया । उसके मुंह पर पानी के छींटे मारे गये।

पंखे का मुंह उसकी ओर कर दिया गया, लेकिन वह तो तख्ते-का-तख्ता बनी पड़ी थी। न हिलती थी, न डुलती थी।

और फिर डॉक्टर आ गया। इतना गहरा सदमा, न उसने कभी देखा था, न सुना था। कितनी देर तक शीरीं के साथ जूझता रहा तब कहीं उसे होश आया।

उस दिन दफ्तर में कोई भी काम नहीं कर पाया। जगह-जगह यही चर्चा, हर जबान पर शीरीं के लिए हमदर्दी।

और फिर शीरीं का वह कमरा जिसमें हर समय गहमा-गहमी रहती थी, एक खंडहर बनकर रह गया। कई दिन तो शीरीं दफ्तर ही नहीं आयी। जब उसने काम पर आना शुरू किया तब पहचानी नहीं जाती थी, जैसे झुलसकर रह गयी हो।

शीरीं को घर खाने को दौड़ता था। शीरीं के दो बच्चे और इतना बड़ा घर! शीरीं सोचती, वह इस घर को कितने दिन चला सकेगी। उसकी तो सफाई ही एक समस्या थी। इसी के लिए अकेला नौकर चाहिए था। घर का किराया शीरीं की तीन चौथाई तनख्वाह जितना था। शीरीं सोचती, वह कितने दिन और इस घर में रह सकती थी।

और फिर वह अल्लाह का शुक्र करने लगती कि उसने नौकरी नहीं छोड़ी थी। पिछले कुछ महीने से, जब उसके खाविंद का व्यापार बढ़ रहा था, हमेशा वह उसे यही कहता, "अब तुम नौकरी छोड़ दो। तुम्हारी तनख्वाह के बराबर तो दस आदमी मेरे दफ्तर में काम करते हैं। अगर शीरीं ने नौकरी नहीं छोड़ी थी तो इसलिए कि उसे बेकार रहना अजीब लगता था। यह तो अच्छा ही हुआ, उसने अपने खाविंद का कहना नहीं माना था। आज न वह उधर की रहती, न इधर की। बेशक उसके घरवालों का व्यापार बढ़ रहा था, लेकिन कुएं की मिट्टी कुएं में ही लग जाती थी। जितनी कमाई, उतना ही खर्च बढ़ता जा रहा था।

शीरीं को मालूम था कि उसका बैंक में कोई पैसा नहीं था, भले ही ओवरड्राफ्ट निकलवाये हों। कुछ दिन, और कर्ज लेनेवाले उसकी राह रोक-कर बैठा करेंगे। कुछ दिन, और घर की जरूरतें उसकी नींद हराम करने लगेंगी। कुछ दिन, और उसे नौकरों को छुट्टी देनी होगी, बच्चों को इतने महंगे स्कूलों से उठाना होगा। कुछ दिन, और उसे यह घर छोड़ना होगा, यह घर जिसमें वह पिछले कई बरसों से रह रही थी। जिस घर में वह ब्याही हुई आयी थी। हां, उसे यह घर छोड़ना होगा।

और फिर शीरीं सिर से लेकर पांव तक कांप जाती। उसकी पलकों से टप-टप आंसू बहने लगते।

और सब कुछ वह कर सकती थी, पर यह घर उससे नहीं छोड़ा जाएगा। चाहे घर बड़ा था, उससे संभाला भी नहीं

जाता था, लेकिन किसी छोटे घर में, वह सोचती—उसका दम घुट कर रह जाएगा। और फिर इस घर में, उसकी लाख यादें थीं। स्थायी पता देना होता, तो हमेशा वह इसी घर का एड्रेस देती रही थी। और पता वह देती भी क्या? शीरीं का मायका रावलपिंडी में था। शीरीं के घरवाले का पुश्तैनी मकान ढाका में था। और ये दोनों हिंदुस्तान के दीवाने थे। इनसे किसी इसलामी हकूमत में नहीं रहा जाता था।

एक महीना, दो महीने, तीन महीने और शीरीं को लगता जैसे उसकी जिद बेकार थी। इस तनख्वाह में वह इस घर में बिलकुल नहीं रह सकती थी। पिछले कुछ दिनों से जब शीरीं अपने शौहर के काम-काज को समेटकर फारिग हुई थी, हर पल उसे यही चिंता खाये जाती थी। घर का किराया, बिजली का बिल, पानी का बिल!

और मन-ही-मन शीरीं ने फैसला कर लिया कि वह कोई छोटा घर ढूंढ़ लेगी। कम-से-कम सोने के दो कमरों का कोई फ्लैट मिल जाए तो वह घर बदल लेगी। लेकिन मुसीबत यह थी कि सोने के दो कमरों के फ्लैट का किराया उसके इस घर के लगभग बराबर था। और बच्चों के साथ वह सोने के दो कमरों से कम, सोच भी क्या सकती थी? किराये इतने बढ़ गये थे! शीरीं की समझ में कुछ नहीं आ रहा था। घंटों अकेली बैठी, फटी-फटी आंखों से शून्य में निहारती रहती। बच्चे थे—जिनके पालन के लिए दोनों समय चूल्हा सुलगाया जाता, नहीं तो शीरीं, कई-कई दिन भूखे काट देती।

लोग कहते—'शीरीं तो अपने शौहर की दीवानी है। यूंही फिराक में घुलती-घुलती खत्म हो जाएगी।'

और फिर शीरीं को किसी ने एक राह सुझायी और उसे लगा, जैसे वह सचमुच इस घर में रह सकेगी। उसे यह घर बदलना नहीं पड़ेगा, और न ही खर्च करने की जरूरत होगी। शीरीं हैरान होती, उसे यह पहले क्यों नहीं सूझा था! पिछले आठ-नौ महीनों से वह परेशान थी। और शीरीं को लगा, जैसे किसी डूबते को सहारा मिल जाए।

यह ख्याल, और जिंदगी की लहरों पर जैसे वह तैरने लगी हो। उसके जीवन के क्षितिज पर कब से छा रही काली घटाएं, छटने लगीं। फिर उसके चेहरे पर रोशनी की एक किरण दिखायी दी। उसने अपनी डायरी में देखा, दस महीनों के बाद वह हेयर ड्रेसर के साथ अपायंटमेंट कर रही थी। उसके बाल बढ़ते-बढ़ते कितने बढ़ गये थे। और फिर शीरीं ने अपने घर के परदों को झाड़ा-पोंछा। मेजपोश बदले। गोल कमरे में रखे गुलदानों में फूल लाकर लगाने शुरू किये। सामने, गोल कमरे की कार्निस पर से अपने मरहूम शौहर के काले हाशियेवाली तसवीर को उठाकर बच्चों के कमरे में रख

दिया। हर रोज सुबह उठकर बच्चे इस तसवीर को सलाम करते थे। कैसे प्यारी तरह कहते—'अब्बाजान आदाब।' हर रोज सुबह उठकर उनका पहला काम यही होता था।

उस घर में रहने की तरकीब, जो उसकी सहेली ने उसे सुझायी, वह यह थी कि शीरीं किसी को पेइंग-गेस्ट रख ले। एक तो उसके फालतू कमरे लग जाएंगे, दूसरा, रसोई का खर्च बंट जाएगा। और तीसरा, कोई और घर में होगा तो उसका दिल लगा रहेगा। और फिर छोटे-छोटे बच्चों के साथ इतने बड़े घर में रहना खतरनाक भी हो सकता था। उसकी सहेली कहती—'कोई औरत मिल गयी तो और भी अच्छा है, आदमी कभी दुख-सुख बांट सकता है?'

और आठ-दस दिन अपने घर को सजाकर शीरीं ने पेइंग-गेस्ट की तलाश शुरू कर दी। एक सप्ताह, दो सप्ताह, जब सफलता नहीं मिली, उसने अखबार में विज्ञापन दिया। कई चिट्ठियां आयीं, लेकिन ये तो सारे मर्द थे। मर्द थे तो क्या?

उसकी सहेली कहती; 'मर्द तो अच्छा रहेगा। मर्द के साथ बहुत झिक-झिक नहीं करनी पड़ती। औरत के तो नखरे ही नहीं संभलते।'

और फिर उसकी सहेली ने किसी एक को चुन लिया। शीरीं इस झगड़े में नहीं पड़ना चाहती थी। कोई भी हो। बस वक्त पर पैसे दे दिया करे। शीरीं की सहेली कहती—'पैसे तुम पेशगी लेना, इसमें कोई शर्म की बात नहीं।' शीरीं सोचती, उसकी सहेली कितनी चंचल है। उससे यह सब कुछ नहीं हो सकेगा।

और फिर उसके घर एक पेइंग-गेस्ट आ गया। एक-दो दिन शीरीं को घबराहट हुई और फिर गाड़ी रवां हो गयी। शीरीं की सहेली ने जान-बूझकर एक विदेशी को चुना था। 'हिंदुस्तानी मर्दों को ज्यादा मुंह नहीं लगाना चाहिए', वह कहती।

जरा-सी खाने में तबदीली करनी पड़ी थी। बाकी सब कुछ वैसे-का-वैसा था। पी. जी. वक्त पर आता, वक्त पर खाता, वक्त पर सोता, वक्त पर उठता। कुछ दिन, और वह घर में रच-सा गया। बच्चों के साथ उसने कई सांझें गांठ लीं। उनको अपने साथ बाहर ले जाता। कभी सिनेमा, कभी थियेटर, कभी क्लब। उसे 'अंकल', 'अंकल' बुलाते जैसे बच्चों के मुंह न थकते हों। दफ्तर से ढेर-सारे फूल ले आता। सारा घर खुशबू से भरा रहता।

कुछ दिन, और उसके छोटे बच्चे की साल गिरह थी। क्या सालगिरह मनानी है? उसने अपने मन को समझाया। लेकिन बच्चा कब मानने वाला था। उसने अपने दोस्तों को बुलाया, आस-पड़ौस वालों को बुलाया। ढेर सारे उपहार बच्चे को मिले। पी. जी. भी उसके लिए एक तोहफा लाया। जब मेहमान चले गये तब बच्चा एक-एक पैकेट खोलकर देखने

धुंधलके में घिरने लगा। ओस्वाल्ड की हत्या की वजह शुरू में यही नजर आयी कि देशभक्त जैक रूबी अपने प्रिय राष्ट्रपति की हत्या बर्दाश्त नहीं कर सका और बदला लेने के लिए ही उसने ओस्वाल्ड का खात्मा किया है। उधर दो साल बाद जैक रूबी भी फेफड़े के कैंसर से जेल में चल बसा। अब केनेडी की हत्या के मामले से सीधा जुड़नेवाला कोई व्यक्ति सामने नहीं रह गया। स्वाभाविक था कि केनेडी-हत्याकांड के कारणों के विषय में लोग तर्कों के सहारे निष्कर्ष तक पहुंचें। सबसे ताजा विश्लेषण एक वकील माइकल एडोज का है। इस संबंध में लिखी उनकी पुस्तक 'नवंबर २२, हाउ दे किल्ड केनेडी' प्रकाशनाधीन है।

एडोज मानते हैं कि केनेडी की हत्या के बाद गिरफ्त.र किया गया व्यक्ति वास्तव में ओस्वाल्ड था ही नहीं। वह रूस भाग जाने और वहां से तीन साल बाद लौटनेवाले भूतपूर्व नाविक ओस्वाल्ड से शारीरिक रचना में बिलकुल अलग एक ऐसा आदमी था जिसे रूस की गुप्तचर पुलिस के. जी. बी. ने बड़ी चतुराई से ओस्वाल्ड के स्थान पर भेज दिया था। इस बात का आधार ओस्वाल्ड के नौसेना में नौकरी के समय के दस्तावेज हैं। इनके अनुसार ओस्वाल्ड जब सितंबर १९५९ में नौसेना से सेवानिवृत्त हुआ था, उस समय उसकी लंबाई ५ फुट ११ इंच दर्ज की गयी थी, लेकिन केनेडी की हत्या के बाद गिरफ्तार ओस्वाल्ड की लंबाई कुल ५ फुट ९ इंच थी। वारेन आयोग ने इस बात पर कोई विचार ही नहीं किया। ऐसी ही बात आपरेशन के निशान के बारे में है। ओस्वाल्ड जब छः साल का था, उस समय उसका एक आपरेशन हुआ था। इस आपरेशन का एक गहरा निशान कनपटी के पीछे रह गया था, लेकिन केनेडी की हत्या के बाद पकड़े गये व्यक्ति की शव-परीक्षा में ऐसा कोई निशान नजर नहीं आया।

दूसरी जिस बात की ओर एडोज ने ध्यान दिलाया है, वह है ओस्वाल्ड का रूसी भाषा का ज्ञान। नौसेना में ओसवाल्ड ने रूसी भाषा सीखी जरूर थी, लेकिन परीक्षा लिये जाने पर वह इस भाषा में बहुत कमजोर पाया गया। रूस पहुंचने के पांच दिन बाद २१ अक्तूबर १९५९ को ओस्वाल्ड ने आत्महत्या की कोशिश की, किंतु दूसरी दुनिया के बजाय पहुंच गया अस्पताल। इस अस्पताल के दस्तावेज बताते हैं कि वह रूसी नहीं बोल पाता था और अपना काम चेहरे के भावों तथा इशारों से चलाता था। इसके बावजूद सिर्फ अठारह महीने बाद यह हालत कैसे आ गयी कि उस लड़की मरीना ने, जिससे उसने शादी की, उसे रूसी ही समझा। जब ओस्वाल्ड अमरीका लौटा तब वहां रह रहे रूसी मूल के लोग यह देखकर चकित रह गये थे कि रूस में मात्र दो साल आठ माह रहने से ही वह रूसी

भाषा फर्राटे से बोलने लगा था।

इन बातों से भी कहीं अधिक चकित करनेवाली बात एडोज की जैक रूबी से संबंधित मान्यता है। ऊपरी तौर पर तो यही सामने आया कि रूबी दो नाइट क्लबों का मालिक था और कभी छोटा-मोटा 'दादा' रहा था। समझा यही गया था कि उसने ओस्वाल्ड को गोली या तो केनेडी परिवार का बदला लेने के लिए मारी या फिर एकाएक नाम कमाने के चक्कर में। वारेन आयोग भी इसी नतीजे पर पहुंचा कि ओस्वाल्ड और रूबी एक-दूसरे को नहीं जानते थे, लेकिन एडोज का ख्याल है कि रूबी भी हत्या के षड्-यंत्र का एक भाग ही था। केनेडी की हत्या के तुरंत बाद ओस्वाल्ड के सुरक्षित भागने का प्रबंध उसी की जिम्मेवारी थी। भाग निकलने की योजना असफल हो गयी तो ओस्वाल्ड का मुंह हमेशा के लिए बंद कर दिये जाने के सिवा कोई चारा नहीं रह गया था और रूबी ने यह काम मास्को के हुक्म पाकर किया। अगर षड्यंत्र की बात ठीक है तो रूबी ने ओस्वाल्ड के भाग निकलने के जो प्रबंध किये थे, उनके कारगर होने में संदेह की कोई गुंजाइश नहीं रह जाती थी। वह तो नियति ही लगातार आड़े आती गयी अन्यथा हत्यारे के आसानी से डल्लास और फिर अमरीका से बाहर चले जाने में कोई कसर नहीं रह गयी थी।

टैक्सास स्कूल बुक डिपाजिटरी की इमारत की छठी मंजिल से राष्ट्रपति केनेडी पर गोलियां चलाकर हत्यारा चुपचाप आगे बढ़ा तो उसका दुर्भाग्य भी उसके पीछे लग गया। उसने बस पकड़ी और २३ सेंट का टिकट लिया। इस टिकट से वह उस स्टाप पर उतर सकता था जहां

बायीं ओर : १९५९ में ओसवाल्ड का चित्र जब वह भागकर रूस पहुंचा था
दायीं ओर : १९६३ में डल्लास पुलिस द्वारा लिये गये चित्र

से जैक रूबी का आवास सिर्फ साढ़े तीन सौ गज दूर था, लेकिन बस में उसे पहचान की एक महिला श्रीमती ब्लेडसो मिल गयीं। इस अचानक मुलाकात से भाग निकलने की उसकी योजना खटाई में पड़ गयी। उसे लगा वह बस में ही पकड़ में आ जाएगा, इसलिए कुल चार मिनट के भीतर वह उतर पड़ा और एक टैक्सी लेकर अपने कमरे में पहुंचा, जहां वह ओ. एच. ली नाम से रह रहा था। उसने कपड़े बदले और रिवाल्वर ले ली। एक वार फिर वह रूबी के घर की ओर बढ़ा। रास्ते में गश्त लगा रहे जे. डी. टिपिट नामक पुलिसवाले ने उसे रोककर पूछताछ करनी चाही, लेकिन उसने पुलिसवाले को गोली मार दी। वह फिर भागा और एक सिनेमा में जा छिपा। वहां से उसे थोड़े-बहुत संघर्ष के बाद पकड़ा गया।

हत्या के कुछ ही घंटों के अंदर ली हार्वे ओसवाल्ड हथकड़ी में

यह हत्यारा सचमुच ओस्वाल्ड ही था या कि कोई रूसी भेदिया? माइकल एडोज ग्यारह साल तक अनुसंधान करते रहे और जिन नतीजों पर पहुंचे वे चकित कर देनेवाले हैं। उनका कहना है कि एफ. बी. आई. के तत्कालीन प्रमुख जे. एडगर हूवर ने ३ जून, १९६० को विदेश विभाग को एक पत्र लिखकर सतर्क किया था कि कोई रूसी बहुरूपिया उस समय रूस में रह रहे ली हार्वे ओस्वाल्ड का स्थान ले सकता है। फिर डल्लास में हत्यारे की गिरफ्तारी के कुल सात घंटे बाद ही एफ. बी. आई. ने व्हाइट हाउस से कहा था कि उन्हें शक है कि हत्यारा नकली आदमी है और वह १९६२ में क्यूबा के संकट के दौरान जासूसी करता रहा है, लेकिन इस बात को वहीं दबा दिया गया। एडोज

हलकी फुलकी
सौंदर्य झलकी...
आप के चेहरे पर गुलाब की पंखुड़ियों जैसी
शबनमी ताज़गी देने के लिए हलका फुलका
पाउडर या एक शानदार कॉम्पेक्ट प्रस्तुत है.
वही यौवन की चमक; वही रूप की दमक.
घण्टों सुंदरता के सपने सजाइए;
रूप की ज्योत जगाइए.
Lakmé
लॅकमे
लॅकमे
अल्ट्रा सिल्क फ़ेस पाउडर
और कॉम्पेक्ट
सब कुछ रूपरंग के हक़ में
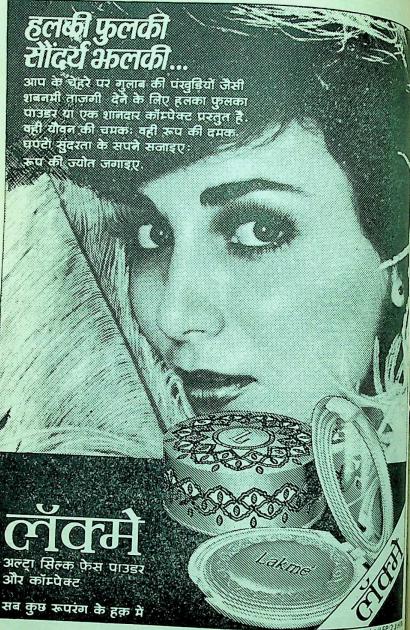
का यहां तक कहना है कि जब २२ नवंबर को राष्ट्रपति जानसन ने हत्या की छानबीन का काम एफ. बी. आई. को सौंपा तब उन्होंने छिपे तौर पर इस गुप्तचर संगठन को निर्देश दे दिये थे कि यदि ऐसे कोई प्रमाण मिलें कि जासूसी और हत्या का रूसी षड्यंत्र था तो उन्हें दबा दिया जाए। आखिर यह परदा डालने की जरूरत क्या थी ? उस समय भय था कि प्रक्षेपास्त्रों से हमला हो सकता है और जानसन घबराये हुए थे कि अगर षडयंत्र की बात फैली तो युद्ध भड़क उठेगा।

एडोज का दावा है कि इस रूसी षड्यंत्र के पीछे तत्कालीन सोवियत प्रधानमंत्री निकिता ख्रुश्चेव का दिमाग था।

एडोज का कहना है कि ओस्वाल्ड जब रूस से लौटा तो अमरीका में उसके परिवार को यह शक क्यों नहीं हुआ कि उसकी जगह कोई और आदमी आ गया है! एडोज का कहना है कि सोलह महीने की चुप्पी के बाद घर में ओस्वाल्ड के पत्र आने लगे कि उसने मरीना नाम की एक रूसी लड़की से शादी कर ली है, उसके पुत्री हो गयी है, आदि। इन पत्रों के साथ चित्र भी आते थे और उनमें नजर आनेवाला व्यक्ति उसी जैसा लगता था जो अमरीका से गया था, किंतु अंतर भी काफी था। तथापि जब तक ओस्वाल्ड लौटा, चित्र देख-देखकर उसका परिवार इतना अभ्यस्त हो चुका था कि उसे ओस्वाल्ड मान लिया।

संदेह की एक और बात यह थी कि रूसियों ने ओस्वाल्ड परिवार को इतने आसानी से रूस कैसे छोड़ने दिया ?

ओस्वाल्ड के भाई राबर्ट को उसकी बातचीत का लहजा भी बदला हुआ लगा था पर वह यह सोचकर रह गया कि रूस में काफी दिन रह लेने से शायद ऐसा हो गया हो। ओस्वाल्ड के बाल और उनके रंग में भी फर्क आ गया था। पहले वे भूरे, घुंघराले और घने थे, लेकिन अब गंज दिखने लगी थी। इस तथ्य की ओर राबर्ट ने वारेन आयोग का भी ध्यान खींचा था। इन सबके बावजूद ओस्वाल्ड के रूप में रूस से लौटे व्यक्ति का राबर्ट और उसकी मां ने स्वागत किया था। इस हालत में एफ. बी. आई. के लोग भी शक करने से ज्यादा और कुछ नहीं कर सकते थे। नये और पुराने ओस्वाल्डों की उंगलियों की छाप में अद्भुत समानता थी। लेकिन हो सकता है इसमें उंगलियों की छाप के विभाग ने कुछ हेराफेरी की हो।

यदि यह मान लिया जाए कि ओस्वाल्ड की जगह दूसरे आदमी को ओस्वाल्ड बना दिया गया था तो सवाल रह जाता है कि यह हुआ किस समय? इस बारे में चौंका देनेवाला मंतव्य यह है कि ओस्वाल्ड कभी अमरीका के बाहर गया ही नहीं! उसे जैक रूबी ने उसी समय खत्म कर दिया था—जब वह देश से बाहर जाने के लिए न्यू अर्लियंस पहुंचा था और फिर तुरंत ही एक फरजी व्यक्ति ने ओस्वाल्ड का नाम धारण कर लिया था। ●

हिटलर के साथी: तलाश जारी है

● चन्द्रकला मित्तल

हिटलर एक तानाशाह था, मगर यह रहस्य शायद कम लोगों को मालूम हो कि उस तानाशाह को कठपुतली की तरह नचानेवाला एक और तानाशाह भी जरमनी में था। यों हर तानाशाह के पीछे एक और तानाशाह होता है। जरमनी का वह तानाशाह पिछले ३१ वर्षों से निरंतर पहेली बना हुआ है। हाल में ही ब्रिटेन के पत्र 'गार्जियन' ने लिखा है कि वह इंगलैंड के ईस्ट ऐंग्लिया क्षेत्र में एक छोटे-से फार्म पर रहता है। ७६ वर्ष का बोरमां आखिर इतना महत्त्वपूर्ण क्यों है?

हिटलर नाजी जरमनी का फ्यूहरर था और उसने बोरमां को स्वयं डिप्टी-फ्यूहरर की उपाधि प्रदान की थी। वह हिटलर का मस्तिष्क था। तृतीय रीश के बारह वर्षीय जीवनकाल में बोरमां जरमन जनता की निगाहों से प्रायः दूर रहा और उसे शक्ल से पहचाननेवाले लोगों की संख्या बहुत सीमित थी। हिटलर से मिलने के लिए बोरमां की अनुमति अनिवार्य थी। इतना ही नहीं उसकी स्वीकृति के बिना कोई भी रिपोर्ट हिटलर के सामने नहीं रखी जा सकती थी। फील्ड मार्शल रोमेल की हत्या का षड्यंत्र बोरमां ने ही रचा था।

बोरमां के मन में सत्ता की अ… प्यास थी। हिटलर की पराजय के … में उसने रूसी सेनापतियों के सामने … रूप से यह प्रस्ताव रखा था कि यदि … युद्ध बंद करने को तैयार हों तो हिट… को हटाकर रीश की सत्ता मैं स्वयं संभा-लने को तैयार हूं। किंतु रूसी सेनापति… ने यह प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया, क्यों… वे जानते थे कि बोरमां हिटलर से … बड़ा शैतान है।

चापलूस बोर…

बोरमां का जन्म १७ जून, १९०० को ज… मनी के छोटे से नगर हेबरस्ताद में हु… था। कृषि-विज्ञान का अध्ययन करने … बाद वह उत्तरी जरमनी में एक बड़े फा… का मैनेजर बन गया, लेकिन इससे उ… संतोष न मिला और शीघ्र ही नौकरी छोड़… कर एक अवैधानिक राजनीतिक सैनि… संगठन 'फ्रोकोर रोसबेक' में शामिल हो… गया तथा उसका कोषाध्यक्ष बन गया।

ज्योंही बोरमां के दल ने वाइडेनडेमर पुल पार किया कि टैंक पर एक बम गिरा और वह खील-खील हो गया। चारों ओर आग फैल गयी तथा कैंपका ने बोरमां को जमीन पर गिरते हुए देखा। एक्समां सुरक्षा के ख्याल से एक गढ़े में छिप गया। बाहर निकलने पर उसने देखा कि बोरमां जीवित है और उसे खरोंच तक नहीं आयी है। वहां से पटरी के किनारे-किनारे वे स्टेशन की ओर बढ़े। यहीं एक्समां बोरमां से बिछुड़ गया, मगर जब वह प्रदर्शनी-उद्यान के समीप से गुजरा तब वहां उसे दो शव पड़े मिले, जिनमें से एक स्टुंपफेगर का और दूसरा बोरमां का था। उनके शरीर पर चोट के निशान नहीं थे, जिससे यह निष्कर्ष निकाला गया कि उन्होंने बचाव का रास्ता न देखकर साइनाइड विष की सुई से आत्महत्या कर ली थी।

एक्समां के बयान की पुष्टि रिटायर्ड पोस्टमैन अल्बर्ट कुमनोव ने की, तथा उसने बताया कि वे दोनों लाशें उसने ही दफनायी थीं। लेकिन, उसने यह भी कहा कि डॉक्टर के शव पर पहचान के कागज थे, मगर दूसरे शव पर नहीं थे। रूसी डॉक्टरों का कहना है कि उन्हें बोरमां का शव मिल गया था, जिसकी पहचान उन्होंने उसकी खोपड़ी और उसके जबड़े के आधार पर की थी। १९६१ में पश्चिमी जरमनी ने बोरमां के बारे में सही पता लगाने के लिए डॉ. फित्ज बोअर के नेतृत्व में एक आयोग की स्थापना की, जिसने उद्यान का कोना-कोना खुदवा डाला, मगर वहां हड्डी भी न मिली, जिससे यह सिद्ध होता है कि एक्समां और कुमनोव ने बोरमां की सुरक्षा के लिए उसकी मृत्यु की कहानी गढ़ ली थी।

आइकमान के नाम कार्ड

बोरमां की तलाश उन यहूदियों को भी रही है, जो उसे लाखों यहूदियों का हत्यारा मानते हैं। उन्होंने बी आइकमान को भी पकड़ा था। १९६० में आइकमान जिस समय इजरायल की एक जेल में मौत की घड़ियां गिन रहा था, उन्हीं दिनों उसे एक पोस्टकार्ड मिला था, जिस पर लिखा था— "साहस, साहस । मार्टिन ।" हस्तलिपि विशेषज्ञों का दावा है कि वह कार्ड बोरमां ने अपने हाथ से लिखकर भेजा था। इसका अर्थ है कि बोरमां जीवित है।

बोरमां के जीवित होने का एक प्रमाण नाजी गुप्तसेवा के भूतपूर्व कारपोरल कार्ल वीडवाल्ड का १९६६ का वह बयान है जिसमें उसने कहा था कि १९४५ में उसने रीशस्लरटर (राष्ट्र-नेता) बोरमां को बर्लिन से भागने में मदद दी थी तथा दक्षिणी अमरीका में वह उसका अंगरक्षक रहा था।

बोरमां के जरमनी से भागने का प्रबंध नाजी गुप्तसेवा के संगठन 'ओडेसा' ने अपनी शाखा 'स्पिने' (मकड़ी) के द्वारा किया था। आइकमान, मुल्लर और यहूदियों के हत्यारे डॉक्टर जोसेफ मैंजिल को भी 'स्पिने' ने ही बाहर निकाला था।

'ओडेसा' के ड्राइवर पीटर फ्रांज कुर्तेस्की ने बताया है कि १२ दिसंबर १९४५ को वह बोरमां को कार द्वारा बवेरिया से इटली की सीमा तक ले गया था।

बर्लिन से रवाना होने के पहले बोरमां ने अपनी डायरी और पहचान के कागज एक ऐसी लाश के पास रख दिये थे जो जलने के कारण पहचानी नहीं जा सकती थी। वहां से वह 'ओडेसा' के प्रधान कार्यालय वर्टिलरकाव होकर टायराल प्रांत में वास्केंटीन पहुंचा, वहां से नाव द्वारा जिनीवा और स्पेन से मालवाही जहाज में अर्जेंटीना पहुंचा। ब्यूनस आयरस में राष्ट्रपति जुआन पेरों ने उसका स्वागत किया। वहां बोरमां ने प्लास्टिक सर्जरी द्वारा चेहरा बदला और एंडेस पर्वत की उपत्यका के सुहाने जलवायु वाले क्षेत्र में पांच हजार एकड़ का पशु-फार्म खरीदकर उस में बस गया।

अर्जेंटीना से ब्राजील

१९५९ में राष्ट्रपति जुआन पेरों का तख्ता उलटने पर बोरमां को अर्जेंटीना छोड़ना पड़ा और वह ब्राजील चला गया जहां उसने पेरागुवे की सीमा पर एक छोटा-सा फार्म खरीद लिया। अभी तक यह कहा जाता था कि वह वहीं रहता है। उसके फार्म का नाम 'कालोनी वाल्डनेर ५५५' है। फार्म पर ६० जरमन, पोल और यूकेनियाई नाजी फूस के झोपड़ों में रहते हैं। १९६० में आइकमान की गिरफ्तारी के बाद से वहां सुरक्षा का कड़ा प्रबंध है।

नाजी-विरोधी यहूदी सिमोन वी- जेनथाल ने लिखा है कि ब्राजील में बोरमां की सुरक्षा के लिए नाजियों ने कैमरे डे- वर्क नामक गुप्त संगठन के द्वारा कड़े प्रबंध कर रखे हैं। कुछ वर्ष पूर्व एक यहूदी गुप्तचर बोरमां के फार्म पर पहुंचने में सफल हो गया था, बोरमां के अंगरक्षकों ने उसे पीट-पीटकर मार डाला।

कहते हैं, 'कालोनी वाल्डनेर ५५५' में हिटलर का जन्मदिन पूरी आस्था के साथ मनाया जाता है। बोरमां के पेट में पिछले कई वर्षों से कैंसर है जिससे वह धीरे-धीरे मर रहा है, लेकिन ७६ वर्ष की आयु में उसकी तलाश अभी जिंदा है। १७ मार्च १९७१ को 'डेली एक्सप्रेस' ने लिखा था कि बोरमां पकड़ा गया, लेकिन उसी वर्ष २० मार्च को 'गार्जियन' ने लिखा कि गिरफ्तार व्यक्ति बोरमां नहीं, जोआन हर्टिमां है। 'गार्जियन' ने ९ मार्च १९७६ को समाचार दिया कि बोरमां हॉलैंड में है। इस बीच नाजी जनरल रीनहार्ड गेहलेन ने दावा किया था कि बोरमां रूस में था तथा १९६८ के आसपास उसका देहांत हो गया। इस समाचार को हिटलर के उत्तराधिकारी ८५ वर्षीय एडमिरल डोनित्ज ने असत्य बताया था। इन सारे परस्पर-विरोधी विवरणों के उलझन भरे जंगल में सत्य क्या है, यह तो कहना कठिन है, लेकिन इतना तय है कि बोरमां का भूत आज भी दुनिया के मस्तिष्क को तंग कर रहा है। ●

गीत मेघ : आत्मकथ्य

प्यासी लहरें, टूटी नावें, खाली सीपी, खारा जल
इतनी दौलत पास हमारे—हम हैं सागर के बादल

हमने देखा एक समंदर, झांका अंदर जाने को
धूल भरे मुखड़ों को धोकर दी आवाज खजाने को

मौसम था जब रेशम-रेशम मैला-मैला था आंचल
कहनेवाले कहते हैं ये गीत बड़ा वीराना है
मोती ढूंढ़ रहा शंखों में सचमुच ये दीवाना है

दुख के पथ पर चलकर गाता गीत निराला है पागल

क्या-क्या लाद चला कंधों पर अपना ये बनजारा मन
हारा-हारा जीवन सारा, कितनों का ध्रुवतारा मन

छोटी मछली, मोटी मछली, नीला पानी है घायल
पानी के बाजार-सफर में अपना मन व्यापारी है
हम तो सिक्के हैं माटी के, चलने की तैयारी है
शहरी भी है, जहरी भी है, जल का इंसानी जंगल

देख रहे हैं बौने बबुए गजदंती मीनारों से
मौसम को नहलाते हैं हम, आंसू की बौछारों से

बिजली बनकर कौंध रही है यादों की टूटी पायल
मन का जमुना-तीर जहां है आया गीत वहां से है
अपनी टक्कर अपने से है या फिर शाहजहां से है
सागर-तट पर खुद गढ़ देंगे, ज्यादा प्यारा ताजमहल

—वीरेन्द्र मिश्र—

—कृष्ण कुंज, दादा भाई, क्रास-३, बंबई-४०००५६

सम्मान : एक कागज का

• सुधा सेठ

एक बार अलेक्जेंडर ड्यूमा काकेशस प्रदेश में सैर-सपाटा करने के लिए गये। वैसिली नाम का एक युवक ड्यूमा का भारी प्रशंसक था। उसने ड्यूमा को अपना परिचय देते हुए कहा—"मैं आपका सेवक बनना चाहता हूं।"

ड्यूमा ने पूछा—"इससे तुमको लाभ ?"

वैसिली ने कहा—"आपके साथ रहने से मेरा जीवन धन्य हो जाएगा।"

"पर इस समय मैं सैर-सपाटे के लिए निकला हूं। तुम्हारे साथ घूमने से मुझे असुविधा होगी। तुम यहां से पेरिस चले जाओ और मेरी प्रतीक्षा करो।"

काकेशस से पेरिस पहुंचना मुंह का कौर नहीं होता।

वैसिली ने निवेदन किया—"मान्यवर, पासपोर्ट प्राप्त करने में बड़ी अड़चनें हैं और ट्रेन का किराया अलग लगेगा। अतएव निवेदन है, आप मुझे अपने साथ ही रखें।"

"अरे, इसके लिए तुम इतनी फिक्र क्यों करते हो ?" ड्यूमा ने लापरवाही से कहा।

ड्यूमा ने एक सादे कागज पर लिखा—'पत्रवाहक मेरा सेवक है। इसे पेरिस पहुंचाने में मदद कीजिए। सहयोग के लिए धन्यवाद—अलेक्जेंडर ड्यूमा।' फिर वह कागज वैसिली को सौंपते हुए कहा—"मार्ग में जहां भी अड़चने आयें, कागज दिखा देना।"

यों ड्यूमा ने जितने विश्वास के साथ वैसिली को भरोसा दिलाया था, कदाचित उनको भी उतना भरोसा नहीं था। लेकिन दो माह के पश्चात पेरिस लौटने पर वैसिली को अपने घर पर देखकर ड्यूमा की आंखे फटी-सी रह गयीं उन्होंने उससे पूछा—"अरे, वाह! तुम आ गये? कैसे पहुंचे?"

वैसिली ने प्रफुल्लता के साथ कहा—"आपको याद नहीं, आपने मुझे कागज के एक टुकड़े पर लिखकर दिया था! उसी से मार्ग में मुझे कोई असुविधा नहीं हुई। जहां-जहां पासपोर्ट की जरूरत होती, वहीं मैं इस कागज को प्रस्तुत कर देता। ड्यूमा का नाम सुनते ही सभी मुझे खुशी से आगे जाने देते। आपका नाम लेते ही सारा झगड़ा खत्म हो जाता। कोई कहता—'ड्यूमा का आदमी है! इसे फौरन जाने दो।' . . . कोई-कोई आपका नाम सुनकर खूब खिलाता-पिलाता भी!".. ड्यूमा गदगद हो गये! •

अंतराल

○ विजया राजाध्यक्ष

सिंधू निढाल बैठी थी—पंद्रह दिन गुजर चुके थे। धीरे-धीरे भूल जाना होगा—रोजमर्रा की जिंदगी में एकरूप हो जाना होगा—इस बात की समझ तो थी—पर अपनी ही जिंदगी—वह हमें खुद-ब-खुद अपने आप में समा लेगी, इस बात का विश्वास न था। पिछली बार इसी तरह जिंदगी ने उसे दूर ढकेल दिया था—या वह खुद ही अलग हो गयी थी। उसे भूलकर जिंदगी में यों एकरूप होकर अब फिर वही दूरी . . ! इसे क्यों छोड़ दिया जाए? किसके लिए? खुद के लिए? खुद के लिए दुख भोगा—खुद के लिए सुख भोगा। अब इस सुख-दुख के पीछे लगे रहने में कोई अर्थ न था। वह उम्मीद ही खत्म हो चुकी थी। फिर यह दुख किसका है?

"सिंधू!" पंडित की आवाज थी।

उसने ऊपर देखा और जाने-अनजाने लंबी सांस ली।

"इस तरह क्यों बैठी हुई हो? अब उठो, देखें—"

उसके शब्दों की आर्द्रता से वह पसीज उठी। आंखों से आंसू निकल आये।

"रो मत . ." कहते हुए वह उसके बालों को सहलाता रहा।
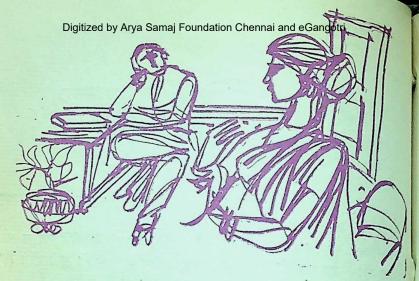
कुछ पल यों ही बीते। वह स्पर्श यों ही बना रहे—उस स्पर्श से एहसास हो कि तुम अकेली नहीं हो।

"कितने दिनों तक यों रहोगी? अब समेटना चाहिए। ध्यान दूसरी बातों में लगाना चाहिए—पंद्रह दिन हो चुके।"

सिंधू सुन रही थी—और उसे एहसास हुआ कि पंडित के स्पर्श से उभरती भावनाएं सूख चली हैं।

"अब भूलने की कोशिश करो—बच्चों की फिक्र करो—पंद्रह दिन में बच्चे कैसे हो गये हैं बेचारे!" पंडित की आवाज में गीलापन था। खुद के बच्चों के बारे में बोलने के दौरान।

"आप तो हैं न उनकी फिक्र के लिए—"
उसकी आवाज का कड़ुवापन पंडित के खयाल में ही न आया।

वह कहने लगा, "मैं तो हूं ही—पर उन्हें तुम्हारी भी तो जरूरत है न?"

'किसलिए इस तरह का समझाना? मैं घर-बार में रम जाऊं इसलिए? हां—अब घर-बार का एक खास आकार बन गया है? मैं, पंडित, हमारे बच्चे। कोई अलग-थलग नहीं—पराया नहीं।' सिंधू हड़बड़ा गयी और खुद से ही पूछने लगी, 'मतलब सुरेश पराया था—पराया नहीं तो और क्या? मेरे साथ घर-बार में रहा—पर ये सब उसके कौन थे? पंडित उसका पिता नहीं था—हमारे बच्चे उसके भाई-बहन न थे। सिर्फ मैं उसकी थी—और उसके अकेले की भी कहां थी मैं! चार बच्चों की मां—उसे चौथाई हिस्सा स्नेह दिया था—वह भी जैसे चोरी-छिपे। पंडित उसके बारे में क्या सोचता था?' वह दस साल पीछे चली गयी, सोचने लगी—

उसे अभी-अभी डायवोर्स मिला था।

एक जिंदगी अधूरी बनकर खत्म हो रही थी। अब उस जिंदगी से सरोकार रखने में कोई अर्थ नहीं। किसी तरह की यादों की जरूरत न थी—सारे ही धागे टूट चुके थे—अब उन्हें जोड़ना भी निरर्थक था—अब अधर में लटकते हुए ही जीना था—नीचे गिरकर खून से लथपथ हो जाने से बेहतर था—एक धुन में वह सारे ही संबंध तोड़ती चली गयी। पिछली जिंदगी का नामोनिशान न होना चाहिए। हां—एक डोर जरूर न टूट पायी थी—सुरेश। डायवोर्स मिला—तब किसलिए जिंदा रहें—यही सवाल था—तब सुरेश का चेहरा ही उसकी दृष्टि में था—उसने तय किया था कि सुरेश के लिए जिंदा रहेगी—पांच-छह महीनों की वे यातनाएं—तब सुरेश एक बरस का था—कहीं कुछ न होते हुए एक साल के बच्चे को लेकर किस तरह जिंदा रहा जाए? किस आधार पर? वह इसी सोच-विचार में थी और तभी उसे पंडित मिल गया, आधार देने के लिए। छटपटाते पांव पंडित की जिंदगी से टिक गये। ठीक-ठाक हुआ पर अब दूसरी ही चिंता सताने लगी। पंडित उसे सुरेश के साथ स्वीकार कर लेगा?

"आप जरूर पूछ रहे हैं—पर मैं अपनी स्वीकृति कैसे दूं?"

"क्यों—मैं तो तुम्हें चाहता हूं।"

"पर सुरेश?" वह रुकी और जवाब का इंतजार करने लगी।

"पगली हो तुम—सुरेश को छोडकर शादी की बात मैं तुमसे कभी कहूंगा—"

पंडित ने उसे स्वीकार कर लिया था—सुरेश के साथ ही। पर उसे सुरेश के बारे में क्या महसूस होता था? माया? स्नेह? दया? या कि पराये की तरह ही वह बढ़ता रहा इस घर में? दस साल तक यहां रहा—दूसरे बच्चों के साथ खेला-बढ़ा। उसे कोई कमी नहीं थी। पर क्या पंडित का स्नेह मिल पाया उसे? इतने दिनों तक उसने इस मसले पर सोचा ही न था। पर अब वही बात उसे परेशान करने लगी—'और मैं? सुरेश के लिए ही तो जिंदा रहने की बात मैंने तय की थी—उसी के लिए मैंने दूसरी शादी की—उसी के लिए दूसरी जिंदगी जीने लगी?

'पंडित से शादी की और मेरी नयी जिंदगी शुरू हुई। अधूरी जिंदगी के

लिए नया मुल्ला। मुझे सब कुछ मिला—सास मिली, ननदें मिलीं, देवर मिले। पर सुरेश को दादी मिल पायी? बुआ मिल पायी? चाचा मिल पाये? मेरे लिए पति मिला—मेरी हिफाजत करने वाला—पर सुरेश को लाड़-प्यार करनेवाला पिता मिल पाया? मैं खुद उसकी कहां थी!' उसे याद आया—'पंडित के रिश्तेदार आते और उसके बच्चों को दुलारते, उनके लिए मिठाई ले आते—और सुरेश के गालों को यों ही सहलाकर निकल जाते। उस दौर में इसका दुःख न हुआ था—नयी जिंदगी की धुन थी—पर अब जैसे हर बात का पूरा-पूरा एहसास हो रहा है। उस वक्त जो पीड़ा न हुई—एक अजीब अपराध बोध का एहसास।' एक प्रसंग तो बुरी तरह से याद आया—'सुरेश का जन्मदिन था। उसने घर पर ही मिठाई बना ली—उसके लिए नये कपड़े भी लायी थी—पर तिस पर भी सुरेश खुश न था। क्यों?

'शाम को उसने पूछा—मां, आज हमारे यहां कोई नहीं आएगा?

'नहीं बेटे—हम लोग ही बाहर चलेंगे।

'फिर अजीत और संध्या के जन्मदिन पर कैसे लोग आ जाते हैं?

'उसे बेहद परेशानी हुई। जान नहीं पा रही थी कि उसे कैसे समझाया जाए। दूसरे बच्चों के जन्मदिन पर पंडित के रिश्तेदार आ जाते थे—प्रजेंट्स दे जाते थे। पर सुरेश का संबंध ही क्या था? उसकी पिछली जिंदगी की याद! याद बनाये रखी—यही क्या बड़प्पन नहीं है? और पंडित? वह भी इसी तरह उदार—समझदार! कोई नया आदमी घर पर आ जाए और दीगर बच्चों के साथ सुरेश भी खेल रहा हो तो पंडित उन्हें सारी बातें संक्षेप में ही बता दिया करता था। क्यों नहीं, उसने सुरेश को एकबारगी भी अपना कहा? उसे सुरेश खुद का लगता ही न था। आधार जरूर दिया—तसल्ली जरूर दी पर अपनापा न दे सका। उसने कभी शिकवा न किया। पर इस पल उसके मन में करुणा का ज्वार उभर आया—आंखों में आंसू आ गये।

"ऐसा क्या कर रही हो तुम? मुंह वगैरह धो डालो—कोई आ जाएगा..."
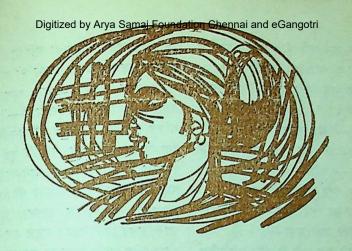
बड़ा रूखा स्वर है--परेशान कर देनेवाला । मेरा दर्द वह नहीं समझ पा रहा । मैं दर्द में डूबी जा रही हूं—और यह है कि किनारे पर खड़े रहकर ऊपर आने के लिए कह रहा है । कैसे ऊपर आऊं ? दर्द में इस तरह डूब जाने में भी एक सुख होता है—पर उसे क्या मालूम ? और सिंधू के मन में एक अजीब कल्पना सवार हुई—अगर अर्जीत और संध्या में से कोई गुजर जाता तो पंडित का सलूक कैसा होता ? मेरे साथ वह भी दर्द में न डूबा होता ? फिर इस तरह जा सकता था ? आठ दिन गुजरते ही कपड़े पहन कर बैडमिंटन खेलने के लिए ? संवेदना प्रगट करने के लिए लोग आते हैं तो यह पेपर पढ़ने में मशगूल हो जाता है। कभी बाहर भी चल देता है। सच ही तो है—दर्द भी मेरा और संवेदना भी मेरी ही—सिंधू को लगा—पिछले दस साल से साकार होने वाला यह एहसास—आज बेहद परेशान कर रहा है। मन हुआ फेंक दे घर-बार पंडित के मुंह पर—दूसरी बार जिंदगी शुरू करने का मतलब ताश का नया खेल नहीं है। पहले दौर में जो पत्ते हाथ आ जाते हैं उसी पर हार या जीत निर्भर रहती है। नये खेल में हार होती ही नहीं । सुरेश के साथ यही तो हुआ—उसकी भी कीमत थी—पर पुराने खेल में....नये खेल में ताश नये हैं—बावन पत्तों में तिरपनवां पत्ता अब फट गया है। सिंधू को लगा पंडित से पूछे—'अब तो खेल में रंग आएगा न ?' फिर लगा उस पर बिगड़ने में क्या रखा है ? इतने दिन तक उसने सम्हाला यही क्या कम है ? नहीं तो हमारा होता ही क्या ? तलाक के बाद छह महीनों तक क्या हालत हो गयी थी अपनी ? पंडित की वजह से ही तो सब फिर से करीने से हो पाया । सुरेश की जिंदगी आखिर बारह साल की ही थी। अगर बचा रहता तो उसे खुद इन बातों से तकलीफ ही होती।

और उसके साथ मुझे भी। पर इस एहसास के पहले ही वह चल बसा। अच्छा ही हुआ...

"अब उठ रही हो न?" पंडित ने फिर पूछा।

"हां—" वह फुसफुसायी।

उठते-उठते वह फिर भावनाओं में खो गयी—बोली—

"इस तरह कैसे चला गया?"

"अब क्या करें सिंधू—हमने तो कोई कसर बाकी नहीं रखी—"

उसकी बात सही ही थी। उसे सुरेश की बीमारी के दिन याद आने लगे—टायफाइड हो गया था उसे। तीन-चार दिन तो पता ही नहीं चल पाया—पर जब पता चला तब वाकई कोई कसर बाकी न रखी। कई डॉक्टर देख गये, दवा-दारू हुई। अगर पंडित न होता तो यह सब हो पाता? उसे पंडित की डॉक्टर के यहां जाने की याद हो आयी—और उसका मन कृतज्ञता से भर गया। उसे लगा दुख-दर्द की वजह से मेरी नजर वैसी हो गयी है—पंडित वैसा बिलकुल नहीं है। उसने कोई कमी न रखी। उसके कारण ही तो सुरेश दस साल तो जिंदा रह सका। बोली—

"सच ही है आपका कहना—हमारे हाथ में जितना था सभी कुछ तो किया हमने—"

"बस तो उसी से तसल्ली कर लेना चाहिए न—"

"धीरे-धीरे मैं भूल जाऊंगी"—वह उसके करीब आते हुए बोली। उसके करीब कितनी ताकत महसूस हो रही थी। पंडित मतलब एक पहाड़ है। किसी भी बादल से लड़ते वक्त उसका आधार रहता है।

"बस मुंह धोकर अभी आती हूं—" उसने पंडित से कहा। न जाने कितने दिनों से यह खुशी उसके मन में पैठी हुई थी। सुनहरी शाम थी—हवा धीमे-धीमे चल रही थी। सड़क पर खुशियां थीं। घर में अपनापा था—पंडित उसका था—न जाने कितने दिनों बाद। उसने मन से मुंह धोया और साड़ी बदलकर वह बाहर आ गयी।

अब पंडित से बातें करेंगे—इन पंद्रह दिनों में उसके करीब तक न जा सके थे। क्या लग रहा होगा उसे?

वह करीब वाली कुरसी पर बैठते हुए बोली—"बच्चे अभी तक नहीं लौटे?"

"अभी आ जाएंगे—हम बाहर चलें?"

"चलिए—"

वह बाहर चलने को हुई तभी घंटी बजी। दूसरा कोई अंदर आया। पड़ोस के राणे दंपती। उन्हें देखते ही उसके चेहरे की खुशी गायब हो गयी। सुरेश गया तब ये लोग गांव गये हुए थे। सुरेश इनके यहां जब-तब जाया करता था।

"सुनकर हमें तो विश्वास ही न हुआ," राणेजी कुछ पल बाद बोले।

"आपको तो बड़ा दुःख हुआ होगा—पर भूलने की कोशिश की जाना चाहिए..."

संवेदना के लिए हमेशा काम में लाये जानेवाले शब्द... पर यह सांत्वना किसको

है ? मुझे, पंडित को नहीं। पंडित तो रागिनी के साथ दीगर विषय पर बातें किये जा रहा है । ये लोग पंडित को सांत्वना क्यों नहीं देते ? पिछली खुशी का सुनहरापन ढल चुका था—दर्द का काला पहाड़ उसके आगे खड़ा था ।

दर्द गाड़ा जा चुका है—नहीं-नहीं अभी भी जिंदा है । तरह-तरह के दुख-दर्द । कुछ पंडित जानता है और कुछ को नहीं । मेरा अपना दुख-दर्द जिसे और कोई नहीं जानता। जिसके साथ हिस्सा-बटाई हो ही नहीं सकती। अब सुरेश की मौत का दुख —इसका भार भी मुझे ही झेलना होगा। इसमें हिस्सेदार कौन है ? इस सवाल के साथ ही वह हड़बड़ा गयी। जो रेखाएं पुंछ गयी थीं वे फिर उभरने लगीं । दस साल पहले फेका हुआ जुआ—वह खेल— वे जीर्ण-शीर्ण पत्ते अभी भी जिंदगी में बने हुए हैं। इसी की राह जैसे वे देख रहे थे। वह कुछ याद नहीं करना चाहती थी— पर वह कुछ भूल ही न पायी थी । वह मकान और वे लोग। अब रिश्ता टूट चुका है। सुरेश उसी घर का था—वहां उसकी दादी थी—दादाजी थे—बुआ थी— चाचा थे.. । एक खयाल उभर आया— उसी घर में सुरेश मरा होता तो ? तो इस तरह अकेले दर्द न सहना पड़ता । जिंदगी में बनते-टूटते संबंध । कितनी अजीब बात है । संबंध टूटने लगे थे— पर तब भी सुरेश पैदा हुआ इसलिए सासजी खुश थीं । बाद में भी कुछ दिनों तो कुछ लोग आकर उसकी हालत पूछ ही जाया करते थे। पंडित से शादी हुई और सब कुछ खत्म हो गया । एक धागा टूटा दूसरा जुड़ा । पर सुरेश ? उसे इस तरह खींचकर लाने का अधिकार मुझे नहीं था । पुरानी जिंदगी से उसे उठाया और नयी जिंदगी में उसे जगह ही न थी । बिना घोंसले के फड़फड़ाता पंछी . . .

दरवाजे पर दस्तक हुई और सिंचू उठी । उसे लगा जैसे वह भूतकाल में ही घूम रही है । इस अंधेरे में पीछे-पीछे जा रहे हैं । कहां ? वह नहीं जानती । उसने अनजाने ही यह दिशा पकड़ ली थी— जिसे आज तक टालती आयी थी ।

दरवाजा खोलकर उसने सामने खड़े आदमी की ओर देखा—और खुद को संभालना मुश्किल हो गया ।

"आप—!" उसके मुंह से अस्पष्ट सी आवाज निकली । लगा जिंदगी इर्द-गिर्द घूम रही है—कहं ठहर गयी ?

"अंदर आजाऊं तो हर्ज तो नहीं है न ?"

वह जवाब न दे सकी । वह धीरे से अंदर की ओर मुड़ी और आने वाले विनायक से बोली—"बैठिए—"

उसने बत्ती जला दी—उस प्रकाश में दस साल पहले का चेहरा चमक गया । लगा अगर पंडित यहां होता तो कितना अच्छा होता—क्योंकर आया है यह आदमी यहां ? मेरे और पंडित के घर में ? वह कल्पना में पंडित के करीब हो ली । उसे ताकत महसूस हुई। ये कुछ कर पायेगा ?

अब पंडित आयेगा, मेरा पंडित...!

"कब गया वह—" भर्रायी आवाज उभरी ।

मतलब इसे पता चल गया है । कैसे ? पूछने की तबीयत हुई ।

"पंद्रह दिन हो गये । आपको कैसे पता चला ?"

"कुलकर्णीजी ने मुझे खत लिखा था ।" पंडित ने खत लिखा था ? मुझे बिना बताये ही ? क्यों ? किसलिए ? इस आदमी से मेरा संबंध ही क्या है ? उसे तो मैंने मिटा दिया है । पर पंडित ने उसे वैसे ही रहने दिया ? इसलिए तो दस साल बाद यह आदमी फिर सामने आ गया ।

"आने वाला नहीं था—पर मन नहीं माना—"

वाक्य सुनकर उसका गुस्सा जाता रहा । उन शब्दों की करुणा अंदर ही अंदर टकरा गयी । अब किसलिए इससे गुस्सा—गुस्सा तो अपने आदमी के लिए हुआ करता है ? यह तो कब का दूर चला गया है । पहले जो हुआ सो हुआ...अब उसका क्या ? अब तो मैं पंडित की हूं—यह आया है उसी तरह चला भी जाएगा...

"चाय लेंगे ?" कुछ बोलना चाहिए इसलिए वह पूछ बैठी ।

"नहीं—ज्यादा देर न बैठ पाऊंगा ! सिर्फ एक बात पूछने आया हूं—उसका फोटो है आपके पास ?"

"हां—" उसने धीमे से कहा ।

"मुझे चाहिए—अगर दे सकें तो—"

वह धीरे से उठी और अलमारी खोलकर सुरेश के चित्रों का पैकेट उसके हाथ में दे दिया ।

उसने एक फोटो बाहर निकाला और उसकी ओर देखते-देखते उसकी आंखों में पानी आ गया ।

उन आंसुओं को देखकर सिंधू परेशान हो उठी । ये आंसू किसके लिए ? दस साल तक अनदेखे सुरेश के लिए ? या बारह साल पहले जन्मे बच्चे के लिए ? वह उसी का तो था । मैं उसकी न थी, फिर भी वह इसी का था । इसीलिए ये आंसू जो पंडित की आंखों में कभी न आ सके—उन आंसुओं की ओर देखा तो कुहरा बन गया—और उस कुहरे में वह कहां जा रही है, वह खुद ही न समझ पा रही थी—वर्तमान की ओर या भूतकाल की ओर ? कुहरा गहरा रहा था और कहीं कदम न रखते हुए वह खड़ी रही थी । नीचे जमीन थी...ऊपर अंतराल—चारों ओर दिशाएं—पर सिंधू जैसे कहीं न थी । —अनु. : विजय बापट

दुबेजी पत्नी की बीमारी से परेशान थे, नौकर ने कहा—

"डॉक्टर सिन्हा को दिखा लें मालिक, मैं भी अपनी बीवी को उन्हें ही दिखा लाया था । पहली बार ५ रुपये लगते हैं फिर हर बार सिर्फ २ रुपया ।"

शाम को दुबेजी पत्नी को लेकर डॉ. सिन्हा के यहां पहुंचते ही बोले—"लीजिए डॉक्टर साहब, हम फिर आ गये ।"

बनारस का मायावी

मृत गौरैया को पुनर्जीवन
रूमाल से बेले की सुगंध

• कृष्णकांत

मायावी ने एक छोटी-सीं गौरैया पकड़ी और उसकी गरदन मरोड़ दी। गौरैया तड़फड़ायी और मर गयी। मरी हुई गौरैया मेरे सामने एक घंटे तक पड़ी रही ताकि मुझे विश्वास हो जाए कि वह बिलकुल मर चुकी है। इसमें संदेह के लिए कतई गुंजाइश नहीं कि गौरैया में कहीं कोई जीवित होने का चिह्न शेष हो। वह बिलकुल मुर्दा थी। उसकी आंखें अचल थीं, बदन में कोई हलचल नहीं थी, बल्कि उसका शरीर तनकर अकड़ चुका था।
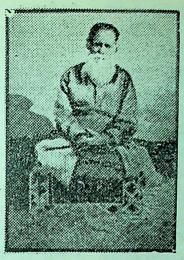
गौरैया को घंटे-भर इस निर्जीव हालत में रखने के बाद मायावी ने एक आतशी शीशा निकाला और सूर्य की किरणों को उसकी जड़ आंख पर केंद्रित कर दिया। कुछ मिनट तक गौरैया में कोई हलचल नहीं हुई। मायावी अपने विचित्र प्रयोग में लगा रहा। मायावी के विशाल नेत्र निश्चल थे और चेहरा गंभीर। अचानक ही मायावी के होंठ हिले और उसने एक मंत्र का पाठ किया। मंत्र-पाठ पूरा होते ही गौरैया की मुर्दा देह में कुछ हलचल होने लगी। फिर उसने कुछ झटके खाए जैसे कि वह होश में आ रही हो। कुछ मिनटों के अंदर ही वह अपने पंख फड़फड़ाने लगी और अपने पैरों पर खड़ी हो गयी। देखते-देखते ही वह उड़ने लगी और कमरे में इधर-उधर अपने बैठने के लिए नयी-नयी जगह खोजने लगी।

यह घटना मुझे इतनी विचित्र मालूम

हुई कि मैं एकदम आश्चर्यचकित हो अपने दिमाग को ठिकाने पर लाने की कोशिश करने लगा। मेरे चारों ओर जो व्यक्ति बैठे थे, वे वास्तविक थे या कल्पित, मुझे यह भी निश्चित कर लेने की जरूरत महसूस हुई।

इस गंभीर वातावरण में आधा घंटा और बीत गया। मैं उस गौरैया को, जो कुछ देर पहले मेरे सामने मुर्दा और निश्चल पड़ी थी, उड़ते-फुदकते और पंख फड़फड़ाते देखता हुआ अपने को भूला रहा। तभी मैंने देखा कि गौरैया फिर ढेर होकर मेरे सामने आ गिरी है। वह न तो हिल रही है और न उसके शरीर में ऐसा कोई दूसरा लक्षण है जिससे उसे जीवित माना जाए। मैंने गौर से देखा कि उसकी सांस भी बंद हो चुकी है और वह सचमुच ही मर चुकी है।

अब मैंने मौन तोड़ा और मायावी से पूछा, "क्या आप इसे कुछ देर और जीवित रख सकते हैं?"

"अभी तो इससे अधिक समय तक जीवित नहीं रख सकता" मायावी ने संक्षिप्त-सा उत्तर दिया।

यह वृत्तांत मरे हुए पक्षियों को कुछ समय के लिए पुनः जिंदा कर देने का है। इसका लेखक और प्रत्यक्षदर्शी था एक अंगरेज डॉ. पाल ब्रंटन, जो इस शती के दूसरे-तीसरे दशक में भारत आया था—उस भारत की खोज में जो जन-सामान्य और विदेशियों की नजर से ओझल और छिपा हुआ था। उसने यहां कई वर्षों तक सिद्धि-प्राप्त योगियों, ऋषि-मुनियों, साधु-संतों, भविष्यवक्ता-ज्योतिषियों, जादू-गरों और मायावियों की खोज की। उसने अपनी इन खोजों को 'डिस्कवरी ऑफ सीक्रेट इंडिया' नामक पुस्तक में लिपिबद्ध किया है।

डॉ. पाल ब्रंटन जब बंबई में था तब उसे एक व्यक्ति से पता चला कि बनारस में एक मायावी रहता है जिसे अद्भुत सिद्धियां प्राप्त हैं। बनारस के इस मायावी का नाम था विशुद्धानंद। डॉ. पाल इस मायावी की खोज करता हुआ बनारस आया। उसके पास मायावी का पूरा पता था। वह इस पते को तलाशता बनारस की तंग गलियों को छानता हुआ एक लंबी-चौड़ी साफ-सुथरी सड़क पर आया जहां दोनों ओर बड़े-बड़े आलीशान मकान खड़े थे। एक मकान के बड़े-से फाटक के खंभे पर एक छोटे-से पत्थर पर उसे 'विशुद्धानंद' नाम खुदा मिला। मकान में प्रवेश करने पर उसने एक कमरे के फर्श पर अर्धगोलाकार पंक्ति में बैठे हुए व्यक्तियों तथा उनसे कुछ दूरी पर एक सोफे पर बैठे भूरी दाढ़ीवाले वृद्ध को देखा। उनके तेजस्वी और सौम्य चेहरे तथा उनके उच्चासन को देख पाल ब्रंटन को यह समझने में देर नहीं लगी कि वही बनारस के मायावी विशुद्धानंद हैं, जिनकी खोज में वह भटकता हुआ यहां पहुंचा है।

डॉ. पाल ब्रंटन ने हाथ जोड़कर उन्हें

नमस्कार किया और अपना परिचय दिया, "मैं एक लेखक हूं और भारत का भ्रमण कर रहा हूं, क्योंकि मुझे भारतीय दर्शन और योगविद्या के अध्ययन की बड़ी लालसा है। अत: मैं आपसे कुछ जानना चाहता हूं।" डॉ. पाल ब्रंटन ने उन्हें यह भी बता दिया कि बंबई में उसकी भेंट उनके एक शिष्य से हो चुकी है और उसी के दिये पते एवं निर्देश पर वह मायावी तक पहुंच सका है। उनके शिष्य ने यह भी बता दिया है कि वे जन-सामान्य में ही नहीं, अजनबियों तक के सामने अपनी अनूठी विभूतियों का प्रदर्शन नहीं करते। लेकिन प्राचीन भारतीय ज्ञान-विज्ञान में अभिरुचि रखनेवाले उस विदेशी पर वे कृपा कर अपनी अनूठी विभूतियों का प्रदर्शन करें।

मायावी विशुद्धानंद ने तीखी नजर से पाल ब्रंटन को देखा। पाल ब्रंटन ने लिखा है, "वे मेरी ओर इस तरह घूर रहे थे जैसे मैं अनुवीक्षण यंत्र से देखा जाने-वाला कोई सूक्ष्म जंतु हूं। ढलती उम्र के विशुद्धानंद की आंखें बड़ी-बड़ी और कुछ धंसी हुई-सी थीं। नाक छोटी कटार-जैसी, दाढ़ी लंबी, भरी हुई और सफेद। कमर से ऊपर का शरीर नंगा था और कंधे पर जनेऊ पड़ा था। उनके चेहरे पर सौम्यता, गांभीर्य और एक विचित्र आकर्षण था। कुछ देर बाद विशुद्धानंद ने अपने एक शिष्य से बंगला में कुछ कहा। उस शिष्य ने मुझे बताया कि गवर्नमेंट कालेज के कविराज को मैं अपने साथ लाऊं,

पाल ब्रंटन

तभी कुछ बात-चीत हो सकेगी क्योंकि कविराज अंग्रेजी के अच्छे ज्ञाता हैं, साथ ही वे विशुद्धानंदजी के पुराने शिष्य भी हैं। वे दुभाषी बनें, तभी कुछ बात बने। तभी विशुद्धानंद बोले, 'कल उनको साथ ले आइए। चार बजे मैं आप दोनों की राह देखूंगा।' मैंने कविराज का पता लगाकर उन्हें किसी तरह राजी किया और दोनों दूसरे दिन चार बजे विशुद्धानंदजी के पास गये।"

उन्होंने पाल ब्रंटन को अपने आसन के निकट बैठाया और पूछा, "मेरी कोई करामात देखना चाहते हो?" "जी हां, आपका अत्यंत आभारी हूंगा।"

कविराज ने कहा, "अपना रूमाल दो,

रेशमी हो तो अच्छा रहेगा। उसमें तुम जैसी सुगंध पाना चाहोगे, पा सकोगे।" उस समय संयोग से मेरी जेब में रेशमी रूमाल था। मैंने वह विशुद्धानंदजी को दे दिया। उन्होंने एक छोटा-सा आतशी शीशा निकाला और कहा, "मैं इस शीशे से सूर्य की किरणों को केंद्रीभूत करना चाहता हूं, परंतु इस समय सूर्य की स्थिति और कमरे की छाया के कारण यह कार्य अच्छी तरह नहीं हो पाएगा। कोई आंगन में जाकर शीशे के जरिये सूर्य की किरणों को यहां तक पहुंचा दे तो सारी कठिनाई दूर हो सकती है।" ऐसा ही किया गया। उन्होंने कहा "आप जो भी सुगंध चाहेंगे वह हवा से ही पैदा की जा सकती है।"

मैंने कहा, "क्या आप बेले की सुगंध पैदा कर सकते हैं?"

उन्होंने अपने बायें हाथ में रूमाल लिया और उसके ऊपर आतशी शीशे से सूर्य की किरणें केंद्रीभूत कीं। दो क्षण तक सूर्य की किरणें रेशम पर थिरक उठीं। उन्होंने शीशा नीचे रख दिया और मुझे रूमाल वापस कर दिया। मैंने उसे नाक से लगाकर सूंघा तो बेले की भीनी गंध से तबीयत खिल उठी। मैंने रूमाल को बड़े गौर से देखा-परखा। उस पर कहीं भी नमी का कोई दाग-धब्बा नहीं था। और उस पर कहीं इत्र छिड़का गया हो— ऐसा भी नहीं था। मैंने हैरान हो उनकी ओर संदेह से ताका। वे मेरे मन की बात समझ गये और फिर से यह करामात दिखाने के लिए तैयार हो गये।

इस बार मैंने गुलाब की सुगंध मांगी। जब वे प्रयोग करने लगे तब मैंने उन्हें गौर से देखा। मैंने उनकी हर हरकत को बड़े चौकन्नेपन से देखा, लेकिन कहीं भी कोई शंका-संदेह की गुंजायश नहीं थी। उन्होंने प्रयोग खत्म करने के बाद रूमाल मेरी ओर बढ़ा दिया। उसके दूसरे किनारे से गुलाब की महक उठ रही थी।

तीसरी बार मैंने बनफशे की सुगंध मांगी और मुझे वह भी मिली।

वे उसी प्रकार धीर-गंभीर थे। चेहरे पर किसी भी तरह का उतार-चढ़ाव नहीं था, जैसे कि ये चीजें उनके लिए बिलकुल ही मामूली हों। अब वे स्वयं बोले, "इस बार मैं एक नयी सुगंध तुम्हें दूंगा जो तिब्बत में पाये जानेवाले एक फूल में होती है," उन्होंने वह भी पैदा कर दी।

मैं आश्चर्यचकित था। मैंने अपनी सारी बुद्धि लगा दी कि कहीं ये सुगंधियां उन्होंने अपने लबादे में तो नहीं छिपा रखी हैं! लेकिन नहीं, इतनी सुगंधियां लबादे में नहीं छिपायी जा सकतीं! फिर मैंने आतशी शीशे का भी निरीक्षण किया, लेकिन उसमें भी कुछ नहीं था। मैंने सोचा कि कहीं यह सम्मोहन विद्या की तो चाल नहीं है? लेकिन नहीं, ऐसा भी नहीं था क्योंकि वह रूमाल मैंने बाद में घर लौटकर और तीन लोगों को सुंघाया।

मुझे आश्चर्यचकित और शंकालु पाकर विशुद्धानंदजी ने मुझे दूसरे दिन दोपहर

में आने के लिये कहा और बताया कि वे मुझे मुर्दा पक्षी को फिर से जिंदा करके दिखलाएंगे और उन्होंने दूसरे दिन गौरैया को जिंदा करके दिखलाया भी।

कविराज ने मुझे बताया कि विशुद्धानंदजी सिद्धिप्राप्त मायावी हैं। वे ऐसे अनेक करिश्मे दिखा चुके हैं–जैसे हवा में से ताजे अंगूर पैदा करना, हवा में से मिठाइयां मंगाना, मुरझाये फूल को हाथ में लेकर हरा-भरा कर देना।

मैं इसके बाद विशुद्धानंदजी से कई बार मिला। एक बार मैंने उनसे पूछा, "आप ये करामातें कैसे कर दिखाते हैं।"

उन्होने बताया कि यह सौर विद्या का फल है। सौर विज्ञान कुछ निगूढ़ रहस्यों का संग्रह है। इस सौर विज्ञान का अध्ययन पश्चिम के किसी भी भौतिक विज्ञान की भांति किया जा सकता है। इसके लिए किसी योग, ध्यान या समाधि और सिद्धि की आवश्यकता नहीं है, बल्कि प्रयोग और अभ्यास की आवश्यकता है। सौर विज्ञान का संबंध विद्युत-शक्ति एवं आकर्षण-शक्ति से है। सूर्य-किरणों में कुछ प्राणद शक्तियां मिली होती हैं। यदि इन्हें अलग करके इकट्ठा करना आ जाए तो इन करिश्मों को किया जा सकता है। सूर्य-किरणों में कुछ आकाशीय शक्तियां भी निहित होती हैं। इन शक्तियों की जानकारी और इन्हें अपने वश में कर लेने की क्षमता पैदा होने पर ये सारे जादू-जैसे लगनेवाले खेल किये जा सकते हैं।

कविराज ने मुझे विशुद्धानंदजी की प्रयोगशाला भी दिखायी। प्रयोगशाला-भवन रूप-रंग में किसी यूरोपीय मकान से मिलता-जुलता था। वह एक नये ढंग से बना कई मंजिला भवन था। दीवारें पक्की ईंटों की थीं जिनमें खिड़कियों के स्थान पर बड़े-बड़े खिड़कीनुमा छेद थे। इन पर बड़े-बड़े कांच लगते थे। लेकिन जैसे कांच उन्हें चाहिए थे, वे कहीं नहीं मिल पा रहे थे। ये कांच एक विशेष प्रकार के होते थे जिनकी आवश्यकता गवेषणा के समय सूर्य की किरणों को लाल, नीले, हरे, पीले रंग एवं स्फटिक कांचों में से प्रतिबिंबित करने के लिए थी। कविराज ने कहा कि इस प्रयोगशाला के लिए जिस प्रकार के कांचों की आवश्यकता है, वैसे कांच हिंदुस्तान भर के किसी भी कारखाने में तैयार नहीं हो पा रहे हैं। अगर इंगलैंड में ऐसे कांच तैयार हो सकें तो मैं तैयार करा दूं। ये कांच हवा के बुलबुलों से एकदम खाली हों, रंगा हुआ शीशा एकदम पारदर्शी हो और इनकी लंबाई १२ फुट, चौड़ाई ८ फुट और मोटाई एक-चौथाई अंगुल हो। इन शर्तों का कड़ाई के साथ पालन होना चाहिए।"

डॉ. पाल ब्रंटन ने फुटनोट में लिखा है कि उसने इंगलैंड की सबसे बड़ी कांच फैक्ट्री को यह ब्यौरा लिख भेजा, लेकिन वह इस काम के लिए तैयार नहीं हुई।

—ए-१/२४२ ए, लारेंस रोड,
नयी दिल्ली-११००३५
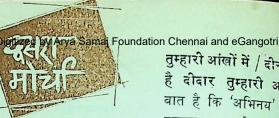
नशा पत्रिका निकालने का

पत्रिका निकालने की धुन पता नहीं, आप में से किसी को कभी लगी है या नहीं। भगवान न करे, यह रोग आपको लगे क्योंकि इसका एक ही इलाज होता है --'घर फूंक तमाशा'। यह तमाशा ऐसी चीज है जिसे जब तक 'पत्रिका निकाल-रोगी' खुद नहीं देखता, उसे चैन नहीं आता। मुद्रित नहीं निकाल सकता तो साइक्लोस्टाइल्ड निकालता है, बड़े आकार में नहीं निकाल सकता तो चौपतिया निकालता है। ऐसा नहीं कि इन पत्रिकाओं का कोई महत्त्व नहीं होता। होता है, अगर उसमें रचनात्मक दृष्टि पर विशेष जोर दिया जाए। एक अंतर्देशीय नाट्य पत्रिका 'अभिनय' ४५२६, अमीरचंद मार्ग, दिल्ली, ११०००६ से निकलती है। एक अंतर्देशीय पत्र (जिसका आकार सरकार की तरफ से निर्धारित है और जिसके अंदर कुछ न रखने की हिदायत रहती है) के कलेवर में रंगकर्म से जुड़े हुए किसी गंभीर मुद्दे पर बहस, विभिन्न नगरों के मंचन-समाचार, गोष्ठी-विवरण, रिहर्सलों के समाचार, रंग-समीक्षाएं . . . देखकर दंग हो जाने को मन करता है: **"जाने क्या-क्या है छुपा हुआ सरकार तुम्हारी आंखों में / दीनो दुनिया दोनों का है दीदार तुम्हारी आंखों में"**--अच्छी बात है कि 'अभिनय' का यह सुष्ठु रूप रचनात्मकता को अपनी दृष्टि बनाये है।

एक और साइक्लोस्टाइल पत्र मिला है 'युवा आकांक्षा'। उसमें नवलेखन पर एक संक्षिप्त लेख है। उसका एक अंश बानगी के लिए दिया जा रहा है :--"सिद्धेश, श्रवणकुमार, प्रणवकुमार वंद्योपाध्याय, गोविंद मिश्र, से. रा. यात्री या नरेंद्र कोहली आदि लेखकों की रचनाएं मैं पिछले दसेक वर्षों से पढ़ रहा हूं और आज इस नतीजे पर पहुंचा हूं कि वे लेखक नहीं हैं।" भाई-जान, दस साल का समय फालतू गंवाने-वाले समीक्षक की अक्ल पर विश्वास करने का मन नहीं होता। ऐसे निर्णय थोड़ा जल्दी ले लेने चाहिए!

देवता का दरवाजा धर्म और मधुपर्क

अभी-अभी एक परिपत्र (छपा हुआ) आया है। किसी स्वामीजी का है। धर्म चर्चा है परिपत्र में। प्रायः रूढ़ अर्थों में हमारे यहां धर्म अंधा हो चुका है। अभी अखबार की ताजा खबर है कि महाराष्ट्र के एक मंत्री को अनुच्च वर्ण होने के कारण मंदिर में देवता को अपनी श्रद्धा समर्पित करने की इजाजत वहां के पुजारियों ने देने से इनकार कर दिया।

लेकिन जिस परिपत्र की बात हमने अभी की, उसमें एक स्वामीजी ने मधुपर्क

पर अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा है कि सच्चा मधुपर्क (जो विवाह के अवसर पर वर-वधू को आस्वाद के लिए दिया जाता है) हिंसा के बिना हो ही नहीं सकता। शहद, दही और घी को मिलाकर बनाया गया मधुपर्क तो ठीक, लेकिन शास्त्रीयता का पोंगापंथ इतने मधुपर्क से संतुष्ट नहीं होता, हिंसा कराता है। इसीलिए ऐसे मधुपर्क को तिरस्कृत कर उन्होंने कहा है कि ऐसे मधुपर्क के कर्मकांड और अशुद्ध मंत्रों में बिंधे विवाह को तिरस्कृत कर चाहिए यह कि 'वर को कन्या और कन्या को वर के गले में अपने अभिभावकों और गुरुओं के सामने फूल माला डालनी चाहिए। यही विवाह मनुस्मृति के अध्याय ३, श्लोक ३० में लिखा हुआ है। इसी विवाह को सर्वोत्तम विवाह मानना धर्मसंगत है!'

चमन में दीदादरी

हुर्रा! 'नेशनल गैलरी ऑव माडर्न आर्ट' ने अंततोगत्वा अपने गलियारे फोटोग्राफी के लिए भी खोल दिये। अभी पिछले दिनों विश्वप्रसिद्ध फोटोकार हेनरी कार्तिए ब्रेसां के छायाचित्रों की एक प्रदर्शनी आई. बी. एम. के सहयोग से हुई। जो भी ब्रेसां के नाम पर प्रदर्शित था, नाकाफी था। जगह की तंगी दर्शक को खलती थी, लेकिन यही क्या कम है कि फोटोग्राफी को नेशनल गैलरी ने कला के दायरे में माना तो! इस शुरूआत के लिए बधाई!

ब्रेसां उन फोटोकारों में हैं जिन्होंने संसार के अनेक (लगभग हर देश में) फोटोकारों पर अपना प्रभाव छोड़ा है। कहते हैं कि गालिब की तरह ब्रेसां का भी है अंदाजे बया और, लेकिन हिंदुस्तान के चमन में भी नरगिस अपनी बेनूरी को रो रही है। ब्रेसां की चित्र-प्रदर्शनी के लिए अगर हम डॉ. सिहारे को बधाई देना चाहते हैं तो यह विश्वास भी देना चाहते हैं कि यदि उन्होंने भारतीय फोटो-कला का एक भी अनूठा प्रदर्शन कराया (आखिर भारतीय फोटोग्राफी के भीष्म-पितामह श्रीभारद्वाज, ए. एल. सैयद, टी. काशीनाथ के साथ वामन ठाकरे, रघुराय, एस. पाल, दयाराम चावड़ा, मित्तर बेदी, किशोर पारेख ... एकसाथ इन सबका श्रेष्ठ छायाकर्म समूह-प्रदर्शन में अभी आया ही कहां!) तो उन्हें कला-जगत का बड़ा साधुवाद मिलेगा!

सम्पादक की डाक से

"आपके विचार पढ़कर आपकी निष्पक्षता पर विश्वास हो गया है। लेखक—महिला हो या पुरुष—लेखक है, सही कहा है। आपकी इस बात पर भी अविश्वास नहीं होता कि अधिकांश महिलाएं शगल के लिए लेखन करती हैं! आपको बधाई; पेश है:

उनकी कथनी और करनी में यदि अंतर नहीं है। हमें तब भरोसा है, हमारे दिल में छेद नहीं है।" ●

सोंधी मिट्टी में खिला गुलाब

• वियोगी हरि

जामिया मिलिया का सिर्फ नाम ही मैंने सुना था, जब मैं इलाहाबाद में था। दिल्ली आया तो दो-तीन मित्रों ने इस राष्ट्रीय संस्था का परिचय देते हुए उसके प्राण डॉ. जाकिर हुसेन साहब के बारे में जब कहा, तो उनसे मिलने के लिए मैं अधीर हो उठा। बताया गया कि जामिया मिलिया को किन मुसीबतों में जाकिर साहब ने और उनके साथियों ने फकीरी का जीवन अपनाकर अलीगढ़ में चलाया था, और जब उसे दिल्ली में लाया गया, तब भी जरूरी साधनों का बहुत-कुछ अभाव रहा।

देवदास गांधी मुझे एक दिन जामिया मिलिया दिखाने के बाद जाकिर साहब के मकान पर ले गये। बड़े प्रेम से हमें उन्होंने बैठाया और चाय के साथ गरम-गरम पकौड़ियां भी खिलायीं। चर्चा के दौरान जबकि जामिया मिलिया को अलीगढ़ में चलाया गया था तबके कई किस्से उन्होंने सुनाये। बात करने का ढंग बड़ा साफ और मिठास से भरा हमने पाया। मैं उनकी तरफ उसी दिन खिंच गया। उन्होंने कबीर साहब और दूसरे संत-महात्माओं के दोहे भी सुनाये। और भी कितने ही प्रसंग हिंदुओं और मुसलमानों के स्वाभाविक मेल-मिलाप के सुनाये। फिर आह भरकर बोले कि आज इस सियासत ने उन बातों पर जैसे पानी फेर दिया है।

दो या तीन साल के बाद देवदासजी ही के साथ जाकिर साहब से मिलने का फिर सुयोग मिला था। उस दिन खान साहब अब्दुल गफ्फार खां भी वहीं बैठे डॉक्टर साहब के साथ बात कर रहे थे। बल्कि समझा रहे थे या कहना चाहिए जैसे किसी स्टुडेंट को बड़ी मामूली-सी जानकारी किसी जाने-माने मुल्क के बारे में दे रहे थे। जाकिर साहब बड़ी शांति से सुन रहे थे उनकी बातों को। उनके चेहरे पर से ऐसा नहीं लगता था कि जो जानकारी उनको दी जा रही थी उससे वे वाकिफ थे। देवदासजी मुसकरा रहे थे खान साहब के भोलेपन पर कि जाकिर साहब-जैसे ऊंचे दर्जे के विद्वान को यह क्या बच्चों की जैसी बातें खां साहब बता रहे हैं।

गांधीजी जिन दिनों हिंदुस्तानी जबान की पैरवी कर रहे थे और हिंदी और उर्दू

को मिले-जुले रूप में, साथ ही दोनों लिपियों को सीखने पर जोर दे रहे थे, तब एक दिन जाकिर साहब के साथ मैंने भी इसके बारे में चर्चा की थी। गांधीजी के प्रति पूरी श्रद्धा-भक्ति होने के बावजूद मैं हिंदी का पक्षपाती था। इसका यह अर्थ नहीं था कि उर्दू-फारसी के शब्दों को हिंदी में से निकाल दिया जाए। स्वाभाविक रूप में जो शब्द प्रयोग में आते रहे हैं उनको कौन अलग कर देने की बात कहेगा। तब जाकिर साहब ने इस चर्चा के दौरान एक बड़े मार्के की बात यह कही कि 'गंगा और जमना का संगम इलाहाबाद में अपने आप हुआ है। किसी ने दोनों नदियों के इस मिलाप के लिए कोशिश नहीं की है। नहरें काट-काटकर दोनों का मिलाना सही मालूम नहीं देता।' यह भी कहा कि 'सियासी मकसद को सामने रखकर दोनों भाषाओं को मिलाने की अगर कोशिश की जाएगी, तो जबान का वह रूप सहज नहीं होगा। भाषा में कोई भद्दी बनावट नहीं आनी चाहिए; फिर कहने लगे कि उर्दू की कविताओं में हिंदी के और खासकर ब्रजभाषा के शब्दों का खासा प्रयोग होता था पर, अब वह बात जा रही है। मेरे कई दोस्त 'मुल्कों में' यह न लिखकर 'मुमालिक में' लिखते हैं।' हिंदीवाले तो जान में या अनजान में उर्दू के कितने ही शब्दों का प्रयोग करते हैं, पर उर्दूवाले हिंदी के शब्दों को नहीं ले रहे हैं। यह अच्छी बात नहीं है।"
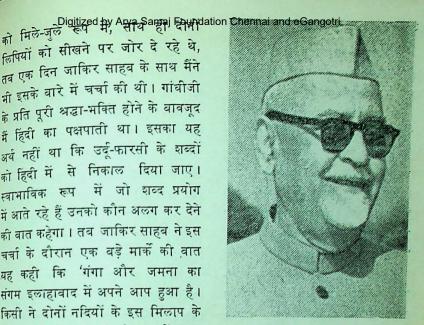
डॉ. जाकिर हुसेन

एक दिन मेरे एक मित्र ने बातचीत के सिलसिले में जाकिर साहब के सामने कहा कि उन्होंने उस बात को 'परसों के लिए' छोड़ दिया है। जाकिर साहब ने उसी वक्त टोका और कहा कि परसों के लिए गलत है, सही है 'परसों पर'। उस्ताद तो वे थे ही, क्या गलत है और क्या सही है इस पर उनका हमेशा ध्यान रहा करता था।

जन्मजात शिक्षक

जाकिर साहब को जब गवर्नर बना दिया गया और बाद में राष्ट्रपति, तब एक दिन प्रोफेसर मुजीब साहब ने कहा कि ये राजसी कुरसियां उनको अजीब-सी लगती होंगी, क्योंकि अपनी जिंदगी का बहुत

बड़ा हिस्सा तालीम को ही उन्होंने दिया।''

राष्ट्रपति का आसन उन्होंने सादगी और सच्चाई और प्रेम से सुशोभित किया। मगर काल पर किसका बस?

राष्ट्रपति-भवन शोक में डूब गया। बहिन अमतुस्सलाम के पास बैठा हुआ उस दिन मैं उस दृश्य को देख रहा था, जब एक तरफ तो गीता का पाठ हो रहा था और दूसरी तरफ कुरान की आयतें पढ़ी जा रही थीं। सारे मुल्क ने श्रद्धांजलि चढ़ायी उनकी याद में। मैंने भी अपने दो फूल नीचे के शब्दों में अर्पित किये :

"शायद थक गया था वह मंजिल-पर-मंजिल पार करते हुए। सो, यकायक चल दिया उसी मिट्टी में रम जाने को, जिसमें से कि वह उठा था, और जिस पर हंस-हंस के खेला था।

पाक जाना और पाक माना था उस मिट्टी को उसने, और बड़े प्यार से उसे सरमाथे चढ़ाया था।

उस सोंधी मिट्टी में उसके जीवन का वह गुलाब खिल उठा, जिसकी खुशबू हर दिल और दिमाग में भर गयी थी। दिल उसका साफ था। वह दरिया था प्यार और सदाकत से लबरेज।

दिमाग की सारी ही खिड़कियां खोल रखी थीं उसने कि हर तरफ से तरह-तरह का ज्ञान आने में कोई रूकावट न हो—कहीं भी परदादारी नहीं थी।

इल्म की दौलत जितनी भी उसने कमाई थी, उससे कहीं ज्यादा दोनों हाथों सब को दुलारता रहा।

उसके रहनुमा ने तालीम का एक नया नकशा बनाकर उसे सौंपा था बड़े भरोसे के साथ कि वह उसे मुल्क के सामने रखे और दिखाये कि तालीम महज दिमागी खिलवाड़ नहीं है, उसका गहरा ताल्लुक तो जीवन के हर पहलू और हर मसले और उसके हल के साथ है। उसने माना था कि सारा ही देश उसका अपना घर है।

वह खुदापरस्त था, क्योंकि वह सच्चा इनसान-परस्त था। दिल को दिल से जोड़ना ही उसने सीखा था।

अपने रहनुमा का दिखाया जो तामीरी रास्ता उसने अख्तयार किया था उसपर आखिरी सांस तक वह दृढ़ता के साथ चलता रहा।

उसके चेहरे पर अकसर उदासी छा जाती थी, जब वह देखता था कि लोग हटते जा रहे हैं उस अकंटक रास्ते पर से, और भटक रहे हैं बयावान में।

जब भी और जहां भी मौका आता, वह कहते थकता नहीं था कि क्या तो सही रास्ता है और क्या गलत।

लगभग आधी सदी से हमारे राष्ट्र में रोशनी फैलानेवाला वह चिराग यकायक गुल हो गया, लेकिन साथ ही प्रकाश की एक ऐसी किरन छोड़ गया है कि जिसके सहारे सच्चाई और प्रेम से भरी हर सिखावन पढ़ी जाए और उस पर चला जाये।

—एफ १३/२, माडल टाउन, दिल्ली

अफसर: न सरकारी मकान न सरकारी फोन

• सुरेश गुप्त

यूरोप और अमरीका की तरह कनाडा में भी फैशन का जोर है। फैशन की एक चलती हुई रफ्तार अचानक रुक जाती है और एक नये फैशन में बदल जाती है। ओटावा हो, मांट्रियल या ओंटारिओ; लगातार घूमते हुए सड़कों पर मुझे 'हॉट पैंट' की बहार मिली—अधिकाधिक अनावृत टांगें और जांघें। इन्हें देखकर अकसर आंखों को सुख ही मिलता रहा लेकिन समाचारपत्रों में हॉट पैंट को लेकर जो चर्चाएं पढ़ने को मिलीं, वे चौंका देनेवाली थीं।

सुडौल टांगें और दफ्तरवाली बीवी

एक लड़की ने लिखा था—'मेरी टांगें इतनी पतली हैं कि हॉट पैंट में बिलकुल हड्डी के खड़े हुए ढांचे की तरह लगती

अपनी परंपरागत वेशभूषा में एक 'स्टोनी इंडियन' कबीले का मुखिया
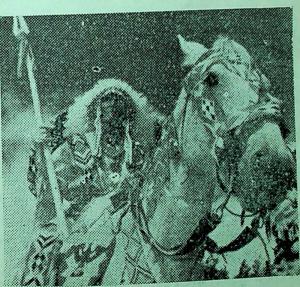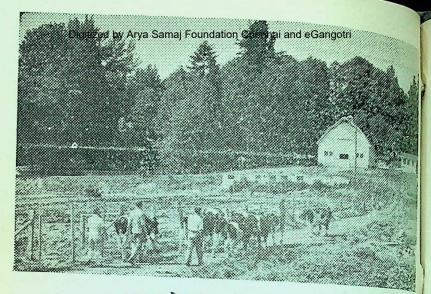
कनाडा के एक फार्महाउस का दृश्य

हैं।' लड़की का दर्द यह था कि वह अपनी टांगें किस तरह सुडौल बनाये ताकि हॉट पैंट पहन सके। इस दर्द का जवाब उसी अखबार में एक डॉक्टर ने दिया था—'टांगों की वर्जिश कीजिए।' लगता है कि वहां के अखबारों को इसी तरह की सरगरमियां पसंद हैं।

सड़कों, बागों और पबों या रेस्तराओं में ही हॉट पैंट के नजारे नहीं हैं, बल्कि दफ्तरों में भी उनकी बहार है। टाइपिस्ट से लेकर निजी और व्यक्तिगत सचिव तक महिलाएं। एक मित्र ने मजेदार लहजे में बताया —धीरे-धीरे निजी महिला सचिव का दर्जा 'दफ्तर-वाली बीवी' के रूप में बदलता जा रहा है। आश्चर्य यही है कि दफ्तर के काम में चुस्ती बराबर बनी हुई है और हर कोई पूरी ईमानदारी से काम करता है।

फैशन की चर्चा चली है तो यह बता देना जरूरी है कि वहां स्त्री और पुरुषों के बीच का अंतर इतना मिटता जा रहा है कि अचानक पहचानना कठिन है। स्त्री हो या पुरुष, सब कमीज और पतलून पहनते हैं। अब तो पुरुष भी खासे बाल बढ़ाने लगे हैं। इसी सिलसिले में मजेदार बात यह है कि लड़कियों ने चोलियां पहनना छोड़ दिया है और 'नारी-स्वतंत्रता' के नाम पर अपने सौंदर्य को उन्होंने ताक पर रख दिया है। पुरुष अपनी दाढ़ी और मूंछ लंबी रखने लगे हैं। मुझे लगा कि पौरुष को बचाने का शायद यही एक रास्ता उनके पास रह गया है।

: ७ :

ओटावा में यातायात-व्यवस्था को
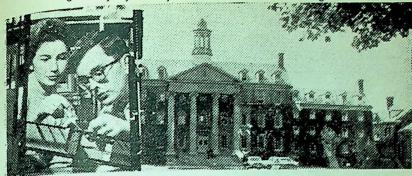
किंग्स कालेज यूनीवर्सिटी : हैलीफॉक्स में उच्च शिक्षा का सबसे पुराना केंद्र

मैंने बहुत ध्यान से देखा। सड़कें बहुत अच्छी तरह रखी जाती हैं। यातायात के नियमों का अनुशासन से पालन होता है।

सड़क पहले पैदल की !

कार-चालक बहुत सावधान रहते हैं। मैंने एक दिलचस्प बात यह नोट की कि यदि सड़क पर कोई पैदल आ जाए तो ड्राइवर तुरंत ही ब्रेक लगा देते हैं, भले ही पैदल उस वक्त गलत हो ! ऐसा लगता है, यह उनकी आदत बन गयी है।

यूरोप में पैदल चलनेवाले यदि सिगनल न होने पर कार के रास्ते में आ जाएं तो ड्राइवर नहीं रुकता, भले ही कोई गंभीर दुर्घटना हो जाए। विशेषकर, जरमनी में ऐसा ही नियम है।

: ८ :

मर्दुमशुमारी का दायित्व वहां 'डोमिनियन ब्यूरो ऑव स्टेटिस्टिक्स' पर है। ब्यूरो डाक द्वारा प्रश्नावली भेजता है। घर-घर जाकर वहां पूछताछ नहीं की जाती। मैंने भी प्रश्नावली देखी। काफी लंबी थी वह ! कुछ प्रश्नों का नागरिकों ने बहुत प्रबल विरोध किया। प्रश्न शिक्षा, धर्म, रोजगार, आय, भाषा, मकान, घर में प्रयुक्त होनेवाले उपकरण, मकान में ठंडे और गरम पानी की व्यवस्था, फ्लश-शौच तथा माता-पिता के जन्म-स्थान आदि के बारे में थे।

परिवार का मुखिया पुरुष क्यों ?

नारी-मुक्ति-आंदोलन वालों ने कहा कि पुरुषों को ही परिवार का मुखिया क्यों माना गया है ? कुछ की आपत्ति थी कि धर्म हमारा व्यक्तिगत मामला है। कुछ महिलाओं ने एतराज किया कि विवाह-तिथि और पहले बच्चे की जन्म-तिथि के बारे में क्यों पूछा गया। बहुत से नागरिकों ने प्रश्नावली भरकर भेजी ही नहीं, हालांकि कानून के अनुसार ऐसा करना दंडनीय अपराध है; पर आज तक किसी को दंड नहीं दिया गया है।

: ९ :

कनाडावासी प्रायः बहुत शिष्ट और

दूसरे की सहायता करने को तत्पर रहते हैं। मुझे ये दो वाक्य प्रायः ही सुननें को मिले––"मैं आपकी कोई मदद कर सकता हूं क्या ? आपका हार्दिक स्वागत है।"

शिष्टता और दूसरे की बीवी का पीछा

किसी विदेशी को ठीक-ठीक पहुंचाने के लिए लोग प्रायः साथ चले जाते हैं। जरूरी काम भी छोड़ देंगे वे उस वक्त। ठीक जगह पर पहुंचाकर वे फिर पूछेंगे, "और क्या मदद कर सकता हूं मैं ?" धन्यवाद देने पर वे एक सलज्ज मुसकराहट बिखेरेंगे और जल्दी-जल्दी कदम लौटा लेंगे। मजाक खूब करते हैं लोग।

हम पब्लिक सर्विस कमीशन के अधिकारियों से विचार-विमर्श के लिए गये। शानदार भवन ! जैसे, कंकरीट और रंगों से बुना किसी शिल्पी का लुभावना सपन ! भवन के किसी ऊपरी तल्ले पर हमारी एक वरिष्ठ अधिकारी से उसके कार्यालय में बातचीत हो रही थी। एकाएक उसने कहा, "आप मेरी बातों से उकता गये हों तो उस खिड़की से झांक भर लें।"

और, जैसे हमारी आंखें बंध गयी हों। पेड़ों की हरियाली पर जैसे वह कमरा टिका हो ! उस हरीतिमा से छनकर जब हमारी नजरें नीचे पहुंची तब देखा कि एक शानदार होटल के तरण-ताल के किनारे सुंदरियां धूप-स्नान कर रही हैं।

एक अन्य अधिकारी से मैंने पूछा, "छुट्टी के दिन आप क्या करते हैं ?"

"देखिए, बहुत सारा काम करने को होता है। कार धोना, बगीचे की सफाई, लॉन की काट-छांट, बच्चों की ठुकाई, और सबसे बड़ा काम यह कि दूसरे की बीवी का पीछा !" इस जिंदादिल अधिकारी की उम्र ६० से कम नहीं रही होगी। सामान्यतया मजाक सेक्स के आसपास ही होता है और लोग अश्लील गालियां देने तक में नहीं हिचकते !

विज्ञापनों के लटके

डिपार्टमेंटल स्टोरों में खाद्य पदार्थों की विविधता रहती है। ओटावा, टोरंटो तथा वैंकूवर में, जहां काफी भारतीय रहते हैं, कुछ दूकानों में सारे भारतीय मसाले तथा दालें मिल जाती हैं। हर चीज पर मूल्य छपा है। अलग-अलग दूकानों में एक ही चीज के दामों में बहुत अंतर है।

विज्ञापनों से ग्राहकों को खूब लुभाया जाता है। कुछ नमूने देखिए––'मूविंग सेल्स', 'रिडक्शन सेल्स', 'हॉट सेल ऑव हॉट पैंट्स', 'बारगेन सेल्स', 'क्लोजिंग सेल्स', 'समर सेल्स', आदि। लाटरी-कूपनों, यूरोप की मुफ्त यात्रा, कार आदि के रूप में पुरस्कारों का लालच भारी भीड़ें आकर्षित करता है। ऐसा लगता है, निर्माता-कंपनियां अगर विज्ञापनों के ऐसे लटके इस्तेमाल न करें तो वे कोई माल ही नहीं बेच पाएंगी।

: १० :

दफ्तरों में फूल और पौधे रखने का रिवाज है। कोई दरवाजा नहीं, सिर्फ रूम-डिवाइडर और स्क्रीन ! दीवार तक बिछे

मॉन्ट्रियल के रेस्त्रां की विशेषता : बियर के दौर और माहौल की रंगीनी
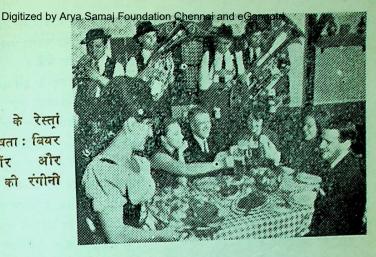
गलीचे और फूल आम दफ्तरों से अलग वातावरण उत्पन्न करते हैं। खुले कमरे में काम करने से कोई प्रायवेसी नहीं रह जाती, पता रहता है कि कोई बेकार तो नहीं बैठा।

न सरकारी फोन, न मकान

दफ्तर के समय में चौकीदारों की व्यवस्था नहीं है। कोई भी आ-जा सकता है। सिर्फ छुट्टी वाले दिन या दफ्तर के समय के बाद वे ही अधिकारी या कर्मचारी अंदर जा सकते हैं जिनके पास परिचय-पत्र हों।

दफ्तर का समय समाप्त होने पर सीट से उठ जाने का अधिकारी तथा कर्मचारी बहुत सख्ती से पालन करते हैं। आदतन देर से आनेवालों के वेतन में से उतने घंटों का वेतन काट लिया जाता है।

सरकारी दफ्तरों में दीवारों पर टांगने के लिए सरकार की ओर से चित्रों आदि का प्रबंध नहीं किया जाता है। अधिकारी अपने परिवार के सदस्यों या मित्रों के चित्र लगा सकते हैं।

सरकार कर्मचारियों को मकान या टेलिफोन की सुविधा नहीं देती। स्टाफ कार का कम-से-कम उपयोग होता है। यदि मीटिंग का स्थान कहीं करीब ही हो, तो अधिकारी टहलते हुए ही पहुंच जाते हैं। दूर जाने के लिए उन्हें टैक्सी के लिए वाउचर दे दिये जाते हैं। गंतव्य पर अधिकारी वाउचर पर अपने हस्ताक्षर कर देता है, और ड्राइवर दफ्तर में आकर किराया ले लेता है।

वैसे तो कनाडा में एक स्वायत्त संस्था 'केनेडियन ब्राडकॉस्टिंग कार्पोरेशन' भी है लेकिन अधिक संख्या निजी दूर-दर्शन स्टेशनों की है। निजी केंद्रों को कार्पोरेशन से अपने कार्यक्रमों की स्वीकृति नहीं लेनी होती केवल यह जरूरी है कि वे कार्पोरेशन के कुछ कार्यक्रम प्रसारित करें, लेकिन ऐसे प्रसारणों के लिए कार्पोरेशन उन्हें फीस

देता है । टी वी या रेडियो सेट के लिए कोई फीस नहीं ली जाती है ।

राष्ट्रीय ध्वज पोशाक के रूप में

कनाडा में टेलीफोन-व्यवस्था एक प्रायवेट कंपनी के पास है । आर्डर देने के कुछ ही घंटों में टेलीफोन लग जाता है । मासिक किराया (मनमानी स्थानीय कॉल का किराया जोड़कर) केवल ४० रुपये है ! कनाडा और अमरीका के अधिकांश शहर तथा कनाडा और कुछ यूरोपीय शहरों के बीच सीधी टेलिफोन-सेवा (डायरेक्ट डाइलिंग सर्विस) है ।

कनाडा के प्रांतों के अपने ध्वज तथा संविधान हैं । कुछ प्रांतों में मैंने देखा कि प्रांतीय सरकारी भवनों पर उन प्रांतों के विशिष्ट ध्वज तथा राष्ट्रीय ध्वज साथ-साथ फहरा रहे हैं । राष्ट्रीय ध्वज का अनादर रोकने के लिए कोई कानून नहीं है । मैंने अनेक युवक-युवतियों को राष्ट्रीय ध्वज से बने कपड़े पहने देखा । कई घरों में राष्ट्रीय ध्वज से बने परदे भी देखे ।

अदालत में स्ट्रिपटीज !

अदालतों में काम-काज का तरीका काफी क्रांतिकारी है । एक स्ट्रिपटीज नर्तकी पर आरोप था कि नाइट क्लब में नृत्य करते-करते वह बिलकुल नंगी हो गयी थी ।

नर्तकी ने इसका प्रतिवाद किया और न्यायाधीश के सम्मुख निवेदन किया कि जो नृत्य मैंने प्रस्तुत किया था उसे यहां प्रस्तुत करने की आज्ञा दी जाए । न्यायाधीश की आज्ञा मिलने पर नर्तकी ने नृत्य प्रस्तुत किया । नृत्य के दौरान उसने सारे वस्त्र त्वचा के रंग का पतला पारदर्शी अधोवस्त्र छोड़कर, उतार फेंके ।

समाचारपत्रों में इस नृत्य तथा निर्णय की प्रमुखता से चर्चा हुई । न्यायाधीश ने नर्तकी को आरोपमुक्त कर दिया था।

ओढ़ी संस्कृति : भौतिकता का भटकाव

एक तरह से कनाडा भौतिक समृद्धि के चरमोत्कर्ष पर है, लेकिन किसी देश की समृद्ध सांस्कृतिक परंपराएं ही उसे सर्वतोमुखी उत्कर्ष की ओर ले जाती हैं। कनाडा इस संबंध में बहुत दुर्भाग्यशाली है।

कनाडा के राष्ट्राध्यक्ष को गवर्नर जनरल कहा जाता है । इसे ब्रिटेन की महारानी की ओर से नियुक्ति-पत्र दिया जाता है, यद्यपि नाम कनाडा की सरकार सुझाती है । कुछ लोग इस स्थिति से क्षुब्ध हैं। वे प्रजातंत्र स्थापित करना चाहते हैं।

दो राष्ट्रभाषाएं हैं—अंगरेजी और फ्रेंच । केवल दस या पंद्रह प्रतिशत जनसंख्या फ्रेंच बोलती है । ज्यादा फ्रेंचभाषी क्यूबेक प्रांत में हैं। संघीय सरकार के सारे आदेश तथा प्रकाशन दोनों भाषाओं में होते हैं। किसी कर्मचारी को कोई एक भाषा नहीं आती है, तो प्रशिक्षण दिया जाता है।

कनाडावासियों पर अमरीकी संस्कृति की छाप साफ है। वे अंगरेजी के उच्चारण तक में अमरीकी नकल करते हैं। अमरीका, फ्रांस, इंगलैंड—ये तीन देश हैं जिनकी कमियों या विशिष्टताओं से कनाडा की संस्कृति उद्भूत हुई है । अब एक अन्य

संस्कृति की ओर इनका रुझान हुआ है, भारतीय संस्कृति की ओर।

कनाडा में बहुत से भारतीय बस गये हैं। इनके कारण जहां भारतीय शिल्प, दस्तकारी तथा अन्य कलाएं लोकप्रिय हुई हैं, वहां भारतीय विचार, दर्शन तथा धर्म की ओर भी कनाडा का शिक्षित संप्रदाय आकृष्ट हुआ है।

'हरे कृष्ण, हरे राम' संप्रदाय कनाडा में बहुत लोकप्रिय है। गेरुए वस्त्र पहने, सर मुडाये, ढोल तथा मंजीरे बजाती इनकी मंडली प्रायः हर नगर में देखने को मिल जाती है। कृष्ण के प्रति इस आकर्षण से भारतीय दर्शन तथा वेदांत के प्रति लोगों में एक अनुराग हुआ है। कनाडा के कई शहरों में ऐसे मिशन हैं जो भारतीय दर्शन और धर्म का प्रचार करते हैं।

ऐसे ही एक मिशन के कनाडी कर्ता-धर्ता से मेरी भेंट हुई। उसने बताया कि हम भारतीय दर्शन तथा धर्म पर पुस्तकें आदि प्रकाशित करते हैं और जनता को मोक्ष का मार्ग बताते हैं। मैंने पूछा, "मोक्ष का अर्थ क्या है? सांसारिक कामों को छोड़कर भजन-पूजन में लग जाना मोक्ष है या मृत्यु के बाद ही मोक्ष मिलता है?" दूसरों को मोक्ष का मार्ग समझानेवाले को स्वयं मोक्ष की सही परिभाषा नहीं पता थी!

धर्म तथा योग का भारतीय वांग्मय में घनिष्ठ संबंध है, जबकि अधिकांश कनाडावासी योगासनों या उपासना-पद्धतियों को ही भारतीय धर्म एवं दर्शन मानकर 'कॉल ऑव द ईस्ट', 'इंडिया कॉलिंग' या 'ईस्टर्न अवेकनिंग इन वेस्ट' की ढोंगभरी घोषणाएं करने लगते हैं। योग और उपासना-पद्धतियां इनके भौतिक थकान-भरे तन-मन को ताजगी तथा एक नयापन दे देते हैं अतः ये दोनों चीजें इनके लिए किसी तरोताजा करनेवाले ड्रिंक से अधिक नहीं हैं। भारत के प्रति कनाडा में उत्पन्न आकर्षण का नाजायज फायदा उठाकर बहुत से तथाकथित भारतीय गुरु वहां धन बटोर रहे हैं।

लेकिन अधिकांश लोग आस्थाहीन हो चले हैं। युवा-वर्ग चर्च से कतराने लगा है। 'ईश्वर' उनके लिए समय काटने के लिए विचार-मात्र रह गया है, उसकी वास्तविकता उनके लिए संदिग्ध है।

मेरी अनेक बुद्धिजीवियों से बात हुई और मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि पूर्व के प्रति उनका अनुराग या भारतीय धर्म तथा दर्शन में उनकी रुचि तमाशा भर ही है।

—५/२ मल्टी स्टोरी फ्लैट्स, शाहजहां रोड, नयी दिल्ली-११०००१

महिला—कमरों की सजावट का सारा सामान मैंने साबुन के कूपनों से इकट्ठा किया है।

सहेली—फ्लैट आठ कमरों का है, लेकिन आपने तीन ही कमरे दिखाये। बाकी कैसे हैं?

महिला—बाकी पांच कमरों में देखने लायक कुछ भी नहीं है, क्योंकि वे साबुनों से भरे पड़े हैं।

सरकंडे की कलम

• राजेश्वर प्रसाद नारायण सिंह

मधुवनी लोकचित्रकारी का क्षेत्र कभी सीमित नहीं रहा। अति प्राचीन काल से यह लोक-चित्रकला केवल मधुबनी क्षेत्र में ही नहीं, वरन समस्त मिथिला में प्रसार पाती रही है, अतएव इसे 'मिथिला लोक-चित्रकारी' कहना अधिक उपयुक्त होगा। पूर्व इसके कि मैं इसके संबंध में कुछ कहूं, उस क्षेत्र के संबंध में जिसके रोमानी वातावरण में यह विकसित हुई, कुछ कहना आवश्यक है।

मिथिला उत्तर बिहार का वह हिस्सा है जिसके एक ओर तो हिममंडित हिमालय की वह तलहटी है जो कभी मिथिला का ही एक अंग थी, जहां महाराज जनक की राजधानी जनकपुर थी, और जो आज भी छोटे से कस्बे के रूप में अवस्थित है, परंतु कालांतर में नेपाल के अंतर्गत हो गयी, बाकी तीन ओर तीन नदियां बहती हैं—कोसी, गंगा और गंडकी, जिसे नारायणी भी कहते हैं। यही कारण है कि इसे तिर्हुत (तीर-भुक्ति) के नाम से भी पुकारते हैं। इन तीन

रंगों में डूबा कला का निखार

मधुवनी की प्रसिद्ध कलाकार सीता देवी

मधुबनी चित्रकारो की दृष्टि में विष्णु (ऊपर) और नागनथैया कृष्ण (नीचे)

नदियों के अलावा भी इस क्षेत्र में हिमालय से आयी हुई दर्जनों ऐसी नदियां हैं जो ग्रीष्मकाल में केवल एक नाला-जैसी लगती हैं— लखनदेई, बागमती, कमला, बलान आदि-आदि—परंतु वर्षाकाल के आते ही उस निर्झर की भांति भयंकर रूप धारण कर लेती हैं, जिसका वर्णन महाकवि रवीन्द्रनाथ ने इन सुंदर शब्दों में किया है—

आजि ए प्रभाते रविर कर
केमने पशिल प्राणेर पर
केमने पशिल गुहार आंधारे
प्रभात पाखीर गान
ना जानि केन रे एतो दिन परे
जागिया उठिल प्राण
जागिया उठे छे प्राण
जागिया उठे छे वारि
ओरे, प्राणेर वासना प्राणेर आवेग
रुधिया राखिते नारि
थर-थर करि कांपे छे भूधर,
शिला राशि-राशि पड़िछे खसे
फुलिया-फुलिया फेनिल सलिल
गरज उठे छे दारुण रोषे

इन समस्त नदियों से परिवेष्टित मीलों में फैले हुए धान के वे उर्वर खेत हैं जिन्हें जब वे शीतकाल में सौरभयुक्त फूलों से लद जाते हैं—देख-देखकर ग्राम्य-बाला का हृदय आनंद से भर जाता है और वह मस्त होकर गा उठती है—**'अगहन हे सखि, धान लुबुधि गेल, फुटि गेल सब रंग धानू।'** और जब धान की बालियां पक जाती हैं तब ऐसा लगने लगता है मानो खेतों में सोने की चादरें बिछी हुई हों, और वह दृश्य उपस्थित करती हैं जिसे देखकर महाकवि रवीन्द्रनाथ ने अपनी विख्यात रचना 'सोनार बांगला' की सृष्टि की थी।

उन्हीं दिनों अल्हड़ ग्रामीण नवयुवतियां एक त्योहार मनाती हैं जिसे 'सामा-चकेवा'

का त्योहार कहते हैं। वे मिट्टी का एक चकवा पक्षी तथा अन्य कई मूर्तियां—जिसमें एक विदूषक भी होता है—बनाती हैं और रात में उन्हें एक खुले स्थान पर रखकर उनसे गीत गा-गाकर खेलती हैं। एक महीने तक यह क्रम चलता रहता है। अंत में कार्तिक पूर्णिमा की धवल चांदनी रात में वे सहगान के साथ उन्हें किसी नदी या सरोवर के तट पर ले जाती हैं और जल में विसर्जित कर देती हैं। फिर लौटती हैं वे गीत गाती हुई अपने गांव की ओर—ये गीत इतने विषाद से भरे हुए होते हैं कि इन्हें सुनकर ऐसा लगता है मानो ये ससुराल जाती हुई किसी नवविवाहिता कन्या के विदाई के गीत हों।

मधुबनी में चित्रित अष्टभुजा देवी

यह एक ऐसा पर्व है जिसकी चर्चा, बकौल डॉ. अमरनाथ झा के, 'पद्मपुराण' तक में पायी जाती है।

बहरहाल, तो पूर्वोक्त धान के खेतों के बीच, जहां-तहां आम आदि फलों के बाग और वे गांव हैं जो संस्कृत विद्या तथा विविध लोककलाओं के शताब्दियों से केंद्र बने रहे हैं। इन्हीं गांवों में कभी न्याय-दर्शन का जन्म हुआ था, शास्त्रार्थ हुए थे—मंडन मिश्र और शंकराचार्य के बीच, गूंज उठे थे विद्यापति के ललित गान—वे जो कि आज भी मिथिला के गांव-गांव में नारी-कलकंठों से निःसृत सुबह-शाम गूंजा करते हैं।

जैसा कि पूर्व-कथित है, ये गांव सदियों से विविध लोक-कलाओं के भी केंद्र बने रहे हैं। इनमें ही वह गांव है कपसिया, जहां खेतों में कपास उगाकर गांव की महिलाएं चरखे पर सूत कातती रही हैं, ऐसे महीन सूत कि इनके बुने हुए खादी के थान अंगूठी के भीतर से आसानी से बाहर निकल आते हैं। इतनी महीन खादी देश के किसी दूसरे हिस्से में नहीं बनती।

दूसरी कला जो इन गांवों में अब भी अधिकांश क्षेत्रों में प्रसारित है, वह है सिक्की घास से तरह-तरह की चीजों का बनाना—शृंगार पीटिका, तश्तरी, कई प्रकार के खिलौने, हाथी आदि पशुओं की

मूर्तियां, इत्यादि।

परंतु जो कला समस्त मिथिला में धुंधली अतीत कला से व्यापक रूप से प्रसार पाती रही है, वह है लोक-चित्रकारी, जिसकी चर्चा इस लेख के आरंभ में की जा चुकी है। इसका आरंभ कब और कैसे हुआ, इसका ज्ञान किसी को नहीं है, पर किंवदंती है कि महाराज जनक तक के परिवार की महिलाएं चित्र आंका करती थीं तथा जब लक्ष्मण राम और सीता के साथ वन को चले गये तब उनकी पत्नी उर्मिला दीवार पर उनका चित्र अंकित कर, नित्य उसकी पूजा किया करती थी। किंवदंतियों में कितनी सत्यता है यह कहना तो कठिन है, परंतु प्राचीन क्षेत्रीय ग्रंथों में इस कला के उल्लेखों से यह साफ जाहिर है कि यह हजारों साल पुरानी चित्रकला है। मुगल, कांगड़ा, राजस्थानी आदि किसी भी शैली का इस पर प्रभाव नहीं है। अपढ़ नारियों के बनाये हुए इन चित्रों में उनकी अपनी कल्पनाएं हैं और एक अद्‌भुत ग्रामीण ताजगी है।

ये चित्र अधिकांशतः ब्राह्मण तथा कायस्थ परिवारों की औरतें बनाती हैं, लेकिन यह कला उन्हीं तक सीमित नहीं है।

ये चित्र दो प्रकार के होते हैं—एक वे जो दीवार पर बनाये जाते हैं, दूसरे, जो कागज पर बनते हैं। मिथिला के घर-घर में कोहबर, यानी वह कक्ष जिसमें नवविवाहित वधू अपने पति के साथ प्रथम रात्रि को मिलती है, की दीवारों को इन चित्रों से सजाने की प्रथा है। घर तथा पड़ोस की औरतें गीत गा-गाकर इनका अंकन करती हैं।

विवाह-मंडप की वेदी पर भी चित्रांकन करते हैं, परंतु अधिकांशतः ये लोक-चित्र कागजों पर बनाये जाते रहे हैं। मिथिला की नारियों का यह एक खास शौक है और पुरानी पीढ़ी की औरतों से नयी पीढ़ी इसे सीखती रही है। यही कारण है कि यह कला आज तक ज्यों-की-त्यों बनी हुई है। इसका न तो रूप-परिवर्तन हुआ और न इसमें खामी आयी।

इन चित्रों के बनाने में वे स्वनिर्मित तूली और रंगों का ही व्यवहार करती रही हैं। कपास से वे तूलिकाएं बनाती हैं, वृक्ष के पत्तों के रस, सिंदूर, हल्दी, गोबर आदि से विविध प्रकार के रंग। कुछ ऐसे भी चित्र वे बनाती हैं जिनमें बिंदुओं के सहारे आकार बनाते हैं, इसके लिए ज्यादातर सरकंडे की कलम की नोक का व्यवहार करती हैं। ये रंग काफी टिकाऊ होते हैं। हाथ के बने हुए कागज—जिसे बसहा कागज के नाम से पुकारते हैं— पर ये चित्र बना करते थे। यह कागज नेपाल में बनता था, और वहां से आकर मिथिला के गांव और नगरों में बिका करता था। चिटठी आदि लिखने के काम में भी यह आता था, लेकिन अब इसकी मांग ही नहीं रही, अतएव बड़ी मुश्किल से यह उपलब्ध होता है।

मिथिला का ब्राह्मण समाज मुख्यतः देवी या शिव का उपासक है। दही इतना मोटा (बर्फ के चट्टान की तरह इतना मोटा कि यह बोरियों में रखकर बाहर भेजा जाता है) तथा मछली, इनके मुख्य आहार हैं। इनकी शक्ति-उपासना का प्रभाव लोकचित्रकारी पर पूरी तरह पड़ा है। अधिकांश चित्र दुर्गा या काली के होते हैं––विविध मुद्राओं में, पर कुछ राम-जानकी तथा भगवान कृष्ण की रासलीला से संबंधित भी होते हैं। कुछ चित्र सामाजिक भी होते हैं––जैसे वर-वधू का पाणिग्रहण कर्म, नवविवाहिता नारी का पति के साथ ससुराल गमन, आदि। कुछ घरेलू पक्षी और पशुओं के भी चित्र पाये जाते हैं, पर मुख्यतः ये चित्र शाक्तमत से प्रभावित हैं। वैसे कुछ चित्र ब्रज की गोपियों के भी सि पर दही की मटकी लिये हुए देखे गये हैं परंतु ऐसे चित्र अतिशय विरल हैं।

इस कला की यही स्थिति थी आज से कुछ साल पहले बिहार के हस्त कला विभाग के डाइरेक्टर श्री महारथी (उत्कल निवासी, स्वयं कुशल चित्रकार) को इसका पता और उन्होंने मधुबनी नगर के दो निकटस्थ गांवों––जितवारपुर तथा रांटी में जाकर कुछ चित्र विभिन्न परिवारों से खरीदे और उन्हें पटना-स्थित सरकारी हस्तक एंपोरियम में लाकर रखा। तभी दिल्ली में अंकटाड का सेशन हुआ और बाहर से आये हुए प्रतिनिधियों के दर्शनार्थ विज्ञान भवन के प्रांगण में एक भारतीय दस्तकारी की चीजों की प्रदर्शनी आयोजित की गयी। उसमें ये चित्र भी रखे गये। विदेश से, खासकर अमरीका से, आये हुए प्रतिनिधियों को ये चित्र इतने पसंद आये कि दो-तीन दिनों में ही सारे-के-सारे बिक गये।

आज यह कला जगद्विख्यात हो रही है। इनकी काफी संख्या में स्टेट ट्रेडिंग कारपोरेशन तथा निजी व्यापारियों

मधुबनी शैली में विवाह मंडप की वेदी

द्वारा निर्यात भी हो रहा है। मधुबनी शहर इन चित्रों के खरीदारों का एक अड्डा बन गया है। वे उपर्युक्त दो गांवों में महिलाओं को अगाऊ पैसे, मिल के बने हुए कागज, रंग और ब्रश देकर उनसे चित्र बनवाकर उन्हें दिल्ली रवाना करते जाते हैं। विदेशों में रेशम पर बने हुए चित्र अधिक लोकप्रिय हैं, इसलिए वे वस्त्रों पर भी इनका अंकन कराते हैं। कुछ अपने डिजाइन भी दे देते हैं, पर यहां एक बड़ा-सा **'पर'** हमारे सामने आता है। क्या सदियों पुरानी इस लोक-चित्रकला का आज प्राणहरण नहीं हो रहा है? क्या अब यह विशुद्ध ग्रामीणी वस्तु न होकर बाजारू चीज नहीं बन गयी है? न वह बसहा कागज रहा, न वे घर के बने हुए रंग, और न वह कपास की तूली, अर्थात इसकी जो विशेषताएं थीं, वे सभी जाती रहीं। मनुष्य के लिए सबसे कठिन है अर्थलोभ का संवरण। अफसोस कि इन गांवों की अबोध महिलाएं आज इसका शिकार हो रही हैं। पर गनीमत है कि अभी अनेक ऐसे गांव हैं जहां उपर्युक्त व्यापारियों के कदम नहीं पहुंच पाये हैं। इस कला का विस्तार घर-घर में है, और आशा है कि इसका सदियों पुराना रूप अभी भी अक्षुण्ण बना रहेगा।

बी-२, महारानी बाग, नयी दिल्ली-१४

आराम के लिए नींद जरूरी नहीं

● डॉ. प्रणवसेन गुप्त

आमतौर पर यह समझा जाता है कि शरीर को आराम देने के लिए नींद एक आवश्यक तत्त्व है। मिर्जा गालिब ने भी 'नींद क्यों रात भर नहीं आती' लिखते समय ऐसा ही दर्द महसूस किया होगा। नींद का संबंध मुख्य रूप से मस्तिष्क के साथ जुड़ा हुआ है। इसीलिए कवि, शायर और लेखक नींद को लेकर हाय-तौबा करते हैं। चिकित्सा-विज्ञान की

[खर्राटे भरने की गसरत क्यों]? नींद तो साइकिल के सहारे भी आ सकती है।

दुनिया ने शोध के बाद जो परिणाम निकाले हैं, वे इसके विपरीत हैं। शरीर के लिए आराम बहुत जरूरी है, लेकिन आराम का अर्थ खर्राटे भरकर सोने से नहीं है। बिस्तर पर शांत होकर लेट जाइए और घंटों लेटे रहिए, आराम के लिए यह काफी है। नींद मस्तिष्क को शांत रखने और अधिक क्रियाशील बनाये रखने के लिए जरूरी होती है। इसलिए आदमी रोज सोता है और सुबह उठकर ताजगी महसूस करते हुए चुस्ती के साथ दिन भर काम करता है।

नींद एक अजूबी चीज है। हर आदमी को एक-सी नींद चाहिए, यह जरूरी नहीं। डॉक्टरों का कहना है कि शरीर-रचना की प्रक्रिया के साथ नींद की आवश्यकता जुड़ी हुई है। कुछ लोग दो घंटे सो कर काम चला सकते हैं तो कुछ लोगों के लिए सात-आठ घंटे सोना जरूरी हो सकता है। सोने के घंटों का संबंध आयु के साथ भी है। उदाहरण के लिए एक बच्चे को ९ से १२ घंटे तक की नींद आवश्यक है। युवा व्यक्तियों को ६ से ८ घंटे काफी हैं

और वृद्धों के लिए ८—९ घंटे की नींद भी बहुत हो सकती है। डॉक्टरों ने परीक्षणों के बाद यह सिद्ध कर दिया है कि आयु बढ़ने के साथ-साथ नींद की आवश्यकता भी कम होती जाती है। इसलिए नींद आना या न आना चिंता का विषय नहीं है। चिंता तब होती है जब आदमी की मानसिकता नींद की हो और आंखें बंद करने के बाद भी नींद न आये। मशीन और उद्योग की आधुनिक दुनिया ने इतना अधिक तनाव पैदा कर दिया है कि मस्तिष्क के स्नायु-तंतु 'टेंस' बने रहते हैं। उस समय आम तौर पर देखा जाता है कि पूरे शरीर में बेचैनी, दिमाग में खिचाव और विचारों में उग्रता आ जाती है। यह एक खतरनाक स्थिति है। इसी के बाद क्रमश: नींद न आने की बीमारी जिसे अंगरेजी में 'इंसोमनिया' कहते हैं—शुरू हो जाती है। अमरीका, यूरोप और रूस जैसी जगहों में इस तरह की बीमारियां दिनों-दिन बढ़ती जा रही हैं और अब तो वहां नींद-विशेषज्ञों (स्लीप एक्स्पर्ट्स) का एक अलग व्यवसाय शुरू हो गया है। अकसर देखा गया है कि नींद से मस्त व्यक्ति या तो नशीले पदार्थों का सेवन शुरू कर देते हैं अथवा नींद की गोलियां खाने लगते हैं। कुछ समय के बाद वे भी असर करना बंद कर देती हैं और तब वही लोग मार्फिया का भी इंजेक्शन लेना शुरू कर देते हैं। यह एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसका अंत नहीं है। अंत होती है—मानसिक चेतना के खो जाने में अथवा आत्महत्या में।

नींद की गोलियां मन और शरीर के लिए भयंकर रूप से घातक होती हैं, यह जानते हुए भी लोग उन्हीं के आश्रित हो बिस्तर में जाते हैं। कभी वे आराम से सो जाते हैं कभी करवटें बदलते रहते हैं। इन गोलियों की खपत इतनी अधिक है कि केवल अमरीका में ही डॉक्टरों ने १९७३ में लगभग ५ करोड़ नुस्खे इन गोलियों के केवल एक ब्रांड 'सेकोनल' नामक नींद लानेवाली दवा के लिए लिखे हैं। यह दवा अमरीका की ३० लोकप्रिय नींद की दवाओं में से है, जिन्हें डॉक्टर अपने मरीजों को देते हैं। आप कल्पना कर सकते हैं कि इन दवाओं की पूरी खपत कितनी होती होगी। यद्यपि इन दवाओं के घातक परिणामों को देखते हुए सरकार ने सार्वजनिक रूप से इनका निषेध कर दिया है और केवल डॉक्टरों द्वारा तजवीज करने पर ही ये दवाएं उपलब्ध हो सकती हैं, लेकिन फिर भी इन दवाओं का प्रचलन बहुत अधिक है।

हमारे देश में तो लोग नींद लाने के लिए अन्य मादक पदार्थों, जैसे चरस, गांजा, भांग, हशिश आदि का भी प्रयोग करते हैं। अमरीका, रूस जैसे बड़े देशों में भी इन मादक पदार्थों का प्रयोग किया जाता है। लेकिन इनका परिणाम फिर से वही होता है—विक्षिप्तावस्था अथवा आत्महत्या।

कौन कहता है नींद रात भर आती नहीं ?

वस्तुस्थिति यह है कि 'गहरी नींद' और 'नींद' में बहुत अंतर है। केवल दो घंटे की गहरी नींद व्यक्ति को इतना ताजा बना सकती है कि वह उसके बाद शारीरिक और मानसिक रूप से कार्य करने के लिए तत्पर हो। गहरी नींद से तात्पर्य है मस्तिष्क के सारे स्नायु-तंतुओं का पूर्ण विश्राम की स्थिति में पहुंच जाना और शरीर के सभी अंगों का शिथिल हो जाना। धीरे-धीरे मस्तिष्क के स्नायु-तंतुओं की शिथिलता व्यक्ति के शरीर को भी प्रभावित करती है और यदि उसका मस्तिष्क तनावग्रस्त नहीं है तो वह शीघ्र ही गहरी नींद में सो जाता है। उधर बहुत-से व्यक्ति केवल 'नींद' लेते हैं। वस्तुत: वह नींद की नहीं, बल्कि अर्धचेतना की स्थिति है। स्वप्न देखना, सोते में चलना या बातें करना, बच्चों की तरह बिस्तर में पेशाब करना, दांत किटकिटाना आदि ऐसी ही स्थितियां हैं, जो यह प्रमाणित करती हैं कि व्यक्ति 'नींद' में नहीं, अपितु अर्धचेतन अवस्था में है।

अनिद्रा-रोग अथवा 'इंसोमनिया' का मरीज उपर्युक्त एक अथवा अनेक बीमारियों से ग्रस्त होता है। 'इंसोमनिया' के मरीज को हमेशा यह महसूस होता है कि वह पूरी नींद नहीं ले पा रहा है। वह एक 'रीजनेबल' समय में नहीं सो पाता। रात को बार-बार सोते से उठता है या कभी उस समय से पहले ही जाग जाता है, जब वह जागना चाहता है। लोग पूरी रात सोने के बावजूद यह महसूस करते हैं कि उन्होंने आराम नहीं किया और उनके शरीर को आराम की आवश्यकता है, वे भी 'अनिद्रा रोगी' ही हैं।
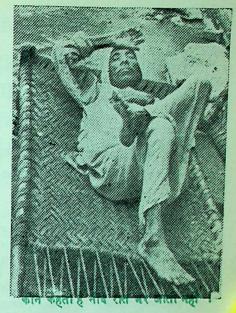
नींद से संबंधित इन सभी परेशानियों से बचने के लिए इवांस्टन विश्वविद्यालय के मनोवैज्ञानिक प्रोफेसर रिचर्ड आर. बूटजिन ने कुछ सुझाव दिये हैं:

बिस्तर में तभी जाइए जब आप बहुत थके हुए हों। बिस्तर में जाकर सोने की कोशिश कीजिए और अपनी समस्याओं के बारे में मत सोचिए। यदि आपको जल्दी ही नींद नहीं आ जाती तो बिस्तर से उठ जाइए और तब तक वापस बिस्तर

दाँतों के डाक्टरों की राय में

नियमित रूप से दाँत ब्रश करने और मसूढ़ों की मालिश करने से मसूढ़ों की तकलीफ़ और दाँतों की सड़न दूर ही रहती है

देखिए, फ़ोरहॅन्स टूथपेस्ट नियमित इस्तेमाल करनेवालों ने अपने आप क्या लिखा है :

"...मेरी पत्नी को दाँतों में बड़ी पीड़ा थी...लेकिन जबसे उसने फ़ोरहॅन्स इस्तेमाल करना शुरू किया, इतना अच्छा रहा कि अब किसी को भी दाँत या मसूढ़ों में तकलीफ़ होते ही वे फ़ोरहॅन्स उपयोग करने की सलाह देती हैं। वही क्यों, इंग्लैंड में मेरे भाई है न, उन्होंने भी भारत से फ़ोरहॅन्स के ६ ट्यूब भेजने के लिए बार बार लिखा है। (सही) टी. जी. एम्. डी'सूजा
बम्बई

'...राजमहेन्द्री के एक दाँतों के डाक्टर हैं...उन्होंने मुझे दाँतों व मसूढ़ों की भलाई के लिए फ़ोरहॅन्स टूथपेस्ट इस्तेमाल करने की सलाह दी। मैंने फ़ौरन ऐसा ही किया। थोड़े ही दिनों में साँस की दुर्गन्ध जाती रही, मसूढ़े फिर अच्छे हो गये। सच से, सच मानिए, मैं ही नहीं, मेरे पूरे परिवार के ६ लोग फ़ोरहॅन्स ही इस्तेमाल करते हैं और मुझे पूरा विश्वास है कि हमारी यह आदत और हमारी यह आस्था पीढ़ियों तक चलती रहेगी।' (सही) पी. जे. लाजार
चिराला, आन्ध्र प्रदेश

(इन पत्रों की फ़ोटोस्टॅट कॉपी आप ज्यैफ़्री मैनर्स एण्ड कं. लि. के किसी भी कार्यालय में देख सकते हैं।)

दाँतों की सही देखभाल के लिये हर रोज रात और सवेरे अपने दाँतों को ब्रश करने और मसूढ़ों की मालिश करने के लिये फ़ोरहॅन्स इस्तेमाल कीजिए।

मुफ़्त! 'आपके दाँतों और मसूढ़ों की रक्षा' नामक रंगीत सूचना-पुस्तिका। अपनी प्रति प्राप्त करने के लिए (डाक-खर्च के लिए) २५ पैसे के टिकट साथ भेजकर इस पते पर लिखिए : मैनर्स डेण्टल एडवाइज़री ब्यूरो, डिपार्टमेंट T 123 पोस्ट बैग नं. ११४६३, बम्बई-४०० ०२०
अपनी पसन्द की भाषा अवश्य लिखिए।

PIN CODE FOR FAST MAIL

160F-152 HN

में नहीं जाइए जब तक आपको यह महसूस नहीं होता कि अब की बार वहां जाते ही आप सो जाएंगे। इस चक्र को तब तक दोहराते रहिए जब तक आपको नींद नहीं आ जाती। हर सुबह जागने के लिए एक समय निर्धारित कीजिए और रोज उसी समय का अलार्म लगाकर सोइए। सप्ताहांत में भी रोज के ही समय पर सोकर उठिए। नियमित कार्यक्रम बनाने से आपको नींद भी नियमित रूप से और नियमित समय के लिए आएगी।

डॉ. बूटजिन के अनुसार यदि एकाग्रचित होकर कोई कार्य कर लिया जाए तो सोने में आसानी होगी। पढ़ना ऐसी स्थिति में बहुत लाभदायक सिद्ध हो सकता है।

नशीली दवाओं का प्रयोग करने की अपेक्षा 'सम्मोहन' से व्यक्ति अपने अनिंद्रा-रोग का उपचार कर सकता है। व्यक्ति स्वयं को सम्मोहित करे और यह सोचे कि मुझे नींद आ रही है—मैं गहरी नींद में सोनेवाला हूं—मैं गहरी नींद में सो चुका हूं—तो उसका अनिंद्रा-रोग दूर होने की संभावना है। अब डॉक्टर योगाभ्यास करने का सुझाव भी देते हैं। ध्यान अथवा योग का यही महत्त्व है कि मनुष्य के शरीर की मांसपेशियां शिथिल हो जाएं, मस्तिष्क के स्नायु-तंतुओं में तनाव खत्म हो जाए और अनावश्यक विचारों को मस्तिष्क में स्थान न मिले तथा मन एकाग्र हो जाए। इस प्रकार के उपायों का अभ्यास थोड़े से ही दिन करने से व्यक्ति अपने अनिद्रा-रोग पर काबू पा सकता है।

प्रश्न यह उठता है कि 'इंसोमनिया' अथवा नींद न आने के पीछे कारण क्या है? सामान्यतः यह समझा जाता है कि विफल प्रेम ही इस तरह के रोगों की जड़ होता है, लेकिन वास्तविकता यह नहीं है। अनेक माध्यमों से उपजा हुआ मानसिक तनाव इस रोग को जन्म देता है। पारिवारिक विघटन, आपसी वैमनस्य, आर्थिक परेशानी, रोजगार न मिलना, व्यापार में घाटा, परीक्षा में अनुत्तीर्ण हो जाना अथवा किसी अत्यंत प्रिय व्यक्ति की मृत्यु—इस मानसिक तनाव के कारण होते हैं। भारत-जैसे देश में दांपत्य-जीवन में कटुता अथवा विवाहों का टूटना आदि इस रोग को जन्म देने में सबसे बड़े माध्यम हैं तो पश्चिमी देशों में सामाजिक भीड़ में रहते हुए भी अकेलेपन की यंत्रणा 'इंसोमनिया' के कारण बनते हैं। बहुत अधिक सोचना भी इस रोग का कारण बनता है।

वस्तुतः इन तनावों का निदान स्वयं व्यक्ति के ही हाथ में है। जो आत्मविश्वास वह अपने परिवेश और परिस्थितियों के कारण खो देता है, उसी आत्मविश्वास का फिर से अर्जन करके वह सामान्य भी बन सकता है। आवश्यकता केवल एक अडिग इच्छा-शक्ति की है।

मानसिक तनावों के अतिरिक्त रात को नींद न आने के और भी कई कारण होते हैं। दोपहर में थोड़ी देर के लिए भी सो जाने से रात को सोने में कठिनाई का

अनुभव हो सकता है। बहुत ज्यादा सिगरेट या काफी पीना भी नींद में व्याघात पहुंचाते हैं। अधिक शराब पीने से भी सोने में परेशानी होती है। बहुत ज्यादा शराब पीकर सोने से थोड़ी ही देर के बाद नींद खुल जाने की संभावना है। शराब पीने से एक बार तो नींद आ जाती है, लेकिन फिर नशा उतरते ही वह शरीर को जरूरत से ज्यादा शिथिल बना देती है। शराब, सिगरेट कॉफी आदि के अभ्यस्त लोगों को 'अनिद्रा-रोग' की शिकायत प्रायः होती है।

पहले भी कहा जा चुका है कि नींद की गोलियों का सेवन भी हानिकारक है। अमरीका के सुप्रसिद्ध अनिद्रारोग विशेषज्ञ डॉ. एंथोनी केल्स ने इस प्रकार की दवाओं पर शोध करने के बाद यह सिद्ध किया है कि प्रायः रोगी जरूरत से ज्यादा नींद की गोलियां खा लेते हैं। उनके शरीर को उतनी अधिक मात्रा में इन दवाओं की आवश्यकता नहीं होती। शिकागो के डॉ. रेक्टशेफन के अनुसार, "यदि आप केवल पांच घंटे सोते हैं तो नींद की गोली खाने के बाद आप आठ घंटे तक सोएंगे। लेकिन जल्दी ही नींद की गोली खाने के बावजूद आप फिर से पांच घंटे ही सोनेवाली अवस्था में आ जाएंगे। कुछ दिनों के बाद हालत यह होगी कि पांच घंटे सोने के लिए भी आपको नींद की गोली खानी पड़ेगी। धीरे-धीरे आपकी नींद पूरी तरह से गोलियों की आश्रित हो जाएगी।"

नियमित रूप से नींद की गोलियां खानेवालों को दो दुष्परिणामों का सामना करना पड़ सकता है। पहला तो यह कि उनका अनिद्रा-रोग और भी भयंकर रूप धारण कर लेता है। गोली खाने के बावजूद वे बिस्तर में घंटों करवटें बदलते हैं और उनके शरीर में ऐंठन, मरोड़-जैसे अन्य रोग भी जन्म ले लेते हैं। इनका दूसरा दुष्परिणाम होता है—स्वप्नों में अधिकाधिक वृद्धि। व्यक्ति इतने अधिक स्वप्न देखने लगता है कि प्रायः वे दुःस्वप्न का रूप धारण कर लेते हैं।

इस तरह के मरीजों के लिए डॉ. केल्स ने कुछ सुझाव दिये हैं। उनके अनुसार जो रोगी प्रतिदिन इन दवाओं का बहुत अधिक मात्रा में सेवन करते हैं, उन्हें पहले-पहल सप्ताह में एक दिन के लिए एक गोली कम करनी चाहिए, उसके बाद दो दिन के लिए और फिर इसी प्रकार एक-एक करके इन दवाओं की आदत को कम करना चाहिए। इस तरह रोगी को सोने में भी परेशानी नहीं होगी और धीरे-धीरे इनके सेवन की आदत भी कम हो जाएगी।

इस सबके बावजूद यदि आपको नींद नहीं आती तो इसे दर्द मत समझिए और हायतौबा मत मचाइए। जागना अपराध नहीं है, शरीर को आराम देना जरूरी है और आराम चैन से लेटकर भी मिल सकता है, उसके लिए खर्राटे भरने की कसरत करनी कतई जरूरी नहीं है।

उन्हें किसी जागरूक शक्ति की चेतना थी

• विनयमोहन शर्मा

जुलाई, १९७५ की २५ तारीख; रायपुर के दुर्गा कालेज-कक्ष में एम. ए. की मौखिकी ले रहा था। अंत में एक छरहरी लड़की आयी और कुछ उदास मुद्रा में सामने बैठ गयी। कारण पूछा तो उसने कहा, "बाबा की हालत बहुत नाजुक है, अस्पताल में बेहोश पड़े हैं।" साथी परीक्षक ने बताया, "डॉक्टर बलदेव प्रसाद मिश्र की पौत्री है।" शाम को मैं रायपुर विश्वविद्यालय के कुलपति श्री जगदीशचंद्र दीक्षित के साथ उन्हें देखने अस्पताल गया। मिश्रजी चारपाई पर लेटे थे, हाथ में सुई लगी थी, ग्लूकोज चढ़ाया जा रहा था। आंखों ही आंखों में कुशल-मंगल पूछी। ऐसा लगा कि बोलना चाहते हैं पर बोल नहीं पा रहे। डॉक्टरों ने कहा, "मिश्रजी पहले भी इस अवस्था में आ चुके हैं; एक-दो-रोज में पूर्वस्थिति में आ जाएंगे और बोलने लगेंगे।" हमने आशान्वित हो विदा ली। क्या मालूम था कि यह उनसे अंतिम भेंट होगी !

बारह वर्ष पूर्व रायगढ़ में वे मेरे घर ठहरे थे। उस समय लंबी चर्चा हुई। मैंने लिपिबद्ध कर रखी थी। साहित्य, धर्म-विश्वास आदि पर कितने ही प्रश्नों का उन्होंने विस्तार से उत्तर दिया था। मैंने जब उनके ज्योतिष, मंत्र-तंत्र, प्रेतात्मा आदि के अनुभवों को भी सुनना चाहा तब उन्होंने सहज मुसकराहट के साथ कहा, "भौतिक विज्ञान के इस युग में लोग पितर-योनि, मंत्र-तंत्र, फलित ज्योतिष आदि से आस्था हटा चुके हैं पर मुझे तो कई प्रमाण मिले हैं। मेरे पितामह पंडित शिवरत्नलालजी की प्रथम पत्नी मृत हो चुकी थीं। उनकी छाया दूसरी पत्नी पर आती थी। मैंने स्वतः देखा है। मेरे बड़े भ्राता पं. जगन्नाथ मिश्र के बाद मेरी माता को एक और बच्चा होने वाला था। उसके जीवन के लिए घोर संकट-काल है, यह उन दिवंगत पितामही ने पहले ही बतला दिया था। बात सच हुई। मरा बच्चा पैदा हुआ। चिंता हुई कि कहीं गर्भाशय विकृत न हो गया हो। पर उन पितामही ने भविष्यवाणी की कि चिंता न की जाए, बच्चे के बदले बच्चा मिलेगा। और बदले में प्राप्त हुआ बालक मैं ही हूं। उन पितामही का स्मृति-मंदिर घर पर ही बना था। एक बार मेरे चाचा सहसा

बहुत बीमार पड़ गये। तब मेरी दूसरी पितामही उसी स्थान पर ले जायी गयीं। वहां वे चेतनाहीन सी होकर कुछ बुदबुदाने लगीं। कुछ देर के बाद स्पष्ट शब्दों में उन्होंने कहा, 'पानी के छींटे मारो, अभी ठीक हो जाएगा।' लोगों ने इसे पहली पितामही की वाणी माना। पानी के छींटे पड़ते ही, चाचा उठ खड़े हुए।

"इसी प्रकार एक बार मैंने अपने एक घनिष्ठ मित्र की छाया देखी। वह ठीक उसी समय मरा था, किंतु उसकी मृत्यु की न मुझे कोई सूचना थी, न कल्पना। जागते हुए ही थोड़ी देर के लिए तंद्रा-सी आयी और ऐसा जान पड़ा कि वह मित्र मेरी खाट पर आकर बैठ गया और मुझसे बातें करना चाहता है। जागरण और स्वप्न के बीच की बड़ी विचित्र स्थिति थी।"

"मिश्रजी, आपने तंत्र-मंत्र के भी तो कुछ अनुभव प्राप्त किये होंगे?"

वे पुनः उसी गति से बोलने लगे, "मंत्र-तंत्र तो कई लोगों ने सिखाये परंतु किसी भी कष्टप्रद साधना के लिए मेरे पास धीरज न था। एक बहुत सीधा-सा टोटका इकतरा बुखार उतारने का जरूर सीखा जिसे मंत्र और यंत्र दोनों कहा जा सकता है। सैकड़ों व्यक्तियों पर उसकी आजमाइश की। शायद ही असफल हुआ।

"फलित ज्योतिष के तो कई चमत्कार मैंने देखे। 'भृगुसंहिता' का परीक्षण किया और उत्तम ज्योतिषियों के फलादेशों की जांच की। जिनकी कल्पना भी न थी, ऐसी घटनाओं के संकेत कई बार एकदम सही उतरे। मेरे दिवंगत बड़े पुत्र की आकस्मिक मृत्यु का हाल तो आश्चर्यजनक ढंग से सही उतरा पर भविष्य फलादेश पास होते भी हम कुछ न कर पाये। फलित ज्योतिष तो डॉक्टरी की तरह है जिसमें रोग और उसके भावी परिणाम के संकेत तो बहुत स्पष्ट मिलते हैं परंतु

डॉ. बलदेवप्रसाद मिश्र

यह शत-प्रतिशत नहीं कहा जा सकता कि एक निश्चित परिणाम होगा ही। आत्मशक्ति और चिकित्सादिक के उपाय तथा इनसे बढ़कर प्रारब्ध प्रबल हो, तो परिणाम बदल सकते हैं। गृहों के भिन्न-भिन्न रंग होते हैं और प्रकाश-किरणों के इन विभिन्न रंगों का परिणाम भी शरीर-स्वास्थ्य और मनोवृत्तियों पर भिन्न ढंग से पड़ता है। यह सूर्य-रश्मि-चिकित्सकों से छिपा नहीं है। इसी रश्मि-विज्ञान पर

फलित ज्योतिष का शास्त्र आधारित है। ग्रहों की कौन कहे, मैंने तो नीलम का भी एकदम फल होते देखा है। जानते हुए भी कि नीलम व्यय-विषयक बुद्धिभ्रम पैदा कर देता है, मैंने एक दिन हठपूर्वक धारण कर लिया और इच्छा न रहते हुए भी मुझे व्यर्थ का व्यय करना पड़ गया।

स्वप्नों से भविष्य के संकेत

स्वप्नों की सच्चाई के बारे में पूछने पर उन्होंने कहा, "कोई-कोई स्वप्न तो मुझे भविष्य के विषय में ऐसे संकेत दे गये हैं कि कहते नहीं बनता। मैं जब रायगढ़-रियासत का दीवान था तब राजपरिवार के साथ दिल्ली गया। वहां राजकुमार बहुत रुग्ण हो गया। मकान-मालिक ने हमारे इस संकट से लाभ उठाकर अतिरिक्त किराये के नाम पर मनमानी रकम ऐंठनी चाही कि या तो मकान छोड़ो या मनमाना हरजाना भरो। तीसरा कोई विकल्प न था। ऐसे में मैंने एक दिन सपना देखा कि दिन के दो बजे हैं। एक अपरिचित मेरा शयनकक्ष खोलकर घुस आया और कहने लगा कि, 'दीवान साहब, मकान आपका है। मकान-मालिक ने कहा है कि जब तक चाहें, राजकुमार को वहीं रखें। किराये की कोई चिंता न करें। मैं उनका मुनीम हूं।' बाद में ठीक दो बजे वही व्यक्ति उसी प्रकार आया और उतने ही नपे-तुले शब्दों में ठीक उसी तरह संदेश दे चला गया।"

मिश्रजी का परम-शक्ति पर सदा अटूट विश्वास रहा है। कई बार परमात्म-शक्ति ने उनकी रक्षा भी की है। एक बार उन्होंने एक करैत सांप को सेम समझकर न केवल कौतूहलवश उठा लिया वरन हाथ से हलके से मसलकर उपेक्षा से छोड़ दिया, फिर भी उसने काटा नहीं। वे घायल बाघ के पंजे से सुरक्षित निकले हैं, और कई षड्यंत्रों, चोरों, लफंगों आदि से बचे हैं। विश्वास था कि कोई जागरूक शक्ति उन्हें चेताती रहती थी। आकस्मिक सहायता के तो कई उदाहरण हैं।

वकालत-जीवन के अनुभव

मिश्रजी ने अपने वकालत के अनुभव सुनाते हुए कहा था, "मैंने स्व. पंडित रविशंकर शुक्ल के सहकारी के नाते कार्य किया, पर असफल रहा। पहले मुकदमे की खूब तैयारी की, पर देर से पहुंचने के कारण मुकदमा हार गया। पहली अपील लगन से तैयार की परंतु पांसे उलटे पड़ गये और अपील तुरंत खारिज हो गयी। दलालों से अलग परेशानी थी। बिना बुलाये आ धमकते और मुंह पर झूठ बोलते। कभी कहते, वकील साहब ने ऐसे सैकड़ों मुकदमे जीते हैं या जज साहब इनकी जाति के हैं, रिश्तेदार हैं आदि, आदि। छः महीनों ही में घबरा उठा। अच्छा हुआ जो मुझसे वकालत न बन पड़ी। उसमें कदाचित मैं इतना आत्मविकास न कर पाता। शिक्षा-विभाग में उपर्युक्त स्थान पाना चाहता था, पर सफलता नहीं मिली। उस समय की असफलता से मुझे लोकसेवा

के अनेकानेक क्षेत्र मिले।"

मिश्रजी ने तुलसी के दर्शन पर ग्रंथ लिखकर नागपुर विश्वविद्यालय से डॉक्टर ऑव लिटरेचर की उपाधि प्राप्त की। परीक्षक पं. रामचन्द्र शुक्ल ने इस ग्रंथ की भूरि-भूरि प्रशंसा की थी।

मिश्रजी ने रामभक्ति का प्रचार लेखों, व्याख्यानों, प्रवचनों आदि से आजीवन किया और इससे उन्हें आत्मिक शांति मिली। राम-नाम को संतों के समान मंत्रराज समझते रहे। उन्होंने अनेक काव्य-ग्रंथों की रचना की जिनमें 'साकेत-संत' सर्वोपरि है। एक नाटक भी रचा, पं. द्वारकाप्रसाद मिश्र के महाकाव्य 'कृष्णायन' की समीक्षा लिखी और मराठी के संत रामदास के 'मनांचे श्लोक' को पद्यबद्ध किया। मनु-स्मृति के समान वर्तमान युग की एक आचरण-संहिता 'मिश्र-स्मृति' भी लिख डाली। छोटी-बड़ी अनेक पुस्तकों की रचना वे करते रहे। दर्जनों संस्थाओं का निर्माण किया, पर चिपके किसी से नहीं।

भावुक होते हुए भी बुद्धि की तुला पर तोले बिना वे कोई निर्णय नहीं लेते थे। कहते थे कि उनके जीवन में संत-असंत सभी मिले और सभी को अच्छी तरह समझकर उनके साथ यथोचित व्यवहार किया। ४ सितंबर, १९७५ को उन्होंने अंतिम सांस ली।

—ई. ६/एम. आइ. जी-७,
अरेदा कालोनी, भोपाल

पौत्री के संस्मरण

हर चीज ठीक जगह रखना उनका स्वभाव था। रात में टार्च की जरूरत पड़ती तो टटोलकर उठा लेते। हम लोग लिफाफे बंद करते समय गोंद फैला देते तो वे भांप जाते और चीजों की बरबादी न करने की ताकीद करते। 'अकबर' का यह शेर अकसर गुनगुनाते थे :

हुजूमे बुलबुल हुआ चमन में
किया जो गुल ने जमाल पैदा
कमी नहीं कद्रदां की अकबर
करे तो कोई कमाल पैदा

गुस्सा वे कभी न होते। हम बच्चे ज्यादा उधम मचाते और दादीजी हमें उनके आगे पेश कर देतीं तो कहते, "ज्यादा ऊधम करोगे तो पंखे से उलटा टांग देंगे!" हमारे बीच तुरंत अनुशासन आ जाता।

★

उन दिनों वे मध्यप्रदेश की रायगढ़ रियासत के दीवान थे। शोधग्रंथ पूरा करने के लिए बनारस और कलकत्ता के पुस्तकालयों में जाना था, पर समय कहां? हिंदी प्रेमी राजा चक्रधरसिंह ने भांप लिया। तुरंत कार्यक्रम बना डाला कि अचार के लिए बनारस से राई और कलकत्ते से मर्तबान लाने निकला जाए। दीवान साहब सहित पचीस आदमी इस काम पर लगाने का हुक्म देकर राजा साहब भी साथ चले। बाबाजी जब यह घटना हमें सुनाते थे तब राजा साहब के प्रति कृतज्ञता से गद्गद हो जाते थे। ●

—माधुरी मिश्र

गीत नहीं बोएंगे

आयु—२५ वर्ष। शिक्षा—एम. ए. (हिंदी), एम. एस-सी. (गणित)। कवि के शब्दों में "पिछले चार वर्षों से लिख रहा हूं—गीत, कविता, कहानियां सभी। मूलतः कवि। 'गवाक्ष' नाम से खंडकाव्य लिखा है, जो प्रकाशन की प्रतीक्षा में है। टूटते हुए जीवन-मूल्य और ढहते हुए चिंतन-दर्शन मेरे मन में जो संवेदना जगाते हैं, उसी की अभिव्यक्ति गीतों या कहानियों का रूप ग्रहण करती है।"

—१६१, मुहल्ला कन्हैयालाल, गाजियाबाद

रेत की हथेली पर
गीत नहीं बोएंगे।

ढहते हैं सपनों के
ताजमहल, ढह लेंगे
कुहरे को लिपटाकर
सूरज-से दह लेंगे।
पलकों पर मोती का
भार नहीं ढोएंगे।

आदमकद शीशों में
धुंधलायी तसवीरें
दरक-दरक जाती हैं
बिंबों की प्राचीरें
आकृतियां अपनी अब
और नहीं खोएंगे

आभासित होता जो
खड़ा हुआ गंगाजल
इसके भीतर कितनी
भरी हुई है दल-दल
इस गंदले पानी में
शंख नहीं धोएंगे

—योगेन्द्र दत्त

आये फिर दिन

उजले खरगोश-से
आये फिर दिन
धुंध के उतार वस्त्र
निकली है भोर
मृगछौनी धूप करे
डार-डार शोर
लग रही हैं आंख-आंख
सचमुच कमसिन
साबुन से धुली-धुली फैल गयी सांस
नीलकंठ हो गया
नभ का संत्रास
सपने उजियालों के
आंख रही बिन
दूध से नहा रही सूरज की धार
खेल रहा यौवन फिर
बचपन के द्वार
लगा रही बालों में
घास नये पिन
क्षितिजों तक फैल गए
धुले-धुले ठांव
बाग-बाग खेत-खेत बैठ रही छांव
कोयल की कूक रही
सुधियों को गिन

—कुमार रवीन्द्र

जन्म : लखनऊ, १० जून १९४० लखनऊ विश्वविद्यालय से अंगरेजी साहित्य में एम. ए. करने के बाद पिछले १६ वर्षों से स्नातक कक्षाओं का अध्यापन। संप्रति : दयानंद कालेज हिसार में अंगरेजी भाषा एवं साहित्य के व्याख्याता।

अंगरेजी एवं हिंदी दोनों भाषाओं में काव्य-रचना की है। जलरंग चित्रकला में विशेष रुचि। लखनऊ विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित चित्रकला प्रदर्शनियों में पुरस्कृत।

कवि के शब्दों में, "साहित्य के माध्यम से स्वयं को पहचानने की कोशिश लगातार जारी। काव्य-रचना उसी स्वयं के अन्वेषण का परिणाम। अधिकांश कविताएं 'स्व' के शासन से मुक्ति-अभियान से प्रेरित।"

—अंगरेजी विभाग, दयानंद कालेज, हिसार

संक्रमण

जन्म, :१ जुलाई, १९४२ उमरी (मुरादाबाद)। संप्रति : महानंद मिशन महाविद्यालय, गाजियाबाद में हिंदी प्राध्यापक। प्रकाशित संग्रह : 'पिन बहुत सारे'। कवि के शब्दों में, "गीत-लेखन को मैं मेंहदी रचने की प्रक्रिया की तरह मानता हूं। भावना की नर्म-सख्त हथेली पर चिंतन की बारीक सींक से कल्पना जब एक विशेष मानसिक लय में अनुभवों की हरी-भरी मेंहदी को खूब बारीक पीसकर लगाती है तब गीतों का रंग उभरता है। जिस गीत के शब्द कोई रंग नहीं छोड़ते वह गीत मेंहदी नहीं, केवल पानी है।"

—१३३, पुलिस चौकीवाली गली,
डासना गेट, गाजियाबाद

जिसे बनाया वृद्ध पिता के श्रमजल ने
दादी की हंसुली ने मां की पायल ने
उस कच्चे घर की कच्ची दीवारों पर
मेरी टाई टंगने से कतराती है
मां को और पिता को यह कच्चा घर भी
एक बड़ी अनुभूति; मुझे केवल घटना
यह अंतर ही संबंधों की गलियों में
ला देता है कोई निर्मम दुर्घटना
जिन्हें रंगा जलते दीपक के काजल ने
बूढ़ी गागर से छलके गंगाजल ने
उन दीवारों पर टंगने से पहले ही
पत्नी के कर से साड़ी गिर जाती है
जब से युग की चकाचौंध ने, कोहरे ने
छीनी है आंगन से नित्य दीया-बाती
तब से लिपे आंगनों से, दीवारों से
बंद नाक को सोंधी गंध नहीं आती
जिन्हें चिना था घुटनों तक की दलदल ने
सने-पुते-झीने ममता के आंचल ने,
पुस्तक के पन्नों में पिची हुई राखी
उस घर को घर कहने में शरमाती है
साड़ी-टाई बदलें, या ये घर बदलें
प्रश्नचिन्ह नित और बड़ा होता जाता
कारण केवल यही दिखावों से जुड़ हम
तोड़ रहे अनुभूति-भावना से नाता
जिन्हें दिया संगीत द्वार की सांकल ने
खांसी के ठनके, चूड़ी की हलचल ने
उन संकेतोंवाले भावुक घूंघट पर
इंगलिश की चंचल किताब हंस जाती है

—कुंअर बेचैन

उलझ गया कांव

बिखर गया पंखुरी-सा दिन
फूल गयी सेमल-सी रात
पूरब में अकुराया चांद
जाग गयी सपनों की मांद
आ धमका कमरे के बीच
अंधियारा खिड़की को फांद
ओठों पर आ बैठा मौन, बंद हुई सूरज की
बात

अभिलाषा ढूंढ़ रही ठांव
आंसू के फिसल गये पांव
पलकों पर आ बैठी ऊंघ
बरगद में उलझ गया कांव
निंदिया के घर आयी आज, तारों की झिल-
मिल बारात

फुनगी पर बैठ गया छंद
कलियों के द्वार हुए बंद
पछुआ के हाथों को थाम
डोल रहा पागल मकरंद
सिमट गयी निंदिया की देह, सिहर गया
पीपल का पात

—डॉ. किशोर काबरा

जन्म : २६ दिसम्बर, १९३८, मंदसौर (म. प्र.)। प्रकाशित साहित्य : काव्य-संग्रह 'तितली के पंख', 'जलते पनघट : बुझते मरघट', 'बाल रामायण', 'सारथि, मेरे रथ को लौटा ले', शोध-ग्रंथ 'रीति-कालीन काव्य में शब्दालंकार', अनुवाद : 'भागवत प्रसादी', 'हरि का मार्ग'।

कवि के शब्दों में "मेरे लिए कविता भावों को टांगने की कीली है, अंतर में झांकने की खिड़की है। अपनी कविताओं में मैंने यदि समष्टि के विराट को जिया है तो अपने बौनेपन को भी ईमानदारी से स्वीकारा है। मेरे लिए जीवन एक खुला हुआ वक्तव्य है, जिसे हर कोने से पढ़ा जा सकता है। न मैं किसी वाद से बंधा हूं और न किसी खेमे या मंत्र का मुहताज। पूरा आकाश मेरा है, जिसे मैं चाहे जहां से चाक कर सकता हूं।"

संप्रति : केंद्रीय विद्यालय, अहमदाबाद में प्राध्यापक।

—१२०८ ढहेलावाली खिड़की, शाहपुर, अहमदाबाद-३८०००१

गोष्ठी

विनोद पुरी 'रंजू', लुधियाना : (अ) ऑटोमेटिक गियर सिस्टम क्या है ? क्या कोई ऐसी कार है जिसमें यह लगा हो ? (आ) यह कैसे पता चलता है कि कोई सितारा कितनी गति से पृथ्वी से दूर जा रहा है।

(अ) ऑटोमेटिक गियर ट्रांसमिशन में कार को एक गति से दूसरी गति में ले जाने के लिए गियर शिफ्ट लीवर को खिसकाने की आवश्यकता नहीं पड़ती। शिफ्ट लीवर के स्थान पर स्टियरिंग में ही सिलेक्टर लगा होता है। कार को आगे या पीछे ले जाने के लिए सिलेक्टर को खिसकाना भर होता है। अगर आगे जाना है तो सिलेक्टर को सामान्य ड्राइविंग स्थिति में ले आना पर्याप्त है। उसके बाद एक्सीलरेटर दबाने के साथ जैसे-जैसे कार की गति बढ़ेगी या कम होगी, गियर स्वयं अपनी स्थिति बदल लेंगे। यह व्यवस्था हाइड्रॉलिक वाल्वों से परिचालित होती है।

(आ) इस प्रश्न के उत्तर से पहले यह जान लें कि इसका संबंध 'एक्सपैंडिंग यूनिवर्स' या 'ब्रह्मांड फैल रहा है' सिद्धांत से है। इसके अनुसार जब से ब्रह्मांड का निर्माण हुआ है, वह सब दिशाओं में फैल रहा है। हर आकाश-गंगा, हर तारा एक-दूसरे से अत्यंत तीव्र गति से दूर जा रहा है। इसी के बाद यह प्रश्न उठा था कि दूर जाने की गति क्या है और यह भी कैसे कहा जा सकता है कि नीहारिकाएं या तारे हमसे दूर ही जा रहे हैं! यह भी तो हो सकता है कि वे दूर जाने के स्थान पर हमारी ओर ही आ रहे हों? तत्संबंधी गवेषणा के बाद ही 'डाप्लर इफेक्ट' का सिद्धांत विश्व के सामने आया। संक्षेप में इसे यों समझें कि रेलवे-प्लेटफार्म पर खड़ा व्यक्ति रेल-इंजन की सीटी की ध्वनि कैसे सुनता है। यदि दोनों अपनी-अपनी जगह स्थिर हैं तो ध्वनि एक-सी सुनायी देगी, लेकिन यदि इंजन उस व्यक्ति की ओर बढ़ता है तो सीटी की ध्वनि-तरंगें संपीड़ित होंगी और ध्वनि जितनी है उससे तेज सुनायी देगी। और जब इंजन पास से गुजरकर आगे निकल जाएगा तो तुरंत आवाज जितनी है, उससे धीमी हो जाएगी, क्योंकि दूर जाते हुए इंजन की गति सीटी की ध्वनि-तरंगों को खींच रही है। डाप्लर का यही सिद्धांत प्रकाश-तरंगों पर भी बड़ी अच्छी तरह लागू होता है। यदि कोई तारा पृथ्वी की ओर आ रहा है तो वह अपने से अद्भुत प्रकाश-तरंगों को संपीड़ित करेगा और उनकी वेव-लेंथ (तरंग-लंबाई) को छोटा कर देगा। दूसरी ओर यदि तारा पृथ्वी से

दूर जा रहा है तो उसकी गति प्रकाश की वेव-लेंथ को खींचेगी, उन्हें बड़ा कर देगी।

महमूद खां 'निशात', जबलपुर: 'सिलोजिज्म' (Syllogism) क्या है ?

गणितीय तर्क में दो प्राप्त निर्णयों के आधार पर तीसरा निर्णय करने या निष्कर्ष निकालने की प्रक्रिया को न्याय 'सिलोजिज्म' कहते हैं। प्राप्त निर्णयों में से एक सामान्य होता है, जो साध्यपद (Major Premise) कहलाता है और दूसरा विशिष्ट, जिसे लघुपद (Minor Premise) कहते हैं। दोनों को सामने रखकर जो तीसरा निर्णय किया जाता है, उसे निष्कर्ष (Conclusion) कहते हैं। मान लीजिए, कोई कहता है कि सभी यंत्र मनुष्य के कार्य को सरल बनाते हैं, और टेलीफोन एक यंत्र है, इसलिए टेलीफोन मनुष्य के कार्य को सरल बनाता है, तो यह गणितीय तर्क में 'न्याय' कहा जाएगा। इसमें 'सभी यंत्र मनुष्य के कार्य को सरल बनाते हैं', साध्यपद है और 'टेलीफोन एक यंत्र है' लघुपद। इन दोनों से निकलनेवाला निष्कर्ष है—'टेलीफोन मनुष्य के कार्य को सरल बनाता है'।

श्रद्धानंद 'सेवक', नयी दिल्ली : मैजेंटा एक रंग (लाल-नीला) का भी नाम है और इटली के एक शहर का भी। क्या यह रंग (छपाई की स्याही आदि) वहीं से आता है ?

जी नहीं। बात यह है कि इस नील-लोहित रंग का आविष्कार १८५९ में डब्ल्यू. एच. पार्किन नामक वैज्ञानिक ने किया था और इसका नाम उसी वर्ष मैजेंटा नामक स्थान पर फ्रांस और आस्ट्रिया के मध्य हुए युद्ध नाम पर मैजेंटा रख दिया था।

इंदर सिंह, एटा : पोलोनियम क्या है ?

पोलोनियम एक रेडियोधर्मी तत्व है, जिसकी खोज १८९८ में मादाम क्यूरी ने की थी। उनकी जन्मभूमि पोलैंड के नाम पर इसका नामकरण 'पोलोनियम' किया गया। इसकी परमाणु संख्या ८४ है, और परमाणु भार २०९ है।

प्रेमशंकर, नगला गोविंदपुर : हमारे यहां एक व्यक्ति छलनी के छेदों को बंद किये बिना ही उसमें पानी भरकर दिखा देता है ! ऐसा किस प्रकार संभव है ?

यह करिश्मा आप भी दिखा सकते हैं, बस इतना कीजिए कि पानी भरने से पहले छलनी के अंदर ग्रीज, पैराफीन या ग्लीसरीन चुपड़ लीजिए। इससे छेद तो साफ-साफ खुले दिखायी देंगे, लेकिन उन पर एक अदृश्य झिल्ली पड़ जाएगी, जो पानी को रोके रहेगी।

एक प्रश्न चलते-चलते और . . .

क. ख. ग. : अगर पुरुष की सबसे बड़ी कमजोरी स्त्री है तो स्त्री की सबसे बड़ी कमजोरी क्या है ?

पुरुष की सबसे बड़ी कमजोरी को बनाये रखने में असफल रहना।

—प्रज्ञारंजन

कहानी

भोगे हुए क्षणों का दान

• क्रांति त्रिवेदी

हमेशा की तरह दाखिले के लिए बच्चों को साथ लेकर आये युगलों को देखते-देखते उनकी आंखें कड़वा जाती थीं । आज हालत आगे बढ़ गयी थी । स्वेच्छा से पहने विधवाओं-जैसे वस्त्र उन्हें चुभ रहे थे । कुरसी छोड़कर उठने की कुलबुलाहट उन्हें बेचैन करने लगी । सुप्त-निर्बलता के जमाने की पीड़ा उदर में अजन्मे शिशु के, करवट लेने-जैसी सालने लगी । वर्षों से स्थिर रहनेवाले उनके हाथों में कंपन हुआ तो वे प्रतीक्षा करने लगीं कि अब शायद ट्रेन स्टार्ट होने-जैसी 'किर्र... किर्र' की आवाज भी होगी।

"कौन-सा वर्ष लिख दूं ?"

"क्या तुम्हें याद नहीं ?" नारी-स्वर में स्वप्निल इठलाहट थी ।

"याद क्यों नहीं है ! पर पूछे बिना काम करने की आदत जो नहीं है।"

बहुत धीमा स्वर था, पर उनके कान अपनी पूरी सामर्थ्य का उपयोग कर रहे थे, फाइलें देखने का तो एक बहाना था।

"खुशियों से भरी वह रात याद कर लेते बस..." स्वर इस बार बहुत धीमा था।

छि: छि: कैसी छिछली है ! वे तो आपसे तुम पर भी नहीं उतर पायी थीं !

वे दोनों आपस में परामर्श करते हुए स्कूल का फार्म भर रहे थे। झुके हुए सिरों को कनखियों से देखा उन्होंने—एक के बाल करीब-करीब आधे सफेद हो गये थे, दूसरे के बालों में भी कई सफेद धारियां थीं। विरल हो आये बालों के बीच चमड़ी भी झलक रही थी, जिसे देख उनकी अंगुलियां अनजाने ही अपने घने बालों पर खेलने लगीं। छोटे कर लेने के कारण शायद वे इतने घने रह पाये हैं, और उन्हें डाइ कर लेना भी आसान है। पहले उनके बाल बिलकुल सुनहरे थे, अब काले कर लेने पर उनकी शक्ल कितनी बदल गयी थी। भरा हुआ फार्म आगे बढ़ानेवाला हाथ उम्र की स्पष्ट विज्ञप्ति था, फिर भी उन्होंने एक क्षण को मुंह उठाकर देखा। उन आंखों में एक क्षण को कुछ चमका था, फिर न पहचानने के गोलमोल घेरे फैल गये थे। उन्होंने फार्म पर सरसरी नजर डालकर कह दिया था—"तनु को कल भेज दीजिएगा ... तन्वी को।" फिर एकाएक ही वे संकुचित हो गयी थीं—किसी के बच्चे का नाम बिगाड़ने की क्या जरूरत थी?

उन दोनों के जाने के पहले उनसे दूसरे चेहरे की ओर स्थिर दृष्टि से देखे बिना न रहा गया। चेहरे पर संतोष और तृप्ति थी। यह एडमीशन हो जाने के कारण क्षणिक थी अथवा परत-दर-परत बिछी हुई थी ! हां, वह दमदमाता यौवन तो नहीं ही था। आंखों के नीचे ओंठों के आस-पास रेखाएं बिछ चुकी थीं। पीछे जितने बाल काले थे, उतने ही माथे पर बिखरे छोटे-छोटे सफेद बाल थे।

करता, उनके चारों ओर मंडराने लगा।

आपस में मिलने के जब अवसर खोजे जाने लगे तब शलभ चकित हुआ, पूछने लगा, "यह कैसे हुआ ?"

"तुम्हारी आंखों में सांप की आंखों-जैसी मोहनी है ! गलती मेरी ही है जो सारी दिशाएं छोड़ अपनी ओर देखती उन आंखों की ओर निरंतर देखती रही।"

बहुत मुलाकातें हुईं। दिन पंख लगाकर उड़ गये। एक दिन सुबह संदेश मिला— "कल जा रहा हूं ! चाची की बगिया के हरसिंगार के नीचे मिलो, फूल चुनेंगे।"

हंसी थीं वे। शलभ ऐसी ही बातें करता था, इसलिए आश्चर्य नहीं हुआ था; लेकिन जब साड़ी के आंचल को मुट्ठी में बंद कर लेने से शुरुआत करके उसने बाहों में घेर लिया तब वे चकित हुईं ! कुछ क्षणों बाद बोला, "पियरी, अभी इसी क्षण वचन दोगी कि तुम मुझसे ही विवाह करोगी तब तो छोड़ूंगा, वरना..."

शलभ ने जब तक प्रस्ताव भेजा तब तक वचन की रक्षा के लिए उन्हें बहुत कुछ करना पड़ा था। पसंद करने को दिया हुआ सातवां चित्र जब अस्वीकार किया तब मां आंखों में आंसू भर लायी थीं। सबकी इच्छा पर समर्पण को तैयार होतीं तब शलभ का चेहरा सामने आ जाता। यदि किसी और से शादी कर लेतीं तब भी शलभ की स्मृति उन्हें सहज न होने देती, अतः उन्होंने साहस से काम लिया। उनके आगे सबको झुकना पड़ा।

दूसरे दिन तन्वी अपनी मम्मी की अंगुली थामे आ खड़ी हुई तब वे चौंकीं, लगा कि झंझावत से लिपटी कोई सुवासित बयार आ गयी हो। यह क्या कर बैठीं वे ? समाधिस्थल के-से सघन एकांत में सोया स्मृतियों का पक्षी पंख फड़फड़ाकर न उठ बैठेगा ? क्या फिर से वही अंगों को मरोड़ देनेवाली ऐंठन से जूझना पड़ेगा ? क्या फिर रोज चिता जलानी पड़ेगी जिसमें जीवित स्मृतियों को झोंका जा सके ?

★★

चाची के यहां मुंडनोत्सव में पहले-पहल शलभ को देखा था। उन दिनों उन्हें अपने रूप-यौवन को खूब उभारकर दिखाने की आदत थी। उन्हें आश्चर्य नहीं हुआ जब शलभ अपने नाम को सार्थक

**

उन्हें पाकर शलभ बहुत खुश था। उसकी खुशी का अनुभव वे रोम-रोम से करतीं और तृप्त हो जातीं।

उनका समर्पण भी तो पूरा था! अतः जब कहीं से उड़ती हुई खबर आयी कि शलभ किन्हीं मिस शाह के साथ बहुत देखा जाता है तब उनके मन में बहुत दिन तक कोई कीड़ा नहीं रेंगा। तब तक शलभ बिलकुल वैसा ही शलभ था, कहीं राई-रत्ती का फर्क नहीं था; लेकिन एक दिन राई-जैसा फर्क आते ही, उन्हें पता चल गया। तब तो सात परतों के नीचे से भी राई का दाना गड़ने लगा।

पहले जब शाम को दफ्तर से लौटकर शलभ आता था तब देहरी से आंगन तक मुखरित हो जाता था—"पियरी, चाय लगवाओ! तौलिया कहां है..."

नल की कल-कल के साथ वह बोलता चला जाता था। वह कुछ बोल देती तब तो ठीक रहता, वरना कुछ ही देर बाद पूछता—"अरे पिऊ! मैं तो अपनी ही सुनाये जा रहा हूं! तुम भी तो सुनाओ ..."

तब वे सोचती थीं—इस व्यक्ति में कितना जीवन है! बाद में उसके आने पर घर में छाया मौन और सघन होने लगा। अपने और उसके बीच न आने देने के लिए जिन बच्चों को होस्टल भेज दिया था, उनको घर पर रखने को वे छटपटाने लगीं। छुट्टियों में राज और रवि आये भी तो वह [illegible]

घर तो, शलभ मानो अब कपड़े बदलने के लिए ही आने लगा था। उनका दैनिक कार्यक्रम तो वैसा ही रहा, पर शलभ का बदलता गया।

विज्ञान-भवन में बच्चों की कोई फिल्म दिखायी जा रही थी। शलभ को समय नहीं मिल रहा था, अतः वे ही बच्चों को लेकर चल पड़ीं। उनकी टैक्सी को ओवरटेक करके जाती परिचित कार को देखकर वे चौंक पड़ी थीं—'अरे, इसे तो मीटिंग में होना था! और... और यह बगल में तो वही मिस शाह थीं! . . तब प्रेम की भरीपूरी नदी में संशय का कैक्टस जम नहीं पाया था। इस बार उनके शुष्क होते मन ने उसे अपना लिया।

बहुत दिनों नाटक चलता रहा। उन्होंने इतना अवश्य किया कि नौकरी मिलते ही स्वीकार कर ली। बहुत दिनों

तक लगता रहा कि वे सही दिशा में जा रही हैं, कभी लगता कि वे गलती कर गयी हैं। शाम को घर लौटने पर उन्हें कभी गिलासों और प्यालों में लगी लिप-स्टिक दिखायी पड़ जाती। कभी बड़े जतन से काढ़े गये उनके बेडकवर की सलवटें कुछ कहानी कह जातीं।

राज और रवि इंजीनियर हो गये थे। रवि के विवाह के समारोह में पहली बार रोशन उनके सामने आयी। उन्होंने हमेशा यही सोचा था कि रोशन की कमसिनी ही उसका आकर्षण होगी। लेकिन जिस रोशन को उसके सामने खड़े शलभ ने आंखों से ही प्यार बरसा-बरसाकर भिगो दिया था, वह उनकी हमउम्र लगती थी। हां, उसकी आंखों में बसंत बिखरा हुआ था, जबकि उनकी अपनी आंखों के फूल मुरझा चुके थे। शलभ की उस दृष्टि को देखकर एक क्षण में उन्होंने एक निर्णय लिया था।

उसे मुक्ति देंगी वे ! वह जिसे प्यार करता है उसे पत्नी बनाये।

उनका मन कहता था कि जो नहीं मिल रहा है उसे पाकर शलभ के मन की ललक एक बार मिट गयी तो दूसरी बार भी मिटेगी। वह जो चिरनवीन रहने को थी, वही समय के प्रभाव में बनेगी, बिगड़ेगी। वह भी किसी दिन उस वेदना का अनुभव करेगी।

शलभ से विवाह न हुआ होता तो क्या उन्होंने इसके विषय में सोचा होता ? प्रश्नों के अंबार ने ही एक दिन उन्हें समाधान सुझा दिया।

मधुयामिनी के लिए रवि के जाते ही, उन्होंने अपना प्रस्ताव सामने रख दिया। फिर प्रतिक्रिया देखने को उन्होंने आंखें उठायी थीं, पर आंखें उसके चेहरे पर अटककर रह गयीं। कौन कहेगा वह पैंतालीस का है ! चेहरे पर कहीं उम्र के निशान नहीं थे ! सिर्फ माथे के किनारे बालों में कुछ सफेदी आ गयी थी। उनका प्रस्ताव सुनकर उसे दुःख हुआ हो, ऐसा नहीं लगा। चेहरे पर कुछ आश्चर्य से घिरा सुख दिखायी देने लगा था। उन्होंने दंश को तीखा बनाने के लिए यह जोड़ दिया कि यदि वह सारी जायजाद और बैंक-एकाउंट उनके नाम कर दे तो वे स्वेच्छा से तलाक का रास्ता सरल कर देंगी। उनके अंतर्मन में कहीं यह इच्छा छिपी थी कि क्यों न रोशन भी नया जीवन उन्हीं विषम परिस्थितियों में आरंभ करे जिसमें उन्होंने किया था ! शलभ सब कुछ आसानी से मानता चला गया था। कितना उत्सुक था वह रोशन को अपनाने के लिए !

उन्होंने शलभ से अलग होकर सोचा था कि वे सामान्य, साधारण कमजोर औरत तो कम-से-कम नहीं थीं।

कुछ दिनों से सारा स्कूल लक्ष्य कर रहा है कि स्कूल की प्रिंसिपल श्रीमती प्रियंवदा तन्वी को रोज दफ्तर में बुलाती हैं, और उससे जाने क्या-क्या पूछती रहती हैं!

सी-९/१४ ... नगर, नयी दिल्ली

सौंदर्य-सर्जरी

● मोहनी जोशी

चेहरा एक चुंबक या फिर चेहरा एक चांद! देखनेवाले देखें तो बार-बार देखना चाहें। किसी दुर्घटना में ऐसे किसी चेहरे का कोई भाग क्षत-विक्षत हो जाए तो देखनेवाले जरूर नजरें फेर लेंगे। अगर यह चेहरा किसी महिला का हो, तो उसकी पीड़ा का अनुमान ही लगाया जा सकता है। ऐसे अवसरों पर कॉस्मेटिक सर्जरी काम आती है। कॉस्मेटिक सर्जरी, अर्थात ब्यूटी सर्जरी का विकास प्लास्टिक सर्जरी के साथ-साथ हुआ है।

प्लास्टिक सर्जरी का अधिक प्रचलन युद्धकाल की देन है। कॉस्मेटिक सर्जरी या सौंदर्य-शल्य-चिकित्सा का उपयोग विशेषकर चेहरे को सुंदर बनाने के उद्देश्य से ही किया जाता है। सौंदर्य-सर्जरी में छोटी-से-छोटी बात पर भी जितना अधिक ध्यान दिया जाता है उतना अन्य किसी शल्य-चिकित्सा में साधारणतः नहीं दिया जाता। अत्यंत सावधानी बरतने पर ही इसके परिणाम संतोषजनक होते हैं। सौंदर्य-सर्जरी का पहला प्रयोग अमरीका के डॉक्टर चार्ल्स मिलर ने किया था। जरमनी की मैडम ए नोएल ने भी १९२६ में 'ल सर्जी एस्थेतिके सं रोले सोशिएल' नामक पुस्तक लिखी। इस पुस्तक से शल्य-चिकित्सा की इस शाखा को विशेष प्रोत्साहन मिला।

हमारे देश में भी प्लास्टिक-सर्जरी कोई नया विषय नहीं है और अब तो इस क्षेत्र में हमारे देश ने आशातीत सफलता प्राप्त कर ली है। आज भारत में सौंदर्य-सर्जरी अनेक दोषों को दूर करने के लिए की जा रही है।

फेस-लिफ्ट : यह आपरेशन चेहरे की

फेस लिफ्ट : चेहरे की झुर्रियों को मिटाने के लिए किया गया आपरेशन

बाय से: ठोड़ी के आकार को ठीक करके चेहरे में काफी सुधार आ सकता है।
सुंदरता बढ़ाने के लिए गाल में कृत्रिम गढ़ा बनाया गया है।

झुर्रियों को मिटाने के लिए किया जाता है। यह कहना कठिन है कि सर्वप्रथम ऐसा आपरेशन किसने किया, लेकिन इसमें संदेह नहीं कि इस शताब्दी के प्रारंभ में अमरीका एवं यूरोप के सर्जन इस प्रकार के कुछ आपरेशन कर रहे थे।

इस आपरेशन में कान के ऊपर, आगे-पीछे की त्वचा को काटकर झुर्रियां मिटायी जाती हैं। इससे चेहरे में कसाव आ जाता है और व्यक्ति अपनी उम्र से कहीं कम दिखने लगता है। पिछले दस-बारह वर्षों में इस उपचार की मांग बहुत बढ़ गयी है। इसका सीधा सा कारण है—परिणाम का पूर्णतः संतोषजनक होना। अब तक इसके चिकित्सार्थियों में महिलाओं का ही बाहुल्य था, परंतु अब पुरुष वर्ग भी इस ओर आकर्षित होने लगा है।

केमाब्रेशन और डर्माब्रेशन : चेहरे में चेचक अथवा कुछ प्रकार के दागों और महीन झुर्रियों को मिटाने के लिए यह आपरेशन किया जाता है। रासायनिक प्रक्रिया द्वारा दागयुक्त त्वचा को छील दिया जाता है। यह उपचार सांवले रोगियों की अपेक्षा गोरे रोगियों पर अधिक सफल होता है।

रिनोप्लास्टी : नाक की सुंदरता को बढ़ाने के लिए यह आपरेशन किया जाता है। नाक की सर्जरी भारत और मिस्र में ईसा से २५ से ६०० वर्ष पूर्व तक किये जाने का उल्लेख मिलता है। नाक कट जाने पर माथे की त्वचा का उपयोग नाक की पुनर्रचना के लिए किये जाने का वर्णन २,००० से अधिक वर्ष पूर्व लिखी गयी 'सुश्रुत संहिता' में मिलता है। इस प्रकार के आपरेशन लगभग उन्हीं दिनों भारत के अतिरिक्त मिस्र और मध्यपश्चिम के देशों में भी किये जाते थे। १४५० ई. में इस विधि का उपयोग इटली में किया गया।

१५९७ में लिखी गयी एक पुस्तक में नाक की पुनर्रचना के लिए बांह की त्वचा का उपयोग किये जाने का उल्लेख मिलता है। इटली के डॉक्टर तग्लिया

कोजी ने इस विधि का [illegible] किया।

डॉ. तग्लिया कोजी यह आपरेशन करने के बाद चर्च के आक्रोश के शिकार हुए, क्योंकि उस समय तक चर्च का दृष्टिकोण था कि इस प्रकार के दोष परमात्मा की इच्छा से होते हैं, अतः इनमें कोई हेर-फेर नहीं करना चाहिए।

भारत में भी इस चिकित्सा-विधि में काफी प्रगति हुई। मद्रास गजट की एक रिपोर्ट के अनुसार पूना के डॉ. माहरत्ता ने एक बैलगाड़ी हांकनेवाले की कटी नाक को भारतीय विधि से ठीक किया था। इससे प्रेरित होकर १८१४ में अंगरेज डॉक्टर जोसेफ कारप्यू ने एक अफसर की नाक को इसी विधि से ठीक किया था।

नाक के आपरेशन का एक रूप नाक के आकार को घटाना या बढ़ाना भी होता है। बहुत छोटी नाक लंबी की जा सकती है। इसी प्रकार लंबी नाक को छोटा किया जा सकता है। ऐसे आपरेशन का प्रारंभ अमरीकी डॉक्टर रो ने १८९८ में किया था। उसके बाद इस प्रकार के आपरेशन की विधि का इतनी तेजी से प्रसार हुआ कि जिन डॉक्टरों ने पिछले चालीस वर्षों में इसमें योगदान दिया है, उन्हें सूचीबद्ध करना असंभव है।

मेंटोप्लास्टी : यह आपरेशन ठोड़ी के आकार को ठीक करने के लिए किया जाता है। आगे को निकली हुई टोड़ी सुंदर नहीं मानी जा सकती। इसी प्रकार
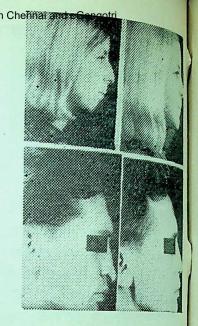
बालिका के चेहरे में मेंटोप्लास्टी एवं रीनोप्लास्टी दोनों की गयी हैं
युवक के चित्र में रीनोप्लास्टी का कमाल

बहुत छोटी ठोड़ी से भी चेहरा कुरूप लगता है। मेंटोप्लास्टी द्वारा ये दोनों दोष दूर हो जाते हैं।

प्रॉग्नेथिज्म : कुछ व्यक्तियों के जबड़े बहुत चौड़े या लंबे होते हैं। ऐसे बिगड़े हुए जबड़ों की दशा को प्रॉग्नेथिज्म कहते हैं। सौंदर्य-सर्जरी द्वारा इनका अनुपात भी सही कर दिया जाता है।

चीलियोप्लास्टी : होंठ की सुंदरता बढ़ानेवाले आपरेशन को चीलियोप्लास्टी कहा जाता है। इसके द्वारा मोटे, लटके हुए, आकारहीन होंठों को सुंदर आकार

प्रदान किया जाता है।

ऑटोप्लास्टी : यह आपरेशन कान की आकृति सुधारने के लिए किया जाता है। जिन बच्चों के कान खड़े होते हैं, उन्हें उनके साथी बालक चिढ़ाते हैं। इससे बच्चे में हीन भावना आ जाती है। अतः कम उम्र में ही ऐसे कान आपरेशन द्वारा ठीक करवा लेने चाहिए।

ब्लेफैरोप्लास्टी : इसे आइलिड सर्जरी भी कहते हैं। पलकों के आपरेशन का इतिहास दसवीं शताब्दी में अरब देशों में मिलता है। यूरोपीय चिकित्सा साहित्य में इस प्रकार की शल्य-चिकित्सा का उल्लेख १७९२ के पहले नहीं मिलता। १८१८ में ब्लेफैरोप्लास्टी (पलकों की पुनर्रचना) शब्द का पहले-पहल प्रयोग किया गया। आजकल इस शब्द का अर्थ पलकों की मोटाई को कम करने के लिए किया जाता है।

डिंपल चीक : गाल में गढ़े पड़ना सुंदरता का प्रतीक माना जाता है। सौंदर्य-सर्जरी द्वारा अब नकली गढ़ा बनाने का कमाल भी हासिल हो चुका है। इसके लिए चेहरा गोल एवं भरा हुआ (मांसल) होना चाहिए। इसके लिए एक छोटा-सा आपरेशन मुंह के अंदर से ही किया जाता है। इसके द्वारा मनचाही जगह पर डिंपल बनाया जा सकता है अर्थात कुछ लोग एक गाल पर डिंपल बनाना चाहते हैं कुछ दोनों गालों पर और कुछ लोग ठोड़ी पर। इस आपरेशन का कोई भी निशान चेहरे में, बाहर से नहीं दिखता और यह डिंपल पूर्णतः प्राकृतिक लगता है।

इस आपरेशन की विशेषता यह है कि साधारण स्थिति में यह डिंपल नहीं दिखता। यह तभी दिखेगा जब वह व्यक्ति (जिसके डिंपल बनाया गया हो) हंसे। इस प्रकार लोग इसे प्राकृतिक ही समझेंगे।

लखनऊ में ऐसे आपरेशन का सर्वप्रथम प्रयोग डॉ. रमेशचंद्र (रीडर प्लास्टिक सर्जरी विभाग, लखनऊ मेडिकल कॉलेज) ने अभी हाल में किया और उन्हें पूर्ण सफलता मिली। यह आपरेशन पांच से दस मिनट तक की अवधि में संपन्न हो जाता है। इसमें कोई तकलीफ भी नहीं होती।
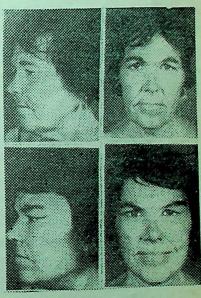
फेस लिफ्ट : चेहरे की झुर्रियों को मिटाने के लिए किया गया आपरेशन

हेयर ट्रांस्प्लांटेशन : सौंदर्य-सर्जरी द्वारा अब गंजपन का इलाज भी संभव हो गया है। इस इलाज के लिए पिछले दशक में केश प्रतिरोपण किया जाने लगा है। इसकी सफलता ने इसे आज जनप्रिय बना दिया है। केश-प्रतिरोपण का प्रयोग उन स्थितियों में किया गया जहां असमय में गंजापन हो रहा हो।

केश-प्रतिरोपण की एक विधि यह है कि गंजे स्थान की त्वचा को निकालकर वहां बालयुक्त त्वचा लगा देना। यह बालयुक्त त्वचा रोगी के ही शरीर के अन्य भाग से ली जाती है और केश-प्रतिरोपण कर दिया जाता है।

गंजेपन के संदर्भ में समझने योग्य बात यह है कि सिर के एक वर्ग इंच में करीब एक हजार बाल होते हैं। सिर का क्षेत्र करीब सौ से एक सौ बीस वर्ग इंच तक होता है, जिसका मतलब यह हुआ कि सिर में कुल बालों की संख्या एक लाख या एक लाख बीस हजार तक होगी।

जब गंजापन प्रारंभ होता है तब बाल सैकड़ों की तादाद में गिरते हैं। यह क्षरण सामने अथवा पीछे के हिस्से में अधिक प्रभावी होता है। अधिकांशत: गंजे व्यक्ति के कानों के पास से पीछे तक बालों की एक झालर मात्र बच जाती है। इसी झालर से पंच ग्राफ्ट लेकर गंजे हिस्से में प्रतिरोपित कर दी जाती है, क्योंकि इस झालर की जड़ें सामान्यत: काफी मजबूत होती हैं। प्रतिरोपित बालों की संख्या अधिक-से-अधिक सैकड़ों में होती है, अत: बाल उतने घने तो नहीं हो पाते, जितने प्राकृतिक होते हैं, परंतु फिर भी बिलकुल गंजेपन से तो व्यक्ति बच ही जाता है। यह एक सामान्य आपरेशन है। इसे लोकल एनस्थीसिया देकर भी संपन्न किया जा सकता है।
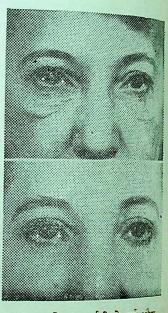
प्लास्टिक सर्जरी से पूर्व और बाद में चेहरे की स्थिति।

सौंदर्य-सर्जरी के संदर्भ में लखनऊ के सुप्रसिद्ध प्लास्टिक सर्जन, प्रोफेसर रवींद्रनाथ शर्मा का उल्लेख करना असंगत नहीं होगा। डॉ. शर्मा लखनऊ मेडिकल कालेज के प्लास्टिक सर्जरी के विभागाध्यक्ष हैं।

मैं स्वयं डॉ. शर्मा की पेशेंट रह चुकी

हूं। मेरे चेहरे की सौंदर्य सर्जरी करके डॉ. शर्मा ने न केवल मुझे नया जीवन दिया, वरन उन्होंने मेरे खोये हुए आत्मविश्वास को भी जगा दिया। कुछ वर्ष पूर्व मैं एक कार-दुर्घटना में गंभीर रूप से घायल हो गयी थी। चोट सिर्फ चेहरे में आयी और चेहरा बुरी तरह से बदशक्ल हो गया था। मेरे चेहरे में अनगिनत फ्रैक्चर हो गये थे। डॉ. शर्मा ने अथक प्रयास एवं धैर्य

नया जीवन देने में जुटा है। केंद्रीय सरकार ने अपनी चौथी पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत इस विभाग को दस लाख रुपये का अनुदान दिया है तथा इसे पोस्टग्रेजुएट विभाग बनाने की अनुमति भी दी है। स्थानीय सरकार भी इसे माकूल अनुदान देती है। इस विभाग में जले हुए लोगों के लिए एक अलग यूनिट बना दी गयी है। यहां ऐसे रोगियों का विशेष उपचार

बायें से : कार दुर्घटना से पूर्व एवं दुर्घटना के बाद सौंदर्य सर्जरी के बाद लेखिका।

से मेरा इलाज किया। वैसे तो मेरे कई आपरेशन हुए परंतु इनमें सबसे बड़ा आपरेशन वह था जबकि मेरे टूटे हुए जबड़े तथा ठोड़ी को उचित आकार दिया गया। डॉ. शर्मा ने किस कुशलता से मेरे चेहरे की कायापलट कर दी, इस बात के साक्षी हैं ऊपर के चित्र।

डॉ. शर्मा की मेहनत के फलस्वरूप आज लखनऊ मेडिकल कालेज का प्लास्टिक सर्जरी-विभाग पूरी कुशलता एवं सफलता के साथ असंख्य विकलांगों को

किया जाता है।

डॉ. शर्मा का कहना है कि अभी भी इस विभाग में कुछ कमियां हैं जो धनाभाव के कारण पूरी नहीं हो पा रही हैं। उनका सपना है कि वे यहां एक टिशू बैंक (Tissue Bank) की स्थापना करेंगे। अगर धनी लोग मानवता की सहायता के लिए उदारता से दान दें तो डॉक्टर शर्मा का यह सपना जल्दी ही पूरा हो सकता है।

—३७, खुर्शेदबाग, लखनऊ-४

हिंदी मेरी मौसी

माधवराव सप्रे प्रारंभिक हिंदी पत्रकारिता के महान स्तंभ थे। वे अहिंदीभाषी होते हुए भी हिंदी के उद्भट साहित्यकार एवं समर्थक थे। हिंदी-जगत ने उनका सम्मान अखिल भारतीय पंचदश हिंदी-साहित्य-सम्मेलन, देहरादून (१९२४) का सभापति बनाकर किया था। सप्रे ने राष्ट्रभाषा हिंदी की अभिवृद्धि के लिए अपना जीवन अर्पित कर दिया। उनका कथन था: "**मराठी मेरी मातृभाषा है, पर मैं अपनी मां की गोद में नहीं पला हूं। हिंदी मेरी मौसी है और मुझे पाला-सम्हाला करती है। इसलिए जो कुछ सेवा बनी, मौसी की ही कर पाया।**" सप्रे मराठी और अंगरेजी के भी विद्वान थे, परंतु उन्होंने अपना समस्त कार्य हिंदी में ही करने का निश्चय कर लिया था। उन्होंने हिंदी के 'केसरी' (३ अगस्त, १९०७) में लिखा था—"पंजाब के हमारे कई ग्राहक अंगरेजी में पता लिखने के लिए आग्रह करते हैं। उनसे हमारी विनती है कि वे हमें नागरी छोड़कर अंगरेजी लिपि में पता लिखने के लिए लाचार न करें, किंतु देर से मिलने अथवा न मिलने की शिकायत वे अपने डाकखाने से करें तो सब प्रबंध हो जाएगा।"

एक बार उनका 'महाराष्ट्र बाल-समाज', जबलपुर में भाषण था। वहां उपस्थित मराठी-भाषी लोगों ने उनसे प्रार्थना की कि इन बालकों को आप इनकी मातृभाषा मराठी में ही उपदेश दें। इस पर सप्रे ने कहा कि मेरा हिंदी भाषण इन बालकों की समझ में जरूर आएगा और उन्होंने हिंदी में ही भाषण किया।

—देवीसिंह राठौर

जीवन की पूरी बचत दान में

कल्याण में वृहत गुजरात एजूकेशन सोसायटी द्वारा संचालित एम. जे. बी. कन्या विद्यालय की चपरासिन भीमाबाई पाटिल ने अपने जीवन की पूरी बचत बारह हजार रुपये विद्यालय में एक हॉल के निर्माण के लिए दान करके एक अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किया है। विद्यालय ने हॉल का नामकरण उसके नाम पर कर दिया है और उसमें विज्ञान की प्रयोगशाला तथा पुस्तकालय चलने लगे हैं।

भीमाबाई ने इस विद्यालय में नौकरी १९५७ में ३० रुपये मासिक से शुरू की थी और अब उसे सवा दो सौ रुपये मिलते हैं। उसका अपना कोई बच्चा नहीं है और विद्यालय की छात्राओं को वह अपने

बच्चों-सा ही मानतीं तथा प्यार करती है।

बच्चे भी उसे बहुत चाहते हैं। यह पूछे जाने पर कि अपने पैसे से बने हॉल का बच्चों द्वारा उपयोग होते देखकर उसे कैसा लगता है, वह कहती है, "मैं खुशी से भर उठती हूं कि मेरा पैसा किसी सार्थक काम में लगा।"

भीमाबाई ने वेतन से बचायी राशि तो दी ही, विद्यालय में एक छोटी सी कैंटीन भी चलायी और उससे हुई आय भी दे दी।

भीमा बाई

सात साल पहले उसने महसूस किया कि कल्याण में बच्चों को घर से स्कूल ले जाने की समुचित सुविधा नहीं है। उसकी पहल पर उसके पति ज्ञानदेव ने, जो बढ़ई का काम करते हैं, इस काम के लिए साइकिल-रिक्शा चलाना शुरू किया। अब उनके पास पांच रिक्शे हैं। इनसे होनेवाली आमदनी से वे अपने घर के पास मंदिर बनवा रहे हैं।

हाल में विद्यालय ने एक समारोह आयोजित करके भीमाबाई और उसके पति का सम्मान किया। उसे साड़ी, ब्लाउज और पति को धोती, कमीज भेंट किये गये। हमेशा देते रहने की आदतवाली भीमाबाई इस सम्मान से इतनी विभोर हो गयी कि उसने उसी समारोह में नौ सौ रुपये कीमत की स्टेनलेस स्टील की दो टंकियां बच्चों के लिए पीने का पानी रखने को दान में दे दीं।

—अनामिका

खलीफा का वेतन

हजरत अबूबक्र सिद्दीक की नियुक्ति जब खलीफा के पद पर हुई तब प्रश्न उठा कि खलीफा को कितना वेतन दिया जाए। कई दिनों तक विचार-विमर्श होता रहा। अंत में तय हुआ कि यह निर्णय स्वयं खलीफा पर ही छोड़ दिया जाए। हजरत अबूबक्र सिद्दीक के सामने जब यह प्रस्ताव रखा गया तब उन्होंने कहा, "मदीना में एक मजदूर की प्रतिदिन की जो आमदनी है, वेतन के रूप में प्रतिदिन मैं भी उतना ही लूंगा।"

लोगों ने कहा, "हुजूर इतनी कम रकम में आप कैसे गुजारा करेंगे?"

हजरत अबूबक्र ने जवाब दिया, "जिस तरह एक मजदूर गुजारा करता है, मैं भी करूंगा। इससे लाभ यह होगा कि मैं सदैव यह प्रयत्न करूंगा कि मजदूरों की आय बढ़ती रहे ताकि मेरा वेतन भी बढ़ता रहे।"

—फरीदा नसरुद्दीन

वचन वीथी

सुचिंतन बुद्धिमत्ता की निशानी है, सुयोजना और अधिक बुद्धिमत्ता की; लेकिन सुकार्य इन सबमें श्रेष्ठ है और सर्वाधिक बुद्धिसंपन्नता का द्योतक है।

—फारसी कहावत

अच्छे लेखक के सम्मुख भी कुछ कठिनाइयां होती हैं। ये हैं—प्रकाशनयोग्य सामग्री का सृजन, ईमानदार प्रकाशक और सही पाठक।

—कॉल्टन

क्रोध करने का अर्थ है दूसरों की गलतियों का अपने से बदला लेना।

—पोप

सद्‌गुणों का होना ही काफी नहीं है। उन्हें व्यवस्थित रखना भी नितांत आवश्यक है।

—रोशफोकॉल्ड

कोई भी सहृदय व्यक्ति, सूरज की तरह सबसे गिरी हुई दशा में भी अपने महान व्यक्तित्व की झलक दिखाता है।

—सर पी. सिडनी

इनसान को जानने की अपेक्षा इनसानों को जानना कहीं अधिक आसान है।

—रोशेफूकाल

सोना और धूल

महाराष्ट्र में पंढरपुर के रांकाजी प्रसिद्ध संत हुए हैं। स्वयं तो त्यागी थे ही उनकी पत्नी भी पूरी तरह उनकी अनुगामी थीं। एक बार पति-पत्नी दोनों ही लकड़ी काटने जंगल जा रहे थे। रांकाजी आगे चल रहे थे और पत्नी पीछे। अचानक रांकाजी के पैर में ठोकर लगी। उन्होंने झुककर नीचे देखा तो स्वर्ण-मुद्राओं से भरा कलश पड़ा था। उन्हें लगा कि कहीं ऐसा न हो कि पत्नी यह स्वर्ण राशि देख ले और लोभ में पड़ जाए। उन्हें सूझा कि कलश धूल से ढक देने से उस पर नजर न पड़ेगी। वे कलश ढकने लगे। इसी बीच पीछे आ रही पत्नी भी पास पहुंच गयी और रांकाजी से पूछा कि वे क्या कर रहे हैं। रांकाजी ने कहा कि स्वर्ण-मुद्राओं से भरा कलश है, लेकिन हमारे काम का नहीं। मुझे लगा कि कहीं तुम्हारा स्त्री-सुलभ लोभ न जाग उठे और हमारी तपस्या में विघ्न पड़ जाए, इससे इसे धूल से ढक रहा हूं। पत्नी बोली, "नाथ! हमारे लिए तो यह स्वर्ण भी धूल है। फिर धूल को धूल से ढकने से क्या फायदा?" इतना कहकर जब वह आगे बढ़ने लगी तब रांकाजी को बोध हुआ। वे मन ही मन कह उठे कि, 'मैं तो अभी तक स्वर्ण और धूल को अलग-अलग ही समझता रहा। वैराग्य के मार्ग पर मुझसे यह कहीं बहुत आगे है।"

—श्यामसुन्दर शुक्ल

सौगात

उमर के आंगन में
जनम की कैद बुलबुल हूं
जिसके
दोनों पांवों में
बरस की बेड़ी पड़ी है
डाली पर लटके
बंद पिंजरे में
सख्त मनाही की
अंगुली के इशारे पर
लेकिन
आभिजात्य के पहरे में
सुबह से शाम की
परिक्रमा की दूरी
कटती जाती है
कभी-कभी
दर्द का बौरहा पवन
मौसम की खिड़की का परदा
उठा-उठाकर
क्षण की सिफारिश पर
लट सुलझा जाता है
कानों में
कुछ कह जाता है
और
ऋतु क्यारी की
अलसायी जूही
रात के पिछले पहर में
सुगंध की सौगात
दे जाती है
तब से
निर्दय संदेह
अभिशाप के अपराध में
जाने क्यों
रात-रात भर
जगाता रहता है

—इन्दुमती देवी

"बोझिल दांपत्य जीवन दहलीज से आंगन तक की परिधि में फिरकी-जैसा घूमता रहता है। असमंजस की निःसंगता के क्षण में भीतर-भीतर प्रसव-पीड़ा जैसी टीस होती रहती है और उसी टीस में मानवता की सौगात के रूप में कविता जन्म लेकर आती है।"

—शाह आलम नगर (जि. सहरसा) बिहार

पौराणिक कालगणना

● जैनेन्द्र वात्स्यायन

पौराणिक साहित्य में तीन प्रमुख काल-गणना-पद्धतियों का वर्णन है—युग, मन्वंतर और कल्प। युग-गणना का आधार है—सतयुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग और कलियुग। मन्वंतर—गणना में स्वयंभुव, स्वरोचिष, तामस, उत्तम, रैवत, चाक्षुष आदि चौदह मन्वंतरों को आधार बनाया गया है। कल्प-गणना नभ में स्थित सप्तर्षि ग्रहों की स्थिति के मापन पर आधारित है।

सर्वप्रथम हम युग-गणना पद्धति को लेते हैं। इसमें चार युग आते हैं। देवताओं के बारह हजार वर्षों के सतयुग, त्रेता, द्वापर और कलि नामक चार युग होते हैं। इनका परिणाम क्रमशः चार, तीन-दो और एक हजार वर्ष होते हैं। सामने वाले पृष्ठ पर प्रथम तालिका देखें।

पौराणिक साहित्य में लोकपितामह ब्रह्मा की आयु एक सौ वर्ष कही गयी है, किंतु यह एक सौ वर्ष सामान्य लोगों की वर्ष-गणना से भिन्न है। इस सौ वर्ष को 'पर' कहा जाता है और इसका आधा परार्द्ध कहलाता है—**निजेन तस्य मानेन आयुर्वर्षशतं स्मृतम्। तत्पराख्य तदर्द्धं च परार्द्धमभिधीयते॥ (विष्णु-पुराण १/३/५)।** ब्रह्मा की गणना में एक दिन एक हजार पर्यायों का बनता है। एक पर्याय में चारों युग को जोड़ देने से—कृत (सत) १७,२८,००० + त्रेता १२,९६,००० + द्वापर ८,६४,००० + कलि ४,३२,००० का योगफल ४३,२०,००० आता है। इसमें एक हजार का गुणा कर देने से ब्रह्मा का एक दिन ४,३२,००,००,००० वर्ष के बराबर होता है।

ब्रह्मा के एक दिन में चौदह मनु होते हैं। इकहत्तर चतुर्युग से कुछ अधिक काल का एक मन्वंतर होता है। इस प्रकार दिव्य वर्ष-गणना से एक मन्वंतर में ८,५२,००० वर्ष होते हैं। मानवी वर्ष गणना के अनुसार मन्वंतर का पूरा परिमाण ३०,६७,२०,००० वर्ष होता है और इस काल का चौदह गुना ब्रह्मा का एक दिन होता है। ब्रह्मा का एक परार्द्ध बीत चुका है—और दूसरा चल रहा है। इनकी रात्रि के काल को नैमित्तिक प्रलय काल कहा जाता है। इस प्रलयकाल में भूर्लोक, भुवर्लोक और स्वर्लोक, तीनों जलने लगते हैं और महर्लोक में रहनेवाले सिद्ध गण अति संतप्त होकर जनलोक को

चले जाते हैं। इस रात्रि के बीत जाने पर पुनः संसार की सृष्टि होती है—**तत्प्रमाणं हि तां रात्रिं तदन्ते सृजते पुनः** (वि. प्र. १/४/२५)। प्रत्येक कल्प के आरंभ में जो अवतार ब्रह्मा द्वारा लिया जाता है, उस कल्प का वही नाम होता है।

काल-सीमा

पौराणिक साहित्य में वर्णित युगों की काल-मर्यादा अतिशयोक्तिपूर्ण ही लगती है। जयचंद विद्यालंकार ने चारों युगों के पौराणिक काल-विभाजन की समीक्षा राजनीतिक दृष्टि से करने का प्रयास किया है। उन्होंने वैवस्वत मनु से लेकर भारत-युद्ध तक चौरानवे पीढ़ियों का परिगणन करनेवाले पार्जिटर के सिद्धांत को स्वीकार किया है एवं उसी सिद्धांत को भारत-युद्ध कृतयुग, त्रेतायुग और कृष्ण (९५ वीं पीढ़ी) के देहावसान के साथ द्वापर युग की समृद्धि माना है। उनका यह सिद्धांत नीचे दी हुई द्वितीय तालिका में ग्रथित किया गया है।

जयचंद विद्यालंकार द्वारा भारत-युद्ध का काल ईसा पूर्व निर्धारित करते हुए कृत, त्रेता और द्वापर का जो काल-निर्णय किया गया है, वह नीचे प्रकाशित तृतीय तालिका में स्पष्ट है।

प्रथम तालिका

सतयुग	१२×४=४८००	दिव्य वर्ष	३६०=	१७,२८,०००
त्रेतायुग	१२×३=३६००	„ „	३६०=	१२,९६,०००
द्वापरयुग	१२×२=२४००	„ „	३६०=	८,६४,०००
कलियुग	१२×१=१२००	„ „	३६०=	४,३२,०००

द्वितीय तालिका

कृतयुग	१ से ४० पीढ़ियां	प्रारंभ से सगर राजा तक	४०×१६=६४० वर्ष
त्रेतायुग	४१ से ६५ „	सगर राजा से राम दाशरथि तक	२५×१६=४०० वर्ष
द्वापरयुग	६५ से ९५ „	राम दाशरथि से कृष्ण तक	३०×१६=४८० वर्ष
कलियुग	—	भारत-युद्ध के बाद	१,०५० वर्ष

प्रथम तीन युगों की काल-मर्यादा का योग=६४०+४००+४८०= १,५२० वर्ष

तृतीय तालिका

कृतयुग	२९५० ई. पू.—	५३०० ई. पू.
त्रेतायुग	५३०० ई. पू.—	१९०० ई. पू.
द्वापरयुग	१९०० ई. पू.—	१४२५ ई. पू.
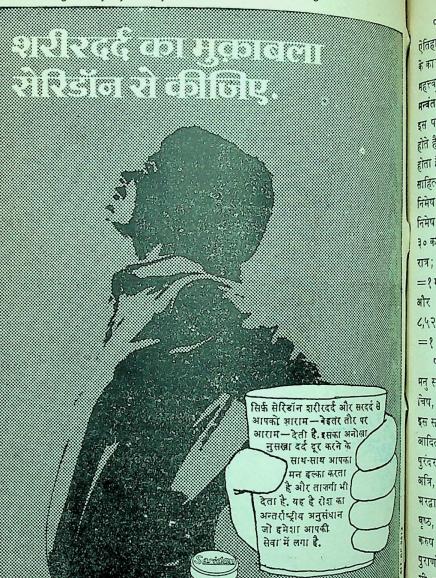
पौराणिक जानकारी को तर्कशुद्ध एवं ऐतिहासिक खेमे में बैठाने के इस प्रयास के कारण विद्यालंकार का उपर्युक्त सिद्धांत महत्त्वपूर्ण प्रतीत होता है।

मन्वंतर गणना-पद्धति

इस पद्धति में कुल चौदह मन्वंतर प्राप्त होते हैं। चौदह मन्वंतर मिलकर एक कल्प होता है। इस पद्धति के परिणाम पौराणिक साहित्य में वर्णित हैं—२ त्रुटि=१/२ निमेष; २ आधा निमेष=१ निमेष; १५ निमेष=१ काष्ठा; ३० काष्ठा=१ कला; ३० कला=१ मुहूर्त; ३० मुहूर्त=१ अहोरात्र; १५ अहोरात्र दिन=१ पक्ष; २ पक्ष=१ मास; ६ मास=१ अयन (दक्षिणायण और उत्तरायण); २ अयन=१ वर्ष; ८,५२,००० वर्ष=१ पर्याय; ७१ पर्याय=१ मन्वंतर; १४ मन्वंतर=१ कल्प।

पौराणिक साहित्य के अनुसार प्रथम मनु स्वयंभुव थे। तत्पश्चात क्रमशः स्वारोचिष, उत्तम, तामस, रैवत, चाक्षुष हुए। इस समय सूर्यपुत्र मनु मन्वंतर हैं। इसमें आदित्य, वसु और रुद्र आदि देवगण तथा पुरंदर नामक इंद्र हैं। वसिष्ठ, काश्यप, अत्रि, जमदग्नि, गौतम, विश्वामित्र और भरद्वाज—ये सप्तर्षि हैं। इक्ष्वाकु, नृग, धृष्ठ, शर्याति, नरिषंत, नाभाग, अरिष्ट, करुष और पृषध्र—ये उनके पुत्र हैं। पुराणों में भावी सात मन्वंतर मनुओं का भी उल्लेख हुआ है, जो इस प्रकार है—आठवें मन्वंतर में सावर्णि, नवें में दक्ष सावर्णि, दसवें में ब्रह्म सावर्णि, ग्यारहवें में धर्म सावर्णि, बारहवें में रुद्रपुत्र सावर्णि, तेरहवें में रुचि और चौदहवें में भौम। इन चौदह मन्वंतरों के समाप्त हो जाने पर एक सहस्र युग रहनेवाला कल्प समाप्त हो जाएगा। पौराणिक कल्पना के अनुसार मनु वैवस्वत को इस सृष्टि का प्रथम नरेश माना जाता है और सूर्य, सोम आदि सारे वंश इसी से उत्पन्न माने गये हैं।

ज्योतिर्विज्ञान के अनुसार सप्तर्षि तारका-पुंज सौ वर्ष में एक नक्षत्र का भ्रमण करता है। उसे समस्त नक्षत्र-मंडल का भ्रमण करने में २,७०० वर्ष का समय लगता है, जिसे सप्तर्षि-चक्र कहते हैं। पुराणों में सप्तर्षि-काल एवं शक-निर्देश मिलता है। कश्मीर के ज्योतिर्विदों के अनुसार कलिवर्ष २७ चैत्रशुक्ल प्रतिपदा के दिन से शक का प्रारंभ हुआ। शक संवत का प्रारंभ ७८ ई. से माना जाता है। इसमें ७८–७९ जोड़ने से ईसवी सन ३१७९ जोड़ने से कलियुग और १३५ जोड़ने से गत चैत्रादि विक्रम संवत बनता है। गौरीशंकर ओझा के अनुसार शक संवत का प्राचीनतम साहित्यिक संदर्भ वराहमिहिर की 'पंचसिद्धांतिका' में है, जिसमें शक काल ४२७ (ई. स. ५०५) का उल्लेख है।

वसंत का आरंभ काल

तिलक ने ज्योतिर्विज्ञानीय तत्त्व के आधार पर प्राचीन वैदिक साहित्य का काल-निर्णय करने का प्रयत्न किया है। उन्होंने प्रमाणित

आधार पर यह सिद्ध किया है कि जिस समय कृत्तिका नक्षत्र में वसंत का आरंभ था और उसी के आधार पर दिन-रात की गणना की जाती थी, उस समय ब्राह्मण-ग्रंथों का निर्णय हुआ था। मृगशिरा नक्षत्र-काल में वैदिक मंत्र संहिताओं की रचना की गयी थी। खगोल एवं ज्योतिषशास्त्र के अनुसार कृत्तिका एवं मृगशिरा नक्षत्रों का वसंत संपात क्रमशः आज से ४,५०० एवं ६,५०० वर्ष पूर्व था। उसके अनुसार ब्राह्मण और वैदिक साहित्य का समय क्रमशः २,५०० ई. पू. और ४,५०० ई. पू. निश्चित किया गया है।

तिलक की पद्धति से मिलती-जुलती पद्धति याकोबी की भी है, किंतु याकोबी ऋग्वेद के सूक्तों को, वैदिक सभ्यता की परिपक्वावस्था में निर्मित मानते हुए उनका काल ४,५०० ई.पू. मानकर ही संतोष कर लेते हैं। तिलक उसी नक्षत्र-स्थिति को १,५०० वर्ष पीछे ले जाते हैं। याकोबी और तिलक की नयी युक्तियों का उस समय तीव्र विरोध हुआ। लुड्विग ने भी सूर्य-ग्रहण के आधार पर वैदिक युग की काल-गणना निश्चित करने का एक प्रयास किया था; इसलिए उपर्युक्त दोनों विद्वानों का नक्षत्र-गणना के आधार पर काल-निर्धारण करना कोई नवीनतम खोज नहीं है। विंटरनिट्ज का विचार है कि भारतीय इतिहास पर व्यापक दृष्टि से सोचने पर हमें ऐसी युक्ति नहीं मिलती जो वैदिक साहित्य को तीसरी सहस्राब्दी ई. पू. और भारतीय संस्कृति को चौथी सहस्राब्दी ई. पू. पीछे धकलने से हमें रोकने में समर्थ हो सके।

भारत-युद्ध का काल

प्राचीन भारतीय इतिहास में भारत-युद्ध एक महत्त्वपूर्ण घटना है। पुलकेशिन द्वितीय के ऐहोल अभिलेख में भारत-युद्ध का काल ३,७३५ ई. पू. दिया गया है।

आर्यभट के अनुसार कलियुग का आरंभ इसी समय से हुआ, लेकिन फ्लीट के अनुसार भारत-युद्ध के काल-निर्णय की आर्यभट की परंपरा काफी उत्तरकालीन एवं अनैतिहासिक है। वराहमिहिर, वृद्ध गर्ग, कल्हण आदि ने भारत-युद्ध का काल २,४४९ ई.पू. माना है। पार्जिटर ने मगध-देश के राजा महापद्म से पीछे जाते हुए जनमेजय के पौत्र अधिसीमकृष्ण तक छब्बीस पीढ़ियों की गणना कर भारत-युद्ध का काल ९५० ई. पू. निश्चित किया है।

पौराणिक साहित्य एवं महाभारत में प्राप्त निर्देशों के अनुसार परीक्षित का जन्म एवं महापद्म नंद के राज्यारोहण के मध्य १,११५ वर्ष का समय बीत चुका था।

महापद्म नंद का राज्यारोहण का समय ३८२ ई. पू. माना जाता है। इस हिसाब से भारत-युद्ध का काल १,११५ + ३८२ = १,४९७ ई. पू. सिद्ध होता है। यह हुआ पौराणिक काल-गणना-क्रम। ●

बंद संदूक में कौन ?

बात १९४१ की है। तब मैं इसलामपुर उच्च विद्यालय का विद्यार्थी था। यहां से पश्चिम में करीब एक मील दूर एक नदी है, जिसका नाम महानदी है। संध्या समय हम सब विद्यार्थी नदी किनारे खेलने जाया करते थे।

एक दिन जब हम खेलने जा रहे थे, तब सड़क के किनारे एक बड़ा बक्सा दिखायी दिया। वह एकदम नया था। वह कभी दायें हिलता तो कभी बायें। उसमें से 'खट-खट' की आवाज भी आ रही थी। यह सब देख हम डरकर भागने लगे।

एक लड़के ने, जो कुछ निडर था, थाने में जाकर पुलिस को इसकी सूचना दी। पुलिस घटनास्थल पर पहुंची। उस समय संध्या की कालिमा बढ़ती जा रही थी। एक सब-इंसपेक्टर एक हाथ में पिस्तौल और दूसरे में टॉर्च लिये बक्से के पास खड़ा हो गया। फिर एक सिपाही ने धीरे-धीरे बक्से की कुंडी खोल दी। बक्से का ढक्कन उठा और उसमें से एक देहाती घबराया हुआ उठ खड़ा हुआ।

सब-इंसपेक्टर ने डांटकर उससे पूछा, "कौन हो तुम ?" वह हाथ जोड़कर गिड़गिड़ाता हुआ बोला, "हजूर मैं नया-नया शहर में आया हूं। मेरा घर जोलह विगहा है। मेरी घरवाली ने मुझे ताकीद करके भेजा था कि तुम इतना बड़ा बक्सा लाना कि जिसमें एक आदमी आसानी से बैठ सके। बक्सा खरीदते वक्त मुझे खयाल ही न रहा। जब यहां पहुंचा तब एकाएक खयाल आया। सोचा, बक्से के अंदर बैठकर देख लूं। मैं बक्से के अंदर बैठकर देख ही रहा था कि अचानक जोरों का एक झोंका आया, जिसके कारण बक्स का ढक्कन बंद हो गया और कुंडी लग गयी। हजूर, अब जो चाहें सजा दें।"

यह घटना पैंतीस वर्ष पूर्व घटी थी परंतु आज भी जब मैं उस स्थान पर पहुंचता हूं तब वह घटना बरबस याद आ जाती है।

—द्रोमित

सबसे बड़ा धर्म

मेरे गांव बगदरी से चार फर्लांग दूर नदी है। स्नान करके घर लौट रहा था कि एकाएक शोर सुनायी पड़ा। मैं उसी तरफ दौड़ पड़ा। एक हरिजन की झोपड़ी 'धू-धू' करके जल रही थी। भीड़ का जुबानी वात्सल्य छलक रहा था— "बेचारी का बच्चा जल जाएगा... उसे कौन निकाले... और दूसरा कोई इसकी जात-बिरादरी का भी तो नहीं...।"

मुझे याद आया कि सद्यविधवा लंगड़ी पानी लेने नदी गयी है। उसके मात्र तेरह

चौदह महीने का एक लड़का है। वह बच्चा उसी मौत की जगह भटकता चीत्कार कर रहा था। मुझसे रहा नहीं गया। मैं जब उसे मौत से खींच लाने के लिए बढ़ा तब धर्म के कुछ ठेकेदारों ने रोका, "पंडित के लड़के हो ... ? कुछ पढ़-लिख लिया है न, इसी से ..."

लेकिन मैं लपककर जलती झोपड़ी में घुस गया और उस हरिजन बच्चे को गोद में उठा लाया। बच्चा कहीं-कहीं झुलस गया था। मैंने उसकी जलन शांत करने के लिए घीग्वार का प्रयोग किया। भीड़-वाले मुझे अभी भी घृणा से देख रहे थे।

उस बच्चे की मां लंगरी नदी से लंगड़ाती, दौड़ती आयी और भीड़ के पास पछाड़ खाकर गिर पड़ी। जब उसने मेरी गोद में अपने स्वस्थ बच्चे को देखा तब मूक खड़ी रह गयी। मुझे छूने से ठिठक गयी। उसकी आंखों में भरी बूंदें प्यार और ममता की व्याख्या कर रही थीं। —प्रणय

मार खाना ही नियति

छुट्टी में घर आया था। गेहूं के एक खेत में सिंचाई के लिए नहर के पानी की व्यवस्था देखने के लिए नदी की ओर चल पड़ा। रास्ते में चरागाह के रूप में प्रयुक्त होती ग्राम-समाज की कुछ परती जमीन थी, जिसमें मेड़बंदी हो रही थी। पता चला कि ये जमीन भूमिहीन हरिजनों में बांट दी गयी है। जल उठा मैं! अभिजात वर्ग के संस्कारों का सांप फुफकार उठा। कुछ आगे बढ़ा तो देखा कि मेरे गेहूं के खेत को कुछ पशु निर्ममता से चर रहे हैं। क्रोध दोगुना हो गया। पशु जगन पासी के थे। मुझे लगा कि मेरे शरीर का खून उबलने लगा है।

थोड़ी देर में जगन पासी का लड़का दौड़ता हुआ आया और पशुओं को खदेड़ने लगा। मैं नजदीक गया और उस लड़के की पिटाई शुरू कर दी। तब तक उसे मारता रहा जब तक थक नहीं गया।

देर तक खेतों में इधर-उधर टहलता रहा। लौटते वक्त दूसरा रास्ता पकड़ा। जगन पासी के पशु रास्ते में एक बंजर में चर रहे थे। उसका लड़का दौड़ता हुआ पास आया। उसके गले में चने के पेड़ की फुनगियों का एक छोटा-सा बंडल लटक रहा था। उसे मुट्ठी में भरकर मेरी ओर बढ़ाते वह बोला, "भइया, चना कै साग लेब्या ? लै ला, तोहंका परदेशी मनई का ई कहां मिली !"

लगा, मार खाना ही वह नियति समझता है। यंत्रवत मेरा हाथ उसके सामने फैल गया। मुझे लगा कि मेरी मुट्ठी में चने का साग नहीं, शेर के पंजे में दबा कोई शिकार तड़फड़ा रहा है! —रमेशचन्द्र मिश्र

आकांक्षाओं का प्रतीक—तर्जनी

तर्जनी को हमारी आकांक्षाओं का प्रतीक भी कहा जाता है। ब्रिटिश पामिस्ट फ्रेड गेटिंग के अनुसार तर्जनी व्यक्ति की सांसारिक लालसाओं और आकांक्षाओं को प्रकट करती है। दूसरी ओर अंगूठा इन आकांक्षाओं को पूरा करने की क्षमता का द्योतक होता है। यदि किसी व्यक्ति की तर्जनी अच्छी है, लेकिन अंगूठा कमजोर है, तो उसे जीवन में लक्ष्यों की प्राप्ति में हमेशा कठिनाई अनुभव होती रहेगी। सुविकसित एवं दृढ़ तर्जनी तथा पुष्ट अंगूठा व्यक्ति के शक्तिशाली अहम का प्रतीक होता है और ऐसी तर्जनी और अंगूठेवाला व्यक्ति जीवन में हर तरह

बायें : प्लास्टर से बनाये गये पिकासो के हाथ की अनुकृति

गुणों की सूचक----अंगुलियां

यह बात बहुत कम लोग जानते हैं कि जीवन के प्रारंभिक वर्षों में मिले अनुभव मनुष्य की अंगुलियों की बनावट पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव डालते हैं।

आरंभिक जीवन में लंबी अवधि तक बनी रहनेवाली तनावपूर्ण स्थिति में हमारी अंतस्रावी ग्रंथियां असाधारण रूप से काम करने लगती हैं, जिसका अंगुलियों की आकृति और लंबाई पर भी असर पड़ता है।

की स्थिति का सामना कर स्वयं को उसके अनुकूल ढाल लेता है।

सामान्यतः तर्जनी, मध्यमा की प्रथम पोर के मध्य तक ही पहुंचती है। वह अनामिका से कुछ छोटी भी होती है। यदि तर्जनी अनामिका से बड़ी हो तो समझना चाहिए कि उस व्यक्ति में दूसरों पर प्रभुत्व बनाये रखने और शक्ति हासिल करने की दृढ़ लालसा है। यदि तर्जनी बहुत ज्यादा लंबी हो तो व्यक्ति

स्वप्रेम कामासक्त होता है। ऐसा व्यक्ति जीवन के किसी भी क्षेत्र में दोयम स्थिति में रहना पसंद नहीं करेगा। एक बात और! ऐसे व्यक्ति को खुश रखना भी कठिन काम होता है। इसके विपरीत असाधारण रूप से छोटी तर्जनीवाले व्यक्ति में आत्महीनता का भाव बना रहता है, किंतु अनगढ़ तर्जनी मिथ्या अभिमान की द्योतक होती है। मध्यमा की ओर झुकी तर्जनी व्यक्ति की अधिकार-प्रवृत्ति को उजागर करती है।

विवेक का दर्पण—मध्यमा

मध्यमा की स्थिति हमारे हाथ के चेतन एवं अवचेतन क्षेत्र में होती है। एफ. गेटिंग के अनुसार उसे हम चेतन एवं अवचेतन के बीच 'मध्यस्थ' भी कह सकते हैं। अब यदि किसी व्यक्ति की मध्यमा छोटी, विकृत अथवा अविकसित होती है तो मानना चाहिए कि उसमें नियंत्रण-शक्ति का पूर्ण विकास नहीं हुआ है। हो सकता है कि ऐसे व्यक्ति की तर्जनी और अंगूठे की स्थिति अच्छी हो, लेकिन छोटी मध्यमा होने के कारण वह अपनी अवांछनीय और पाशविक लालसाओं पर नियंत्रण नहीं कर पाते है। असाधारण रूप से लंबी मध्यमा को भी अच्छा नहीं माना जाता। वह व्यक्ति के भावात्मक संघर्ष की द्योतक होती है। अनामिका की ओर झुकी मध्यमा सतत मानसिक दबाव में बने रहने की सूचक होती है। ऐसे व्यक्ति एकांत में रहना पसंद करते हैं।

अनामिका—कल्पना का प्रतिबिंब

जहां अंगूठा और तर्जनी हमारे चेतन मस्तिष्क का प्रतिनिधित्व करती हैं, वहां मध्यमा विवेक की और अनामिका तथा कनिष्ठा अवचेतन से संबंधित मानी गयी हैं। ये दोनों अंगुलियां हमारे व्यक्तित्व के कल्पनाशील और अर्धचेतन भाग का प्रतिनिधित्व करती हैं।

सुविकसित तथा लंबी अनामिका-वाला व्यक्ति अपनी कल्पना को पूरी तरह अभिव्यक्त करने में सक्षम होता है। यदि अनामिका के मूल में स्थित सूर्य पर्वत भी

चौकोर अग्रभाग

शंडाकार अग्रभाग

विकसित हो तो ऐसा व्यक्ति अपने अव-चेतन की भावनाओं को विविध कलात्मक रूपों में व्यक्त कर सकता है।

कनिष्ठा—प्रेम की संदेशवाहिका

कनिष्ठा को प्रेम की संदेशवाहिका कहा जाए तो गलत न होगा। इसका संबंध हमारी यौनग्रंथियों और स्वर-संस्थान से होता है। ब्रिटेन की प्रसिद्ध पामिस्ट डॉ. शारलाट वुल्फ ने अनेक स्त्री-पुरुषों की कनिष्ठा अंगुली देखकर यह निष्कर्ष निकाला है कि उसकी लंबाई और आकृति का व्यक्ति के सेक्स-जीवन से घनिष्ठ संबंध है। एक अन्य प्रसिद्ध डॉ. और हस्तरेखाविद यूजिन शी मॉन एम. डी. की खोज है कि छोटी और नोकीली कनिष्ठावाली स्त्रियां छोटे गर्भा-शयवाली होती हैं। ऐसी स्त्रियां सेक्स के मामले में प्रायः उदासीन रहती हैं, जबकि लंबी कनिष्ठावाली स्त्रियों का स्वभाव उनसे सर्वथा विपरीत होता है। ऐसी स्त्रियां अपने प्रेम को बड़ी कुशलता एवं प्रभावपूर्ण ढंग से प्रदर्शित करती हैं। इनका आमंत्रण टाला नहीं जा सकता। ऐसी लंबी कनिष्ठावाली स्त्रियां अकसर अभिनय में भी पटु होती हैं।

अब अंत में अंगुलियों के अग्रभाग की बनावट का अध्ययन करें।

चौकोर अग्रभागवाली अंगुलियों से पता चलता है कि व्यक्ति परंपराप्रिय और सामाजिक नियमों का कड़ाई से पालन करनेवाला है। वह प्रत्येक कार्य को पूर्व निश्चित समय पर करता है, उसमें कोई व्यतिक्रम नहीं आने पाता।

चपटे अग्रभागवाली अंगुलियां व्यक्ति की बेचैनी का राज खोलती हैं। ऐसा व्यक्ति उत्साही, उत्तेजना और एडवेंचर-प्रिय होता है। वह हमेशा 'नये-पन' की खोज में लगा रहता है। शुंडाकार अग्रभागवाली अंगुलियों से हमें मालूम होता है कि व्यक्ति संवेदनशील और धैर्यहीन है। वह कोई काम टाइम-टेबल बनाकर नियम से नहीं करता। उसका सेक्स-जीवन संवेदनशील और रोमानी होता है। वह स्वप्नद्रष्टा, आदर्शवादी और अकसर अव्यावहारिक भी होता है।

अंगुलियों और हाथों के अध्ययन से हमें पता चलता है कि प्रत्येक व्यक्ति में पाशविक, मानवीय और दैवी गुण होते हैं। हस्तरेखा विज्ञान का महत्त्व इसी में है कि वह मनुष्य को उसके गुण-अवगुणों से परिचित कराता है तथा सही दिशा की ओर बढ़ने की चेतावनी देता है। आम आदमी के हाथ में अनेक दोष होते हैं। पाश्चात्य हस्तरेखाविदों के अनुसार पूर्णतः निर्दोष हाथ में चार विकसित रेखाएं अंगरेजी का 'एम' अक्षर बनाती हैं।

विश्वविख्यात चित्रकार पिकासो का हाथ ऐसे चिह्न का अच्छा उदाहरण था। प्राचीन हस्तरेखाविदों का विश्वास था कि दोनों हाथों में 'एम' के चिह्न-वाला व्यक्ति साक्षात ईश्वर होता था। ●

ऐतिहासिक उपन्यास-लेखन में अत्यंत सजगता अपेक्षित होती है। प्रायः ही कल्पना की बलि-वेदी पर तथ्यों की हत्या कर दी जाती है। मनमाने ढंग से काल और पात्रों की रचना कर दी जाती है। इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि अधिकांश लेखक किसी ऐतिहासिक चरित्र का प्रामाणिक अध्ययन नहीं करते।

'आंचल और आग' एक लीक से हटकर ऐतिहासिक उपन्यास है। लेखक ने

शौर्य और राष्ट्रवाद की एक प्रेरक गाथा

इतिहास-पुरुष बीसलदेव को नायक बनाकर कथानक का ताना-बाना बुना है। विषय अपने-आप में अछूता है क्योंकि राजा बीसलदेव अन्य अनेक राजाओं की भांति, शासक और विजेता मात्र नहीं थे, उनकी धमनियों में स्वदेश-प्रेम का तप्त लावा बहता था। अद्‌भुत पराक्रमी, भावुक, पर संयमित प्रेमी; सहृदय, उदात्त—बीसलदेव कभी न भूला जानेवाला नायक है। इस सबके बावजूद बीसलदेव को न तो इतिहास में उचित स्थान मिला, और न ही किसी समर्थ लेखक ने उसे अपनी लेखनी का विषय बनाया। लेकिन इस दीर्घ उपेक्षित प्रखर व्यक्तित्व को 'आंचल और आग' में सशक्त रूप में प्रस्तुत किया गया है।

उपन्यासकार ने कथानक को ऐतिहासिक धरातल से भटकने न देने के लिए पूर्ण सावधानी बरती है, अतः जो कृति सामने आयी है वह उपन्यास के सारे गुणों को पूरा करती हुई एक ऐतिहासिक कृति है। संक्षेप में कथानक इस प्रकार है:

अजयमेरु के राजा बीसलदेव को शासन करते हुए सात वर्ष ही हुए थे, पर उन्होंने इतने अल्प समय में ही अपने राज्य-

क्षेत्र में वृद्धि कर ली थी। एक बार वे तीन राज्यों के सीमांत के बीच स्थित जंगल में आखेट के लिए गये। वहां संयोगवश धारानगरी की राजकुमारी राजमती से उनकी भेंट हो गयी। बीसलदेव और राजमती को अनेक बाधाओं का सामना करना पड़ा, तब कहीं मिलन हुआ। महमूद गजनवी के आक्रमण तथा अपने ही राज्य में षड्यंत्रों से जूझते हुए बीसलदेव सफलता प्राप्त करते हैं।

हर स्थल तथा अवसर पर बीसलदेव का चरित्र उभरकर सामने आता है। प्रेम के कोमलतम क्षणों में भी बीसलदेव अदम्य संयम और शालीनता का परिचय देते हैं। किसी दुर्बल लेखनी के माध्यम से बीसलदेव तथा राजमती का प्रेम-प्रसंग अनुपात से कहीं अधिक बढ़-चढ़ जाता और पूरा उपन्यास प्रेम-आख्यान भर बनकर रह जाता। लेकिन चर्चित उपन्यास में नायक के प्रेम-प्रसंगों की नहीं, उसके शौर्य और राष्ट्रवाद की श्लाघा है; इसके बावजूद इस वर्णन में कहीं भी अतिरंजना नहीं आने पायी है।

भाषा में आकर्षक प्रवाह है। शब्दों के चयन तथा मनोभावों के निरूपण के प्रति लेखक सजग हैं। उपन्यास के अंत में परिशिष्ट के रूप में ऐतिहासिक पृष्ठभूमि अत्यंत उपादेय है। लेखक सिद्धहस्त शैलीकार हैं, यह इस उपन्यास से स्पष्ट है।

——विजयसुन्दर पाठक

आंचल और आग

लेखक——लक्ष्मीनिवास बिरला, प्रकाशक—सस्ता साहित्य मंडल, नयी दिल्ली, पृष्ठ—१९६, मूल्य——८ रु.

भ्रम भंग : उपन्यास मध्यवर्गीय परिवार के युवक की कथा है, जो संस्कारवश परिवार की जिम्मेदारियां निभाता है। इन सबके बदले वह चाहता है अपनापन जो उसे एकाकी घुटन से छुटकारा दिला सके। उसका परिवेश जहां उसे इकाई से समूह की ओर ले जाता है, वहीं उसका अस्तित्व पुन: इकाई के लिए भटकता है। संस्कार और चेतना का यही संघर्ष उसके भ्रम को तोड़ता है। यह सामान्य पारिवारिक प्रसंगों से परिपूर्ण उपन्यास होते हुए भी एक व्यक्ति की द्वंद्वात्मक स्थिति का शब्दचित्र खींचने में सफल रहा है। शैली पाठकों को बांधे रखती है।

सम्मोहन : मनोवैज्ञानिक उपन्यास है, जिसमें सम्मोहन की समस्या को उभारा गया है। पागलखाने की चारदीवारी में सिमटा यह उपन्यास मानव-संबंधों के व्यापक परिवेश को समाहित करता है। परस्पर संबंधों पर जब रिश्तों की मुहर लग जाती है तब उसमें बासीपन आने लगता है। व्यक्ति पिंजरे में बंद पक्षी की तरह मुक्ति के लिए फड़फड़ाता है, किंतु इन रिश्तों में जब कोई अनचीन्हा तीसरा आ जाता है तब एक-दूसरे को खो देने की आशंका फिर से एक ताजगी के साथ रिश्तों को जोड़ देती है। इस मनोवैज्ञानिक सत्य

के उद्घाटन के लिए लेखक ने एक ... वैज्ञानिक चिकित्सक की कथा को लिया है, जो सम्मोहन द्वारा जहां रोगियों, विशेषकर रोगिणियों का उपचार करता है, वहीं जीवन की एकरसता का भी परिहार करता है। सम्मोहन एक ऐसी मन:स्थिति है जो यथार्थ से कहीं अधिक सुखदायक है। विस्मृति एक अपूर्व आनंद की सृष्टि करती है, विनिता और डॉ. प्राण के संवाद विषय की सैद्धांतिक व्याख्या करते हैं। कथ्य की नवीनता और प्रस्तुति की सरसता उपन्यास का महत्त्व बढ़ा देते हैं, इसमें संदेह नहीं।

पहचान न सका : बंगला उपन्यास का अनुवाद है। कथ्य के नाम पर नवीनता नहीं है। ऊपर सम्मोहन उपन्यास में रिश्तों की मुहर अगर उसे तोड़ने का कारण बनती है तो यहां इस उपन्यास में इस मुहर का अभाव अरविंद को उकसाता है कि वह अशोका को छोड़ दे, जो उसके साथ पत्नीवत रह रही थी। अशोका ने पारिवारिक शाप के कारण अरविन्द को विधिवत पति न बनाकर जो भूल की थी, उसके कारण उसे जीवनपर्यंत मानसिक यंत्रणा भोगनी पड़ी। हालांकि अंत में अरविन्द अपनी भूल का प्रायश्चित करता है, किंतु तब तक काफी देर हो चुकी थी और अशोका अनिश्चितता की ओर बढ़ चुकी थी। अन्य उपन्यासों की अपेक्षा यह उपन्यास बिलकुल सामान्य है जिसे समय बिताने के लिए पढ़ा जा सकता है।

हिंदी स्वच्छंदतावादी काव्य : एक शोधप्रबंध है। लेखक ने इसमें स्वच्छंदतावाद को व्यापक अर्थ में ग्रहण किया है, जिसमें काव्य की स्वच्छंदता—बंधनहीनता की अपेक्षा पारिभाषिक रूप ही अधिक लिया गया है। लेखक का दावा है कि उसने 'स्वच्छंदता' को समग्र रूप में ग्रहण किया है, जिसके लिए उसने प्रगतिशील सांस्कृतिक चेतना का भी उल्लेख किया है; जो प्राय: स्वच्छंदता की विरोधी मानी जाती है। पुस्तक सात अध्यायों में विभक्त है। पहले अध्याय में स्वच्छंदतावाद की पाश्चात्य पृष्ठभूमि बताते हुए कुछ स्वच्छंद कवियों का संकेत किया है। दूसरे अध्याय में छायावाद और स्वच्छंदतावाद, जो सामान्यत: एक ही मान लिये जाते हैं, संक्षेप में अंतर स्पष्ट किया है। स्वच्छंदतावाद के व्यापकत्व में छायावाद को समाहित कर लिया है। तीसरे अध्याय में हिंदी स्वच्छंदतावाद की बनावट है। चौथे और पांचवें अध्याय में छायावादी वृहत्त्रयी की काव्य चेतना का उल्लेख है। सातवां अध्याय समापन है।

—डॉ. शशि शर्मा

भ्रम भंग : लेखक—देवेश ठाकुर, प्रकाशक —भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नयी दिल्ली, पृष्ठ—२०४, मूल्य—१३ रु.

सम्मोहन : लेखक—सुदर्शन चोपड़ा, प्रकाशक—राजपाल एंड संस, कश्मीरी

गेट, दिल्ली, पृष्ठ—१४०, मूल्य—१० रु.

पहचान न सका : लेखक—गजेन्द्रकुमार मित्र, अनु.—एस. एन. बनर्जी, प्रकाशक—राजपाल एंड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली, पृष्ठ—९९, मूल्य—६ रु.

हिन्दी स्वच्छंदतावादी काव्य : लेखक—डॉ. प्रेमशंकर, म. प्र. हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, पृष्ठ—३९४, मूल्य—१६ रु.

संस्मरण

अपनी पुस्तक 'चिराग तले उजाला' में श्री मेनन एक प्रतिबद्ध सिद्धांतशास्त्री के रूप में ही उभरते हैं। जॉन गुंथर की पुस्तक 'इनसाइड रशा'-जैसा युक्तियुक्त विश्लेषण इस पुस्तक में नहीं है। पश्चिमी राष्ट्रों की नीतियों के विश्लेषण में लेखक ने पूर्वाग्रहपूर्ण और शंकालु दृष्टिकोण ही अपनाया है। स्वेज और हंगरी के प्रश्न पर लेखक ने क्रमशः भर्त्सना और समर्थन का रुख अपनाया है। हंगरी का पूरा प्रसंग उन्होंने पूर्वविदित सोवियत दृष्टिकोण दोहराकर टाल दिया है। राष्ट्रपति केनेडी की अमरीकी सैन्य शक्ति को न घटाने तथा शस्त्रास्त्रों का उत्पादन बढ़ाने की नीति को बरकरार रखने की नीति की लेखक ने भी, सोवियत सरकार की तरह, निंदा ही की है। उचित तो यह था कि रूसी प्रतिरक्षा-बजट तथा शस्त्रास्त्र-उत्पादन के तुलनात्मक आंकड़े प्रस्तुत किये जाते। क्यूबा-संकट की घड़ियों में भी रूस को ऊंची स्थिति में प्रस्तुत किया गया है, जबकि यथार्थ में केनेडी की बल-प्रयोग की धमकी पर ख्रुश्चोव को बीच समुद्र से शस्त्रास्त्रों से लदे जहाज लौटा लेने पड़े थे! रूस और चीन के गंभीर मतभेदों का कारण लेखक की दृष्टि में चीन का 'अंध राष्ट्रवाद' है। प्रयोजन क्या यह है कि अन्य साम्यवादी देश रूस को अगुवा मानकर अपने हित बलि पर चढ़ा दें! ख्रुश्चोव के पतन की आंतरिक कहानी नहीं बतायी गयी है। सर्वविदित है कि साइबेरिया की बंजर धरती को उर्वर बनाने के लिए ख्रुश्चोव ने करोड़ों रूबल की जो योजना तैयार की थी, वह बुरी तरह असफल हुई; और वही उनके पतन का कारण बनी। श्री मेनन-जैसे कूटनय के संस्मरणों में कुछ ऐसा जरूर होना चाहिए था जिससे अब तक रहस्य में ढका कुछ प्रकाश में आता।

सर्वाधिक रोचक अंश हैं यात्रा-प्रसंग। विभिन्न स्थानों की भौगोलिक, ऐतिहासिक महत्ता तथा उनके वर्तमान स्वरूप को बहुत आकर्षक काव्यमय शैली में प्रस्तुत किया गया है। पर भाषा की भद्दी भूलें बहुत अखरती हैं।

—विरोचन

चिराग तले अंधेरा

लेखक—के. पी. एस. मेनन; प्रकाशक—शब्दकार २२०३, गली डकौतान, तुर्कमान गेट, दिल्ली-११०००६, पृष्ठ—३२१, मूल्य—१८ रु.

निक्सन के अंतिम दिन

• बॉब वुडवर्ड और कार्ल बर्नस्टीन

वाटरगेट-कांड दबाने के लिए झूठ बोलकर निक्सन अपने ही जाल में फंसते गये। उनके त्यागपत्र तक निक्सन-परिवार ने जो यंत्रणा भोगी उसका सजीव वर्णन बाब वुडवर्ड और कार्ल बर्नस्टीन की हाल ही प्रकाशित चर्चित कृति 'दि फाइनल डेज' में है। इसी कृति का सार-संक्षेप प्रस्तुत कर रही हैं––डॉ. कुसुम भार्गव।

"संयुक्तराज्य, अमरीका के सर्वोच्च न्यायालय के माननीय मुख्य न्यायाधीश तथा उनके सहयोगी न्यायाधीश पधार रहे हैं"––सर्वोच्च न्यायालय के मार्शल ने घोषणा की और खचाखच भरे न्यायालय-कक्ष में वज्र मौन छा गया। काले चोगे धारण किये न्यायाधीश अदालत में दाखिल हुए। मुख्य न्यायाधीश वारेन बर्गर मंच के बीचोंबीच अपनी कुरसी पर बैठ गये। उन्होंने धीरे-धीरे, किंतु दृढ़ स्वर में घोषणा की: "राष्ट्रपति को आदेश दिया जाता है कि वे राष्ट्रपति भवन में हुई चर्चाओं के ६४ ध्वनि-टेप संघीय न्यायाधीश सिरिका की अदालत में पेश करें।"

यह बात २४ जुलाई, १९७४ की है। राष्ट्रपति निक्सन के वकील फ्रैड बुझहार्ट को इस निर्णय से कोई आश्चर्य नहीं हुआ। उसने राष्ट्रपति के चीफ-ऑव-स्टाफ जनरल एलेक्जेंडर हेग को फोन किया कि वह अब और इंतजार नहीं कर सकता। हेग ने बताया कि वे राष्ट्रपति से बात करके सूचित करेंगे कि आगे क्या कदम उठाया जाए।

रात को हेग ने न्यायालय के निर्णय का घर में अध्ययन किया और २५ जुलाई को सवेरे उसके बारे में चर्चा के लिए राष्ट्रपति के पास गया। उसे देखते ही निक्सन के भीतर दबा ज्वालामुखी फूट पड़ा: "इन लोगों को न्यायाधीश मैंने नियुक्त किया था––वारेन बर्गर को, हैरी ब्लैकमन को और लेवी पावेल को भी। इन्होंने मुझे ही आंखें दिखा दीं! वे कर क्या सकते हैं, मैं सब टेप जला डालूंगा और त्यागपत्र देकर चला जाऊंगा।"

बेचारा हेग चुपचाप सुनता रहा, जब निक्सन का पारा कुछ उतरा तब पूछा कि बुझहार्ट से क्या कहना है? "उसे फोन पर बुलाओ"––निक्सन ने आदेश दिया।

२३ जून का सत्यानाशी टेप

पलभर में ही बुझहार्ट के दफ्तर में फोन की घंटी टनटनाने लगी। आपरेटर ने कहा कि जनरल हेग से बात कीजिए। इधर निक्सन ने हेग के हाथ से फोन ले लिया और बुझहार्ट से बोले, "फ्रैड, २३ जून के टेप से समस्या उत्पन्न हो सकती है। तुम उसे सुनो और उसके बाद हेग से बात कर लो।"

बुझहार्ट ने टेप मंगाया और सुना। टेप पर राष्ट्रपति और उनके सहायक

हेल्डेमन के बीच विभिन्न विषयों पर चर्चा के बाद हेल्डेमन की आवाज आयी : "अब जांच के बारे में चर्चा करें, वही, आपको तो मालूम ही है, डेमोक्रेटिक पार्टी के कार्यालय में डकैती के मामले में, उसमें हम बहुत बुरी तरह उलझ गये हैं। संघीय जांच ब्यूरो पर हमारा कोई बस नहीं चल रहा है, क्योंकि उसका कार्यवाहक निदेशक एल. पैट्रिक ग्रे कुछ सुनता ही नहीं। वह जांच अब खतरनाक दौर में प्रवेश कर रही है । भूतपूर्व अटार्नी जनरल जॉन मिचेल और जॉन डीन का विचार है कि अब हमारे सामने एक ही मार्ग बचा है। हम यह मार्ग आसानी से ग्रहण कर सकते हैं कि सी. आई. ए. का उपनिदेशक वरनौन वाल्टर्स फोन पर पैट्रिक ग्रे से कह दे कि हमें संघीय जांच ब्यूरो का इस मामले में आगे बढ़ना एकदम नापसंद है, तुम लोग यह जांच-पड़ताल फौरन बंद करो।"

समूचे टेप में कहीं राष्ट्रीय सुरक्षा का जिक्र नहीं था । बुझहार्ट टेप सुनकर सन्नाटे में आ गया । एक ही सप्ताह पहले तो निक्सन के वकील ने प्रतिनिधि-सदन (अमरीकी लोकसभा) की न्यायिक समिति के सामने कहा था कि राष्ट्रपति को इस बारे में पहले से कोई जानकारी नहीं थी कि सी. आई. ए. द्वारा संघीय जांच ब्यूरो के वाटरगेट-कांड संबंधी जांच-कार्य रोकने की कोशिश की जा रही है।

बुझहार्ट ने फोन पर हेग से कहा : "यह टेप तो ऐसी पिस्तौल की तरह है जिसमें से गोली चलने के बाद अभी तक धुआं उठ रहा हो । यह अंतिम प्रमाण है। यह सही है कि संघीय जांच ब्यूरो और सी. आई. ए., दोनों राष्ट्रपति के

The White House
Washington

August 9, 1974

Dear Mr. Secretary:

I hereby resign the Office of President of the United States.

Sincerely,

/s/ Richard Nixon

The Honorable Henry A. Kissinger
The Secretary of State
Washington, D.C. 20520

निक्सन का त्यागपत्र

त्यागपत्र के बाद बेटी जूली के साथ निक्सन

मातहत हैं और उनके अधिकारियों को बुलाने का आदेश कानूनी दृष्टि से कोई अपराध नहीं है; फिर भी इसे सत्ता का दुरुपयोग माना जाएगा। यह एक ऐसा अपराध है जिसके लिए राष्ट्रपति पर महाभियोग चलाया जा सकता है।

हेग ने बुझहार्ट की यह राय निक्सन के सामने रखी। निक्सन ने कहा कि इस बारे में सेंट क्लेयर से पूछो।

सेंट क्लेयर को बुलाया गया। महाभियोग समिति के सामने निक्सन की ओर से वकालत उसने ही की थी। उसने भी यही सलाह दी कि टेप तुरंत दे दिये जाएं, उनको रोकने का अर्थ होगा—निश्चित रूप से महाभियोग। निक्सन ने उससे कहा कि न्यायाधीश सिरिका से कह दो कि हम टेप कुछ सप्ताह बाद देंगे। न्याया-

[illegible] मुझसे यह तो कह सकता है कि अमुक काम करो लेकिन क्या उसे यह भी अधिकार है कि वह मुझे यह भी बताये कि मुझे वह काम कब करना चाहिए।

महाभियोग की दिशा में

२७ जुलाई शनिवार को प्रतिनिधि-सदन की न्यायिक समिति की बैठक में डेमोक्रेटिक और रिपब्लिकन दलों के प्रतिनिधियों ने निक्सन के विरुद्ध महाभियोग चलाने के लिए प्रथम आरोप लगाया कि वाटरगेट जासूसी और डकैती में निक्सन की सहमति थी।

२९ जुलाई, सोमवार की रात को समिति ने दूसरे आरोप पर स्वीकृति प्रदान कर दी: 'निक्सन ने अपनी सत्ता का दुरुपयोग किया है, और अमरीकी नागरिकों के मौलिक अधिकारों का उल्लंघन किया है।' अगले दिन उसने महाभियोग की तीसरी धारा के अनुसार यह आरोप लगाया कि निक्सन ने टेप तथा अन्य साक्ष्य पेश करने के आदेश का गैर-कानूनी रीति से उल्लंघन किया है।

उपराष्ट्रपति का धर्म-संकट

निक्सन के अपने दल के लोग भी उनका विरोध इतने ही प्रबल रूप से कर रहे थे। २ अगस्त की दोपहर एक बजे सीनेट में दोनों दलों के नेता माइक मैंसफील्ड और ह्यूज स्काट उपराष्ट्रपति के पास पहुंचे और उनसे बोले कि निक्सन के विरुद्ध महाभियोग की सफलता निश्चित है, अतः निर्णय के दिन वे राजधानी में

ही रहें जिससे तत्काल राष्ट्रपति पद की शपथ ग्रहण कर सकें। यह सही है कि उपराष्ट्रपति को राष्ट्रपति का समर्थन करना ही होता है, लेकिन निरंतर समर्थन से देश की एकता बनाये रखना कठिन हो जाएगा। हमारे पास अब केवल आप बचे हैं। यह सुनकर फोर्ड की आंखें गीली हो गयीं। स्काट भी सुबकने लगा।

राष्ट्र को सही बात बताना जरूरी

शाम साढ़े छह बजे राष्ट्रपति-कार्यालय के वरिष्ठ अधिकारियों की बैठक के बाद हेग ने पैट बुचनान को रोक लिया और उससे २३ जून के टेप के बारे में चर्चा की। बुचनान उस टेप की पांडुलिपि (परालिपि-ट्रांस्क्रिप्ट) पढ़कर सन्नाटे में आ गया और आवेश में बोला कि राष्ट्रपति को त्यागपत्र देना होगा, दूसरा कोई रास्ता नहीं है।

इसके बाद राष्ट्रपति के अंतिम भाषण के बारे में चर्चा हुई। बुचनान ने साफ कहा कि इस तरह की बातें न हों कि त्यागपत्र राष्ट्र को महाभियोग के संत्रास से बचाने के लिए दिया जा रहा है। उसमें साफ बताया जाए कि राष्ट्रपति को अपने ही झूठ के कारण त्यागपत्र देना पड़ा है।

आत्महत्या की आशंका

इसी समय निक्सन ने २३ जून के टेप की पांडुलिपि (परालिपि) मंगायी। अब वे अपने परिवार को उसके बारे में बताना चाहते थे। निक्सन की बेटी जूली और दामाद डेविड आइसनहावर (राष्ट्रपति आइसनहावर का पोता) दोनों ही निक्सन के मानसिक संतुलन के बारे में बहुत चिंतित थे। डेविड के मन में विश्वास जम गया था कि उसके ससुर आत्महत्या कर सकते हैं। उस के मन में भय था कि राष्ट्रपति भवन से निक्सन जीवित नहीं निकल पाएंगे।

उसी शाम जूली ने डेविड को कालेज

प्रतिनिधि-सदन की महाभियोग न्यायिक समिति की बैठक
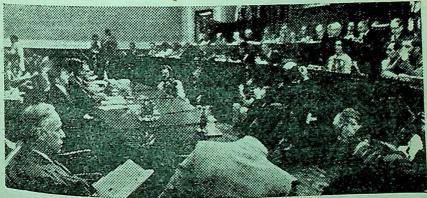
बायें से स्काट, माइक के सामने बैरी गोल्ड-वाटर तथा जान रोड्स

लेखक : वुडवर्ड तथा बर्नस्टीन
मध्य का चित्र : श्रीमती निक्सन बेटी जूली के साथ

से बुलाया और कहा कि, 'डैडी कह रहे हैं कि अब सब कुछ समाप्त हो गया।' डेविड निक्सन से मिलने गया। वे 'लिंकन कक्ष' में थे। डेविड को देखते ही निक्सन ने कहा, "अब सब कुछ समाप्त हो गया। हमें सोमवार की रात तक निश्चय कर लेना होगा कि हमें यहां से जाना है।" डेविड ने देखा कि निक्सन अंगीठी में जल रही आग पर दृष्टि गड़ाये हैं। उसने पूछा कि क्यों? निक्सन ने २३ जून के टेप की पांडुलिपि उसे पकड़ायी और कहा कि यह उस समय तक सबके सामने आ जाएगी। इसलिए हमें सोमवार की रात तक फैसला कर लेना पड़ेगा कि हमें लड़ना है या पलायन करना।

निक्सन ने अपने परिवार से साफ-साफ कह दिया कि अब महाभियोग निश्चित है। कोई ९ बजे निक्सन का दूसरा दामाद एडवर्ड काक्स आया। उसने सधे हुए तर्क देकर कहा कि जल्दबाजी में कोई निश्चय नहीं करना चाहिए। इससे जूली को प्रोत्साहन मिला। उसने कहा कि त्यागपत्र नहीं देना चाहिए। सही रास्ता तो यही होगा कि सीनेट में महाभियोग का सामना किया जाए, फिर चाहे भले ही जेल जाना पड़े। श्रीमती निक्सन कुछ नहीं बोलीं। वाटरगेट-कांड से उन्हें गहरा आघात पहुंचा था और वे मन-ही-मन बहुत दुःखी थीं। वे बेतहाशा शराब पीने लगी थीं और लोगों से मिलना-जुलना बंद कर दिया था।

मुकाबले का फैसला

३ अगस्त के सवेरे १० बजे जूली ने बुचनान को बुलाया। कमरे में डेविड था, उसकी बहन ट्रीशिया और बहनोई एडवर्ड काक्स थे और निक्सन का मित्र रेबोजो था। बुचनान के पहुंचते ही जूली ने बोलना शुरू कर दिया, "डैडी के लिए यही ठीक रहेगा कि वे सारी बात देश के सामने रख दें। सीनेट के सामने जाने पर उन्हें एक मंच मिलेगा जहां से वे देश को बता सकेंगे कि कांग्रेस कितनी छोटी-सी बात पर उनसे राष्ट्रपति पद छीनना चाहती

है। वहां वे अपनी महान सफलताओं का जिक्र कर सकेंगे। और . . . यह भी हो सकता है कि वे सफल हो जाएं। वे मुकाबला करना चाहते हैं।"

बुचनान ने कहा कि यदि राष्ट्रपति सीनेट में लड़ना चाहते हैं तो वह उनके साथ है, लेकिन सीनेट में जीत की कोई आशा नहीं है। समझ में नहीं आता कि वे मुकाबला क्यों करना चाहते हैं?

काक्स ने बुचनान से कहा कि जहां तक टेप का संबंध है उसमें तो कोई विशेष बात नहीं है। बुचनान थोड़ा रुका, उपयुक्त शब्द खोजे और फिर बोला, "मूल समस्या वाटरगेट की या उसको दबाने की नहीं, वरन यह है कि राष्ट्रपति ने अमरीका की जनता से झूठ बोला।"

बुचनान ने ये शब्द राष्ट्रपति के घर के लोगों के सामने पूरी निर्भीकता से कहे। सब सहम गये, लेकिन जूली जिद पर डटी रही। अंत में तय हुआ कि २३ जून का टेप अदालत में पेश किया जाए, उस पर राष्ट्र की प्रतिक्रिया देखी जाए, और अंतिम निर्णय उसके बाद ही किया जाए।

सूरज छिपने को था। निक्सन अपने परिवार के साथ बैठे थे। अचानक उन्होंने घोषणा की कि वे त्यागपत्र नहीं देंगे। सब खामोश रहे। थोड़ा रुककर निक्सन ने डेविड से पूछा कि यदि उनके पक्ष में केवल दस सीनेटर रह जाएं तब क्या करना चाहिए? "दस...बस...केवल दस!" डेविड बुदबुदाया और बोला कि उन्हें अपने बारे में सोचना चाहिए।

निक्सन ने तत्काल कहा, "डेविड तुम भी हेग जैसा ही सोचते हो, यह क्यों नहीं समझते कि देश का क्या होगा।" निक्सन की धारणा थी कि अमरीका को उनकी बड़ी आवश्यकता है।

अगले दिन राष्ट्रपति कैंप डेविड चले

व्हाइट-हाउस से विदाई

गये। वहीं उन्होंने अपने सहायकों के सामने घोषणा कर दी कि २३ जून का टेप जनता के सामने पेश कर दिया जाए और उसके साथ ही उनका स्पष्टीकरण भी। सरकारी अधिकारी नहीं चाहते थे कि निक्सन कोई कठोर रवैया अपनायें और सीनेट में मुकाबले के अपने निश्चय की घोषणा करें।

निक्सन को यह भी बता दिया गया कि उन्होंने २३ जून का टेप यह बयान देने से पहले ही सुन लिया था कि सी. आई ए. के द्वारा संघीय जांच ब्यूरो को खामोश करने की कोशिश नहीं की गयी है।

५ अगस्त को टेप की सामग्री की घोषणा कर दी गयी और निक्सन का रहा-सहा समर्थन भी समाप्त हो गया। उनके सहायक, वकील और राजनीतिक समर्थक सब अपने बचाव की चिंता में थे, राष्ट्रपति के झूठ में कोई साझी नहीं बनना चाहता था।

सफलताओं का जमकर प्रचार

६ अगस्त को हेग ने डेविड से फोन पर पूछा कि निक्सन-परिवार यह हठ क्यों कर रहा है कि राष्ट्रपति को त्यागपत्र नहीं देना चाहिए। डेविड ने बताया कि 'इस समय शांति से काम लेना होगा। हम राष्ट्रपति को बताना चाहते हैं कि हमें उनकी निर्दोषिता पर पूरा विश्वास है। हम उन्हें प्यार करते हैं। तुम नहीं जानते वे राजनीतिक पराजय तो मान सकते हैं मगर नैतिक भर्त्सना नहीं सह सकते।'

११ बजे राष्ट्रपति के मंत्रिमंडल की बैठक शुरू हुई। पहले निक्सन इधर-उधर की बातें करते रहे। आखिर वे मुद्दे पर आये। बोले, "मैं सीनेट के सामने जाऊंगा और निर्णय चाहे मेरे अनुकूल हो या प्रतिकूल, उसे स्वीकार करूंगा। मैंने ऐसा कुछ नहीं किया जिसके लिए मुझ पर महाभियोग चलाया जाए। मैं यह नहीं चाहता कि आप मेरे लिए कोई ऐसा काम करें जिससे आपको परेशानी हो। आप वाटरगेट का कोई जिक्र ही न करें, लेकिन जहां तक हो मेरी सरकार की सफलताओं का अधिकतम प्रचार करें। मुझे विश्वास है कि मैं सीनेट के आगे सिर ऊंचा किये रह सकूंगा और इस अग्नि-परीक्षा में खरा उतरूंगा।"

इसके बाद निक्सन उपराष्ट्रपति फोर्ड की ओर मुड़े। फोर्ड ने बहुत स्पष्ट शब्दों में कहा, "आप पर निश्चित रूप से महाभियोग चलाया जाएगा, और मैं उसके परिणाम के बारे में भी अभी से बता सकता हूं, लेकिन कहूंगा कुछ नहीं।"

अटार्नी जनरल विलियम सैक्सबी राष्ट्रपति के सामने ही बैठे थे। निक्सन आर्थिक नीति के बारे में चर्चा करने लगे तो सैक्सबी ने टोककर कहा, "सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि हमें यह भरोसा दिलाया जाए कि आपमें प्रशासन चलाने की क्षमता है।" निक्सन ने बड़े शांत भाव से उत्तर दिया, "बिल, मुझमें आज भी वैसी ही क्षमता है जैसी पिछले पांच वर्ष तक रही है।"

मंत्रिमंडल की बैठक साढ़े बारह बजे समाप्त हो गयी। बाहर खड़ी भीड़ ने जब वित्तमंत्री साइमन से पूछा कि क्या निश्चय हुआ तब साइमन ने जवाब दिया, "राष्ट्रपति को पूरा यकीन है कि वे निरपराध हैं। वे त्यागपत्र नहीं देंगे।"

तसवीरों से बातें: उन्माद के आसार

एक ओर तो निक्सन सीनेट में मुकाबले

की घोषणा किये जा रहे थे कहीं दूसरी और मानसिक संतुलन भी खोते जा रहे थे। तीसरे पहर तक उनके दूसरे दामाद एडवर्ड काक्स ने सीनेट में रिपब्लिकन पार्टी के सचेतक ग्रिफिन को फोन किया कि निक्सन बेतहाशा शराब पिये जा रहे हैं, और उनका आचरण असंतुलित होता जा रहा है। वे रात में राष्ट्रपति भवन के भीतर घूमते रहते हैं, भूतपूर्व राष्ट्रपतियों के चित्रों के साथ बात करते हैं, भाषण देते हैं और दीवार पर टंगी दूसरी तसवीरों से भी बातें करते हैं।

काक्स ने ग्रिफिन को बताया कि श्रीमती निक्सन बुरी तरह टूट चुकी हैं, और इस स्थिति में नहीं रह गयी हैं कि राष्ट्रपति को संभाल सकें। स्थिति इतनी खराब है कि राष्ट्रपति किसी भी समय आत्महत्या पर उतारू हो सकते हैं।

ग्रिफिन ने सुझाव दिया कि राष्ट्रपति की रक्षा के लिए गुप्तचर विभाग की सहायता लेनी चाहिए। आत्महत्या का जो भय निक्सन के दामादों के मन में था वही जनरल हेग को भी परेशान कर रहा था। एक दिन निक्सन ने हेग के साथ इस बारे में [illegible] चलायी। उन्होंने कहा कि, "सेना में तो तुम लोगों के पास ऐसी समस्या सुलझाने का आसान तरीका है। मेज के दराज में पिस्तौल रख दी और बस ... लेकिन मेरे पास तो पिस्तौल भी नहीं है।"

मौत की कामना

वाटरगेट के बाद राष्ट्रपति निक्सन इतने परेशान हो उठे कि वे यह मनाने लगे थे कि राष्ट्रपति पद पर रहते हुए ही किसी तरह उनकी मृत्यु हो जाए। इसका एक उदाहरण जून, १९७४ में सामने आया। उन्होंने अचानक मिस्र का दौरा करने का निश्चय किया, और १० जून को वे आस्ट्रिया के साल्जबर्ग नगर जा पहुंचे।

राष्ट्रपति का सारा स्टाफ उनके दौरे के राजनीतिक काम की तैयारियों में व्यस्त था। अचानक निक्सन ने अपने चिकित्सक मेजर जनरल वाल्टर टैक को बुला भेजा। डॉक्टर आया तो निक्सन ने उसे अपनी टांग दिखायी जो सूजी हुई थी। डॉक्टर ने बारीकी से जांच की और इस निष्कर्ष पर पहुंचने में देर न लगी कि यह फ्लेबाइटीज है, यानी एक शिरा

में खून जमकर रक्त के प्रवाह को रोक रहा है जिसके कारण सूजन और दर्द है। डॉक्टर को लगा कि यह रोग राष्ट्रपति के प्राण किसी भी क्षण ले सकता है। यदि जमे खून का लोथड़ा रक्त के साथ बहकर हृदय में पहुंच जाए तो मौत होने में पल भर भी नहीं लगेगा।

उसने राष्ट्रपति को चेतावनी देते हुए कहा कि उन्हें अपना दौरा तुरंत स्थगित कर देना चाहिए। वे वाशिंगटन लौट चलें और वहां अस्पताल में इलाज करायें।

निक्सन ने यह सलाह नहीं मानी। वे बोले, "इस यात्रा का प्रयोजन मेरे जीवन से भी कहीं अधिक मूल्यवान है। मुझे मालूम है कि मैं कितना खतरा उठा रहा हूं।"

डॉक्टर ने हेग से शिकायत की। अगले दिन काहिरा में निक्सन को काफी पैदल चलना और खड़े रहना था। लेकिन अब कुछ नहीं किया जा सकता था। वाल्टर टैक ने यात्रा के प्रमुख प्रबंधक हैंकेल से कहा कि, **'राष्ट्रपति के मन में मौत की कामना बसी है।** वे मेरी एक नहीं सुनेंगे।'

राष्ट्रपति के साथ एक और डॉक्टर था ले. कमो. विलियम लुकाश। उन्होंने लुकाश से भी सलाह ली। उसने भी उन्हें आराम करने की सलाह दी। कहा कि दौरा रद्द करके तुरंत घर लौट चलें। लेकिन निक्सन ने उसे आदेश दिया कि इस बारे में वह किसी से चर्चा भी नहीं करेगा।

१२ जून के सवेरे वे काहिरा पहुंचे। राजधानी में प्रवेश करने के लिए उन्होंने पौन घंटा राष्ट्रपति सादात के साथ कार में खड़े-खड़े बिताया। इसके बाद निक्सन को सिकंदरिया जाना था। यात्रा रेलगाड़ी से हुई। अचानक डॉ. लुकाश को बुलावा आया। लुकाश ने देखा कि निक्सन घंटों से गाड़ी में खड़े हैं और भीड़ का अभिवादन स्वीकार कर रहे हैं। पीड़ा उनके चेहरे पर साफ झलक रही है मगर वे उसे छिपा रहे हैं। थोड़ी देर में वे लुकाश के पास आये, लुकाश ने उन्हें एक पीड़ाहर गोली दी जिसे सटककर वे वापस सादात के पास आ खड़े हुए।

राष्ट्रपति के साथ आये सुरक्षा-सेवा के अधिकारी उनकी सुरक्षा के बारे में चिंतित थे, क्योंकि पूरे इंतजाम के बावजूद वे असुरक्षित थे। सुरक्षा अधिकारी डिक कैंसर अपने-आपको असहाय महसूस कर रहे थे, और जब डॉ. टैक ने कैंसर से इस बारे में कुछ करने को कहा तो उसने निराश स्वर में कहा, **"उस राष्ट्रपति की सुरक्षा के लिए कुछ नहीं किया जा सकता जो आत्महत्या पर उतारू हो चुका हो।"** निक्सन शायद इस प्रकार जान देकर अपने राष्ट्र के हीरो बन जाना चाहते थे। लेकिन उनका यह सपना पूरा नहीं हुआ। उनकी मृत्यु-कामना अधूरी रह गयी।

कैलीफोर्निया जाने की योजना

७ अगस्त को डेविड और काक्स एक बार फिर बुचनान के पास गये और त्याग-

व्हाइट हाउस से पत्नी के साथ विदा होते निक्सन

बेटी जूली और दामाद डेविड द्वारा वकालत

पत्र के पक्ष में उसके तर्क सुनते रहे। उसके बाद वे दोनों सीधे निक्सन के पास पहुंचे। बात काक्स ने ही शुरू की। उसने कहा कि मैं और डेविड अगले कदम के बारे में लोगों की राय जानने निकले थे। अधिकारियों का कहना है कि त्यागपत्र के बजाय यदि सीनेट में सफाई देने का निश्चय किया जाए तो हमारे साधन बहुत हैं। एक शानदार लड़ाई लड़ी जा सकती है और सिद्ध किया जा सकता है कि वाटरगेट कोई बहुत बड़ा मामला नहीं था। दूसरी ओर यह भी राय है कि सीनेट में महाभियोग चलने में महीनों लग सकते हैं। इस बीच सरकार अस्तव्यस्त हो जाएगी, अर्थव्यवस्था चौपट हो सकती है और वैदेशिक संबंधों में उलझनें पड़ जाएंगी।

डेविड ने भी उसमें एक वाक्य जोड़ा, "लोग कहते हैं कि मुल्क को एक नेता की आवश्यकता है।" सुनते ही निक्सन ने डेविड की ओर देखा, लेकिन यथार्थ दृष्टि से। आज वे वास्तविकता के धरातल पर आ चुके थे। उन्होंने दोनों की ओर से नजर हटाकर कहा, "सीनेट के मित्र मुझे त्यागपत्र देने की सलाह दे रहे हैं।" फिर वे तुरंत संभलकर बोले, "लेकिन मैंने अभी कोई फैसला नहीं किया है।" उसके बाद उन्होंने कहा कि यदि उन्हें उनके कागजात ले जाने दिये गये तो वे अपने संस्मरण लिखना और कैलिफोर्निया में रहना चाहेंगे। कुछ समय घूमना भी चाहेंगे।"

निक्सन ने इस बारे में भी सोच-विचार किया कि क्या उनसे बदला लिया जाएगा? मगर तीनों की यही राय थी कि त्यागपत्र के बाद लोग उनकी ओर से बेखबर हो जाएंगे। डेविड को लगा कि निक्सन को यह तो मालूम है कि नये राष्ट्रपति फोर्ड उन्हें क्षमादान कर देंगे, लेकिन शायद वे उस बारे में कोई चर्चा नहीं करना चाहते।

शाम पांच बजे सीनेट के तीन प्रतिनिधि बैरी गोल्डवाटर, ह्यूम स्काट और

जॉन रोड्स राष्ट्रपति से भेंट करने आये। निक्सन पहले तो इधर-उधर की चर्चा करते रहे फिर उन्होंने पूछा कि चर्चा कौन शुरू करेगा। स्काट ने कहा कि उन लोगों ने गोल्डवाटर को अपना प्रवक्ता चुना है। गोल्डवाटर ने निक्सन को बताया कि स्थिति प्रतिकूल है, उनके पक्ष में मुश्किल से सोलह या अठारह सीनेट-सदस्य रह गये हैं। निक्सन ने स्काट से पूछा तो उसने कहा कि इससे भी कम, और वे भी ढुलमुल हैं, स्थिति बहुत खराब है।

गोल्डवाटर ने आगे कहा, "मैंने आज लोगों का मन जानने की कोशिश की तो मुझे बस चार सदस्य ऐसे मिले जो हर स्थिति में आपके साथ रहेंगे। लोगों की समझ में नहीं आ रहा है कि आखिर हो क्या रहा है! मैं भी ऐसे ही लोगों में से ही हूं।"

रोड्स ने बताया कि प्रतिनिधि सदन में भी यही स्थिति है। इस पर निक्सन ने कहा, "मुझे मालूम है कि मैं कठिन परिस्थिति में पड़ गया हूं, लेकिन मैं वही निश्चय करूंगा जो राष्ट्र के हित में होगा। मेरी दिलचस्पी न पेंशन में है, न क्षमादान में, मैं केवल देशहित को प्रधानता दूंगा।"

सुनकर तीनों भावुक हो उठे। उनकी आंखों में पानी छलक आया। यह देखकर निक्सन ने कहा, "मेरी आंखों में आंसू नहीं आएंगे, मैं आइसनहावर की मृत्यु के बाद आज तक नहीं रोया हूं। मेरा परिवार भी बहुत साहसी है। मैं ठीक-ठाक रहूंगा।"

निक्सन इसके बाद आइसनहावर के बारे में बातें करते रहे और फिर बोले, "मैंने जिन लोगों के लिए सब कुछ किया वे ही मेरा पद छीनने पर उतारू हो गये! लेकिन अब तो पानी सिर से गुजर रहा है। अब ये सब सोचने से क्या फायदा!"

अंत में निक्सन रोड्स की ओर मुड़े और उससे पूछा कि उसके सामने और कोई (त्यागपत्र के अलावा) रास्ता भी है? रोड्स ने सीधा उत्तर दिया, "राष्ट्रपति महोदय, इस कमरे से निकलने पर बाहर इंतजार कर रही भीड़ से मैं यह कहना चाहता हूं कि हमने विकल्पों की कोई चर्चा नहीं की।"

"ओह, मैं भी यही चाहता हूं। मेरा मतलब वह नहीं था। मैं निश्चय कर लूंगा।" निक्सन जल्दी से कह गये। इसके बाद वे चारों ही व्यक्ति फोटोग्राफरों के सामने खड़े हो गये। गोल्डवाटर ने संवाद-दाताओं से कहा कि बैठक में कोई निश्चय नहीं किया गया। राष्ट्रपति जो भी निर्णय करेंगे, वह देश के हित में ही होगा।

निक्सन कुछ देर अपने दफ्तर में रुके रहे। उनके कमरे से उनकी निजी सचिव रोजमेरी निकली। उसने साथवाले कमरे में जाकर जूली और ट्रीशिया से कहा, "तुम्हारे पिता ने त्यागपत्र देने का निश्चय कर लिया है।" पीछे-पीछे निक्सन भी आये और बोले कि, 'हम लोग कैलीफोर्निया जा रहे हैं।' उन्होंने संकेत से यह भी स्पष्ट कर दिया कि अब इस बारे में किसी तरह

चर्चा नहीं होगी।

सुनकर लड़कियां रो पड़ीं, मगर श्रीमती निक्सन शांत बनी रहीं। इतने में किसी ने दरवाजे पर दस्तक दी। फोटोग्राफर ओली एटकिंस था। उसने कुछ चित्र खींचे और वह मुड़ा ही था कि निक्सन ने जूली को गले लगा लिया। पिता-पुत्री एक दूसरे की बांहों में सिसकने लगे। ओली ने एक और चित्र उतारा और वहां से चला गया।

शाम के खाने के समय वातावरण हलका रहा। निक्सन कैलीफोर्निया के बारे में बातें करते रहे। सात बजे उन्होंने हेग से फोन पर पूछा कि निर्णय ठीक है न?

"एकदम ठीक।" हेग ने पुष्टि की।

'हाय, मैंने यह क्या कर डाला . . .'

रात आठ बजे निक्सन राष्ट्रपति भवन के 'लिंकन कक्ष' में गये और हेनरी कीसिंजर को बुलाया। दोनों कुछ देर तक बैठ पुरानी स्मृतियां ताजी करते रहे। निक्सन शराब पीते चले जा रहे थे। उन्होंने कीसिंजर से कहा, 'मैं त्यागपत्र दे रहा हूं। मैंने सोचा कि यही सबके हित में होगा।' इसके बाद फिर इधर-उधर की बातें होती रहीं।

इतने में ही निक्सन ने फिर कहना शुरू कर दिया, "मुझे भरोसा नहीं हो पा रहा है कि मैं त्यागपत्र दे पाऊंगा। क्या त्यागपत्र देनेवाला पहला राष्ट्रपति मुझे बनना होगा?" इस पर कीसिंजर ने राष्ट्रपति की सफलताओं का लेखाजोखा बताना शुरू किया। निक्सन की आंखों से आंसुओं की अविरल धारा फूट पड़ी। उन्होंने पूछा कि क्या इतिहास उनके साथ उनके समकालीन लोगों की अपेक्षा अधिक न्यायसंगत व्यवहार करेगा? कीसिंजर ने कहा कि निश्चित रूप से। जब सब तूफान शांत हो जाएगा तब अमरीका के लोग उन्हें शांतिदूत के रूप में याद करेंगे। सुनकर राष्ट्रपति सुबकने लगे और विह्वल हो गये।

सुबकते-सुबकते वे कहते जा रहे थे कि 'मैंने अपने देश के लिए, अपनी जनता के लिए कितना कुछ किया, फिर भी ऐसा तूफान न जाने क्यों आ गया। एक मामूली-सी डकैती ने यह सब कर डाला।' कीसिंजर विषय बदलने की चेष्टा करते तो निक्सन उसी बात पर वापस आकर विलाप करने लगते। अंत में वे पूरी तरह विगलित हो गये और बोले, "हेनरी, न तो तुम लकीर के फकीर यहूदी हो और न मैं लकीर का फकीर क्वेकर; लेकिन इस समय हमें प्रार्थना की आवश्यकता है।"

निक्सन कुरसी से उठे और घुटनों के बल कालीन पर बैठ गये। कीसिंजर को भी नीचे उतरना पड़ा। निक्सन जोर-जोर से प्रार्थना करने लगे और ईश्वर से सहायता, शांति, विश्राम और प्रेम की याचना करने लगे। वे विलाप करते हुए कहते जा रहे थे, "हे भगवान! तूने इतनी छोटी-सी बात के कारण इस महान देश और उसके राष्ट्रपति के बीच दरार क्यों

आ जाने दी !"

कीसिंजर ने निक्सन को खामोश देखकर सोचा कि प्रार्थना समाप्त हो गयी है, राष्ट्रपति अब उठेंगे। लेकिन नहीं, वे तो रो रहे थे। उन्होंने सुबकते-सुबकते ही मुक्कों से कालीन पीटना शुरू कर दिया। वे बार-बार एक ही बात दोहरा रहे थे, **"हाय, मैंने यह क्या कर डाला ? हाय, यह क्या हो गया ?"**

कीसिंजर ने राष्ट्रपति को सांत्वना देने और सहारा देकर उठाने की कोशिश की, मगर वे बच्चे की तरह बिलखे जा रहे थे।

आखिरकार वे उठे और अपनी कुरसी पर बैठे। तूफान गुजर चुका था। उन्होंने गिलास में शराब उंडेली और उसे हलक के नीचे उतारने लगे। इसके बाद दोनों ने एक-एक गिलास और पी, और पसीने से तर कीसिंजर वहां से चुपचाप खिसक गये।

वह अपने दफ्तर में पहुंचा ही था कि निक्सन का फोन आया, "हेनरी, तुम्हारी बड़ी मेहरबानी है कि मेरे पास आये और मुझसे बातें कीं। मैंने त्यागपत्र देने का निश्चय कर लिया है। लेकिन तुम अपना पद मत छोड़ना। देश का भला इसी में है।" इसके बाद निक्सन के शब्द लड़खड़ा गये। लेकिन अंत में उन्होंने कहा "हेनरी, मेहरबानी करके किसी से यह मत कहना कि मैं रोया हूं और कमजोर पड़ गया हूं।"

त्यागपत्र और अलविदा

इसके बाद निक्सन ने अपना त्यागपत्र तैयार किया और विदाई-भाषण बनाने में जुट गये।

रात के दो बजे से पहले दो बार और तीसरी बार ३ बजकर ५० मिनट पर उन्होंने अपने प्रेस-सचिव रोनाल्ड जीगलर से तथा सवेरे ४ बजकर १५ मिनट से लेकर ५ बजकर ७ मिनट के बीच चार बार अपने भाषण-लेखक रे प्राइस से फोन पर अपने भाषण के बारे में परामर्श किया। ५ बजकर १४ मिनट पर उन्होंने जीगलर को अंतिम बार फोन किया।

अगले दिन ८ अगस्त की दोपहर राष्ट्रपति निक्सन ने अपना त्यागपत्र अपने विदेशमंत्री कीसिंजर को भेज दिया :

"प्रिय श्री सचिव महोदय : मैं संयुक्तराज्य अमरीका के राष्ट्रपति पद से त्यागपत्र देता हूं। आपका, रिचर्ड एम. निक्सन।"

वह रात निक्सन ने राष्ट्रपति भवन में ही जागकर काटी और रात भर वे अपने मित्रों से अलविदा कहते रहे। ९ अगस्त को उन्होंने राष्ट्रपति भवन छोड़ दिया। ●

दी हिन्दुस्तान टाइम्स लिमिटेड की ओर से सन्तोष नाथ द्वारा हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस, नयी दिल्ली में मुद्रित तथा प्रकाशित

चलते चलते
सुशील कालरा
डाक्टरेट किये तरक्की
ल ही लगती है, लेकिन...
घबराओ नहीं, डाक्टरेट करने के नुस्खे हमें मालूम हैं। बस समझो आपने डाक्टरेट कर ली।
डा. साहब, यह मेरे घनिष्ठ मित्र हैं और डाक्टरेट करना चाहते हैं
आजकल सब्जेक्ट सोचना जरा मुश्किल है। तुम मेरी पुस्तक पाठ्यक्रम में लगवा दो, तब तक मैं टापिक सोचता हूं
बेशक कठिन है, पर मैंने तुम्हारे लिए
हेल्पर का इंतजाम कर लिया है। दो-चार
रोजाना मेहनत के पैसे इन्हें दे देना
पिछले कुछ दिनों में तुम्हें मेरी व्यस्तता का अनुमान तो हो ही गया होगा। चाहो तो तुम यह काम अपने घर पर ही ले जाओ। अगर किसी जरूरी परामर्श की आवश्यकता हो तो डा. साहब को टेलीफोन..
थीसिस तैयार है, बस केवल आप
डा. साहब के हस्ताक्षरों की जरूरत है
काम तो ठीक ही लगता है, फिर भी कोई कसर हुई तो...
बधाई डाक्टरेट करने की! शोध का सब्जेक्ट क्या था?
जी, जी..., वह तो थीसिस देख कर ही बता सकता हूं

नया पैकिंग, नई शान.
रजिस्टर्ड
रत्ना छाप
ट्रेड
RATNA BRAND
PRABHAT
ZARDA FACTORY
रत्ना
ज़ाफ़रानी
NO. 300
ज़ाफ़रानी
पत्ती
नं.
300
प्रभात ज़र्दा
मुजफ्फरपुर.(बिहार).

कादम्बिनी
भारतीय भाषाओं की विशिष्ट पत्रिका
डॉ. गौतम हत्याकांड
ज्वालामुखी से उभरता हुआ
में बस्तियों का व्यापार

फ़ैशन-किंग बनने गए; ठन ठन गोपाल बन गए

कमला वस्त्रों के
सस्ते दाम-धनवान सी शान

CU-A 1856 Rev.

जिससे बचपन झांके

PEARS
TRANSPARENT
SOAP

पियर्स—असली ग्लिसरीन साबुन

अपनी त्वचा को पियर्स की कोमल देखभाल में रखिए. हर पारदर्शक टिकिया—साबुन बनाने में सौ बरसों के अनुभव का सबूत. पियर्स कोमल है—और कितना शुद्ध; आप वास्तव में इसके आरपार देख सकते हैं.

पियर्स से आप की त्वचा में भोला लड़कपन झलकता है

हिन्दुस्तान लीवर का उत्कृष्ट उत्पादन

लिंटास-PS.56.77 HI

उत्साह भरा जीवन
नेस्कैफे®
के ताज़ा और
स्फूर्तिदायक स्वाद से
NESCAFE
instant
नेस्कैफे®
एकमात्र इन्स्टैन्ट कॉफी
जो १००% शुद्ध
कॉफी से बनी है
दुनिया भर में सबसे
ज़्यादा बिकने वाली
इन्स्टैन्ट कॉफी

Weston® TV
११ विशेष मॉडलों में
• १२-चैनल का जापानी मित्सुमी ट्यूनर
• विदेशी पिक्चर ट्यूब
• बिक्री के बाद कुशल सेवा
CHAITRA-WE-308

शब्द-सामर्थ्य बढ़ाइये

● शांडिल्यायन

निम्नलिखित शब्दों के जो सही अर्थ हों, उन पर चिह्न लगाइए और इसी पृष्ठ से आरंभ उत्तरों से मिलाइए।

१. **सरगही**—क. स्वर्गीय; ख. पूर्णतः ग्रहण किया हुआ; ग. वह भोजन जो निर्जल व्रत के दिन बहुत तड़के किया जाता है; घ. एक राग ।

२. **प्रतिहतमति**—क. जिसकी बुद्धि अविकसित हो; ख. विरोध-भाव रखने वाला, ग. निराश ; घ. हारा हुआ ।

३. **पराभूत**—क. हारा हुआ; ख परेशान ; ग. मारा हुआ ; घ. आहत ।

४. **शकरी**—क. बातूनी ; ख. घमंडी ; ग. एक प्रकार का मीठा फालसा ; घ. एक प्रकार की मिठाई ।

५. **अग्रेषित**—क. पहले से चाहा हुआ ; ख. आगे भेजा हुआ ; ग. अखंडित ; घ. कुचला हुआ ।

६. **जनांतिक**—क. मनुष्यों का अंत करनेवाला ; ख. गर्भरोधी ; ग. नाटक में मंच पर एक पात्र का दूसरे पात्र के कान में कुछ कहना; घ. एक प्रकार का प्राचीन अस्त्र ।

७. **अकांडतांडव**—क. लगातार होनेवाला तांडव नृत्य; ख. अपशकुन; ग. भयंकर घटना; घ. व्यर्थ की बहस या उछल-कूद ।

८. **भितराह**—क. रहस्य; ख. वह व्यक्ति जो अपने दिल की बात किसी को न बताये ; ग. गुप्त रास्ता ; घ. डरा हुआ, भयभीत ।

९. **भास्वर**—क. चमकता, ख. सुंदर; ग. अच्छे स्वरवाला; घ. दिखायी देता हुआ ।

१०. **खाकसार**—क. धूल-मिट्टी ; ख. भस्म ; ग. तुच्छ; घ. खाक छाननेवाला ।

११. **संख्येय**—क. संखिया; ख. जिसे गिना जा सके; ग. असंख्य; घ. गणेश ।

१२. **जद्दबद्द**—क. खराब या अश्लील बात; ख. बुरा-भला कहना ; ग. जल्दबाजी करनेवाला; घ. फूहड़ ।

१३. **तन-तनहा**—क. सशरीर, ख. तुनकमिजाज; ग. जिसके पास सिवा शरीर के कुछ न हो; घ. अकेले ही ।

१४. **गंगबरार**—क. मजबूत; ख. हट्टा-कट्टा; ग. गंगा के किनारे बसा हुआ; घ. वह जमीन जो गंगा या किसी भी नदी की धारा बदलने या हटने से नयी निकल आती है ।

उत्तर

१. ग. वह भोजन जो निर्जल व्रत के दिन बहुत तड़के किया जाता है, सहरी ।

यह प्रथा हिंदुओं तथा मुसलमानों दोनों में प्रचलित है, किंतु मूलतः मुसलमानों से आयी है, इसीलिए हिंदी में इसके लिए कोई परंपरागत शब्द नहीं है। यह अरबी 'सहर' (प्रातः) तथा फारसी 'गह' (ग्रहण करना) के योग से बना है। कल व्रत है, **सरगही** जरूर ले लेना, नहीं तो दिन भर काम नहीं कर पाओगी। अर.+फा., सं. स्त्री.।

२. ख. विरोधभाव रखनेवाला। उस-जैसा **प्रतिहतमति** व्यक्ति मैंने देखा नहीं, उससे किसी प्रकार की भी सहायता की आशा करना व्यर्थ है। तत्., वि.।

३. क. हारा हुआ, परास्त। **पराभूत** सेना देखते ही देखते भाग खड़ी हुई। तत्., वि.।

४. ग. एक प्रकार का मीठा फालसा। यों तो किसी भी फालसे का शर्बत अच्छा होता है, किंतु **शकरी** की बात ही और है! फा., सं., पुं.।

५. ख. आगे भेजा हुआ। अंगरेजी 'फारवर्डेड' शब्द के लिए प्रयुक्त। जब तक यह पत्र कार्यालय के उच्चाधिकारी से **अग्रेषित** होकर नहीं आयेगा, उस पर विचार नहीं हो सकता। तत्., वि.।

६. ग. नाटक-मंच पर एक पात्र का दूसरे के कान में कुछ कहना। वह **जनांतिक** था, मंच के अन्य पात्रों से आशा नहीं की जाती कि उन्होंने उसे सुना। तत्., सं., पुं.।

७. घ. व्यर्थ की बहस या उछल-कूद। **अकांडतांडव** करने की तो उसकी आदत है! तत्., सं., पुं.।

८. ख. वह व्यक्ति जो अपने दिल की बात किसी को न बताये, उसे दिल के भीतर ही रखे रहे। वह आदमी बहुत **भितराह** है, उससे आशा मत करो कि तुम्हें अपनी बात बता देगा। 'अभ्यंतर' से 'भीतर' शब्द निकला है, उसमें 'आह' प्रत्यय लगने से यह शब्द बना है। तद्., वि.।

९. क. चमकता, तेजस्वी, दीप्तिमान। **भास्वर** ललाट, स्वस्थ-सुडौल शरीर—वह सचमुच दर्शनीय था। तत्., वि.।

१०. ग. तुच्छ, नाचीज (प्रायः नम्रता दिखाने के लिए अपने को कहते हैं)। **खाकसार** को महमूद कहते हैं। फा., वि.।

११. ख. जिसे गिना जा सके। गणनीय, कुछ संज्ञाएं **संख्येय** होती हैं, जैसे आदमी, शहर, देश, कलम आदि और कुछ **असंख्येय** होती हैं जैसे पानी, मिट्टी, काठ, हवा आदि। तत्., वि.।

१२. क. खराब या अश्लील बात, ख. बुरा-भला। फिर **जद्दबद्द** कहा तो मुझसे बुरा कोई नहीं होगा! तद्., सं., पुं.।

१३. घ. अकेले ही। वह **तन-तनहा** ही घर से निकल पड़ा। फा. तन+तनहा, अव्य.।

१४. घ. वह जमीन जो गंगा या किसी भी नदी की धारा बदलने या हटने से नयी निकल आती है। नदी ने धारा बदल दी है, **गंगबरार** का बटवारा करना पड़ेगा। तद्. संस्कृत—गंग (गंगा)+फा.—बरार। सं., स्त्री.।

आगामी आकर्षण

कल्प-वृक्ष अफरीका से आया था

मात्र चौंकानेवाला शीर्षक ? जी नहीं, जिस कल्पवृक्ष के बारे में कहा जाता है कि वह स्वर्गलोक के नंदनवन में ही पाया जाता है, वह कल्प-तरु भारत में ही अनेक स्थानों पर है। एक शोधपूर्ण लेख

तेंदुआ : किसी का दोस्त नहीं

शेर से अधिक चुस्त, चालबाज और धूर्त तेंदुआ एक कुशल अभिनेता भी सिद्ध हो सकता है। सार-संक्षेप के अंतर्गत इस बार परिचय कीजिए वन के इस विलक्षण जीव से

आदमी कभी नहीं मरता

पुनर्जन्म की कई घटनाएं आये दिन प्रकाश में आती रहती हैं। पुनर्जन्म का क्या कोई वैज्ञानिक आधार है? आधुनिक वैज्ञानिकों की मान्यता है कि शरीर के प्रोटोप्लाज्म ही नये शरीर के साथ जन्म लेते रहते हैं। एक बेहद दिलचस्प लेख

और एक नया स्तंभ

'यदि मुझे एक लाख रुपये मिल जाएं'—विभिन्न वर्गों के लोगों के दिलचस्प विचार, जो आपके भी काम आ सकते हैं

कुछ अन्य आकर्षण

● रोशनदान रंगों में खिलते हैं ● सत्य कथाएं बाजार की खोज में ? ● कुछ अलग किस्म के ढांचे में ढला आदमी ● योगिनियों के मंदिर में नृत्य करते गणेश ● ऐसे थे मेरे पति ● यूरोप के मारक अड्डे ●

नवंबर अंक से यह जानकर बहुत प्रसन्नता हुई कि 'कादम्बिनी' की प्रसार-संख्या सत्तर हजार तक पहुंच गयी है। 'कादम्बिनी' पाठकों में जिस सुरुचि का निर्माण कर रही है, वह समूचे हिंदी-जगत के लिए वरदान साबित होगी। प्रगति की गति और तेज होने के लिए शुभकामनाएं। **--चक्रम, भोपाल**

(दिसंबर अंक ७५ हजार छपा है--सं.)

डॉ. गौरीशंकर राजहंस का लेख "माओ : एक लंबी यात्रा का अंत' बहुत सामयिक और दिलचस्प रहा। माओ के व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं और चीन के विकास पर उनके प्रभाव का अच्छा विवेचन हुआ है। **--पांडेय अजयकुमार सिन्हा, जामुई (बिहार)**

दीपावली-विशेषांक की सभी रचनाएं एक से एक बढ़कर हैं। पहला लेख "नाच रहे सूर्यपुत्र' पढ़कर ही मन-मयूर नाच उठता है। भारतीय संस्कृति में दीपों की परंपरा और विकास पर ऐसा सांगोपांग लेख हिंदी में इसके पूर्व कहीं देखने को नहीं मिला। **—प्रदीप दीक्षित, नयी दिल्ली**

मरलिन हत्या या . . .

दीपावली विशेषांक में शारदा पाठक द्वारा प्रस्तुत मरलिन मनरो की जीवन-कथा मर्मस्पर्शी लगी। यद्यपि यही कहा जाता है कि मरलिन ने आत्महत्या की थी, तथापि कुछ लोग ऐसे भी हैं जिन्हें इस बात का पूरा यकीन है कि मरलिन ने आत्महत्या नहीं की थी, वरन उसकी हत्या की गयी थी। पत्रकार राबर्ट स्लाजर के अनुसार मरलिन के पास ऐसे कई महत्त्वपूर्ण पत्र थे, जिनसे अमरीका के अनेक प्रतिष्ठित और ख्यातनामा राजनीतिक नेताओं के चरित्र पर प्रकाश पड़ता था।

—सत्यनारायण दुबे, नागपुर

'पहल' के विरोध में

हाल ही संसद-सदस्या श्रीमती रत्नकुमारी की अध्यक्षता में आयोजित एक बैठक में जबलपुर के बुद्धिजीवियों, पत्रकारों एवं साहित्यकारों ने 'पहल' के राष्ट्र-विरोधी, प्रतिक्रियावादी एवं कुत्सित समाजशास्त्रीय प्रकाशन, 'पहल' की सामग्री के समर्थन में 'पहल' कार्यालय से प्रसारित प्रपत्रों की घोर निंदा और तीव्र भर्त्सना का प्रस्ताव पारित करते हुए पुनर्स्थापित किया कि 'पहल' में प्रकाशित लेख तथा इतर सामग्री—जिसमें कि महात्मा गांधी और श्री नेहरू को सामंतवादियों से हाथ मिलानेवाला

'राष्ट्रीय वर्जुआ' अपनी इस मान्यता के साथ कहा है कि "कला में खास तौर से अधिकारियों की ठस बुद्धि को चकमा देने की बहुत गुंजाइश है"—अत्यंत चालाकीपूर्ण एवं भ्रामक है।

यह भी प्रस्तावित किया गया कि 'पहल–८' के जुलाई' ७६ अंक में भी प्रकाशित सामग्री निंदनीय और आपत्ति-जनक है, जो प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी के बीस-सूत्रीय कार्यक्रम और उनकी पार्टी और सत्ता के प्रति अनास्था और कपटपूर्ण कुदृष्टि की अभिव्यक्ति है।

इस प्रकार ध्यान देने योग्य है कि आज आपत्काल में जब समूचा देश बीस-सूत्रीय आर्थिक कार्यक्रमों का संबल पाकर, जागकर विकास, कार्यों के लिए जुट गया है ऐसे समय में 'पहल' के प्रतिक्रिया-वादी संपादक और लेखक अब भी जनभावना के विरुद्ध अपने असंतोष को साहित्य के बहाने सेंसर को चकमा देते हुए व्यक्त कर रहे हैं। 'कादम्बिनी' में प्रकाशित 'समय के हस्ताक्षर' के अंतर्गत संबंधित मांग का हम समर्थन करते हैं तथा शासन का ध्यान अपने पूर्व-प्रेषित परिपत्र की ओर आकर्षित करते हुए त्वरित कार्यवाही की मांग करते हैं। **रत्नकुमारी (संसद-सदस्या), व्योहार राजेन्द्रसिंह (भूतपूर्व विधायक), पं. रामेश्वर शुक्ल 'अंचल', कालिकाप्रसाद दीक्षित 'कुसुमाकर' (संपादक, 'शैतान') मदनलाल माहेश्वरी (संपादक, 'नव-भारत'), डॉ. विजय शुक्ल, डा. कृष्ण-वल्लभ जोशी, डॉ. सुरेन्द्र श्रीवास्तव, मनोहर पण्डित, राजेन्द्र तिवारी, श्रीबाल पाण्डय, विश्वभावन देवलिया, कामता तिवारी 'राज' (संपादक, 'युवा संकल्प') श्यामसुन्दर मुल्लेरे (संपादक, 'जनसत्ता')**

'पहल' के राष्ट्र-विरोधी एवं प्रति-क्रियावादी एवं कुत्सित समाजशास्त्रीय प्रकाशन की सामग्री के समर्थन में प्रसा-रित प्रपत्रों की मैं घोर निंदा करता हूं कि महात्मा गांधी और श्री नेहरूजी को सामंतवादियों से हाथ मिलानेवाला राष्ट्रीय बुर्जुआ कहनेवाला यह प्रकाशन भ्रामक उद्देश्यों से परिपूर्ण है, जिसके समर्थन में प्रसारित पर्चे किसी राजनी-तिक षड्यंत्र की भूमिका का संकेत करते हैं। यह श्रीमती इंदिरा गांधी की बीस-सूत्रीय योजनाओं और राष्ट्रीय एकता व प्रगतिशीलता के लिए घातक है।

इस प्रकार ध्यान देने योग्य है कि आज आपतकालीन समय में जब समूचा देश राष्ट्र-निर्माण की ओर अग्रसर है तब इस तरह की उग्र वामपंथी नक्सलवादी विचारधारा से ओतप्रोत 'पहल' का प्रकाशन देश-विरोधी तथा राष्ट्रीय कार्यों के प्रति घृणा फैलाता है।

आश्चर्यजनक है कि ऐसी पत्रिका को (म. प्र.) शासन साहित्य परिषद से अनुदान कैसे मिल गया?

—डॉ. रत्नाकर पाण्डेय, प्रचार-मंत्री
हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

वर्ष १७, अंक २
दिसम्वर, १९७६

आकल्पं कवि नूतनाम्बुदमयी कादम्बिनी वर्षतु

निबंध एवं लेख

संपादक

राजेन्द्र अवस्थी

संयुक्त संपादक : शीला झुनझुनवाला

सह-संपादक : दुर्गाप्रसाद शुक्ल

उप-संपादक : कृष्णचन्द्र शर्मा, चित्रकार : सुकुमार चटर्जी

अपराध-साहित्य की बढ़ती हुई खेती

पिछले कुछ महीनों में अधिकांश मासिक पत्रिकाओं की 'दृष्टि' ने जो करवट बदली है, वह चिंताजनक है। हलके रोमांस, अपराध और खुले सेक्स से इन पत्रिकाओं के पृष्ठ सजने लगे हैं। वास्तव में इसका आरंभ इलाहाबाद से प्रकाशित होनेवाले एक मासिक पत्र ने किया था। वह समूचा पत्र ही सेक्स और अपराध की कहानियों का घोषित पक्षधर है। इसके बढ़ते हुए प्रसार को देखते हुए हिंदी में ऐसे पत्रों की संख्या बढ़ती गयी।

उत्तरप्रदेश ऐसी पत्रिकाओं का गढ़ है। इलाहाबाद, कानपुर, मेरठ और आगरा से ऐसी दर्जनों सस्ती पत्रिकाएं प्रकाशित होती हैं। उनका दावा है कि उनकी प्रसार-संख्या दस हजार से लेकर चालीस हजार तक है। इन पत्रिकाओं में प्रकाशित कहानियों और अन्य सामग्री का चयन प्रायः विदेशी पत्र-पत्रिकाओं की सामग्री के आधार पर होता है। उनका भारतीय-करण किया जाता है और यह बताने की कोशिश की जाती है कि वे सारी घटनाएं सत्य हैं। इन कहानियों का नायक कोई डाकू हो सकता है, जो बहुत बड़े आदर्श का प्रतिनिधित्व भी कर सकता है। उभरती युवा-उमंगों को पकड़ने के लिए 'सेक्स-थ्रिलर' के फारमूले काम में लाये जाते हैं। अपराध-कथाओं को रोमांचक बनाकर 'वीरता' की शक्ल दी जाती है।

एक ऐसे ही मासिक पत्र से हमें पत्र मिला था कि उन्हें कोई ऐसी 'रोमानी' कहानी चाहिए जो बेजोड़ हो। कुछ समय पहले हिंदी के एक प्रकाशक 'हिंदी की अप्रकाश्य कहानियां' नाम से एक पुस्तक प्रकाशित करना चाहते थे, लेकिन इन ढेर-सारी पत्रिकाओं में निरंतर 'अप्रकाश्य सामग्री' देखकर उन्हें अपनी योजना स्थगित कर देनी पड़ी।

आखिर ऐसी सामग्री प्रकाशित क्यों की जाती है? एक प्रकाशक ने

हमें बताया कि पाठकों की यही मांग है। उनका कहना है कि हम इसके सिवा और क्या छापें ? उनकी बातें सुनकर हमें आश्चर्य हुआ—क्या हमारे पास छापने के लिए और कुछ नहीं बचा ? यूरोप और अमरीका - जैसे संपन्न देशों की नकल कर हम आगे नहीं बढ़ सकते । विकसित देश संपन्नता के शिखर पर हैं और निश्चिंत होकर 'बनावटी साहित्य' की खेती कर सकते हैं। भारत और एशिया के अन्य देश 'रोजी-रोटी' की मूल समस्या से लड़ रहे हैं। ऐसे देशों में विलासिता-भरे साहित्य का सृजन देश की राष्ट्रीयता और समाज के मूल्यों के साथ धोखा है।

हमारी सरकार ने फिल्मों को सुधारने के लिए कदम उठाये हैं। फिल्मों से अपराध और सेक्स को सीमित करने का प्रयत्न किया जा रहा है। अतः सरकार ने जब फिल्मों पर यह प्रतिबंध लगाया है तब उसी स्तर की सतही पत्रिकाओं को क्यों मुक्त छोड़ा जा रहा है ? इन पत्रिकाओं को छूट यह है कि ऐसी सामग्री न तो 'सेंसर' की सीमा में आती और न उसे 'अनैतिक' घोषित किया जा सकता । जब कभी नैतिक और अनैतिक का प्रश्न उठाया जाएगा तो ये पत्रिकाएं इस मूल प्रश्न की व्याख्या में लग जाएंगी, जबकि वास्तविकता यह है कि इनके लिए परिभाषाओं की कोई सार्थकता नहीं है।

हमारा देश एक नयी समाज-रचना में लगा है। मूल्यों को इसलिए बदलना आवश्यक है, ताकि वे समकालीन संदर्भ में प्रगति के रास्ते में बाधक न बनें। ऐसी स्थिति में सतही रोमानी और अपराध-पूर्ण साहित्य समूचे देश के साथ सबसे बड़ा धोखा है। ऐसा साहित्य हमें एक भ्रमलोक में ले जाता है। कई बार अपराधियों के बयानों से भी अदालतों में स्पष्ट हो चुका है कि उन्हें ऐसा अपराध करने की प्रेरणा ऐसी ही कहानियों से मिली है। हाल ही एक समाचार पढ़ने को मिला था कि कुछ व्यक्तियों ने दस लड़कियों के साथ बलात्कार किया और ग्याहरवीं लड़की को इसलिए छोड़ दिया गया, क्योंकि उसकी आयु चौदह वर्ष की थी और उनकी दृष्टि में यह आयु 'बहुत अधिक' है। बाद में पता लगा कि उन्हें यह 'प्रेरणा' कुछ कहानियों से मिली थी।

समय आ गया है कि नयी समाज-रचना में बाधक तत्त्वों को तोड़ दिया जाए और इसके लिए सरकार का पहला कदम ऐसी पत्रिकाओं और खबरों पर प्रतिबंध लगाना होना चाहिए। ऐसा साहित्य हमारी समूची भारतीय परंपरा के प्रति विद्रोह है। और इसके प्रति कठोर कदम उठाकर सरकार को अपनी सजग चेतना का परिचय देना चाहिए। ●

काल-चिंतन

--'मैं अनुभव करता हूं, जैसे मैं नितांत अकेला हूं और इस अकेलेपन से एक उबास आने लगी है। बताइए इसे कैसे तोड़ा जाए?'

—ऐसा अकेलापन या एकाकी होना मात्र एक आभास है, वास्तविकता नहीं है।

—मन के भीतर का खोखलापन कहीं अचानक ऐसी अनुभूति पैदा कर जाता है और स्वजनों, परिजनों तथा मित्रों के बीच रहकर भी लगता है, जैसे हमारे साथ कोई नहीं है।

—लेकिन यह स्थिति न तो निराशा है और न शून्य है।

—इसका संबंध मनुष्य-जीवन के सुख-दुख से भी नहीं है। दुखी मनुष्य की अपेक्षा शायद सुखी मनुष्य अधिक अकेलेपन की अनुभूति से गुजरता है।

—अकेलापन वास्तव में ओढ़ा हुआ एक बनावटी लबादा है, जिसमें दुबककर हम मुक्ति की कल्पना कर लेते हैं।

—शुतुर्मुर्ग की तरह अपने आपको छिपा लेना, कबूतर की तरह बिल्ली के सामने आंख बंद करना है और अपने को भस्म होने के लिए समर्पित होने देना है।

—ऐसी स्थितियां तब उभरती हैं जब गौण मूल्यों को महत्त्व देकर हम अपने आपको संकट में डाल लेते हैं।

—भीड़ में अकेलेपन का एहसास मन की वह कमजोरी है जो मलेरिया के पहले उठनेवाली ठंड की तरह पूरे शरीर को कंपा देती है, फिर उष्मा की तीव्रता से समूचे शरीर को जकड़ लेती है।

—तब आदमी असहाय, बिका हुआ और टूटा अनुभव करता है।

—बनावटी सोच और झूठे घरौंदे इसी तरह निरंतर छला करते हैं।

—इसी के कारण कई बार हम वहां होकर भी वहां नहीं होते, हम कहीं और होते हैं; और कहीं और पहुंचकर फिर वहीं लौट जाना चाहते हैं।

—वर्तमान के साथ धोखा, व्यतीत के के साथ रिश्ता कायम करना और भविष्य के प्रति सशंकित रहना सामान्य चिंतन है।

●●

—वास्तव में अकेलेपन का ढोंग किया जाता है। अकेला केवल सामर्थ्यवान व्यक्ति ही रह सकता है।

—आदमी अकेला आता है, अकेला

जाता है; फिर अकेलेपन को वह सामाजिकता से तोड़ता है और जब वह सामाजिकता उसे छलती है, तब वह निरीह अनुभव करने लगता है।

—ऐसा अनुभव विवशता है, कमजोरी है, वास्तविक एकाकीपन नहीं है।

—एकाकी होने के लिए मनोबल चाहिए और बुद्धि पर नियंत्रण। हमारा मस्तिष्क हमें कब अकेला छोड़ता है?

—मस्तिष्क पर नियंत्रण पाना जेब्रा-सी धारीदार काया, तेंदुए-सा चतुर आवेग और चांदी-सी सफेद मृगतृष्णा के छल से ऊपर उठना है।

—इस तरह उठ जाना सबके वश का नहीं है। यहां तक कि ध्यान और योग भी मात्र एक पलायन का संचार करते हैं, स्थिर इकाई से वे भी दूर हैं।

●●

—अकेला पवन है। महासागर अकेला है।

—अग्नि भी अकेली है।

—प्रकृति के सभी उपादान एकाकी सृष्टि के संदेशवाहक हैं—धवल-श्वेत जूही, वन्यागोचर, त्वरित मलीन बनफ्शे, कस्तूरी गुलाब, अल्हड़ खलिहान, ओसाती बयार, तारकोल से खिसकती भीड़—इनके साथ कौन है?

—सारी संस्कृतियों का आधार एक अकेला सूत्र होता है। सूत्रों से प्रवहमान विकसित संस्कृति जन्म नहीं लेती।

—अकेला मस्तिष्क मानवीयता का संकट-मोचन है।

—एकाकी व्यक्ति अपनी अकेली क्षमता और गति से समस्त आविष्कारों को जन्म देता है।

—नियंत्रण की शक्ति समूह में नहीं, 'एक' में होती है।

—'एक' महाप्राण है।

—'एक' समस्त अंकों का आदि-स्वामी और विस्तार का नियंता है।

—इसलिए एकाकी शक्ति का प्रभाव सामूहिक शक्ति से अधिक होता है।

—कभी एकाकी होकर तो देखिए, उसका मजा कुछ और है।

—सबसे कटकर, यहां तक कि अपने आपसे भी तटस्थ होकर, सारे वातावरण को बादलों की तरह समेट लेना, फिर उस घेरे में यदि कोई सचमुच अपने को छोड़ सके तो जो कुछ मिलेगा, अमूल्य है।

—वास्तविक एकाकीपन एक ऐसी ऊंचाई है, जिसे कोई छीन नहीं सकता। वह पीड़ाओं और भीड़ के ओढ़े हुए भार से मुक्त वह पवन है, जो फूलों के गंध पराग से सीधे उठता है और अछूते आपके पास आकर ठहर जाता है।

—ऐसे अनछुए कौमार्य का उपभोग क्वचित भाग्यशाली कर सकते हैं।

—मित्र, आपका एकाकीपन एक ढोंग है, ढोंग ने आपको लंगड़ा बना दिया है। उसे तोड़िए, आपके पैर काम करने लग जाएंगे।

सलीब कितना खूनी?

• लक्ष्मीकान्त सरस

हिंसा के कई अस्त्र-शस्त्र आज पवित्र प्रतीक बन गये हैं। त्रिशूल तलवार, धनुष-बाण, चक्र आदि की पूजा वैदिककाल से ही भारत में होती चली आ रही है। सलीब भी ईसाई धर्म का एक पवित्र प्रतीक है। कई ईसाई परिवारों में, विशेषकर रोमन कैथोलिकों में क्रॉस को एक जंजीर में डालकर लाकेट के रूप में पहनने की प्रथा है। आम तौर पर यह शंका उठायी जाती है कि जिस खूनी सलीब पर ईसा को चढ़ाया गया उसी सलीब को (जिसका इतिहास खून से ही रंगा है) ईसाई धर्म की पवित्रता का प्रतीक बनाकर उसे पूजा के स्थान पर क्यों रख दिया गया? इसके साथ ही कुछ प्रश्न और उभरते हैं। क्या ईसा को दो शहतीरों से बने सलीब पर चढ़ाया गया था? क्या ईसा के पहले सजा देने के लिए या पूजा-आसन पर रखने के लिए सलीब का उपयोग किया जाता था? क्या सलीब की पूजा मूर्ति-पूजा का रूप नहीं है?

तेमूद देवता का प्रतीक-चिह्न

डब्ल्यू. ई. वाइन ने अपनी पुस्तक 'एन एक्स्पोजिटरी डिक्शनरी ऑव न्यू टेस्टामेंट वर्ल्ड' में लिखा है कि क्रॉस का प्रयोग पहले-पहल प्राचीन कुसदिया-बाबुल में हुआ था और तेमूद देवता के प्रतीक-चिह्न के रूप में उसका प्रयोग होता था। उसका स्वरूप रहस्यमय टौ (TAU) या टी (T) के आकार का होता था, जो उस देवता के नाम का पहला अक्षर था। इससे सिद्ध होता है कि क्रूस या सलीब ईसा के जन्म से शताब्दियों पूर्व से ही प्रचलित था। उन दिनों सलीब का आकार वैसा नहीं था जैसा कि ईसा के सलीब का आकार बताया जाता है। 'द कैथोलिक इनसाइक्लोपीडिया' (१९०८, भाग ४, पृ. ५१७) में भी स्पष्ट लिखा गया है कि सलीब का चिह्न, जो साधारण रूप में दो रेखाएं एक दूसरे के ऊपर समकोण तरीके से आड़ा रखकर प्रस्तुत किया जाता है, ईसाई धर्म के परिचालन के समय से बहुत पहले पूर्व और पश्चिम के देशों में पाया जाता था। मानव-सभ्यता की एक अति दूरवर्ती अवधि में सलीब का प्रचलन हुआ।

सलीब पर अपराधियों के चढ़ाये जाने की सजा युद्ध के दिनों में प्राचीन फिनीशियन, कार्थेजीनियन, इजिप्शियन और रोमन लोगों में दी जाती थी। सलीब पर चढ़ाने से पहले अपराधी या

कैदी को कोड़े या चाबुक से मारा जाता था और उसे सलीब पर बांधकर उसके हाथ-पांव में कील ठोक दी जाती थी। फलस्वरूप सलीब पर चढ़ाये जानेवाले कैदियों और व्यक्तियों की मृत्यु खून की कमी से नहीं, बल्कि आम तौर पर हृदय-गति रुक जाने के कारण होती थी।

ईसा के संबंध में भी यही धारणा व्यक्त की जाती है कि ईसा को सिपाहियों ने जब भाले से बेधा था तब पानी और खून दोनों उनके शरीर से निकला था। दर्द से छटपटाते हुए शरीर में सलीब पर दो या तीन दिनों से अधिक जान नहीं रह पाती थी। मृत्यु का आगमन शीघ्रता से होता था। उन दिनों भयंकर कैदियों और सैकड़ों युद्धबंदियों को नगर से बाहर सड़क के किनारे एक कतार में सलीब स्थापित कर उस पर चढ़ाया जाता था। इस परंपरा के अनुसार अपराधी की लाश तब तक सलीब पर टंगी रहती थी जब तक मांस-भक्षी पक्षी उसके मांस को नोच-नोचकर अस्थिपंजर के रूप में न बदल देते थे।

कई बार तो अपराधियों को अधिक से अधिक यातना देने के लिए सलीब में आग लगा दी जाती थी। ईसाई धर्म-

ग्रंथ 'न्यू टेस्टामेंट' (नया नियम) के अनुसार यह सिद्ध होता है कि सलीब पर चढ़ाये जानेवाले अपराधियों के शरीर में कील ठोकने के बाद उनकी टांगें तोड़ दी जाती थीं।

'द न्यू कॉम्पैक्ट बाइबिल डिक्शनरी' में सलीब को आकार-प्रकार की दृष्टि से चार प्रकारों में बांटा गया है।

(क) लैटिन के अनुसार एक लंबी लकड़ी के ऊपर उसका चौथाई भाग शुरू होने के स्थान पर पूरी लकड़ी का आधा भाग जुड़ा रहता है, यही सलीब आज भी प्रचलित है। (ख) सेंट ड्रूज के अनुसार अंगरेजी के क्रास या गणित के गुणा चिह्न के आकार में सलीब बनाये जाते थे। ऐसे सलीबों की तसवीरें कांस्य, स्वर्ण या अन्य धातुओं के रूप में आज भी पुराने चर्चों में एवं ईसाई धर्म की पुस्तकों में देखी जा सकती हैं। (ग) सेंट एंथोनी के अनुसार अंगरेजी के 'टी' के आकार पर बने सलीब थे जो प्राचीनकाल में अधिक प्रचलित थे और आज भी ऐतिहासिक धरोहर के रूप में एहतियात से रखे पाये जाते हैं। (घ) यूनान में जिस सलीब के प्रचलन का विवरण मिलता है, उसका आकार-प्रकार अथवा उसके दोनों भागों की लंबाई बराबर होती थी। वे संपूर्ण या गणित के धन-चिह्न (+) जैसे होते थे। ऐसे सलीब आज भी पर्याप्त संख्या में उपलब्ध हैं।

यदि आत्मा के अतिरिक्त कोई अन्य बाह्य वस्तु ईश्वर की पूजा के लिए प्रयोग में लायी जाती है तो उसका रूप मूर्ति-पूजा का-सा होता है। सलीब की पूजा ईसाइयों को मूर्ति-पूजक भी घोषित करती है। ईसा आत्मा की शुद्धता पर जोर देते थे और मूर्ति-पूजा के साधनों एवं उपादानों को सांसारिक वस्तुओं का मोह-जाल समझते थे, लेकिन ईसा के अनुयायियों ने उनके कथन का अर्थ बहुत कम समझा। उन्होंने अन्य देवी-देवताओं की प्रतिमा की पूजा को तो धिक्कारा, लेकिन खुद अपने आराध्य ईसा के लिए क्रूस को पवित्र मानकर उसकी पूजा प्रारंभ कर दी। उनके अनुसार ईसा का पवित्र लहू क्रूस पर ही गिरा था और क्रूस ही उनकी मृत्यु का निमित्त होने के कारण शायद चिर-स्मरणीय हो गया। पादरी डब्ल्यू. डी. विलेन ने अपनी पुस्तक 'द ऐंशिएंट चर्च' में लिखा है कि अति दूरवर्ती प्राचीनकाल से मिस्र और सीरिया में क्रूस को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था।

किसी भी धर्म को स्थापित करने के लिए अनुयायियों को अपने गुरु का ऐसा कुछ ठोस आधार ढूंढ़ना पड़ता है कि जन-साधारण पर उसका असर सीधा और शीघ्र पड़ सके। ईसा के अनुयायियों के लिए बाह्य ठोस आधार के रूप में सलीब से बढ़कर प्रभावकारी शायद कोई दूसरा बाह्य ठोस आधार नहीं था। उन्होंने इस मर्म को समझा और लकड़ी के क्रूस के चिह्न को ही ईसाई धर्म के प्रचार का साधन बनाया। प्रारंभ में लोगों की यह धारणा बन गयी थी कि येरुशलम को जानेवाले यात्री उस असली पवित्र सलीब के छोटे-छोटे बने सलीब ही उनके चर्च के लिए लाते हैं। क्रूस को पवित्र मानकर उसे कलात्मक ढंग से सजाकर रखने की प्रथा भी शायद

इसी कारण शुरू हुई। शिल्पकारों ने बड़ी लगन और बारीकी से कलात्मक सलीबें गढ़े। ऐसा ही एक कलात्मक सलीब है, जिसके लिए लोगों की धारणा थी कि वह वास्तविक सलीब के एक छोटे टुकड़े या अंश के रूप में लाया गया था। उस सलीब में चारों ओर ईसा के शिष्यों की मूर्तियां गढ़ी गयी हैं। बीच में ईसा की जननी मरियम शिशु ईसा को गोद में लिये हुए प्रभा-मंडल सहित दर्शायी गयी हैं।

कालांतर में ज्यों-ज्यों लोगों की धार्मिक भावना बढ़ती गयी, त्यों-त्यों सलीब लकड़ी के अतिरिक्त स्वर्ण, चांदी, पीतल, कांस्य और तांबा आदि धातुओं के बनने लगे। उन पर रत्न जड़े जाने लगे। ईसा के वचन लिखे जाने लगे। ईसाई धर्म को राज्याश्रय मिलते ही बड़े-बड़े चर्चों की स्थापना हुई और सलीब अधिक से अधिक कीमती धातुओं और रंग-बिरंगे पत्थरों से जड़ा जाने लगा। डॉ. वीट्जमैन का विश्वास है कि आज-कल जो कलात्मक और पुरातन सलीब पाया जाता है, उसे 'मानेस्ट्री' के समय बनाया गया होगा, जिस पर यूनानी अभि-लेख 'आई. एन. आर. टी. (I.N.R.T.) अंकित है।

क्रूस अथवा काष्ठ

क्या सचमुच ईसा की मृत्यु क्रॉस पर हुई थी? यह एक विचारणीय प्रश्न है। क्रूस या सलीब उसी को कहा जाता है
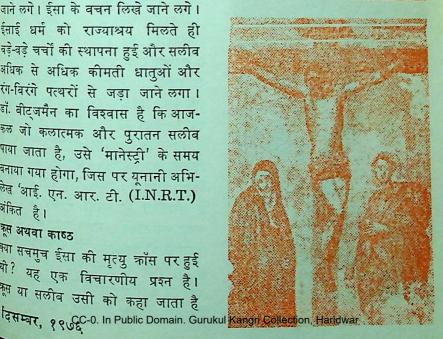
जो दो शहतीरों से बना होता है, लेकिन प्राचीन यूनानी इतिहास इस बात का साक्षी है कि ईसा को दो शहतीरों से बने क्रूस पर नहीं चढ़ाया गया था बल्कि एक सीधे काठ पर टांगा गया था। इस बात को 'न्यू टेस्टामेंट' भी प्रमाणित करता है। 'प्रेरितों के कार्य' ५:३० और १०:३९, में ईसाई धर्म की दो शाखाओं कैथोलिक और प्रोटेस्टेंट में दोनों बाइबिल के अनुवादों में जो अर्थ बताया गया है, वह काष्ठ है न कि क्रूस। हिंदी में प्रकाशित 'नया नियम' (संशोधित संस्करण) में जिस क्रूस शब्द का प्रयोग किया गया है, उसके पृष्ठ के नीचे काष्ठ या काठ

शब्द अक्षरशः अर्थ के लिए दिये गये हैं। ईसा का प्रिय शिष्य पतरस उनके अंतिम क्षणों तक साथ था। उसने ईसा के सिद्धांतों का प्रचार किया और ईसा के काष्ठ पर चढ़ाये जाने की चर्चा भी की। यह काष्ठ एक सीधी लकीर के रूप में लंबा होता था। यह काष्ठ शब्द 'जाइलान' अथवा 'ज्यूलोन' शब्द का अनुवाद है। इन शब्दों के अलावा एक और भी शब्द है 'स्टौरोस', जिसका अनुवाद कुछ अनुवादकों ने क्रूस अर्थ में किया है। 'द कंपेनियन बाइबिल' के परिशिष्ट में लिखा है, "प्राचीन यूनानी कवि होमर ने 'स्टौरोस' शब्द का प्रयोग साधारण डंडे के रूप में अथवा सूली या लकड़ी के एक पृथक टुकड़े के रूप में किया है।"

प्राचीन यूनानी साहित्य में 'स्टौरोस' शब्द का सही अर्थ किसी कोण से एक-दूसरे के ऊपर रखे हुए काष्ठ के दो शहतीरों से नहीं है, बल्कि उसका अर्थ काष्ठ का एक टुकड़ा मात्र होता है। इसलिए ईसा की मृत्यु की रीति के संबंध में 'ज्यूलोन' अथवा 'जाइलोन' शब्द जिसका अर्थ काष्ठ होता है, का प्रयोग किया जाता है। अस्तु, यह बात पूर्ण रूप से प्रमाणित हो जाती है कि ईसा को काष्ठ पर टांगकर मारा गया था, न कि काष्ठ के दो टुकड़ों पर जो किसी भी कोण से एक-दूसरे के ऊपर रखे हुए हों। इस बात को प्रमाणित करने के लिए और भी ऐसे बीसियों ग्रंथ हैं जिन्हें कट्टरपंथी ईसाई

अप्रामाणिक मानते हैं। बाइबिल का सही और सच्चा अनुवाद करने की दिशा में आज भी लोग प्रयत्नशील हैं। संभव है बाइबिल का जिस दिन सही और सच्चा अनुवाद सही अर्थों के साथ प्रकाशित होगा, उस दिन बाइबिल की बातें सर्व-साधारण की समझ में आने लगेंगी। फिर सलीब ईसाई धर्म का पवित्र प्रतीक क्यों? कांटों का ताज क्यों नहीं?

उन दिनों रोम में सलीब पर चढ़ाये जानेवाले खास व्यक्तियों के सलीब पर उनसे संबंधित दो-चार शब्दों के शीर्षक भी टांगे जाते थे। ईसा के तथाकथित सलीब पर लैटिन में 'आई. एन. आर. आई.' लिखा रहता है, जिसका पूर्ण रूप **'आइसस नाजरेनस रेक्स आयोडयोरम'** और अंगरेजी अनुवाद 'जीजेस ऑव नजारेथ किंग ऑव द ज्यूस' और हिंदी में **'नासेरत का ईसा यहूदियो का राजा'** होता है। इसे रोमन राज्यपाल पिलातुस ने लटिन के अतिरिक्त यूनानी और यहूदी भाषा में लिखा था। ईसा को शायद आभास भी नहीं होगा कि उनकी मृत्यु के उपरांत उस 'खूनी सलीब' को, जिस पर उन्हें

लटकाया जायगा, उनके द्वारा रोपित ईसाई धर्म का पवित्र प्रतीक मान लिया जाएगा। इस बात पर विचार किया जाना चाहिए कि आखिर वह कौन-सा सलीब था, जिस पर ईसा को लटकाया गया था। अगर ईसा को सचमुच सलीब पर लटकाया गया तो अहिंसा के पुजारी ईसा द्वारा चलाये गये अहिंसक धर्म ईसाई धर्म का प्रतीक 'खूनी सलीब', जिसके नाम में ही हिंसा है, पवित्र प्रतीक-चिह्न क्यों माना गया?

—१७, अन्नापिल्लै स्ट्रीट, थर्ड लेन,
मद्रास-६०००१

युवा लेखकों का सही प्रतिनिधित्व मिल सके इसलिए युवा लेखन अंक हम अप्रैल '७७ में प्रकाशित करेंगे। —सं.

उपन्यास का भविष्य!

- जॉन अपडाइक

उपन्यास के बारे में पहली बात मन में उठती है कि यह नाचीज उपन्यास क्या इस काबिल है भी कि इसके भविष्य पर विचार किया जाए। साहित्य की दूसरी विधा कविता के भविष्य के बारे में भी क्या हमें इतनी चिंता है? मानना पड़ेगा कि गद्य की अपेक्षा कविता कहीं ज्यादा नाजक होती है।

कविता हर युग में जिंदा

लेकिन कमजोर या नाजुक होने के बावजूद कविता मरी नहीं। महान कवि हर काल में होते रहे हैं। उनके साथ उत्तेजना और क्रांति की लहर भी उठती है और फिर रह जाती है एक चुप्पी, एक ठहराव। इतना जरूर है कि कविता के मामले मे कुछ दशक दूसरों से कहीं ज्यादा भरे-पूरे और स्मरणीय साबित होते हैं। यह भी सच है कि हर पीढ़ी में अपने जमाने के कवि और श्रोता होते हैं।

एक वर्ग-विशेष के श्रोता, चाहे वे थोड़े ही हों, कविता के प्रति हमेशा वफादार रहते आये हैं। अमरीका की बात लें तो वहां यह वर्ग बढ़ता ही रहा है। बॉब डायलन और जॉन लेनॉन की तर्ज पर पॉप संगीत गानेवालों को भी कवि मान लें (इसमें हर्ज भी क्या है?) तो श्रोताओं की संख्या काफी ज्यादा निकलेगी। और गीत के प्रति रुझान इतनी स्वाभाविक प्रवृत्ति है क उसे न कोई विज्ञान मनुष्य से अलग कर सकता है न इतिहास।

वर्णनात्मक गद्य की स्थिति भी कुछ ऐसी ही है। उपन्यास के बारे में धारणा है कि यह मानवीय अभिव्यक्ति की उतनी शाश्वत विधा नहीं है, जितनी कविता, नत्य या महज एक चुटकुला।

उपन्यास में प्यार का तत्त्व

अठारहवीं सदी में सेमुअल जॉनसन ने 'नावेल' शब्द की परिभाषा की थी कि उपन्यास एक छोटी कथा होती है, जो प्रायः प्रेम-संबंधी होती है। जॉनसन के दिमाग में शायद चौदहवीं से सत्रहवीं सदी के बीच इटली में लिखे जा रहे उपन्यासों की बात थी। इस काल में सबसे लोकप्रिय उपन्यासकार बोकाशियो हुए। उनकी रचनाओं से शेक्सपीयर ने बहुत-सी कथाएं लीं। इंगलैंड में उपन्यास-विधा काफी फली-फूली। रिचर्डसन ने इसमें ऐसे तत्त्व जोड़े कि यह स्तरीय साहित्यिक रचना कही जा सके। डेफो ने इसे पत्रकारिता के सांचे में ढाला। डिकेंस तक आते-आते उपन्यास के पैर जम गये।

उन्नीसवीं सदी में उपन्यास की

लंबाई और आकार-प्रकार इस हद तक बढ़े कि टेनीसन ने उपन्यास को कभी खत्म न होनेवाली कथा मान लिया। लेकिन एक बात सभी उपन्यासों में एक-जैसी रही। आरंभ से लेकर आधुनिक काल की शास्त्रीय रचनाओं तक प्यार एक व्यापक और कुछ हद तक पीड़न का कारण बना रहा। फ्रांस में तो यह तक कहा गया कि छिछोरापन या व्यभिचार के बिना उपन्यास की रचना संभव नहीं। यह कथन भले ही फ्रांसीसी उपन्यासों पर लागू होता हो, पर इतना तो मानना पड़गा कि रूमानियत के बिना उपन्यास-रचना संभव नहीं।

मेरा खयाल है कि प्यार की मौजूदगी उपन्यास की एक शैली है, एक विशेषता। जीवन में प्यार के अलावा भी कई बातें होती हैं। फिर भी एक साहित्य-सेवी और पाठक के नाते मैंने महसूस किया है कि 'प्यार' के सिवा दूसरी भावनाएं उपन्यास में रोचक और सुपाठ्य रूप में रख पाना मुश्किल है। रोग और पीड़ा से हर व्यक्ति का वास्ता पड़ता है, लेकिन इनके विवरण से पाठक थोड़ी देर में ही ऊब जाता है।

इसी तरह उपन्यास में धन की बात तभी रोचक हो पाती है जब वह नायक या नायिका के साहचर्य का साधन बनता है। वास्तविक जीवन में हम धनी और प्रभावशाली मनुष्य को निर्धन और असहाय लोगों से कहीं अधिक रोचक पाते हैं, किंतु उपन्यास में ऐसा हमेशा नहीं होता।

धंधा चलाने का सिक्का

यह निष्कर्ष भी कोई बड़ी बात नहीं कि उपन्यास भावनाएं गुदगुदानेवाला होता है, उसमें रस होता है। मेरी नजर में उपन्यास ऐसा सिक्का है, जिसके जरिये हम साहित्य के बाजार में अपना धंधा

चलाते रहते हैं

'न्यू टेस्टामेंट', 'बीओवुल्फ' या 'प्रा-मेथियस बाउंड' या होमर के 'ओडेसी' में यह सिक्का कानूनी चलन नहीं है। दांते के 'द डिवाइन कॉमेडी' में जरूर यह चल पड़ा। मध्ययुग की समाप्ति और पूंजी-वाद के अंभ्युदय के साथ इटली में यह सिक्का विकसित हुआ। और जब मनुष्य की हर बात मुद्रा से मापी जाने लगी, मनुष्य उत्पादन का एक पुरजा बनकर रह गया तो भावनाएं समाज से बहिष्कृत होकर साहित्य में शरण लेने लगीं।

यह साधारणीकरण एक उपन्यास-कार के लिए कटु हो सकता है, किंतु है सत्य। उपन्यास व्यक्तिगत श्रम का प्रतिफल है। उसके लिए बाजार बनाना पड़ता है। खासकर ऐसी स्थिति में जब राज्य या समाज व्यक्तिगत जीवन के भावनात्मक संसार से दूर होने लगते हैं। ऐसे समय उपन्यासकार ही मानवीय भावनाओं को अपनी कृति में मान्यता देता है और उसे सिक्के-जैसा समाज में चला देता है।

प्यार तलाशते पाठक

उपन्यासकार के लिए सभी अदृश्य और नष्ट होने लायक संवेदनाओं के बीच कामुक प्यार एक प्रतीक बन जाता है। उपन्यास के पाठकों में चाहे गृहिणी हो, छात्र हो या दिन भर काम करके लौटा बाबू, सबके सब ऐसे उपन्यासों को पढ़ते हुए अपने कामुक प्यार की भावना छिपाये रखने के षड्यंत्र में शामिल होते हैं। हेनरी ग्रीन के दो महान उपन्यासों 'लीविंग' और 'लविंग' में पाठक इसी कामुक प्यार की तलाश करते हैं।

इसका यह अर्थ नहीं कि मैं सड़क-छाप उपन्यासों भर की बात कर रहा हूं। मारसेल प्रोस्ट के 'रिमेमब्रेंस ऑव थिंग्स' से लेकर व्लादिमीर नोवोकोव के 'लोलिता' तक यह षड्यंत्र मौजूद है। जेम्स जॉयस की महान कृति 'यूलिसिस' भी एक प्रेम-गाथा ही है। नायक लियो-पोल्ड और नायिका मोली ब्लूम आंतरिक संवेदनाओं के प्रति सत्यनिष्ठ हैं। तीसरा पात्र स्टीफन डेडालस इसलिए कठोर है क्योंकि उसने प्यार का स्वाद नहीं चखा। वस्तुतः प्यार न होना मृत्यु के समान है। वह व्यक्ति मृत-प्राय है जो प्यार नहीं करता है या जिन्हें कोई प्यार नहीं करता।

डिब्बाबंद सेक्स

यह तो हुआ उपन्यास का अतीत। अब यह भविष्य की बात पर विचार किया जाए तो मेरी धारणा है कि पूंजीवाद ने सेक्स को जादू के डब्बे में बंद कर रखा है, पर लगातार आघातों से यह डब्बा अब टूटने की सीमा पर है। उन्नीसवीं सदी के उपन्यासों और बीसवीं सदी की फिल्मों में बेवफाई का नतीजा मौत दिखाया जाता रहा, फिर भी फ्लाबर्ट का 'मदाम बॉवरी' पढ़ते समय लगता है कि नायिका जिस हालत में जहर खा रही है, उससे बचा जा सकता है।

फ्रॉयड ने सेक्स को बौद्धिक स्वतंत्रता प्रदान की और गर्भ-निरोध के आविष्कार ने सेक्स की सजा का कष्ट कम कर दिया है, पर उपन्यास से वर्जनाएं और कठिनाइयां निकाल दी जाएं तो वह शिथिल और सपाट रह जाएगा। इस दृष्टि से हेनरी मिलर के उपन्यास व्यक्तिगत क्रिया-कलापों को ही लच्छेदार भाषणों से एक सूत्र में बांध-कर लिखे गये लगते हैं और ताल्सताय की किसी कृति की अपेक्षा 'अरेबियन नाइट्स' के निकट हैं।

डॉ. जॉनसन की परिभाषा मान लें कि उपन्यास एक प्रकार की कहानी है तो कहानी भी मानवीय प्रवृत्ति से उतनी ही जुड़ी है जितना कि गीत या संगीत। कल्पना पर आधारित कथाओं की किताबें भविष्य में भी छपती रहेंगी और हम उन्हें उपन्यास मानते रहेंगे।

संभावना भरा भविष्य

इन रचनाओं का भविष्य में क्या रूप होगा? किसी एक दिशा की बात युक्ति-संगत नहीं क्योंकि कुछ लोग मिलर की शैली अपनाएंगे, कुछ व्यक्तिगत भोगवाद की चर्चा करेंगे और कुछ कामोत्तेजक लेखन में खोये रहेंगे, पर भय है कि लेखन सेक्स से हटा तो हिंसा पर जोर देगा। प्रतिबंध की जरूरत कामोत्तेजक बातों पर उतनी नहीं होगी जितनी हिंसा और उत्पीड़न पर। हर्बर्ट सेलबी के 'लास्ट एग्जिट् टू ब्रुकलिन' और जर्जी कॉसिस्की के 'द पेंटेड बर्ड' में जो क्रूरता चित्रित है वह इस बात का

संकेत है। अप्रिय घटनाएं वास्तविक जीवन में भी होती हैं, पर लेखक का उत्तर-दायित्व है कि वे जीवन की उलझनों के प्रति सजीव और सटीक रुख अपनायें।

कुछ लेखक कामुकता को नाटकीय रूप देने के बदले परंपरा से चली आ रही रूमानियत का सहारा लेंगे। ब्लादिमीर नोवोकोव के उपन्यासों में रूमानी त्रिकोण को ऐसी गहराई दी गयी है कि पाठक उनके उपन्यास खरीदने को बाध्य हो जाता है।

भविष्य में उपन्यास एक तो दर्शन के रूप में विकसित होगा और दूसरे ऐंद्रिक विषय के रूप में। छपाई के नये तरीकों और आकर्षक साज-सज्जा का चमत्कार भी उपन्यास की लोकप्रियता बढ़ाता रहेगा।

कैसे-कैसे रंग खिलाये

कैसे-कैसे रंग खिलाये सारे सोये घाव जगाये
अमृत के धोखे में तुमने मुझको कितने जहर पिलाये
अब तो छलना ही छलती है श्वासों में ज्वाला पलती है
पुण्यों के बदले में तुमने मुझको कितने पाप सिखाये
अंतर्मुखी चेतना मेरी अब दुनियादारी में बदली
जीवित रहने भर की खातिर मैंने कितने स्वांग रचाये

बूंद-बूंद जीवन क्षरता है प्राणों में रोदन भरता है
अपने को पाने के भ्रम में मैंने सारे भरम गंवाये
मेरी बदनामी यों फैली जंगल में जैसे दावानल
तुमने अपना फर्ज निभाने को जी भर इलजाम लगाये

——ओमप्रकाश निर्मल
"कल्पना", सुलतान बाजार,
हैदराबाद (आं. प्र.)

उपन्यासों में कार्टून-कला के इस्तेमाल की संभावनाएं भी कम नहीं हैं।

ये धारणाएं निराधार लगें तो कथा-वाचन एक खेल मात्र माना जा सकता है, गुड्डे-गुड़ियों की कहानी-जैसा। जब मैं पढ़ता था, तब एक अमरीकी लेखक जॉन हॉक्स ने 'रचनात्मक लेखन' पर बोलते हुए कहा था, "जब मैं चाहता हूं कि मेरी कथा का पात्र उड़े तो बस इतना ही कहता हूं कि—वह उड़ गया।"

मेरे मन में जिस प्रकार के उपन्यास की कल्पना है, वह एक दार्शनिक क्रांति का माध्यम बन सकता है। हो सकता है कि कोई नया रूसो, नया मार्क्स या नया कीर्केगार्द उपन्यास के माध्यम से सामने आये और क्रांति का वाहक बने। भविष्य का उपन्यास भावनाएं उभारते तक सीमित न रहकर शायद उज्ज्वल ज्योति विकीर्ण करने पर जोर देगा। तब उपन्यास पुस्तकों की दूकानों की शोभा बढ़ाते रहने के बजाय जन-जन तक पहुंचेगा। ●

हंसिकाएं

मुकदमा तलाक का चल रहा था। पत्नी ने आरोप लगाया कि पति ने चाकू से उसके चेहरे पर वार किया था। जज को उसके चेहरे पर घाव का कोई निशान ही नजर नहीं आया। उसने महिला से पूछा, "यह कितने दिन पहले की बात है?" महिला ने कहा, "यही कोई पांच दिन पहले की।"

जज : लेकिन तुम्हारे चेहरे पर कोई निशान तो है नहीं।

महिला : निशान का प्रश्न ही कहां पैदा होता है? मेरे पास गवाह जो मौजद है।

★

वकील ने एक गवाह से जिरह में पूछा, "हां, तो यह बताओ कि उस घर की सीढ़ियां कहां जाती हैं?"

गवाह की कुछ समझ में न आया और वह सिर खुजलाने लगा।

वकील ने वही प्रश्न दोहराया।

गवाह अब कुछ सचेत हो बोला, "अगर मैं ऊपर खड़ा होऊं तो सीढ़ियां नीचे की ओर जाती हैं और नीचे खड़ा होऊं तो सीढ़ियां ऊपर जाती हैं।"

★

एक तारबाबू की स्त्री बहुत झगड़ालू थी। एक दिन वह काफी देर तक बक-बक करती रही, लेकिन तारबाबू चुपचाप बैठ सुनते रहे। तब पत्नी झुंझलाकर बोली, "आखिर, तुम मेरी बात पर ध्यान क्यों नहीं देते? चुपचाप क्यों बैठे हो?"

"मैं सोच रहा था कि इतनी देर में जितने शब्द तुम्हारे मुंह से निकले हैं, यदि वे कहीं तार से भेजे जाएं तो उन पर सौ रुपये १० पैसे का खर्च हो," तारबाबू चौंककर बोले।

★

एक पत्रकार किसी धनी व्यक्ति से मिला और पूछा, "श्रीमानजी, मैंने सुना है कि पहले आप बहुत साधारण आदमी थे। क्या मैं यह जान सकता हूं कि किस गुण-विशेष के कारण आपने इतना धन कमाया?"

"अरे भई, मेरी कहानी बड़ी लंबी है, उसे सुनाने में कम से कम दो घंटे लगेंगे। तो आओ, हम कमरे की बत्ती बुझाकर बातचीत करें, नहीं तो इतनी देर बिजली बेकार खर्च होगी," धनी बोला।

ज्यों ही वह बत्ती बुझाने के लिए उठा, पत्रकार ने कहा, "बस, बस, अब कहानी सुनाने की कोई आवश्यकता नहीं है, मैं सब समझ गया।"

★

पागलखाने में एक नया पागल भर्ती

हंसिकाएं : काव्य में

दूरदर्शन

संबंध-विच्छेद
'रुकावट के लिए खेद'
नयी शादी के लिए दौड़-भाग
पेश है फिल्म का शेष भाग !

कनेक्शन

'बिजली के बिल-पेमेंट की
जब बात आयी
तुनककर बोले वह,
'बिजली का बिल कैसा ?
बिजली तो मेरी पत्नी ने गिरायी'

संकेत

सोलह सिंगार करके
सुसज्जित थाल लाकर
उसने प्रिय से इतनी-सी बात कही--
'छत्तीसों पदार्थ हैं
आपके भोग के लिए ही'

सीटी

'दिल्ली की नयी बस-सेवा पर
टिप्पणी करते हुए
एक यात्री ने कहा--
'महिला-कंडक्टर ने
सीटी बजायी
भौचक्का ड्राइवर देखने लगा'

--डॉ. सरोजनी प्रीतम

किया गया। लेकिन जहां अन्य सब रोते-चिल्लाते रहते थे, वह खूब हंसा करता था।

एक दिन डॉक्टर ने उससे इसका कारण पूछा।

"डॉक्टर साहब, यह सब मेरे जुड़वां भाई के कारण है।"

"क्या मतलब ?" डॉक्टर ने पूछा।

"हम दोनों बिलकुल एक-जैसे दीखते थे और हमें कोई भी ठीक नहीं पहचान सकता था। कक्षा में शैतानी वह करता था, पिटाई मेरी हो जाती थी। दंगा-फसाद वह करता था, जेल मुझे हो जाती थी। प्रेमिका मेरी थी, लेकिन शादी उसने कर ली।"

"तब तो सचमुच तुम्हारे साथ बहुत ही अनर्थ हुआ।"

"पर डॉक्टर साहब, अंत में मैंने भी बदला ले लिया, दरअसल मर मैं गया था, पर दफना दिया गया वह !" और वह फिर जोर से हंस पड़ा।

★

एक व्यक्ति कब्रिस्तान में घूमने गया। वहां उसने एक कब्र देखी, जिस पर पत्थर लगा था, "यहां दफन है एक वकील--एक ईमानदार आदमी।"

"कितने ताज्जुब की बात है कि एक कब्र में दो-दो आदमी दफनाये गये हैं !" वह चौंककर बोला।

--राजीवलोचन केजरीवाल

स्वप्न देखा

मैंने एक स्वप्न देखा
नीचे समुद्र था---
ऊपर आकाश
बीच में पेड़
धरती, लोग
घर, नगर...

वहां से एक लहर उठी
भरपूर
सागर के वक्ष को चीरकर
उमड़ती
तट को फलांगती
रेत के लंबे विस्तार पर
नृत्य करती

आखिर वह पहुंची
अपनी नियति के पास
—जो शिला थी

मिलन वह कितना मनोरम
इधर ज्वार
उधर पत्थर की ऊंची दीवार
छपाक् छपाक्
हरहराती वह टक्कर
कैसी निर्मम !

बार-बार
उफनाती लहर
खाती पछाड़
हठ करती-सी—
'अबके लूंगी—शिला को उखाड़
संग दोनों ही बहेंगे
घुलते . . . मिलते'

'मेरा-तुम्हारा क्या मेल ?'
ठंडी शिला बोली—
'जाओ, लौट जाओ !
मैं पत्थर, तुम लहर !'

'आओ, लौट आओ !'
पीछे मर्यादित सागर की गूंजती पुकार
'शांत ! शांत ! मेरे ज्वार !'

मैंने स्वप्न देखा
बिखरे थे रेत पर
सीपी और शंख
फेनपुष्प, कुछ सेवार...
यहां
गीली शिला सचमुच
कुछ तरल बन गयी थी
वहां
लहर पर पथरीली पर्त-सी
जमी थी

दूर जाते-जाते दोनों
मानो पास आ गये थे
अलग होते-होते जैसे
दोनों एक हो गये थे
...स्वप्न देखा

—अजित कुमार
(जी-६, माडल टाउन, दिल्ली-११०००९)

शीत में ठिठुरता लद्दाख

नजर एक चित्रकार की

● रामनाथ पसरीचा

लद्दाखी सौंदर्य

भारत के उत्तर-सीमांत पर लद्दाख देश का सबसे बड़ा जिला है, बर्फ से ढके पहाड़ों के बीच दूर-दूर तक फैला चौदह हजार फुट ऊंचा मरुस्थल। धूल की आंधियों से भरा दिन गरम होता है और रात इतनी ठंडी कि नदी-नाले जम जाते हैं।

विरल आबादी में ज्यादातर बौद्ध हैं। उनके धर्म-गुरु लामा मरते हैं तो अस्थियां चुर्तनों में रख दी जाती हैं। शतरंज के मोहरों-जैसे चुर्तन का वास्तु-

एक लद्दाखी पुरुष आकृति
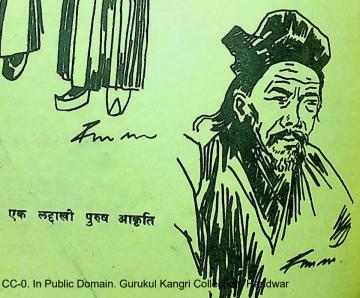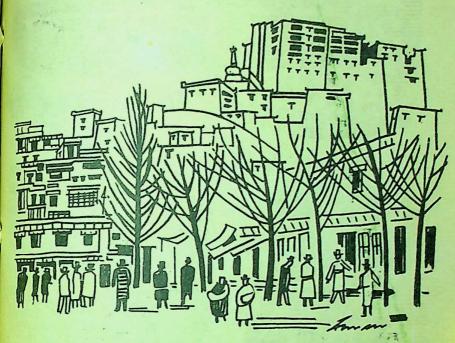
लेह का बाजार : पीछे पहाड़ी पर लेह का किला

शिल्प ब्रह्मांड का प्रतीक है। मरुस्थल के विस्तार में चुर्तन ऐसे लगते हैं कि जैसे आकाश पर तारे जड़े हों।

हंसमुख लद्दाखी चोटियां जरूर बांधते हैं। इस मामले में पुरुष भी महिलाओं से पीछे नहीं। अपने रंग-बिरंगे परिधान में कीमती फीरोजा पत्थर-जड़ा चमड़े का सिरबंद बांधे लद्दाख की महिला परी-जैसी लगती है।

लद्दाख के सैकड़ों साल पुराने गोम्पो (बौद्धमंदिर) वास्तु-कला के आकर्षक नमूने हैं। इनमें बुद्ध की मूर्तियां, चित्र और पुराने तिब्बती ग्रंथ हैं। लद्दाख के जेवर, बर्तन और मुखौटों की कला देखते ही बनती है। मध्य-एशिया जानेवाले प्राचीन

मणि पत्थर पर खुदा लद्दाखी बौद्धों का मूलमंत्र ऊं मणी पद्म हूं
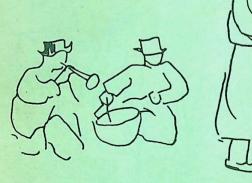
जीवन के स्पंदन से भरे लद्दाखी नृत्य

व्यापारिक रास्ते पर स्थित लेह प्रमुख नगर और लद्दाख की पुरानी राजधानी है। आजकल दो दिन में बस श्रीनगर से लेह पहुंचा देती है। पंद्रह-बीस साल पहले पैदल रास्ता ही था, बीस-पचीस दिन का। लद्दाख पहुंचने में पैर भर आते और तलवों में छाले पड़ जाते थे। ●

एक चुर्त्तन

लेह की एक गली

मधुकरी

• ह. मो. मराठे
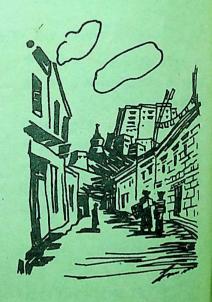
आगाशे गुरुजी के घर से मैं बाहर आया––खाली झोली लिये । झोली बायें हाथ में थी । किसी जमाने में खरीदी अलमूनियम की एक छोटी थाली मात्र थी उसमें । हो सकता है थाली के भी आंखें निकल आयी हों, जिनसे देखने का प्रयास वह यदा-कदा करती होगी । झोली अब दो साल पुरानी हो चुकी है । गांव से यहां आया था तभी पिताजी का एक पुराना अंगोछा और यह झोली मां ने मुझे थमायी थी । हर दो दिन बाद मैं इसे पानी में खंगाल लेता हूं, पर साबुन के बिना वह साफ होती ही नहीं । ऊपर उसमें एक छेद भी हो गया है । पास से यदि कौआ उड़ता हो तो इस छेद में से भीतर की रोटी वह आराम से देख सकता है; पर मैं हूं कि उस ओर ध्यान ही नहीं देता, क्योंकि दायें हाथ का पात्र ही मानो रुलाता है मुझे । मां ने बताया था कि वह पाव सेर का ही है, पर इतनी देर तक प्रतिदिन पकड़े रहने में उंगलियां आनाकानी करती हैं । फिर भी किसी तरह चला लेता हूं । एक हाथ में झोली, दूसरे में पात्र लेकर भरी दोपहरी में भाग-दौड़ करते हुए

पसीना पोछते भी नहीं बनता। हाथ ही खाली नहीं रहता, फिर पसीना पोछे हाथ से ही पात्र पकड़कर छाछ पीने का मन नहीं करता।

मैं एक मामूली बालक—मांगकर खानेवाला। उम्र होगी बारह-तेरह के आसपास। कमर पर लंगोटी, एक हाथ में झोली, दूसरे में पात्र, गले में यज्ञोपवीत, जो तीन-चार वर्ष पूर्व पंडितजी ने लटकाया था। उस समय बायें हाथ में पात्र के स्थान पर पीली चिंदी लपेटा हुआ पलाश-दंड था। बस, हमारे धर्म में ऐसा ही बताया गया है।

सोचता था, आगाशे गुरुजी के यहां तो कम-से-कम पाव-रोटी मिलेगी, पर वहां भी निराशा ही हुई। आज का दिन ही मनहूस था। सबसे पहले होटलवाले परांजपे के घर गया, पर वहां भी ताला लगा था। उनकी पत्नी बाल-बच्चों सहित आज ही मैके गयी हैं, उनका मंझला बेटा बिना भूले मुझे छेड़ता है। होगा कोई सात साल का। वह अच्छे कपड़े का नेकर पहनता है। मेरे शरीर पर सिर्फ लंगोटी होती है। झोली फैलाकर बैठा करता हूं मैं वहां। एक बार ऐसे ही मैं बैठा था। किवाड़ की आड़ में रसोइयन लेटी हुई थी। मेरे कारण उसे उठना पड़ा तो वह अंट-शंट कहने लगी। इतने में वह मंझला लड़का वहीं आ धमका। मेरी खुली हुई झोली और थाली देखकर उसने उसमें थूक दिया।

मेरे तन-वदन में आग लग गयी। तभी "माठी मिला, टेम पर क्यूं नई आताय रे मुं जले ?" बोलती हुई रसोइयन आ गयी। उसने बच्चे को थूकते हुए देखा था, इसलिए लगा कि वह उसके मुंह पर एक तमाचा जड़ देगी, पर उसने मात्र इतना कहा, "बालासाव ऐसा नई करना जी !" उसके सामने जीभ निकालकर बालासाव वहां से चलते बने। मैंने थाली पोछकर रसोइयन का दिया खाना उसमें लिया, साथ में चार गालियां भी। बुरा लगा, पर पी गया सब। दो कौर खाकर जिंदा जो रहना था! लगभग हर रोज वहां मधुकरी मिलती है। बासी ही सही, पर आधी रोटी मिलती तो है। 'सम्मान से जिओ' आगाशे गुरुजी स्कूल में कहा करते हैं, पर अपमान यदि न सहें तो क्या भूखे रहें? हर घर में तो अपमान होता है।

होटलवाले परांजपे के यहां से आज खाली हाथ लौट आया। दूसरा घर जोशीजी का है। वे कालेज में पढ़ाते हैं—पैसे का शास्त्र। उनके घर में एक प्लेट में भात-साग रखा रहता है। किवाड़ खोलकर उसे ले लेना और चलते बनना—प्रतिदिन का यही सिलसिला है। पर आज वहां जाकर देखता हूं तो बिल्ली प्लेट साफ कर रही है। अब क्या किया जाए? बिल्ली का जूठा भी कहीं खाया जाता है? पर अन्न को फेका भी तो नहीं जाता। इस अन्न के लिए ही तो कड़ी धूप में पसीने से लथपथ हो जाता हूं। न लूं तो कहेंगे, "हराम-

जादा! आज आया नहीं और खाना खराब हुआ।" इसी उधेड़बुन में था कि जोशीजी ने देख लिया। पूछा, "क्यों खड़ा है रे जब से? आज मधुकरी नहीं रखी है क्या ?" मैं सकपकाया। वे बड़े मास्साब, मैं भला उनसे बात कर सकता हूं! पर दिल थाम-कर आखिर कह ही बैठा, "बिल्ली ने उसे जूठा किया है।" इस पर वे अंगरेजी में कुछ बड़बड़ाये। फिर कहा, "तो आज मत ले उसे। और जगह मिली ही होगी न ?"

मैं भी तपाक से बोला, "मिल गयी है।"

तीसरा घर है आगाशे गुरुजी का। उनके घर से खाली हाथ कभी नहीं लौटा। रूखी-सूखी भले ही रहे, पर उसमें स्नेह छिपा रहता है। बड़े प्रेम से भाभीजी मेरी थाली में वह रख देती हैं। तीज-त्योहार पर वह मीठा-वीठा मेरे लिए निकालकर अलग से रख देती हैं। किंतु, वहां भी आज...

गुरुजी ने कहा, "भाई आज तुम्हारे लिए कुछ भी नहीं बचा।"

झोली-पात्र जमीन पर रखकर बैठ गया वहीं, मानो अपना ही घर हो। गुरुजी की गृहस्थी यानी एक कमरा मात्र—रसोई, खाना-पीना, उठना-बैठना, सब कुछ वहीं। आज जूठे बरतन वैसे ही पड़े थे। उनमें थालियां ही पांच-सात थीं। भाभी मेरे लिए मां समान हैं। मैंने पूछा, "भाभीजी, आज कुछ भी नहीं बचा ?"

"अरे, अभी तनख्वाह नहीं मिली, कल शायद मिलेगी। उधार तो हम लेने से रहे। पाव भर चावल थे। उसी में पानी ज्यादा डालकर पकाया और खाया। यह भला तुझे कैसे देती? आखिर तू भी इंसान है!"

मुझसे आगे सुना नहीं गया। लोटा भर पानी पीकर जाने लगा तो गुरुजी ने हाथ थामकर एक चवन्नी मुझे पकड़ायी और कहा, "लो, जो मर्जी हो खा लेना।"

महीने भर से मैं देख रहा था। गुरुजी की धोती घुटने पर फटी हुई थी। मुझसे चवन्नी लेते नहीं बना।

वहां से भी हाथ हिलाते बाहर आया। मेरा जनम ही ऐसा हुआ है! निरा कंगाल —इस झोली-सा ही फटीचर!

पिताजी गरीब पुरोहित, जैसे-तैसे पेट-पूजा करनेवाले। परिवार में इने-गिने चार लोग। घर में नाममात्र का सामान। घर भी क्या, किसी तरह खड़ी चार-दीवारी! इसी में हमारा वात्सल्य था। घर में प्रतिवर्ष गणेशोत्सव पर सिर्फ एक बार चावल की खीर पका करती थी, बस! उसके सिवा यदि कभी मीठा-वीठा खाने को मिलता तो पड़ोसियों का दिया हुआ ही। गुड़ के ढेले पर टूटती मक्खियों-से हम उस व्यंजन पर टूट पड़ते—पिताजी भी।

बताते हैं, मेरा एक बड़ा भाई था। मुझे भी धुंधली-सी याद है। छह-सात साल हुए, घर की ऐसी स्थिति से ऊबकर बंबई चला गया। जाने से पहले उसने मां के पैर छुए थे, मुझे खूब याद है। पता नहीं अब कहां है, कैसा है! लगभग पंद्रह मील है यहां से मेरा गांव। चौथी कक्षा तक वहीं स्कूल में जाता रहा मैं। अब तीज-त्योहारों पर जब कभी गांव जाता हूं, मां से जरूर पूछता हूं, "मां, भैया की कोई चिट्ठी आयी?"

आंखें पोछती हुई मां बताती है, "पता नहीं, कहां है तेरा भैया! जहां भी रहे, सुखी रहे।"

पिताजी को गुजरे चार साल हो गये। "वे भगवान के पास चले गये, बेटा। वहां से तुझे देखते रहते हैं," मां मुझसे कहती है, पर आसमान में मुझे कभी भगवान का घर दिखायी नहीं दिया। मां से पूछता तो कहती, "बच्चों को नहीं दीखता, जब बड़े होगे तब दीखेगा।"

चौथी परीक्षा पहली श्रेणी में पास की तो पड़ोस के गप्पू बाबा मुझे यहां लिवा लाये, बड़ा बनने के लिए। चार घरों की मधुकरी (होनहार, गरीब छात्रों को दिया जानेवाला भोजन) और रहने के लिए गणेश-मंदिर की व्यवस्था उन्होंने कर दी। वहीं पर एक छोटा-सा कमरा है। सुबह उठते ही डुबकी लगा लेता हूं। फिर अथर्वशीर्ष कहते-कहते जैसे-तैसे भगवान को नहलाकर सीधे स्कूल का रास्ता पकड़ता हूं। मेरी कक्षा को आगाशे गुरुजी ही पढ़ाते हैं। उनका पढ़ाया मात्र ही दिमाग में रह जाता है, शेष सब कान से बाहर निकल जाता है।

आगाशे गुरुजी के घर से बाहर आया तो व्यर्थ की यादों ने हठात मुझे घेर लिया। बारह-तेरह साल की उम्र भी कोई उम्र है! कुछ ज्यादा समझता नहीं हूं, पर गरीबी से ऊब चुका हूं। मुझे जनम देने से पहले ही भगवान ने मेरे लिए प्रतिदिन आधे सेर अनाज की व्यवस्था कर दी है—लोग कहते हैं, पर इसी पाव-आध सेर के लिए इतनी भागदौड़ करनी पड़ती है। हाथ में झोली लेकर भोजन मांगना पड़ता है।

वहां से और दो-चार घर हो लिया। खाने को कुछ मिल ही गया। एक जगह बासी आधी रोटी और दूसरे घर से दो कलछी छाछ और थोड़ा-सा भात मिला। बस मेरे लिए सुरक्षित आधे सेर में से आज

इतना ही नसीब हुआ। भूख से कुलबुलाते पेट के लिए कुछ तो मिला' पर शाम के लिए प्रश्न ज्यों-का-त्यों है। लोग कहते हैं– पेट भर कर नहीं खाना चाहिए, कुछ कम खाना स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद है। पर यह सीख उनके लिए है जिन्हें 'कम' शब्द ज्ञात ही नहीं। मेरे लिए उसका कोई मतलब नहीं।

बस, अब यह आखिरी मकान है। यहां से गणेश-मंदिर दो-एक फर्लांग होगा। वहां पहुंचकर ही मिला-मिलाया खाने का विचार था। फिर थोड़ा-सा पानी बस। खाने का विचार आते ही भूख की आग और भी तीव्र हो गयी, पर तभी कान में शब्द पड़े—"चल . . . निकल जा यहां से छिनाल कहीं की!" परांजपे के यहां इतने ऊंचे स्वर में शायद ही बोला जाता हो। मैंने मुड़कर देखा, एक वृद्धा थी। कहते हैं पार्वती ने अपने शरीर के मैल से गणपति को बनाया था—उस की यथार्थता अब जान पड़ती थी। उसकी गोद में एक रोता हुआ बच्चा था। बूढ़ी कह रही थी, "बाबा-मां, बच्चा बहुत भूखा है...कुछ बासी-बूसी हो तो दे दो, बच्चे को।" उनका काला कुत्ता ऐसे भूंक रहा था जैसे शहर भर में आग लग गयी हो। गनीमत थी कि वह बंधा हुआ था। बुढ़िया डरी-डरी-सी बच्चे को गोद में दुबकाये हाथ पसार रही थी। परांजपे का नौकर मारे गुस्से के लाल हो गया। वह नौकर भले ही हो, पर है तो बड़े घर का! बाजार जाते समय प्रेस किये हुए कपड़े पहना करता है। टेबिल साफ करते हुए भी रेडियो सुनने की उसकी आदत है। बुढ़िया के भीख मांगने से उसकी भौंहें तन गयीं। 'स्साली...' कहते हुए वह उसकी ओर लपका। बुढ़िया बच्चे को संभालती हुए जैसे-तैसे फाटक के बाहर आयी। मेरे पास थोड़ा-सा ही सही, पर अन्न था। मैं वहां से जो भागा तो मंदिर पहुंचकर ही सांस ली। अपने कमरे के किवाड़ खोलकर कोने में झोली-पात्र रख दिया। लोटे में पानी भर लिया। झोली में से थाली निकालकर रखी और पद्मासन लगाकर बैठ गया। घड़ी ने बारह बजाये। उस आवाज के साथ ही फट से याद आया कि शाम को गुरुजी इतिहास के प्रश्न पूछने

वाले हैं। भारतीय गुप्त-साम्राज्य का स्वर्ण-युग याद करना था। उत्तर याद न करने पर आगाशे गरुजी चमड़ी उधेड़ देते हैं। वासू इतिहास की पुस्तक पढ़ने के लिए देने वाला था। कुरता पहनकर भागते-भागते वासू के घर पहुंचा। पुस्तक लेकर दौड़ते-दौड़ते लौटा। थाली पर बैठकर बिना खाये ही उठ गया था, भूख की आग तड़पा रही थी। जब दो कौर निगलकर, लोटा भर पानी पीने के बाद डकार आयेगी तब आध-पौन घंटा तबीयत से पढ़ाई करने का इरादा था। कमरे में आकर किताब रख दी। लोटे में पानी लेकर पैर धोने बाहर आ गया।

वही बुढ़िया वहां मौजूद थी—दुम दबाकर परांजपे के घर से भागी हुई। गोद में वही काला-कलूटा, कुनमुनाता बच्चा। बुढ़िया बोली, "बेटे, खाना खाराय क्या? अर्दी रोटी देने कू बोल जा तेरे अम्मा कू मेरा बच्चा कल से भुक्का च हय।"

बड़ा गुस्सा आया। इस बुढ़िया को भी यही समय था यहां आने का! मेरे पेट में चूहे दौड़ रहे थे। मैंने फटाक से किवाड़ बंदकर मुंह-हाथ पोछे और बैठ गया— 'सत्यंत्वर्तेन परिषिंचामि' और पानी फेर लिया। बुढ़िया एक बार फिर चिल्लायी, "बेटे थोड़ा सा दे दो रे ऽ ऽ" बच्चे का रोना जारी था। बुढ़िया ने बच्चे की पीठ पर एक मुक्का मारा, "मय बी तो भुक्कीच हूं, मिल्या तो देतींव नई तो कां से देवूं तेरे को?"

फिर एक कराहती हुई चीत्कार सुनायी दी। मैं पुनः खाने पर से उठ गया। ज्यों-की-त्यों थाली उठाकर बाहर आया और बुढ़िया की झोली में थाली खाली कर दी। उसकी आंखों में आनंदाश्रु छलछला आये। उसने तुरंत दो-चार कौर अपने मुंह में डाले। बच्चे को भी खिलाया, फिर पानी पीकर चलती बनी। जाते हुए उसने मुड़कर मुझे देखा, जैसे भगवान की मूरत को ही ताक रही हो। फिर एक बार लोटा भर पानी पीकर डकार ली, मानो पेट भर गया। अब इतिहास की पुस्तक में आंखें गड़ायीं।

कक्षा का अंतिम घंटा चल रहा था। सामान्य विज्ञान का घंटा। मनुष्य के पाचन-संस्थान की जानकारी दी जा रही थी। हम खाना क्यों खाते हैं? भूख लगती है इसलिए—बालकों ने सीधा-सा उत्तर दिया, किंतु विज्ञान की पुस्तक में शक्ति, उष्णता आदि उसके कुछ कारण बताये गये थे।

"आज क्या-क्या खाकर आये हो?" गुरुजी ने प्रश्न किया। वासू गाडगिल ने आमलेट खाया था, गोडसे ने कुछ और तो तीसरे ने कुछ और। मेरी बारी आयी तो मैं खड़ा हुआ। कहा, "मैंने पूड़ियां खायी हैं—असली घी में तली हुई। साथ में आलू का रसेदार साग भी।"

टन-टन-टन—घंटी बजी। छुट्टी हो गयी और मैं मंदिर की ओर दौड़ पड़ा, बिना इधर-उधर देखे।

—अनु. प्रकाश भातम्ब्रेकर

महफिल

बख्शो विद्वानो ! बख्शो

इतिहास की किताबों ने पढ़ाया कि आगरा में ताजमहल की नींव मुगल शहंशाह शाहजहां ने रखवायी और उसकी आखिरी ईंट की चुनाई शहंशाह शाहजहां ने ही पूरी करायी। फिर एक दिन अचानक कुछ पत्र-पत्रिकाओं के लेखों से पता चला कि ताजमहल की रचना मलिका मुमताजमहल की याद में नहीं, किसी हिंदू रानी की यादगार में हुई और उसका निर्माण किसी हिंदू राजा ने कराया था। पिछले दिनों अपनराम ने एक पढ़े-लिखे आदमी से सवाल कर दिया, "भाई, आप बताइए कि इन दो बातों में किसे सच मानते हैं ?" उसने तड़ाक से उत्तर ठोका, "यह सब बकवास है, देश का बच्चा-बच्चा जानता है कि शाहजहां ने ताजमहल बनवाया।"

फिर कुछ दिन बाद एक और सांस्कृतिक धड़ाका हुआ, जिससे यह विवाद उठ खड़ा हुआ कि रामायण का रचना-काल या महाभारत की लड़ाई का असली समय वही नहीं है जो अब तक बताया जाता रहा है। जब विवाद ठंडा होने को आया तब फिर अपनराम ने एक पढ़े-लिखे सज्जन से पूछ लिया और पाया कि इस विवाद से भी कहीं कोई फर्क नहीं पड़ा—न रामायण के रचना-काल की मान्यता पर और न महाभारत के युद्धस्थल पर।

अभी एक नया शीर्षक अखबार में पढ़ने को मिला कि 'क्या शताब्दियों पहले अंतरिक्ष-यात्री कश्मीर में उतर चुके थे ?' इस संबंध में एक स्विस लेखक एरिक वान डेनिकन का कहना है कि श्रीनगर से ६० कि. मी. दूर ईसा के ८ सौ साल पहले मार्तण्ड के सूर्यमंदिर पर हजारों साल पहले अंतरिक्षयान उतरा था। इस बात की पुष्टि के लिए हांगकांग विश्वविद्यालय के रेडियोधर्म-विभाग के निदेशक प्रोफेसर फ्रैंक कंडल सहित तीन सदस्यों की टीम आयी है।

इसका जिक्र भी अपनराम ने एक पढ़े-लिखे सज्जन से किया तो उत्तर मिला, 'हमारे यहां देवताओं के पास गगनविहारी विमान पहले से ही थे। पुष्पक विमान पर राम अयोध्या लौटे

थे, यह हमारा बच्चा-बच्चा जानता है।'

अपनराम का कहना यह है कि 'भाई, जब हमारी कलात्मक और सांस्कृतिक मान्यताएं एक सुदृढ़ आकार लेकर हमारे संस्कार बन चुकी हैं, तब उन पर ये विद्वत्ता के हथौड़े क्यों चलाये जाते हैं? सांस्कृतिक जानकारियां सप्लाई करनेवालो, हमारी प्राचीन मान्यताओं ने हमें संस्कार दिया, हमें डर है ये नयी मान्यताएं हमें वहां से बिलकुल उखाड़कर न फेंक दें। बख्शो विद्वानो, बख्शो!'

हम अजंता के चितेरे

पैसिफिक एरिया ट्रेवेल एसोसिएशन (पाटा: ७८) का एक सम्मेलन सन '७८ में होनेवाला है, जिसका आतिथ्य भारत और श्रीलंका मिलकर करेंगे। उसी सम्मेलन के लिए इंडिया टूरिज्म डेवलपमेंट कारपोरेशन ने नीचे प्रकाशित प्रतीक-चिह्न तैयार किया है, इसमें इस क्षेत्र के तीन खास 'आकर्षण-बिंदु हैं—सूर्य, समुद्र और बुद्धधर्म। समुद्र की लहरों के बीच उठता हुआ सूर्य तो मोटी ग्राफिक लाइनों में है और सूर्य को नाजुक रेखाओं से चित्रित कमल ने अपने में समाहित कर रखा है। अपनराम का मन परिकल्पनाकार को बधाई भेजने का हुआ! लेकिन भेजें तो कैसे? काश ऐसी महत्त्वपूर्ण परिकल्पनाओं के कलाकार का नाम भी जनसामान्य तक पहुंचने दिया जाए!

PATA 78

हजार खून माफ

समाचार की एक सूचना के अनुसार हिंदी के कवि-शिरोमणि गिरजाकुमार माथुर को जब से टेलीविजन में डिप्टी डायरेक्टर जनरल का पद मिला है, तब से दिल्ली टेलीविजन का स्तर सुधर गया है। अनेक नये चेहरों का आविष्कार किया गया है और मजे की बात तो यह है कि स्वयं माथुर साहब टेलीविजन की सामग्री जुटाने में हमेशा संलग्न देखे जाते हैं। कहा जाता है कि जहां कहीं वे जाते हैं, उनके साथ एक गुप्त टेलीविजन कैमरा चलता है और चूंकि यह माथुर साहब को मालूम है, हर मीटिंग में वे खासी ऐक्टिंग करते हैं। इस सीमा तक कि दूसरे भी ऐक्टिंग करने लग जाएं। इन्हीं का उपयोग टेलीविजन पर किया जाता है। माथुर साहब आदत से लेटलतीफ हैं—दोस्तों को प्रतीक्षा कराना उनका धर्म है, इसलिए उनके एक अंतरंग मित्र ने लिख भेजा है, 'साथियो, गिरजाकुमार माथुर का डेजिग्नेशन बदलने का आंदोलन उठाओ, उससे डिप्टी डायरेक्टर हटा दो, बस 'जनरल' रहने दो। जनरल को हजार खून माफ होते हैं।'

● नैन भटनागर

हमारे ऋषि-मुनियों ने मानव के लिए शत शरद जीवित रहने की कामना की थी और उसके लिए खान-पान, रहन-सहन आदि की एक आचार-संहिता तैयार की थी। उन्होंने कहा था कि शरीर से पूरा काम लो और उसे पूरा आराम दो। पूरी नींद सोओ और सूर्य निकलने से पहले उठो।

अंगरेजी में कहावत है--

अर्ली टू बेड ऐंड अर्ली टू राइज
मेक्स ए मैन हेल्दी, वेल्दी ऐंड वाइज

(रात में जल्दी सोने और सुबह जल्दी उठने से मनुष्य स्वस्थ, धनवान और बुद्धिमान होता है)। लेकिन आज कुछ वैज्ञानिक इस 'स्वर्ण-नियम' को स्वास्थ्य के लिए हानिकारक मानने लगे हैं। उनका कहना है कि पृथ्वी का वायुमंडल इतना दूषित हो गया है कि वातावरण में पायी जानेवाली ओजोन गैस की तह भी नष्ट होने लगी है। फलस्वरूप प्रातःकालीन सूर्य की किरणों में जो अल्ट्रा-वायलेट किरणें शरीर के लिए लाभप्रद होती थीं वे अब त्वचा-कैंसर पैदा कर सकती हैं। डॉक्टरों का कहना है कि पर्यावरण के दूषित होने से आज का आदमी रासायनिक विद्युत-चुंबकीय और सोनिक (शोर-शराबे के) प्रदूषण के गहरे सागर में तैर रहा है, जो उसके लिए प्राणघातक है। इसी तरह खाने-पीने की वस्तुओं के बारे में समय-समय पर हुई नयी खोजों ने भी तहलका मचा दिया है।

पिछले दिनों अखबारों में निकला कि डाक्टरों ने चाय, काफी और दूध को भी हानिप्रद माना है, क्योंकि इनसे शरीर में 'कोलेस्ट्रोल' की मात्रा बढ़ जाती है, फलस्वरूप हृदय-रोग और आंतों में कैंसर हो सकता है।

यह बात चाय, काफी और दूध तक ही सीमित होती तब भी गनीमत थी, लेकिन ऐसी अनेक नयी खोजों ने जीना ही हराम कर दिया है। कुछ डॉक्टरों ने मक्खन को स्वास्थ्य के लिए खतरनाक बताया है

किस-किस की फिक्र कीजिए
किस-किस को रोइए
आराम बड़ी चीज है
मुंह ढक के सोइए

तो कुछ ने अंडे को कुछ ने मांस को तो कुछ ने चीनी को। ब्रिटेन में एक डॉक्टर ने पिछले दिनों बताया कि नमक अधिक खाने से रक्त में सोडियम की मात्रा बढ़ती है और इससे आत्महत्या की प्रवृत्ति पैदा हो सकती है। उन्होंने अपनी खोज में यही पाया है कि आत्महत्या करनेवालों के रक्त में सोडियम की मात्रा अधिक पायी गयी।

कैंसर और हृदय-रोग तो इस युग के ऐसे प्राणघातक रोग हैं जिनका भय ही लोगों को खाये जा रहा है। इन रोगों का पहले कोई विशेष लक्षण नहीं मालूम होता, जिससे पहले से बचाव किया जा सके। प्रायः लोगों का इनकी ओर तभी ध्यान जाता है जब ये पूरी तरह उभर आते हैं और उस समय मनुष्य मृत्यु के कगार पर खड़ा होता है। अनेक नयी खोजें यह बताती हैं कि खाने-पीने की कितनी ही चीजें इन महारोगों के साथ जुड़ी हैं।

आज के वैज्ञानिकों ने कंप्यूटरों आदि की मदद से जो निष्कर्ष निकाले हैं, उनके कारण हम अपने को ऐसी संकटपूर्ण स्थिति में पाते हैं कि खाद्य-अखाद्य का निर्णय करना कठिन हो गया है। शायद मानव अब यह सुनने की प्रतीक्षा में है कि आदमी की जिंदगी ही मौत का सबसे बड़ा कारण है। अतः वैज्ञानिकों के लिए किसी भी चीज को खतरनाक बताना आसान है। मान लीजिए, किसी डॉक्टर ने अध्ययन का विषय चुना —क्या आइसक्रीम से कैंसर हो सकता है? इसके लिए उसे पहले अच्छी किस्म के कुछ चूहे खरीदने होंगे। विशेषतया जिनमें कैंसर होने की प्रवृत्तियां पायी जाती हों। इन चूहों की नाप-तौल की जाएगी, उन्हें खाने के लिए लगातार आइसक्रीम दी जाएगी और फिर बराबर नाप-तौल की जाती रहेगी। अब यह देखा जाता रहेगा कि चूहों पर आइसक्रीम खाने का क्या प्रभाव पड़ता है। इसके साथ आंकड़े भी इकट्ठे किये जाएंगे। आइसक्रीम में पाये जानेवाले तत्त्वों का निरीक्षण-परीक्षण और उनके गुणों की परीक्षा की जाएगी। कुछ अस्पतालों के रिकार्डों से आंकड़े इकट्ठे किये जाएंगे। फिर एक प्रश्नावली तैयार की जाएगी, जिसके प्रश्नों के उत्तर आइसक्रीम खानेवाले तथा कैंसर के रोगियों से एकत्र किये जाएंगे। इन सब आंकड़ों और अध्ययनों को कंप्यूटर के हवाले कर दिया जाएगा। अब इस खोज के आधार पर आइसक्रीम को वक्ष-कैंसर का कारण सिद्ध कर दिया जाएगा या फिर शायद पुरुषों में प्रोस्टेट ग्लैंड-कैंसर के साथ जोड़ दिया जाएगा।

आंकड़ों के इस जादू की एक मिसाल पिछले दिनों 'हास्पिटल प्रैक्टिस' नामक पत्रिका में प्रकाशित डॉ. हैरोल्ड जे. मोरोवित्ज के लेख में मिलती है। उक्त डॉक्टर येल में मोलिक्यूलर बायोफिजिक्स तथा बायोकेमिस्ट्री के प्रोफेसर हैं। डॉ. मोरोवित्ज ने धूम्रपान के मौत और विकृतियों के साथ संबंध पर श्रमसाध्य अध्ययन किया। उनके इस अध्ययन के मूल निष्कर्ष को

आज अमरीका में सिगरेट के डब्बों पर छपा हुआ देखा जा सकता है । डब्बे पर लिखा रहता है : 'चेतावनी : धूम्रपान आपके स्वास्थ्य के लिए खतरनाक है।'

डॉ. मोरोवित्ज ने आंकड़ों के आधार पर और भी अद्‌भुत निष्कर्ष निकाले हैं। उनके ७० हजार स्वयंसेवी कार्यकर्त्ताओं ने लगभग दस लाख लोगों से मिलकर तरह-तरह के आंकड़े इकट्‌ठे किये हैं।

डॉ. मोरोवित्ज ने ४० से ६९ वर्ष तक की आयु के एक लाख व्यक्तियों के पीछे एज-स्टैंडर्डाइज्ड डेथ-रेट (आयु-मानकित मृत्यु दर) तालिका बनायी है । एज-स्टैंडर्डाइज्ड डेथ-रेट का अर्थ है उपर्युक्त आयु-वर्ग के एक लाख व्यक्तियों में मृत्यु की दर, जैसे—तालिका में यदि यह दर ७३५ है तो इसका अर्थ है कि एक लाख में से ७३५ व्यक्तियों के मर जाने की संभावना है।

नीचे दी हुई तालिका में उन्होंने भोजन की किस्म और मृत्यु-दर के संबंध में आश्चर्यजनक आंकड़े दिये हैं—

		आयु-मानकित मृत्यु-दर
बिना तला हुआ भोजन खानेवालों में		१२०८
तला हुआ भोजन सप्ताह में	१–२ बार खानेवालों में	१००४
" " "	३–४ " " "	६४२
" " "	५–९ " " "	७८१
" " "	१०–१४ " " "	७२२
" " "	१५ से अधिक बार " "	७०२

इन आंकड़ों के अनुसार तला हुआ भोजन अधिक उपयुक्त है।

दूसरी तालिका में नींद और मृत्यु-दर के संबंध में दिलचस्प आंकड़े देखिए—रात में छह घंटे से कम सोना या नौ घंटे से अधिक सोना स्वास्थ्य के लिए हानिकर है।

रात्रि में सोने के औसत घंटे	अनुमानित मृत्यु-दर
५ घंटे से कम सोने पर	२०२९
५ घंटे सोने पर	११२१
६ " " "	८०५
७ " " "	६२६
८ " " "	८१३
९ " " "	९६७
१० " या अधिक सोने पर	१८९८

अब आप शिक्षा के बारे में आंकड़े देखिए——

शिक्षा	आयु-मानकित मृत्यु-दर
प्राथमिक शिक्षा या इससे कम	१४५
हाईस्कूल	८६४
हाईस्कूल से अधिक	७६६
कालेज	७५५
स्नातकोत्तर	६७६

डॉ. मोरोवित्ज के अनुसार 'इन आंकड़ों के अनुसार अधिक जीने के लिए अधिक से अधिक पढ़ना चाहिए।'

कद का भी मौत के साथ संबंध हो सकता है, शायद आपने यह कभी सोचा भी नहीं होगा, लेकिन डॉ. मोरोवित्ज के निष्कर्षों के अनुसार साढ़े ५ फुट से ६ फुट १ इंच तक की लंबाईवाले व्यक्तियों की मृत्यु-दर क्रमशः कम होती जाती है।

और अब आखिर में, वैवाहिक जीवन और मौत का भी संबंध देख लीजिए:

	आयु-मानकित मृत्यु-दर	
	धूम्रपान न करनेवाले	एक दिन में २० तक सिगरेट पीनेवाले
अविवाहित	१०७४	२५६७
विवाहित	७९६	१५६०
विधवा/विधुर	१३९६	२५७०
तलाकशुदा	१४२०	२६७५

डॉ. मोरोवित्ज का कहना है कि पुरुषों के लिए इस तालिका का संदेश एकदम स्पष्ट है कि वे अच्छे पति बने रहें। यदि आप अपनी पत्नी खो बैठे हैं या वह आपको छोड़कर चली गयी है तो जल्दी ही दूसरी पत्नी ले आइए। धूम्रपान करनेवालों के आंकड़े भी देखिए। एक दिन में सिगरेट का एक पैकेट या इससे अधिक पीनेवाले विवाहित से तो तलाकशुदा लेकिन सिगरेट न पीनेवाला व्यक्ति कहीं कम खतरे में है।

इन सब नयी खोजों और इनके निष्कर्षों को पढ़कर पाठक पूछना चाहेंगे कि क्या डॉ. मोरोवित्ज की सलाह को गंभीरता से अपनाया जाना चाहिए ?

इसका जवाब होगा—शायद नहीं, क्योंकि आपने इन्हें गंभीरतापूर्वक लिया तब तो फिर जीना ही दूभर हो जाएगा। इसलिए यदि जीना है तो सब कुछ मजे में खाइए और मौज-मस्ती में दिन काटिए। ●

• रमापद चौधुरी

निभा के साथ सिर्फ एक या दो बातें। बस, इससे ज्यादा तो मैंने कुछ नहीं चाहा था। तब लगता था कि सिर्फ जान-पहचान हो जाने से ही मैं धन्य हो जाऊंगा।

दरअसल, एक दिन मैंने ही निभा का अन्वेषण किया था। गली के मोड़ से घूमकर 'बैफल-वॉल' (बम-विस्फोट से बचने के लिए दरवाजे के सामने बनी दीवार) की आड़। जापानी बम गिरने का आतंक खत्म हो गया था, पर 'बैफल-वॉल' उस वक्त भी हर दरवाजे पर थी। जहां कभी टुकड़े-भर घास के मैदान थे, वहां 'स्लिट ट्रेंच' के प्रताप से गड्ढों में वदबू जमा हो गयी थी।

युद्ध ने हमारे देश का सत्यानाश कर दिया है, इस बात पर हम कुछ दोस्त आपस में गम मनाया करते, दुखी हुआ करते, राजनीति पर बहस-मुबाहसा करते। उसके बाद शाम को अजित या सुकुमार लेक के
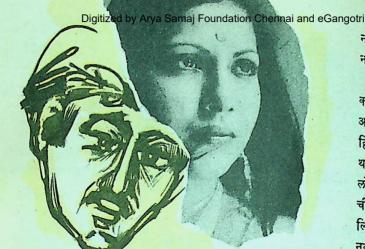
नहीं है, कहीं भी नहीं है।

उस समय हमने कलकत्ता के सब आदमियों को दो हिस्सों में बांट लिया था। एक तरफ हम लोग, जिन्हें चावल, चीनी, किरासिन के लिए तनिक भी फिक्र नहीं थी और दूसरी ओर वे लोग थे, जिनके घर राशन आता या नहीं, हम नहीं जानते थे।

'जब हम अकेले होते हैं तब भले रहते हैं और जब इन अमरीकी सैनिकों की तरह इकट्ठे होते हैं तो दूसरे ही आदमी बन जाते हैं,' अजित ने कहा था।

जिस दिन पहले-पहल मैंने निभा का अन्वेषण किया, उस दिन भी मैं अकेला था। कालेज जाने के लिए 'बैफल-वॉल' पार कर मैं बस-अड्डे की ओर जाने ही वाला था कि सहसा मैंने उसे देखा। मैंने उसका पीछा किया।

करीब ही लड़कियों का एक मॉर्निंग-कालेज था। उस वक्त उनकी छुट्टी हुई थी। ठीक इसी वक्त उनकी छुट्टी होती थी।

तभी पहली बार देखा। उसके साथ एक और लड़की थी। वे दोनों हंसती हुई, झूमती हुई चल रही थीं। शायद एक बार मुझसे नजरें मिली थीं।

किनारे घास पर बैठकर अर्ध-अश्लील रसिकता के बीच-बीच खबरें सुनता-सुनाता। 'एक दिन भट्टाचार्य को लेकर चलो। मकान मैंने देख लिया है, काशीबाबू की मौसी के मकान में,' एक दिन उसने कहा था।

अजित ने कहा था, 'जबर्दस्त है! भट्टाचार्य लेकर आया था। तू नहीं था, उस वक्त।'

सच कहने में क्या है, उस दिन उनके अड्डे में न जा पाने के कारण मुझे पछतावा हुआ था।

सुकुमार ने कहा था, 'अम्लान, फिक्र मत कर, फिर किसी दिन . . . '

मैं शायद मन ही मन उसी दिन के इंतजार में था। प्रेम क्या होता है, यह मैं नहीं जानता था। सिर्फ यही जानता था कि नारी के शरीर-सा रहस्यमय और कुछ

—"सुकुमार, आज मुझे कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा है। आंखें बंद करने पर सिर्फ वही चेहरा, वह हंसी याद आती है।"

—"अजित, यकीन करो, जब उस लड़की ने मेरी ओर एक बार निहारा, एक ही बार नजरें मिली थीं, तभी मेरे कलेजे में न जाने क्या विंध गया था!"

दूसरे दिन, ठीक दूसरे दिन। मैंने बारबार घड़ी देखी। ठीक उसी वक्त पर जाकर खड़ा होना पड़ेगा, नहीं तो देख नहीं सकूंगा। सिर्फ एक बार अपनी आंखों से देखने के नशे ने मुझे धर दबाया।

छरहरा खूबसूरत बदन, पर उससे भी खूबसूरत चेहरा। नुकीली नाक, आंख की पुतलियों में, गोरे चेहरे में एक असाधारण भाव। उसके चलने का ढंग बड़ा चुस्त है, पर प्रत्येक डग से जैसे लज्जा झर रही है।

किसी दिन दीख पड़ती, किसी दिन नहीं। जिस दिन आंखें उठाकर वह कम से कम एक बार मेरी ओर नहीं देखती, उस दिन फिर मुझे कुछ भी अच्छा न लगता।

मैं हमेशा सोचा करता कि अचानक उसके सामने खड़ा होकर कुछ कहूं। हमेशा मौका ढूंढता कि कब वह अकेली होगी।

मैं उसे एक खास नजर से देखता हूं, यह उससे छिपा नहीं रहा। एक दिन मेरी ओर देखकर साथवाली लड़की से उसने फुसफुसाकर न जाने क्या कहा। उसने पलटकर मेरी ओर देखा और हंस पड़ी।

—"अम्लान, तू बेवकूफ है, बेवकूफ! बुलाकर बात भी तो कर सकता है।" अजित ने कहा था।

मैं बहुत डरपोक था, बात करने की हिम्मत नहीं पड़ती थी।

ठीक इन्हीं दिनों हमारे पड़ोस में एक मकान खाली हुआ। और कुछ ही दिनों बाद देखा, पलंग, अलमारी वगैरा सामान से लदी एक लारी उस मकान के सामने आ खड़ी हुई है। उस उम्र में पड़ोस में कोई नया किरायेदार आने पर मन में एक ही जिज्ञासा पैदा होती है।

मैं भोर को नींद से उठकर बरामदे में आकर खड़ा था। उस नये किरायेदार का दरवाजा खट से खुल गया। हमारी डिक्शनरी में दो शब्द थे—'भोर' और 'सुबह', पर छपे शब्दकोश में एक और शब्द हम देखते थे — 'उषा'। उषा कहने से ठीक क्या समझ में आता है, मुझे मालूम न था।

क्या वह अंधेरा काटनेवाले रूप की झलक मात्र है ?

नये किरायेदार का सड़क की ओर के कमरे का दरवाजा खट-से खुल गया और तुरंत मेरे मन ने कहा, 'उषा ! उषा !'

समूचे शरीर में खुशी की बिजली दौड़ गयी, खुशी की एक लहर। अरे, यह तो वही लड़की है ! तब वह भी मेरी ओर अवाक होकर देखने लगी। उसके बिखरे-बिखरे-से सुंदर बाल, नींद से जगी आंखें, साड़ी की तहों में कोमल अंगड़ाई लेती घरेलू सजीवता।

अवाक होकर उसने मेरी ओर देखा और दूसरे ही पल सजल आंखों को फर्श पर झुकाकर सहज हो गयी, पर उसके होंठ के कोने में एक मदुल मुसकान पल भर के लिए कांस के फूल की तरह झूम उठी।

इसके बाद वह फिर दरवाजे की ओट में चली गयी। पल्ले बंद हुए। फिर सिटकनी लगाने की खट से आवाज हुई।

शायद प्रेम एक नशा है। ऐसा नहीं होता तो एक तरह की खुमारी में मेरे दिन कैसे बीत जाते ? भोर को उठना मेरे लिए नशा बन गया, क्योंकि हरेक दिन भोर के वक्त वह एक बार दरवाजा खोलकर खड़ी हुआ करती। बाद में वह हाथ में किताब-कापी लेकर कालेज को चल पड़ती।

जब मेरा कालेज शुरू होता तब उसके कालेज की छुट्टी होती। ठीक वक्त पर वे दोनों सहेलियां चेहरा गंभीर बनाकर, मुझे न देखने का बहाना करके, पैरों पर नजर झुकाकर पास से गुजर जातीं। एक दिन मैंने देखा, वह फुटपाथ की दूकान से कुछ खरीद रही है। उसकी सहेली ने मुझे देखते ही कहा, "अरी निभा, जल्दी आ।"

निभा ! वाह, बड़ा खूबसूरत नाम है, छोटा-सा ! 'निभा' नाम मैंने बार-बार दोहराया और तब तक निभा दूकान से बाहर निकलकर मुझे देखते ही मुसकरायी

और अपनी सहेली के कान में न जाने क्या कहा।

मैं समझ नहीं पा रहा था कि बात करने पर निभा नाराज हो जाएगी या नहीं। इसलिए रतजगा करके काफी पन्ने बरबाद करने के बाद मैंने चिठ्ठियां लिखीं। दूसरे दिन भोर को जब निभा दरवाजा खोलकर आ खड़ी हुई तब मैंने चिट्ठी गोल करके उसकी ओर उछाल दी।

तुरंत ही निभा के चेहरे पर न जाने कैसे रूखेपन की लहर दौड़ गयी। वह दरवाजा बंदकर भीतर चली गयी और वह चिट्ठी कुछ ही देर बाद पाइप के पानी में कागज की नाव-सी तैरती हुई अचानक डूब गयी।

पर शाम को कालेज से लौटकर देखा, उसकी पढ़ाई की मेज के सामनेवाली खिड़की रोज की तरह खुली हुई है। टेबल-लैंप की तेज रोशनी में उसका गोरा चेहरा वैसे ही दमक रहा है। रोज की तरह किताब के पन्ने उलटती हुई वह बार-बार मेरी ओर देख रही है।

वे दोनों हंसती-झूमती कालेज से लौट रही थीं। उसकी सहेली सहसा मेरी ओर देखकर बोल पड़ी, "पैरांडाइज लॉस्ट, पैराडाइज लॉस्ट।"

दुमंजिली बस के सामने की सीट पर बैठा हुआ हूं। हहराती हवा से बाल उड़ रहे हैं। मैं रहस्य की कुंजी ढूंढ रहा हूं। उसने ये दोनों शब्द क्यों कहे? क्या कालेज में पढ़ाये जानेवाले मिल्टन के किसी

काव्य का नाम है? या उसकी सहेली कोई गूढ़ अर्थ समझाना चाहती थी? तो क्या उस दिन की चिट्ठी उछालनेवाली बात निभा ने उसे बता दी है? मेरा मन सिर्फ कुछ कहना चाहता था... क्या कहना चाहता था, मुझे नहीं मालूम। मुझे सिर्फ इतना मालूम है कि मेरे समूचे बदन में उस वक्त एक सिहरन खेल रही थी।

दूसरे दिन सुन पड़ा, निभा अपनी सहेली से कह रही थी, "पैराडाइज लॉस्ट के बाद क्या है री?"

—"पैराडाइज रिगेंड।"

सुनकर सुकुमार ने कहा, "तू बड़े मजे में है, पर मुझे यह बचकाना प्रेम अच्छा नहीं लगता।" अजित ने पूछा, "स्कूल में पढ़ती है क्या?"

मैं नाराज हो गया। मैंने प्रतिज्ञा की, अपना गुप्त दुःख, गुप्त आनंद मैं अपने ही

अचानक एक दिन निभा की उस सहेली से मुलाकात हो गयी। वह मुसकरायी, वैसे ही जैसे किसी बहुत पुराने परिचित से मुलाकात हुई हो। मैं भी मुसकरा दिया। उसके वाद क्या हुआ, कौन जाने! मैं आगे बढ़कर उससे बोला, "आप से एक बात कहनी है।"

लड़की की आंखें कपाल पर चढ़ गयीं, बड़प्पन जाहिर करने के लहजे में गर्व से

हंसकर बोली, "मुझसे ?"

बात करने से पहले ही मेरी आवाज रुंध गयी। किसी तरह कहा, "मैं निभा से एक बार मुलाकात करना चाहता हूं।"

लड़की की आंखों में तनिक हमदर्दी आयी। धीरे से बोली, "अच्छा कहूंगी, जरूर कहूंगी।"

दूसरे दिन निभा के सामने मैं जा नहीं सका। एक अजीब डर ने मुझे उसके पास जाने नहीं दिया। मैं इंतजार करता रहा, करता ही रहा। निभा गली के मोड़ से घूम गयी। उसकी सहेली सीता को अकेली ही आता देखकर मैं उत्कंठित दौड़ पड़ा।

सीता के स्वर से हमदर्दी टपक पड़ी— "वह एक — जानते ही हैं न, उस-जैसी घमंडी लड़की मैंने कहीं और नहीं देखी। आप दुखी न हों," दिलासा देने के लहजे में वह बोली।

उस वक्त समूचा बदन शर्म से, दुख से थरथराने लगा।

सीता धीरे-धीरे बोली, "सुनकर वह मुझ पर बिगड़ पड़ी। इसमें नाराज होने की कौन-सी बात थी, मैं नहीं जानती। उसकी जगह यदि मैं होती तो मिलकर तनिक दिलासा ही देती।"

उस वक्त सीता की कोई भी बात मुझे दिलासा नहीं दे रही थी। सीता के सामने ही मैं सबसे ज्यादा लज्जित हुआ था।

उसके बाद भी प्रायः सीता से मुलाकात होती। एक-दो बात वह खुद ही किया करती, मैं सिर्फ हुंकारी भरता।

इसी तरह चलते-चलते न जाने कैसे मैं शायद सीता से प्यार कर बैठा था।

मुझे नहीं मालूम। अगर ऐसा ही था तो निभा के विवाह की शहनाई की तान सुनकर क्यों मैंने समूचे दिन स्वयं को कमरे में बंद कर लिया था?

शायद बदला लेने के लिए ही मैंने एक दिन सीता से शादी कर ली। उस समय निभा बहुत दूर चली गयी थी, सीता के साथ अब उसका कोई संपर्क नहीं

रह गया था। निभा की बात उसने कभी नहीं उठायी। उसने शायद समझा था कि मैं भी निभा को एकदम भूल गया हूं।

भूल ही गया था। आज इतने दिन बाद फिर याद आयी।

इतने दिन बाद ? हां, तब भला मेरी उम्र ही क्या थी, इक्कीस-बाईस।

देशप्रिय पार्क के मोड़ पर सहसा मुलाकात हो गयी। दो सयानी लड़कियां और एक पंद्रह वर्ष का लड़का ट्राम की पटरी पार कर रहे थे। उनके साथ एक अधेड़ महिला थी। महिला की ओर देखकर मैं चौंक पड़ा। निभा, निभा ! कनपटी के ऊपर के बाल सफेद हो गये हैं, बदन पर उम्र की चर्बी, पर चेहरा आज भी सौंदर्य-स्मारक बना हुआ है। सिर्फ चितवन में वह लजीलापन नहीं है।

निभा ने नजर उठाकर देखा, मेरे चेहरे से उसकी नजर एक बार फिसलकर और तुरंत ही काफी पुराने परिचित की तरह होंठ पर ढेर-सारी मुसकान लिये आगे बढ़ आयी।

"अम्लान भाई, आप ? कैसे हैं ?"

बेटे-बेटियों को परिचय दिया--"अम्लान भाई हैं, प्रणाम करो।"

और फिर अचानक बोली, "चलिए न, यहीं मेरा घर है।"

मेरी अनिच्छा का जैसे कोई मूल्य ही नहीं है। उसके सुंदर मकान के कमरे मुझे इशारा करके बुला रहे थे।

काफी देर, तक हम बैठे-बैठे बातचीत
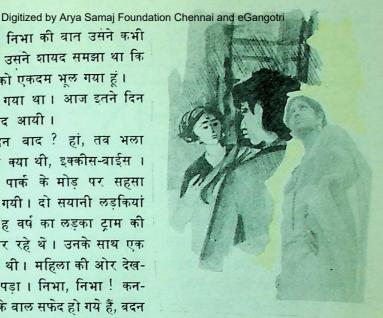
करते रहे। उस वक्त बाहर तेज बारिश हो रही थी। बीच-बीच में निभा घर के काम भी कर रही थी। लड़के-लड़कियों को डपट रही थी। बारिश बंद होते ही मैं उठ खड़ा हुआ।

सीढ़ी से नीचे उतर आयी निभा। मेरी आंखों की ओर निहारा। अचानक मुसकरायी और बोली, "हममें से किसी ने भी गलती नहीं की है। है न अम्लान भाई ?"

मैंने क्या जवाब दिया था, जवाब दिया भी था या नहीं, नहीं मालूम।

मेरे समूचे जीवन की वंचनाओं का घर जैसे भर उठा था; पर निभा से मुलाकात हुई है, निभा ने मुझसे बातचीत की है, यह सीता को मैं बता न सका।

--अनु. सोमनाथ द्विवेदी

प्रेस जगत का सम्राट थामसन

पिछले अगस्त में ८२ वर्ष की अवस्था में लार्ड थामसन का देहांत हो गया तब विश्व के कई प्रसिद्ध समाचार-पत्र एक स्वर से कह उठे कि प्रेस-जगत का अनोखा शहंशाह चल बसा और उस स्थान की पूर्ति प्रायः असंभव है। इन समाचार-पत्रों का ऐसा सोचना एक तरह से ठीक ही था, क्योंकि अनेक गुणों से भरपूर थामसन अपने आपमें एक विलक्षण व्यक्ति थे। उनके जीवनकाल में वे स्वयं एक विवादास्पद व्यक्ति रहे। कई बार उनकी कटु आलोचना हुई, परंतु इन आलोचनाओं ने उन्हें अपने सिद्धांत से कभी नहीं डिगाया। थामसन बिना हिचक लोगों से कहते थे कि धन कमाने के लिए ही मैं व्यापार करता हूं। मैं अधिक समाचार-पत्र इसलिए खरीद रहा हूं जिससे अधिक से अधिक धन कमा सकूं और फिर उस धन से अधिक से अधिक समाचार-पत्र खरीद सकूं। मैं सिगरेट नहीं पीता, शराब भी नाममात्र की पीता हूं और अपने परिवार के सदस्यों पर बहुत ही कम खर्च करता हूं। फिर मैं यदि धन इकट्ठा करता हूं तो किसी को एतराज क्यों है?

उनके जीवनकाल में अकसर लोगों

● डॉ. गौरीशंकर राजहंस

की यही धारणा थी कि लार्ड थामसन बहुत ही कंजूस व्यक्ति हैं। साल में वे अपने लिए मुश्किल से एक सूट बनाते थे। हवाई-जहाजों में टूरिस्ट क्लास में सफर करते थे और अपने लड़के को हमेशा फिजूलखर्ची से बचने की सलाह देते थे। सच पूछा जाए तो थामसन कंजूस व्यक्ति नहीं थे बल्कि अत्यंत व्यावहारिक व्यक्ति थे, जिन्होंने कठिन परिश्रम एवं लगन से यह साबित कर दिया कि अखबार की दुनिया में कोई काम असंभव नहीं है।

जिंदगी ६० वर्ष में शुरू

साधारणतः ६० वर्ष की आयु में लोग अपने सक्रिय जीवन से अवकाश ग्रहण करते हैं, परंतु थामसन ने अपना सक्रिय जीवन ६० वर्ष की आयु में ही शुरू किया। १९५३ में वे प्रायः ६० वर्ष के हो गये थे। उनके जीवन में दो ऐसी घटनाएं हुईं जिन्होंने उनके जीवन की दिशा बदल दी।

जैक कूप नामक एक व्यक्ति १९३६ में उनके पास नौकरी की तलाश में आया। उस समय वह कालगेट-पामोलिव कंपनी में एक अदना-सा सेल्समैन था। कूप

एक परिश्रमी व मेधावी युवक था, जिसकी प्रतिभा को थामसन ने पहचाना। थामसन ने उसे धीरे-धीरे अनेक तरक्कियां अपनी कंपनी में दीं और अंत में वह थामसन का पार्टनर बन गया। थामसन ने कई बार कहा है कि कूप उनके जीवन का एक अंग था। दिन में अधिक से अधिक समय थामसन कूप के साथ बिताते थे। वे दोनों साथ बैठते, साथ खाते-पीते, सिनेमा जाते व हंसी-मजाक करते थे। एक-दूसरे से अलग होना प्रायः असंभव था। एक दिन १९४९ में कूप ने थामसन से कहा कि कनाडा की एक प्रसिद्ध रेडियो-

जिन्होंने प्रेस-जगत में नये कीर्तिमान स्थापित किये

कंपनी ने एक लाख डालर प्रतिवर्ष की दर पर उसे एक ठेका दिया है—कनाडा में एक बड़ा रेडियो-स्टेशन चलाने के लिए। परंतु ठेके में एक प्रमुख शर्त यह है कि थामसन का उसमें कोई हिस्सा नहीं होगा। कूप ने थामसन को बताया कि उसने यह ठेका स्वीकार कर लिया है। थामसन को इस बात से गहरा धक्का पहुंचा, क्योंकि उन्हें सपने में भी इस बात का खयाल नहीं था कि कूप कोई ऐसा काम करेगा जिसे थामसन से छिपाने की आवश्यकता हो। कुछ ही महीनों में दोनों मित्रों की मित्रता सदा के लिए समाप्त हो गयी।

थामसन अभी इस आघात से संभल भी नहीं पाये थे कि एक दूसरा आघात लगा। उनकी पत्नी एडना अचानक बीमार हुईं और पता चला कि उन्हें कैंसर हो गया है। देखते ही देखते उनकी मृत्यु हो गयी। थामसन ने स्वयं एक बार कहा था कि उनकी पत्नी की मृत्यु ने उन्हें बहुत विचलित कर दिया था। जब से उन दोनों का विवाह हुआ था तब से अकसर थामसन घर से बाहर रहते थे। रात देर में घर लौटते थे और कभी-कभी कई हफ्तों घर नहीं आते थे। उनकी पत्नी ने उन्हें परिवार के सभी झंझटों से मुक्त रखा और कभी इस बात की शिकायत नहीं की कि थामसन उन पर पूरा ध्यान नहीं देते हैं। थामसन ने इसे कबूल किया है कि यदि एडना का पूरा सहारा उन्हें

नहीं मिलता तो शायद वे जीवन में कोई बड़ा काम नहीं कर पाते।

'स्कॉट्समैन' के मालिक

थामसन में घोर आत्मविश्वास था। अपने युवाकाल में एक बार उन्होंने अपनी पत्नी से कहा था कि वे शीघ्र ही लखपति हो जाएंगे। यह सुनकर उनकी पत्नी ने कहा था कि जिस आदमी के पास दूध पीने तक के पैसे नहीं हों वह लखपति होने का स्वप्न कैसे देख सकता है? परंतु अपनी मृत्यु के समय थामसन ने जितनी संपत्ति छोड़ी वह एक आश्चर्यजनक बात लगती है।

थामसन ने एक अत्यंत निर्धन परिवार में जन्म लिया था। उनके पिता एक मामूली नाई थे और मां एक छोटे-से होटल में नौकरी करती थी। परिवार का गुजारा बड़ी मुश्किल से चलता था। चौदह वर्ष की आयु में लाचार होकर थामसन ने स्कूल छोड़ दिया। पहले वे एक छोटी-सी कंपनी में सेल्समैन बने और बाद में क्लर्की करने लगे। उन्होंने कई काम पकड़े और छोड़ दिये। रेडियो बेचने के काम ने उनकी तकदीर को पलट दिया। उत्तरी ओंटारियो में जब वे रेडियो बेचने का काम कर रहे थे तब उन्होंने पाया कि वहां रेडियो की आवाज बड़ी धीमी सुनायी पड़ती है। उन्होंने विचार किया कि क्यों न वहां एक छोटा-मोटा रेडियो-स्टेशन खोल दिया जाए, जिसमें दिलचस्प कार्यक्रम दिये जा सकें। उन्होंने ५०० डालर कर्ज लेकर एक ट्रांसमिटर खरीदा और रेडियो-स्टेशन खोल दिया। उनके सौभाग्य से उस रेडियो-स्टेशन से उन्हें बहुत लाभ होने लगा और इसी मुनाफे से उन्होंने सन १९३४ में एक साप्ताहिक पत्र खरीदा और उसके बाद समाचार-पत्र खरीदने और उनके संचालन का जो सिलसिला प्रारंभ हुआ वह उनके जीवन के अंत तक चलता रहा। सन १९५३ में थामसन कई छोटे-छोटे अखबारों के मालिक बन गये थे, परंतु उनकी एक हार्दिक इच्छा थी कि वे किसी बड़े अखबार के मालिक बनें।

उन्होंने पाया कि कनाडा, अमरीका या इंगलैंड में जितने भी समाचार-पत्रों के मालिक हैं उनके अखबारों को चलाने के मुख्यतः दो कारण हैं। पहला यह कि समाचार-पत्रों के मालिक होने से उन्हें देश में और समाज में काफी प्रतिष्ठा और अप्रत्यक्ष रूप से एक तरह की शक्ति भी मिलती है। दूसरा कारण यह था कि कुछ लोगों को अपने बाप-दादों से समाचार-पत्रों का व्यवसाय मिला हुआ था, जिसमें उन्हें किसी तरह का परिश्रम नहीं करना पड़ता था। यदि इस व्यापार में नाममात्र का भी लाभ होता था तो वे संतुष्ट थे, क्योंकि इससे उन्हें समाज में बहुत प्रतिष्ठा मिलती थी। थामसन का मत इसके ठीक विपरीत था। उनका कहना था कि समाचार-पत्र व्यवसाय को बहुत लाभप्रद व्यवसाय बनाया जा सकता है, यदि उसका प्रबंध ठीक हाथों में हो। उन्हें
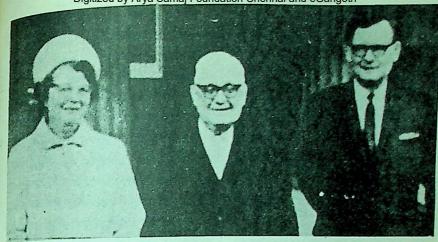
पुत्री श्रीमती ई. आर. कैंपबल एवं पुत्र केनथ के साथ लार्ड थामसन

आत्मविश्वास था कि अखबार कैसा ही घाटे में चल रहा हो, वे उसके प्रबंध को दुरुस्त करके उसे लाभप्रद बना सकते हैं।

'स्कॉट्समैन' स्कॉटलैंड का एक बहुत बड़ा विश्व-प्रसिद्ध अखबार था। थामसन की हार्दिक इच्छा थी कि वे 'स्कॉट्समैन' के मालिक बनें या कम से कम 'स्कॉट्समैन' में उनकी साझेदारी हो। 'स्कॉट्समैन' के एक प्रमुख साझेदार श्री कॉलिन मैकनिन १९५० में किसी कानफ्रेंस के सिलसिले में कनाडा आये हुए थे। उनसे थामसन ने दबी जबान में कहा, "'स्कॉट्समैन' की वित्तीय हालत ठीक नहीं है। क्या वे यह अखबार किसी योग्य और समर्थ व्यक्ति के हाथों बेचना चाहेंगे?" सुनते ही मैकनिन आपे से बाहर हो गये। उन्होंने कहा कि 'स्कॉट्समैन' सौ वर्षों से भी अधिक समय से 'फिंडले-परिवार' का पारिवारिक व्यापार है, जिसे वे लोग किसी भी हालत में किसी को नहीं बेचेंगे।

मैकनिन के दो-टूक उत्तर से थामसन निराश नहीं हुए। वे दूरदर्शी व्यक्ति थे। उन्होंने पता लगाया। मालूम हुआ कि 'स्कॉट्समैन' की वित्तीय हालत दिन-प्रति-दिन खराब होती जा रही है। उसके प्रबंधकों का खर्च पर किसी भी प्रकार का नियंत्रण नहीं है। इसके अतिरिक्त टैक्स छिपाने के अभियोग में फिंडले-परिवार पर एक बड़ा जुर्माना कस दिया गया था।

जब थामसन संसद में चुनाव के सिलसिले में अपने निर्वाचन-क्षेत्र में घूम रहे थे तब अचानक उन्हें 'स्कॉट्समैन' के मैकनिन का पत्र मिला, जिसे पढ़कर उन्हें आश्चर्य हुआ। पत्र में दो-टूक बातें थीं "'स्कॉट्समैन' बिक रहा है। आप खरीदने में दिलचस्पी रखते हों तो सौदा करें।"

थामसन शीघ्र ही एडिनबरा पहुंचे और उन्होंने मुंहमांगे दाम पर 'स्कॉट्समैन' समाचार-पत्र कंपनी खरीद ली, जो 'स्कॉट्समैन' के अलावा 'एडिनबरा ईवनिंग डिसपैच' और 'वीकली स्कॉट्समैन' भी निकलती थी।

थामसन का सबसे बड़ा सिरदर्द 'ईवनिंग डिसपैच' नामक अखबार था, जो भयानक घाटे में चल रहा था। इसे 'स्कॉट्समैन' से अलग करना भी मुश्किल और चलाना भी मुश्किल। एडिनबरा शहर में 'ईवनिंग डिसपैच' के अतिरिक्त एक और अखबार निकल रहा था 'ईवनिंग न्यूज'। थामसन चाहते थे कि 'ईवनिंग डिसपैच' और 'ईवनिंग न्यूज' को मिलाकर एक अखबार कर दिया जाए, परंतु 'ईवनिंग न्यूज' के मालिक इस बात के लिए तैयार नहीं हुए क्योंकि उनकी प्रसार-संख्या अधिक थी और उन्हें छोटे विज्ञापन भी मिलते थे। परंतु धीरे-धीरे 'ईवनिंग न्यूज' की वित्तीय हालत खराब होने लगी और उसके मालिकों ने थामसन से निवेदन किया कि 'ईवनिंग न्यूज' के दाम वे बढ़ाना चाहते हैं, यदि थामसन भी अपने अखबार 'ईवनिंग डिसपैच' के दाम बढ़ा दें। थामसन ने साफ मना कर दिया। हारकर 'ईवनिंग न्यूज' के मालिकों ने थामसन के हाथों बेच दिया और इस तरह थामसन ने न केवल 'ईवनिंग न्यूज' के कर्मचारियों को सड़क पर भटकने से बचा लिया बल्कि 'ईवनिंग डिसपैच' के घाटे के कारण कुछ सालों के बाद 'स्कॉट्समैन' को बंद करना पड़ सकता था, वैसी स्थिति से 'स्कॉट्समैन' को भी निकाल लिया और 'स्कॉट्समैन' एक लाभ देनेवाला समाचार-पत्र-समूह बन गया।

'संडे टाइम्स' के भाग्यविधाता

लार्ड कैम्सले इंगलैंड के एक बहुत प्रसिद्ध और समर्थ व्यक्ति थे, जो कई प्रसिद्ध समाचार-पत्रों के मालिक थे। उनका सबसे प्रसिद्ध अखबार था 'संडे टाइम्स'। एक दिन थामसन को कैम्सले का टेलीफोन मिला, "मुझसे शीघ्र मिलो।" वे तुरंत कैम्सले से मिलने लंदन चले गये। कैम्सले ने मिलते ही कहा कि वे अपने सारे अखबार बेचना चाहते हैं जिसमें 'संडे टाइम्स' भी शामिल है। थामसन को अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ। थामसन की गांठ में इतना पैसा नहीं था कि वे कैम्सले के सारे अखबार खरीद सकते। उन्होंने कैम्सले से थोड़ा समय मांगा।

थामसन ने बहुत बेचैनी से वह रात काटी और दूसरे दिन पैसों का प्रबंध करते कनाडा चले गये। जैसे-तैसे उन्होंने ऋण का प्रबंध कर लिया और कैम्सले के सारे अखबार खरीद लिये, जिनमें सबसे प्रमुख अखबार 'संडे टाइम्स' भी था। कहते हैं कि 'संडे टाइम्स' बेचते समय लार्ड कैम्सले का दिल भर आया था। उन्होंने बड़ी अनिच्छा से 'संडे टाइम्स' थामसन के

हाथों बेचा था। अंतिम बात उन्होंने थामसन से कही थी—"संडे टाइम्स में काम करनेवाले कर्मचारियों का खयाल रखना।" थामसन ने बहुत विनम्र होकर कहा था, "आप निश्चित रहें। जिस दिन से मैं आपकी कुर्सी पर बैठूंगा मैं आपकी बात हमेशा याद रखूंगा।" लार्ड कैम्सले ने बिगड़ते हुए कहा था, "यह सौभाग्य तुम्हें कभी नहीं मिलेगा। मैं अपनी कुर्सी व मेज अपने घर मंगवा लूंगा। मैं यह बर्दाश्त नहीं कर सकता कि मेरी कुर्सी व मेज पर कोई दूसरा आदमी बैठे।"

६ महीने साल भर में बदल दिया :

लार्ड कैम्सले का भतीजा लंदन के दूसरे प्रसिद्ध अखबार 'डेली टेलीग्राफ' का मालिक था। 'संडे टाइम्स', 'डेली टेलीग्राफ' के प्रेस में ही छपा करता था। 'संडे टाइम्स' की समृद्धि देखकर 'डेली टेलीग्राफ' के मालिक जल उठे और १७ दिसंबर १९५९ को उन्होंने थामसन को नोटिस दिया कि वे ६ महीने के बाद 'संडे टाइम्स' को 'डेली टेलीग्राफ' के प्रेस में नहीं छपने देंगे। थामसन के लिए यह बहुत बड़ा आघात था। 'संडे टाइम्स' की प्रसार-संख्या लाखों में थी और उसकी पृष्ठ-संख्या भी ४८ थी। इतने बड़े समाचार-पत्र को छापने के लिए एक बहुत बड़े प्रेस की जरूरत थी जिसका प्रबंध ६ महीनों के अंदर होना अत्यंत कठिन था। थामसन के सहयोगी बहुत उदास थे और उन्हें यह भरोसा हो चला था कि 'संडे टाइम्स'

लेखक

कुछ महीनों को बंद करने के सिवा और कोई उपाय नहीं है। उन्हें इस बात का भी डर था कि यदि 'संडे टाइम्स' एक बार बंद हो गया तो फिर उसके ग्राहकों को दुबारा पकड़ पाना असंभव होगा। थामसन ने इकरारनामे से संबंधित सारे पुराने कागजात मंगवाये और दो दिनों तक उन्हें पढ़ते रहे। अचानक उनकी नजर एक कागज पर टिक गयी, जिसमें लिखा था कि 'नोटिस की अवधि ६ महीने के बदले एक साल होगी।' फिर क्या था, थामसन ने तुरंत इकरारनामे के उस हिस्से की ओर 'डेली टेलीग्राफ' के मालिकों का ध्यान आकर्षित कराया। लाचार होकर उन्हें थामसन को एक वर्ष का समय देना पड़ा और इसी बीच थामसन ने रात-दिन परिश्रम करके एक अलग प्रेस कायम कर लिया। 'संडे टाइम्स' एक भी दिन बंद नहीं हो पाया।

'टाइम्स' को बचा लिया

थामसन जानते थे कि जब तक कोई तगड़ा दैनिक अखबार साथ हो 'संडे टाइम्स' बहुत अधिक लोकप्रिय नहीं हो सकता। इस काम के लिए उन्हें सबसे उपयुक्त लंदन का प्रसिद्ध अखबार 'टाइम्स' लगा। उन्होंने कई बार 'टाइम्स' के मालिकों से निवेदन किया कि वे लोग थामसन को अपना पार्टनर बना लें, परंतु 'टाइम्स' के मालिकों ने इस बात पर असहमति प्रकट कर दी। सन १९६५ में थामसन ने अपने कुछ विश्वासी सहयोगियों के द्वारा 'टाइम्स' के मालिकों को यह बताया कि उनके अखबार के बुरे दिन बहुत समीप हैं, क्योंकि प्रसार-संख्या गिर रही है और विज्ञापनदाता भी धीरे-धीरे अखबार से हटते जा रहे हैं। ऐसी स्थिति में यदि शीघ्र प्रबंध अच्छे और सुयोग्य व्यक्तियों के हाथों में नहीं दिया गया तो 'टाइम्स' बंद हो जाएगा। अंत में समझौता यह हुआ कि 'टाइम्स' और 'संडे टाइम्स' को मिलाकर एक अलग कंपनी कायम की जाए और लार्ड थामसन का उस पर अप्रत्यक्ष नियंत्रण रहे। जब सारी बातें करीब-करीब तय हो चुकी थी तो ब्रिटेन की संसद में इस बात पर बहस हुई और लोगों ने थामसन पर यह आरोप लगाया कि वे समाचार-पत्र की दुनिया में अपना एकाधिकार कायम करना चाहते हैं और एक-एक कर सारे अखबारों को अपने शिकंजे में ला रहे हैं। ब्रिटिश सरकार ने इस बात के लिए एक आयोग बैठाया जिसे थामसन ने बताया कि यदि वे 'टाइम्स' का नियंत्रण अपने हाथों में नहीं लेते हैं तो ईश्वर भी इस अखबार को डूबने से नहीं बचा सकता है। थामसन ने इंगलैंड की जनता व सरकार को यह अच्छी तरह बता दिया कि वे 'टाइम्स' को अपने नियंत्रण में इसलिए नहीं ले रहे हैं कि उन्हें अखबार खरीदने का शौक है। इंगलैंड की जनता के लिए 'टाइम्स' का दूसरा अर्थ है 'ब्रिटेन'। थामसन ने कहा कि वे तो सचमुच एक घाटे का सौदा कर रहे हैं। यदि लार्ड थामसन ने 'टाइम्स' न खरीदा होता तो यह अखबार कब का डूब गया होता। थामसन अकसर कहा करते थे कि जब तक मैं जिंदा हूं, टाइम्स को मरने नहीं दूंगा। उन्होंने अपना वायदा निभाया और लगातार घाटा होने के बावजूद यह अखबार चलाया।

जब एक बार थामसन से एक पत्रकार ने पूछा कि आपकी सफलता का रहस्य क्या है तो उन्होंने दो-टूक उत्तर दिया... "कोई छुट्टी नहीं। कोई मौज नहीं। केवल काम।" जब थामसन की मृत्यु हुई तब वे विभिन्न देशों के १८३ समाचार-पत्र व १३८ पत्र-पत्रिकाओं के मालिक थे। इतिहास में आज तक कोई ऐसा आदमी नहीं हुआ जो इतने समाचार-पत्रों का मालिक रहा हो।

—२४/१ पुराना राजेन्द्रनगर,
नयी दिल्ली-११००६०

प्रेरक प्रसंग

- परहितव्रती
- दान हो तो ऐसा
- ईमानदारी

परहितव्रती

अबोहर (पंजाब) में फूलचंद नामक युवक बढ़ईगीरी का काम करके अपने वृद्ध माता-पिता, पागल भाई तथा पत्नी का भरण-पोषण करता था। १९४७ में देश-विभाजन के समय दंगे में उसे बम लगा और उसका दाहिना हाथ बेकार हो गया।

उसके पड़ोस में गोरखपुर के एक शास्त्रीजी रहते थे। अस्पताल से लौटकर वह उनके सामने रोने लगा, "अब मैं बढ़ईगीरी का काम नहीं कर सकता, मेरे परिवार का भरण-पोषण कैसे होगा ?

"मैं तुम्हारी कोई अन्य मदद तो नहीं कर सकता, लेकिन तुम्हें पढ़ा-लिखाकर अध्यापक बनाने का प्रयत्न कर सकता हूं, और जब तक तुम अध्यापक नहीं बनोगे तब तक मैं तुम्हें अपनी आय का आधा ५० रुपये प्रतिमास देता रहूंगा।"

फूलचंद को तो भगवान ही मिल गये! वह पढ़ने में जुट गया और उसने बायें हाथ से लिखकर क्रमशः हिंदी-परिचय, हिंदी-कोविद, हिंदी-रत्न, हिंदी-भूषण और हिंदी-प्रभाकर की परीक्षाएं उत्तीर्ण कर लीं।

प्रभाकर-परीक्षा के बाद शास्त्रीजी के प्रयत्न से फूलचंद को म्युनिसिपल हाईस्कूल में ८० रुपये मासिक वेतन पर अध्यापकी मिल गयी। दो वर्ष काम करने

के बाद ओ. टी. स्पेशल ट्रेनिंग का सर्टीफिकेट भी मिल गया।

दान हो तो ऐसा

रविशंकर महाराज भूदान के संबंध में पेथा भाई के गांव गये। पेथा भाई से उनका जेल-जीवन का परिचय था।

पेथा भाई ने उन्हें १२१ बीघे जमीन दान दी। महाराजजी ने उनसे पूछा, "यह जमीन किन लोगों में बांट दूं?"

"इस गांव में ११ हरिजन-परिवार हैं, उन्हीं में बांट दीजिए।"

"लेकिन ऐसा करने से तो प्रति-परिवार केवल ११ बीघे जमीन आएगी, क्या इतने से उनकी गुजर हो जाएगी?"

"तो मैं अपनी शेष जमीन भी दिये देता हूं।"

"लेकिन इतना ही काफी नहीं, उन्हें खेती करना भी सिखाना होगा।"

पेथा भाई, उनकी पत्नी तथा उनका २४-वर्षीय पुत्र तीनों वहां उपस्थित थे। तीनों ने सलाह-मशवरा किया और फिर वे बोले, "संकल्प कर लिया, अवश्य सिखाऊंगा।"

दूसरे दिन से ही वे हरिजन-परिवारों को साथ ले खेतों में काम करने लगे। कुछ दिन बाद उन्होंने महाराजजी को पत्र लिखा, "चार अच्छे बैल भेज दीजिए।" महाराजजी ने बैल भेज दिये। दो-तीन वर्ष बाद महाराजजी को एक मंदिर की ओर से कुछ बछड़े प्राप्त हुए। महाराजजी ने पेथा भाई को लिखा," कुछ बछड़े भिजवा दूं?" उत्तर मिला, "ईश्वर की कृपा से हमारे हरिजन भाइयों की खेती खूब फल-फूल रही है। अब हमें बैलों की जरूरत नहीं; आप किसी और को दे दें।"

—महाराज

ईमानदारी

ब्रिटेन में राष्ट्रीय स्वास्थ्य-सेवा अपने ढंग का अनूठा संगठन है। इस सेवा के अंतर्गत कोई भी नागरिक किसी भी डाक्टर के पास अपना रजिस्ट्रेशन करा सकता है, जहां उसके और उसके परिवार के बारे में सभी जानकारी फाइल में रखी जाती है। साधारण बीमारी में वही डाक्टर दवा लिख देता है। दवा किसी भी केमिस्ट से ली जा सकती है; और केवल एक शिलिंग (लगभग १ रुपया) देना होता है। कठिन रोग में अस्पताल भिजवा दिया जाता है। नागरिकों को अपनी आय में से कुछ राशि इस सेवा के लिए जमा करनी होती है। विद्यार्थियों (विदेशी भी) के लिए सेवा मुफ्त है।

इसी संदर्भ में मुझे भी एक बार इस सेवा का उपयोग करने का अवसर मिला। डाक्टर ने जो दवा लिखी थी उसे केमिस्ट से एक शिलिंग में ले आया और दो दिन में ठीक भी हो गया। तीसरे दिन प्रातः नाश्ते के समय मेज पर एक पारसल मेरे नाम रखा मिला। खोलने पर देखा कि उसमें दवा की दो शीशियां और एक पत्र था, जिसमें लिखा था— "हमें खेद है कि आपके 'नुस्खे' को चेक करने पर यह पाया गया कि गलती से आपकी दवा आधी मात्रा में ही दी गयी थी। बाकी दवा पारसल से भेजी जा रही है। भूल के लिए क्षमा करें। **—रामकुमार गर्ग**

मारीशस का लोकप्रिय लोकनृत्य
—सेगा

ज्वालामुखी से उभरता हुआ द्वीप

• राजेन्द्र अवस्थी
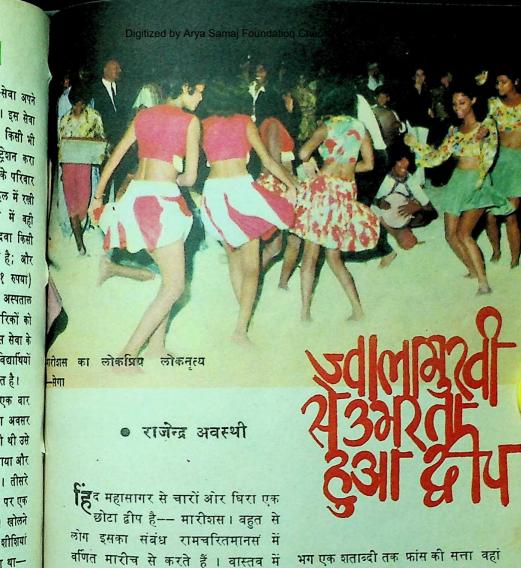
हिंद महासागर से चारों ओर घिरा एक छोटा द्वीप है—— मारीशस। बहुत से लोग इसका संबंध रामचरितमानस में वर्णित मारीच से करते हैं। वास्तव में मारीशस सोलहवीं सदी की खोज है। सन १५०९ में एक पुर्तगाली नाविक ने इसका पता लगाया था। उसके बाद डच आये और चले भी गये।

सन १७१५ में फ्रांसीसियों ने इस पर अधिकार कर लिया। उन्होंने इस द्वीप का विकास किया, बस्तियां बसायीं और अफ्रीका

भग एक शताब्दी तक फ्रांस की सत्ता वहां बनी रही। बाद में सन १८१०में भारतीय सैनिकों की सहायता से अंगरेजों ने इस द्वीप पर अधिकार कर लिया।

अफ्रीकी दास इस द्वीप का विकास नहीं कर सके। विकास किया भारतीय मजदूरों ने। सन १८३४ में भारतीय मजदूरों का पहला जत्था मारीशस पहुंचा। इनमें से अधिकांश बिहार के लोग थे।
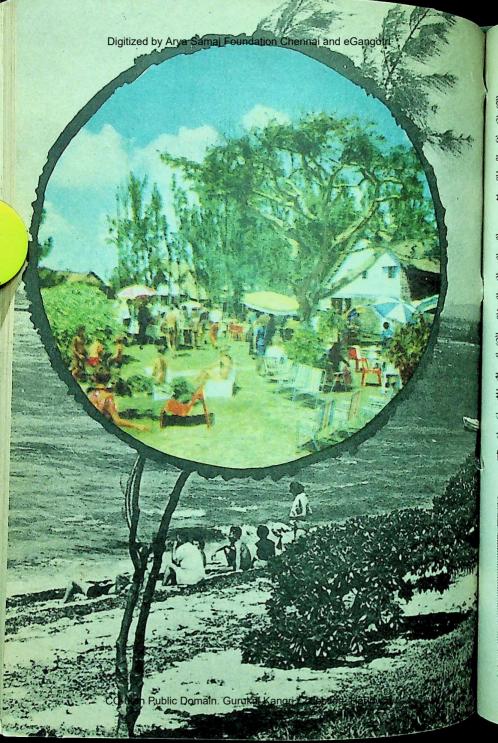
उन्होंने ज्वालामुखी के गर्भ से निकले हुए इस द्वीप के छलनी पत्थरों को अपनी ताकत से धरती से निकालना शुरू किया और मिट्टी को अवरोधों से मुक्त कर गन्ने की खेती के योग्य बनाया। आज भी खेतों के बीच में एकत्र पत्थर के ढेर उन भारतीय मजदूरों के श्रम की कहानी कहते हैं।

श्रम से उभरे इस द्वीप को आजादी की प्रेरणा कई सूत्रों से मिली थी। आरंभिक काल में, यानी सन १९०१ के आसपास दक्षिण अफ्रीका से लौटते हुए मोहनदास करमचन्द गांधी यहां रुके थे। तब गांधीजी के नाम से वे इतने विख्यात नहीं थे। लौटते हुए गांधीजी मारीशस के गवर्नर-जनरल चार्ल्स ब्रुस के यहां एक रात ठहरे थे। चार्ल्स संस्कृत के विद्वान थे। गांधीजी के आगमन से इस द्वीप को प्रेरणा मिली और यहां की जनता को ज्ञान हुआ कि जिस द्वीप को उन्होंने अपने श्रम से बनाया है, उस पर विदेशी सत्ता का अधिकार नहीं होना चाहिए। इसी के बाद यहां से अनेक साप्ताहिक-पाक्षिक पत्र निकले और बंद हुए। फिर आर्यसमाज का आंदोलन चला और अनेक संघर्षों के बाद १२ मार्च १९६८ को मारीशस की जनता ने अपनी स्वाधीनता प्राप्त कर ली। इस समूचे आंदोलन में श्री शिवसागर रामगुलाम का विशिष्ट हाथ था, इसलिए उनकी लेबर पार्टी ने ही सत्ता सम्हाली। सन १९७६ में पहला चुनाव हुआ था, जिसमें लेबर पार्टी के ४३ और विरोधी-दल मारीशियन सोशल डेमोक्रेट के २६ सदस्य चुने गये थे। अब फिर नया चुनाव होने जा रहा है और ८ लाख ६७ हजार की आबादी का यह द्वीप नये परिणामों की प्रतीक्षा में है।

गन्ने के जंगलों का देश

मारीशस भारत और अफ्रीका के बीच में है। भारत की दूरी लगभग ढाई हजार मील है, जबकि अफ्रीका से वह १,२५० मील पूर्व में है। सबसे पास है मैडागास्कर,

बायें : क्यूर्पिप की चर्च : दायें : लेखक के साथ डॉ. लोथार लुत्शे और जयंती राठौर

सामने : समुद्रतट पर सैलानियों की भीड़

केवल ५०० मील। इस द्वीप के आसपास दो महत्त्वपूर्ण द्वीप हैं——री-यूनियन और सेशेल्स। दोनों मारीशस से छोटे हैं। समूचा मारीशस ४० और ३० मील के घेरे में बसा है। क्षेत्रफल है ७२० वर्गमील। ध्यान से देखा जाए तो यह द्वीप कछुए की पीठ-जैसा दिखायी देता है। इतना छोटा होते हुए भी जलवायु में वह बहुत भिन्न है। माहेबर्ग और पोर्ट लुई में तापमान कुछ और होगा तो क्यूर्पिप में उससे बहुत भिन्न। पहले दोनों ठीक महासागर के किनारे हैं और क्यूर्पिप ऊंचाई में बसा है। हिंद महासागर से घिरा मारीशस नैसर्गिक समुद्र-तटों, मध्यम पर्वत-शृंखलाओं और छोटी झीलों तथा झरनों के कारण सभी तरह के सौंदर्य की झलक देता है। चारों ओर गन्ने के खेत हैं, जिनसे यहां की जनता साल में १३ बार फसलें काटती है। यदि यह कहा जाए कि मारीशस में गन्ने के जंगल हैं तो गलत नहीं होगा। चाय भी यहां होती है, लीचियों की बहार है, आम के वृक्ष हैं और रक्त-गुलमोहरों से ज्वालामुखी का भान होता है।

रामायण : 'राम गति देहुं' वेद वाक्य

हम जिस दिन मारीशस में उतरे थे, मौसम भारत से भिन्न था। अगस्त का अंतिम सप्ताह और बहुत भीनी-भीनी ठंड। धरती से उठती हुई एक सुगंध का अनुभव प्लेजांज हवाई अड्डे में उतरते ही हमें मिला था। फिर वहां की जनता की मैत्री और प्रत्येक व्यक्ति के मन में हिंदी का प्रेम, ये सब अभिनंदन के पहले क्षण के वरदान थे। यहां-वहां हिंदी में बड़े-बड़े नारे लिखे थे।

मारीशस में हिंदी का प्रवेश रामायण और हनुमान-चालीसा के माध्यम से हुआ था। बिहार के जो मजदूर वहां गये थे, उनके पास यही दो पुस्तकें थीं।

मारिशस के लोकप्रिय योजना एवं विकास मंत्री — खेर जगतसिंह
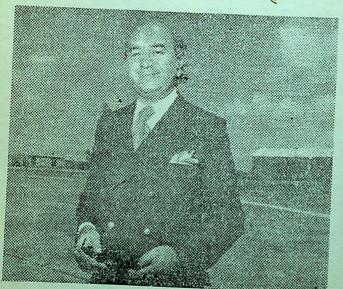
रामचरित-मानस की चौपाई—'राम गति देहुं सुमति देहुं' उनके कठोर श्रम का सहारा थी। इसलिए इस वाक्य को आज भी वेद-वाक्य के रूप में वहां स्वीकार लिया गया है। संभवतः यह एक चौपाई समूचे संघर्ष के परिणाम को स्पष्ट करती है।

भाषाओं और धर्मों का सम्मेलन

यह एक छोटा-सा द्वीप अनेक धर्मों और भाषाओं का केंद्र है। हमने यहां आर्य-समाजियों और सनातनधर्मियों के मंदिर देखे हैं, तो मस्जिदें भी हैं, चर्च हैं और चीनी पगोडा भी। धर्म को लेकर कभी वैमनस्य उभरा हो, ऐसा सुनने में नहीं आया। भाषाओं के नाम पर फ्रेंच, अंगरेजी और हिंदी—तीनों का प्रचार है। एक सांस्कृतिक समझौते के अंतर्गत फ्रांसीसी भाषा को बनाये रखना यहां के लिए एक मजबूरी है। हिंदी बोलकर पूरे द्वीप में काम चलाया जा सकता है। लेकिन जो सर्व-साधारण की बोली है, वह वास्तव में 'क्रिओल' है। क्रिओल यानी फ्रांसीसी और भोजपुरी की खिचड़ी। इसलिए यह मान बैठना कि मारीशस हिंदी भाषा का द्वीप है, एक भ्रांति होगी। शासकीय भाषा हिंदी नहीं है, यद्यपि वहां के प्रधानमंत्री स्वयं हिंदी भाषी हैं। सच देखा जाए तो सीमित साधनों के कारण मारीशस को अनेक देशों पर निर्भर रहना पड़ता है—अफ्रीका के पास होने से अफ्रीकी एकता संगठन का वह सदस्य है। हिंदी-बहुल जनता के कारण वह भारत को अपना

द्वितीय विश्व हिन्दी-सम्मेलन में उपस्थित कुछ भारतीय लेखक

भाई मानता है। आर्थिक प्रश्नों पर उसे फ्रांस, इंगलैंड और भारत पर निर्भर रहना पड़ता है।

भारतीय संस्कृति के प्रतीक-चिह्न

मारीशस को विकसित करने में भारतीयों ने सबसे ज्यादा सहयोग दिया है। वहां की सभी बड़ी-बड़ी इमारतें भारतीय इंजीनियरों ने बनायी हैं। महात्मा गांधी संस्थान समूचे मारीशस का एकमात्र सांस्कृतिक केंद्र है। इसकी आधारशिला

डॉ. शिवमंगल सिंह सुमन, डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी और अनंत मराल शास्त्री

३ जून, १९७० को श्रीमती इंदिरा गांधी ने रखी थी और इसी सितंबर में उसका विधिवत उद्घाटन भी उन्हीं ने किया। इस संस्थान के संचालक-मंडल के प्रधान प्रधानमंत्री डॉ. शिवसागर रामगुलाम हैं। महात्मा गांधी संस्थान गांधीजी की पुनीत स्मृति भी है, जिन्होंने समूचे अफ्रीकी देशों को भी दासता से मुक्त होने का रास्ता दिखाया था। अब यह हिंदी का केंद्र बनता जा रहा है और मारीशियन संस्कृति को विकसित करने का माध्यम भी होगा।

लेखकों और कलाकारों के बीच

मारीशस में नागरी प्रचारिणी सभा का भी केंद्र है। मौलाई लौंग में स्थित इस केंद्र से हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग की परीक्षाएं भी संचालित होती हैं। इसी तरह लालमाटी में स्वराज्य-भवन है, जो मारीशस की स्वतंत्रता का प्रमुख केंद्र रहा है। क्रिओल यहां का कला-केंद्र कहा जा सकता है। यहां से दो पत्रिकाएं निकलती हैं और अनेक नाट्यधर्मी कलाकारों तथा लेखकों की भूमि है। यहीं हमारे मित्र अभिमन्यु अनंत रहते हैं। एक पूरा दिन अभिमन्यु और उनके मित्रों तथा भारत से गये मोहन महर्षि के साथ बिताकर हमें सुख मिला था। मोहन महर्षि और उनकी पत्नी ने हिंदी नाटकों को मारीशस में लोकप्रियता प्रदान की है। वे वहां कलाकारों को निर्देशन देकर नाटक के लिए एक पूरी भूमि तैयार कर रहे हैं। अभिमन्यु संभवतः मारीशस के एकमात्र ऐसे लेखक हैं जिनकी रचनाएं भारत में सबसे ज्यादा छपी हैं। थोड़े समय के निवास में हमें कुछ और भी लेखकों से मिलने का अवसर मिला है। भारत और हिंदी के प्रति उनमें अगाध प्रेम है। मेरे सामने ढेर-से ऐसे चेहरे घूम रहे हैं, जिन्हें मैं नहीं भूल सकता। उन सबके नाम याद नहीं है, किंतु रामदेव धुरंधर, पूजानंद नेमा, सोमदत्त बखोरी, मधुकर मुनीश्वर,

हरिनारायण, कृष्णबिहारी और अभिमन्यु -जैसे अनेक दोस्त जिन्होंने हमारे साथ कुछ क्षण बिताये, भूलते ही नहीं हैं।

मोहन मर्हाष के यहां कलाकारों के साथ बीती शाम--आज भी एक-एक चेहरा मैं पढ़ पा रहा हूं। उन सबमें लगन है और भारत देखने की अभिलाषा है।

एक मुसकराता चेहरा

मारीशस के चार मंत्रियों को भूलना मेरे लिए कठिन है--श्री खेर जगतसिंह, श्री दयानंदलाल बसंतराय, डा. एल. आर. शायरों और श्री बुलेल। इन सबके साथ कुछ क्षण बीते हैं और इनसे आत्मीयता मिली है। श्री बुलेल के यहां एक शाम खुलकर चर्चाएं हुई थीं और मारीशस की राजनीति का जायजा मिला था। वसंतराय-जी के तो हम मेहमान ही थे और युवा मंत्री खेर जगतसिंह से भारत तथा मारीशस में जितना संपर्क हुआ है, वह इतना मजबूत हो गया है कि उन्हें अपने से भिन्न मानना मेरे लिए संभव नहीं है। आधुनिक विचारों के खेर जगतसिंह बिहार और पंजाब की भूमि अपने साथ लिये हैं और भारत को अपना देश मानते हैं। सहज और सुलझी हुई प्रवृत्ति, मुसकराता हुआ उनका चेहरा और अपने देश तथा अपने प्रधानमंत्री श्री शिवसागर रामगुलाम के प्रति उनकी आस्था, इस बात का प्रतीक है कि मित्रता के सूत्रों को वे भलीभांति जानते हैं। उतनी ही मृदुभाषी उनकी पत्नी हैं। हिंदी पुस्तकें पढ़ने का उनको चाव है।

आदमी की शक्ल की इन चोटियों के साथ कई कथाएं जुड़ी हैं

श्री खेर जगतसिंह अच्छे वक्ता भी हैं। 'त्रिवेणी' के समारोह में उनका यह परि-चय मिला था। 'त्रिवेणी' मारीशस की कला का केंद्र है। सतीश गुजराल की सज्जा और आधुनिक इंजीनियरिंग इसकी विशेषता है। अपने भाषण में श्री खेर जगतसिंह ने एक वाक्य उद्धृत किया था।

इसका संबंध है अमरीका के युद्ध से, जब दक्षिणी सेनाओं ने हार स्वीकार कर ली और अमरीका का युद्ध समाप्त हुआ तो राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन जनरल ग्रांट के पास पहुंचे थे और उन्होंने कहा था, 'वर्षों से मैं जिस क्षण की प्रतीक्षा में था, जब वह आ गया हैं तो सब कुछ कितना-सहज-सा लगता है।'

इस वाक्य में जीवन का सारा दर्शन छिपा है और वक्ता से मिलकर उतनी ही सहजता का अनभव होता है।

सतरंगी धरती

मारीशस सौंदर्य द्वीप है। ग्रां बासें का गंगा तालाब (पहले इसे परी-तालाब कहते थे), पोर्ट लुई का ऐतिहासिक स्थल इमीग्रेशन स्क्वायर (जहां पहली बार भारतीय मजदूर आये थे), शां-दे-मार्स का रेसकोर्स और शामरेल की सतरंग धरती—ये सब मारीशस को और सुंदर बनाते हैं। शामरेल-जैसी सतरंगी धरती दुनिया भर में शायद कहीं नहीं है। आधे बीघे के क्षेत्र में रंग-बिरंगी धरती की परतें हैं और जब सूरज की किरणें उन पर पड़ती हैं तब सारे रंग इंद्रधनुषी हो उठते हैं।

मारीशस सुंदर समुद्र-तटों से भरा पड़ा है। कहीं भी चले जाइए अनंत आकाश से मिलता हुआ महासागर बिछा पड़ा है। उसका सौंदर्य देखकर आंखें फटी रह जाती हैं। बड़े-बड़े कोरल शंख और समुद्री जीवों तथा मछलियों को यहां के किनारों पर मजे में देखा जा सकता है।

मारीशस के सौंदर्य को वहां का सांस्कृतिक जीवन और समृद्ध करता है। 'सेगा' यहां का मुख्य नृत्य है। वास्तव में यह अफ्रीकी जनता का लोकनृत्य था, लेकिन अब मारीशस की परंपरा और संस्कृति का प्रतीक बन गया है। इसे सभी नाचते हैं। 'सेगा' नृत्य बहुरंगी है। साधारण नाच से लेकर भाले-बर्छी के करतब, आग पर चलना और भारतीय आदिवासियों की तरह अपने शरीर को छेदना, ये सब 'सेगा' नृत्य के अंग हैं।

कुल मिलाकर मारीशस में निश्चित होकर मजे में समय व्यतीत किया जा सकता है। हरिण के सिवा यहां कोई और जंगली जानवर नहीं है। कीड़े-मकोड़े भी इस द्वीप तक नहीं पहुंच पाये। जीवन-स्तर अच्छा है और कर्मचारियों को वेतन भी भारत की तुलना में काफी मिलता है। यहां की जनता फ्रेंच, अंगरेजी और भारतीय सभ्यता से प्रभावित है, इसलिए इसे पूर्व और पश्चिम का मिश्रित द्वीप कहा जा सकता है। यहां की जनता और सरकार अपने देश की राजनीतिक स्थिति मजबूत बनाने के लिए संघर्षरत हैं और यही तो जीने और आगे बढ़ने के चिह्न हैं। ●

"क्यों बहन, क्या अपने हाथ से खाना बनाने में बहुत किफायत होती है?"

"बेशक! क्योंकि मेरे पति विवाह से पहले जितना खाते थे, अब उसका आधा भी नहीं खाते।"
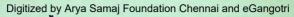
मानव का स्वभाव है कि वह एक न एक दिन संसार की सर्वश्रेष्ठ वस्तुओं से भी ऊब जाता है। किसी भी प्रकार की एकरसता, चाहे वह साहित्य में हो या संगीत में, उसे उबा देती है। यही कारण है कि कभी-कभी गरिष्ठ स्वादिष्ट भोजन की अभ्यस्त चटोरी-जिह्वा भी भुने चने या सत्तू के लिए ललक उठती है। बहुत वर्ष पूर्व, मैंने अपने पिता के एक विदेशी मित्र की, ऐसी ही निराभरण शैंटी देखी थी, जो वहुत कुछ अंश में, हमारी भारतीय झोपड़ी का ही परिमार्जित रूप थी। मेजर व्हिटवर्न, ओरछा महाराज के उन मुंहलगे दरवारियों में थे, जिन्हें उनके उदार शासन ने रहने की प्रत्येक सुविधा उपलब्ध करा दी थी, किंतु अपनी ही इच्छा से वे उस शैंटी में रहने चले आये थे। साधारण मिट्टी गारे से बनी, उन दीवारों में, बियर की रिक्त बोतलें उलटी कर भीतर तक ऐसे भर दी गयी थीं कि केवल उनका पिछला भाग ही दीवार पर, कलात्मक गोलाई से उभर आया था। कमरे की मेज कुरसियों के स्थान पर बबूल, वरगद और आम्रविटपों के मोटे तने धरे रहते थे, कहीं एक चिलम उलटी कर टांग दी गयी थी और कहीं दो सूप संयुक्त कर, बनाया गया लैंपशेड! संभवतः, वह इस युग का आदि डिसकोथीक था। उसे ही देखकर, महाराज अपने किले के वैभव से भी ऊबने लगे और उन्होंने भी शहर से दूर, एक शैंटी का नर्माण करवाया, नाम धरा 'बैकुंठी'। बैकुंठी की

• शिवानी

उस सादगी में भी, राजसी आभिजात्य की सुस्पष्ट छाप थी, समृद्धि का गौरव। स्वेच्छा से ही वानप्रस्थी बन गये ओरछाधीश की विनयशीलता, एक अनजान अतिथि को भी पग पग पर, स्वयं अवगत करा देती कि उस सहज परिवेश में रहने चला आया पथिक, साधारण पथिक नहीं है, वह महलों का वासी रह चुका हैं। किंतु, आज हमारे महलों के वासी, कभी-कभी अपने ओछे आचरण, रुचि एवं व्यवहार से, यह प्रमाणित कर देते हैं, कि वे और जहां से भी आये हों, महलों से नहीं आये। थोथे चने की भांति, वे केवल घने ही नहीं बजते, टूटकर बिखरने पर, उनका घुन-लगा खोखलापन, आंखों को आहत भी कर जाता है। इस प्रसंग में, मुझे बचपन में सुना अपने पिता, और उनके एक भृत्य का वार्त्तालाप स्मरण हो आता है। लछुआ, हमारे ग्राम कसून का ढोली था। विवाह, जन्म, जनेऊ के अवसरों पर उसे ढोल बजाने बुलाया जाता और अपनी ढमा-ढम थपेड़ों का नेग कमा, वह फिर गांव लौट जाता। मेरे पिता, तब रामपुर नवाब के गृहमंत्री थे। रियासती आचार-संहिता के अनुसार, उन्हें साफा बांधना पड़ता था। वे साफे जयपुर से मंगवाये जाते और कड़ी कड़क की गयी कलफ में सधे वे साफे, उन पर फबते भी खूब थे।

लछुवा ढोली, एक दिन, स्वामी के-से ही साफे बांधने को ललक उठा। 'हुजूर'
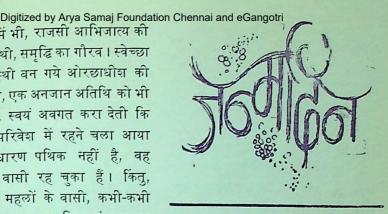
उसने हाथ बांधकर कहा—'एक ऐसा ही साफा मुझे भी दे दिया जाये—' 'साफा तो मैं दे दूंगा लछुआ' मेरे पिता ने हंसकर कहा—'पर सिर कहां से लायेगा ?'

बात ठीक ही थी। इसमें कोई संदेह नहीं कि साफे के साथ-साथ, ऐसे सिर का होना भी आवश्यक है जिस पर वह फब सके। आज, सिर कैसा भी क्यों न हो, यदि साफा है तो उसे बांधा अवश्य जाता हैं, भले ही वह फूहड़ और बेमेल क्यों न लगे। नवीन समृद्धि, विजया के मद की भांति, उसे ही अधिक बौरा देती है, जिसने उसे पहले कभी चखा न हो। वन्या के से वेग में, इस नवीन समृद्धि की धारा, अपने स्वामियों को निरंतर बहाती चली जाती है। जितना ही वेग, आकस्मिक और प्रखर होता है, उतना ही भौंड़ा और खोखला प्रदर्शन होता है उनके नवीन वैभव का! ऐसा ही प्रदर्शन, कभी-कभी चित्त को वितृष्णा से भर देता है। एक-एक लाख की लागत के बने शयन-कक्ष, चांदी के द्वार या पुत्री के विवाह पर वितरित किये ताम्रपत्री-निमंत्रण-पत्र, मधुयामिनी मनाने विदेश गयी जोड़ी की उड़ान, नक्खास की चोर बाजार से खरीदे गये चार-चार हजार के झाड़फानूस, इन सबमें नवीन समृद्धि की परिष्कृत रुचि मुखर नहीं होती। मुखरित होता है, उनकी समृद्धि का अश्लील भौंड़ापन! समृद्धि एवं आभिजात्य, वैभव एवं विनयशीलता एक दूसरे के लिए, सोने में सुहागे का-सा ही महत्व रखते हैं।

अभी कुछ वर्ष पूर्व, नैनीताल में एक ऐसे ही नवीन समृद्धि से महिमान्वित परिवार की प्रतिवेशिनी बनने का सौभाग्य मुझे भी प्राप्त हुआ था। काशीपुर के पास उनका बहुत बड़ा फार्म तो था ही, पंजाब के एक प्रसिद्ध गुरुद्वारे के भी वे प्रबंधक थे। बच्चे नैनीताल के अंगरेजी स्कूलों में, कई वर्षों से, एक ही कक्षा में विशेष योग्यता प्राप्त कर रहे थे! मेरे अभागे सेव के पेड़ का, शायद ही कोई सेव उनकी अचूक निशानेबाजी से क्षत-विक्षत न हुआ हो! बर्फ गिरती तो उनके 'स्नोबौल' की वर्षा से, हमारा बाहर निकलना दूभर हो जाता, गुलेल के निरंतर प्रहार से हमारी अधिकांश खिड़कियों के शीशे टूट चुके थे। तीनों बाल-दस्यु, फर्राटे से अंगरेजी बोलते, पूड़ी-पराठों को भी छुरी-कांटों से विदीर्ण कर मुंह में रखते और निगरगंड बछड़ों की भांति जिधर मन आता, उधर मुंह मारते निकल जाते। उनके जनक-जननी का अधिकांश समय बोट हाउस क्लब में बीतता, गृहस्थी बैरा-बटलर चलाते। प्रत्येक बैरे की वेशभूषा में, किसी फाइव स्टार होटल के बैरे की-सी ही त्रुटिहीन सज्जा रहती, वैसा ही साफा, वैसे ही चमकते मोनोग्राम। इस प्रभावशाली फौज के अतिरिक्त, उनके पास पेडिग्रीड

कुत्तों का एक दुर्लभ दर्शनीय जोड़ा भी था। कुत्तों के उल्लेखनीय कुलगोत्र का विशद वर्णन, वे प्रायः ही मुझे सुनाती रहतीं।

एक दिन, उनका रोबदार बैरा करीम, अपनी वर्दी के चमकीले बटन चमकाता आया और मुझे एक कार्ड थमा गया। सुनहले अक्षरों में, एक अत्यंत आकर्षक निमंत्रणपत्र पर, उनके प्रिय कुत्ते ज्यौर्जी के सातवें जन्मदिन पर, अपने कुत्ते को भेजने का सस्नेह आग्रह किया गया था। कुत्ते के साथ, मैं भी अपनी उपस्थिति से पार्टी को धन्य करूं, ऐसी भी एक लुभावनी पंक्ति अंकित थी। दुर्भाग्य से, मेरे पास कोई कुत्ता नहीं था, इसी से मैंने उनसे फोन पर ही, अपनी असमर्थता प्रगट कर, माफी मांग ली। बाहर लॉन पर, उस भव्य आयोजन की भूमिका बांधी जाती देखी, तो जीवन में पहली बार कुत्ता न पालने का दुःख हुआ। बड़ी-सी मेज पर दुग्ध-धवल चादर बिछी थी, बड़ी-बड़ी प्लेटों में, लुभावनी हड्डियां, बिस्कुट, मफिन सजाये जा रहे थे, केक की गुलाबी आइसिंग को, उत्तराखंडी डूबते रक्ताभ सूर्य की म्लान किरणें अपनी प्राकृतिक 'आइसिंग' से और भी आकर्षक बना रही थीं। उधर लोहे की चेन से बंधा ज्यौर्जी, अपनी अधीर भौं-भौं से स्वयं अतिथियों को निमंत्रित कर रहा था। एक-एक कर, नैनीताल की श्वानप्रिय बिरादरी, अपने अपने दर्शनीय अतिथियों को चेन से बांधकर पधारी। महाराज जींद के आकर्षक स्पैनियल, मदनलाल शाह के प्रसिद्ध पोमेरियन, फार्मवालों के कद्दावर ऐल्सेशियन, उधर अभागा मेजबान, स्वामिनी की 'नो-नो' को अनसुनी कर, अपने उच्चकुल की महत्ता भूलभाल, नितांत चौराहे के देशी कुत्तों के व्यवहार पर उतर आया था। स्पष्ट था, कि उसे इस विभिन्न कुलगोत्र की बिरादरी की अगवानी पर घोर आपत्ति थी। संसार का कोई भी कुत्ता, चाहे वह कैसा ही शालीन क्यों न हो, क्या कभी अपने हिस्से की बोटी के उदार वितरण को मान्यता दे सकता है? उधर अतिथियों की भी सारी पेडिग्री, बोटियों की सुगंध सूंघते ही, न जाने किस अरक्षित छिद्र से बह गयी। एक पल में ही जैसे महा-प्रलय हो गया, अतिथियों ने स्वामियों को खींचा, स्वामियों ने अतिथियों को, उधर मेजबान स्वामिनी को धकेल, मेज पर कूद, सजे केक पर आरूढ़ हो गया। प्लेटें टूटीं, हड्डियां बिखरीं, बैरे चीखे और भौं-भौं के समवेत स्वरों की गूंज, चीनापीक से टकराने लगी। मैं अपनी खिड़की से यह सारा नाटक देख रही थी। पता नहीं, बेचारे ज्यौर्जी के विगत जन्म-दिन कैसे बीते थे, पर वह जन्मदिन तो निश्चय ही ऐसा नहीं था कि कोई कहता 'ईश्वर करे यह दिन बार-बार आये!'

—६६, गुलिस्तां, लखनऊ

प्रधानमंत्री जेल में

● अखिलकुमार

"उगते सूरज का देश जापान लक्ष्मी के पुजारियों का देश है। लक्ष्मी उनके लिए धन की शक्ति की प्रतीक है जिसे वे अपनी भाषा में 'किनकेन' कहते हैं। द्वितीय विश्वयुद्ध के वाद से जापान में किनकेन का प्रधान पुजारी काकुई तनाका माना जाता रहा। जापान के लोग उसे सम्मानपूर्वक काकू-सान कहते रहे। १९७२ से १९७४ तक वह जापान का प्रधानमंत्री भी रहा।

किनकेन का पुजारी तनाका २६ जुलाई १९७६ की रात ठीक-ठाक सोया, मगर करीब दो वजे नींद टूट गयी। उसे लगा सिर पर संकट मंडरा रहा है। किंतु उसने बेचैनी पर काबू पा लिया और फिर गहरी नींद में सो गया।

आशंका पूरी उतरी

उसकी आशंका पूर्णरूपेण सही थी। सवेरे लगभग साढ़े-छह वजे एक काली कार मेजिरो में तनाका की विशाल कोठी के अहाते में घुसी और सामने दरवाजे पर आ खड़ी हुई। उसमें से दो जासूस नागरिक वेश में उतरे और दरवाजा खटखटाया। तनाका वाहर आया। आगंतुकों ने कहा: "तनाका-सान (श्रीमान तनाका महोदय), कृपा करके अभियोजक के कार्यालय चलिए, आपको पूछताछ के लिए वुलाया है।"

तनाका अभियोजक-कार्यालय पहुंचा। जिला अभियोजक रोईजी ताकासे ने कहा: "खेद है कि हमें ऐसे व्यक्ति से पूछताछ करनी पड़ रही है जो जापान का प्रधानमंत्री रह चुका है। लेकिन हम कहने को विवश हैं कि आप सच-सच जानकारी दें।" किनकेन का पुजारी समझ गया कि वात खुल गयी। उसने कह दिया: "मुझे लॉकहीड एयरक्राफ्ट कारपोरेशन से पचास करोड़ येन (जापानी-मुद्रा) मिले हैं।"

अभियोजक ने अभियोग लगाया: "जापान के विदेशी मुद्रा नियंत्रण कानूनों का उल्लंघन। आपको वंदी बनाया जाता है।" सुनते ही तनाका ने जापान की लिवरल डिमॉक्रेटिक पार्टी से त्यागपत्र लिख दिया।

जेल की कोठरी

गिरफ्तारी के वाद तनाका को तोक्यो के उत्तर-पूर्वी भाग में कोसुगे

जेल पहुंचा दिया गया। जापान की जेलों में कैदियों की श्रेणियां नहीं होतीं, न विचाराधीन बंदियों और नजरबंद लोगों के लिए कोई विशेष सुविधाएं हैं। सभी कैदियों से एक-सा व्यवहार होता है, वे राजनीतिक हों या अपराधों में पकड़े गये।

जेल की कोठरी निश्चय ही यंत्रणा-दायी है। स्नान की व्यवस्था नहीं है। तनाका को दूसरे बंदियों के साथ सप्ताह में दो बार सार्वजनिक स्नानागारों में स्नान की सुविधा थी। खाना वही जो अन्य बंदियों को मिलता है, पांच रुपये रोज से ज्यादा का नहीं।

तनाका के लिए जेल का अनुभव नया नहीं है। जापान की संसद (डायट) का सदस्य पहली बार चुने जाने के वर्ष भर बाद ही १९४८ में वह जेल की हवा खा चुका है। उस समय आरोप था कि खान-उद्योग को नियंत्रण से बचाने के लिए उसने काइउशु खनिज कंपनी से दस लाख येन रिश्वत ली है। तनाका ने अपना अपराध पहले स्वीकार कर लिया, लेकिन अदालत के सामने कहा कि रकम कंपनी से उस निर्माण कार्य के लिए पेशगी ली है जो ठेकेदार के रूप में उसे पूरा करना है। वह बरी हो गया। जेल की कोठरी से ही उसने संसद के लिए नामांकन भरा और चुन लिया गया।

अबकी बार मुश्किल पड़ी

लेकिन इस बार मामला संगीन है। जापान का बच्चा-बच्चा जानता है कि तनाका को लॉकहीड से पचास करोड़ येन किसलिए मिले हैं। लॉकहीड के अधिकारियों ने अमरीकी सीनेट को दिये गये बयानों में कबूल किया है कि उन्होंने तनाका के प्रधानमंत्री रहते जापान से विमानों के दो बड़े सौदे किये। पहला होनोलूलू में तनाका और राष्ट्रपति निक्सन की मुलाकात के वक्त हुआ। तनाका होनोलूलू जाने से पहले लॉकहीड के अध्यक्ष से तोक्यो में बातचीत कर चुका था। लौटने पर उसने मारुबेनी कंपनी के अधि-

डालर की गिरफ्त में लूरी का व्यंग्य चित्र : न्यूजवीक के सौजन्य से

कारियों और निप्पन वायुसेवा के अध्यक्ष तोकुजी वाकासा से चर्चा की और अचानक घोषणा कर दी कि जापान मैंकडानेल डगलस कारपोरेशन के विमानों के बजाय लॉकहीड के २१ एल—१०११ ट्राइस्टार विमान खरीदेगा। दूसरा सौदा जापान की राष्ट्रीय प्रतिरक्षा परिषद की ओर से किया गया। परिषद का अध्यक्ष उस समय तनाका ही था। परिषद का विचार था कि पनडुब्बी-भेदक विमान जापान में ही बनाये जाएं, लेकिन तनाका के इशारे पर अचानक फैसला हुआ कि जापान में बनाने के बजाय लॉकहीड से पी-३-सी. ओरियन विमान खरीदे जाएं। दोनों सौदे हो गये। लॉकहीड ने विमान जापान को सौंप दिये और उनकी कीमत ले ली। तनाका के दलाल मित्र योशियो कोदामा को सत्तर लाख और मारुबेनी व निप्पन के अधिकारियों को पचास लाख डालर रिश्वत मिली। कोदामा को मिले सत्तर लाख में से सतरह लाख तनाका के लिए थे। उनकी प्राप्ति उसने स्वीकार कर ली है।

काकू-सान की दास्तान

काकू-सान तनाका का जन्म जापान के होंशु द्वीप के पश्चिमी तट पर नाइगाता के छोटे-से कस्बे में १९१८ में हुआ। पिता मामूली किसान थे और धन कमाने के लिए घोड़ों का छोटामोटा व्यापार करते थे। मां जापान की एक धर्मप्राण महिला हैं, और ८५ वर्ष की अवस्था में आज भी नाइगाता में ही रहती हैं। माता-पिता की छह संतानों में तनाका अकेला जिंदा बचा। दो बरस की उम्र में उसे घातक डिप्थीरिया हुआ। वह बच तो गया पर हकलाने लगा। एक दिन अपने कुत्ते से बात करता वह पहाड़ी पर घूम रहा था। उसे महसूस हुआ कि कुत्ते से बात करने में उसकी हकलाहट गायब हो जाती है। उसने रोज कुत्ते के साथ घंटों पहाड़ों में घूमना और बातें करना शुरू कर दिया। एकांत में जाकर जोरों से चीखता और गाता।

पढ़ने में तनाका शुरू से होशियार था। दूसरी कक्षा में प्रथम रहा और कक्षा का मानीटर बन गया। परिवार आगे पढ़ाने में असमर्थ था। पंद्रह बरस का तनाका कुल बीस रुपये के बराबर जापानी मुद्रा लेकर तोक्यो चल पड़ा। चलते समय मां ने कहा: "तोक्यो में बुरे काम बिना कमाई न कर सको तो गांव लौट आना।" मगर तनाका को भले-बुरे की परवाह न थी। वह तो किनकेन के वरदानों की तलाश में था। बेचारी मां आज भी उसी नैतिकता में जी रही है। सुना कि बेटा रिश्वत लेने पर पकड़ा गया है तो रो पड़ी और बोली: "मेरे बेटे ने अपराध किया है तो दंड उसे मिलना ही चाहिए, उसे जेल में बंद कर देना चाहिए।"

तोक्यो में तनाका दिन में एक ठेकेदार का काम करता और रात को तक-

नीकी स्कूल में पढ़ता। वहां से डिग्री प्राप्त कर शाही नौसेना की प्रवेश-परीक्षा में बैठा। उसे तेरह हजार उम्मीदवारों में दसवां स्थान मिला। लेकिन उसने नौसेना में जाने के वजाय भवन-निर्माण के ठेके लेने शुरू कर दिये। १९३९ में जापान ने चीन पर आक्रमण किया। तनाका को सेना में भरती होना पड़ा। उसे मंचूरिया भेजा गया। साल भर वाद उसे निमोनिया हो गया और वह तोक्यो लौट आया। ठीक होने पर उसने फिर ठेकेदारी चालू कर दी। युद्धकाल में उसे सेना के वड़े ठेके मिले। उस समय मजदूर सप्ताह में सातों दिन काम करते थे। वह शीघ्र ही मालदार हो गया। इसी समय उसने हाना साकामोतो से शादी की। साकामोतो तलाकशुदा संपन्न महिला थी। तनाका ने न उसके तलाक-शुदा होने का खयाल किया और न इसका कि वह तनाका से उम्र में आठ वरस वड़ी है। उसने तो साकामोतो की तिजोरी के करोड़ों येन भर देखे।

संसद सदस्यता और छलांगें

महायुद्ध के वाद जापानी संसद गठित हुई। तनाका ने धन के बूते चुनाव लड़ा, मगर हार गया। अगली वार फिर लड़ा और इस वार १९४७ में जीत गया। उसकी उम्र कुल सत्ताइस वरस थी। पूरा जीवन सामने था। अगले साल उसे भ्रष्टाचार के आरोप में जेल की हवा खानी पड़ी, किंतु अपने बुद्धिकौशल से

पत्नी और बेटे के साथ काकुई तनाका

वह तीन सप्ताह में ही वाहर आ गया। जेल से ही उसने संसद के लिए नामांकन-पत्र भरा और जीत गया। तव से वह लगातार जापानी संसद का सदस्य रहा।

सत्ताइस वर्षों तक तनाका सत्ता की एक-एक सीढ़ी चढ़ता रहा—डाक-तार मंत्री, वित्तमंत्री और फिर १९७४ में सत्ता के शिखर पर जा बैठा, डिमॉक्रेटिक पार्टी के अध्यक्ष और देश के प्रधान-मंत्री के रूप में। चीन से पैंतीस वरस पुरानी दुश्मनी खत्म कर उसने दोस्ती कर ली और यूरोप तथा अमरीका से जापान का व्यापार वढ़ाने के लिए व्याव-हारिक कदम उठाये।

किनकेन : एकमात्र सहारा

तनाका अपनी वास्तविकता जानता

था। उसने अपने गुट के प्रमुख सदस्य ईइची निशिमुरा से कहा था: "मैं किस बात का अभिमान करूं। न मुझे ऊंची शिक्षा मिली न ऊंचा कुल। मुझे तो अपनी कूबत पर ही भरोसा करना पड़ता है। और मैं जानता हूं कि असली ताकत पैसा ही है।" उसने सत्ता, पद और सम्मान, सब पैसे से खरीदे। १९७२ में प्रधानमंत्री बनने के लिए साढ़े तीन करोड़ डालर खर्च किये, ठीक उतनी ही राशि कि जितनी १९६८ में निक्सन ने अमरीका का राष्ट्रपति बनने के लिए खर्च की थी। अपने दल के लोगों को खरीदने के लिए पैसा पानी-जैसा बहाया।

'कुसाई मोनो निवा फुता वो सुरु'

जापान में पुरानी कहावत है: कुसाई मोनो निवा फुता वो सुरु', यानी दुर्गंधदार पदार्थ ढक देना चाहिए। लेकिन जापान ने इस परंपरा का उल्लंघन कर किनकेन के पुजारी को उजाले में खड़ा कर दिया। तनाका के भ्रष्टाचार का भंडाफोड़ १९७४ में ही हो गया था। उसे प्रधानमंत्री पद तभी छोड़ना पड़ा था।

हुआ यह कि एक बेनाम कंपनी ने शिनानो नदी का सूखा पाट खरीद लिया। बाद में तनाका सरकार ने उस भूमि पर रेल-लाइन बिछाने और सड़क निकालने की योजना घोषित की। कोड़ियों के मोल खरीदी जमीन के दाम आकाश छूने लगे। पत्रकारों ने मामला उछाला और साबित हो गया कि कंपनी वास्तव में तनाका की थी। उसका निदेशक तनाका का भूतपूर्व सचिव था। तोक्यो की पत्रिका बुंगाई शुंजू के संवाददाता ताकाशी ताचिबाना ने नवंबर १९७४ के अंक में तनाका की संपत्ति का रहस्य खोला कि तनाका ने १९७३ में आयकर विभाग को अपनी आमदनी २ लाख ६० हजार डालर बतायी, लेकिन उसी वर्ष सवा चार लाख डालर के शेयर खरीदे। जापान के पहाड़ी स्थानों पर उसके तीन शाही बंगले हैं। उसके तोक्यो के बंगले में पचीस बड़े-बड़े कमरे, कई तालाब और तालाबों में तीस लाख डालर कीमत की मछलियां हैं। इस बंगले का दाम अस्सी लाख डालर आंका गया है।

जाहिर है कि यह सब संपत्ति न तो उस खेत में पैदा हुई जो तनाका का पिता छोड़ गया था और जिससे उसकी बूढ़ी मां आज भी गुजर करती है। उसने तनाका से कभी एक पैसा नहीं लिया (वह कहती है कि काकुई की कमाई बेदाग नहीं है), न ठेकेदारी से। इसके पीछे तो लॉकहीड-जैसे न जाने कितने भ्रष्टाचार हैं। तनाका की मां ने कहा भी, "मैंने तो अपने इकलौते बेटे के लिए बहुत ज्यादा कभी नहीं चाहा। मैं तो अब भी इंतजार कर रही हूं कि वह धान के खेत में काम करने के लिए लौटकर मेरे पास आ जाएगा।"

—७/९८, आजादनगर, जयप्रकाश रोड, अंधेरी (पश्चिम), बंबई-५८

१. एक लोहे की जंजीर टूटने पर उसके पांच टुकड़े हो गये। इनमें एक टुकड़े में ७, दूसरे में ६, तीसरे में ५, चौथे में ४ और पांचवें में ३ कड़ियां थीं। लुहार से कहा गया कि वह सभी टुकड़ों को पुनः जोड़ दे। बताइए, कम से कम कितनी कड़ियां खोलने से वह इन टुकड़ों को जोड़ सकेगा?

२. नीचे दी हुई आकृति में कुल कितने वर्गाकार चौक हैं?
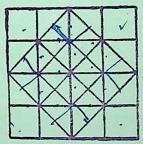
३. पुराणों में सप्तद्वीप का वर्णन है। क्या आप इन सप्त द्वीपों के नाम बता सकते हैं?

४. हिंदी में पहला आधुनिक एकांकी कौन-सा माना जाता है? वह कब प्रकाशित हुआ था?

५. यूरोप में किस राजा का शासन-काल सबसे अधिक रहा?

६. भारत इस बार सुरक्षा परिषद का सदस्य चुना गया है। क्या आप बता सकते हैं कि इससे पहले कितनी बार और कब भारत सुरक्षा परिषद का सदस्य रह रह चुका है?

७. द्वितीय विश्वयुद्ध में (क) जरमनी के आत्मसमर्पण और (ख) जापान के आत्मसमर्पण के समय ब्रिटेन का प्रधानमंत्री कौन था?

८. वह कौन-सी नदी है जो जेनेवा झील में एक ओर गिरती है और दूसरी ओर से पुनः निकलकर बहती है?

९. किन दो देशों के बीच की सीमा मुख्यतया ४९वीं अक्षांश पर स्थित है?

अपनी बुद्धि पर जोर डालिए और यहां दिये प्रश्नों के उत्तर खोजिए। उत्तर इसी अंक में कहीं मिल जाएंगे। यदि आप सारे प्रश्नों के सही उत्तर दे सकें तो अपने सामान्य ज्ञान को श्रेष्ठ समझिए, आधे से अधिक में साधारण और आधे से कम में अल्प। —संपादक

जिस कार्य को आसानी से करने की इच्छा हो उसे पहले परिश्रम से करना सीखना चाहिए। —जॉनसन

अहं की जितनी अधिक तुष्टि की जाती है वह उतना ही अधिक अतृप्त रहता है। —फ्रैंकलिन

यदि आप मालिक हैं तो कभी-कभी आंखों पर पट्टी बांध लिया करें और यदि आप नौकर हैं तो कभी-कभी कानों में उंगली दे लिया करें। —फुलर

राजनीति-जैसा जुआ और कोई नहीं है। —डिजरायली

अत्यधिक सौभाग्य के क्षणों में ही मनुष्य की सबसे बड़ी परीक्षा होती है। —ल्यू वालेस

आलस्य मनुष्य को जितना जर्जर बनाता है, उतना अन्य कोई चीज नहीं। —बुलवर

हाथ-पैरों में जंग लगने से यह कहीं अच्छा है कि थककर बेकार हो जाएं। —कंबरलैंड

जो दुनिया को हिलाना चाहता है, उसे पहले अपने को ही गतिशील बनाना चाहिए। —सुकरात

१०. सौर-मंडल में सबसे गरम ग्रह कौन-सा है ?

११. पृथ्वी की परिधि और व्यास कितना है ?

१२. मरीजों को आपरेशन आदि के लिए बेहोश करने में क्लोरोफार्म का इस्तेमाल सबसे पहले किसने और कब किया था ?

१३. किस अंतर्राष्ट्रीय संगठन के झंडे में पांच वृत्त एक-दूसरे से जुड़े हुए दिखाये गये हैं ?

१४. किसी अन्य देश की यात्रा करने के लिए 'वीसा' तथा 'पासपोर्ट' की आवश्यकता होती है। इन दोनों में क्या अंतर है ?

१५. नीचे दिये गये चित्र को ध्यान से देखिए और बताइए यह क्या है ?
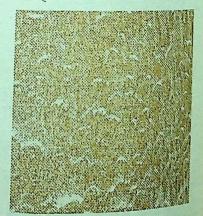
'ब्लैकहोल' की सीमा-रेखा में

• रविरंजन पांडेय

अनुमान है कि हमारे ब्रह्मांड में लगभग एक अरब आकाशगंगाएं हैं। एक आकाशगंगा में सौ अरब तारे होते हैं। सूर्य एक तारा है और पृथ्वी एक ग्रह। ग्रह वे हैं जो किसी तारे की परिक्रमा करते हैं। पृथ्वी के अलावा आठ ग्रह और हैं—बुध, शुक्र, मंगल, बृहस्पति, शनि, यूरेनस, नेप्चून और प्लूटो। ये नौ ग्रह सूर्य के चारों ओर अपनी-अपनी अंडाकार कक्षा में घूमते हैं। चंद्रमा पृथ्वी का उपग्रह है। वृहस्पति के तेरह उपग्रह हैं, शनि के दस, यूरेनस के पांच, नेप्चून व मंगल के दो-दो। बुध और शुक्र के उपग्रह नहीं हैं। प्लूटो के किसी उपग्रह का अभी पता नहीं चला। कृत्रिम उपग्रह मानव द्वारा निर्मित हैं। इनका उपयोग अंतरिक्ष के अध्ययन में किया जाता है। 'आर्यभट्ट' इसी तरह का एक कृत्रिम-उपग्रह है। हमारी पृथ्वी का व्यास लगभग १२७०० कि. मी. है। चन्द्रमा का व्यास पृथ्वी का एक चौथाई और सूर्य का व्यास पृथ्वी से लगभग सौगुना है। सूर्य और नौ ग्रहों से 'सौर-परिवार' बनता है।

'ब्लैकहोल' तारे के विकास की अंतिम अवस्था

आकाश में दूरी का माप प्रकाशवर्ष है। एक वर्ष में प्रकाश जितनी दूरी तय करे वह एक प्रकाशवर्ष। एक
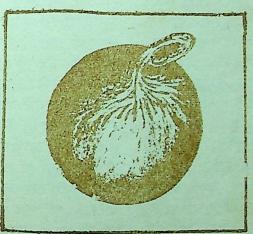
प्रकाशवर्ष में दस हजार अरव (१ के आगे तेरह शून्य) कि. मी. होते हैं। सूर्य से पृथ्वी तक प्रकाश आने में सिर्फ आठ मिनट लगते हैं। हमारी आकाशगंगा का आकार दीपावली पर चलाये जानेवाले पटाखों की फिरकनी-जैसा है। व्यास है लगभग एक लाख प्रकाशवर्ष और मोटाई दस हजार प्रकाशवर्ष।

कितना अथाह, अनादि और अनंत है हमारा ब्रह्मांड।

कल्पना कीजिए, एक अंतरिक्ष-यात्री अपने रॉकेट में बैठा हमारी आकाशगंगा से बहुत दूर ब्रह्मांड की किसी और आकाशगंगा की सैर कर रहा है। अचानक उसे लगता है कि वह रॉकेट को जिधर ले जाना चाहता है, उधर नहीं जा रहा है। रॉकेट के सारे यंत्र बेकार हो चुके हैं और रॉकेट स्वतः ही किसी अदृश्य शक्ति द्वारा एक निश्चित पथ की ओर बढ़ रहा है।

रॉकेट 'ब्लैक होल' की सीमा रेखा में कदम रख चुका है। अब वह 'ब्लैक होल' की तरफ खिंचता ही जाएगा। इसके साथ ही रॉकेट व उसके यात्री का क्षय भी होता जाएगा। वे क्रमशः सिकुड़ते जाएंगे। इस प्रक्रिया में उनका घनत्व बढ़ता जाएगा और 'ब्लैक होल' में समाने के बाद दोनों पूर्णतः अस्तित्वहीन हो जाएंगे।

यह 'ब्लैक होल' क्या है?

'ब्लैक होल' एक तारे के विकास-क्रम की बिलकुल अंतिम अवस्था है। 'ब्लैक होल' अपने विकास की प्रारंभिक अवस्थाओं में एक बहुत बड़ा तारा (दानव तारा) था, जो अपने विकास के अंत में अत्यधिक बंधी हुई संहति में सिकुड़ चुका है। उसकी गुरुत्वाकर्षण शक्ति इतनी ज्यादा है कि प्रकाश की किरण भी उसके गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र से बाहर नहीं आ पाती।

अगर 'ब्लैक होल' को देखने के लिए किसी प्रकाश-स्रोत से प्रकाश भेजा जाए तो 'ब्लैक होल' उस प्रकाश को फौरन पकड़ लेगा और हमें कुछ नहीं दिखायी देगा——दिखायी देगा एक छिद्र—काला छिद्र, जो कुछ नहीं है। केवल यही है 'ब्लैक होल'।

'ब्लैक होल' को युग्म तारे में से एक तारा माना गया है। 'ब्लक होल' अपने पड़ोसी तारे के पदार्थ को अपनी विलक्षण गुरुत्वाकर्षण-शक्ति द्वारा खींचता रहता है। खिंचने की प्रक्रिया में पदार्थ गैस बन जाता है। यह गैस इतनी गरम होती है कि उसमें विस्फोट होने लगते हैं, जिससे एक्स-रे उत्सर्जित होती है। यही एक्स-रे यह संकेत करती है कि इस गैस-मंडल में कहीं 'ब्लैक होल' है।

तारे के विकास का अंतिम चरण

आइंस्टीन का सापेक्षवाद सिद्धांत भी, जो अति सूक्ष्म पदार्थों के बीच गुरुत्वाकर्षण से संबंधित है, 'ब्लैक होल' की उपस्थिति की सूचना देता है। उसके अनुसार 'ब्लैक होल' किसी तारे के विकास-काल का अंतिम चरण है, जहां पर गुरुत्वाकर्षण-बल पूरी तरह हावी हो जाता है और प्रत्येक

वस्तु को अपनी ओर खींचने लगता है।

आइंस्टीन के सिद्धांतानुसार प्रकाश की किरण में संहति यानी द्रव्यमान होता है। यदि आइंस्टीन सही है तो 'ब्लैक होल' के धरातल से ऊपर की ओर फेंकी गयी प्रकाश की एक किरण जबर्दस्त गुरुत्वाकर्षण द्वारा पीछे खींच ली जाएगी, ठीक उस तरह जैसे हमारी जमीन से ऊपर को फेंकी गयी गेंद पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण द्वारा खींच ली जाती है और वापस पृथ्वी पर आ जाती है।

गुरुत्वाकर्षण-शक्ति का रहस्य

'ब्लैक होल' की इस जबर्दस्त गुरुत्वाकर्षण-शक्ति का कारण क्या है? गुरुत्वाकर्षण-बल में सिर्फ आकर्षण ही होता है। वस्तु जितनी ज्यादा स्थूल (सघन) होगी उसका आकर्षण-बल उतना ही प्रबल होगा। चूंकि 'ब्लैक होल' का घनत्व अत्यधिक है, फलतः गुरुत्वाकर्षण असीमित हो जाता है।

'ब्लैक होल' की उत्पत्ति के बारे में प्रसिद्ध तारा-भौतिकशास्त्री किप एस. थ्रोन और नोवीकोव ने लिखा है, "आधुनिक गणनाओं के फलस्वरूप हम देखते हैं कि जो तारे अपने विकासकाल के अंतिम चरणों में हैं, यदि १.२ सौर द्रव्यमान (सूर्य के द्रव्यमान का १.२ गुना) से ज्यादा बढ़ जाते हैं तो उन्हें एक बृहत् तारे की तरफ फट जाना चाहिए। बृहत् तारों का फटना दो चीजें छोड़ सकता है—एक विस्तीर्ण गैस का बादल और एक शेष 'तारा'। यदि शेष 'तारे' का द्रव्यमान २ सौर-द्रव्यमान से कम है तो वह एक न्यूट्रान तारा (जिसका घनत्व नाभिकीय स्तर का होता है') बन जाएगा और यदि २ सौर द्रव्यमान से ज्यादा है, वह एक 'ब्लैक होल' बनेगा।"

पिछले ७-८ वर्षों में 'ब्लैक होल' का 'सैद्धांतिक रूप से उपस्थित होना' भौतिक-शास्त्रियों को काफी चौंकानेवाला सिद्ध हुआ है। पिछले ७५ वर्षों में आइंस्टीन के व्यापक सापेक्षवाद को कभी चुनौती नहीं दी गयी किंतु 'ब्लैक होल' के संभावित अस्तित्व ने एक बहुत बड़ा प्रश्न-चिह्न

ब्लैकहोल उस चारदीवारी से घिरा है जिसकी सीमा पर प्रवेश का बोर्ड है लेकिन बाहर का नहीं
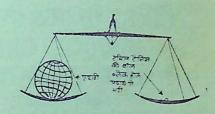
लगा दिया है।

'ब्लैक होल' के संबंध में प्रायोगिक रूप से कुछ जानने के लिए अमरीका की 'नेशनल एरोनॉटिक्स ऐंड स्पेस एडमिनिस्ट्रेशन' (नासा) ने 'उहुरू' नाम का पहला खगोलिक कृत्रिम उपग्रह बनवाया जिसे इटली के एयरो स्पेस रिसर्च सेंटर से १२ दिसंबर, १९७० को अंतरिक्ष में छोड़ा गया। 'उहुरू' ने अपने 'रेडियो टेलिस्कोपों' से ऐसे २०० तारा स्रोतों का पता लगाया जो एक्स-रे उत्सर्जित करते हैं। इन स्रोतों में प्रमुख थे—हरक्यूलिस एक्स-१, सैंतौरस एक्स-३, सिग्नस एक्स-१, सिग्नस-एक्स-३ आदि। इसमें वैज्ञानिकों का सबसे ज्यादा ध्यान आकर्षित किया सिग्नस एक्स-१ ने। खगोलशास्त्रियों का विचार है कि सिग्नस एक्स-१ के केंद्र में एक 'ब्लैक होल' अवश्य है, क्योंकि अध्ययन द्वारा सिग्नस एक्स-१ में 'ब्लैक होल' से संबंधित वही लक्षण पाये गये, जो सैद्धांतिक रूप से पहले घोषित हो चुके थे। 'सिग्नस एक्स-१' की दूरी पृथ्वी से लगभग ८००० प्रकाश वर्ष (७५ लाख अरब कि. मी.) अनुमानित की गयी है।

'ब्लैक होल' के लिए कई मॉडलों के प्रारूप सामने रखे गये हैं। कुछ मॉडल आइंस्टीन के सिद्धांत के आधार पर दिये गये हैं और कुछ स्वतंत्र रूप से। सबसे

ज्यादा स्वीकृत मॉडल 'डिस्क-मॉडल' हैं।

'डिस्क-मॉडल' के अनुसार 'ब्लैक होल' एक सीमा क्षेत्र से घिरा है, जिसका आकार एक 'डिस्क' (चक्रिका) की भांति है। डिस्क के केंद्र के पास एक 'ब्लैक होल' माना गया है। 'ब्लैक होल' के पास डिस्क की मोटाई २ किलोमीटर है जबकि व्यास लगभग १० लाख किलोमीटर है। 'डिस्क मॉडल' में 'ब्लैक होल' के नजदीक एक बड़ा तारा माना गया है (सिग्नस एक्स-१ के पास जो बड़ा तारा माना गया है उसका नाम H D E 226868 है) इसी तारे के पदार्थ को ब्लैक होल खींचता रहता है। यही पदार्थ गरम होकर गैस के रूप में 'ब्लैक होल' के चारों ओर 'डिस्क' का रूप ले सीमा-क्षेत्र निर्धारित करता है। खिंचनेवाली गैस अत्यधिक गरम हो एक्स-रे उत्सर्जित करने लगती है। 'डिस्क मॉडल' को प्रस्तुत करने का श्रेय लैबडेव इंस्टीट्यूट, मास्को के जैल'डोविच और नोवीकोव को जाता है।

सबसे चमकीला लेकिन अदृश्य

यह सही है कि 'ब्लैक होल' अभी ७-८ वर्ष पूर्व ही प्रकाश में आया है, लेकिन सन १७९८ में वैज्ञानिक लाप्लास ने 'ब्लैक होल' होने की संभावना व्यक्त की थी। लाप्लास ने लिखा था कि—"एक चमकीला तारा, जिसका घनत्व पृथ्वी के घनत्व के बराबर और व्यास सूर्य के व्यास का २५० गुना है, अपने महान गुरुत्वाकर्षण के फलस्वरूप अपनी किसी किरण को हम तक नहीं पहुंचने देगा। अतः यह बिलकुल संभव है कि इस कारण से ब्रह्मांड का वह सबसे चमकीला तारा हमें दिखायी न दे।"

यदि 'ब्लैक होल' से आनेवाली किरणों को ग्रहण कर लिया जाए तो बहुत कुछ पता लगाया जा सकता है, किंतु अभी हमारे पास इतने ग्रहणशील दूरदर्शक नहीं हैं जो उतनी दूर से आनेवाली गुरुत्वीय तरंगों को ग्रहण कर सकें। अभी ऐसे ही दूरदर्शक उपलब्ध हैं जिनकी ग्रहणशीलता की सीमा हमारी आकाशगंगा तक ही सीमित है। स्टेनफोर्ड, मास्को और लुई-जाना स्टेट यूनिवर्सिटी में इससे भी ज्यादा ग्रहणशील दूरदर्शक बनाये जा रहे हैं और भविष्य में 'ब्लैक होल' तक की पहुंचवाले दूरदर्शकों के बनने की संभावना है और तब 'ब्लैक होल' का अध्ययन बहुत सरल हो जायेगा।

सैद्धांतिक रूप से 'ब्लैक होल' के क्षेत्र में भौतिक शास्त्री काफी आगे निकल चुके हैं जबकि प्रयोगात्मक-भौतिक-शास्त्री बहुत पीछे हैं। 'ब्लैक होल' को सैद्धांतिकों ने अपना मनोरंजन बना लिया है। इसीलिए किसी ने उक्ति दी है—'सैद्धांतिकों के लिए ब्लैक होल स्वर्ग है और प्रयोगकर्ताओं के लिए नरक।" इस उक्ति में इतना और जोड़ा जाना चाहिए कि 'और 'ब्लैक होल' का अध्याय तभी पूरा होगा जब नरकवाले अपनी तपस्या से स्वर्ग को प्राप्त कर लें।'

—१८/१३३,
पटेलनगर, अलीगढ़-२०२००१

रोगी को बता दीजिए कि वह मर रहा है

● डॉ. कुसुम अग्रवाल

मृत्यु जीवन का एक ऐसा कटु सत्य है जो सृष्टि के आरंभ से अभी तक रहस्य बना है। विभिन्न समय व देशों में बहुत लोगों ने प्रयत्न किया परंतु फिर भी गुत्थी सुलझी नहीं। मृत्यु की सचाई ने मनुष्यों को भौतिक संसार से विमुख कर ईश्वर की ओर अग्रसर किया तो बहुत लोगों को भौतिक सुख को ही अंतिम सत्य मानने की प्रेरणा प्रदान की। मृत्यु केवल मरनेवाले का जीवन नहीं हरती, वह मृतक के प्रेमीजन पर भी अमिट प्रभाव छोड़ जाती है। मनुष्य ने धर्म और दर्शन के जरिये मृत्यु को समझने की चेष्टा की परंतु मृत्यु की भयावहता कम न हो सकी। वैज्ञानिकों ने मृत्यु पर विजय पाने के लिए हाथ-पैर मारे, वे भी असफल रहे।

कहीं-कहीं मृत्यु का आघात इतना गहरा होता है कि व्यक्ति का जीवन असामाजिक बन जाता है। इस आघात का प्रभाव कम करने व मृत्यु की सचाई को सामान्य व सहज रूप से स्वीकार करने के लिए पाश्चात्य मनोवैज्ञानिकों ने बहुत-से प्रयत्न किये हैं। और, अब तो इस विषय से संबंधित मनोविज्ञान की एक नयी शाखा ही बन गयी है जिसे 'थैनेटॉलॉजी' या 'मृत्यु का अध्ययन' कहते हैं।

थैनेटॉलॉजी का मुख्य उद्देश्य है, रोगी व रोगी के पारिवारिक सदस्यों के लिए मृत्यु की भयावहता कम करना। अमरीका के डॉ. कुबलर इस क्षेत्र में विशेष ख्याति-प्राप्त वैज्ञानिक हैं। उन्होंने इस विषय पर बहुत लेख लिखे हैं और विश्व भर में कई स्कूलों, अस्पतालों, धार्मिक संस्थाओं आदि में व्याख्यान भी दिये हैं। उनकी पुस्तक 'ऑन डेथ एण्ड डाइंग' इस विषय की सर्वमान्य पुस्तक है। अमरीका के ही डॉ. आस्टिन एच. कुत्शर कोलंबिया विश्वविद्यालय के मेडिकल स्कूल में थैनेटॉलॉजी पर एक कोर्स पढ़ा रहे हैं। उनका कहना है कि ऐसे अध्ययन-सत्रों, व्याख्यानों व सामूहिक वाद-विवादों से मनुष्य को आज काफी लाभ व सहायता मिल रही है जो दो वर्ष पूर्व संभव न थी। यही नहीं, विषय की लोकप्रियता के कारण अमरीका में प्रायः अस्पतालों, चर्च आदि धार्मिक संस्थानों व विश्वविद्यालयों के मनोविज्ञान-विभागों में मृत्यु से सामंजस्य पर संगोष्ठियां होती रहती हैं।

मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि परिवार में हुई मृत्यु का प्रभाव कम करने का

एक तरीका यह है कि परिवार के सभी सदस्य इस विषय में ईमानदारी बरतें। कहने का तात्पर्य है कि रोगी को उसकी बीमारी की गंभीरता के विषय में ज्यादा से ज्यादा बता दिया जाए और दूसरे सदस्यों को भी इस बारे में अपनी भावनाएं खुलकर व्यक्त करने का अवसर मिले। रोगी को बीमारी की गंभीरता के विषय में बता देने से रोगी मृत्यु के सबसे बड़े दुःख 'भयानक-अकेलेपन' की भयानकता कम महसूस करेगा। मनोवैज्ञानिकों के अनुसार सबसे आदर्श स्थिति तो यह है कि रोगी ही वह सबसे पहला व्यक्ति हो जिसे मालूम हो कि वह मरनेवाला है। रोगी को उसकी भावी मृत्यु के विषय में बता देने से सबसे बड़ा लाभ यह होगा कि वह दूसरों से सहायता मांगने या उनकी सेवा-सुश्रूषा स्वीकार करने में अपराधी-भावना महसूस नहीं करेगा और साथ ही, अपनी भावनाएं व दुःख रोकर या अन्य माध्यम से खुलकर व्यक्त कर सकेगा। इस संदर्भ में मुझे आपबीती याद आती है। मेरी मां (सास) बीमार थीं। उनकी देखभाल के लिए मैं रात-दिन उनके साथ अस्पताल में रहती थी। वे दुखी थीं कि अपने बच्चों के लिए कुछ करना तो दूर, हर समय उन्हें ही कष्ट देती रहती हैं। इसी भावना से वह कोशिश करतीं कि बच्चों को कम से कम परेशान करें और ज्यादा से ज्यादा कष्ट स्वयं झेल लें। उन्हें मालूम होता कि बच्चों से उनके भौतिक संपर्क का क्रम बहुत शीघ्र ही टूट जानेवाला है तो शायद उन्हें मेरे द्वारा की गयी सेवा के प्रति अपराधी-जैसी भावना न होती और जरूरत पड़ने पर कोई भी बात मुझसे निःसंकोच कह सकती थीं।

प्रश्न है कि रोगी को उसकी भावी

मृत्यु का संदेश कैसे दिया जाए ? इस संबंध में पहली आवश्यक बात है कि रोगी को उसकी बीमारी की गंभीरता के विषय में बताने से पूर्व डॉक्टर से उसकी स्थिति के विषय में निर्णयात्मक रूप से पूछ लेना चाहिए । दूसरा ध्यान यह रखा जाए कि रोगी को उसकी निकट मृत्यु के विषय

में शनैः शनैः व बहुत ही मनोवैज्ञानिक ढंग से बताना चाहिए क्योंकि जीवन से निराशा की स्थिति में कभी-कभी रोगी आत्महत्या पर उतारू हो जाता है । तीसरी बात है कि रोगी को अपनी सही स्थिति जानने की उत्सुकता है या नहीं ? रोगियों को जीवन के अंतिम क्षण तक बीमारी से ठीक होने की आशा रहती है। ऐसी स्थिति में व्यर्थ ही आशा नहीं तोड़नी चाहिए । रोगी स्वयं इस संबंध में प्रश्न करे तो सारी स्थिति सही-सही बता देनी चाहिए ।

अमरीका की मानसिक स्वास्थ्य की राष्ट्रीय संस्था के मनोवैज्ञानिक डॉ. गोल्ड्स्टन का कहना है कि पारिवारिक सदस्यों को मृत्यु के निकट पहुंच रहे रोगी के सामने कभी झूठी हंसी या खुशी व्यक्त नहीं करनी चाहिए क्योंकि इससे रोगी का डर और चिंता बढ़ जाती है । पारिवारिक सदस्यों को ऐसे रोगी की जिसे मालूम हो कि वह बचेगा नहीं, इच्छाएं पूरी करनी चाहिए।

कभी-कभी जब रोगी दूसरे व्यक्तियों का कर्जदार होता है तब मृत्यु का पूर्वाभास उसे अंदर ही अंदर कचोट डालता है कि वह जीवन रहते उधार न चुका सकेगा। उस स्थिति में रोगी पारिवारिक सदस्यों से उधारी चुकाने की बात कहे तो पारिवारिक सदस्यों को रोगी का जीवन रहते ही वह कार्य कर देना चाहिए कि जिससे रोगी मरते समय तो उधार के बोझ और फलस्वरूप आत्मग्लानि से मुक्ति पा सके।

मनोविशेषज्ञ इस पर प्रायः एकमत हैं कि यदि रोगी माता-पिता घातक बीमारी से पीड़ित हैं तो बच्चों को बीमारी के विषय में जितना संभव हो और जितना वे समझ सकें, बता देना चाहिए । इससे मृत्यु का आघात उनके लिए आकस्मिक तुषारापात नहीं होगा । साथ ही वे जान सकेंगे कि मृत्यु अवश्यंभावी है और माता या पिता की मृत्यु का तात्पर्य है उनसे हमेशा को

विछुड़ना, न कि घंटे-दो घंटे या दिन-दो दिन का विछुड़ना। मनोवैज्ञानिकों के मत में बच्चों को मृत्यु के विषय में कभी भी गलत नहीं बताना चाहिए, न बेमतलब कहानियां गढ़नी चाहिए कि तुम्हारी मां सोने गयी है आदि। बच्चों पर इसका मनोवैज्ञानिक प्रभाव यह भी हो सकता है कि वे नींद से डरने लगें। यही नहीं, बच्चों को मृत्यु की धार्मिक व्याख्या भी नहीं बतानी चाहिए क्योंकि इससे बच्चों के मन में, जिन्हें धर्म के विषय में कुछ नहीं मालूम, अनायास भय की भावना आ सकती है। माता-पिता की भावी मृत्यु के विषय में सचाई बताने पर न केवल बच्चों वरन माता-पिता पर भी अच्छा प्रभाव पड़ेगा। कभी-कभी बच्चों में यह भावना घर कर जाती है कि माता-पिता की बीमारी का कारण वे ही हैं। बीमारी की सही जानकारी उन्हें इस अपराधी-भावना से मुक्ति दिला देगी। फलस्वरूप माता-पिता की बीमारी के समय वे उन्हें ज्यादा खुश रख सकेंगे।

डॉ. गोल्ड्स्टन का कहना है कि शर्करावेष्ठित मृत्यु कभी-कभी बच्चों का जीवन तक बरबाद कर देती है। न्यूयार्क के एक व्यापारी का कहना है कि उनकी लड़की थी तो केवल तीन वर्ष की पर जब उनकी पत्नी बीमार हुई तो लड़की ज्यादा से ज्यादा समय अपनी मां के निकट रही और मां को बर्फ चुसाती रही। इससे लड़की को शनैः-शनैः आभास होने लगा कि मां

बुद्धि-विलास के उत्तर

१. तीन (सबसे छोटे टुकड़े की तीनों कड़ियां खोलकर उनसे शेष चारों टुकड़ों को जोड़ सकता है), २. ३२ चौक, ३. जंबु, कुश, प्लक्ष (गोमेद), शाल्मलि क्रौंच, शाक, पुष्कर, ४. 'एक घूंट' : जयशंकर प्रसाद, १९२९ ई., ५. लुई चौदहवां (फ्रांस)—७२ वर्ष (१६४३–१७१५ ई०) ६. तीन बार ('७२-'७३, '६७-'६८, '५०-५१'), ७. क. चर्चिल, ख. एटली, ८. रोन नदी, ९. संयुक्त राज्य अमरीका तथा कनाडा, १०. बुध (४५० डिग्री सेंटीग्रेड), ११. परिधि—४०, २३२ कि. मी., व्यास—१२,८७४ कि. मी., १२. सर जेम्स सिंपसन, १८४७, १३. ओलंपिक कमेटी, १४. 'वीसा' उस देश से प्राप्त किया जाता है जहां की यात्रा करना हो, 'पासपोर्ट' उस देश से मिलता है जिसका कि यात्री नागरिक हो, और वह उस देश के नियमों के अंतर्गत उस नागरिक को विदेश-यात्रा की अनुमति देता है। 'वीसा' किसी अन्य देश में यात्रा की अनुमति देनेवाला प्रमाण-पत्र है, जो उस देश की सरकार देती है।
१५. बालू पर लहरों के चिह्न।

कोलगेट डेन्टल क्रीम से सांस की दुर्गंध रोकिये... दंतक्षय का दिनभर प्रतिकार कीजिये !

वैज्ञानिक परीक्षणों से यह सिद्ध हो चुका है कि १० में से ७ लोगों के लिए कोलगेट सांस की दुर्गंध को तत्काल खत्म कर देता है क्योंकि एक ही बार दांत साफ़ करने पर कोलगेट डेन्टल क्रीम मुंह में दुर्गंध और दंतक्षय पैदा करने वाले ८५ प्रतिशत तक कीटाणुओं को दूर कर देता है। और बच्चों को इसका पिपरमिंट जैसा स्वाद बहुत पसंद है।

Colgate DENTAL CREAM

Colgate

STOPS BAD BREATH FIGHTS TOOTH DECAY ALL DAY

अधिक सफ़ेद दांतों, अधिक स्वस्थ मसूढ़ों व मुंह में अधिक ताजगी के लिये कोलगेट टूथ ब्रश इस्तेमाल कीजिये। १६ विभिन्न किस्मों में— आपके परिवार में हरेक के लिए अनुकूल!

ज्यादा साफ़ व तरोताज़ा सांस और ज्यादा सफ़ेद दांतों के लिए...कोलगेट खरीदिये

DC.G.56 HN

बहुत बीमार हैं। और जब मां की मृत्यु हुई तो मां व बच्ची दोनों को ही ज्यादा परेशानी नहीं हुई। सभी देशों में लोग प्रायः यही चाहते हैं कि बच्चों को मां-बाप की मृत्यु की भनक न पड़ने पाये क्योंकि वे इतने छोटे हैं कि मां-बाप की मृत्यु का दर्द सह नहीं सकेंगे। जबकि कुछ विख्यात मनोवैज्ञानिकों के अनुसार, बच्चों को दाह-कर्म में भी शामिल करना चाहिए जिससे मृत्यु उनके लिए भीषण रहस्य न बनी रहे और वे भी सबके दुःख में अपना दुःख बंटा सकें। बच्चे कभी-कभी बड़ों से ज्यादा समझ से काम लेते हैं।

यदि रोगी पति या पत्नी में से एक है तो स्थिति और भी गंभीर होती है। पति की घातक बीमारी व भावी मृत्यु की कल्पना से ही पत्नी भय व शोक के मारे शिथिल हो सकती है और सचाई सह न सकने के कारण पति के पास तक नहीं आती। इससे पति व पत्नी दोनों को ही अधिक कष्ट होगा। अतः मनोवैज्ञानिक गर्नी के अनुसार पति या पत्नी को अपने मन से मृत्यु का भय निकालना होगा और किसी एक के बीमार होने पर ज्यादा से ज्यादा उसके निकट रहना होगा जिससे रोगी शांति से मर सके और जीवित साथी को इसका पश्चाताप न हो कि मरते समय उसके साथ न रह सका।

माता-पिता को भी बच्चे की मृत्यु के समय बहुत धैर्य से काम लेना चाहिए। कभी-कभी बच्चे की मृत्यु पर पिता को मां से ज्यादा कष्ट होता है क्योंकि स्त्री अपने दुःख को रोकर प्रगट कर देती है परंतु पुरुष अंदर ही अंदर घुटता रहता है। मनोविशेषज्ञों का सुझाव है कि बच्चे या पत्नी की मृत्यु पर पुरुष थोड़े आंसू बहा ले और दुःख सह सकने की सामर्थ्य का झूठा बहाना छोड़कर अपना दुःख सह ले तो इससे मृत्यु की भयावहता उसके लिए कम हो जाएगी और वह स्थिति से समायोजन करने में समर्थ हो सकेगा। दुःख को अंदर ही अंदर पीने से भयानक शारीरिक या मानसिक बीमारी भी हो सकती है, जैसे——भीषण सिरदर्द, इनसोमनिया आदि। कुछ लोग मृतक के ही लक्षण अपना लेते हैं। उदाहरणार्थ——यदि किसी की मृत्यु पेट के कैंसर से हुई तो उन्हें भी पेट-दर्द की बीमारी हो जाएगी।

तात्पर्य यही है कि मृत्यु अवश्यंभावी है और देर-सबेर सभी को एक न एक दिन जाना है तो क्यों न प्रारंभ से ही ऐसे प्रयत्न किये जाएं कि कोई व्यक्ति ज्यादा विचलित न हो। मृत्यु जीवन का एक धर्म है और हर व्यक्ति (शिशु, युवा या वृद्ध) में मृत्यु और मृत्यु के परिणामों को समझने व सह सकने की पूर्ण क्षमता होनी चाहिए। मृतक की याद में घुलते रहने से पारिवारिक सदस्य न केवल स्वयं का जीवन नष्ट करेंगे वरन् इससे मृत आतमा को भी कष्ट होगा। मृत्यु को सामान्य व सहज रूप में समझने के प्रयत्न हों। **——४७०९ सी. वाल्डेन पोंडर रॉली (स. रा. अ.)**

अमरीका में आयकर की चोरी

● आकाश

"मैंने तुम्हें एक जरूरी काम से बुलाया है," गंजे रिचर्ड जेफ ने सिबिल कैनेडी से कहा। आगे बोला, "तुम शीघ्र ही वहामा राज्य (द्वीप) में नसाऊ जाओ और वहां के कैसिल बैंक एंड ट्रस्ट लिमिटेड के कार्यालय से बैंक के खातेदारों की सूची की रोलोडैक्स फाइल लाकर मुझे दो।"

सिबिल ने दो-तीन दिन में नसाऊ जाने की तैयारी कर ली। वहां पहुंचकर सिफारिशी पत्रों के आधार पर नौकरी भी प्राप्त कर ली। मैनेजर ने सिबिल को पहले ही दिन फाइलें संभालने का काम दिया जिससे कि वह बैंक के रेकार्ड से भलीभांति वाकिफ हो जाए। सिबिल यह देखकर चकरा गयी कि बैंक में हर क्लर्क की मेज पर एक रोलोडैक्स फाइल है। उसने धीरज से काम लिया और खातेदारों के पतों की रोलोडैक्स फाइल का पता लगा ही लिया और उसे अच्छी तरह पहचान लिया। शाम को होटल लौटकर उसने अगली दोपहर के हवाईजहाज से मियामी की सीट बुक करायी और घूमने निकल गयी। देर से लौटी और खाना खाकर सो गयी।

अगले दिन वह निश्चित समय पर बैंक में पहुंची और काम में मशगूल हो गयी। लंच के समय सब लोग इधर-उधर हो गये तो सिबिल ने पतों की रोलोडैक्स उठायी, मोड़ी और पर्स में रख कर बाहर निकली। सामने आती टैक्सी को हाथ दिया। उसमें बैठकर हवाई अड्डे पहुंची। विमान छूटने को था। सिबिल प्रशिक्षित जासूस थी, फिर भी घबराहट से वह पसीने में तर हो गयी। राम-राम करते मियामी पहुंची। हवाई अड्डे पर रिचर्ड जैफ अगवानी के लिए मौजूद था,

जैफ ने सिबिल को पसीने से तर देखकर आश्चर्य व्यक्त किया। पूछा, "दूसरे लोग तुमसे ज्यादा कपड़े पहने हैं, फिर भी उन्हें पसीना नहीं आ रहा। तुम्हें क्या हो गया है?" सिबिल मुस्करायी। बोली, "दूसरे किसी मुसाफिर के पर्स या ब्रीफकेस में कैसिल्स के खातेदारों की रोलोडैक्स फाइल तो नहीं है?"

जैफ को प्रसन्नता हुई कि सिबिल ने अपना काम एक ही दिन में कर लिया। बात कुल इतनी थी कि १९६७-६८ में

अमरीका के आयकर विभाग (इंटरनल रेवेन्यू सर्विस) को भनक पड़ी कि उसके गोरे धनकुबेर अपने काले डालर धोने के लिए बहामा के कैसिल्स बैंक में भेज रहे हैं। उसने 'आपरेशन ट्रेडविंड्स' के नाम से अभियान शुरू किया जिसका उद्देश्य काले डालरों की धुलाई के तरीकों का पता लगाना था। और यह मालूम करना था कि अमरीकी धनकुबेर किस तरह करों की चोरी कर रहे हैं। रिचर्ड जैफ इसी खुफिया अभियान का सूत्रधार था।

स्विट्जरलैंड में बैंकखाते

बहामा से बैंक के खातेदारों की फाइल लाना भले कठिन न रहा हो, लेकिन स्विट्जरलैंड के बैंकों में अमरीकी धनकुबेरों के खातों का पता लगाना इतना आसान न था। वहां के बैंक खातेदारों के नाम से खाते नहीं रखते। वे उन्हें कोड नंबर दे देते हैं और कोड नंबर का खाता खोल देते हैं।

समस्या हल करने के लिए जैफ ने कुछ फर्जी नामों से स्विट्जरलैंड के सभी बैंकों को पत्र लिखे कि हम आपके यहां खाता खोलना चाहते हैं। हमें खाता खोलने की विधि और ब्याज-दर के बारे में सूचित करें। सब बैंकों से उत्तर जल्दी ही आ गये। स्विस बैंकों ने उत्तर भेजे तो सादे लिफाफों में थे, किंतु प्रत्येक ने उन पर डाक टिकट छापने के लिए अपनी फ्रैंकिंग मशीन इस्तेमाल की थी। जैफ ने प्रत्येक बैंक के लिफाफे से उसकी मशीन का नंबर उतार लिया।

बायें से। हैंलोबेल, बोल्स्टेन औफ्ट, कैंटर
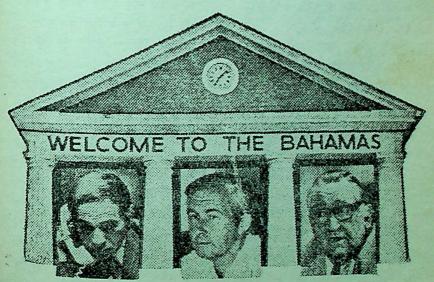
अब आयकर विभाग ने डाकविभाग से कहा कि स्विट्जरलैंड से आनेवाली समस्त डाक की जांच उसे करने दी जाए। बात मान ली गयी। जैफ के दस्ते ने बैंकों के फ्रैंकिंग मशीन-नंबरों के आधार पर पता लगा लिया कि कौन-से लिफाफे किस बैंक से आये हैं। आयकर विभाग को मालूम हो गया कि अमरीका के किन व्यापारियों और दूसरे धनपतियों ने आयकर से बचने के लिए स्विस बैंकों में अपने खाते खोले हैं.।

करों से बचने के रास्ते

अमरीकी धनपतियों ने, और इनमें व्यापारी ही नहीं संपन्न डॉक्टर, वकील, कलाकार, सिने-अभिनेता, अभिनेत्रियां आदि भी शामिल हैं, करों की अदायगी से बचने के लिए ऐसे-ऐसे रास्ते अपनाये हैं कि सोचकर दिमाग की नसें तन जाती हैं। अमरीका के आयकर अधिकारी मंजूर करते हैं कि पिछले आठ वर्षों से उन उपायों की खोज करते रहने पर भी वे अभी तक उन सबको नहीं समझ सके।

अमरीका के समीप बहामा राज्य ऐसा ही है जहां करों की दर बहुत नीची है। वहां बैंक-खातों के मामले में स्विस बैंकों से भी अधिक गोपनीयता बरती जाती है। कुल साढ़े तेरह हजार आबादी के इस छोटे से देश में पंद्रह हजार व्यापारिक कंपनियां और पचीस बैंक हैं। वहां संवाद भेजने और प्राप्त करने के सुभीते के लिए चौदह हजार कंपनियों ने टेलेक्स मशीनें लगा रखी हैं। छोटे से द्वीप पर व्यापार का लंबा-चौड़ा जाल बिछ गया है। वकीलों, हिसाबनवीसों, लेखा-परीक्षकों, कर-सलाहकारों और साहूकारों की पूरी पलटन की पलटन वहां जमी है। बहामा की राजधानी नसाऊ में तैनात अमरीकी राजदूत का अनुमान है कि वहां की कंपनियों में कम से कम डेढ़-सौ खरब डालर का वार्षिक लेनदेन होता है। इसमें अधिकांश धन गैरकानूनी होता है जो धुलाई के लिए वहां आता है। बहामा सरकार किसी से नहीं पूछती कि धन आया कहां से ?

कैसिल्स वहां सबसे बड़ा बैंक है। दरवाजे पर ही बोर्ड लगा है—'व्यक्तिगत बैंकर्स'। न कोई तिजोरी है, न नगदी लेनदेन, न चौकीदार-पहरेदार। बस हिसाब-किताब भर रखा जाता है। बैंक की पूंजी के करीब पचीस करोड़ डालर अमरीका के विभिन्न बैंकों में रखे गये हैं। ये बैंक कैसिल्स के चैकों और हुंडियों का भुगतान करते हैं। बैंक के संचालन में अमरीका के दो वकीलों—कैंटन कटर और पॉल हैलीवैल का हाथ है।

१९७१ में आयकर विभाग के जासूस जैफ की मुलाकात नार्मन कैसपर से हुई। कैसपर उन दिनों खानगी तौर पर जासूसी का धंधा करता था और एक हवाई कंपनी में नौकरी भी। जैफ के कहने पर वह बहामा जानेवाले और वहां से विमान द्वारा आनेवाले यात्रियों

की सूचियां नियमित रूप से तैयार करने लगा। आयकर विभाग को पता लगने लगा कि वहामा के व्यापार से अमरीका के कौन लोग जुड़े हैं।

साल भर वाद कैसपर आयकर विभाग के जासूसों में बाकायदा शामिल हो गया। वह दवाइयों के बारे में खोजबीन करनेवाले इंस्पेक्टर के रूप में बहामा आने-जाने लगा। उसने कैसिल्स के अधिकारी वोल्स्टेनक्रौफ्ट के साथ दोस्ती बढ़ा ली।

१९६२ के अंत में एक दिन वोल्स्टेनक्रौफ्ट ने कैसपर से कहा, "मुझे एक काम से शिकागो जाना है। रास्ते में एक रात मियामी रुकूंगा। वहां मुझे एक औरत की जरूरत पड़ेगी।" कैसपर को पता लग चुका था कि कैसिल्स के हिसाव-किताव में कुछ उलझन आ गयी है। इसलिए वोल्स्टेनक्रौफ्ट कैंटर से परामर्श करने शिकागो जा रहा है। उसने मियामी में सिबिल कैनेडी से बात की। फिर वोल्स्टेनक्रौफ्ट को बताया कि वह सिबिल के साथ शाम और रात गुजार सकता है।

वोल्स्टेनक्रौफ्ट सीधा सिबिल के घर पहुंचा। वहां से सिबिल को साथ लेकर की-बिस्केन के सैंडबार रेस्तरां में। कैसपर जानता था कि रेस्तरां तक जाने-आने और भोजन में कम से कम तीन घंटे लगेंगे। सिबिल ने उसे आश्वस्त कर दिया था कि वह वोल्स्टेनक्रौफ्ट को तीन घंटे तक रेस्तरां में ही उलझाये रखेगी।

सिबिल कैनेडी

इन तीन घंटों में कैसपर सिबिल के घर पहुंच गया और वोल्स्टेनक्रौफ्ट का ब्रीफकेस सिबिल के कमरे से उठा ले गया। एक लुहार से उसे खुलवाया और पास के एक मकान में लेजाकर उसकी सारी फाइलों के फोटो उतार लिये। फिर फाइलें वापस रखकर ब्रीफकेस बंद कराया और सिबिल के कमरे में जैसा रखा था, वैसा ही रख दिया।

दस्तावेजों के रहस्य

वोल्स्टेनक्रौफ्ट रेस्तरां से लौटकर सिबिल के पहलू में सो गया। इस बात से बेखबर

कि जिस औरत की बांहों में सो रहा है, वह मंजी हुई जासूस है। उसके ब्रीफकेस के दस्तावेजों के जो फोटो उतार लिये गये थे, वे अमरीकी अर्थव्यवस्था के इतिहास में एक बड़े रहस्य का उद्घाटन करने के लिए बहुत काफी थे।

चित्रों में कैसिल्स के ३०८ खातों की नकलें थीं। अधिकांश मुवक्किल कैंटर और हैलीवैल के हैं। दस्तावेजों के आधार पर कैंटर पर आरोप लगाकर मुकदमा चलाया जा रहा है कि उसने अमरीका के नेवादा नगर में कार्यालय और निवास की एक इमारत की खरीद के सिलसिले में धोखाधड़ी की योजना बनाकर अपने मुवक्किल को दी। इमारत की कीमत इक्यानवे लाख डालर थी। इमारत के मालिक ने अपने वकील कैंटर की सलाह पर बहामा में एक ट्रस्ट की स्थापना की और एक बेकार खदान के अधिकार उसे सौंप दिये। इसके बाद उसने इक्यानवे लाख डालर की इमारत खरीदार के हाथों चौरासी लाख डालर में बेच दी। खरीदार ने बाकी सात लाख डालर इमारत के मालिक द्वारा बनाये गये बहामा के ट्रस्ट को देकर उससे बेकार खदान के अधिकारपत्र खरीद लिये। इस तरह मालिक को पूरी रकम मिल गयी। चौरासी लाख अमरीका में और सात लाख अमरीका से बाहर कर-मुक्त बहामा में। इन सात लाख डालरों पर अमरीकी कर वह बचा ले गया।

आयकर विभाग ने कुछ और दस्तावेजों के आधार पर कैलीफोर्निया के प्रसिद्ध कर-सलाहकार हैरी मारगोलिस पर आरोप लगाया कि उसने अपने मुवक्किलों को चौदह लाख डालर के लेन-देन पर वाजिब कर देने से बचाया है। उसके मुवक्किलों में बारबरा मैकनायर-जैसी गायिका, सैमी ली–जैसा ओलंपिक चैंपियन गोताखोर, अनेक प्रमुख डॉक्टर और वकील हैं।

अब मारगोलिस ने कैरेबियन द्वीप-समूह स्थित एक डच उपनिवेश एंटिलेस के बैंकों और ट्रस्टों से इस तरह के जाली दस्तावेज बनवाये जिनसे सिद्ध होता है कि उसके मुवक्किलों ने उनसे ऋण लिया है। अब मारगोलिस इन मुवक्किलों की आमदनी में से इन ऋणों का ब्याज काटकर मुनाफे का हिसाब बनाता है। इस प्रकार उसके मुवक्किलों को ब्याज की राशि पर आयकर बच जाता है, जबकि वास्तव में ब्याज का कोई सवाल ही नहीं उठता। वह तो खातों से ऊपर ही ऊपर निकाल लिया जाता है और काला धन बन जाता है। इसे धुलाई के लिए दूसरे देशों में भेज दिया जाता है।

धुलाई के तरीके

चोरी, डाके, जुए, व्यभिचार, अवैध व्यापार, रिश्वत आदि से कमाये गये अरबों डालर के स्वामी बहामा–जैसे देशों में व्यापारिक निगमों, कंपनियों और ट्रस्टों की स्थापना कर लेते हैं। फिर इन निगमों, कंपनियों, ट्रस्टों से ऋण लेकर

अमरीका में धंधा शुरू कर देते हैं या जमीन और इमारतें खरीद लेते हैं। इस तरह बहामा–जैसे देशों में उनके काले धन की धुलाई हो जाती है। वह सफेद बनकर उन्हें वापस मिल जाता है। वे अपना धंधा मस्ती से चलाते रहते हैं। इस प्रकार के ऋणों को अमरीका में बैक-टु-बैक लोन, अर्थात पीठ-पीछे के कर्जे कहा जाता है। ऋण देनेवाला और लेनेवाला दोनों एक ही व्यक्ति। अमरीका में वह ऋण लेनेवाला होता है कि जिससे ब्याज मुनासिब व्यावसायिक खर्च में डालकर कर चुकाने से बचा जा सके।

कर से बचने के लिए वहां एक और भी रास्ता अपनाया जाता है। अमरीका में एक कानून है जिसके अनुसार यदि किसी कंपनी को घाटा हो तो वह घाटे की रकम कर की रकम में से घटा सकती है। अमरीकी व्यापारी इस नियम का भरपूर लाभ उठाते हैं।

हाल ही एक मामला ऐसा सामने आया है जिसमें तीन साझियों ने मिलकर पचास-पचास हजार डालर लगाये और डेढ़-लाख डालर की रकम से बहामा में एक ट्रस्ट कायम किया। इस ट्रस्ट ने एक दूसरे ट्रस्ट से डेढ़ लाख डालर की रकम और उधार ले ली।

इसके बाद तीन लाख डालर लगाकर उन्होंने जानबूझकर एक ऐसी फिल्म बनायी जो असफल हो गयी। इस प्रकार तीनों साझियों को तीन लाख डालर का घाटा यानी एक-एक लाख डालर अपने आयकर की रकम में से काटने का अधिकार मिल गया। उधर उन्हें ऋण देनेवाले ट्रस्ट की रकम डूब गयी क्योंकि उसके पास सिवा फिल्म के और कुछ गिरवी नहीं रखा गया था। फिल्म असफल हो जाने से आमदनी का सवाल ही नहीं था।

अकेले १९७४-७५ के वर्ष में दक्षिणी फ्लोरिडा के डेड परगने में तेरह करोड़ डालर की जायदाद ऐसी रकम से खरीदी बतायी गयी है जो विदेशी बैंकों से उधार ली गयी है।

सरकार इस सौदे पर खीझी जरूर है लेकिन कर कुछ नहीं पा रही। वह अच्छी तरह जानती है कि तेरह करोड़ डालर की यह रकम बाहर से धुलवाकर मंगाया गया काला धन है। जिन लोगों ने यह रकम मंगायी है, वे सब के सब अमरीका के जानेमाने और बदनाम तस्कर हैं। वह यह भी जानती है कि इस रकम से जो जायदाद खरीदी गयी है, उसके किराये पर पूरा आयकर भी उसे नहीं मिलेगा क्योंकि उसका एक बड़ा भाग ब्याज के नाम पर मुनाफे में से घटा दिया जाएगा। लेकिन वह तब तक कुछ नहीं कर सकती जब तक अमरीकी कांग्रेस (संसद) इस बारे में कोई प्रभावशाली कानून न बना ले।

—डी-६४९ मंदिर मार्ग,
नयी दिल्ली-१

त्वचा का विकार ल्यूकोडरमा

● डॉ. जगन्नाथ शर्मा

शरीर के सौंदर्य में त्वचा सबसे महत्त्वपूर्ण है। त्वचा से ही शरीर को रंग-रूप और विशिष्टता मिलती है। सभी की त्वचा का रंग एक-सा नहीं होता। एक ही परिवार में भिन्नता होती है। त्वचा की रचना पर, रूप-रंग स्थान, जलवायु, रहन-सहन, खान-पान का गहरा प्रभाव पड़ता है।

त्वचा की रचना और कार्यों के बारे में अनेक खोजें हुई हैं, लेकिन अभी तक पता नहीं चल पाया कि व्यक्ति-विशेष की त्वचा का रंग खास तरह का क्यों होता है। त्वचा को रंग एक रंजक पदार्थ प्रदान करता है — 'मैलानिन'। 'मैलानिन' का रंग बादामी या काला होता है। इन दोनों रंगों से नाना प्रकार के वर्ण बनते हैं, जो त्वचा के रंग के आधार होते हैं। यह रंजक पदार्थ आंख की पुतली और बालों में भी रहता है।

'मैलानिन' की कमी हो जाती है तो त्वचा में यत्र-तत्र श्वेत धब्बे पड़ जाते हैं। इसे अंगरेजी में 'ल्यूकोडरमा' या 'विटिलाइगो' कहते हैं। संस्कृत और हिंदी-भाषा में किलास, श्वित्र अथवा श्वेतकुष्ठ; पंजाबी में 'फुलवैरी' और यूनानी भाषा में 'वर्स' कहा जाता है।

आम गलतफहमी

श्वेत निशान जब चेहरे, हाथ-पैर या शरीर के खुले रहनेवाले अंगों में होते हैं तब और भी बुरे लगते हैं। इनसे रोगी के मन में हीनता आती है। हमारे देश में अज्ञान और अंधविश्वासों के फलस्वरूप बहुत से लोग इसे 'कुष्ठ' अथवा 'लेप्रोसी' का ही एक रूप समझते हैं, जो गलत है। 'ल्यूकोडरमा' और 'लेप्रोसी' में कोई संबंध नहीं है। 'लेप्रोसी' विषाणु से होती है। ल्यूकोडरमा के किसी जीवाणु का अभी तक पता नहीं चला। विषाणु से होने के कारण 'लेप्रोसी' छूत का रोग है। यह संपर्क से फैलता है। 'ल्यूकोडरमा' संपर्क से नहीं फैलता। 'लेप्रोसी' में त्वचा की संवेदनशीलता समाप्त हो जाती है। 'ल्यूकोडरमा' में ऐसा नहीं होता।

त्वचा में 'मैलानिन' की कमी के संबंध में भी खोजें हुई हैं। कहा जाता है कि त्वचा के भीतरी भाग में 'मैलेनोसाइट' नामक विशिष्ट कोशिकाएं होती हैं, जिनमें 'मैलानिन' बनता है। 'इलैक्ट्रोन माइक्रोस्कोप' से पता चला है कि श्वेत-कुष्ठ में 'मैलेनोसाइट' की संख्या में कमी नहीं होती, बस उनकी 'मैलानिन' उत्पन्न करने की क्षमता घट जाती है।

कारण का पता नहीं

मैलानिन 'टाइरोसीन' नामक एक एमिनो-एसिड से बनता है। 'टाइरोसीन' से 'मैलानिन' बनानेवाली जो एंजाइम-प्रणाली कार्य करती है उसकी सक्रियता ल्यूकोडरमा में कम हो जाती है। कुछ वैज्ञानिकों का मत है कि इस क्रिया में तांबे का भी हाथ होता है। तांबे की कमी से श्वेत निशान बनते हैं। 'मैलानिन' की उत्पत्ति का नियंत्रण 'पिट्यु-टरी' से उत्पन्न होनेवाले एक 'हारमोन' से होता है। इसका नाम है 'गैलाटोनिन'। इसमें विकार से भी ल्यूकोडरमा हो सकता है। कहा जाता है कि 'मैलानिन' की उत्पत्ति की प्रणाली जटिल है। इसलिए कहना कठिन है कि रोगी विशेष को ल्यूकोडरमा किस वजह से हुआ।

कुछ लोग ल्यूकोडरमा का कारण रक्त-विकार मानते हैं और इसे 'हीमो-ग्लोबिन' से जोड़ते हैं। यह सच नहीं है। ल्यूकोड़रमा के रोगी में 'हीमोग्लोबिन' के विकार नहीं होते और न इस तरह के विकारों की दवा लेने से यह रोग ठीक होता है। लौहयुक्त दवाओं के सेवन से विशेष लाभ नहीं मिलता।

यह रोग स्त्री और पुरुष दोनों को समान रूप से होता है। दस साल से कम और चालीस साल से ज्यादा उम्र में बहुत कम होता है। वैसे यह कोई नियम नहीं। यह रोग जन्मजात भी हो सकता है और पारिवारिक भी।

रोग के लक्षण

ल्यूकोडरमा के रोगी को किसी प्रकार पूर्वाभास नहीं होता। शुरू में त्वचा पर सफेद धारियां-सी बनती हैं अथवा छोटे-छोटे श्वेत दाने उभरते हैं। समय पाकर वे बढ़ने लगते हैं। ये धब्बे गोल या अंडाकार होते हैं। ओष्ठ, माथे, सिर, चेहरा, गरदन, हाथ-पैर, बांह और टांगों पर ज्यादातर उभरते हैं। रोग बढ़ जाता है तो संपूर्ण शरीर पर फैल जाता है। रोगग्रस्त त्वचा में उगे बाल या रोम भी श्वेत हो सकते हैं।

इन धब्बों से कोई तकलीफ नहीं होती और न जलन या खुजली। ल्यूकोडरमा का कुप्रभाव शरीर के किसी अंग पर नहीं होता और न किसी प्रकार का मानसिक विकार। मनोवैज्ञानिक कारणों से जरूर रोगी में हीनता के भाव बनते हैं। रोगियों को पेट और पाचन की शिकायतें भी होती हैं। अपच, गैस और कब्ज विशेष उल्लेख-नीय हैं। कुछ रोगियों के पेट में कीड़े पाये जाते हैं। अभी तक पता नहीं चला कि इन विकारों का ल्यूकोडरमा से क्या संबंध है। हो सकता है पाचन-क्रिया बिगड़ने से

मैलानिन उत्पन्न करने की क्रिया प्रभावित होती हो।

अथर्ववेद में उल्लेख

ल्यूकोडरमा की चिकित्सा का वर्णन अथर्ववेद में मिलता है। लेकिन उसमें वर्णित जड़ी-बूटियां और ओषधियां पहचानना अब संभव नहीं है। जैसे—

"नक्ताञ्जातास्योषधे रामे-कृष्णे-असिक्न च
इदं रजनि रजय किलासं पलितं च यत्"
—अथर्व.

(हे रामा, कृष्णा और असिता ओषधि, तू रात्रि में उगती-बढ़ती है। हे रंग देनेवाली ओषधि, तू श्वेतकुष्ठ और श्वेत केशों को रंग दे।)

रामा, कृष्णा और असिता नामक इन तीन ओषधियों के बारे में अब कुछ पता नहीं कि वर्तमान युग में ये कहीं मौजूद हैं या नहीं और हैं तो उनके वर्तमान नाम क्या हैं। हो सकता है इनमें पाये जानेवाले रंजक-पदार्थ त्वचा की उन क्रियाओं को सक्रिय करते हों जिनसे 'मैलानिन' उत्पन्न होता है।

अथर्ववेद में ही वर्णन है:

"किलासं च पलितं च निरितो नाशया पृषत्
आ त्वा स्वो विशतां वर्णः परा शुक्लानि-पातय ॥"
—अथर्व.

लोहा, तांबा और विटामिन-बहुल पदार्थ (प्रति १०० ग्राम)

क्रम-संख्या	खाद्य-पदार्थ	लोहा	तांबा	विटामिन 'ए'	विटामिन बी (मि. ग्राम)		निको-टिनिक
	अनाज	मि. ग्रा.	मि. ग्रा.	यूनिट	थाइमिन	राइबो-फ्लेविन	एसिड
१.	चना	१०.२	०.७४	३१६	०.३०	०.५१	२.१
२.	बाजरा	५.४	०.५५	२००	०.३३	०.१६	३.२
३.	दाल उड़द	९.१	०.८८	६४	०.४८	०.१८	२.४
४.	दाल मूंग	८.५	०.९७	८३	०.७२	०.१५	२.४
५.	दाल अरहर	५.८	१.२५	२२०	०.४५	०.५१	२.६
६.	गेहूं (आटा)	४.९	०.१९	४९	०.४९	०.२९	४.३
७.	मक्का	१.१	०.१९	५४	०.११	०.१७	०.६
८.	दाल मसूर	४.८	०.६६	४५०	०.४५	०.४९	१.५
९.	चावल	३.१	०.७२	०	०.०६	०.०६	३.९

चावल में विटामिन 'ए' और 'बी' दोनों कम होते हैं।

(हे ओषधि ! इस मनुष्य से किलास—श्वेतकुष्ठ——एवं श्वेतकेशपन दूर कर दें। त्वचा के श्वेत चिह्नों और श्वेत बालों को अपना रंग दे दे।)

चरक और सुश्रुत

श्लोक में किसी ऐसी ओषधि को संबोधित किया गया है जो त्वचा और बालों की सफेदी नष्ट करती है।

चरक और सुश्रुत संहिताओं में भी श्वेतकुष्ठ का यथेष्ट विवेचन है। चरक ने त्वचा के छह भाग किये हैं। बिना माइक्रोस्कोप के त्वचा की पर्तों का यह विश्लेषण आश्चर्य में डालता है। वर्तमान चिकित्सा-पद्धति में भी त्वचा की पर्तों का ऐसा ही विश्लेषण है। चरक ने ल्यूकोडरमा की उत्पत्ति त्वचा की तीसरी पर्त में बतायी है। वर्तमान ज्ञान भी यही कहता है।

शरीरे षट्, त्वचः तद्यथा——उदकधरा त्वग्बाह्या द्वितीया त्वसृग्धरा, तृतीया सिध्म किलास संभवाधिष्ठाना, चतुर्थी दद्रु-कुष्ठं संभवाधिष्ठाना, पंचमी त्वलचीविद्रश्चि संभवाधिष्ठाना, षण्ठी तु यस्यां छिन्नायां ताम्यत्यन्ध इव च तमः विशति यां चाप्यधिष्ठायां रूषि जायन्ते पर्वसु कृष्ण रक्तनिस्थूल मूलानि दुश्चिकित्स्यमानि च इति षट् त्वचः॥

चरक शारीर-७-४

शरीर में छह त्वचाएं (पर्तें)

लोहा, तांबा और विटामिन-बहुल पदार्थ (प्रति १०० ग्राम)

क्रम-संख्या	खाद्य पदार्थ	लोहा	तांबा	विटामिन 'ए'		विटामिन बी (मि. ग्राम)	निको-टिनिक एसिड
	सब्जियां	मि. ग्रा.	मि. ग्रा.	यूनिट	थाइमिन	राइबो-फ्लेविन	एसिड
१.	मटर	१.५	०.२३	१३९	०.२५	०.०१	०.८
२.	टमाटर	०.४	०.१४	५८५	०.१२	०.०६	०.४०
३.	बैंगन	०.९	०.१७	१२४	०.०४	०.११	०.९०
४.	परवल	१.७	१.११	२२५	०.०५	०.०६	२.९०
५.	लौकी	०.७	०.२०	८४	०.०६	०.०४	०.५०
६.	गाजर	२.२०	०.१३	३१५०	०.०४	०.०२	३.०
७.	आलू	०.७०	०.२०	४०	०.१०	०.०१	१.२०
८.	प्याज	१.२	०.२०	२५	०.०८	०.०२	०.५०
९.	हरा धनिया	१८.५	०.५३	११५३०	०.०५	०.०६	८.८०
१०.	पोदीना	१८.४	–	२७००	०.०५	०.०८	०.४०

लोहा, तांबा और विटामिन बहुल पदार्थ (प्रति १०० ग्राम)

क्रम-संख्या	खाद्य पदार्थ	लोहा	तांबा	विटामिन ए	विटामिन बी (मि. ग्राम)		निको-टिनिक एसिड
		मि. ग्रा.	मि. ग्रा.	यूनिट	थाइमिन	राइबो-फ्लेविन	
११.	हरी मिर्च	१.२	१.५५	२९२	०.१९	०.३९	०.९०
१२.	भिंडी	१.५	०.१९	८८	०.०७	०.१०	०.६०
१३.	टिंडा	०.९	०.१२	२३	०.०४	०.०८	०.३०
१४.	करेला	०.९	०.१७	२१०	०.०७	०.०६	०.४०
	फल						
१.	आम	१.१	०.२३	३२५०	—	—	०.३
२.	पपीता	०.५	०.२०	१११०	०.०४	०.२५	०.२०
३.	केला	१.०	०.४०	९०	०.०३	०.०३	०.५
४.	संतरा	०.१०	०.५८	१८००	०.०६	०.०२	०.४

हैं। पहली सबसे ऊपरी त्वचा उदकधरा, दूसरी असृग्धरा है। तीसरी सिध्म और किलास (श्वेतकुष्ठ) की उत्पत्ति का अधिष्ठान भूत है। चौथी दद्रु और कुष्ठ (लेप्रोसी) की उत्पत्ति का स्थान है। पांचवीं अलजी और विद्रधि का आश्रय-रूप है। छठी के निकाल देने पर मनुष्य अंधकारयुक्त हो जाता है—मूर्च्छित हो जाता है।

विश्वास यही है कि ल्यूकोडरमा

लोहा, तांबा और विटामिन-बहुल पदार्थ (प्रति १०० ग्राम)

क्रम-संख्या	खाद्य पदार्थ	लोहा	तांबा	विटामिन ए	विटामिन बी (मि. ग्राम)		निको-टिनिक एसिड
	विविध	मि. ग्रा.	मि. ग्रा.	यूनिट	थाइमिन	राइबो-फ्लेविन	
१.	नीम की पत्ती	२५.३	०.६०	४६००	०.६६	०	१.५
२.	इमली की पत्ती	५.२	२.०९	४१८	२.४	०.१७	४.१
३.	तोरई	१.६	०.१६	५०	०.०७	०.०१	०.२
४.	सेम	२.६	०.१८	५७	०.३४	०.१९	०
५.	मूली	०.७	०.२	५	०.०६	०.०२	०.५

लोहा, तांबा और विटामिन-बहुल पदार्थ (प्रति १०० ग्राम)

क्रम-संख्या	खाद्य पदार्थ	लोहा	तांबा	विटामिन ए	विटामिन बी (मि. ग्राम)		निकोटिनिक एसिड
		मि. ग्रा.	मि. ग्राम	यूनिट	थाइमिन	राइबोफ्लेविन	
५.	मौसंबी	०.७	०.१७	–	–	–	–
६.	बेल	०.६	०.२१	९३	०.१३	१.१९	१.१
७.	सेब	१.०	०.१३	–	०.१२	०.२०	०.३
८.	अनार	१.२	०.२१	–	०.०६	०.१०	०.१३
९.	सीताफल	०.३	०.८५	–	०.३३	०.४४	१.३
१०.	माल्टा	१.०	०.५१	–	–	–	–
११.	लीची	०.७	०.३०	–	०.२	०.०६	०.४

की उत्पत्ति कुष्ठ (लेप्रोसी) की पर्त से ऊपरी पर्तों में होती है। यही पर्त मैलोनोसाइट पाये जाने की है और 'मैलानिन' की उत्पत्ति का आधार-स्थल है।

उपचार

ल्यूकोडरमा का एलोपैथी में अभी तक कोई इलाज नहीं है। आयुर्वेद में जिन दवाओं का जिक्र है, उन पर आधुनिक

लोहा, तांबा और विटामिन-बहुल पदार्थ (प्रति १०० ग्राम)

क्रम-संख्या	खाद्य पदार्थ	लोहा	तांबा	विटामिन ए	विटामिन बी (मि. ग्राम)		निकोटिनिक एसिड
	कम तांबेवालें	मि. ग्रा.	सि. ग्रा.	यूनिट	थाइमिन	राइबोफ्लेविन	
१.	गोभी	१.५	०.०५	५१	०.०४	०.१०	१.०
२.	बंदगोभी	०.८	०.०८	२०००	०.०६	०.०३	०.४
३.	सलाद	२.४	०.०८	१६५०	०.०९	०.१३	०.५
४.	पालक	१०.९	०.०१	९३००	०.०३	०.०७	०.०५
५.	खीरा	१.५	०.१०	०	०.०३	०.०१	०.२
६.	तरबूज	७.९	०.०५	०	०.०२	०.०४	०.१
७.	आलूबुखारा	१.४	०.०५	१६६	–	–	०.१
८.	चेरी (लाल)	१.३	०.०२	०	०.०८	०.०८	०.३

अनुसंधान नहीं हुआ है। बावची के जरूर कुछ परीक्षण हुए हैं। यह दवा खाने और लगाने के काम आती है। बावची का तेल भी प्रयोग में आता है। बावची से वैज्ञानिक ढंग से कुछ नये तत्त्व भी निकाले गये हैं, लेकिन ऐसी कोई चीज नहीं मिली जो श्वेत-कुष्ठ के लिए रामबाण कही जा सके।

कुछ लोग तांबे के प्रयोग पर जोर देते हैं। इसका लेप होता है। कुछ चिकित्सक खिलाते भी हैं, परंतु तांबे के प्रयोग भी कारगर साबित नहीं हुए।

आयुर्वेदिक चिकित्सा में बावची और तांबे के अलावा भी अनेक जड़ी-बूटियों का जिक्र है। इन ओषधियों पर अनुसंधान होना चाहिए।

पिछले चार-पांच साल से कुछ ऐसा ही जड़ी-बूटियों पर अनुसंधान स्वयं मैंने शुरू किया है। परिणाम आश्चर्य-जनक है। उपचार में खाने और लगाने की दवाओं का प्रयोग होता है। खाने की दवा से रोग का बढ़ना रुकता है। लगाने की दवा से सफेद निशान मिट जाते हैं। इलाज में साल-छह महीने लगते हैं।

आहार कैसा हो?

ल्यूकोडरमा का रोगी क्या खाये और क्या नहीं? आयुर्वेद में जिन पदार्थों को पथ्य कहा गया है, उनमें तांबा, लोहा और विटामिन भरपूर मात्रा में होते हैं। त्याज्य पदार्थों में विशिष्ट तत्त्वों की कमी पायी जाती है। यह इस लेख में दी गयी तालिकाओं से स्पष्ट हो जाता है।

पथ्य

चना, अरहर, मूंग, उड़द और मसूर की दालें, गेहूं, बाजरा, मक्का और चावल उपयुक्त अन्न हैं। फलों में आम, पपीता, केला, संतरा और बेल उपयोगी हैं। मौसंबी, सेब, अनार, सीताफल, माल्टा और लीची में लोहा और तांबा भरपूर मात्रा में होते हैं, यद्यपि इन फलों में विटा-मिन 'ए' का सर्वथा अभाव होता है।

सब्जियों में परवल, आलू, लौकी, गाजर, प्याज, हरी मिर्च, हरा धनिया और भिंडी उपयोगी हैं। नीम और इमली के पत्तों में तांबा बहुत है, इसीलिए आयुर्वेद में नीम के पत्ते खाने पर जोर है। नीम के पत्ते से पेट और पाचन-क्रिया सुधरती है।

अपथ्य

फूलगोभी, तरबूज, आलूबुखारा, खीरा और सलाद में तांबा नहीं के बराबर होता है। बंदगोभी, पालक और सलाद में तांबा तो कम होता है लेकिन विटामिन 'ए' और लोहा अधिक होते हैं, अतः इनका उपयोग किया जा सकता है।

बहुत-से चिकित्सक लाल मिर्च और नमक का परहेज बताते हैं। लाल मिर्च से पाचन-क्रिया बिगड़ सकती है। इसके प्रभाव से 'टाइरोसीन' बनानेवाली एमिनो-एसिड (फिनाइल एलानीन) कम हो सकती है। रोगी को आम नमक के स्थान पर लाहौरी नमक खाना चाहिए। लाल मिर्च से दूर रहना जरूरी है।

—डी-२, अंसारी नगर, नयी दिल्ली

कुछ संस्मरण

देवदास गांधी
जिनके साथ बापू की निधियां चली गयीं

• वियोगी हरि

उस दिन प्रातः गंगा के तट पर खड़ा दो-तीन मित्रों से मैं बात कर रहा था, पर दृष्टि मेरी एक नवयुवक पर बार-बार चली जाती थी, जो एक के बाद एक धोतियों को बड़ी कुशलता से धो-धोकर घाट पर फैला रहा था। पूछने पर मालूम हुआ कि देवदास गांधी है वह युवक — महात्मा गांधी का कनिष्ठ पुत्र। तीन-चार बुजुर्गों की धोतियां धोकर उसने धूप में फैला दीं। लगा कि इस कला में वह कितना प्रवीण है! देखकर हम लोग स्तब्ध रह गये। खड़े-खड़े जो साहित्य-चर्चा कर रहे थे, वह इस सक्रिय सेवा के सामने नीरस प्रतीत हुई।

प्रसंग यह पटना का है, गंगा के तट पर का। सन १९१९ में पं. विष्णुदत्त शुक्ल के सभापतित्व में हिंदी-साहित्य-सम्मेलन का १०वां अधिवेशन पटना में हुआ था। उसमें भाग लेने मैं राजर्षि टंडनजी के साथ इलाहाबाद से पटना गया था। राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रति देवदास भाई की जो निष्ठा उस दिन देखी, वह उत्तरोत्तर बढ़ती ही गयी। यही कारण है कि गांधीजी ने देवदास को स्वामी सत्य-देवजी के साथ हिंदी-प्रचार के हेतु सबसे पहले दक्षिण-भारत भेजा था। राष्ट्रभाषा प्रचार के लिए उन्होंने वैसा ही काम किया जो सम्राट अशोक के पुत्र महेंद्र ने लंका में

श्री देवदास गांधी

बौद्ध-धर्म के प्रचार एवं प्रसार के लिए किया था।

देवदास भाई के साथ दिल्ली में १९३४ से मेरा काफी निकट संपर्क रहा। उसे भुलाया नहीं जा सकता। कितने ही संस्मरण हैं, जो रह-रहकर याद आते हैं।

पारसनाथजी के साथ

दिल्ली के हमारे हरिजन-निवास में देवदासजी एक लंबे समय तक रहे थे, जबकि 'हिन्दुस्तान टाइम्स' का आफिस और प्रेस दोनों नये बाजार (आज श्रद्धानंद बाजार के नाम से प्रसिद्ध) में स्थित थे। 'हरिजन-सेवक' पत्र 'हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस' में छपता था। संपादन-कार्य के सिलसिले में सप्ताह में दो-तीन दिन मैं वहां जाकर बैठता था। पारसनाथसिंहजी के साथ एक ही मेज पर देवदासजी व्यवस्था व संपादन का काम सीखते और करते थे। उम्र में पारसनाथजी बड़े थे, पर देवदासजी उनके साथ समवयस्क की तरह घुलमिल गये थे।

किसी भी प्रश्न की तह में पैठने वाले ये दोनों ही थे और विनोदप्रिय भी दोनों ही। याद नहीं आता कि कभी संपादन-विभाग या प्रेस-विभाग के किसी व्यक्ति पर वे बिगड़े हों। कार्य-कुशलता तथा व्यवहार-मधुरता और शालीनता आदि सदगुण याद आ रहे हैं आज उस जोड़ी के। फिर तो देवदास गांधी ने ही 'हिन्दुस्तान टाइम्स' का सारा भार अपने कंधों पर उठा लिया था। ऑफिस और प्रेस नयी दिल्ली में स्थानांतरित हो गये थे। हरिजन-निवास छोड़कर देवदासजी वहीं रहने लगे थे। बापू को उनका हरिजन-निवास से जाकर नयी दिल्ली में रहना अच्छा नहीं लगा था, लेकिन देवदासजी की मजबूरी थी।

साप्ताहिक 'हरिजन-सेवक' के लिए गांधीजी के लेख अंगरेजी और गुजराती के आते थे। उनका अनुवाद करने में देवदासजी की मदद मैं प्रायः लिया करता था। बापू के लेखों में काट-छांट करने का अधिकार शायद महादेव भाई से भी अधिक देवदासजी को था। याद आता है जब बापू का एक नोट 'हरिजन-सेवक' में जाने से उन्होंने रोक दिया था, और वह अंगरेजी 'हरिजन' में भी न छपे इसलिए पूना भी तार कर दिया था। बापू से मैंने जब इस बात का जिक्र किया तब उन्होंने कहा कि 'हां, देवदास ऐसा कर सकता है।' मुझे स्पष्ट हो गया कि बापू के प्रति जो निष्ठा और जो भक्ति-भावना देवदास भाई की थी वह शायद ही किसी दूसरे में देखने में आये।

अटूट भक्ति-भावना

सायंकाल की प्रार्थना में देवदास भाई कभी-कभी जिस भक्ति-भावना से और जिस मधुर स्वर से भजन गाते थे वे जैसे आज भी कानों में गूंज उठते हैं। देवदास के प्रति वात्सल्य से प्रेरित होकर कई-कई हफ्ते पूज्य कस्तूरबा भी हरिजन-निवास में रही थीं। बा, बड़ी पुत्री तारा और पुत्र

राजमोहन के साथ बैठकर जब देवदासजी बापू के आश्रम-जीवन के रोचक प्रसंग सुनाते, तब आनंद में हम सब डूब जाते थे और बार-बार सुनने को मन हो जाता था।

एक प्रसंग याद आता है, जिससे पता चलता है कि देवदासजी का अंतर कितना ममतालु, कितना सरल और कितना पवित्र था! १९५७ का २ मार्च—चि. तारा का विवाह था उस दिन। बारात कलकत्ता से आयी थी। हम सब लोग तैयारी में लगे हुए थे। नयी दिल्ली के एक भवन में विवाह संपन्न हुआ था। रात को ९ बजे के लगभग बिड़ला-हाउस में मुझे यह दुःखद सूचना फोन द्वारा मिली कि मेरी माता का स्वर्गवास हरिजन-निवास में हो गया है। काश, मैं उस घड़ी वहां उपस्थित होता! सुबह से शाम तक मैं देवदासजी के साथ था। दूसरे दिन यमुना-तट पर जब मां का दाह-संस्कार करने हम जा रहे थे, देवदासजी और उनके भाई रामदासजी वहां जा पहुंचे। 'देवदास भाई, आप यहां कैसे आ गये? तारा की विदा होनी है, और आप यहां पर हैं!' 'हरिजी, माताजी अब कब मिलनेवाली हैं! यह दुःखद किंतु पुनीत अवसर मैं कैसे छोड़ सकता था?' हम दोनों की आंखें सजल हो आयीं। दाह-संस्कार कराकर देवदास भाई दो घंटे बाद नयी दिल्ली पहुंचे। शाम को भी मेरे निवास-स्थान पर वे आये और देर तक बैठे रहे। हरिजन-निवास में मेरी मां और पूज्य कस्तूरबा के एकसाथ बैठने-उठने के प्रसंग याद करते रहे।

मेरा बड़ा भाग्य था, जो देवदासजी अपने तीनों भाइयों की तरह मुझे भी अपना बड़ा भाई मानते थे।

प्रयाग में जब पूज्य बापू का अस्थि-कलश लेकर हम पहुंचे, तब का वह पुण्य संस्मरण कैसे भूलूं? अस्थि-कलश त्रिवेणी में विसर्जित करने के लिए जब रामदास भाई ने हाथ में लिया, तब देवदास भाई ने कहा, "हरिजी, आप दोनों अपने हाथ से कलश को त्रिवेणी में विसर्जित करें।" हम तीनों तब फूट-फूटकर रो पड़े।

कहीं देखने में आता है आज वैसा निश्चल स्नेह, वैसा ममत्व और वैसी आत्मीयता?

वे दिन भी याद आते हैं, जब रात के बारह-बारह बजे तक देवदासजी, भाई धोत्रे और मैं बापू के संध्या-प्रवचनों के रिकार्ड ग्रामोफोन पर चढ़ाकर सुनते और देवदासजी उनका संपादन करते थे।

अद्भुत परिश्रम

रात के ३ बजे तक, कभी-कभी तो सुबह ४ बजे तक, 'हिन्दुस्तान टाइम्स' के संपादकीय लेखों को देवदासजी बड़े ध्यान से देखते और उसके बाद वे छपते। अद्भुत परिश्रम करते थे वे संपादन और व्यवस्था के संबंध में। परिवार के साथ रात को कोई १० बजे वे खाना खाते, और फिर मेज पर काम करने बैठ जाते थे। कभी-कभी रात के भोजन के समय वे मुझे भी बुला लेते थे। लक्ष्मी बहिन पूछतीं, 'हरिजी, आप

काफी कैसी लेंगे?' मेरा जवाब होता, 'आज तो निर्दोष ही काफी लूंगा, सदोष नहीं।' सदोष का अर्थ मैं किया करता था काफी के साथ 'दोसा' और निर्दोष का अर्थ केवल काफी, 'दोसा' नहीं। देवदासजी को इतना शौक खुद खाने का नहीं था, जितना अपने मित्रों को खिलाने का था।

आरंभ इन संस्मरणों का मैंने देवदासजी की राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रति उनकी निष्ठा से किया था। मातृभाषा गुजराती से वे किसी अंश में हिंदी को कम महत्त्व नहीं देते थे। रामचरितमानस को वे भक्ति-भाव से पढ़ते थे। 'हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस' से रामचरितमानस का रेवरेंड ए. जी. एट्किंस द्वारा अनूदित अंगरेजी संस्करण उन्होंने इसी श्रद्धाभावना से निकाला था। हिंदीवालों से भी कहीं अधिक शुद्ध वे हिंदी बोला करते थे। एक भी अंगरेजी शब्द उनके बोलने में या उनके लेखन और भाषण में नहीं आता था। शर्म आती है आज हिंदीवालों के भी मुख से अंगरेजी और हिंदी की खिचड़ी भाषा सुन-सुनकर।

देवदास भाई अकाल ही चले गये, और ले गये अपने साथ बापू की अनकही और अनलिखी अनमोल निधि को।

—एफ १३।२ माडलटाउन, दिल्ली-९

"सुना है आंटी, आप अंकल के सामने आंसुओं से घर भर देती हैं। प्लीज! यह बाल्टी भर दीजिए। मुझे रंग घोलने के लिए पानी नहीं मिल रहा है।"

लतीफ घोंघी

हमारे यहां एक डॉक्टर हैं। पूरे शहर के लिए काफी हैं। उनकी कृपा है। बीमारियां साल में दस माह धर्मशालाओं में ठहरी रहती हैं। जाने का नाम ही नहीं लेतीं। चौकीदार भगाता है तो डाक्टर साहब की चिट्ठियां ले आती हैं।

मैं बीमारियों का रिप्रजेंटेटिव हूं। थोक भी बेचता हूं, चिल्लर भी सप्लाई करता हूं। इसलिए वे मेरे अच्छे दोस्त बाद में, फेमिली-दोस्त पहले हैं। उनकी अपनी कई बीमारियां हैं। हर बीमारी के लिए दो-चार दोस्त हैं। कुल मिलाकर मैं ही उनका परमानेंट दोस्त हूं। मेरा शरीर लाइब्रेरी है। फेफड़ों में कई टी. बी. और प्लूरिसी के वाल्यूम्स बंद पड़े हैं। कुछ किताबें पाइल्स की भी हैं, जो दोस्त पढ़ने ले जाते हैं लेकिन वापस करना भूल जाते हैं।

मेरे दांत में दर्द हुआ।

आजकल बहुत लोगों को हो रहा है। दांत का दर्द अच्छा होता है। आदमी के मुंह को रेस्ट देता है। बकबक बंद करता है। भोजन-व्यवस्था के प्रति अरुचि पैदा करता है।

मैं उनके पास पहुंचा। मुंह बंद देखकर उन्होंने मेरी स्थिति भांप ली। सिद्ध डॉक्टर हैं। मुंह फाड़ने को कहा। फिर बड़ी देर तक सही दर्दशुदा जड़ें

डॉक्टर फेमिलीवाले

तलाशते रहे और अंत में गलत दांत उखाड़ दिया। मुंह बंद होने का एडवांटेज उठा लिया। तकलीफ कम नहीं हुई।

दूसरे दिन मैं फिर घटनास्थल पर पहुंच गया। अब जुबान चलाना जरूरी था। मुंह बंद रखने में खतरा था। दांत गिनती के थे। मैंने कहा "आपने गलत दांत निकाल दिया।" वे मुसकराये। बोले, "डॉक्टर गलती नहीं करते। ऐसी गलतियां मेडीकल प्रैक्टिस में 'प्रिविलेज्ड' होती हैं। मंजिल तक पहुंचने के लिए सारे असामाजिक तत्त्वों को उखाड़ना पड़ता है। उसकी जड़ें तुम्हारे मुंह की व्यवस्था को गुमराह कर रही थीं। दर्द कम करने के लिए कुछ दर्द सहना जरूरी है।" वे अच्छा भाषण देते थे।

मैंने अपनी तकलीफबयानी जारी रखी। वे एक चिमटी ले आये। चमक से इंपोर्टेड लगती थी। मेरे मुंह में कपड़ा ठूंस दिया और एक झटके से दूसरा दांत उखाड़कर किडनी-ट्रे में फेंक दिया। बोले, "देखा, जड़ कितनी मजबूत है! आखिर दांत किसका है!"

मैंने अपने उस लावारिस दांत की ओर देखा। सोचा—इससे मैंने क्या-क्या काम नहीं करवाया। दूसरों पर हंसने के लिए इसे इस्तेमाल करता रहा, पुलाव खाया, जलेबी खायी। अब बेचारा आखिरी सांस ले रहा था। बीड़ी भी पीने के काबिल नहीं था।

इलाज की प्रक्रिया जटिल थी। दर्द फिर भी कम नहीं हुआ। हालत यहां तक पहुंच गयी कि उस भले डाक्टर ने एक-एक कर अट्ठाइस दांत निकाल दिये।

अब केवल चार अक्ल-दाढ़ें मुंह में शेष रह गयी थीं। वे उन्हें भी उखाड़ फेकना चाहते थे ताकि दर्द जड़ से खत्म हो जाए। लेकिन मैं तैयार नहीं था।

इस हादसे के बाद डेंटल-सरजन का बोर्ड उतर गया। अब वे केवल सरजन थे। अपना आपरेशन-थिएटर चलाते थे। मुझसे बोले, "आपकी सुविधा के लिए मैं आपरेशन-सेक्शन डील करता हूं। कोई तकलीफ हो तो सेवा का अवसर दें।"

मैंने कहा, "मेरी आंत पहले से ही छोटी है।"

●●

उन्होंने बड़ी जल्दी धूम मचा दी। आपरेशन के माध्यम से अपने हाथ मांजते

रहे। मामूली-सी मरोड़ होती तो पेट काट देते। आंतें बाहर निकाल देते। मैं भी इस बीच कई बार छोटी-मोटी बीमारियों का शिकार हुआ, लेकिन उनके पास जाने की हिम्मत नहीं हुई, क्योंकि घर पर कुरान नहीं था और गीता भी नहीं थी।

कमाई बढ़ने लगी। नाम फैलने लगा। वे फेमिलीवाले हो गये। एक बार सब्जी-मारकेट में मुलाकात हुई। उनके साथ कोई महिला थी, जिसे वे मिसेज कहते थे। देखने में ठीक थी। कम से कम उनसे तो ठीक ही थी। बोले, "इनसे मिलो। ये चाइल्ड-स्पेशलिस्ट हैं। मेरी मिसेज हैं।" थोड़ी देर बाद पूछा, "आपके घर कितने बच्चे हैं?"

मैं डर गया। केवल चार दांत बाकी थे। इसलिए कहा, "आपके इलाज के लायक संख्या नहीं है।" उनकी मिसेज ने मेरी ओर [illegible] नजरों से देखा। बोलीं, "मैंने आपके मुहल्ले में प्रैक्टिस शुरू की है। कभी सेवा का अवसर दीजिए।"

मैं भागता हुआ घर पहुंचा। पत्नी से पूछा, "सब बच्चे घर पर तो हैं!" वह बोली, "पड़ोस में खेल रहे हैं।" मैंने कहा, "उन्हें इस तरह अकेले छोड़ना ठीक नहीं है। जानती नहीं हमारे मुहल्ले में दवाखाना खुल गया है?"

डॉक्टर साहब एक दिन घर पधारे। बोले, "आजकल हेल्दी सीजन चल रहा है।" मैंने कहा, "वह तो मैं आपकी हेल्थ देखकर ही समझ गया था।"

वे बोले, "आप मेरे चार्टेड कस्टमर हैं, इसलिए आपकी बात का बुरा नहीं मानता। दरअसल बात यह है कि आजकल हास्पिटल सूना हो गया है।"

मैंने कहा, "आपके होते हुए अस्पताल की यह हालत कैसे हो गयी?"

वे गंभीर हो गये।

मैंने टापिक बदला। सामने से उनकी गंभीरता का ट्रक आता देखकर सड़क के नीचे उतर गया। कहा, "डॉक्टरनी बाई की प्रैक्टिस का क्या हाल है?" वे बोले, "मरीज तो बढ़ गये है, लेकिन अब वे चाइल्ड-स्पेशलिस्ट नहीं रहीं।"

मैंने कहा, "शहर के बच्चों के भविष्य का क्या होगा?"

वे बोले, "ठीक ही होगा। उनके अंडर में मेरी साली काम कर रही है।"

वे गंभीर हो गये। उनके चेहरे से गंभीरता बरसकर मेरी कुरसी पर गिरने लगी। संजीदा हालत में एक सवाल किया, "अलमारी में क्या है?"

मैंने कहा, "इसमें मेरा प्राविडेंट-फंड है। दो शेल्फ फ्लू से भरे हैं। एक में ब्रांकाइटिस है, एक खाली है।"

उनका चेहरा खिल उठा। पूछा, "आप अलमारी कब खोलेंगे?"

मैंने कहा, "जब जरूरत होगी।"

उन्होंने जेब टटोली। बटुआ आदतन घर पर रह गया था। मेरी ओर ललचायी नजरों से देखते रहे, लेकिन कुछ कहने की हिम्मत नहीं हुई। जाते-जाते बोले, "कभी-कभी अस्पताल की ओर भी आ जाया करें। हमारे चेहरे पर भी रौनक आ जाएगी।"

कुछ सोचकर आखिरी सवाल किया, "क्या अब भी मुझे अपना फेमिली-डॉक्टर नहीं बनाएंगे?"

उनका आग्रह टालने की हिम्मत नहीं हुई।

अब वे मेरे फेमिली-डॉक्टर हैं। लगता है, अब मेरा परिवार, छोटा परिवार होगा।

—शारदा बिल्डिंग, बाजार वार्ड, महासमुंद, जि. रायपुर (म. प्र.)

आपके वस्त्रों में भी गुप्त यंत्र हो सकते हैं

● एडवर्ड कैनिंग

पश्चिम के लोग सदियों तक यह जानने की कोशिश करते रहे कि चीन का प्रसिद्ध रेशम कैसे बनाया जाता है। एक जमाने में उसकी कीमत सोने के मूल्य के बराबर होती थी। लेकिन चीन के रेशम का रहस्य जानने के बारे में पश्चिम के लोगों को असफलता ही मिली।

रहस्य खुला तब जब चीन की एक राजकुमारी का एक भारतीय नौजवान से प्रेम हुआ। राजकुमारी अपने प्रेमी से मिलने भारत आयी तो फूलों से सजे अपने टोप में कुछ रेशम के कीड़े भी छिपाकर ले आयी। वे कीड़े उसने अपने प्रेमी को भेंट किये। फिर चीनी रेशम के निर्माण का तरीका दुनिया भर को मालूम हो गया।

कहानी अगर सच है तो राजकुमारी और उसका प्रेमी औद्योगिक जासूसों के उस वर्ग में निश्चय ही पहले थे जिनका जाल आज समूची दुनिया में व्यापक तौर पर फैल रहा है। वैज्ञानिक और औद्योगिक जासूसी का काम आज दुनिया के सबसे ज्यादा तेजी से पनप रहे धंधों में है। इस जासूसी का प्रमुख साधन है खटमल-जितना छोटा एक सूक्ष्म इलेक्ट्रानिक यंत्र। इसके आकार के कारण इस यंत्र को 'बग' कहते हैं। यहां तक कि इसके 'बग' नाम से औद्योगिक और वैज्ञानिक जासूसी को ही 'बगिंग' कहा जाने लगा है। इतने छोटे 'बग' में भी ट्रांसमिटर मौजूद होता है। नतीजा यह कि कोई भी बात गुप्त नहीं रह पाती।

ब्रिटेन सबसे बड़ा केंद्र

'बगिंग' के रहस्य-भेदन के एक प्रमुख अमरीकी विशेषज्ञ बेन जमील मानते हैं कि इस प्रकार के जासूसी यंत्रों के निर्माण और वितरण का सबसे बड़ा केंद्र फिलहाल ब्रिटेन बन चुका है। लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि अमरीका पीछे है।

न्यूयार्क की बाब्ज-मेरिल कंपनी से प्रकाशित अपनी पुस्तक 'सीक्रेट आर्मीज' में फ्रांसीसी वैज्ञानिक और लेखक जैकी बर्ज ने अमरीका के एक दरजी का उदाहरण दिया है। यह दरजी प्रिंटेड-सर्किट ट्रांसमिटर और बैटरियां सूटों में इस प्रकार सी देने में माहिर है कि वे सामान्य सिलाई का ही एक हिस्सा मालूम पड़ें। इस दरजी के ग्राहकों में बड़ी-बड़ी कंपनियों के अध्यक्ष, निगमों के अध्यक्ष और इसी प्रकार के लोग हैं।
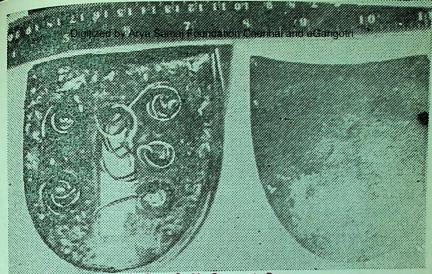
जूते के तले में छिपा ट्रांसमिटर

फैशन की दुनिया इन औद्योगिक जासूसों के लिए बढ़िया शिकारगाह है।

कुछ साल पहले पेरिस में हुए एक फैशन-शो में पुलिस ने एक महिला की तलाशी ली तो उसके जूते की एड़ी में एक छोटा-सा कैमरा छिपा मिला। अमरीका की एक फैशन-जासूस इससे भी आगे बढ़ गयी। न्यूयार्क में एक फैशन-शो के दौरान उसकी चोली में दो कैमरे पाये गये।

यह औद्योगिक जासूसी इतना बड़ा सिरदर्द बन चुकी है कि दो साल पहले ब्रिटेन के सौ से भी ज्यादा व्यापार-प्रबंधकों ने लंदन के एक होटल में इसे रोकने के तरीके खोजने के लिए एक सम्मेलन किया। सम्मेलन के दौरान 'इनफिनिटी बग' नामक एक अमरीकी यंत्र का प्रदर्शन भी किया गया। इस 'बग' की सहायता से मील भर से ज्यादा दूर के एक होटल में सामान्य टेलीफोन पर हो रही बातचीत पूरी की पूरी सुन ली गयी।

'बग' कहां नहीं!

अमरीका में तो औद्योगिक जासूसी का इतना जोर हो गया है कि हर किसी चीज में 'बग' बैठा दिया जाता है। वह गुलदस्ते में, मथानी में, चित्रों के फ्रेम में, यहां तक कि दांतों में फंसे कण निकालने के लिए इस्तेमाल होनेवाली दंतखोदनी में भी हो सकता है। एक बार भूसे से भरा एक मगर मरम्मत के लिए 'टैक्सीडर-मिस्ट' (चर्म-सज्जाकार) को भेजा गया। वहां से लौटा तो उसके भीतर एक ट्रांस-मिटर मौजूद था।

लेसर-किरणों से जासूसी

औद्योगिक जासूसी का यह 'बग' कहीं भी बैठा देना है भी बहुत आसान। गत जुलाई में इसका प्रदर्शन अनौपचारिक

रूप से ब्रिटेन की संसद में भी किया गया। विज्ञान-पत्रिका 'न्यू साइंटिस्ट' के पत्रकारों ने लेवर पार्टी के संसद-सदस्य रॉबिन कार्बेट की मदद से कोट के बटन के आकार का एक माइक्रोफोन लेवर पार्टी के एक और संसद-सदस्य टाम टारनी के कमरे में लगा दिया। कमरे में होनेवाली हर बातचीत करीब आधा किलोमीटर दूर वेस्टमिंस्टर-ब्रिज पर साफ-साफ सुनी जाने लगी। औद्योगिक जासूसी अकेले इस 'वग' से ही नहीं की जाती। एक और बहुत काम में आनेवाला तरीका लेसर-किरणों से जासूसी का है। जिस कमरे की जासूसी करना होती है उसकी किसी खिड़की पर लेसर-किरणें डाली जाती हैं। ये किरणें बातचीत की आवाज से खिड़की के कांच पर होनेवाले ध्वनि-कंपन अंकित कर लेती हैं। वार्त्ता रिकार्ड हो जाती है और किसी को कोई खबर तक नहीं हो पाती।

अनेक बार कारखानों में काम करने-वाले मजदूरों के चोगे भी चुरा लिये जाते हैं। उन कपड़ों से धूल झाड़कर उसका परीक्षण किया जाता है। इस परीक्षण से कभी-कभी उन गुप्त विधियों का पता चल जाता है जो निर्माता अपना उत्पादन तैयार करने में काम में लाते हैं।

ब्रिटेन में शिक्षकों के एक संघ ने शिकायत की कि अब तो छात्र भी अपने अध्यापकों की जासूसी करने लगे हैं। स्काटलैंड के एक आवासीय विद्यालय के भौतिकी के अध्यापक विलियम जारविस ने बताया कि एक छात्र ने ट्रांजिस्टर में जासूसी 'वग' छिपा दिया। कक्षा में उसने ट्रांजिस्टर तेज आवाज में बजाया तो वह जब्त कर लिया गया। विद्यालय के अधीक्षक ने ट्रांजिस्टर अपने अध्ययन-कक्ष में रखा। फलस्वरूप कमरे में होनेवाली हर बात वह छात्र सुनने लगा।

एक और मामले में एक मुख्य अध्यापक के टेलीफोन में 'वग' रख दिया गया और काफी दूर स्थित एक बरामदे से छात्र कमरे में होनेवाली हर बात सुनते रहे। इनमें कई बातें नितांत व्यक्तिगत थीं।

अमरीका के प्रतिनिधि-सदन की अंतर्राष्ट्रीय संबंध-समिति की एक कुरसी में एक विदेशी जासूसी 'वग' पाया गया। समिति उस समय निरस्त्रीकरण और सैनिक सहायता-जैसे नाजुक और गोपनीय विषयों पर विचार कर रही थी। लेकिन उस 'वग' के साथ जुड़ी ब्रिटेन में बनी बैटरी काम नहीं कर रही थी। इससे अमरीकी सुरक्षा के बहुत-से भेद दूसरों के हाथ पड़ने से बच गये। ●

मरीज ने कहा, "डॉक्टर साहब, मेरे दांतों में दर्द होता है।"

"आपके सभी दांत निकाल दिये जाएं तो आपकी तबीयत निश्चय ही ठीक हो जाएगी।" डॉक्टर ने कहा।

"लीजिए डॉक्टर साहब, अब तो मैं ठीक हो जाऊंगा न!" मरीज अपनी नकली बत्तीसी निकालता हुआ बोला।

सत्यदेवसिंह 'बटुक', पूर्णिया (बिहार) : प्राकृतिक चिकित्सा में गठिया का इलाज करने के लिए बहुत गरम पानी में स्नान करने के बाद एकदम बर्फ-जैसे ठंडे पानी में स्नान करने का विधान है। क्या इससे निमोनिया-जैसे रोग नहीं हो सकते?

बेशक, हो सकते हैं। इसलिए प्राकृतिक चिकित्सा के प्रयोग पुस्तकीय ज्ञान के आधार पर स्वयं ही करने की भूल नहीं करनी चाहिए। किसी योग्य चिकित्सक की सलाह से या उसके बताने पर ही इस प्रकार के उपचार करना उचित होता है। गठिया का उपचार उक्त विधि से करनेवाला चिकित्सक पहले यह जांच करेगा कि रोगी की प्रकृति, शारीरिक स्वास्थ्य की सामान्य स्थिति और उपचार के समय उसकी शारीरिक और मानसिक दशा कैसी है। अन्य बातें अनुकूल पाने पर ही वह उक्त विधि से उपचार का निर्देश कर सकता है।

लतिका शाह, वड़ोदरा (गुजरात) : कुछ कलाकार 'मूड' होने पर घंटों काम कर सकते हैं और 'मूड' न होने पर कितना भी दबाव या प्रलोभन दिया जाए, काम नहीं कर सकते। यह 'मूड' क्या बला है?

कोई कलाकृति केवल उसी समय नहीं रची जाती जबकि वह वास्तव में रची जा रही होती है। उसकी रचना-प्रक्रिया सृजन के समय से बहुत पहले मन के चेतन-अवचेतन स्तरों पर चलती रही होती है। यह प्रक्रिया सोते-जागते तथा अन्य शारीरिक एवं मानसिक कार्य करते समय भी अंदर ही अंदर चलती रहती है। यहां तक कि कभी-कभी कलाकार को भी उसका पता नहीं रहता। 'मूड' कलाकार की वह मनःस्थिति है जब उसकी रचना-प्रक्रिया ज्ञान, अनुभव, चिंतन, संवेदन और कल्पना की अवस्थाओं से गुजरती हुई अभिव्यक्ति की अवस्था तक आ पहुंचती है। इस अवस्था में आ जाने पर कलाकार को तब तक चैन नहीं मिलता जब तक वह अभिव्यक्ति कर नहीं लेता, अतः वह एकसाथ घंटों तक उसमें लगा रह सकता है। इसके विपरीत जब तक अभिव्यक्ति की वह अवस्था नहीं आती, वह प्रयत्न करने पर भी कलाकृति का सृजन नहीं कर सकता।

प्रेमकुमार शर्मा, भिवानी (हरियाणा): कुछ लोग नहाने से पहले सरसों का तेल लगाते हैं। इससे क्या लाभ है? क्या इससे रोम-छिद्र बंद नहीं हो जाते होंगे? क्या हर मौसम में तेल लगाकर नहाना चाहिए?

त्वचा की खुश्की दूर करने के लिए शरीर पर तेल लगाया जाता है, लेकिन तेल लगाने का अर्थ शरीर पर तेल चुपड़ लेना नहीं होना चाहिए। उससे शरीर की अच्छी तरह मालिश करनी चाहिए और उसके बाद कुछ व्यायाम भी अवश्य करना चाहिए, ताकि पसीना आये और रोम-छिद्र खुलें। गरमी और बरसात में, जबकि पसीना आता रहता है, त्वचा स्वतः ही चिकनी रहती है, अतः तेल-मालिश की आवश्यकता खुश्की के मौसम में (प्रायः सर्दियों में) होती है। तेल लगाकर नहानेवालों को गरम पानी और साबुन से नहाना चाहिए और यदि वे दिन भर धूल में काम करते हों तो शाम को उन्हें पुनः और बिना तेल लगाये नहाना चाहिए।

गोपाल माहेश्वरी, खिरकिया (म.प्र.): अति-यथार्थवाद क्या है ?

इस वाद का प्रादुर्भाव चित्रकला में हुआ, जिसका प्रथम आचार्य स्विट्जरलैंड-निवासी पॉलकली था। उसने अपनी कला-कृतियों में अर्द्धचेतन मन के बिंबों और स्मृतियों को अभिव्यक्त किया। आंद्रे ब्रेतों ने इसकी परिभाषा यों की है : "यह वाद एक विशुद्ध आत्मिक स्वतःक्रिया है, जिसके द्वारा विचारों के वास्तविक क्रम को मौखिक, लिखित या अन्य किसी रूप में प्रकट किया जा सकता है।" यह वाद बुद्धि का तिरस्कार करता है और मनुष्य के चेतन मन के सौंदर्यात्मक या नीतिपरक विचारों के नियंत्रण से मुक्त होकर स्वचालित रचना में विश्वास करता है। इस वाद के अंतर्गत कुछ ही अच्छी कलाकृतियां रची जा सकीं, अधिकांशतः ऊल-जलूल, भोंडी, असंगत और अर्थहीन रचनाएं ही सामने आयीं।

सरोजकुमार चौधरी, गोरखपुर (उ. प्र.) : किसी कार्य में सहयोग देने के लिए 'हाथ बटाना' मुहावरा प्रयुक्त होता है। इस प्रकार 'सहयोग' और 'हाथ बटाना' समानार्थी हैं, लेकिन गणित के अनुसार 'योग' और 'बटा' में बहुत अंतर है। स्पष्ट करें।

लगता है, बहुत दूर की कौड़ी लाने के प्रयत्न में आप अंकगणित के 'अंक' और स्नेह के 'अंक' का अंतर भुला बैठे हैं। भाषा में सर्वत्र एक शब्द का एक ही अर्थ नहीं होता। गणित के योग और 'बटा' में निश्चय ही बहुत अंतर है, क्योंकि योग से संख्या बढ़ती है और विभाजित होने से घट जाती है, लेकिन कार्य में चाहे आप 'सहयोग' करें या 'हाथ बटायें', कार्यकर्ताओं की संख्या बढ़ेगी और कार्य की मात्रा कम होगी। यहां योग कार्यकर्ताओं का होता है और विभाजन उनके श्रम का।

प्रकाशचंद नाहटा, लाडनूं (राजस्थान) : फ्रीक्वेंसी माड्यूलेशन (Frequency Modulation) क्या है ?

'फ्रीक्वेंसी माड्यूलेशन' का अर्थ है किसी विद्युत-संकेत की बारंबारता में वांछित परिवर्तन या उसका नियंत्रण करके

किया जानेवाला उसका अनुकूलन । रेडियो पर प्रसारित वाणी या संगीत स्पष्ट सुनायी पड़े और उसमें शोर या घरघराहट शामिल न हो, उसके लिए विद्युत-संकेतों के आयाम (amplitude) वारंवारता (Frequency) और प्रावस्था (Phase) में आवश्यक परिवर्तन करने पड़ते हैं । रेडियो-स्टेशन से प्रसारित होनेवाले संकेतों की वारंवारता काफी अधिक होती है, लेकिन घर में रेडियो-सेट पर उन्हें स्पष्ट सुनने के लिए 'माड्यूलेटर' द्वारा संवाहिका-तरंग की वारंवारता को अनुकूलित कर लिया जाता है। मान लीजिए रेडियो-स्टेशन से प्रसारित संकेत की वारंवारता १५,००,००० साइकिल प्रति-सेकंड है, लेकिन रेडियो-सेट पर उसे स्पष्ट रूप में ग्रहण करने के लिए उसकी वारंवारता केवल ४०० साइकिल प्रति-सेकंड होनी चाहिए, तो 'फ्रीक्वेंसी माड्यूलेशन रिसीवर' पर उस संकेत को एक 'फ़िल्टर' से गुजारकर उसकी वारंवारता को वांछित रूप में परिवर्तित किया जा सकता है ।

हरगोविंद द्विवेदी, कानपुर : एक इतिहास-ग्रंथ में पढ़ा कि "भारतीय नरेश रूपवती राजकुमारियों के लिए सुंद-उपसुंद बनकर एक-दूसरे से लड़ते-मरते रहे ।" यहां 'सुंद-उपसुंद' से क्या अभिप्राय है ?

पुराणों के अनुसार सुंद और उपसुंद दो असुर थे । वे अत्यधिक बलशाली थे और कठिन तपस्या द्वारा उन्होंने ब्रह्मा से यह वरदान प्राप्त कर लिया था कि वे आपस में ही एक-दूसरे को मार सकेंगे। इस वरदान के कारण वे बहुत अत्याचार करने लगे । उनके आतंक से लोगों को बचाने के लिए ब्रह्मा ने तिलोत्तमा नामक रूपवती अप्सरा को भेजा, जिसके सौंदर्य से मोहित सुंद-उपसुंद आपस में लड़ मरे ।

"आपकी पूंजी और मेरी बुद्धि रेगिस्तान को भी नखलिस्तान बना सकती है ।"
—'टाइम्स ऑव इंडिया' से साभार

चलते-चलते एक प्रश्न और

दिलीपकुमार अग्रवाल, लखनऊ : वकीलों को काला कोट ही पहनना क्यों आवश्यक होता है ?

शायद इसलिए कि उन पर 'दूजा रंग' न चढ़े, मगर देखा गया है कि काले कोट के बावजूद वे रंग बदल लेते हैं ।

—विंदु भास्कर

गिरजाकर

• सामरसेट मॉम

नेविल स्क्वायर स्थित सेंट पीटर गिरजाघर में उस दिन तीसरे पहर एक बच्चे का नानकरण किया गया था। अलबर्ट एडवर्ड फोरमैन ने अभी अपना चोगा पहन रखा था। चोगे को वह अपने पद का महत्त्वपूर्ण प्रतीक मानकर प्रसन्नता-पूर्वक पहनता था। इसके विना उसे ऐसा महसूस होता था मानो उसने बहुत कम कपड़े पहने हों। चोगे का वह बहुत ध्यान रखता था और स्वयं अपने हाथों से उस पर लोहा करता था। इस गिरजाघर में वह सोलह वर्षों से काम करता था। यहां से प्रति-वर्ष उसे एक चोगा मिलता था, परंतु इनसे उसे इतना मोह था कि पुराना हो जाने पर भी वह इन्हें फेंक नहीं पाता था। इन्हें भूरे रंग के कागज में लपेटकर उसने अपने सोने के कमरे में अलमारी की निचली दराज में रख छोड़ा था।

वह ड्रेसिंग-रूम से पादरी के बाहर आने की प्रतीक्षा कर रहा था ताकि वह उसकी सफ़ाई करके घर जा सके। इसी समय उसने पादरी को चांसेल (गिरजे का मंच) के एक ओर से दूसरी ओर जाते देखा। पादरी महोदय ने घुटनों के बल झुककर प्रार्थना की और नीचे उतर आये।
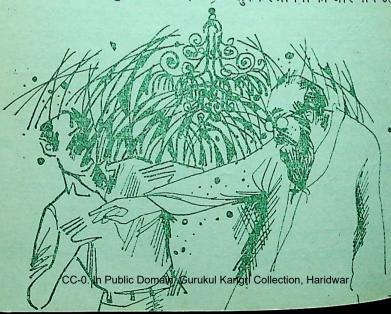
अलबर्ट बड़बड़ा उठा, "पादरी महोदय अभी तक इधर-उधर क्यों घूम रहे हैं? क्या उन्हें पता नहीं है कि मेरे चाय पीने का समय हो गया है?"

नये पादरी की नियुक्ति हाल में ही हुई थी। उनकी उम्र चालीस के लगभग थी और व्यक्तित्व भव्य था, परंतु अलबर्ट ने कभी उन्हें पसंद नहीं किया। उसे पहले पादरी के जाने का दुःख था। वे पुराने विचारों के व्यक्ति थे। वे मधुर वाणी में धीरे-धीरे धर्मोपदेश देते और अपने संपन्न यजमानों के यहां भोजन किया करते थे। वे भी गिरजाघर में सभी चीजों को सुव्यवस्थित देखना चाहते थे, परंतु, नये पादरी-जैसा न तो आडंबर करते थे और न किसी काम में अनावश्यक हस्तक्षेप ही करते थे।

लेकिन, अलबर्ट सहिष्णु था। उसने सोचा कि धीरे-धीरे नये पादरी वहां की परंपराओं को अपना लेंगे।

इसी समय पादरी ने उसके पास आकर कहा, "मिस्टर फोरमैन, क्या आप कुछ समय के लिए ड्रेसिंग-रूम में आ सकते हैं? मुझे आपसे एक जरूरी बात करना है।"

पादरी महोदय उसके आने की प्रतीक्षा करते रहे, फिर वे साथ-साथ ड्रेसिंग-रूम की ओर गये। गिरजाघर के दो प्रतिनिधियों को वहां देखकर उसे आश्चर्य हुआ।

अलबर्ट उन्हें देखकर कुछ चिंतित हो गया, परंतु अपने चेहरे पर उसने इसकी झलक नहीं आने दी।

पादरी ने जल्दी-जल्दी कहना शुरू किया, "मिस्टर फोरमैन, आप सोलह वर्षों से यहां कार्य कर रहे हैं और आपका कार्य संतोषजनक रहा है। कल एक अजीब बात मुझे मालूम हुई, मुझे यह जानकर बहुत ताज्जुब हुआ कि आप पढ़ना-लिखना नहीं जानते।"

सुनकर अलबर्ट के चेहरे पर कोई

परेशानी नहीं दिखायी दी। उसने कहा, "पहलेवाले पादरी महोदय इससे परिचित थे। वे कहते थे कि मेरे अशिक्षित होने से मेरे कार्य में कोई बाधा नहीं होती।"

एक प्रतिनिधि ने कहा, "आज तक मैंने इससे अधिक आश्चर्यजनक बात नहीं सुनी। आप इस गिरजाघर में सोलह वर्षों से हैं, फिर भी आपने पढ़ना-लिखना नहीं सीखा !"

अलबर्ट ने कहा, "महोदय, बारह वर्ष की उम्र से ही मुझे नौकरी करनी पड़ी। पहले जहां मैंने नौकरी की, वहां पर रसोइये ने मुझे पढ़ाना चाहा था, लेकिन उस समय मुझमें सीखने की इच्छा नहीं थी। बाद में पढ़ने का अवसर ही नहीं मिला। लेकिन, मुझे इस कारण कभी कोई कठिनाई नहीं हुई। मेरी पत्नी पढ़ी-लिखी है। जब भी जरूरत होती है, मैं उससे पत्र लिखवा लेता हूं।"

पादरी ने कहा, "मिस्टर फोरमैन, इस गिरजाघर में हम ऐसे व्यक्ति को नौकर नहीं रख सकते जो पढ़ना-लिखना न जानता हो। वैसे, आपके आचरण और आपकी कार्यकुशलता के बारे में मुझे कोई शिकायत नहीं है, परंतु आपकी अशिक्षा के कारण कोई अनहोनी घटना हो सकती है। अतः आपको तीन महीने का समय दिया जाता है। अगर आप इस अवधि में पढ़ना-लिखना नहीं सीख सके तो आपको नौकरी छोड़नी पड़ेगी।"

अलबर्ट ने इस समस्या का सामना करने के लिए अपने को तैयार कर लिया। वह अपने महत्त्व को जानता था। वह नहीं चाहता था कि कोई इस परिस्थिति का अनुचित लाभ उठाये। उसने कहा, "महोदय, इस बात से मैं बहुत दुखी हूं। आपका ऐसा करना उचित नहीं है। अब मैं इतनी अधिक उम्र का हो गया हूं कि मैं पढ़ना-लिखना नहीं सीख सकता।"

पादरी ने कहा, "ऐसी हालत में आपको यह पद छोड़ना पड़ेगा।"

अलबर्ट बोला, "इसे मैं अच्छी तरह समझता हूं। ज्यों ही आप किसी व्यक्ति

को इस पद के लिए चुन लेंगे, मैं सहर्ष अपना इस्तीफा आपको दे दूंगा।"

पादरी और गिरजाघर के प्रतिनिधियों के चले जाने के बाद जब उसने गिरजाघर का दरवाजा बंद कर दिया तब वह अपनी उस गंभीरता को नहीं बनाये रख सका जिससे उसने अपने ऊपर किये गये आघात को सहा था। धीरे-धीरे चलकर वह ड्रेसिंग-रूम तक आया और अपने चोगे को खूंटी पर लटकाने के बाद वहां की सफाई की, फिर कोट पहना, हाथ में हैट लेकर गिरजाघर से बाहर आ गया और दरवाजा बंद करके ताला लगा दिया। वह विचारों में इतना तल्लीन था कि घर की ओर जानेवाली सड़क पर न मुड़कर दूसरी ओर मुड़ गया और धीरे-धीरे सड़क के किनारे चलने लगा।

वह उदास था। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करना चाहिए। उसने कुछ पैसा जरूर बचाकर रख छोड़ा था, लेकिन वह इतना अधिक नहीं था कि बिना कोई काम किये ही गुजर हो जाए। ऐसी समस्या पैदा होने की उसने कल्पना भी नहीं की थी। रोम के पोप की तरह इस गिरजाघर का गिरजादार भी आजीवन इस पद पर बना रहता था। अलबर्ट की सिगरेट पीने की आदत नहीं थी, लेकिन कभी-कभी थकावट होने पर वह एकाध सिगरेट पी लेता था। इस समय भी उसकी सिगरेट पीने की इच्छा हुई। उसने अपने चारों ओर देखा, लेकिन एसी कोई दूकान नहीं दिखायी पड़ी जहां से वह सिगरेट खरीद सके। वह थोड़ा और आगे बढ़ा। यह सड़क बहुत लंबी थी और इसके दोनों ओर सभी तरह की दूकानें थीं, परंतु यहां एक भी ऐसी दूकान न थी जहां से वह सिगरेट खरीद सके।

उसने सोचा—इस सड़क पर सिगरेट की तलाश में घूमनेवाला मैं ही अकेला व्यक्ति नहीं हो सकता। अगर कोई यहां सिगरेट और मिठाई की दूकान खोल ले तो खूब चलेगी।

इस विचार से वह चौंक उठा। उसने सोचा कि यह विचित्र बात है कि जब हम किसी घटना के होने की आशा नहीं करते तभी वह होती है।"

वह घर पहुंचा और चाय पी।

पत्नी ने पूछा, "आज चुप क्यों हो?"

उसने कहा, "मैं कुछ सोच रहा हूं।"

दूसरे दिन वह फिर सड़क के एक ओर से दूसरी ओर तक गया। भाग्यवश उसे एक खाली दूकान मिल गयी। चौबीस घंटे बाद उसने इस दूकान को ले लिया। एक महीने बाद जब उसने इस्तीफा दे दिया, तब उसने तंबाकू और समाचार-पत्रों के विक्रेता के रूप में कार्य करना प्रारंभ कर दिया।

अलबर्ट को व्यापार में बहुत सफलता मिली। उसका कार्य इतना बढ़ गया कि एक वर्ष के भीतर ही उसने दूसरी दूकान खोल ली और उसकी देखभाल के लिए एक आदमी नियुक्त कर दिया।

यह दूकान भी खूब चली। इसकी सफलता को देखकर उसने सोचा कि अगर वह दो दूकानों की व्यवस्था कर सकता है तो ऐसी ही अनेक दूकानों की व्यवस्था भी कर सकता है। उसने शहर के विभिन्न भागों में चक्कर लगाना शुरू कर दिया और उचित जगह देखकर कई दूकानें खोल लीं। दस वर्षों में ही दूकानों की संख्या दस हो गयी और उसने खूब धन कमाया। प्रत्येक सोमवार को वह इन दूकानों पर जाता, सप्ताह भर की बिक्री के पैसे एकत्र कर बैंक में जमा करता।

एक दिन जब वह बैंक में गया तो खजांची ने कहा कि बैंक के प्रबंधक उससे मिलना चाहते हैं।

प्रबंधक ने पूछा, "मिस्टर फोरमैन, क्या आपको मालूम है कि आपका कितना धन हमारे यहां जमा है? यह राशि तीस हजार पौंड से भी ज्यादा है। बचतखाते में इतनी बड़ी राशि का रखना उचित नहीं है। आप किसी दूसरी योजना में इस धन को लगायें तो अच्छा हो।"

"मैं खतरा मोल लेना नहीं चाहता। बैंक में मेरा धन सुरक्षित है।"

"इस विषय में आपको चिंता करने की जरूरत नहीं है। हम आपके लिए ऐसी प्रतिभूतियां खरीद देंगे जो पूर्णरूप से सुरक्षित हैं। जितना ब्याज हम आपको देते हैं उससे बहुत ज्यादा इनसे मिलेगा।"

फोरमैन कुछ चिंतित हो गया। उसने कहा, "मुझे प्रतिभूतियों के बारे में कोई जानकारी नहीं है। सारा काम मैं आपके ही हाथों में छोड़ देता हूं।"

प्रबंधक ने मुसकराते हुए कहा, "हम लोग सारा काम कर देंगे। आप जब दोबारा यहां आयें तो संबंधित कागजों पर हस्ताक्षर कर दें।"

फोरमैन यह निश्चित नहीं कर पाया कि क्या करे। उसने पूछा, "हस्ताक्षर तो मैं कर दूंगा, लेकिन मुझे यह कैसे पता चलेगा कि मैं किस तरह के अनुबंध पर हस्ताक्षर कर रहा हूं?"

प्रबंधक ने कहा, "आप पढ़ना-लिखना तो जानते होंगे?"

फोरमैन ने मुसकराते हुए कहा, "श्रीमानजी, यही तो कठिनाई है। मैं पढ़ नहीं सकता। लोगों को यह बात विचित्र मालूम होती है, लेकिन यह सत्य है। मैं केवल अपना नाम लिख सकता हूं और इसे भी मैंने व्यापार प्रारंभ करने के बाद सीखा।"

प्रबंधक कुरसी से उछलकर खड़ा हो गया और पूछा, "आपने बिना पढ़े-लिखे ही इतना बड़ा व्यापार कर रखा है? यह तो आश्चर्यजनक बात है! अगर आप पढ़े-लिखे होते तो पता नहीं अब तक कितना और आगे बढ़ गये होते।"

फोरमैन ने मुसकराकर कहा, "यह मैं आपको बता सकता हूं। अगर मैं पढ़ा-लिखा होता तो अब तक सेंट पीटर गिरजाघर में गिरजादार ही होता।"

—अनु. प्रभाकर त्रिपाठी,

'भूख' के सैलाब में डूबा देश

• बी. प्रभा

कला न तो मुझे विरासत में मिली और न मेरे लिए माहौल की देन है, फिर भी मैं कलाकार बन गयी। पैदा हुई नागपुर के पास बेला गांव में। पिता अपनी नौकरी में पूरी तरह डूबे हुए रेलवे-क्लर्क। मां बिना पढ़ी-लिखी सीधी-सादी देहाती महिला। दो बहनें और एक भाई और। लेकिन इस नीरस और ऊसर भूमि में भी कला का अंकुर फूट ही आया और पौधा पनप गया। मैं भावुक और कोमल स्वभाव की जो थी! और अब कैनवॉस की सतरंगी दुनिया का लगातार चल रहा सफर। इसे नियति का चमत्कार नहीं तो और क्या कहेंगे?

बनपाखी लिये एक आदिवासी स्त्री
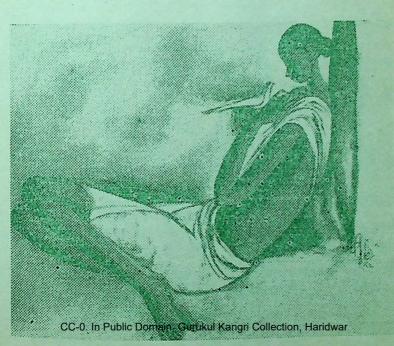
ठीक बता पाना मुश्किल है कि कला का यह सफर शुरू कब हुआ। पेंसिल से आड़ी-टेढ़ी रेखाएं खींच आकृति बनाने को शुरुआत मानें तो उस समय जब दस-ग्यारह साल की रही होऊंगी। रोग की शिकार होकर मां हमेशा के लिए चारपाई पकड़ चुकी थी। मैं कागज पर कोई बूझ-अबूझ आकृति बनाकर उसे दिखाती। मां अपनी पीड़ा भूलकर मुसकरा उठती। मेरा मन खिल उठता। बीमार मां के चेहरे पर मुसकान देख बड़ी शांति मिलती।

कुछ साल बाद मैं मैट्रिक में थी। सन ४५-४६ के दिन थे जब मां ने हमेशा के लिए आंखें मूंद लीं। लगा, मेरे साथ कोई बड़ा छल हो गया। पीड़ा और हताशा के गहरे अंधकार में डूबी पागल-जैसी हो गयी मैं। कागज, पेंसिल सब रखे रह गये। तभी अकेला भाई कहीं से रंग और तूलिका ले आया। बोला, "प्रभा, ये लो। चित्र बनाओ। मन बहलेगा।" भाई के दिये रंग से संतप्त मन को राहत मिली। दिन-रात कागज पर फूल-पत्ते, देवी-देवता और न जाने कितनी आकृतियां बनाती रहती। मां से बिछुड़ने की पीड़ा धीरे-धीरे कम होने लगी थी। सन १९४९ में भाई ने नागपुर के कला-विद्यालय में दाखिला करा दिया। पहले तो लगा, मुझसे यह सब कैसे सधेगा, पर एक बार कनवॉस और रंगों में डूबी नहीं कि समय, भूख, प्यास, किसी बात की सुध न रही। रंगों में डूबी तूलिका से कैनवॉस पर उतरते जाते चित्र पर चित्र। अध्यापक कहते, 'प्रभा, रात को भी स्कूल में ही रहा करो।'

नागपुर में मेरे चित्रों की पहली प्रदर्शनी लगी। यहीं मेरी मुलाकात हुई बी. विट्ठल से। उम्र में मुझसे दो साल छोटे बंबई के जे. जे. स्कूल ऑव आर्ट्स के छात्र। कला से लगाव के कारण विट्ठल बचपन में ही घर छोड़कर वर्धा से बंबई पहुंच गये थे। होटलों में जूठे बरतन धोने से लेकर बढ़ईगीरी तक करके पेट पालने और प्लेटफॉर्म तथा फुटपाथ पर जिंदगी बिताने की राह से गुजर चुके विट्ठल अपने दोस्तों की मदद से जे. जे. स्कूल में दाखिल हो चुके थे। हम दोनों निकट आते गये। शुरू में हमारे बीच मित्रता थी। १९५६ में हमने विवाह कर लिया। बिट्ठल पढ़ाई वहीं छोड़कर स्वतंत्र रूप से सृजन में लग गये। उसी साल उनके मूर्ति-शिल्प और मेरे तैल-चित्रों की प्रदर्शनी लगी। तभी से प्रदर्शनियों का सिलसिला चल रहा है—देश-विदेश के कितने ही शहरों में प्रदर्शनी लग चुकी है।

पहली बार बंबई में प्रथम पुरस्कार मिला तो लगा कि मेरे खिलाफ कोई साजिश चल रही है—कोई अज्ञात शक्ति ऐसा विधान रच रही है कि पुरस्कार के स्वर्ण-मृग के पीछे लगकर मैं कला-साधना की राह से भटक जाऊं। अन्य-मनस्क हो उठे मेरे मन को कलाकार पति ने सहारा दिया। पुरस्कार और यश की बात भूलकर मैं फिर सृजन में जुट गयी।

विट्ठल मेरी कला के पहले आलोचक और प्रशंसक हैं; पर एक समय ऐसा भी था कि मैं उनसे ईर्ष्या की आग में जलने लगी थी। सोचती, मेरे प्रतियोगी वही हैं। बाद में समझ लौटी, तब अपनी मूर्खता और अज्ञान का एहसास हुआ।

कला मेरी पूजा है। इस पूजा से इतना वक्त नहीं निकल पाता कि समाज और संसार के बारे में सोच सकूं। अपने आप में डूबी मैं अकसर सोचती हूं कि समाज मेरे भीतर ही नहीं है। मेरे चित्रों में समाज का ही प्रतिबिंब तो उभरता है। गांवों की सोंधी माटी, लिपे-पुते कच्चे घर और सीधे-सादे लोग मेरे मन में उतरकर वहां से कैनवॉस पर उतरने लगते हैं।

पहली बार विदेश गयी और वहां की समृद्धि देखकर लौटी तो लगा कि भारत में अंतहीन 'भूख' के बीच रहना है। न सिर्फ इनसान भूखे बल्कि सड़कें, मकान, ईंट, पत्थर सब भूख से तड़पते-से। हर तरफ भूख का सैलाब। मैं विचलित हो उठी। मन विद्रोह कर बैठा। इस विद्रोह की अभिव्यक्ति मिली कैनवॉस पर और तब जाकर मन हलका हुआ। उन चित्रों का नामकरण मैंने 'संस ऑव दि इम्मॉरटल्स' किया है। इसी तरह १९७०-७१ में बंगलादेश से आये शरणार्थियों की वेदना भी मुझे झकझोर गयी थी और उस वेदना को कैनवॉस पर उतारकर मैंने अपनी वेदना से छुटकारा पाया था। ●

कमनीय रेखाएं और कम से कम, लेकिन मोहक रंगों का प्रयोग बी. प्रभा के चित्रों की विशेषताएं हैं। यहां प्रस्तुत हैं उनके दो चित्र 'प्रतीक्षा' (इस पृष्ठ पर) तथा बनपाखी (सामने के पृष्ठ पर)

छाया : डॉ. एस. एल. अग्रवाल

लोग पूछते हैं, मैं अपनी कला के बारे में क्या सोचती हूं। मैं तो कुछ नहीं सोचती। किसी से तुलना का कोई विचार कभी मन में नहीं आता। कोई अपेक्षा भी नहीं करती। कला मेरी नियति है, अविच्छिन्न प्रवृत्ति, मेरा जीवन। कला का साहचर्य मेरे लिए उतना ही सहज और स्वाभाविक है जितना सांस लेना। फिर इसके बारे में सोचने की बात ही कहां उठती है। बहुत हुआ तो यही होगा कि कोई मेरे चित्रों की सराहना करेगा तो कोई बुराई। मैं विचलित नहीं होती। अपनी-अपनी पसंद, अपना-अपना खयाल। पाकिस्तान से एक महिला इस इरादे से आती है कि इस बार बी. प्रभा के बजाय भारत से किसी और कलाकार की पेंटिंग ले जाएगी। हैरानी की बात है कि जो पेंटिंग पसंद कर खरीदती है, वह बी. प्रभा की ही निकल आती है। और अमरीका के वे सज्जन जिन्होंने मेरी एक पेंटिंग कमरे में ढंग से सजाने के लिए डेढ़ लाख का फरनीचर तितर-बितर कर दिया!

मेरी कृति अंतर की जिस प्रेरणा से कैनवॉस पर उतरती है, वही शायद हजारों-लाखों के हृदय में होती है। यह अनुभूति की समानता है और इसकी वजह से मेरी रचना व्यक्तिगत मेरी नहीं रह जाती। सब लोगों को उसमें अपनत्व की अनुभूति होती है। मुझे बराबर महसूस होता है कि कला से विलग होकर मेरा कोई अस्तित्व नहीं। संपूर्ण जीवन कला की अर्चना में अर्पित कर ही चुकी हूं। चाहती हूं बस इतना कि यह सृजन-यात्रा जीवन की अंतिम सांस तक निर्बाध चलती रहे, उत्तरोत्तर अधिक संवेदनशील होती हुई। ●
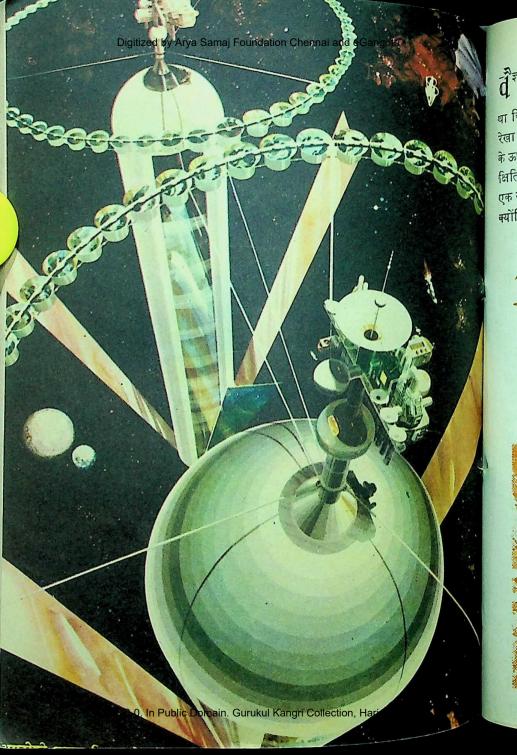
वैज्ञानिक अब इस तथ्य पर एकमत होते जा रहे हैं कि मानव को पृथ्वी से अन्यत्र स्थानांतरित किया जा सकता है। सन १७७२ में पश्चिमी ज्योतिषी जोसेफ लुई ने बताया था कि जब चंद्रमा आकाश में सिर के ठीक ऊपर हो तब उससे पूर्वीक्षितिज तक सीधी रेखा खींचो। उसे तीन समान भागों में विभाजित करो। अब क्षितिज के ऊपर के पहले भाग के ऊपरी बिंदु से अपने खड़े होने के स्थान तक रेखा खींचो। इसी तरह पश्चिम में भी करके क्षितिज से लगे भाग के ऊपरी बिंदु से अपने तक रेखा खींचो। दोनों बिंदुओं और पृथ्वी से एक समभुज त्रिकोण बनेगा। इस त्रिकोण पर जो भी वस्तु होगी वह स्थिर हो जाएगी, क्योंकि उस पर चंद्रमा और पृथ्वी का आकर्षण एक-बराबर होगा।

अंतरिक्ष में बस्तियों का व्यापार

• निरंजन वर्मा

चित्र-परिचय : अंतरिक्ष की बस्तियों के दो काल्पनिक चित्र, सामने और ऊपर

इन वैज्ञानिक सूझों से उत्साहित रूस और अमरीका ने अंतरिक्ष में अपने यान भेजे । जीवधारियों, चूहों-बिल्लियों को व्योम-विहार कराया गया और फिर मनुष्यों को भेजकर वायुहीनता तथा भार-हीनता के प्रभावों की खोजबीन की गयी। तब मानव ने अपने निकटतम ग्रह चंद्रमा पर चरण रखे। परंतु चंद्रमा में वायु-हीनता होने से मानव का वहां जीवित रह पाना संभव नहीं । आखिर वैज्ञानिकों ने अन्य ग्रहों की ओर बढ़ना शुरू किया।

अन्य ग्रहों में बुध बहुत गरम है। उस में वायुमंडल भी नहीं है। यूरेनस और नेपच्यून बर्फ के गोले हैं । बृहस्पति अभी गैस का एक पिंडमात्र है। इसलिए जीवन के अस्तित्व के लिए अनुकूल स्थितियां खोजने लायक मंगल ही समझा गया। वैज्ञानिकों का खयाल है कि कालांतर में मानवों को इस ग्रह पर स्थानांतरित किया जा सकेगा। मंगल की सतह पर खोजबीन में लगे अंतरिक्ष यान वाइकिंग-१ और वाइकिंग-२ इसी की एक कड़ी हैं ।

मंगल में नाइट्रोजन मौजूद होने की पुष्टि से जीवाश्म पाये जाने की संभावना बढ़ गयी है । अमरीका के प्रिंस्टन विश्व-विद्यालय में भौतिक-शास्त्र के प्रोफेसर जेरार्ड ओनील ने संपूर्ण तथ्यों पर विचार करके एक योजना तैयार की है । दूसरे अमरीकी वैज्ञानिकों ने भी अमरीकी अंतरिक्ष-एजेंसी के माध्यम से प्राप्त रंगीन चित्रों का अध्ययन करके निष्कर्ष निकाला है कि अंतरिक्ष में मानव-बस्तियों का निर्माण अब कोरा सपना नहीं रहा, संभावना बन गया है।

ओनील की योजना के अनुसार दो जुड़वां सिलिंडर अंतरिक्ष में भेजे जाएंगे। ये सिलिंडर बहुत विशाल होंगे—प्रत्येक ३२ किलोमीटर लंबा और ६.४ किलो-मीटर गोलाई का । इन सिलिंडरों के चारों ओर एक वृत्ताकार खोल होगा। उस पर विशालकाय तश्तरियां होंगी, जो एक-दूसरे से जुड़ी रहेंगी । इन तश्तरियों में मिट्टी या अन्य पदार्थ भरकर उन्हें भूमि का रूप दिया जाएगा। इन पर खेती की जा सकेगी और आवास-स्थल भी बनाये जा सकेंगे । इन सिलिंडरों में शुरू में प्रत्येक में कोई दो-ढाई लाख आदमी बसाये जा सकेंगे। सिलिंडरों पर रहने-वाले लोग बिलकुल ऐसा महसूस करेंगे जैसे धरती पर ही रह रहे हों। सिलिंडरों के सिरों पर सौर-ऊर्जा से चलनेवाले विशाल बिजलीघर रहेंगे। सिलिंडरों के चारों ओर विशाल पंखों के आकार के बड़े-बड़े चतु-ष्कोणी दर्पण लगाये जाएंगे। ये दर्पण सूर्य का प्रकाश परावर्तित कर ऊर्जा उत्पन्न करेंगे और सिलिंडरों पर प्रकाश इस तरह डालेंगे कि मौसम तथा दिन और रात आदि की भी रचना हो जाए।

सिलिंडरों का नाम फिलहाल 'स्पेस-कालोनी' (अंतरिक्षीय उपनिवेश) सोचा गया है । इनकी सतह बहुत कुछ कैली-फोर्निया, पंजाब, जरमनी और इंगलैंड की

धरती-जैसी रहेगी। दोनों सिलिंडर अपनी धुरी पर घूमते रहेंगे और ११४ सेकेंड में एक परिक्रमा पूरी कर लेंगे। घूमने की इस गति से इनमें पृथ्वी के बराबर ही गुरुत्वाकर्षण उत्पन्न हो जाएगा।

उपनिवेशों की बस्तियों में जीवन-यापन की सारी सुविधाएं मौजूद रहेंगी। जल, वायु, वातावरण, अन्नोत्पादन, व्यापार और बाजार-जैसी सभी बातें बिलकुल पृथ्वी-जैसी होंगी। और तो और पृथ्वी के समान कलकल बहते झरने, झीलें, गुफाएं, बर्फीली घाटियां और तरह-तरह के वृक्षों से भरे जंगल भी होंगे। सिलिंडर अल्यूमीनियम और सख्त किस्म के प्लास्टिक से बनाये जाएंगे। ये पूरी तरह पारदर्शी होंगे। इससे सूर्य की किरणें इनमें बिना किसी रोकटोक के पूरी तरह पहुंच सकेंगी।

सवाल उठता है कि इन सिलिंडरों में भूमि-जैसी सतह बनाने के लिए सामग्री आएगी कहां से ? पृथ्वी पर न तो इस तरह का माल बहुत ज्यादा रह गया है और न यह मुमकिन है कि यहां से ढो-ढोकर यह माल इन उपनिवेशों तक किफायत से भेजा जा सके। लेकिन वैज्ञानिकों ने इस समस्या का समाधान सोच लिया है। चंद्रमा वीरान है ही और वहां जीवन भी नहीं है। भौतिक रूप से मृत हो चुके इस वीरान ग्रह में भविष्य में भी जीवन हो सकने की कोई संभावना नहीं है, परंतु चंद्रमा पर बाक्साइट और सिलिकेट-जैसे पदार्थ बड़ी मात्रा में हैं। ये वस्तुएं वहां से बड़ी आसानी से ली जा सकती हैं। चंद्रमा

अंतरिक्ष की बस्तियां—एक और काल्पनिक चित्र

से यह सामग्री उपनिवेशों तक ले जाने में सुगमता रहेगी और खर्च भी कम होगा। गुरुत्वाकर्षण में अंतर के कारण चंद्रमा पर भार पृथ्वी की तुलना में कुल छठवां हिस्सा होता है। इसलिए वहां से सामग्री उठाने में छह गुनी कम शक्ति से ही काम चल जाएगा। तो भी शुरू में इन उपनिवेशों के लिए आवश्यक कुल चीजों का कम से कम दो प्रतिशत तो पृथ्वी से ही भेजना पड़ेगा। बाद में पशु, पक्षी, मनुष्य आदि वहीं उत्पन्न होने लगेंगे। प्रोफेसर ओनील मानते हैं कि सब काम सामान्य तरीके से इसी तरह चलता रहा तो इक्कीसवीं सदी के मध्य तक अंतरिक्ष में ऐसी बस्तियां एक हकीकत बन चुकेंगी।

इन उपनिवेशों के बसाये जाने के साथ कुछ खतरे भी जुड़े हुए हैं। अंतरिक्ष में अगणित नक्षत्र, ग्रह और आकाशीय पिंड लगातार घूमते रहते हैं। कभी यह हो सकता है कि इनमें से किसी नक्षत्र की गति और मार्ग में परिवर्तन हो जाए तो वह इन उपनिवेशों से टकरा सकता है। नतीजा क्या होगा, अनुमान लगाना बहुत कठिन नहीं है, लेकिन यह दूर की बात है। वैसे वज्ञानिक इस बात पर पूरा गौर कर रहे हैं और ऐसी कोशिशों में लगे हैं कि उपनिवेशों को इस प्रकार की दुर्घटनाओं से सुरक्षित रखा जा सके।

प्लास्टिक और अल्यूमीनियम-जैसे पदार्थों तथा मिट्टी की सतह होने के कारण इन उपनिवेशों पर ऊर्जा-युक्त सौर-विकिरण का दुष्प्रभाव नहीं होगा। वहां मोटरकार-जैसे बड़े वाहनों की तुलना में साइकिल-जैसे छोटे और हलके वाहन ज्यादा उपयोगी होंगे।

इन उपनिवेशों के निर्माण में लगने-वाली विशाल राशि और साधनों का सवाल जरूर चौंकानेवाला है। व्यवस्था की जा रही है कि पहले उपनिवेश छोटे आकार के बनाये जाएं। बाद में जब प्रयोग सफल होने लगें और साधन बढ़ने लगें तब बड़े-बड़े उप-निवेश बनाये जा सकते हैं। अनुमान है कि बाईसवीं सदी के मध्य तक पृथ्वी के लोग इन उपनिवेशों में बस चुके होंगे।

इन उपनिवेशों में खानपान और रहन-सहन के तौर-तरीके पृथ्वी के समान ही होंगे। जहां तक सभ्यता और संस्कृति का सवाल है, इन बातों में भी वहां विविधता होगी। हर उपनिवेश अपने यहां संस्कृति का विकास अपने मनपसंद तरीके से करने और अपनी विशिष्ट संस्कृति बना सकने के लिए पूरी तरह स्वतंत्र रहेगा। ●

एक अमरीकी वैज्ञानिक किसी व्यापारी को अपनी नयी मशीन के बारे में बता रहा था—"इधर से सोने का सिक्का डालिए, बटन दबाइए, और दूसरी तरफ से एक औरत निकल आएगी।"

"बेकार है तब तो! हमें तो ऐसी मशीन चाहिए जिसमें इधर से अपनी पत्नी को खड़ा करें, बटन दबायें और उधर से सोने का सिक्का निकल आये।"

कहानी

आखिर क्यों?

• सिद्धार्थ

उसका कमरे से निकलना पखावज-वादक उमाशंकर का उस कमरे में घुसना बिलकुल एक समय हुआ, और इस संयोग में वे एक-दूसरे से टकरा गये, वह 'सॉरी' भी नहीं कह सका। उसे पता है कि साहब अब तक अपने असली नाराजगी-वाले चेहरे पर सौम्यता और सद्भावना का मुखौटा पहन चुके होंगे। उन्होंने उठकर उमाशंकर से हाथ मिलाया होगा और कलाकार की चरण-रज माथे पर लगाने को तत्पर होंगे।

सवेरे की मीटिंग में साहब अपने सह-योगियों के साथ बहुत से महत्त्वपूर्ण निर्णय लेते हैं। यह रोज का नियम है। वह रोज देखता है कि मीटिंगवाले कमरे के पास आते-आते सभी लोग सहसा गंभीरता और सजगता का 'गाउन'-जैसा कुछ धारण कर लेते हैं और कमरे के अंदर जाकर कुरसी
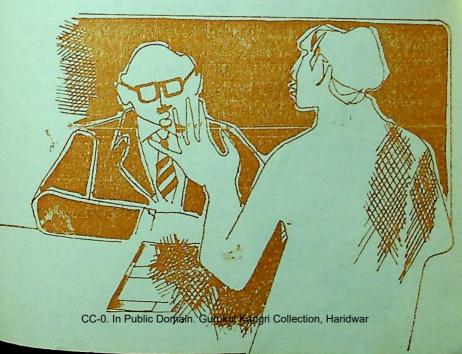
के हत्थे पर उतारकर डाल देते हैं।

वह इस महान संस्थान का सबसे नगण्य अंग है। वह 'एनाउंसर' है। साहब कहा करते हैं, 'आप ही वह सूत्र हैं जो रेडियो को श्रोताओं से जोड़ते हैं। श्रोता, आपको ही जानता है, इसलिए आप महान हैं, महत्त्वपूर्ण हैं।' शुरू-शुरू में तो उसे इस फतवे पर यकीन ही आ गया था, मगर होते-होते बात साफ हो गयी कि नीचेवालों से भी कभी प्यार से बात कर लेने के फैशन के चलते इससे कम और कहा भी क्या जा सकता था! अब ये बातें असर नहीं करतीं, काठ की हांडी कितनी बार चढ़े?

बारह वर्ष और सात महीने हो गये उसे यह सब कुछ देखते, सुनते। कुछ सफर कितने छोटे मालूम पड़ते हैं, मगर इस अवधि की यात्रा किसी शव-यात्रा-जैसी लंबी और लंबी होती हुई महसूस की है उसने। आठ वर्ष की बिलकुल कच्ची उम्र में जब उसके बेखबर मन के लड़के पर रेडियो के 'ग्लेमर' ने डोरे डाले थे, तब उसे क्या पता था कि...
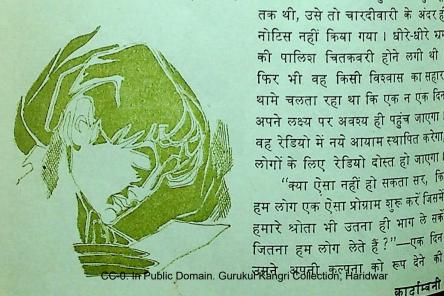
वह दिन भी आया जब वह उस 'बूथ' में बैठा जिसकी उसने तमन्ना की थी। अब वह 'एनाउंसर' हो गया था। उसे अपने सामने दूर तक फैला हुआ एक मैदान-सा दिखायी दिया था जिसके उस छोर पर उसे पहुंचना था। उसने एक ऐसा एनाउंसर बनने का स्वप्न देखा था जिसकी आवाज सुनने के लिए लोग रेडियो खोलें, कानों के रास्ते दिल की गहराइयों में उतर जानेवाली आवाज का उसे मालिक बनना था, 'फ्रीक्वेंसी' की पहुंच का सारा क्षेत्र उसे अपने अधिकार में लेना था, ठीक एक साम्राज्यवादी निरंकुश सम्राट की तरह। मगर 'फ्रीक्वेंसी' की पहुंच तो बहुत दूर तक थी, उसे तो चारदीवारी के अंदर ही नोटिस नहीं किया गया। धीरे-धीरे भ्रम की पालिश चितकबरी होने लगी थी। फिर भी वह किसी विश्वास का सहारा थामे चलता रहा था कि एक न एक दिन अपने लक्ष्य पर अवश्य ही पहुंच जाएगा। वह रेडियो में नये आयाम स्थापित करेगा, लोगों के लिए रेडियो दोस्त हो जाएगा।

"क्या ऐसा नहीं हो सकता सर, कि हम लोग एक ऐसा प्रोग्राम शुरू करें जिसमें हमारे श्रोता भी उतना ही भाग ले सकें जितना हम लोग लेते हैं?"—एक दिन उसने अपनी कल्पना को रूप देने की

कोशिश की ।

साहब ने चश्मा उतारकर मेज पर रखा, उसे किसी तरह टलता न देख ऊबकर पूछा, "जैसे ?"

"जैसे, एक ऐसा प्रोग्राम हो जिसकी सारी योजना हमारे श्रोता बनायें । 'स्क्रिप्ट' वे लिखें, 'रिकर्डस' वे 'सजेस्ट' करें और हम उनके नाम से वह प्रोग्राम 'ब्राडकास्ट' करें ।"—उसने उत्साह से कहा ।

"अभी जाओ, एक फाइल में 'बिजी' हूं, फिर आना"—कहकर उन्होंने एक मोटी-सी फाइल सामने खोल ली ।

उपेक्षित होने का अपमान लादे वह साहब की मौन लेकिन बहुत मुंहफट आंखों की इबारत याद करता रहा था, जो दो टूक कह रही थीं कि 'ज्यादा काबिल बनने की कोशिश न करो, प्रोग्राम बनाना लड़कों का खेल नहीं है !' मगर वह खुद को सांत्वना देता रहा था कि इन्कलाब ऐसे थोड़े ही आ जाता है । उसे रेडियो और श्रोताओं के बीच की मजबूत दीवार गिरानी है । अभी रेडियो बोलता है तो लगता है जैसे सुननेवालों से कह रहा हो कि 'देखो, हम 'विशेष' हैं जो बोल रहे हैं, तुम 'आम' हो जो सुन रहे हो ।' रेडियो जब बोले तो लगे कि दो लोग बातें कर रहे हैं । कौन जाने इस परिवर्तन को लानेवाला वह ही हो ! उसे कोशिश तो करनी ही पड़ेगी ।

"सर, ऐसा क्यों नहीं होता कि टेप

टूट जाने पर हम अपने सुननेवालों से कह सकें कि क्षमा कीजिएगा, टेप टूट जाने के कारण यह कार्यक्रम बीच में रुक गया है, और . . . उसकी बात पूरी नहीं हो पायी ।

"नहीं, आप तो यह भी कह सकते हैं कि—क्षमा कीजिएगा, मैं अगला गीत मुंह धोकर लौट आऊं तब सुनवाऊंगा।" —साहब ने जहरीले तिरस्कार के साथ मुंह बिचकाकर बात पूरी की और फक्क से हंस पड़े ।

उसे लगा कि साहब की जहरीली हंसी के गिजगिजाते कीड़े उसके सारे शरीर पर रेंग गये हैं । उसने ऐसा क्या कह दिया जिसका इतना मजाक उड़े ? वह बिना इस बात का इंतजार किये कि साहब उसे चले जाने को कहें, बाहर निकल आया । 'अभी नये हो न, जोश कुछ ज्यादा ही है । फिकर मत करो, अपने आप ठीक हो जाओगे' की दावेदार भविष्यवाणियों,

'बेटा, सीधी-सीधी नौकरी करो, [illegible]— पहली तारीख को तनख्वाह तो मिल जाती है, क्यों दीवाने हो रहे हो ?" के परामर्शों के बीच वह सोचता रहा––कैसे नाशुकरे हैं ये लोग !

●●

और फिर एक लंबे समय तक उसने अपने 'जोश' को बढ़ने नहीं दिया, 'दीवाना' नहीं बना, सिर्फ 'सीधी-सीधी' नौकरी की।

"अगर हफ्ते में एक दिन फिल्म-संगीत के कार्यक्रम में पुरानी फिल्मों के गीत दिये जाएं तो कैसा रहे ?"––न जाने कैसे हठात वह पूछ बैठा !

"ठीक है, अच्छा रहेगा," यह साहब ने ही कहा, उसे इस पर भी सहसा विश्वास नहीं हुआ ।

"यह प्रोग्राम मैं करूंगा, आप देखिएगा लोग इस प्रोग्राम का बेसब्री से इंतजार करेंगे"––वह एक सांस में कहता चला गया, साहब मुसकराकर सिर हिलाते रहे।

उसे महसूस हो रहा था कि जिस चीज को उसने खोया हुआ समझकर पाने की आशा छोड़ दी थी, वह अचानक ही कहीं मिल गयी है।

उपेक्षित-से, दीमक का भोजन बन जाने के लिए पड़े लावारिस रेकर्ड्स देखकर उसके मन में एक ममत्व-सा उमड़ आया। उनको साबुन से धोते, ब्रश से साफ करते और धूप में सुखाते समय उसे लगता रहा था कि वह सहगल, तलत और जोहराबाई की आवाजों को अपने में भरे हुए, उनकी यादों को संवार रहा है। वह सोचता कि जब बूढ़े श्रोताओं के कानों में ये पुराने गीत पड़ेंगे तो उनके मन में स्मृतियों का सैलाब उमड़ आयेगा। पता नहीं किस गीत के साथ किसकी कौन-सी स्मृति जुड़ी हो––गुदगुदानेवाली या उदास करजानेवाली ।

सप्ताह में एक दिन होनेवाला प्रोग्राम अब श्रोताओं में रचने-बसने लगा। सुननेवालों में नयी उम्र के युवक भी थे, उम्र की ढलान के बिना किसी मोड़वाले रास्ते पर चले आ रहे वृद्ध भी। जैसा उसने कहा था––लोग प्रतीक्षा करते सारे सप्ताह और ढेर-सारे पत्र आते रोज। उसके अपने स्टेशन का नाम हो रहा था, रोज नयापन, नया अंदाज––कितना कुछ करने के लिए एक बेचैनी-सी महसूस करता रहता था वह ।

एक नयापन। गीत के भावों से मिलता-जुलता कोई शेर या किसी कविता की कोई पंक्तियां, जो गीत के प्रभाव को दुगुना कर दें। एक दिन, एक गीत से पहले की रुबाई–

शऊरे सजदा नहीं है मुझको
तू मेरे सजदे की लाज रखना
ये सर तेरे आस्तां से पहले
किसी के आगे झुका नहीं है

गीत का फेड-इन होना और 'इंटरकाम' का घनघनाना लगभग एकसाथ ही हुआ। प्रोग्राम के बाद साहब से मिलिएगा––ड्यूटी-अफसर ने संदेश दिया ।

"मे आई कम इन, सर"––वह परदे

को जरा-सा सरकाकर स्वीकृति की प्रतीक्षा में था।

"ये रेडियो पर किसके आगे सजदा हो रहा था ?"—साहब ने जहरीली मुस-कान का नुकीला पत्थर उस पर मारा।

"जी . . . ?" सहसा समझ न सकने के कारण लड़खड़ा गया वह।

"ये लाइनें किससे कही जा रही थीं ?" साहब ने गरजकर पूछा।

"किसी एक खास आदमी से तो नहीं" उसने स्पष्ट कहा।

"जितनी तुम्हारी उम्र नहीं होगी, उससे ज्यादा मेरी 'सर्विस' हो चुकी है, समझे। उड़ने की कोशिश मत करो।" —साहब के नथुने क्रोध से फैल और सिकुड़ रहे थे।

"मगर मेरी बात तो सुनिए, मैंने ऐसा नहीं किया।" वह सहमा, उसके बाद रुआंसा हो आया।

"जो कुछ कहना हो इस 'मेमो' के जवाब में कहना। रेडियो को इश्क करने का जरिया मत बनाओ" कहते हुए उन्होंने तुरंत 'टाइप' करवाकर रखा हुआ 'मेमो' उसके हाथों में थमा दिया। जितनी देर में वह 'ऑफिस-कॉपी' में दस्तखत करता, साहब फाइलों पर झुक चुके थे।

जड़-सा खड़ा रह गया था वह। जड़ता टूटी तो उसकी जगह आग ने ले ली। उसका जी हुआ कि साहब से चीख-चीखकर पूछे कि मेरा शेर पढ़ना रेडियो पर इश्क के इजहार का जरिया है और उस दिन जब आपकी प्रेमिका खुले तौर पर 'अब
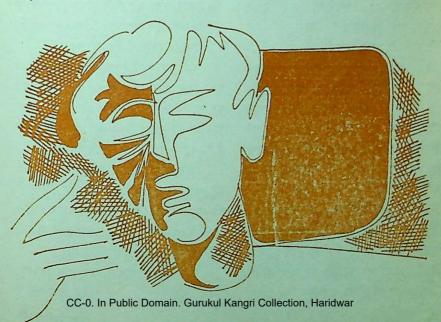
आ भी जाओ' का वाक्य बोलकर अपने वियोग का दर्द आप तक पहुंचा रही थी तब कहां था यह 'मेमो' ? उसे तो आपने 'सुपर्ब' का नाम दिया था और यह 'इन-डिसिप्लिन' क्यों ?

अपमान सहकर, बिना किये हुए अपराध को भी स्वीकार करने के लिए विवश किये जाने पर भी उसने प्रोग्राम नहीं छोड़ा, या यों कहिए कि नहीं छोड़ सका। कार्यक्रम श्रोताओं के अलावा अब उसे भी कहीं बांध चुका था। अपनी पैदाइश से भी पंद्रह-बीस वर्ष पुराने गीतों से यह कैसा अनुराग था। उसके हाथों में 'रेकर्ड्स' सद्यजात शिशु की तरह संभले रहते। अपमानित साहब ने किया है, 'रेकर्ड्स' का क्या दोष ?

"सर, यह 'रेकर्ड' तो अभी वजने के लायक है, कितना 'रेयर' है। इसे 'न्वायजी' कहकर लाइब्रेरियन ने कूड़े में फेंक दिया।"—उसने शिकायत करते हुए एक पुराना 'रेकर्ड' साहब की ओर बढ़ाया।

"और, अगर हम इन पुराने 'रेकर्ड्स' को इस तरह फेंक देंगे तो हमारे पास क्या रहेगा ? यह गीत फिर दोबारा कहां मिलेगा। और फिर मेरे प्रोग्राम का क्या होगा ?"

"डोंट बी फुलिश। इतना मलवा रखने की हमारे पास जगह कहां है ? 'फिक्स्ड-प्वाइंट' चार्ट में ऐसा कोई प्रोग्राम नहीं है। नही चलता तो बंद कर दो।" —साहब चीखने की हद तक तेज बोल रहे थे, तभी उसने अपने पीछे से जलतरंग-जैसा कोई स्वर सुना—"मैं आ जाऊं अंदर ?" साहब की आंखों में कहीं फगुनाई बयार-सी डोल गयी—"हां-हां, आओ-आओ।"

वह सोचता रहा—स्टूडियो की दीवारों में आवाज जज्ब कर लेने का गुण होता है, उसका मन भी कहीं वैसी ही दीवार बनकर रह गया था, जिससे कसैली व्यवस्था का नाद जितनी बार टकराया है वहीं जमकर रह गया है।

वह महसूस कर रहा है कि अंदर कहीं कुछ दरक गया है। सहगल, अमीरबाई और उमादेवी को मलवा कहनेवाला यह क्रूर आदमी ! इसकी कोई स्मृति नहीं जुड़ी होगी इन गीतों के साथ। इसको तो शायद पता भी नहीं होगा कि मन के कागज पर गीत भी कोई चित्र बना सकता है। उफ ! साहब, सिर्फ साहब !

वह अब गुस्से से लाल हुआ जा रहा था। उसे क्रोध अब साहब पर नहीं, खुद पर आ रहा था। ठीक ही तो है, क्या प्रोग्राम का सारा ठेका मैंने ही उठा रखा है ? वह क्यों इतना परेशान है ?

और मन एक पुराने 'न्वायजी' रेकर्ड की तरह जोर से घूमे जा रहा था, विचारों की सुई एक ही 'ग्रूव' में फंसकर रह गयी—क्यों ? आखिर क्यों ? आखिर क्यों ? आखिर क्यों ? . . . आखिर क्यों !

—कौशाम्बी, ३५ खुरशेदबाग,
लखनऊ-४

पुरस्कृत कविता

मैं और तुम और वे

सड़कों पर रात घिसटने लगी
मैंने उनसे कह दिया—
'मेरी उंगली छोड़ दीजिए
मुझे अंधेरे की आदत है'
क्योंकि वे सभ्य सामाजिक लोग
एक अनिश्चित अवस्था तक
मुझे घुमा चुके थे लगातार
अपने-अपने प्रकाश में
एक बहुत बड़े घेरे के अंदर
उनकी रोशनी में
एक चिपतिया कालापन
जहां कुछ भी प्रतिबिंबित नहीं होता
और जिसे देखकर
मेरी आंखें सूख गयीं
रात होने से पहले
मेरी हंसी
अब उनके ड्राइंग-रूम में सजी है—
कांच

और कभी तो ठिठको मुड़ो
और बगलवाले से कह दो कि तुम रोज
डेढ़ इंच मरते हो
इधर वे लोग एक चेहरा उतारते हैं
और दूसरा लगाकर मार्निग-वाक के लिए
चले जाते हैं

वे गर्म हैं और इतमीनान से
जमुहाई ले सकते हैं
रोशनी-घेरा-कालापन
शायद यहीं से . . .

बहुत पहले
मुझे बारिश बहुत अच्छी लगती थी—
हर बूंद
इसीलिए मैंने अपनी कब्र रेत में
खोद ली
बारिश शहर में
एक अधकचरी चुप्पी . . .

दृश्य बदलता है
चौराहे के बीच तुम जकड़ दिये गये हो
उनके विचारों से

वे लोग :
सिगरेट सुलगाये जूते चमकाये
आस-पास
आरामकुर्सियों पर बैठे हैं
और सड़े-गले, बदबूदार शब्दों से तुम्हें
मारते चले जा रहे हैं—
'हमने उनकी जूठन खायी
तुम भी हमारी खाओगे।'

राख क्षितिज तक
उनकी अधनंगी धारणाएं ठूंठ हैं
आजकल तुम सोच नहीं पा रहे

क्षितिज को दौड़कर छू नहीं पा रहे

शायद सब निरर्थक है
शायद जीवन बहुत दूर
हरी गीली घास पर बेहोश धूप या
बरामदे में फर्श से छत तक
महकती
प्यालों की खनखनाहट में मिले

दस हजार स्वप्नों के पार
चोटी से कूदने पर
वही अंतरिक्ष और स्याह गहराइयां
विस्मृति, विस्मृति—
मैं जानता हूं
तुमने आकाश नहीं देखा और न जाने
कब तुम्हारे भीतर
तुम्हारा समुद्र खो गया
तुम्हारा शून्य भी
पूर्ण नहीं है—शायद जीवन मिले

कमरे में मेरे लोग
मुझे हंसाने की कोशिश कर रहे थे
सुलगती सिगरेट—धुआं ऊपर की
ओर, तेजी से, उठा
मेरे लोग
रोशनी, घेरे, कालेपन के विषय में
कुछ नहीं जानते—

यद्यपि उनकी आवाज को
छलनी कर दिया गया है—
उनकी हंसी राख थी
सहसा
छत से फर्श तक
बीस हजार 'क्रास' उग आये

हर 'क्रास' पर एक लाश थी
हर लाश के पार
किसी एक चेहरे की कार्बन-कापी
मेरे लिए अपरिचित, रोजमर्रा, उबाऊ
वह चेहरा... खिड़की पर से
बाहर के नहींपन को
आखें गड़ाये देखने लगा

समय जम गया
सब कुछ एक ठोस पीड़ा में
परिवर्तित हो गया
मुझे मुड़कर कमरे में देखना पड़ा—
हर 'क्रास' पर मैं ही था—

हर लाश से चेहरा गायब हो चुका
था
धुएं की लकीर तड़पकर टूट गयी:

मेरे लोग मुझसे बहुत दूर खिंच गये
कमरा बस यूं ही तितर-बितर हो गया
तभी से
एक तिलिस्मी घाटी में
खिलकती रेत पर
घेरे के अंदर मैं अकेला
खड़ा हूं

खामोशी में
मृत चीखें कैद हैं, घाटी में
भीड़ में मां का हाथ छूट गया था
बहुत पहले, बहुत पहले

उनकी आंखों में मेरे हिस्से डूब रहे हैं
लाल नाखून पास आते जा रहे हैं
मेरी आंखों की आग
ठहाकों के बीच लड़खड़ाकर
टूट गयी
लेकिन एक सुबह तुम भी
यहां होगे! तुम्हारी परछाईं
तुमसे बहुत दूर मंडरायेगी

धीरे-धीरे रेत में
तुम्हारे पैर धंस जाएंगे
वे लोग तुम्हें यहां खींच लायेंगे
क्योंकि तुम्हें बारिश अच्छी लगती है
और तुम्हारी कब्र . . .

सदियां गुजर गयीं
घाटी में अब भी
कहीं छाया नहीं, पानी रेत है
लेकिन आकाश में जमा खून
केवल मेरा नहीं है
किसी भी ऋतु में आकाश लाल हो जाएगा
हां, मुझे कहानी का अंत ज्ञात है
नियति ही निर्वाण है
सवेरा होगा :
मैं तुम से कह रहा हूं

—कार्तिक अवस्थी
जी–४, निजामुद्दीन वेस्ट,
नयी दिल्ली-११००२१

•

जन्म-तिथि : ३०-११-५७ सबसे पहली कविता थियेटर-पत्रिका 'इनैक्ट' में राकेशजी की मृत्यु पर '७३ में छपी। अब तक 'धर्मयुग' और 'कल्पना'–जैसी कुछ पत्रिकाओं में कविताएं प्रकाशित हो चुकी हैं।

देश और दूसरी ओर समाज तेजी से बदलती हुई जिन परिस्थितियों से गुजर रहे हैं, उनमें शायद कविता और शब्द अपने अर्थ फिर से खोजने को विवश हो गये हैं।

जब अपने आपको अकेला और आक्रांत महसूस करता हूं तब दूसरों को अपनी ओर कर लेने की नाकाम कोशिश में कुछ लिख बैठता हूं। वैसे तो हम सभी अकेले हैं, और बुझती चिनगारियों को लपटों में बदल देने की क्षमता आज शायद सब खो चुके हैं।

जब अमीर खुसरो के एक शेर ने जादू किया

● राजेश्वरप्रसाद नारायण सिंह

अमीर खुसरो को लोगों ने तरह-तरह के दृष्टिकोण से देखा है। किसी ने उन्हें उच्च श्रेणी का योद्धा बताया है तो किसी ने संगीत का प्रगाढ़ प्रेमी—यहां तक कि वे सितार के आविष्कर्ता भी माने गये। यह एक विवादास्पद विषय है। वे उदारचेता सूफी थे, पर कुछ लोग ऐसे भी हैं जो उन्हें कट्टर मुसलमान—हिंदुस्तान में इसलाम का प्रचारक—बताते हैं। सच पूछा जाए तो इनमें से कोई भी रूप अमीर खुसरो का वास्तविक स्वरूप नहीं है। यदि उनका वास्तविक रूप देखना है तो उसे हमें उनकी काव्य-कृतियों में देखना पड़ेगा — खड़ी बोली की उनकी पहेलियों में नहीं, उनके फारसी कलामों में। इस संदर्भ में मुझे एक रोचक प्रसंग याद आता है, जिसे एक बार मुझे स्व. पद्मसिंह शर्मा ने सुनाया था। वह इस प्रकार है—

ईरान की एक कुशल कवयित्री की काव्य-कृति पर आसक्त होकर एक शायर ने उसे पत्र लिखा और उसे देखने की इच्छा प्रकट की। वह देखने में अत्यंत सुंदर थी, फिर भी उसे अपने सौंदर्य पर घमंड नहीं था—गर्व था अपने काव्य पर। तो उसने उत्तर में यह सुंदर शेर लिख भेजा —

हमचु बू पिनहा शुदम दर-रंगे गुल
मानिंदे गुल,
करके दीदन मैल दारद दर सुखन
बीनद मरा।

अर्थात, फूल में जिस तरह उसकी गंध छिपी रहती है, उसी तरह मैं अपनी कविता में छिपी हुई हूं। जो मुझे देखने का इच्छुक हो, वह मुझे मेरी शायरी में देखे, क्योंकि मेरा असली रूप उसी में है। फूल में ही उसकी महक पायी जा सकती है।

यह कथन अमीर खुसरो पर भी लागू होता है। उनके कलाम ही उनके वास्तविक स्वरूप को प्रदर्शित करते हैं। बकौल 'तज-करए-इरफान' — "अमीर साहब का कलाम जिस कदर फारसी में है, उसी कदर ब्रजभाषा में।" खेद है कि जहां उनके फारसी कलाम काफी बड़ी संख्या में उपलब्ध हैं, वहां ब्रजभाषा की रचनाओं का कहीं नामो-निशान भी नहीं है। जाहिर है कि मुसल-मानों ने तो उनके फारसी कलामों की रक्षा

की, पर हिंदुओं न ब्रजभाषा की उनकी रचनाओं की रक्षा नहीं की। केवल कुछ पहेलियां प्रसार पाती रहीं और कुछ दोहे जो उन्होंने अपने गुरु निजामुद्दीन औलिया के निधन पर लिखे थे।

फारसी के उनके कलाम जाहिर करते हैं कि वे कितने ऊंचे दर्जे के शायर थे। किसी ने ठीक ही कहा है कि उनका एक-एक कलाम मोतियों से तोले जाने के काबिल है। गालिब इस देश के किसी शायर को अपने से बड़ा नहीं मानते थे, सिवा खुसरो के, जिनके संबंध में उन्होंने लिखा भी है—

गालिब मेरे कलाम में क्योंकर मजा न हो
पीता हूं धोके खुसरबे-शीरीं सखुन के पांव

उनके कलाम किसी शायर की इस उक्ति के कि 'वह बात दे जबां में कि दिल पर असर करे', ज्वलंत उदाहरण हैं। इसकी एक मिसाल पेश है—

नादिरशाह द्वारा दिल्ली का कत्ले-आम इतिहास की एक प्रसिद्ध घटना है। उस समय दिल्ली के तख्त पर मुहम्मद-शाह रंगीला आसीन था। वह एक पुरुषार्थहीन व्यक्ति था तथा अपना सारा वक्त ऐशोआराम में बिताया करता था। उसे लड़ाई से क्या मतलब! उसके शासनकाल में ही मराठों ने सर्वप्रथम दिल्ली में प्रवेश पाया। तालकटोरे में बाजीराव के साथ मुगल सेना की कसकर लड़ाई हुई, पर वह जीत न सकी। मराठे विजयी हुए, जिसके फलस्वरूप मुहम्मद शाह को नर्मदा तथा चंबल नदियों के बीच का सारा इलाका, मालवा सूबे के साथ-साथ मराठों को देना पड़ा।

इधर नादिरशाह फारस का तख्त छीनकर गजनी, काबुल और कंधार तक अपना आधिपत्य जमा बैठा था और अब हिंदुस्तान को जीतने का स्वप्न देख

अमीर खुसरो

रहा था, पर हिम्मत नहीं हो रही थी कि वह इस देश पर आक्रमण करे। तभी कानों में मुहम्मदशाह के मराठों के हाथों हारने तथा उसकी कमजोरियों—विलासिता, दरबार में शोहदों का बोलवाला आदि—की खबरें पहुंचीं और वह १७३८ ई. में सिंधु नदी को पार कर हिंदुस्तान में आ

धमका। इधर शाही फौज के सिपहसालार खां दौरां तथा अवध के प्रतिनिधि सादतअली खां आपस में लड़ते रहे, उधर फारस की सेना दिल्ली की ओर क्रमशः अग्रसर होती रही। इसे आगे बढ़ते देखकर खां दौरां और सादतअली खां ने आपस में समझौता कर लिया और शीघ्र एक सेना का गठन किया। पानीपत के आसपास दोनों सेनाओं की मुठभेड़ हुई। मुगल सेना बड़ी बहादुरी के साथ लड़ी, जिसकी नादिरशाह कभी उम्मीद नहीं करता था। यहां तक कि नादिरशाह फारस लौटने तक को तैयार हो गया। तभी मुहम्मदशाह एक भारी मूर्खता कर बैठा, बिना किसी की राय लिये, पालकी में बैठ-कर वह नादिरशाह से छावनी में मिलने चला गया। नादिरशाह में पुनः साहस जाग्रत हुआ, उसने बादशाह का खूब स्वागत किया, पर साथ ही व्यंग्य-भरे शब्दों में बोल उठा —"काफिर हिंदुओं को कर देकर तुमने इसलाम की इज्जत धूल में मिला दी और जब बाहर का आक्रमणकर्ता तुमसे लड़ने आया तब डरकर तलवार डाल दी, तुम सचमुच कायर हो!" पर मुहम्मदशाह अपमान का घूंट पी गया, उत्तर देने का उसे साहस न हुआ। बदले में उसने नादिर-शाह को काफी रुपये दिये, साथ ही तरह-तरह की और चीजें भी। दरबार की एक हसीना, गानेवाली नूरबाई तक को भेंट के रूप में प्रस्तुत किया, इस आशा में कि

वह उन्हें लेकर फारस लौट जाएगा। नादिरशाह उसे धन्यवाद देते हुए बोला —"जहांपनाह! हिंदोस्तान आकर आपके घर न जाऊं, यह शिष्टता के विरुद्ध होगा। मैं आपके साथ दिल्ली चलूंगा।"

बादशाह सन्न! पर करता क्या, दोनों साथ-साथ दिल्ली आये। नादिरशाह लालकिले में ठहरा और तुरंत ही किले के चारों ओर अपने सिपाहियों को उसने तैनात कर दिया, यानी मुहम्मदशाह को उसके ही किले में बंदी बना डाला।

तभी एक दिन बाजार में यह अफवाह फैली कि नादिरशाह की मृत्यु हो गयी। चांदनी चौक में उसके कुछ सिपाही खरीदारी कर रहे थे। बाजार के कुछ लोगों ने आवेश में आकर उनकी हत्या कर दी। इसकी खबर नादिरशाह के कानों तक पहुंची। फिर क्या था, वह क्रोध से पागल हो उठा और उसने अपनी फौज के सिपाहियों को हुक्म दिया कि दिल्लीवालों का कत्लेआम किया जाए। मर्द, औरत, बूढ़े, बच्चे, मवेशी कत्ल किये जाने लगे। खून की नदी बह चली। वह स्वयं सुनहरी मसजिद के ऊपर बैठकर इसे देखता रहा। किसी की हिम्मत न हुई कि जाकर उससे इसे रोकने का अनुरोध करे। तभी एक बूढ़े दरबारी ने हिम्मत की। वह नादिरशाह के पास पहुंचा और अमीर खुसरो के इस शेर को पढ़ा—

कसे न मांद कि दीगर ब तेगे-नाज कुशी।
मगर कि जिंदा कुनी खल्करा व बाज कुशी।

हाकी टीम हाथी समान है
और हाथी दिखावटी दांत

(कोई बचा नहीं, सब तुम्हारी कहर के शिकार हो गये—निगाहे-नाज की तलवार से तुमने सबको मार डाला। अब लोगों को लुत्फ की निगाह से जिंदा करो ताकि इन्हें फिर मार सको।)

नादिरशाह स्वयं एक शायर था, इस अन्योक्ति के सुनते ही तड़प उठा। आज्ञा दी कि कत्लेआम बंद किया जाए। अमीर खुसरो के इस शेर ने जादू का काम किया।

नादिरशाह इसके बाद फारस लौट गया, पर किले के खजाने को खाली करके—खास तौर से तख्ते-ताऊस और कोहेनूर हीरे को साथ लेकर।

—२-बी, महारानी बाग, नयी दिल्ली-१४

• ऑलिवर विलियम

अफवाहों के घेरे में महारानी एलिजाबेथ

सन १५६६ का एक दिन। लंदन के भव्य सेंट स्विथिन गिरजाघर में अर्ल ऑव लीसेस्टर आकर्षक लिबास में अपने सात सौ वर्दीधारी सेवकों के साथ उपस्थित थे। बैंड का मधुर संगीत हवा में गूंज रहा था। लीसेस्टर का विवाह महारानी एलिजाबेथ प्रथम से होनेवाला था। उपस्थित जन-समुदाय में उल्लास था। किंतु जब लंबी प्रतीक्षा के बाद भी महारानी के आने के कोई आसार दिखायी न दिये तो लीसेस्टर को लौट जाने को विवश होना पड़ा। बिना दुलहन के शादी हो भी कैसे !

तभी एक रोचक घटना घटी। थेम्स-तट पर महारानी पूरी सज-धज के साथ अपनी दो परिचारिकाओं सहित एक नाव से उतरीं। वे ग्रीनविच राजमहल से आयी थीं। एक सजी हुई गाड़ी, जो थेम्स-तट पर प्रतीक्षा में खड़ी थी, महारानी को लेकर गिरजाघर की ओर चल पड़ी। गिरजाघर तो कब का सुनसान हो चुका था, अतः महारानी भी पुनः थेम्स-तट की ओर लौट पड़ीं। लौटते समय अचानक महारानी ने लीसेस्टर को अपनी गाड़ी के सामने खड़ा पाया। लीसेस्टर को देखते ही वे अपनी गाड़ी से नीचे कूद पड़ीं और उन्हें अपने भुजपाश में कस लिया। तत्पश्चात दोनों गाड़ी पर सवार हुए और कोचवान को लंदन ब्रिज होकर ग्रीनविच चलने की आज्ञा दी।

उस समय महारानी एलिजाबेथ की

उम्र तैंतीस साल की थी। प्रश्न है, जब गिरजाघर से निराश लौटने पर दोनों एक-दूसरे से मिले तब शादी के लिए पुनः गिरजाघर न आकर ग्रीनविच क्यों चले गये ? क्या गिरजाघर आना पूर्वनियोजित नाटक मात्र था ?

साधारणतया तो इस घटना को एक संयोग ही माना गया और कहा गया कि पहले महारानी ने लीसेस्टर से शादी करना मंजूर कर लिया, पर अंतिम क्षण में अपना निर्णय बदल दिया। इसी कारण गिरजाघर विलंब से आना उचित समझा ताकि शादी टल जाए, किंतु दूसरे अनुमान के अनुसार महारानी और लीसेस्टर को आपस में मिलकर यह नाटक इसलिए खेलना पड़ा ताकि दरबारियों तथा अन्य लोगों का संदेह दूर हो जाए और वे एलिजाबेथ को पुरुष नहीं स्त्री ही समझें।

इतिहासकारों में इस प्रश्न पर विवाद छिड़ा हुआ है कि इंगलैंड की महारानी एलिजाबेथ प्रथम स्त्री थीं या पुरुष। कुछ इतिहासकारों ने उन्हें स्त्रीवेश में पुरुष सिद्ध करना चाहा है जबकि अधिकांश विद्वानों की राय है कि वे स्त्री ही थीं। यहां प्रस्तुत हैं दोनों मत के विद्वानों के तर्क

रंग-ढंग मर्दाना

राजनीतिक क्षेत्र में एलिजाबेथ का आगमन उस काल में हुआ जब कि यह क्षेत्र मात्र पुरुषों का माना जाता था; लेकिन महारानी ने अपनी अपूर्व सूझ-बूझ के कारण राजनीतिक क्षेत्र में अपना एक विशिष्ट स्थान बना लिया था। उन्होंने न केवल कैथोलिक और प्रोटेस्टेंट के बीच विभाजित अपने देश को एकता के सूत्र में बांधा बल्कि विदेश-नीति के मामले में भी अपूर्व कुशलता दिखायी।

एलिजाबेथ एक उच्चस्तरीय विदुषी थीं। वे छह भाषाओं में धाराप्रवाह बोल सकती थीं। उनके इन्हीं गुणों को देखते हुए महारानी के शिक्षक रोजर एस्केम ने टिप्पणी की थी कि एलिजाबेथ में काम करने की शक्ति और कुशलता पुरुषों की-सी है।

उनका घुड़सवारी और चलने का ढंग पुरुषों का-सा था। शारीरिक संरचना भी मर्दाना थी।

ये बातें अस्वाभाविक नहीं कही जा सकतीं। देश को उस समय दक्ष और कुशल नेता की जरूरत थी, जो हर मुसीबत का सामना कर सके। एलिजाबेथ ने जानबूझकर स्त्री-जनित दुर्बलताओं को पास नहीं फटकने दिया। पुरुष के-से कुछ गुण उन्होंने अपने पिता हेनरी अष्टम से प्राप्त किये थे।

महारानी की तसवीरों में उन्हें सदैव सुनहरे बालों सहित दिखाया जाता है, किंतु इस तथ्य को नकारा नहीं जा सकता कि उनके पास नकली बालों के विग का एक बड़ा संग्रह था। जब भी वे यात्रा पर निकलतीं तो विग साथ ले जाती थीं।

इस कारण यह बात कही जा सकती

है कि वे अपने गंजेपन को छिपाने के लिए वैसा करती थीं। यह अनुमान गप्प के सिवा और कुछ नहीं हो सकता क्योंकि ट्यूडर-काल में स्त्रियों में विग का प्रचलन था।

स्पेन के तत्कालीन राजा राजनीतिक उद्देश्यों से महारानी एलिजाबेथ से शादी करना चाहते थे। यह बात जब उनके दूत काउंट द फेरिया को मालूम हुई तब उन्होंने राजा को बताया कि कुछ लोगों ने उन्हें खबर दी है कि महारानी वंध्या हैं।

महारानी को विवाह-बंधन में बांधने के कई बार प्रयास किये गये, लेकिन सब असफल रहे। वे कहती थीं कि इंगलैंड की संपूर्ण जनता ही उनका पति है। इस सब से महारानी का प्रभाव जनता पर काफी अनुकूल पड़ा और उनका राजनीतिक पक्ष काफी सुदृढ़ रहा, पर दूसरी तरफ पुरुषों-जैसे रहन-सहन और शादी के बहिष्कार से मृत्युपर्यंत उनकी सही स्थिति के बारे में अनेक अटकलें लगायी जाती रहीं।

इन अटकलों के आधार पर एलिजाबेथ को पुरुष मान लेना भी भ्रामक होगा। वस्तुतः आजीवन विवाह न करने के पीछे राजनीतिक कारण था। उस समय प्रोटेस्टेंट और कैथोलिक में घोर कटुता होने के कारण यदि महारानी किसी एक समुदाय के व्यक्ति से विवाह कर लेतीं तो दूसरे समुदायवाले भड़क उठते। इस हालत में भयंकर गृह-युद्ध छिड़ सकता था, जिसका लाभ विदेशी भी उठाकर आक्रमण कर सकते थे।

हां, सेंट स्वीथिन की घटना में सचाई हो सकती है। लीसेस्टर से विवाह करने का निर्णय लेने के बाद महारानी को गृह-युद्ध की भनक लग गयी हो और उन्होंने देश के हित में विवाह टाल दिया हो। लीसेस्टर भी इस तथ्य को जान रहा होगा, तभी तो दोनों आजीवन अभिन्न मित्र बने रहे।

अंतरंग सखा और मित्र लीसेस्टर

एलिजाबेथ प्रथम का जन्म ७ सितंबर, १५३३ को हुआ था। दुर्भाग्य से जन्म के बाद उनकी मां ऐनी बोलेन को मृत्युदंड दिया गया था। एलिजाबेथ के पिता हेनरी अष्टम की अपनी पुत्री में रुचि कम रही। इस अबोध बच्ची का लालन-पालन एक सेविका किया करती थी।

एलिजाबेथ १५५८ में, २५ वर्ष की

उम्र में, इंगलैंड के राजसिंहासन पर आरूढ़ हुईं। उन्होंने मत्युपर्यंत ४४ वर्ष तक शासन किया।

एक विचित्र किंवदंती है। महारानी जब केवल सात वर्ष की थीं तब ग्लोसेस्टर शायर के ओवरकोर्ट में प्लेग का शिकार हुईं। जब पिता हेनरी को इस बीमारी का पता चला तब वे अपनी पुत्री से मिलने को लालायित हो उठे। संयोग से राजा हेनरी के पहुंचने के कुछ देर पहले ही बालिका एलिजाबेथ चल बसी। सेविका चेंपरनोन पर जो उस बालिका की देख-रेख कर रही थी, वज्रपात हो गया। चेंपरनोन अपने को विपत्ति में फंसा देख एलिजाबेथ के शव को उठा चुपचाप निकल पड़ी। उसने उस शव को उसकी मां ऐनी बोलेन की कब्र के निकट ही दफना दिया और एक ऐसी बालिका की तलाश करने लगी जिसे एलिजाबेथ के नाम से राजा हेनरी को दिखाया जा सके। जब कोई उपयुक्त बालिका नहीं मिली तब चेंपरनोन ने एक सुंदर बालक को बालिका एलिजाबेथ के कपड़े पहनाकर राजा हेनरी के सामने प्रस्तुत कर दिया। चूंकि हेनरी ने अपनी पुत्री को एक अरसे से नहीं देखा था अतः उन्हें असलियत की गंध तक न लगी। पर इस कथा में कितनी सच्चाई, है, कुछ कहा नहीं कहा जा सकता। ये सारी बातें कपोल-कल्पना के सिवा और कुछ नहीं जान पड़तीं।

इस घटना के बाद सेविका चेंपरनोन को सही बातों को छिपाकर रखने को बाध्य होना पड़ा और वही लड़का एलिजाबेथ के नाम से पलता-बढ़ता रहा।

'ड्राकुला' के लेखक ब्राम स्टोकर ने इस दंतकथा की खोजबीन की। उनका कहना है कि उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य ओवरकोर्ट में जब एक कब्र खोदी गयी तब एक छोटी लड़की का कंकाल बरामद हुआ। कंकाल के साथ कुछ कपड़े भी मिले जो कि ट्यूडर-काल के ही थे। स्टोकर का यह भी कथन है संभवतः नेविल नामक लड़के को, जो राजघराने की एक अवैध संतान था, एलिजाबेथ की जगह रख दिया गया था। इस खोज को प्रामाणिक नहीं कहा जा सकता।

यदि उपर्युक्त घटना को सत्य मान लिया जाए तो यह भी मानना होगा कि इस रहस्य का पता अर्ल ऑव लीसेस्टर को भी अवश्य होगा। वे दोनों लगभग सात वर्ष की उम्र में ही एक-दूसरे से परिचित हो चुके थे।

लीसेस्टर ने दो शादियां की थीं। महारानी एलिजाबेथ के 'प्रेमी' के रूप में लीसेस्टर का काम संभवतया दो पुरुषों की मित्रता पर परदा डालने का ही रहा होगा।

वस्तुतः महारानी एलिजाबेथ थीं तो स्त्री ही किंतु अपनी विलक्षण प्रतिभा के कारण कुछ अफवाहों का शिकार बनीं, जो राजनीतिक क्षेत्र में अप्रत्याशित भी नहीं मानी जा सकती। ●

जिंदगी बिखरा कथानक

लक्ष्य तो दृढ़ थे मेरे आरंभ से ही
किंतु हर घटना अचानक हो गयी
देख ली हमने चरमसीमा बहुत
अंत को हमसे बगावत हो गयी
यूं तो आये हैं कई दिन पूर्णिमा के
रात पर सारी अमावस हो गयी
देव पत्थर के रहे पिघले नहीं
प्रार्थना जग की बनावट हो गयी
और, कितने हम समेटें पृष्ठ इसके,
जिंदगी, बिखरा कथानक हो गयी

—प्रज्ञा तिवारी
कामथ वार्ड-२ गाडरवारा (म.प्र.)

शिक्षा : अर्थशास्त्र में एम. ए. । अनुभूति जब गहन हो जाती है तब वह स्वतः ही कविता या गीत के रूप में अभिव्यक्त हो जाती है। अतः ऐसा कहना कि मैंने कुछ गीत लिखे हैं, शायद गलत होगा। सच यह है कि कुछ सहज अनुभूतियां हैं जो मेरे द्वारा अभिव्यक्त हो गयी हैं।

● किरणबाला

आधुनिक साहित्य के शीर्षकों की भाषा

साहित्यकार अपनी पूरी कृति में भाषा के प्रति सतर्क रहता है, किंतु शीर्षक-चयन में अपेक्षाकृत अधिक सतर्क हो जाता है। कृति पाठक के संपर्क में बाद में आती है, शीर्षक पहले आता है।

आदिकाल की हिंदी कृतियों के शीर्षक मुख्यतः चार प्रकार के हैं : (क) 'रासो' शब्दयुक्त नाम, जैसे पृथ्वीराज-रासो, खुमानरासो, परमालरासो आदि। 'रासो' नाम उन ग्रंथों के लिए रूढ़ हो चुका था जो वीररस के होते तथा जिनमें नायक के पराक्रम का चित्रण होता था। (ख) 'रास' शब्द-युक्त नाम, जैसे बीसलदेवरास, चन्दबालारास आदि। 'रास' शब्द को संस्कृत के 'लास्य' से जोड़ा गया है। 'लास्य' शृंगार-प्रधान कोमल नृत्य है। 'रास' शब्द उन रचनाओं के नाम के साथ है जिनका मुख्य स्वर शृंगार है। (ग) छंद के आधार पर रखे गये नाम भी मिलते हैं, जैसे 'ढोला-मारू रा दूहा' आदि। (घ) 'विलास', 'प्रकाश' और 'चंद्रिका-' युक्त नाम जैसे 'वसन्त-विलास', 'जयचन्द-प्रकाश', 'जयमयंक-जसचंद्रिका'। प्रथम तीन वर्गों के नाम वर्णनात्मक तथा अभिधा पर आधारित हैं। नामों की भाषा काव्य-भाषा न होकर सामान्य भाषा है। अंतिम वर्ग अपवाद है। उसमें लक्षणा-व्यंजना है।

भक्तिकालीन शीर्षकों को चार-पांच वर्गों में रखा जा सकता है। सूफी-काव्यधारा के प्रमुख ग्रंथ नायिकाओं के नाम पर हैं, जैसे 'पदमावत', 'चित्रावली', 'हंसावली', 'मधुमालती', 'मृगावती' आदि। निर्गुण-काव्यधारा में कबीर-जसे कुछ संतों ने केवल छंद बनाये। कृतियों का नामकरण नहीं किया। जिन्होंने नामकरण किया, उनके नाम भी सपाट और वर्णनात्मक हैं। जैसे मलूकदास का 'ज्ञानबोध', 'भक्ति-विवेक' आदि। कृष्ण और राम-धारा में नामकरण की कई प्रवृत्तियां हैं। 'रुक्मणी-मंगल' (नंददास), 'जानकी-मंगल', 'पार्वतीमंगल' (तुलसीदास) आदि में 'मंगल' मांगलिक-संस्कार के अर्थ में है। 'सिद्धांत पंचाध्यायी', 'रासपंचाध्यायी', आदि शीर्षक संस्कृत के 'अष्टाध्यायी' की परंपरा में हैं। 'विनयपत्रिका', 'गोवर्धन-लीला' आदि नाम भी इसी प्रकार वर्णनात्मक हैं। कुछ थोड़े से नाम जरूर साहित्यिक हैं, जैसे 'सूरसागर', 'साहित्य-

लहरी', 'रामचरितमानस', 'रामचंद्रिका', 'भक्तमाल', 'ज्ञान-समुद्र', 'कवित्त-रत्नाकर' आदि । इन नामों में 'सागर', 'लहरी', 'मानस', 'चंद्रिका', 'माल', 'रत्नाकर' आदि के अर्थ लाक्षणिक हैं।

रीतिकाल में शीर्षकों में और भी वैविध्य है । शीर्षक आठ-नौ प्रकार के हैं । कुछ नाम छंद-संख्या पर आधारित हैं, जैसे दशक ('छत्रसालदशक), बीसा (वंसीबीसा), पचीसी (प्रेमपचीसी, जनक-पचीसी), चालीसा (शृंगार-चालीसा') शतक (विनयशतक), पचासा ('नयन-पचासा'), बावनी ('शिवाबावनी') । कई नाम 'प्रकाश' अथवा उससे संबद्ध शब्दों पर हैं । आशय यह है कि उन पुस्तकों में संबद्ध विषय पर 'प्रकाश' डाला गया है, जैसे 'काव्य-प्रकाश', 'अलंकार-प्रकाश', 'पिंगल-प्रकाश', वृत्त-कौमुदी, 'रसग्राहक-चंद्रिका', 'वैराग्यदिनेश' आदि । ऐसे ही बहुत-से नाम कल्पतरु ('कविकुल-कल्पतरु', 'कविकल्पद्रुम'), सागर ('बुद्धि-सागर', 'रस-रत्नाकर', 'शृंगार-सागर', 'अलंकार-रत्नाकर'), तरंगिणी ('युक्ति-तरंगिणी', 'दुर्गाभक्ति-तरंगिणी', 'कल्लोल-तरंगिणी', 'रस-कल्लोल'), दर्पण ('अंग-दर्पण', 'अलंकार-दर्पण', 'रसदर्पण') भूषण ('रामचन्द्र-भूषण', 'रामचन्द्राभरण', 'कविकुल कण्ठाभरणं', 'भाषा-भूषण') आदि नामों पर आधारित हैं । इनमें 'कल्पतरु', 'सागर' तथा 'तरंगिणी' भण्डार के अर्थ में आये हैं । 'भूषण' सौंदर्यवर्धक रूप में आया है और 'दर्पण' स्पष्ट करने के अर्थ में । वेलि ('वियोगबेलि', 'इश्कलता'), मंजरी ('शृंगारमंजरी', 'काव्यमंजरी') विवेक ('काव्यविवेक') , विचार (छंद-विचार), प्रबोध (रस-प्रबोध), चिंतामणि (अलंकार-चिंतामणि) आदि शीर्षक भी उपर्युक्त वर्गों के ही समीप पड़ते हैं ।

आधुनिक काल में भारतेन्दु-युगीन तथा द्विवेदी-युगीन शीर्षक भी हिंदी की परंपरा की लकीर से बहुत हटकर नहीं हैं । नवीनता का श्रीगणेश होता है छायावाद से । प्रगतिवाद में फिर थोड़ी सपाट-बयानी आयी । १९४३ में प्रकाशित 'तार सप्तक' की कई कविताओं के शीर्षक इसके प्रमाण हैं । 'जैसे हे महान् !' (मुक्तिबोध), 'फूटा प्रभात' (भारतभूषण अग्रवाल) 'जयतु हे कंटक चिरंतन' (अज्ञेय) आदि ।

आधुनिक काल में विभिन्न प्रकार की रचनाओं के शीर्षक प्रायः छोटे रहे हैं । किंतु सन ४० के बाद शीर्षक बड़े रखे गये हैं । उदाहरणार्थ—

'हरी घास पर क्षण भर' (अज्ञेय), 'अरी ओ करुणा प्रभामय' (अज्ञेय), 'कितनी नावों में कितनी बार' (अज्ञेय), चांद का मुंह टेढ़ा है' (मुक्तिबोध), 'क्योंकि मैं उसे जानता हूं' (अज्ञेय), 'सीढ़ियों पर धूप में' (रघुवीर सहाय), 'पहले मैं सन्नाटा बुनता हूं '(अज्ञेय) 'फूल नहीं रंग बोलते हैं' (केदार-

नाथ अग्रवाल)।

नींद में डूबे योद्धा सुरक्षित हैं' (अजित कुमार), 'देखिए न मेरी कारगुजारी' (अज्ञेय), 'आओ जल भरें बरतन में' (रघुवीर सहाय), 'दिमागी गुहान्धकार का औरांग उटांग' (मुक्तिबोध), 'युद्ध के संदर्भ में एक सूरज की याद' (रामदरश मिश्र), 'एक आदमी दो पहाड़ों को कुहनियों से ठेलता' (शमशेर), 'स्तालिन पर्दे में रहता है' (श्रीकांत वर्मा)।

कविता

'सबहिं नचावत राम गोसाईं' (भगवतीचरण वर्मा), 'शहर था शहर नहीं था' (राजकमल चौधरी), 'शहर में घूमता हुआ आइना' (उपेन्द्रनाथ 'अश्क'), 'एक सड़क सत्तावन गलियां, (कमलेश्वर), 'खाली कुर्सी की आत्मा' (लक्ष्मीकांत वर्मा), 'काले फूल का पौधा' (लक्ष्मीनारायण लाल), 'उतरते ज्वार की सीपियां' (राजेन्द्र अवस्थी)।

उपन्यास

'किराये के लिए खाली कोख' (गुरमुखसिंह जीत), 'एक गांधीवादी बैल की कथा' (राधाकृष्ण), 'नहीं यह कोई कहानी नहीं' (श्रवणकुमार)।

कहानी

आधुनिक कविता, कहानी, उपन्यास आदि सभी के शीर्षकों की एक विशेषता 'अटपटापन' है: 'दिमागी गुहान्धकार का औरांगउटांग' (मुक्तिबोध), 'आकाश में फसल लहलहा रही है' (रामदरश मिश्र), 'हरा अंधकार' (अज्ञेय), 'अधिकार की चुप्पी में' (केदारनाथ अग्रवाल), 'जब ईश्वर नंगा हो गया' (शिव शर्मा), 'एक बिछा हुआ आदमी' (विभुकुमार), 'एक प्लेट सैलाब' (मन्नू भंडारी), 'सपना बिक गया' (भगवती प्रसाद वाजपेयी) आदि

आधुनिक साहित्यिक भाषा की तरह आधुनिक शीर्षकों का भी मुख्य स्वर विचलन है अर्थात् सामान्य भाषा के प्रयोगों का अतिक्रमण। पुराने शीर्षकों में यह प्रवृत्ति प्रायः बिलकुल नहीं मिलती। यह विचलन तीन प्रकार का मिलता है: (क) **पदक्रम-विचलन**—'मछली मरी हुई'—राजकमल चौधरी। सामान्य भाषा में होगा 'मरी हुई मछली'। 'जल टूटता हुआ'—रामदरश मिश्र। सामान्य भाषा में होगा 'टूटता हुआ जल'। (ख) **विशेषण विचलन**—संज्ञा विशेष के साथ ऐसे विशेषणों का प्रयोग जो सामान्य भाषा में नहीं होता। कुछ विशेषण तो परस्पर विरोधी होते हैं, जैसे 'जिंदा मुर्दे'—कमलेश्वर, 'आवारा मसीहा'—विष्णु प्रभाकर, 'झूठा सच'—यशपाल आदि। ऐसे विशेषण और संज्ञा शीर्षकों में मिलते हैं जिनका अर्थ के स्तर

पर कोई मेल नहीं। जैसे—'अंधा सूरज'—श्री केशव, 'एक गांधीवादी बैल की कथा'—राधाकृष्ण, 'परकटी धूप'—रामदरश मिश्र, 'एक इंच मुसकान'—राजेन्द्र यादव, 'एक कतरा सुख'—वल्लभ डोभाल, 'दुःस्साहसी हेमंती फूल'—अज्ञेय इत्यादि। (ग) **क्रिया-विचलन**—संज्ञा के साथ ऐसे क्रिया-रूपों का प्रयोग जो सामान्य भाषा में उनके साथ नहीं आतीं। जैसे—'पहले मैं सन्नाटा बुनता हूं' (अज्ञेय), 'पक गयी धूप' (रामदरश मिश्र) ; 'नीला दरिया बरस रहा' (शमशेर), ; 'गिरवी रखी धूप' (मेहरुन्निसा परवेज) ; 'एक बिछा हुआ आदमी' (विभु कुमार), आदि। (घ)**अन्य विचलन**—कुछ अन्य प्रकार के भी प्रायोगिक विचलन शीर्षकों की भाषा में मिलते हैं। जैसे 'परायी प्यास का सफर' (आलम शाह खान), 'अंधेरे का सैलाव' (से. रा. यात्री), 'रेत की मछली' (कांता भारती), 'काल के पंख' (आनंद प्रकाश जैन), 'अट्ठारह सूरज के पौधे' (रमेश बक्षी), 'सूर्य का रक्त' (मनहर चौहान), 'चलनी में अमृत (कमला मार्कण्डेय) आदि।

प्रतीकात्मकता : — आधुनिक हिंदी साहित्य के काफी शीर्षक प्रतीकात्मक हैं। पंत का 'गुंजन', 'निराला का 'कुकुरमुत्ता' तथा प्रसाद की 'लहर' प्रतीकात्मक ही हैं। 'चांद का मुंह टेढ़ा' है में 'चांद' पूंजीवादी व्यवस्था का प्रतीक है। इसी प्रकार 'मादा कैक्टस' (लक्ष्मीनारायण लाल), 'रागदरबारी' (श्रीलाल शुक्ल), 'बबूल' (विवेकीराय), 'एक चूहे की मौत' (बदीउज्जमा), 'सफेद मेमने' (मणि मधुकर) आदि शीर्षक प्रतीकात्मक हैं।

कुछ शीर्षक लोकोक्ति अथवा उद्धरण से बने हैं। जैसे—'जबरा मारे रोने न दे' (भगवती चरण वर्मा), 'मेरी भव बाधा हरो' (रांगेय राघव), 'कागा सब तन खाइयो' (गुरुबक्शसिंह) आदि।

कुछ शीर्षक, यद्यपि बहुत कम संस्कृत या अंग्रेजी के भी मिलते हैं। —'मृत्युर्धावति पंचम :' (अज्ञेय), 'अथातो सौंदर्य जिज्ञासा' (रमेश कुंतल मेघ) 'युद्धं देहि' (ओंकारनाथ श्रीवास्तव), 'एकोऽहं बहुस्याम्' (रघुवीर सहाय), 'योअर्स फेथफुली' (मुद्राराक्षस) आदि।

ऐसे शीर्षक भी मिलते हैं जिनमें 'अमानक हिंदी' अथवा उसके लोकभाषिक रूप का प्रयोग हुआ है। जैसे—'करिए छिमा' (शिवानी), चिट्ठीरसैन (शैलेश मटियानी।

आधुनिक साहित्य के काफी शीर्षकों का उद्देश्य पाठकों को चौंकाना है।

ई-४।२३ मॉडल टाउन, दिल्ली—९

"यह सूर्यास्त की पेंटिंग है और मैंने जरमनी में इसे बनाया था।"

"बनायी होगी जरमनी में, हमारे हिंदुस्तान में तो इस तरह का सूर्यास्त होता ही नहीं।"

चार उपन्यास

आंचलिकता से महानगरीय संस्कृति तक

कगार की आग : नरसिंह डांडा, लधौंन आदि पिछड़े गांवों की सतह से उभरी अमानुषीय यातना की जीती-जागती तसवीर है यह उपन्यास। मानवीय संबंधों में हो रहे सुधारों की निरंतर घोषणाओं के बाद भी आज पिरमा, गोमती और कुनंबा-जैसे जीव कलिया, तेजुवा-जैसे नर-पिशाचों के शिकार बने हुए हैं। वास्तव में इन लोगों के शिकारी कोई एक-दो नहीं वरन कदम-कदम पर बिखरे हुए हैं—कहीं पटवारी, कहीं खुशाल और कहीं लाला तिरपन-लाल—जिसका जहां दांव पड़ जाए।

गोमती इस उपन्यास में केवल एक नारी ही नहीं है वरन एक लालसा, एक वासना है भूखे पुरुष-समाज की, जो कभी कानून का भय दिखाकर, कभी शक्ति के बल पर और कहीं पैसे की चकाचौंध से उसका भोग करता आया है। शरीर पर पड़े खूनी, लोलुप रक्त से सने पंजों के निशानों के नीचे कहीं उसकी नारी फिर भी सुरक्षित रहती है, जो लगातार ममता और सहानुभूति के रूप में बराबर उसे 'हांट' करती रहती है। खुशाल और तिरपनलाल के पास रहकर भी पिरमा के पास गोमती का लौट आना यही सूचित करता है। उपन्यास में पैशाचिक अत्याचारों का दर्द पाठकों के हृदय में गहरे उतर जाता है। इस दृष्टि से यह लेखक का सबसे सशक्त उपन्यास कहा जा सकता है। भाषा और परिवेश में आंचलिकता का पूर्ण निर्वाह हुआ है। पूरे उपन्यास में तीव्र प्रवाह और चुंबकीय आकर्षण है। हृदयद्रावक प्रसंग आक्रोश पैदा करते हैं।

कगार की आग

लेखक—हिमांशु जोशी, प्रकाशक—भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, पृष्ठ ९९, मूल्य—६ रु.

यह भी नहीं : महीपसिंह कहानीकार के रूप में जाने जाते हैं। प्रस्तुत उपन्यास उनका प्रथम प्रयास है, जो बंबई महानगरी के 'वर्किंग क्लास' की ऊंची-ऊंची अभिलाषाएं, सीमित साधनों की कुंठा, पारिवारिक टूटन और तथाकथित उच्च-

वर्ग की घिनौनी व्यावसायिकता, उसमें यौन की भूमिका आदि के रूप में एक विडंबना प्रस्तुत करता है। उपन्यास में पात्र और घटनाओं का बाहुल्य है। विकास, मधु, चोपड़ा, दर्शन, प्रीतमलालजी आदि शुद्ध व्यावसायिक संबंधों में विश्वास रखते हैं। स्त्री उनके लिए एक आवश्यकता से अधिक नहीं है, जिसकी पूर्ति हो जाने पर उसे नाकारा करार दे दिया जाता है। स्त्री-पात्रों की यह स्थिति प्राय: विवशता है, कहीं पारिवारिक बोझा और कहीं ऊंची आकांक्षाएं। लेखक ने उपन्यास में उन प्रसंगों पर विशेष 'फोकस' डाला है, जिनमें मानवीय संबंधों की नित्य हत्या होती है और लगता है कि यहां के लोग इस हत्या के अभ्यस्त हो गये हैं। पंकज, पाठक आदि शिक्षा-क्षेत्र में कुछ आदर्शों की बात अवश्य करते हैं, अंततः असफल सिद्ध होते हैं।

पूरे उपन्यास में पात्रों की भाषा और वातावरण में महानगरीय संस्कृति मुखरित हो उठी है। लगता है लेखक मूवी कैमरा लिये बंबई की सड़कों, कॉलेज, फ्लैट्स, क्लब, आफिसों में घूमा है। शैली और प्रस्तुति की दृष्टि से इसमें एक खिंचाव है, जो पाठकों को बांधे रखता है।

यह भी नहीं

लेखक--महीपसिंह, प्रकाशक--राजपाल एंड संस, कश्मीरी गेट दिल्ली, पृष्ठ--३०६, मूल्य--१५ रु.

अपने लोग : गोरखपुर की पृष्ठभूमि को लेकर लिखे गये इस उपन्यास को लेखक ने आंचलिक उपन्यास की संज्ञा दी है। पढ़ने पर इस वृहद्काय उपन्यास में बीच-बीच में आये गोरखपुर नाम तथा वहां के उर्दू बाजार आदि के अतिरिक्त आंचलिकता की कोई विशेष छाप दिखायी नहीं देती। उपन्यास में वर्णित साहित्यिक चर्चाओं, पार्टी-पालिटिक्स, समाज में भ्रष्टता आदि की बात केवल गोरखपुर से ही नहीं जुड़ी है वरन ये बातें किसी भी नगर की हो सकती हैं। एक बात अवश्य लेखक ने सशक्त रूप से प्रस्तुत की है और वह है महानगर से निकलकर छोटे नगर में जा बसने पर एकाकीपन की अनुभूति। इसकी अभिव्यक्ति प्रमोद और उसके परिवार के द्वारा करवायी है। अपने लोगों में आने की लालसा, सुख-दुःख को बांटने की कर्तव्य-भावना जहां प्रमोद को 'कंसोल' करती है वहां अपने लोगों के अनचीन्हे अधिकारों की मांग ऊब पैदा करती है।

वास्तव में यह कहना उपयुक्त होगा कि यह उपन्यास आंचलिकता से अधिक सम-सामयिक है क्योंकि ऐसे छोटे नगरों के शैक्षिक क्षेत्र में फैली अव्यवस्था, भ्रष्टाचार, व्यभिचार, राजनीतिक दल-बदल, नयी पीढ़ी की सामाजिक चेतना आदि इनके आधुनिक संस्करणों का लेखा-जोखा प्रस्तुत करती हैं। उपन्यास में कोई निश्चित कथा नहीं है। प्रमोद, विलास, पवन, बी. लाल, कलावती, डॉ. सूर्यकुमार, उमेश, माधवी, रमेश आदि पात्र पूरे शहर

के सांस्कारिक ठहराव और नयी चेतना की गति को व्यक्त करते हैं।

उपन्यास में बीच-बीच में स्थानीय भाषा का प्रयोग मिलता है। उपन्यास की लंबाई खटकती है। कुछ प्रसंगों की पुनरावृत्ति हुई है और कुछ को अनावश्यक खींचा गया है।

अपने लोग

लेखक--रामदरश मिश्र, प्रकाशक--नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नयी दिल्ली, पृष्ठ--४४२, मूल्य--२८ रु.

सोनभद्र की राधा : समाज में फैली कुरीतियों पर कुठाराघात करता हुआ यह उपन्यास नयी पीढ़ी द्वारा नये समाज की बात करता है। इसके पात्र गोबिन, रैदास, गोपी इस नयी पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करते हैं। गोबिन और अनुराधा का प्रेम संबंध जहां अंतर्जातीय विवाह का समर्थन करता है वहां गोबिन के नाटक समाज में क्रांति का आहवान करते हैं। वास्तव में आज के २०-सूत्री कार्यक्रम के अंतर्गत गांवों में आ रही नवचेतना का यह उपन्यास दिग्दर्शन कराता है।

सोनभद्र की राधा

लेखक—मधुकर सिंह, प्रकाशक—राजपाल एंड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली, पृष्ठ--११७, मूल्य—७ रु.

हिंदी आलोचना : बीसवीं शताब्दी : हिंदी आलोचना पर इससे पूर्व अनेक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं तथा हिंदी साहित्य के इतिहास में आलोचना पर काफी कुछ लिखा जा चुका है। इस प्रकार के सभी लेखन में प्रायः किन्हीं ठोस तथ्यों का निरूपण न होकर आलोचना का क्रमिक विकास ही प्रमुख ध्येय रहा है। प्रस्तुत पुस्तक भी इसका अपवाद नहीं है। आलोचना की पृष्ठभूमि बताते हुए द्विवेदी-युग, शुक्ल-युग तथा शुक्लोत्तर युग, तीन भागों में प्रमुख रूप से विषय को विभक्त किया गया है। शुक्लोत्तर-आलोचना के अंतर्गत छायावादी प्रगतिवादी आलोचना को समाहित कर दिया गया है। शुक्लोत्तर आलोचना के संबंध में लेखिका की दृष्टि इस बात पर अधिक रही है कि अमुक आलोचक की आलोचना में शुक्लजी से कितना साम्य है और कितना वैषम्य। साठोत्तरी आलोचना में परस्पर-विरोधी तथ्यों को प्रस्तुत किया गया है, जैसे विजयदेव साही के निबंध 'नई कविता' (१९६०-६१) में अज्ञेय को प्रसाद की परंपरा का कवि बताया है, जब कि अज्ञेय स्वयं प्रसाद को विश्वविद्यालयी कवि मानते हैं। नाटक, कथा, आलोचना के साथ सातवें दशक की आलोचना पर भी इस पुस्तक में चर्चा हुई है, यह बात और है कि उसके कोई ठोस परिणाम नहीं निकले। पत्रिकाओं में प्रकाशित होनेवाली पुस्तक - समीक्षाओं को लेखिका ने निष्प्राण बताया है। संभवतः वे भूल गयीं कि साहित्य की तथ्यात्मक या सैद्धांतिक आलोचना का अर्थ विद्यार्थियों या लेखकों के लिए ही होता है। सामान्य पाठक

"भाग्यशाली मैं हूं या तुम यह तो ज्योतिषी ही बतलाएगा।"

"अजी भाग्यशाली तो मैं हूं जो एक साथ दो-दो हाथ देखने को मिले।"

का उससे कम ही वास्ता रहता है। उसे तो केवल यह जानने की उत्सुकता होती है कि अमुक पुस्तक का विषय क्या है और उसकी प्रस्तुति कितनी प्रभावशाली है न कि उस पुस्तक में सिद्धांतों का कितना निरूपण हुआ है।

हिंदी आलोचना : बीसवीं शताब्दी
लेखिका—निर्मला जैन, प्रकाशक—नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नयी दिल्ली पृष्ठ—९५, मूल्य—११ रु.

भाषा विज्ञान

खड़ी बोली : इधर भाषा-विज्ञान पर काफी काम हुआ है, किंतु साहित्यिक कृतियों के भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन पर अपेक्षाकृत कम काम हुआ है। यह पुस्तक इस अभाव की कुछ सीमा तक पूर्ति करती है। पुस्तक के शीर्षक से लगता है कि इसमें खड़ी बोली के उद्भव, विकास, उसके रूप-विकास आदि का वैज्ञानिक अध्ययन होगा, किंतु पुस्तक पढ़ते ही यह भ्रम दूर हो जाता है। पूरी पुस्तक खड़ी बोली निर्माता चतुष्टय के लल्लूलाल के साहित्य का भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत करती है। उनके साहित्य में खड़ी बोली, उसके अंग-प्रत्यंग की स्थिति, परिवर्तन आदि को काफी विस्तार से दिया है। अंतिम अध्याय में लल्लूलाल के समसामयिक तथा उनकी परंपरा के लेखक महावीरप्रसाद द्विवेदी, अयोध्यासिंह उपाध्याय, किशोरीलाल गोस्वामी, बाबू श्यामसुंदर दास, रामचंद्र शुक्ल, प्रसाद, प्रेमचन्द, जैनेन्द्र, आदि को भी समेट लिया गया है। पुस्तक के विवेचन के आधार पर इसका शीर्षक 'खड़ी बोली' न होकर 'लल्लूलाल के साहित्य का भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन' होना चाहिए।

—डॉ. शशि शर्मा

खड़ी बोली
लेखक—ओंकार राही, प्रकाशक—लिपि प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ—२०७, मूल्य—२४ रु.

हत्या और हेरोइन

"अभियुक्त शमीम रहमानी को भारतीय दंड-संहिता की धारा ३०२ के तहत दंडनीय अपराध के लिए दंडित किया जाता है और उसे आजीवन कारावास की सजा दी जाती है।"

—सेशन कोर्ट
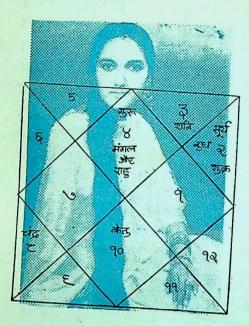
● प्रस्तोता : डॉ. मोहनकांत गौतम

शमीम : गौतम-हत्याकांड से पहले
साथ में शमीम की कुंडली

५ अक्तूबर, १९६९।

सनसनीखेज 'गौतम-हत्याकांड' के फैसले का दिन।

लखनऊ के सत्र-न्यायाधीश श्री एस. एन. शुक्ला की अदालत। दर्शकों और दोनों पक्षों से संबंधित लोगों के सामने ११३ पृष्ठों का फैसला सुनाते हुए माननीय न्यायाधीश ने भारतीय दंड-विधान की धारा ३०२ के अंतर्गत शमीम रहमानी को डॉ. हरिओम गौतम की हत्या के अभियोग में आजीवन कारावास की सजा सुना दी।

शमीम के बड़े भाई अमीर अहमद रहमानी को भी भारतीय दंड-विधान की धारा २०१ के अंतर्गत तीन वर्ष के सपरिश्रम कारावास की सजा सुनायी गयी। उच्च न्यायालय में अपील करने पर अमीर अहमद रहमानी की सजा घटाकर एक वर्ष कर दी गयी, लेकिन शमीम की सजा बहाल रखी गयी। सर्वोच्च न्यायालय में याचिका दायर करने पर अमीर अहमद रहमानी को संदेह का लाभ देते हुए मुक्त कर दिया गया, किंतु शमीम की सजा में कोई कमी नहीं हुई।

अंततः शमीम की ओर से राष्ट्रपति के समक्ष दया की याचना की गयी। याचना में शमीम की रिहाई के लिए तीन कारण दर्शाये गये :

१. शमीम के पिता की मृत्यु हो गयी है।

२. शमीम की मां अकसर बीमार रहती हैं।

३. शमीम स्वयं बीमार रहा करती है। उसे इनसोमनिया (निद्रा न आने का मानसिक रोग), अनीमिया (रक्त की की कमी) और दिल के दर्द की शिकायत रहती है।

शमीम की ओर से दायर यह अपील निरर्थक नहीं गयी और राष्ट्रपति ने उसे

संगीत प्रेमी डॉ. गौतम हारमोनियम बजाते हुए

मेडिकल उपाधि ग्रहण करते समय

आजीवन कारावास की सजा से मुक्त कर दिया। इसी के बाद अखबारों में समाचार छपे कि बंबई में एक फिल्म बन रही है—'एतवार', और उसकी नायिका हैं—शमीम रहमानी। अखबारों में यह भी बताया गया कि 'एतवार' की कहानी शमीम और डॉ. गौतम के संबंधों पर आधारित होगी।

मैं डॉ. गौतम को जितने निकट से जानता हूं उतने निकट से शायद ही उन्हें कोई जानता हो—यह इसलिए कि डॉ. गौतम मेरे सगे भाई थे—बड़े भाई।

सहानुभूति किसलिए

यदि हम इस हत्याकांड पर दृष्टिपात करें तो कई तथ्य सामने आते हैं। इस मुकदमे में सरकार मुद्दई थी और मुकदमा सर्वोच्च न्यायालय में पहुंचकर समाप्त हो चुका था। उसके बाद शमीम रहमानी को 'क्षमादान' करना राष्ट्रपति की अधिकार-सीमा में भी आता है। शमीम राजनीतिक कैदी नहीं थी। शमीम को क्षमा करने के साथ-साथ क्या डॉक्टर की पत्नी लक्ष्मी किसी की सहानुभूति पाने योग्य नहीं थी?

लक्ष्मी के दिल पर क्या बीती, इसके बारे में भी क्या किसी ने सोचा था? डॉ. गौतम की हत्या के बाद उसके परिवार पर गाज ही नहीं गिर पड़ी, लकवे से मारा उसका बूढ़ा पिता भी यह सदमा न सह सका। और उसकी बूढ़ी मां के बारे में भी कभी किसी ने सोचा? जिस घर में डाक्टर

लेखक—डॉ. मोहनकांत गौतम स्वर्गीय डॉ. हरिओम गौतम के छोटे भाई हैं और लायडन विश्वविद्यालय में भाषाविद के पद-पर कार्य कर रहे हैं।

बंदी शमीम एवं अमीर अहमद रहमानी

सेशन अदालत से दंडित होने के बाद

के अतिरिक्त रोजगार का कोई सहारा नहीं था, इन आठ वर्षों में तीन बच्चों की विधवा मां पर क्या गुजरी, इसका उत्तर संभवतः लक्ष्मी के अनवरत बहते आंसू ही दे सकेंगे। कैसे उसने बी. ए. और एल. टी. पास की, कैसे उसने पिता की ममता से वंचित बच्चों को फीकी हंसी हंसकर पढ़ने की प्रेरणा दी, कैसे उसने पढ़ाई का पैसा जुटाया, फिर मकान का किराया, खाने-पीने आदि का प्रबंध, जबकि सरकार ने केवल ८० रु. मासिक डॉ. की पेंशन दी। अफसरों के सामने सुविधा मांगने पर वही संक्षिप्त उत्तर मिलता—'बेटी, चिंता मत करो, हम तुम्हारे बच्चों की सुविधा का पूरा खयाल रखेंगे।'

इसके विपरीत शमीम अपनी रिहाई के बाद सिने-नायिका बन गयी और प्रसिद्धि की ओर अग्रसर हुई।

दूसरे महायुद्ध के अपराधी बूढ़े और बीमार होने पर भी सजाएं कारावासों में ही बिता रहे हैं। बीमारी होने पर उनका इलाज होता रहता है, पर रिहा नहीं किया जाता, क्योंकि अपराधी को समाज की सुविधाओं से वंचित कर अपने अमानवीय पाप के प्रायश्चित को महसूस करने के लिए ही उसे आजीवन करावास दिया जाता है।

लैला-मजनू की कहानी नहीं

हम उस तथ्य को नहीं भूल सकते कि बयानों के अनुसार डाक्टर की हत्या शमीम ने ही की थी, क्योंकि इसी अपराध पर

> वहां डॉ. गौतम का शव पड़ा था। मोहम्मद साबिर ने ब्योरा दिया कि शव पीठ के बल दरवाजे के आरपार सीधा पड़ा था, पैर भीतर दीवानखाने में थे और ऊपरी धड़ बाहर बरामदे में। बायां हाथ मुड़ा हुआ पेट पर रखा था और दायां हाथ बाहर फैला हुआ बरामदे के फर्श पर।

सर्वोच्च न्यायालय ने भी उसे आजीवन कारावास दिया था। ५ अक्तूबर, १९६९ को लखनऊ के सेशन जज श्री एस. एन. शुक्ला ने दफा ३०२ (भारतीय दंड-संहिता) में खून के जुर्म में आजीवन कारावास की सजा सुनायी और हाई-कोर्ट तथा सुप्रीमकोर्ट ने भी उसी फैसले को माना और अपीलें खारिज कर दी थीं।

लगता है अभी तक लोगों ने डॉक्टर गौतम की हत्या को घिसी-पिटी लैला-मजनूं की कहानी माना, इसे गहराई से नहीं देखा। उनके चरित्र के गवाह उनके मित्र हैं और रोगी हैं जिनको डॉक्टर ने दवा के साथ मानसिक सांत्वना दी।

व्यक्तित्व

हरिओम का जन्म ब्रज के एक ब्राह्मण-परिवार में हुआ था। पिता श्री रामप्रसाद शर्मा से बचपन में मानवता, मित्रता और मिलनसारी के सूत्र मिले थे। पिताजी बी. बी. ऐंड सी. आई. आर. में एक अफसर थे, पर उनकी रुचि भारतीय संगीत, दर्शन, इतिहास, धर्म आदि में थी। उन्होंने अपना एक अच्छा-खासा पुस्तकालय बना लिया था। इसी पुस्तकालय से हरि-ओम को वेद, पुराण, रामायण, गीता, बाइबिल और कुरान के साथ-साथ हिंदी अंगरेजी और संस्कृत भाषाओं की निधियों का परिचय मिला था। उनकी शिक्षा बांदीकुई, कासगंज, खुर्जा और लखनऊ में हुई थी। लखनऊ विश्वविद्यालय से उन्होंने डॉक्टरी की पढ़ाई और दिल की बीमारी पर एम. डी. की थी। वे किताबी कीड़े माने जाते थे। जब वे आठवें दर्जे में थे तभी अपने पुस्तकालय की कोई २,००० पुस्तकें वे चाट चुके थे। उनकी स्मरण-शक्ति बहुत तीव्र थी। डॉक्टरी पढ़ने के बाद वे सुयोग्य डॉक्टर बने। उन्होंने नियम से रहना सीखा था। वे खेलों के शौकीन थे। जहां भी वे जाते परिवार में घुलमिल जाते। वे शक्ति के उपासक थे। वे दूसरों के प्रति संवेदनशील थे। उन्हें पैसे का मोह नहीं था।

डॉ. गौतम के मस्तिष्क में अपने-पराये की बू नहीं थी और जहां धोखा-धड़ी दिखायी देती, वे तुरंत दूर हो जाते थे। मुझे इस संदर्भ में एक उदाहरण याद आ रहा है। १९५७ में डॉक्टर का तबादला बिंदकी में चांदपुर हो गया था। चांदपुर का दवाखाना कई वर्षों से चल रहा था, पर वहां कोई डॉक्टर रुकना नहीं चाहता था। बरसात में तो वहां पहुंचना तक संभव नहीं था। दवाखाना एक कच्चे मकान में था, जिस पर फूस का छप्पर पड़ा था। बरसात में जोरों से टपकता था। एक कमरा डॉक्टर के बैठने का था और दूसरे में कंपाउंडर और दवाइयां। मरीज बाहर दालान में पड़े रहते। आपरेशन के बाद भी वहीं विश्राम का स्थान था। गांव-वाले खुश थे कि उनके गांव में दवाखाना खुल गया था, पर डॉक्टर के न टिकने से परेशान थे। डॉ. हरिओम ने वहां पहुंच-कर श्रमदान द्वारा दवाखाने के मकान की

मरम्मत करायी और उन घिसे-पिटे मिक्सचरों की जगह नयी-नयी दवाइयां मंगवायीं। इसके लिए वे लखनऊ तक गये।

सन १९६० में डाक्टर हरिओम गौतम बदायूं के सिविल अस्पताल में काम करते थे। रोज की तरह उस दिन भी वे रोगियों को देख रहे थे। तभी उनके पास एक वयोवृद्ध आया जो कि फटे-पुराने कपड़े पहने था। उसकी दाढ़ी बढ़ी थी और गाल पिचके थे। उसने याचना-भरी आंखों से डाक्टर को देखा, फिर उनके पैरों पड़ गया। डॉक्टर ने पूछा —"क्या बात है बड़े मियां ?" बूढ़ा सिसकता हुआ बोला, "गरीबपरवर, खुदा आपको लंबी उम्र दे, मेरी लड़की बहुत बीमार है, जरा देख लीजिए। डाक्टर साहब रिक्शे से बूढ़े मियां के साथ उसके घर गये। उनका घर कबूलपुर में था। अंदर घुसकर उन्होंने खाट पर पड़ी लड़की को देखा। डॉक्टर इंजेक्शन लगाकर नुस्खा लिख रहे थे तभी उन्हें घर के अंदर से किसी की पीड़ा-भरी कराहट सुनायी दी। डॉ. चौंके, पूछा, "क्या कोई और भी बीमार है ?" बूढ़े मियां की आंखों में आंसू आ गये। बोले, " सरकार मेरी दूसरी लड़की भी बीमार है, पर मैं गरीब हूं, कैसे दो-दो मरीजों को दिखा सकता हूं ?" डॉक्टर ने दूसरी लड़की को भी देखा, नुस्खा लिखा और बोले, "बड़े मियां, कुछ शेरो-शायरी का भी शौक करते हो ? सुनाओ, वही हमारी फीस होगी।" बड़े मियां ने अपने बनाये हुए कुछ शेर सुनाये और डॉक्टर हंसी-खुशी लौट आये। बाद में उन्होंने मुझे बताया कि धन ही जीवन की प्रेरणा नहीं है। जब भी डॉ. गौतम कबूलपुर से निकलते, लोग उनकी तारीफ किया करते। और बड़े मियां हर साल एक शायरी डॉक्टर के लिए ईद के त्योहार पर लिख भेजते।

लखनऊ उन्हें ले गया

डॉ. हरिओम गौतम का आखिरी पड़ाव लखनऊ हुआ। यहां आकर वे एक बात से निश्चिंत अवश्य हो गये थे—बच्चों की शिक्षा और दवाखाने की सुविधाएं। अब वे दिल की बीमारी पर अच्छी तरह

शमीम के भाई अमीर अहमद रहमानी

बायें : श्री जफर अब्बास सेशन कोर्ट में शमीम के जूनियर अभिवक्ता

दायें : श्री जी. एच. नक्वी, शमीम रहमानी के प्रमुख अभिवक्ता

काम कर सकते थे। मेडिकल कॉलेज के डा॑क्टरों से विचार-विमर्श कर सकते थे। बलरामपुर अस्पताल का, जहां वे रहे, उत्तरप्रदेश में नाम है। उनकी योग्यता देखकर उन्हें वी. आई. पी. विभाग भी सौंपा गया। अस्पताल में रहने की सुविधा नहीं थी, अतः वे क्रिश्चियन कॉलेज के सामने की बस्ती बारूदखाने में एक मकान लेकर रहे। उनके घर 'कमला-सदन' में धीरे-धीरे डॉक्टर और रोगियों का जमघट होने लगा।

शमीम के पिता को दिल का दौरा

बलरामपुर अस्पताल में उन्होंने एक ऐसे रोगी का उपचार किया जिसको दिल का जबरदस्त दौरा हुआ था। यह थे शमीम रहमानी के पिता श्री अजीजुर्रहमान, जो पहले कभी लखीमपुर खीरी के पुराने जमीदार थे और जिनका संबंध नवाब रामपुर के घराने से भी था। अजीजुर्रहमान को मौत के मुंह से बचाने के फलस्वरूप रहमान साहब के घर से शुक्रिया अदा करने के लिए कभी-कभी फलों के टोकरे डॉक्टर के घर भेजे जाते। डॉक्टर यह सब पसंद नहीं करते थे।

शमीम का मानसिक संतुलन बिगड़ा था

इसी बीच बलरामपुर के एक अन्य साथी डॉ. जैन शमीम को लेकर डॉ. गौतम के पास आये। शमीम उन दिनों मानसिक संतुलन नहीं रख पाती थी। इसी रोग के उपचार के लिए वे डॉ. गौतम के पास आये थे। डॉ. को पता लगा कि शमीम इस रोग के सिलसिले में तिबिया कॉलेज, यूनानी दवाखाना और नूरमंजिल के चक्कर तक लगा आयी है। शमीम के विचारों और भावों (सेंटीमेंट) की साइकोथिरैपी (मानसिक चिकित्सा) होने लगी। देखने में शमीम तब ठीक लगती थी। डॉ. गौतम का रोग-निदान भिन्न प्रकार का था। वे रोगी को निश्चित करके उसमें आत्म-विश्वास उत्पन्न करते थे। इसलिए मानसिक उपचार पर अधिक ध्यान देते थे। अब शमीम और दूसरी बहन नसीम भी डॉक्टर के पास अस्पताल का चक्कर लगाने लगी। शमीम को डॉक्टर के साथ

श्री जगत बहादुर श्रीवास्तव । पब्लिक प्रासीक्यूटर

बात करके हलकापन महसूस होता था। अब शमीम में आत्म-विश्वास पैदा होने लगा। कभी-कभी वे नुस्खे में दवाइयां न लिखकर यूं ही कुछ लिख देते, जैसे—'खाओ, पीओ, मौज करो', 'शाम को फिल्म देख आओ'। प्रायः मानसिक रोगियों को इस तरह के नुस्खे उनके हलकापन महसूस करने के लिए ही दिये जाते हैं। मुकदमे में इन्हीं नुस्खों को 'रोमांस के पुर्जों' की संज्ञा दी गयी। जब-जब शमीम डॉक्टर के पास जाती, लोग यही अंदाज लगाते कि शायद प्यार-मुहब्बत की बातें हुआ करती हैं।

शमीम घर आती, लक्ष्मी को 'भाभीजी' कहकर पुकारती और डॉक्टर की बहन को शशि। इसी बीच डॉक्टर का तबादला नैनीताल हो गया, पर लोग डॉक्टर गौतम को चाहते थे और यह तबादला रुक गया। हां, हो सकता है कि इसमें रहमानी-परिवार का भी हाथ रहा हो। डॉ. डी. एन. शर्मा, डिप्टी-डायरेक्टर स्वास्थ्य-विभाग, उत्तरप्रदेश ने तबादला रोकने का आदेश दिया था। डॉ. की हत्या के बाद एक दिन डॉ. शर्मा ने कहा था, "अगर मैं इसका ट्रांसफर (तबादला) नहीं रोकता तो आज डॉ. गौतम का मर्डर (हत्या) नहीं होता। इसका जिम्मेदार तो मैं ही हूं।"

कोर्ट में पेश किये गये पत्र

डॉ. हरिओम गौतम द्वारा शमीम रहमानी को लिखे गये कुछ पत्रों के अंश, जो अदालत में पेश किये गये थे—

"प्यार कोई दलील नहीं जिसका सबूत दिया जाए। यह तो दिल की धड़कन है। महसूस की जा सकती है। हां, महसूस उसे ही होती है जिसे दिली लगाव हो।"

"मेरे दिल की मालिक,

हम तो अब बिनमोल तुम्हारे हैं चाहे खुश रखो या दुखी। दिल-दिमाग सब तुम्हारे ही हैं। नाराजगी और तुमसे। नामुमकिन। अपने दिल के करीब तुम्हें रात-दिन रखना चाहता हूं। काश तुम मेरे दिल की आवाज सुन सको।

योर ओल्ड मैन"

इसी बीच मई, १९६८ में मैं विदेश से भारत आया था। मैं नृतत्व-विज्ञान में शोध-काय करना चाहता था। यहां मुझे शमीम के बारे में पता लगा। एक दिन घर में टेलीफोन की घंटी कई बार बजी। बार-बार मुझे ही टेलीफोन उठाना पड़ा। टेलीफोन दिल्ली से बताया गया था। आवाज आती थी, "डॉ. साहब घर पर हैं क्या? जरा बुला दीजिए।" जब मैंने बताया कि डॉ. साहब तो अस्पताल में हैं, यदि कोई संदेश देना हो तो बता दें। डॉक्टर साहब के आने पर बता दूंगा," तब जवाब मिला, "हम दिल्ली से मिनिस्टर साहब के यहां से बोल रहे हैं। डॉ. साहब से कहिए कि वे बेगम रहमानी को यह खबर पहुंचा दें कि दिल्ली में सब ठीक हैं।" और टेलीफोन कट गया। जब डॉक्टर भाई आये तो मैंने उन्हें टेलीफोन के बारे में बताया। उन्होंने सुना, वे कोई उपन्यास पढ़ रहे थे। बोले, "अच्छा देखूंगा।"

बेगम रहमानी को दिल का दौरा?

इसी तरह एक दिन बेगम रहमानी के यहां से कई बार टेलीफोन आया। संदेश था कि बेगम साहिबा को दिल का दौरा हो गया है, डॉक्टर साहब को फौरन भिजवा दीजिए। तीसरे पहर डॉ. भाई से मुलाकात हुई तो मैंने उन्हें टेलीफोन के बारे में बताया। थोड़ा-सा आराम कर बेमन से डॉक्टर भाई ने स्कूटर निकाला। मैं पीछे बैठ गया और उन्होंने स्कूटर स्टार्ट कर दिया। रहमानी का मकान कंधारी बाजार महल्ले में है, जो लालबाग के पास है। साधारण से घर के पास जाकर स्कूटर रुका। डॉक्टर भाई ने दरवाजे की सांकल खटखटायी। दरवाजा किसी लड़के ने आकर खोला। हम दोनों कुरसियों पर जा बैठे। तभी दाहिने हाथ के दरवाजे पर पड़ा मटमैला-सा परदा हिला और बेगम साहिबा काला बुरका पहने आती दिखायी दीं। डॉक्टर ने सोचा

"प्रिय शमीम,

भगवान तुम्हें सदा सुखी रखे। इस पत्र को लिखते हुए कितनी उलझन मेरे मन में है। मैं आज पहली बार तुम्हारी कसम तोड़ रहा हूं। तुम्हारी कसम के मुकाबले में वह ज्यादा बड़ी बात है। अपनी उलझन को भुलाने में और खुद को नीचा महसूस करने में जो चीज मदद देगी उसी दुनिया में खो जाऊंगा। जहां शराब और ऐसी ही चीजों का बोलबाला है। फिर मुझे भी मलाल न होगा कि मुझे गलत समझा गया।

अलविदा।

हरिओम गौतम"

(हिंदी में)

(अगले पृष्ठ पर भी)

था कि वे अंदर पड़ी होंगी, पर उन्हें अच्छा-खासा देख विस्मय में पड़ गये। बोले, "आप तो ठीक लगती हैं, भाई ने तो बताया था कि आपको दिल का दौरा पड़ गया है।" बेगम साहिबा हंसीं और बोलीं, "मैं तो ठीक हूं, पर ये लड़कियां शिकायत करती हैं कि आप इनकी देख-भाल नहीं करते, अस्पताल में तो और भी मरीज होते हैं। फिर काफी दिनों से इधर भी नहीं आये।"

डॉक्टर भाई बोले, "बेगम साहिबा, जब भी कोई बीमार होता है, मैं जरूर आता हूं। फिर अस्पताल में भी काम काफी है। आप यह भूल जाती हैं कि डॉक्टर की जिंदगी ऐसे ही ऐशो-आराम की जिंदगी नहीं हैं जैसे आप लोगों की।"

तभी दरवाजे से मझले कद की दो लड़कियां चुन्नी, सलवार और कमीज पहने आयीं। दुआ-सलाम हुई। डॉक्टर बोले, "तुम लोगों को क्या शिकायत है?

अंधे भविष्यवक्ता श्री भगत धनराजसिंह जैन

सिविल अस्पताल में चली आतीं, देख लेता। बेकार मेरा समय बरबाद करती हो।"

तभी शमीम बोली, "वहां आप कोई खास ध्यान नहीं देते। कई दिनों से सिर में बड़ा दर्द है, चक्कर आते हैं। अस्पताल में आप भेड़-बकरियों की तरह देखते हैं।"

डॉ. भाई ने अपने कीमती समय के बारे में कहा। मेरे बारे में बताया कि मैं

"शिमो,

मेरी बदकिस्मती है अगर तुम ऐसा समझती हो। मैं तो यह कहूंगा कि मैं दिल का सौदा शायद कभी न कर पाता अगर तुम्हारी आंखों में वह न पाता जिसकी तलाश में मैं सारी उम्र काट देता। पर अब तो मैं बेबस हूं। दिल ही अपना खो बैठा। अगर मेरे दिल की धड़कन वह नग्मा नहीं सुनाती जिसका दूसरा नाम मुहब्बत है तो मैं खामोश ही अपनी बात दिल ही में दबाकर चुप रहूंगा।

अभागा तुम्हारा

एच. ओ. गौतम"

इन्हें भी समय नहीं दे पाता हूं। शमीम फिर बोली, "आप इन्हें हमारे यहां भेज दीजिए, हम देखभाल कर लेंगे। इन्हें शिकार भी करा लाएंगे।"

मैंने कहा, "निमंत्रण का शुक्रिया, अभी मुझे बहुत काम हैं। संथाल परगना जाना है। जब लौटूंगा तब सोचूंगा।"

बात वहीं खतम हो गयी। हम दोनों उठ लिये। स्कूटर डॉक्टर भाई चला रहे थे। मेरे दिमाग में दिल्ली से आये टेलीफोन, बेगम की हंसी, लड़कियों का टुकुर-टुकुर देखना, सब कुछ फिल्म-रोल-सा लगा। मैंने डॉक्टर भाई से पूछा, "भैया, यह सब क्या बात है? मेरी तो कुछ समझ में नहीं आता ... फिर बिना बीमारी के बुलाना ...!"

और उसी समय जोरों से बौछारें पड़ने लगीं और भीगने से बचने के लिए हम पास की दूकान पर चढ़ गये।

कुछ दिन बाद मैं संथाल परगना चला गया। वे और लक्ष्मी भाभी मुझे स्टेशन पर छोड़ने आये थे। मैंने कभी इस बात को स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि यह मेरी उनसे अंतिम विदा होगी।

मुझे उनकी हत्या के बारे में भुवनेश्वर में पता चला जब मैं कोणार्क जाने की योजना बना रहा था। सुबह स्टेशन पर समाचार-पत्र के मुख-पृष्ठ पर यह खबर पढ़कर सन्न रह गया—

शमीम को सेशन सुपुर्द करनेवाले चीफ जुडीशियल मैजिस्ट्रेट श्री रामेश्वर सहाय

'डॉ. गौतम की सनसनीखेज हत्या।' मैं तुरंत हवाईजहाज से लखनऊ लौट पड़ा।

घर पर पहुंचकर माता-पिता, भाई-बहन, लक्ष्मी और बच्चों के मुंह से, न रुकनेवाली आसुओं की धारा के साथ, डॉक्टर के प्रति उमड़ते हुए वेगों को खंडित वाक्यों में सुना। हत्या ११ जुलाई, १९६८ को हुई थी। १२ जुलाई को समाचार-पत्रों में छपा था—'डॉ. हरिओम गौतम को, जो ३४ वर्ष के थे, कंधारी बाजार में किसी झगड़े के बाद शमीम रहमानी (२३ वर्ष) ने गोली मार दी। झगड़ा प्यार-मुहब्बत का था। शमीम उनसे शादी करना चाहती थी और डॉक्टर तैयार नहीं थे।' किसी प्रकार की सांप्रदायिक तनातनी न हो इसके लिए एहतियाती तौर पर अभियुक्ता के घर पर पी. ए.

प्राथमिक चिकित्सा के लिए राज्यपाल द्वारा पुरस्कृत डॉ. की पत्नी लक्ष्मी

सी. के दस्ते तैनात कर दिये गये। इधर समाचार-पत्र तरह-तरह की आकर्षक सामग्री छापते रहे।

आइए, जरा फिर से गौतम हत्याकांड को पुराने संदर्भ में देखें। शमीम का परिचय डॉ. गौतम को उसका मानसिक उपचार कराने के लिए किया गया था। जब वह कुछ आत्म-विश्वास में बंधी तो बहुतों को डॉक्टर और शमीम की निकटता अखरी, जबकि वह केवल डॉक्टर और बीमार का रिश्ता था।

शायद २९ जून थी। डॉक्टर अपनी पत्नी लक्ष्मी के साथ हजरतगंज जा रहे थे। उन्हें जाता देख कैसरबाग कोतवाली के एक अधिकारी ने उन्हें रोका और उनसे स्कूटर चलाने का लैसंस मांगा। अभाग्यवश उस दिन डॉक्टर साहब जल्दबाजी में लैसंस घर भूल आये थे। उन्होंने अपनी गलती मानी और कहा कि शाम को जब वे अस्पताल जाएंगे तब लैसंस दिखाते जाएंगे। इस पर उक्त अधिकारी बौखला उठा, और बोला, "आप पहले घर जाकर लैसंस ले आयें और अपनी बीवी को यहीं छोड़ जाएं।" डॉक्टर काफी बिगड़े। पुलिस-अधिकारी उनको जान-बूझकर अपमानित कर रहा था।

उसके बाद डॉक्टर गौतम परेशान जरूर नजर आते थे। इसी बीच उन्हें दो गुमनाम चेतावनी-भरे पत्र भी मिले थे, पर इस सबका उन्होंने जिक्र कभी नहीं किया। हां, एक दिन वे डॉ. डी. एन. शर्मा से मिलने गये थे, पर डॉ. शर्मा से उस समय

कोई बात न हो सकी थी। हत्याकांड के बाद डॉ. शर्मा ने कहा था, "मुझे मालूम नहीं था कि डॉ. गौतम इसी सिलसिले में मिलना चाहते थे।"

घटना के दो-तीन दिन पहले वे काफी परेशान थे। घर पर उनके नाम टेलीफोन भी काफी आते थे। ये थे दिल्ली से। लगता था, उन्हें टेलीफोनों से घेरा जा रहा था। फिर भी उन्होंने संयम नहीं छोड़ा। बड़े भाई के. के. शर्मा द्वारा एक दिन पूछे जाने पर उन्होंने कहा था, "जमाना काफी खराब हो गया है, भाईसाहब! लगता है, लोग मेरी भलाइयों का नाजायज फायदा उठाना चाहते हैं, पर बिना मेरी मर्जी के कुछ नहीं हो सकता। मनुष्य का व्यक्तित्व और नियम भी कोई चीज है।" इसी तरह एक दिन लक्ष्मी से बोले, "लक्ष्मी, इनसान की जिंदगी का कोई भरोसा नहीं है..." तभी कोई टेलीफोन आ गया। उन्हें जाना था। जब बिना खाना खाये जाने लगे तब लक्ष्मी ने टोका और खाना खाकर जाने को कहा। डॉ. बोले, "मैं आज हूं, कल न रहूं, तो क्या तुम खाना खाओगी ही नहीं? समय मिलेगा खा लूंगा। तुम खा लेना।" और फिर उन्होंने कभी खाना नहीं खाया। दूसरे दिन डॉक्टर नहीं रहे।

घटनाक्रम

१० जुलाई : जैसे ही डॉक्टर मरीज देखकर लौटते तब उन्हें यह संदेशा जरूर दिया जाता कि आपके लिए कई बार टेलीफोन आये थे। वे 'हां' कहकर बात टाल देते और थकान मिटाने के लिए हिंदी के उपन्यास पढ़ते। आखिरी दिन वे अमृतलाल नागर का 'बूंद और समुद्र' उपन्यास पढ़ रहे थे, जो मुझे नागरजी ने स्वयं भेंट किया था।

१० जुलाई की रात को वे भोजन के लिए बैठने ही वाले थे कि घंटी बजी। दरवाजा शशि ने खोला। उसे सामने शमीम का भाई किन्हीं दो व्यक्तियों के साथ कहता दिखायी दिया—"डॉक्टर साहब को जरा भेज दें, बेगम साहिबा की तबीयत ठीक नहीं है।" तभी लक्ष्मी की तेज आवाज सुनायी दी, "खाने के वक्त भी ये लोग नहीं छोड़ते।" लक्ष्मी जब डॉक्टर साहब के साथ दरवाजे पर आयीं तब देखा तीनों व्यक्ति दूर अंधेरे में खड़े थे। उन्हें दूर खड़ा देख उन्हें अजीब-सा लगा। उन्होंने प्यार से कहा, "भाई, वहां अंधेरे में क्यों खड़े हो, अंदर आ जाओ। और हां, डॉक्टर साहब को जल्दी भेज देना, अभी खाना भी नहीं खाया है।" पर वे जल्दी ही लौट आये।

११ जुलाई : दिन भर टेलीफोन की घंटी बजती रही। शाम को डॉक्टर साहब लक्ष्मी के साथ कालविन ताल्लुकेदार कॉलेज के प्रिंसिपल कश्यप के यहां गये थे। उन्होंने उन्हें कॉफी पर बुलाया था। डॉ. गौतम कालविन कॉलेज के भी डॉक्टर थे। उनके दो लड़के भी वहां पढ़ते थे। उस दिन उन्हें कुछ हरारत भी थी। परेशानी की शिकनें फिर भी चेहरे पर नहीं आने दीं। साबिर खां के यहां से टेलीफोन आया था। संदेशा था

कि खान साहब को दिल का दौरा हो गया है, डॉक्टर को बुलाया था। डॉक्टर गौतम और लक्ष्मी कोई नौ-साढ़े नौ बजे घर लौटे और फिर कोई पौने दस बजे के करीब साबिर खां के यहां चले गये। उसके बाद डॉक्टर कभी घर नहीं लौटे। दूसरे दिन उनकी लाश ही घर पर लौटी थी।

रात को डॉक्टर गौतम जब किसी मरीज के यहां जाते और किसी कारण देर हो जाती तो घर पर लक्ष्मी को टेलीफोन कर देते थे। उस रात लक्ष्मी उनके लिए खाने का इंतजार करती रहीं। १२ बजे, पर कोई खबर नहीं। वे कुछ चिंतित हुईं। उन्होंने भी खाना नहीं खाया था इसी तरह प्रतीक्षा करते-करते जब ३ बज गये तब उनसे नहीं रहा गया। उन्होंने बड़े भाई के. के. गौतम को जगाया और उनसे डॉक्टर के घर न लौटने की बात कही। फिर क्या था, भाई के. के. गौतम कई जान-पहचानवालों के यहां गये, टेलीफोन भी किये, लेकिन कुछ पता नहीं लगा। सुबह साढ़े छह बज गये तभी भाई को समाचार मिला कि कंधारी बाजार में रहमानी के घर पर कल रात किसी की हत्या हो गयी। उनके कान खड़े हो गये। वे वहीं भागे। वहां दहलीज पर छोटे भाई डॉक्टर गौतम का शव पड़ा देखा तो गश खा गये। इसी बीच किसी ने घर पर टेलीफोन कर दिया था और मां-बाप दहाड़ मारकर रो रहे थे। उधर लक्ष्मी और शशि भी खोजने निकल पड़ी थीं। उन्हें यह खबर अभी नहीं मिली थी।

डॉ. गौतम के दो गोलियां लगी थीं। आखिरी गोली कनपटी पर लगी थी और उसी से उनका काम तमाम हो गया था।

१२ जुलाई : पुलिस के बयानों से पता लगा कि कैसरबाग कोतवाली में हत्या की इत्तला साढ़े ग्यारह बजे की गयी **(सर्वोच्च न्यायालय के फैसले के अनुसार अमीर अहमद नें रात डेढ़ बजे कोतवाली में हत्या की सूचना दी थी--सं.)** और पुलिस घटना-स्थल पर कोई डेढ़-दो के बीच पहुंची, जबकि कंधारी बाजार से कोतवाली का पैदल रास्ता कोई १५ मिनट का भी नहीं है। रात में पुलिस ने अस्पताल और डॉक्टर के घर टेलीफोन नहीं किया।

समाचार-पत्रों ने शमीम के तीन बयानों को लोगों के सामने रखा--(अ) मैं डॉक्टर को अपनी बंदूक दिखा रही थी कि गोली चल गयी (ब) मैं मारनेवाले का नाम नहीं बता सकती (स) मैं डॉक्टर से मुहब्बत करती थी और वे मुझसे शादी नहीं करना चाहते थे, अतः मैंने गोली मार दी। इसी बयान पर उसे और उसके भाई को हिरासत में ले लिया गया। शमीम के बयान को लेकर ही सरकार मुकदमा लड़ती रही।

यह बात मानी हुई है कि डॉ. गौतम की हत्या यूं ही नहीं हुई थी। जहां तक गवाहों का प्रश्न है, हमें सब नहीं मिल सके हैं। अब भी ऐसे लोग हैं जिन्होंने कंधारी बाजार में गोली की आवाज सुनी

डॉ. अपनी पत्नी और बच्चों के साथ

डॉ. गौतम के माता-पिता

थी, जिसने किसी बढ़ते वाद-विवाद को एकदम भंग कर दिया था। बाद में शमीम के घर से कुछ लोगों को भागते भी देखा था। घर के पास खड़ी एक काली मोटर के स्टार्ट होने की आवाज के साथ मोटर का चलना भी देखा था। हत्या कोई साढ़े दस और ग्यारह के बीच हुई थी। गरमियों में जब बरसात के शुरू होते ही लोगों को बंद हवा की सड़ी गरमी का अनुभव होता है तब वे बंद दरवाजों में नहीं सोते, बाहर ही पड़े रहते हैं। शमीम का घर भी सड़क से ही लगा हुआ है।

हत्या क्यों हुई? क्या वाकई यह प्यार-मुहब्बत का मामला था या इसके पीछे भी कुछ राज था? प्यार-मुहब्बत की बात को लेकर तो सरकार ने मुकदमा ही लड़ा था, क्योंकि शमीम के बयान ही ऐसे थे, पर जिन सूत्रों को पेश किया गया वे पूरक साबित नहीं बैठते। कहा गया है कि डॉक्टर रोमांस के पुर्जे लिखकर भेजते थे जैसे 'ईट, ड्रिंक ऐंड बी मेरी' (खाओ, पीओ और मौज करो)। डॉक्टर इस तरह के नुस्खे अकसर लिखा करते थे, यह मैंने स्वयं भी देखा था। उनका खयाल था कि कुछ मरीज यह चाहते हैं कि डॉक्टर उनके बारे में कुछ न कुछ जरूर सोचे और व्यक्तिगत ध्यान दे। शमीम चूंकि मानसिक रोगी भी थी, इस तरह के नुस्खों ने उसे काफी हद तक आत्मविश्वास भी दिया था। कहा यह भी गया कि डॉक्टर ने कुछ और भी लंबे पत्र लिखे थे जिनकी भाषा क्लिष्ट उर्दू ही में नहीं, उर्दू लिपि भी थी। श्री गौबा अपनी सनसनीखेज पुस्तक 'शमीम रहमानी कांड' में तथ्यों को मरोड़ने के साथ एक पत्र का उदाहरण देते हैं। पत्र में लिखा है—

'मेरे दिल की मलिका, हम अब तुम्हारे बगैर रह नहीं सकते...' लगता है जैसे गौबा ने इस पत्र के द्वारा शमीम के लिए किसी फिल्म के डायलॉग लिखने की भूमिका बना डाली हो या 'मुगले आजम' फिल्म की शूटिंग करा रहे हों। बंबई के अधकचरे फिल्म-निर्माताओं का इसी तरह के घिसे-पिटे डायलॉगों से पेट भरता है। डॉक्टर गौतम को उर्दू नहीं आती थी, फिर लिखने की तो बात ही कोसों दूर है।
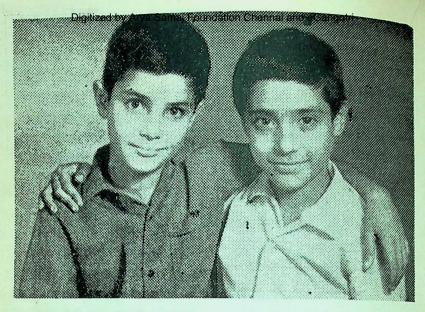
डॉ. हरिओम गौतम के बच्चे

(अदालत में पेश पत्रों से यह स्पष्ट है कि वे उर्दू समझते थे—सं.) वे हिंदी साहित्य के विद्यार्थी थे। जरा उनकी लिखी 'मां शक्ति' लेखनी को देखिए—

"जो चिन्मयी शक्ति हमें और इस अखिल ब्रह्मांड को धारण करती हैं, उनके साथ एकत्व के संस्पर्श का जब तुम्हें अनुभव होगा, तब तुम स्वानुभव से यह जान सकोगे कि मातृसत्ता त्रिविध है। वे विश्वातीता, आद्या पराशक्ति हैं; इस रूप में वे सब लोकों के ऊपर हैं। फिर वे विश्वव्यापिनी, समष्टि-रूपिनी महाशक्ति हैं, जो इन सब जीव-जगतों की सृष्टि करती और इन अनंत गतियों और शक्तियों का धारण करती, उनमें समाये रहती, उन्हें पुष्ट और परिचालित करती हैं। ..."

अगर हम शमीम का दूसरा बयान लें कि 'मैं मारनेवाले का नाम नहीं बता सकती', तब हमें कुछ और ही सूत्रों का भास होता है। इस हत्याकांड में एक और व्यक्ति का नाम आता है, जो है शमीम का ममेरा भाई इकबाल। इकबाल शमीम से प्रेम करता था। यही नहीं, यहां तक कहा जाता था कि उसकी शादी शमीम से निश्चित थी। इकबाल का एक और दोस्त भी था। बयानों में यह कहा गया था कि इकबाल घटनावाले दिन ११ बजे सुबह की गाड़ी से बरेली चला गया था। पर शमीम के अपने बयान से वह उस रात ८ बजे तक उसी के साथ था। ये दो बयान क्यों दिये गये? यही लोग वास्तव में डॉक्टर को कई दिनों से घेरे हुए थे। लक्ष्मी के अनु-

सार १० जुलाई को यही लोग डॉक्टर को लिवाने आये थे ।

और जो प्यार-मुहब्बत के सूत्रों को अदालत में लाया गया वे तो मुकदमे को जोर देने के लिए थे। जैसे शमीम को एक दिन पता लगा कि डॉक्टर किसी और लड़की के साथ स्कूटर पर घूम रहे थे। यह कोई भी हो सकती थी। अस्पताल की परिचारिका या कोई मरीज ही। कहा गया कि इसे सुनकर शमीम ने ठान लिया कि अब वह डॉक्टर को मार देगी।

हत्याकांड के बाद ही इलाहाबाद हाईकोर्ट के न्यायाधीश के शब्दों पर जरा गौर किया जाए तो शायद इस हत्याकांड का अर्थ समझ सकें। श्री ब्रजनंदनलाल ने कहा था, "जब हत्या भरे घर में हुई हो तो उसका अर्थ ही किसी साजिश से है, मेरी समझ में नहीं आता कि क्यों नहीं दफा १२०-बी लगायी गयी।"

यही नहीं, पुलिस ने क्यों डॉक्टर गौतम की, जो कि लखनऊ के काफी मशहूर डॉक्टर थे, हत्या के बाद चुप्पी साध ली और सभी सूत्रों को मिट जाने दिया? १८ जुलाई के 'हिन्दुस्तान' ने लिखा था "डॉ. गौतम की हत्या एक सुनियोजित षड्यंत्र का परिणाम है और उसकी गहराई में जाने के बजाय पुलिस ने शिथिलता दिखाई।" शमीम और डॉक्टर गौतम की मुहब्बत की कहानी को ही आगे बढ़ाया गया। यही नहीं, १८ जुलाई को श्री आई. डी. गुप्ता की अदालत में दलील पेश करते हुए शमीम के लिए श्री गुलाम हुसैन तकवरी ने यहां तक कहा

डॉ. गौतम अपने परिवार के साथ
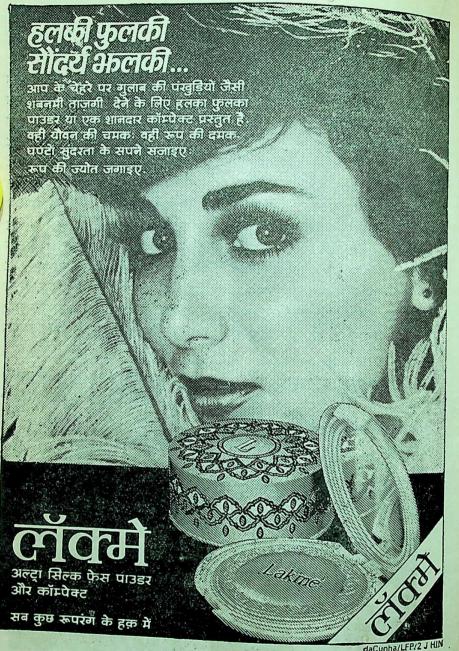
कि वह नाबालिग है जबकि वह २२ वर्ष की थी। शमीम के लिए जमानत की कोशिश की गयी, पर उसकी जमानत नहीं हुई। ७ सितंबर के समाचार-पत्र 'इंडियन आब्जरवर' ने लिखा कि जमानत के बाद शायद शमीम भाग जाएगी।

डॉ. गौतम की विधवा लक्ष्मी ने केवल न्याय की भीख मांगी थी। छोटे बच्चों का, बूढ़े सास-ससुर का भार उन्हीं पर

हाईकोर्ट में शमीम के प्रमुख अभिवक्ता

पड़ा। मुसीबतें झेलकर न्याय की मांग में मुसीबतें उठायीं। दर-दर पर ठोकरें। अंतर्राष्ट्रीय महिला-वर्ष में उनके लिए कहीं स्थान न था। न तो उनकी पेंशन बढ़ी, न सरकार की सहायता से कोई सस्ता किराये का मकान मिला। न बच्चों की फीस माफ हुई। ससुर का डॉक्टर के गम में देहांत हो गया। वे स्वयं तरह-तरह की मानसिक और शारीरिक बीमारियों की शिकार बन गयीं।

●

सेशन कोर्ट का फैसला

सरकारी वकील ने जोर देकर कहा इस मामले में हत्या सोच-समझकर तथा दिल दहलाने वाले नृशंस तरीके से की गयी थी। इस बात में कोई संदेह नहीं कि हत्या पूर्व नियोजित थी लेकिन जिन परिस्थितियों के अंतर्गत वह हुई, वे काफी विचित्र थीं।

डॉ. गौतम यद्यपि जिम्मेवार सरकारी कर्मचारी थे पर इतने नादान कि अपने से उम्र में कई वर्ष छोटी शमीम रहमानी को अपने व्यवहार से प्रोत्साहित किया और जब उसने पूरी तरह आत्म-समर्पण कर दिया तब इस स्थिति से छूट निकलने की कोशिश की। वह निश्चय ही नतीजों का अहसास किये बिना एक कमसिन लड़की की जिंदगी से खेल रहा था। उस लड़की ने चरम निराशा और ईर्ष्या के क्षणों में अतिवादी कदम उठाने का निर्णय किया। इसमें संदेह नहीं कि उसका कार्य उचित नहीं था, पर सारी परिस्थितियों पर विचार कर मैं सोचता हूं कि आजीवन कारावास का दंड इस मामले में न्याय की जरूरतें पूरी कर देगा।

नया

बेहतरीन कारोबारी टॉनिक यूरोप रोज़ाना दो बार
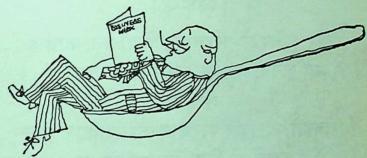
यूरोप में अपनी कारोबारी क्षमता बढ़ाइये. पेश है हमारा नुसख़ा—रोज़ाना दो उड़ानें.
१४ प्रति सप्ताह.
महाद्वीप के सभी महत्वपूर्ण व्यापार-केन्द्रों से संपर्क स्थापित करते हुए.

**लंदन के लिए १५. रोम के लिए ५.
जिनेवा के लिए ३. फ़्रैंकफ़ुर्ट के लिए ६.
पेरिस के लिए ५. मौस्को के लिए २.
आम्स्टरडम के लिए १.**

एयर-इंडिया

चुनौती भरे वर्ष

प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी के भाषण (1966-1969)

हमारा इस वर्ष का महत्वपूर्ण प्रकाशन 'चुनौती भरे वर्ष' विक्रय हेतु जारी कर दिया गया है। प्रस्तुत पुस्तक में श्रीमती इन्दिरा गांधी के उन सभी भाषणों का संग्रह है जो उन्होंने जनवरी 1966 में प्रधानमंत्री का पद संभालने के पश्चात् तथा अगस्त 1969 तक दिए थे। इन भाषणों में स्वाधीनता संग्राम, सामाजिक क्रान्ति, विज्ञान और टेक्नालाजी के कारण देश में हुए महत्वपूर्ण परिवर्तनों पर श्रीमती गांधी के विचार संग्रहीत हैं।

प्रधानमंत्री के 20-सूत्री आर्थिक कार्यक्रम के परिप्रेक्ष्य में तो उनके भाषणों की उपादेयता एवं महत्ता और अधिक बढ़ जाती है। इस पुस्तक के अध्ययन से राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय विषयों पर श्रीमती इन्दिरा गांधी के विचारों, उनकी रुचि तथा दृष्टिकोण का यथासम्भव पूर्ण परिचय प्राप्त होता है।

आकार 24 x 16 सें० मी०
पृष्ठ संख्या 407

मूल्य : रु० 18.00
(डाक खर्च मुफ़्त)

मिलने का पता :

विक्री केन्द्र
प्रकाशन विभाग

नई दिल्ली
1. पटियाला हाउस
2. सुपर बाजार
दूसरी मंजिल
कनाट सर्कस

बम्बई
बोटावाला चेम्बर्स
फिरोजशाह मेहता रोड

कलकत्ता
8, एसप्लेनेड ईस्ट

मद्रास
शास्त्री भवन
35, हैडोस रोड

प्रत्येक परिवार तथा
पुस्तकालय की शोभा

दी हिन्दुस्तान टाइम्स लिमिटेड की ओर से सन्तोष नाथ द्वारा हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस, नयी दिल्ली में मुद्रित तथा प्रकाशित

चलते चलते

• सुशील कालरा

भई, कोई प्लाट बताओ। जिंदगी में मैंने लिखा पढ़ा तो नहीं, पर अब सोचता हूं एक उपंयास लिख कर साहित्य की दुनिया में नाम कमा लूं

①

प्लाट [illegible] जोरदार है लेकिन देखो [illegible]क तो [illegible] [illegible] समय [illegible] है [illegible] तुम्हा[illegible] जैसी, भाषा, शैली, भी मेर[illegible] नहीं है। तुम्ही इसे क्यों नही लिख देते। मैं तुम्हें खासा पारिश्रमिक दूंगा

②

वाह! वाह!! इतना सशक्त और इतना बढ़िया छपा हुआ मेरा उपंयास, इसे तो मुझे पुरस्कार प्रतियोगिताओं में भेजना चाहिए

③

आज पुरस्कार पाकर मैं कितना खुश हूं

आपने अपने पहले उपंयास से ही हिंदी साहित्य में क्रांति ला दी। ऐसा बेजोड़ उपन्यास आज तक नहीं लिखा गया इसके तो कई भाषाओं में अनुवाद होने चाहिए

④